ॐ

जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर पूज्य श्री

घासीलालजी महाराज

का

जीवन-चरित्र

सहायक

श्रीमान सेठ अमीचंदभाई गीरधरभाई बांटवीया बेगलोर निवासी के द्रवसहाय से

लेखक

पं. रुपेन्द्र कुमारजी

प्रस्तावना

जैनचार्य जैनधर्मदिवाकर साहित्य महारथी आचार्यवर्य परम श्रध्देय पूज्यश्री घासीलालजी महाराज स्थानकवासी जैन समाज के एक प्रसिद्ध विद्वान थे। आचार विचार में उच्चकोटी के थे। सहिष्णुता, दया, वैराग्य, चारित्रनिष्ठा, साहित्यसेवा तथा समाजसेवा के अक्षय निधि थे। आपकी जीवन सम्बन्धी अनेक विध गुण सम्पदाओं की ओर नजर डालते हैं तब निस्संकोच कहा जा सकता है कि आप आध्यात्मिक जगत के चमकते सितारे थे।

वैसे तो हमारे चरित्रनायक श्री के सभी गुण अनुपम थे हि किन्तु जैन आगम साहित्य विषयक आपका अमर्यादित प्रयास अनुपमेय था। आपके जीवन का अधिकांश भाग आगमों की टीका एवं विविध साहित्य की रचनाओं में ही व्यतीत हुआ। आपका साहित्य निर्माण विषयक जो भगीरथ प्रयत्न रहा है समस्त स्थानकवासी समाज के निकटवर्ती इतिहास में वह किसी अन्य मुनि का नहीं रहा।

स्थानकवासी समाज में ऐसा भी युग था जब कि मुनिराजों को संस्कृत पढना हेय माना जाता था। किन्तु महान आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज ने इस दिशा में महानक्रान्तीकारी कदम उठाए। आपने अपने योग्य शिष्य पं. रत्नश्री घासीलालजी महाराज को संस्कृत प्रकाण्ड पण्डित बनाकर समाज की अपूर्व सेवा की।

गुरुदेव से शिक्षा प्राप्तकर आपने अपना समस्त जीवन साहित्य के निर्माण में लगा दिया। एक विचारक का कथन है कि प्रायः जन—समाज के चित्त में चिन्तन का प्रकाश ही नहीं होता। कुछ ऐसे भी विचारक होते हैं जिनके चित्त में चिन्तन की ज्योति तो जगमगा उठती है परन्तु उसे वाणी के द्वारा प्रकाशित करने की क्षमता ही नहीं होती। और कुछ ऐसे भी होते हैं जो चिन्तन कर सकते हैं अच्छी तरह बोल भी सकते हैं परन्तु अपने चिन्तन एवं वक्तव्य को चमत्कार पूर्ण शैली से लिखकर साहित्य का रूप नहीं दे सकते। पूज्यश्री ने तीनों ही भूमिकाओं में अपूर्वसिद्धि प्राप्त की थी। जहां आपका चिन्तन और प्रवचन गम्भीर था वहां आपकी साहित्यिक रचनाए भी अतीव उच्चकोटि की है। पूज्यश्री के साहित्य में पूज्यश्री की आत्मा बोलती है। इनकी रचनाएँ केवल रचना के लिए नहीं हैं, अपितु उनमें इनके शुद्ध पवित्र एव संयमी जीवन का अन्तर्नाद मुखरित है। साहित्य समाज का दर्पण होता है, ठीक है, परन्तु इतना ही नहीं, वह स्वयं लेखक के अन्तर्जिवन का भी दर्पण होता है, पूज्यश्री का साहित्य आत्मानुभूति का साहित्य है, व्यक्ति एवं समाज के चरित्र—निर्माण का साहित्य है। पूज्यश्री की साहित्य गंगा में कहीं सैद्धान्तिक तत्त्व चर्चा की गहराई है, तो कहीं चरित्र ग्रन्थों की उत्तुंग तरंगे हैं, कहीं स्तुति, भजन, और उपदेश पदों का भक्ति प्रवाह है तो कहीं अध्यात्मिक भावना का मधुर घोष है। आपके द्वारा रचित अनेक विध स्फुट अध्यात्मपद आज भी सहस्र जनकण्ठों से मुखरित होते रहते हैं।

पूज्यश्री के द्वारा लिखित साहित्य का अधिकांश भाग अभी अप्रकाशित पडा है। आपके द्वारा रचित साहित्य का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार हैं

आगम साहित्य—

१—ग्यारह अंग सूत्र—	टीका के नाम
१—आचारांग	आचारचिंतामणि
२—सूत्रकृतांग	समयार्थबोधिनी
३—स्थानांग	सुधाख्या
४—समवायांग	भावबोधनी

५–व्याख्या प्रज्ञप्ति	प्रमेय–चन्द्रिका
६–ज्ञाता–धर्मकथा	अनगारधर्मामृतवर्षिणी
७–उपासकदशांग	अगारधर्मसंजीविनी
८–अन्तकृद् दशांग	मुनि कुमुद चन्द्रिका
९–अनुत्तरोपपातिकदशांग	अर्थबोधिनी टीका
१०–प्रश्नव्याकरण	सुदर्शिनीटीका
११–विपाकसूत्र	विपाकचन्द्रिका

२ बारह उपांग साहित्य

१ औपपातिक	पीयूषवर्षिणी
२ राजप्रश्नीय	सुबोधिनी
३ जीवाभिगम	प्रमेयद्योतिका
४ प्रज्ञापना	प्रमेयबोधिनी
५ सूर्यप्रज्ञप्ति	सूर्यज्ञप्ति प्रकाशिका
६ चन्द्रप्रज्ञप्ति	चन्द्रप्रज्ञप्तिका
७ जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति	प्रकाशिकाव्याख्या
८ निरयावलिका (कल्पिका)	सुन्दरबोधिनी
९ कल्पावतंसिका	,,
१० पुष्पिका	,,
११ पुष्पचूलिका	,,
१२ वृष्णिदशांग	,,

३ मूल

१ उत्तराध्ययन	प्रियदर्शिनी
२ दशवैकालिक	आचारमणिमञ्जूषा टीका
३ नन्दीसूत्र	ज्ञानचन्द्रिका
४ अनुयोगद्वार	अनुयोगचन्द्रिका

४ छेद सूत्र

१ निशीथ	चूर्णि–भाष्य अवचूरि
२ बृहद्कल्प	,, ,, ,,
३ व्यवहार	भाष्य
४ दशाश्रुतस्कन्ध	मुनिहर्षिणी टीका

१ आवश्यक सूत्र मुनितोषिणी

आपने इन बत्तीस सूत्रों पर संस्कृत में टीकाएँ लिखी हैं। हिन्दी और गुजराती भाषाओं में विस्तृत विवेचन के साथ इनका अनुवाद भी किया है।

१ कल्पसूत्र यह आपकी स्वतन्त्र रचना

२ तत्त्वार्थ सूत्र (संस्कृत प्राकृत) ,, ,,

न्याय

१. न्याय रत्नसार (न्याय प्रथमा परीक्षोपयोगी ग्रन्थ) अध्याय १-६ तक
२. न्याय रत्नावली (न्याय मध्यमा परीक्षोपयोगी) अध्याय १-६ तक
३. न्याय रत्नावली (स्याद्वाद मार्तण्ड टीका सहित) (शास्त्री परीक्षोपयोगी ग्रन्थ) अध्याय १-६ तक
४. न्याय रत्नावली स्याद्वाद मार्तण्ड टीका सहित (न्यायाचार्य परीक्षोपयोगी) अध्याय १-६ तक

व्याकरण

१. प्राकृत चिन्तामणि (प्राकृत व्याकरण) प्रथमा परीक्षोपयोगी
२. प्राकृत कौमुदी (प्राकृत भाषा पर सम्पूर्ण प्रकाश डालने वाला पंचाध्यायी ग्रन्थ)
१. आर्हत् व्याकरण (संस्कृत व्याकरण) लघुसिद्धान्त कौमदी के समकक्ष ग्रन्थ
२. आर्हत् व्याकरण (सिद्धान्त कौमुदी के समकक्ष ग्रन्थ)

कोष

१. श्रीलाल नाममाला कोष
२. नानार्थोदय सागर कोष
३. शिव कोष (अमर कोष की तरह का ग्रन्थ)

श्रीलालनाम माला कोश-यह आधुनिक शब्द कोष है। इसमें पूज्यश्री ने अनेक प्रचलित अंग्रेजी शब्दों का वैज्ञानिक पद्धति से संस्कृति करण किया है। इस विशिष्ट भाषा कोश को देखकर कई विद्वान बडे प्रभावित हुए। उन विद्वानों में से कुछ विद्वानों की सम्मतियाँ इस प्रकार है--

सर्वतन्त्र स्वतन्त्र श्रीयुत पं. बालकृष्ण शास्त्री, न्याय-वेदान्त प्रधानाध्यापक, हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस

श्रीलालनाममालानामधेयं नूतनं नामलिङ्गानुशासनं निर्माणकर्तरि व्याकरणप्रवीणतां प्रकाशयद्व्ययवयोग-समन्वय स्पृशा दृशा संस्कारकर्मीकृताधुनिकव्यवहारप्रथित-परदा-दरवारित्यादिपदकदम्बकावेदनेन प्रभूतेषु संस्कृताभिभाषण प्रभृतिकार्येषु परमोपयोगिता मावहतीति।

प्रधानाचार्य आत्मारामजी महाराज
लुधियाना (पंजाब)

मनोरमा कृतिरेषा सानन्दनस्माभिखलोकिता। इदानींतन शैल्यामनोहरा उत्तमा उपयोगिनश्च शब्दा अत्र निबद्धाः सन्ति। संस्कृत प्राथमिकशिक्षायां पुस्तिकेयं परमोपयोगिनी भविष्यतित्याशास्महे। उत्साहरहितानामुत्साहप्रदम्भूयात् कृत्यमिदं। को जानाति चिरसुप्तस्यास्मदीयसमाजस्य जागृतेः सुचिह्नं स्यात्कृत्यमेतत्। अस्तु प्रशंसनीयश्चायं भवदीयः परिश्रमो, धन्यवादार्हो हि भवान्। ... .

इनके अतिरिक्त अन्य विद्वानों ने भी इस ग्रन्थ की बडी प्रशंसा की है।

सिद्धान्त ग्रन्थ—

१. गणधरवाद (मूल, प्राकृत गाथा, उनकी संस्कृत छाया, उन पर संस्कृत में विशद टीका की रचना कर गणधरों के प्रश्नों का एवं उनके उत्तरों का सुन्दर विवेचन किया है।
१ गृहि धर्म कल्प तरु (मूल प्राकृत गाथा उसकी संस्कृत छाया और उन पर हिन्दी गुजराती विवेचन
२. जैनागमतत्त्व दीपिका (जैनपारिभाषिक शब्दों का सुन्दर हिन्दी विवेचन
३. तत्वप्रदीपिका (नव तत्त्व का विशद विवेचन मूल प्राकृत गाथाएँ उसकी संस्कृत छाया और उनका हिन्दी में विवेचन

काव्य ग्रन्थ—

१–लोंकाशाह महाकाव्य (१४ सर्ग युक्त) २–शान्ति सिन्धु महाकाव्य (१५ उल्लास युक्त)

३– मोक्षपद (धम्मपद की तरह का ग्रन्थ) प्राकृत गाथा, संस्कृत छाया और उनका हिन्दी गुजराती में अनुवाद ४–श्रीलक्ष्मीधर चरित्र–प्राकृत संस्कृत–हिन्दी कविता सहित

स्तोत्र स्तुतियाँ—

१. जवाहिर गुण किरणावली
२. नव स्मरण
३. कल्याण मंगल स्तोत्र
४. महावीराष्टक
५. जिनाष्टक
६. वर्द्धमान भक्तामर
७. नागाम्बरमञ्जरी
८. लवजीस्वामी स्तोत्र
९. माणिक्य अष्टक
१०. पूज्य श्रीलालकाव्य
११. संकटमोचनाष्टक
१२. पुरुषोत्तमाष्टक
१३. समर्थाष्टक
१४. जैनदिवाकरस्तोत्र
१५. वृत्तबोध–
१६. जैनागम–तत्वदीपिका
१७. सूक्तिसंग्रह
१८. तत्वप्रदीप इत्यादि ...

इस विपुल ग्रन्थराशि पर से इसके निर्माता की बहुश्रुतता, सागरवरगम्भीरता विद्वता और सर्वतोमुखी प्रतिभा का सरल परिचय मिलता है। आगमों के गूढ से गूढ विषयों का भावोद्घाटन करनेवाली टीकाएँ आध्यात्मिक विवेचन करने वाले प्रकरण, विस्तृत दार्शनिक चर्चाओं के साथ अनेकान्त का विवेचन करने वाले न्याय ग्रन्थ इनके प्रकाण्ड पाण्डित्य का परिचय कराने के लिए पर्याप्त है। आचार्य श्री घासीलालजी महाराज ने तो स्थानकवासी के साहित्य को पूर्णता के उच्च शिखर पर पहुँचा दिया है।

इस प्रकार व्याकरण, काव्य, छन्द, धर्मशास्त्र, न्यायशास्त्र, नीति आदि विषयों पर विविध ग्रन्थ लिखकर आपने स्थानकवासी समाज पर महान उपकार किया है। स्थानकवासी समाज के इस महान् ज्योतिर्धर से स्थानकवासी साहित्य का इतिहास सदा जगमगता रहेगा।

आचार्य श्री ने साहित्य सेवा के अतिरिक्त भी जैन धर्म की महती प्रभावना की है। आपने हजारों मनुष्यों को अहिंसा धर्मानुयायी बनाये, एक चतुर कलाकार मिट्टी के लोंदे को जिस तरह अपनी अंगुलियों की करामात से जी चाहा रूप देता है उसी तरह पूज्यश्री को लोगों के दिल अपने अनुकूल बना लेने की दिव्य शक्ति प्राप्त थी। आपके उपदेश में खास विशेषता थी वह यह कि आपका उपदेश सर्वसाधारण के लिए ऐसा रोचक और उपयोगी होता है कि जिससे ब्राह्मण, जैन क्षत्रिय मुसलमान और पारसी आदि समस्त लोग मुग्ध हो जाते थे। आपने सैकडों राजा महाराजाओं को उपदेश देकर लाखों मूक पशुओं को अभयदान दिलवाया और देव देवियों के नाम पर होने वाली बलि को सदा के लिए बन्द करवाई।

समाज के उत्थान के लिए आप सतत जागृत और प्रयत्नशील थे। आप दिन–रात समाज श्रेय के ही स्वपने देखते रहते थे। समाज कल्याण के कार्यों में आप इतने संलग्न रहते थे कि आपको अपने शरीर के स्वास्थ्य का भी ध्यान नहीं रहता था। आपके परोपकार मय जीवन को देखकर एक कवि की ये पंक्तियां याद आती है–

तुम जीवन की दीप शिखा हो, जिसने केवल जलना जाना।
तुम जलते दीपक की लो हो, जिसने जलने में सुलझाना॥

आप उच्च कोटि के विद्वान भी थे और गहरे दार्शनिक भी थे। संस्कृत प्राकृत, उर्दू, फारसी हिन्दी, गुजराती, मराठी आदि १६ भाषाओं में पारंगत थे। जैनागमों का आपने तलस्पर्शी अध्ययन किया

था और अन्य धर्मों के भी आप गहरे अभ्यासी थे । विद्वत्ता के साथकेसाथ आप एक अच्छे वक्ता थे। सिर्फ आप में विद्वत्ता ही नहीं थी किन्तु चारित्र भी बहुत उच्च कोटि का था । आपके स्वभाव में सरलता व्यवहार में नम्रता, वाणी में मधुरता, मुख पर सौम्यता, हृदय में गम्भीरता, मन में मृदुता, भावों में भव्यता और आत्मा में दिव्यता आदि अनेक गुण सौरभ से आप सुवासित थे ।

आपका जन्म मेवाड के एक छोटे से किन्तु सुरम्य लहलहातेखेतो वह बडे बडे पहाडों की परिधि से घिरे हुए 'बनोल' नामक गाव में एक वैरागी कुटुम्ब में वि. सं. १९४१ में हुआ। आपके पिता का नाम प्रभुदत्तजी और माता का नाम श्रीमति विमलाबाई था । आपने १६ वर्ष की बाल्य अवस्था में मय वैराग्य जैन समाज के ख्यातनाम आचार्य पूज्य जवाहरलालजी महाराज के पास मेवाड प्रान्त के जसवन्त गढ में वि. सं. १९५८ में दीक्षा ग्रहण की । गुरु की अनन्य कृपा से आपने आगम, संस्कृत, प्राकृत. न्याय, व्याकरण आदि का अध्ययन कर उच्च कोटि की विद्वत्ता प्राप्त की । आपकी विशिष्ट विद्वत्ता से प्रभावित होकर कोल्हापुर के महाराजा ने आपको कोल्हापुर राजगुरु एवं शास्त्राचार्य की पदवि से विभूषित किये । आपकी त्याग, तपस्या संयम की उत्कृष्टता देखकर कराची संघ ने 'जैन दिवाकर' और 'जैन आचार्य पद देकर अपने आपको गौरवान्वित किया ।

पूज्यश्री जितने महान थे, उतने ही विनम्र भी थे । आप एक पुष्पित एवं फलित विशाल वृक्ष की तरह ज्यों ज्यों महान प्रख्यात एवं प्रतिष्ठित होते गये त्यों त्यों अधिकाधिक विनम्र होते चले गये । गुरु-जनों के प्रति ही नहीं अपने से लघुजनों के प्रति भी आपका हृदय प्रेम से छलकता रहता था । छोटे से छोटे साधुओं की भी रोगादि कारणों में आपने वह सेवा की है, जो आज भी यशो गाथा के रूप में गाई जा रही है ।

सुन्दरी उषा का प्रत्येक चरण–निन्यास बहुरंगी संध्या में विलीन हो जाता है । अथ के साथ इति लगी रहती है । विक्रम सं. २०२९ में पौषवदि १४ को ता० २।१।७३ को संथारा ग्रहण किया और पोषवदि अमावस्या को ता० ३।१।७३ के दिन जन जीवन को आलोकित करनेवाला वह दिव्य आलोक दिव्य लोक का यात्री हो गया । विवेक और विवेक का प्रखर भास्कर–जो मेवाड के क्षितिज पर उदय हुआ था, वह गुजरात के अस्ताचल पर अस्त हो गया । सरसपुर अहमदाबाद के स्थानकवासी जैन उपाश्रय में स्थारा विधिवत् पूर्ण करके आचार्यप्रवर श्रीघासीलालजी महाराज ने इस असार संसार को छोडकर अमर पद प्राप्त कर लिया ।

जन्म जीवन और मरण–यह कहानी है मनुष्य की । किन्तु पूज्यश्री का जन्म था कुछ करने के लिए । उनका जीवन था, परहित साधना के लिए । उनका मरण था फिर न मरने के लिए, बचपन, जवानी और वृद्धावस्था–यह इतिहास है मानव का । किन्तु इस इतिहास को उन्होंने नया मोड दिया । उनका बचपन खेल कूद के लिए नहीं था, वह था ज्ञान की साधना के लिए । उनकी जवानी भोग विलास के लिए नहो, वह थी संयम की साधना के लिए । उनकी वृद्धावस्था अभिशाप नहीं, वह था एक मंगल मय वरदान । पूज्य श्री ने अपने जीवन का सर्वस्व समर्पित कर दिया था सर्वजन हिताय और सर्वजन सुखाय ।

नम्र

पं. करुणाशंकर वे. पंड्या

प्रकाशकीय

कृतज्ञता सर्व गुणों का मूल है, यही समझकर पं. रत्न मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराज के हृदय में परम उपकारी पूज्य गुरुवर प्रातः स्मरणीय विद्वद् शिरोमणि शास्त्रोद्धारक आचार्य श्री घासीलालजी महाराज सा० के जीवन चरित्र को प्रकाशित करने की भावना जागृत हुई। और इसी निमित्त से उनकी लोकोत्तर सेवाओं का परिचय सर्वसाधारण को विस्तृतरूप से हो जायगा यह विचार कर आपने अन्य अन्तेवासी शिष्यों की सहायता से पूज्य श्री विषयक यथाज्ञात सामग्री को संकलित कि उन महान पुरुषों से यह लेखन सामग्री मुझे मिली और लिखने का मुझे सोभाग्य मिला जिसके लिए बड़ा आभारो हूं। लिखने में खूब सावधानी रखी हैं फिरभी कुछ त्रुटायें दृष्टि दोष से व प्रेस से रह गई हो तो वाचकगण क्षमा करें कारण यह चरित्र तो एक महान सागर है। दानवोर श्रीमान् गीरधरभाई अमीचन्दभाई वांटविया खाखीजालिया निवासी ने जब यह मंगल जानकारी प्राप्त की तब तुरंत पूज्य श्री के जीवन चरित्र को प्रकाशित करने का भार वहन कर लिया। और इस ग्रन्थ के समस्त प्रकाशन का खर्च शास्त्रोद्धार समिति को देने का वचन दिया। इस प्रकार चरित्र ग्रन्थ के प्रकाशन में जो वाटविया परिवार ने सहायता पहुँचाई है, अतः समिति द्वारा उनका आभार मानता हूं।

पाठक वृन्द से नम्र निवेदन है कि इस चरित्र ग्रन्थ में कोई त्रुटि दृष्टिगोचर होवे तो हमें सूचित करने पर उनका दूसरी आवृत्ति में संशोधन हो सकेगा।

हम यह ग्रन्थ हमें जैनशासन के प्रति सर्व प्रकार के कर्तव्यो की प्रेरणा देने में यत्किञ्चित भी सहायक सिद्ध हुआ तो हम अपना परिश्रम सार्थक समझेगे।

नम्र

पं. रुपेन्द्रकुमार न्याय व्याकरणाचार्य
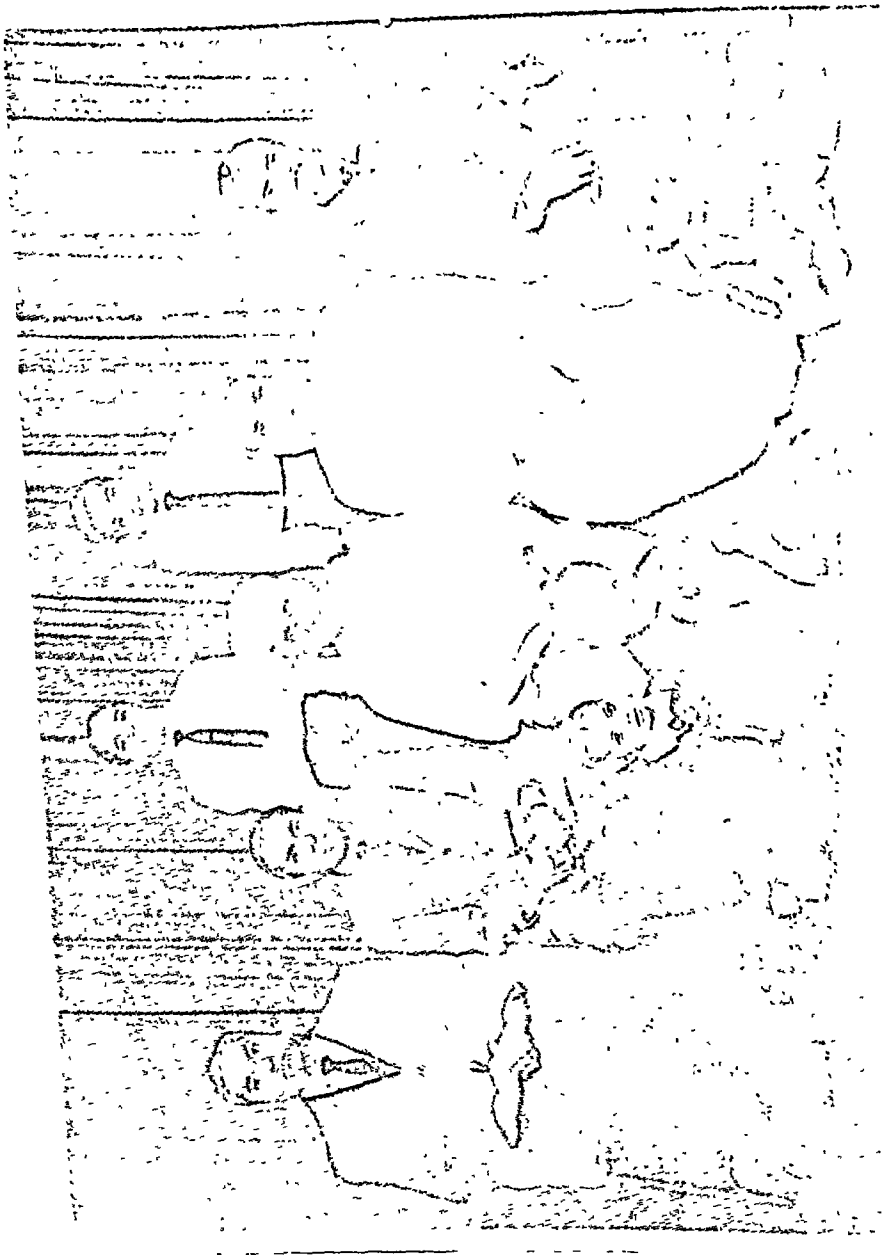
ગ્રુપ ફોટો જમણી બાજુ ઉભેલા-જયેશકુમાર તથા રાજેન્દ્રકુમાર
જમણી બાજુ બેઠેલા-(૧) ચંદ્રકાન્તભાઇ (૨) વનેચંદભાઈ (૩) ગીરધરલાલભાઇ
(૪) અમીચંદભાઇ (૫) રમેશચંદ્રભાઇ
જમણી બાજુ નીચે બેઠેલા-(૧) મનોજકુમાર (૨) હીમાંશુકુમાર (૩) પ્રતીપકુમાર

समर्पण

श्रीमान् गीरधरभाई एवं उनके परिवार का अल्प परिचय

इस परिवर्तन शील संसार में कौन नहीं जन्म लेते हैं और मरते हैं ? किन्तु जन्म और जीवन मरण उन्हीं का सफल है जिन्होंने अपने वंश की प्रतिष्ठा में चार चांद लगाए हों, जाति के अभ्युत्थान में योगदान किया, कोई श्रेष्ठ कार्य करके जीवन में क्रांति की।

विश्ववांटिका में नाना प्रकार के पुष्प खिलते हैं और अपना सौरभ दुनियां को लुटाकर मुरझा जाते हैं ऐसे ही सज्जन पुरुष भी इस संसार में आते हैं और अपने सतकृत्यो का सौरभ संसार में फैलाकर चले जाते हैं। जिस प्रकार मेघ वृष्टि करके चला जाता है, किन्तु पिछला वातावरण बहुत ही सुन्दर बना जाता है सम्पूर्ण वसुन्धरा को हरीभरी बना देता हैं। सज्जन और धार्मिक वृत्ति के पुरुष अवनि पर जन्म लेते हैं और पथ भ्रान्तजनो को सत्यपथ प्रदर्शित करते हैं, तथा अपने सत्यकार्यों से धार्मिक संस्कारों से पृथ्वी को आप्लावित करके एक आदर्श उपस्थित करते हैं। श्रीमान् सुश्रावक गिरधरभाई वांटविया भी ऐसे ही एक विशिष्ट श्रावक व धार्मिक संस्कार वाले सज्जन व्यक्ति हैं।

सौराष्ट्र के मोज नदी के किनारे 'खाखीजालिया' नामका एक छोटा-सा गांव बसा है। इस गांव में वि. सं. १९४० में श्रीमान् गिरधरभाई का जन्म हुआ। बचपन से ही सन्तों के सहवास में रहने के कारण आपकी अपने धर्म की ओर विशेष रुचि है। लक्ष्मी देवी की भी आप पर अपार कृपा है। इहलौकिक सुख सुविधा तथा भोगोपभोग का पूर्ण साधन होने पर भी आप उससे "पद्मपत्रमिवाम्भसा" पानी में अलिप्त रहनेवाले कमल पत्र की तरह निर्लिप्त रहते हैं।

श्रीमान गिरधरभाई को बाह्य दृष्टि से देखने पर ऐसा प्रतीत होता है कि इनकी व्यापारादि बाह्य प्रवृत्तियाँ इतनी अधिक तथा इतने विपुल परिमाण में फैली हुई हैं। इससे इनका अधिकतर समय इन सर्व की व्यवस्था में ही व्यतीत होता होगा, पर वस्तुतः उनके निकट रहने पर उनके मानस तथा दिनचर्या का सही-सही पता चलता है। ये अपना समय संत मुनियों के सहवास में व्यतीत करते हैं। सन्त समागम के कारण शास्त्रों का श्रवण मनन तो अनायास ही चलता रहता है। निरन्तर सत्संगति तथा शास्त्रों के श्रवण में अपना अधिकतर समय व्यतीत करने से आपकी वृत्ति बाह्य ओर से हटकर धर्म की ओर हो गई है। धर्म के लिए ये अपना तन मन और धन न्योछावर करने के लिए सदैव कटिबद्ध रहते हैं। आप अपनी ८५ वर्ष की अवस्था में भी श्रावक के बारह व्रतों का अत्यन्त निष्ठा और श्रद्धापूर्वक पालन कर रहे हैं।

आपके पुत्र श्रीमान् अमीचन्दभाई भी आपही की तरह अत्यन्त धर्मनिष्ठ व्यक्ति हैं। आपकी सरलता, उदारता, धार्मिकता, शिक्षा तथा साहित्य प्रेम एवं परोपकार वृत्ति समाज के लक्ष्मी पुत्रों के लिए अनुकरणीय है। विशाल व्यवसाय होने पर भी आपका अधिकांश समय धार्मिक कार्यों में ही व्यतीत होता है।

आपकी धर्म पत्नी अ. सौ. व्रजकुंवरबेन तो धर्म की साक्षात् मूर्ति हि है। बहुत ही छोटी अवस्था में साधु साध्वियों के सत्संग से आपके विशुद्ध हृदय क्षेत्र में धार्मिकता एवं व्यवहारिकता के बीज पड चुके थे। धार्मिक संस्कार वाले परिवार में पाणि ग्रहण होने के बाद आपकी धार्मिक वृत्ति उत्तरोत्तर ज्यादा से ज्यादा बढती हि गई। प्रेम, दक्षता एवं सहिष्णुता के द्वारा समूचे परिवार पर आपकी गहरी छाप पडी।

सत्संगति, सामायिक, प्रतिक्रमण, आयंबिल, उपवास आदि तपस्याएँ एवं अन्य धार्मिक नित्यकर्म आपके बाल्यकाल से ही चालू थे। बाद में वे ओर ही विशिष्टता पकडते गये घर के नन्हें नन्हें बच्चों को एकत्रित कर बडे आकर्षक ढंग से धार्मिक वार्ताएँ व कहानियाँ आप सुनायां करती है फलस्वरूप समूचा परिवार धार्मिक संस्कारों से ओतप्रोत हो गया। सज्जन्न परिवार की महिला होते हुए भी आपकी सादगी आज की फेशन परस्त नारी के लिए एक आदर्श उपस्थित करती है।

इस प्रकार सांसारिक और पारमार्थिक जीवन व्यतीत करते हुए श्रीमान् अमीचन्दभाई के चार सन्ततियाँ हुई। उनमें प्रथम पुत्र श्री वनेचन्दभाई का जन्म सं. १९८४ में आश्विन शुक्ला तृतीया के दिन दिनाङ्क ३१।१०।१९२८ को हुआ। एवं द्वितीय पुत्र चन्द्रकान्तभाई का जन्म सं. १९९२ के कार्तिक शुक्ला एकादशी बुधवार दिनांक ६-११=१९३५ में हुआ। तीसरे नंबर में सुलक्षणी इन्दुबहन का जन्म सं. १९.९४ आश्विन कृष्णा बीजने मंगलवार ता. ८-११ १९३८ में हुआ। एवं छोटे पुत्र श्री रमेशचन्द्र का जन्म सं १९९७ के चैत्र कृष्णा द्वितिया शनिवार को ता १२-४-१९४१ में हुआ। इन सर्व के जन्म खाखीजालियां में ही हुए।

ज्येष्ठ पुत्र श्रीमान वनेचन्दभाई एक साहसिक एवं कुशल व्यापारी होने के साथ साथ अत्यन्त धार्मिक वृत्ति वाले व्यक्ति हैं। धर्मध्यान, धार्मिक क्रिया और तपस्या में बडी रुचि रखते हैं। प्राथमिक शिक्षा प्रात करके व्यवसायार्थ आप बेंगलोर गये वहाँ महावीर टेक्स टायलस्टोर्स के नाम एक छोटा-सा व्यवसाय प्रारंभ किया। योग्यता ऐवं सच्चाई से व्यवसाय करने से अल्प समय में ही आपने बडी अच्छी उन्नति करली और प्रसिद्ध व्यापारियों में अपना प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त कर लिया। धीरे-धीरे व्यवसाय में प्रगति करते हुए आपके दोनों भाई को बेंगलोर बुला लिये उनमें चन्दकान्तभाई को अपने व्यवसाय में सहभागी बना कर एक कुशल व्यापारी बना दिया। अपने सबसे छोटे भाई रमेशचन्द को कॉलेज की उच्चकोटि की शिक्षा देकर मिकेनिकल एंजिनियर बनाया। श्री रमेशचन्दभाई आधुनिक शिक्षा से शिक्षित होने पर भी अपने माता पिता के धार्मिक संस्कारों में संस्कारित हैं। तीनों भाई साथ ही में रहकर अपने परिवार की उन्नति एवं प्रतिष्ठा में सतत प्रयत्य शील हैं। इनका आपसी प्रेम, सहयोग एवं मिलनसारिता सभी गृहस्थ के लिए अनुकरणीय है।

बाटविया कुटुम्ब जैनधर्म की उच्च भावना से रंगा हुआ है। जिसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। श्री ईन्दुबहन सुखी एवं सम्पन्न परिवार में जन्म लेने पर भी उसका मन वैराग्य रंग में रंगा हुआ है। अपनी माता व्रजकुँवर बहन के सतत धार्मिक कार्यो का श्रीइन्दुमतीबहन पर अच्छा प्रभाव पडा फलस्वरूप आपने दीक्षा लेने का निश्चय किया। बाल्यावस्था में ही इसे संसार की अनित्यता का अनुभव होने लगा। संसारमें वे महा बुद्धिमान आत्माए धन्यवादके पात्र है, जिनके निर्मल अन्तः करण में कारण के विना ही वैराग्य उत्पन्न होता है। श्री इन्दुवहन की इस वैराग्य वृत्ति से माता-पितो एवं भाई को कुछ विचलित कर दिया। क्योंकि परिवार में एक ही पुत्री होने के नाते समस्त परिवार की ममता इस पर अधिक थी। त्याग मार्ग पर चलने की इच्छा रखनेवाले मुमुक्षुओं के मार्ग में सब से बडी बाधा होती है स्वजनों का उसके प्रति मोह जो इस मोह के वशीभूत हो जाता है वह फिर ईस मार्ग पर अग्रसर नहीं हो सकता। लेकिन जो व्यक्ति इस मोह पर विजय प्राप्त कर लेता है वह सुख पूर्वक इस मार्ग पर प्रगति कर सकता है। शास्त्रकारों ने इस मोह को अनुकूल उपसर्ग कहा है। प्रतिकूल उपसर्गों की अपेक्षा अनुकूल उपसर्गों पर विजय पाना जरा टेढी खीर हैं।

विशेष पुण्योदय से परम प्रतापी आगमोद्धारक जैन दिवाकर पूज्यश्री घासीलालजी महाराज श्री एवं पं. रत्न मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराज साहब के उपदेश से श्री इन्दुमती बहन की वैराग्य भावना अत्यन्त प्रबल

हो उठी। बांटवीया कुटुम्ब पर तो प्रारम्भ से नी पूज्यश्री का महान प्रभाव था। फलस्वरूप श्री इन्दुमती बहन पूज्यश्री की सेवा में रह कर धार्मिक अध्ययन करने लगी। इसने अल्प समय में ही अपनी कुशाग्र बुद्धि का परिचय दिया और अच्छा अध्ययन किया।

बाटविया कुटुम्ब बडा विचक्षण और दूरदर्शी है। वे इन्दुमती बहन की प्रतिभा और उत्कट वैराग्य से प्रभावित हो चुके थे। उन्हें दृढ विश्वास हो गया था कि यह बालिका अत्यन्त होनहार है। इसके हाथों से शासन की प्रभावना और अनेक प्राणियों का कल्याण होने वाला है। इसके साथ ही साथ इस की अत्यन्त प्रबल वैराग्य भावना को ठेस पहुंचाना और धर्मान्तराय करना भी उचित नहीं। अतएव पुत्री लोभ से नहीं किन्तु अगणित प्राणियों के कल्याण की उदार कामना से प्रेरित होकर एवं पूज्य श्री के प्रवचन से प्रभाविस होकर श्री इन्दुमती बहन को दीक्षा प्रदान करने का उन्होंने निर्णय कर लिया।

अन्त में आचार्य श्री की प्रेरणा से प्रेरित होकर श्री आठकोटि दरियापुरी संप्रदाय के शान्तस्वभावी सरल हृदया विदुषी महासतीजी श्रीताराबाई एवं शांत स्वभावी शास्त्र रहस्य की ज्ञाता श्रीहीराबाई महासती के समीप वि. सं. २०२२ को वैशाख शुक्ला एकादशी रवीवार के दिन ता० १. ५. १९६६ के दिन बडे समारोह के साथ अपनी इकलौती लाडली पुत्री को दीक्षा देकर उसके मोक्षमार्ग को प्रशस्त कर दिया। स्वयं भी इस महान कार्य को करके धन्य हो गये।

दीक्षा ग्रहण कर लेने पर आप के जीवन का नया अध्ययन प्रारम्भ हुआ। आप यह भली भांति समझती है कि मुनि जीवन फूलों की शय्या नहीं किन्तु शर-शय्या है, मुनि को सतत रागद्वेष रूपी शत्रुओं पर विजय पाने के लिए सतत सावधान रहना पड़ता है। ईसी भावना से आप संयम की साधना में सतत गतीशील रहती है। इस प्रकार बाटवीया परिवार अत्यन्त धर्म परायण एवं पूज्यश्री के अनन्य उपासक है।

जैन धार्मिक संस्थाओं की आप सदैव सहायता करते रहे हैं। अ० भा० श्वे० स्था० जैन शास्त्रोद्धार समिति को भी आपने समय-समय पर आर्थिक सहायता प्रदान की है। आपने प्रस्तुत चरित्र ग्रन्थ के प्रकाशन एवं लेखन कार्य में होने वाले समस्त खर्च को देना स्वीकार किया है। अतः समिति उनका आभार मानती है।

आपका मन्त्री,
श्री अ. भा. श्वे. स्था. जैन शास्त्रोद्धार समिति

प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रमुख विषय

श्री

परमपूज्य आचार्य श्री घासीलालजी म. सा. का

जीवन चरित्र

प्राक्कथन—

जैनधर्म

जैनधर्म आत्मा का अधिराज्य स्थापित करने वाला धर्म है। अध्यात्म इसकी आधारशिला है। यह भौतिकता के संकुचित क्षेत्र में आबद्ध न होकर आध्यात्मिकता के विराट् विश्व में उन्मुक्त होकर विचरण करनेवाला है। इसका लक्ष्यबिन्दु इस दृश्यमान स्थूल संसार तक ही सीमित नहीं वरन् विराट् अन्तर्जगत् की सर्वोपरिस्थिति प्रात करना है। इसकी संस्कृति श्रम प्रधान है इसलिए इसे 'श्रमण धर्म' भी कहते हैं। श्रमण शब्द इस बात को प्रकट करता है कि व्यक्ति अपना विकास अपने ही श्रम से कर सकता है। विकास पतन, सुख-दुःख, हानि-लाभ और उत्कर्ष-अपकर्ष के लिए व्यक्ति स्वयं उत्तरदायी है। कोई दूसरा व्यक्ति उसका उद्धार या अपकार नहीं कर सकता। जैनधर्म का यह सिद्ध कथन है—

अप्पा कत्ता विकत्ताय दुहाण य सुहाण य।
अप्पा मित्तममित्तं च दुप्पट्ठिय सुपट्ठिओ॥

अर्थात् दुःख और सुख का कर्ता यह आत्मा ही है, अपना मित्र और शत्रु भी अपनी यह आत्मा ही है; यदि बुरे मार्ग पर प्रवृत्त हुए तो यही आत्मा शत्रु बनेगी और सुमार्ग पर प्रवृत्त होने पर यही आत्मा मित्र सिद्ध होगी।" इस तरह आत्मा की शक्ति पर ही अवलम्बित रह कर पुरुषार्थ की प्रेरणा देनेवाली संस्कृति श्रमण संस्कृति कही जाती है। श्रमण संस्कृति का दूसरा नाम 'समन' है जिसका अर्थ है समान भाव। जो सब आत्माओं को समान अधिकार देती है जिसमें वर्गगत या जातिपांति गत भेद के लिए कोई अवकाश नहीं है। वह 'समन' संस्कृति है। तीसरा अर्थ है 'शमन' अर्थात् अपनी वृत्तियों को शान्त रखना। इस तरह व्यक्ति तथा समाज का कल्याण श्रम, सम और शम रूप तीन तत्त्वों पर अवलम्बित है। इन तीनों को सूचित करनेवाली संस्कृति श्रमण संस्कृति के नाम से पहचानी जाती है।

भारत की दूसरी संस्कृति ब्राह्मण संस्कृति है और इसका आधार है ब्रह्म। इसका अर्थ है यज्ञ, पूजा, स्तुति और ईश्वर। ब्राह्मण संस्कृति इन्हीं तत्त्वों के चारों ओर घूमती है। वेद के प्रारंभ में हमें प्रकृति पूजा दृष्टिगोचर होती है अग्नि, वायु, जल सूर्य आदि की स्तुति विविध वैदिक मंत्रो के द्वारा की जाती है।

ब्राह्मण-संस्कृति ने यज्ञ और ईश्वर के सर्वनियंन्तृत्व को स्वीकार किया। इससे माने जाने लगा कि भगवान की जो इच्छा होगी, वही होगा। मनुष्य स्वयं कुछ नहीं कर सकता। इस भावना ने निर्बलता और अकर्मण्यता को जन्म दिया। व्यक्ति की पुरुषार्थ-भावना को धक्का लगा। इसके विपरीत श्रमण संस्कृति यह विधान करती है कि मनुष्य स्वयं अपना विकास कर सकता है। वह अपने पुरुषार्थ से परम और चरम विकास परमात्म पद को प्राप्त कर सकता है। ब्राह्मण परम्परा में व्यक्ति अपने उद्धार के लिए सदा परमुखापेक्षी रहा है। देवी, देवता ईश्वर, ग्रह, नक्षत्र आदि सैकडो ऐसे तत्त्व हैं जो व्यक्ति के भाग्य पर नियंत्रण करनेवाला, स्वाश्रयी और अनन्त शक्ति सम्पन्न है। यह सब से प्रधान और मौलिक भेद है जो ब्राह्मण और श्रमण संस्कृति में पाया जाता है।

जैन संस्कृति परम उदार व्यापक और सार्वजनिक है। यह सर्वजनहिताय और सर्वजन सुखाय है। इसमें संकीर्णता के लिए कोई स्थान नहीं है, जाति-पाति का कोई भेद नहीं, राजा और रंक का पक्षपात नहीं स्त्री और पुरुष के अधिकारों में विषमता नहीं। वह मानवमात्र को ही नहीं पशु पक्षियों को भी धर्म का अधिकार प्रदान करता है। आचारांग सूत्र में कहा है—

जहा पुण्णस्स कत्थइ तहा तुच्छस्स कत्थइ।
जहा तुच्छस्स कत्थइ तहा पुण्णस्स कत्थइ।

अर्थात् जैनधर्म का उपदेष्टा साधक अनासक्ति पूर्वक जिस वैराग्य भाव से रंक को उपदेश करता है उसी निष्काम भाव से चक्रवर्ती आदि राजाओं को भी उपदेश देता है। अर्थात् उसकी दृष्टि में श्रीमन्त और निर्धन का, राजा और रंक का उंच और नीच का कोई भेद भाव नहीं होता। वह प्रत्येक व्यक्ति को उपदेश का अधिकारी समझता है। जैनधर्म की छत्रछाया का प्रत्येक देश, प्रांत, जाति, वर्ग और श्रेणी का व्यक्ति आश्रय पा सकता है। पतित से पतित व्यक्ति भी इसका अवलम्बन लेकर अपना कल्याण कर सकता है।

जैनधर्म विश्व शान्ति का शाश्वत स्रोत है। विश्व के प्रांगन में सुख और शान्ति रूपी सुधा का संचार एवं विस्तार करने का सर्वोपरि श्रेय यदि किसी को है तो वह केवल जैनधर्म को ही होसकता है। इस में कोई सन्देह नहीं कि जैनधर्म ने ही सर्व प्रथम विश्व के सामने अहिंसा प्रधान संस्कृति प्रदान की है। जैनधर्म ही अहिंसा प्रधान संस्कृति का आद्य प्रणेता है। अहिंसा के द्वारा ही सच्ची शांति मिल सकती है, यह ध्रुव सत्य है। हिंसा, वैर प्रतिस्पर्धा, और युद्ध की दारुण विभीपिका से भयभीत बने हुए विश्व को इस सत्य की थोडी बहुत प्रतिती होने लगी है। आज सारा विश्व हिंसा और विनाश के साधनों से संत्रस्त है। सारा वायुमण्डल सम्भावित आणविक महायुद्ध के झंझावात में अशांत और विक्षुब्ध हो रहा है। चारों ओर अशान्ति का घोर अन्धकार छा रहा है। ऐसे घोर अन्धकारमय वातावरण में भी जैनधर्म का अहिंसा सिद्धान्त ही दूर—सुदूर तक चमकती हुई प्रकाश किरणों को फेंकने वाले प्रकाश स्तंभ की तरह शांति के मार्ग का निर्देश कर रहा है।

जैनधर्म की प्राचीनता—

जैनधर्म अत्यन्त प्राचीन धर्म है। इसके आदि काल का पता लगना असम्भवसा है। आधुनिक इतिहास काल जिस समय से प्रारंभ होता है उससे पूर्व जैनधर्म विद्यमान था यह अब इतिहास वेत्ताओं को भलीभांति विदित हो चुका है। इतिहास काल की परिधि चार पांच हजार वर्ष के अन्दर की ही सीमित है। उससे बहुत-बहुत प्राचीन काल में भी जैनधर्म का अस्तित्व था। जैनधर्म बौद्ध धर्म से ही नहीं अपितु वेद-धर्म से भी प्राचीन है।

प्राचीन भारत में मुख्य रूप से तीन धर्मो का प्रभुत्व रहा है,—जैनधर्म वेद धर्म और बौद्ध धर्म। जैनधर्म बौद्ध धर्म से भी प्राचीन है और मौलिक है यह तो निर्विवाद है कि बौद्ध धर्म के संस्थापक बुद्ध थे और ये भगवान श्रीमहावीर स्वामी के समकालीन। इससे सिद्ध है कि बौद्ध धर्म लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व का है। इससे पहले बौद्ध धर्म का अस्तित्व नहीं था। आज के निष्पक्ष इतिहास वेत्ताओंने यह स्वीकार कर लिया है कि जैनधर्म बौद्ध धर्म से बहुत पहले प्रचलित था जैन और बौद्ध धर्म की कुछ समानता के कारण कतिपय विद्वानों को यह भ्रम हो गया था कि जैनधर्म बौद्ध धर्म की ही शाखा है।

जर्मनी के प्रसिद्ध प्रोफेसर हर्मन जेकोबी आदि ने जैनधर्म और बौद्ध धर्म के सिद्धान्तों की बहुत छान बीन की है और इस विषय पर बहुत अच्छा प्रकाश डाला है। इसने अकाट्य प्रमाणो से यह

सिद्ध कर दिया है कि जैनधर्म की उत्पत्ति न तो श्रीमहावीर के समय में और न श्रीपार्श्वनाथ के समय में हुई किन्तु इससे भी बहुत पहले भारतवर्ष के अति प्राचीन काल में वह अपने अस्तित्व का दावा करता है। उन्होंने अपने भाषण में कहा था" जैनधर्म एक मौलिक धर्म है यह सब धर्मों से सर्वथा अलग और स्वतंत्र धर्म है। इसलिए प्राचीन भारत वर्ष के तत्त्वज्ञान और धार्मिक जीवन के अभ्यास के लिए यह बहुत ही महत्त्व का है।"

कइ विद्वानों का यह भ्रमपूर्ण मत है कि जैन धर्म वेद धर्म की ही शाखा है। और उसके आदि प्रवर्तक श्रीपार्श्वनाथ या श्रीमहावीर स्वामी थे। इस भ्रमपूर्ण मान्यता का खण्डन हम वेदों, पुराणों और अन्य ग्रन्थों के प्राचीनतम उद्धरण देकर करेंगे।

दुनियां के अधिकांश विद्वानों की मान्यता है कि आधुनिक उपलब्ध समस्त ग्रन्थों में वेद सबसे प्राचीन है। अतएव अब वेदों के आधार पर यह सिद्ध करने का प्रयत्न करेंगे कि वेदों की उत्पत्ति के समय जैनधर्म विद्यमान था। वेदानुयायियों की मान्यता है कि वेद इश्वर प्रणीत हैं। यद्यपि यह मान्यता केवल श्रद्धा गम्य ही है तदपि इससे यह सिद्ध होता है कि सृष्टि के प्रारंभ से ही जैन धर्म प्रचलित था क्योंकि ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद के अनेक मंत्रों में जैन तीर्थकरों के नामों का उल्लेख पाया जाता है।

ऋग्वेद में भगवान श्रीऋषभदेव को पूर्वज्ञान का प्रतिपादक और दुःखों का नाश करनेवाला बतलाते हुए कहा है—असूत पूर्वा वृषभो ज्यायनिमा अरय शुरुधः सन्ति पूर्वीः। दीवो न पाता विदधस्य धीभिः क्षत्रं राजाना प्रतिवोदधाये ॥ ऋग्वेद ॥ २। ३४। २ ॥

जैसे जल से भरा मेघ वर्षा का मुख्य स्रोत है, जो पृथ्वी की प्यास को बुझा देता है, उसी प्रकार पूर्वी ज्ञान के प्रतिपादक श्रीऋषभ देव महान है। उनका शासन वर दें। उनके शासन में ऋषि परम्परा से प्राप्त पूर्व का ज्ञान आत्मा के शत्रुओं—क्रोधादि का विध्वंसक हो। दोनों संसारी और मुक्त आत्माएँ अपने ही आत्मगुणों से चमकती है। अतः वे राजा है—वे पूर्णज्ञान के आगार है और आत्म—पतन नहीं होने देते।

(पूर्व ज्ञान के लिए देखिये आगे का टिप्पण)

चौदह पूर्वः—

तीर्थ का प्रवर्तन करते समय तीर्थकर भगवान जिस अर्थ का गणधरों को पहले पहल उपदेश देतेहैं, अथवा गणधर पहले पहल जिस अर्थ को सूत्र रूप में गूंथते हैं, उन्हें पूर्व कहा जाता है। पूर्व चौदह हैं—

(१) उत्पाद पूर्व—इस पूर्व में सभी द्रव्य और सभी पर्यायों के उत्पाद को लेकर प्ररूपण की गई है। उत्पाद पूर्व में एक करोड पद हैं।

(२) अग्रायणीय पूर्व—इस में सभी द्रव्य, सभी पर्याय और सभी जीवों के परिमाण का वर्णन है। अग्रायणीय पूर्व में छियानवें लाख पद हैं।

(३) वीर्यप्रवाद पूर्व—इसमें कर्म सहित और बिना कर्मवाले जीव तथा अजीवों के वीर्य (शक्ति) का वर्णन है। वीर्य प्रवाद पूर्व में सत्तरलाख पद हैं।

(४) अस्तिनास्तिप्रवाद—संसार में धर्मास्तिकाय आदि जो वस्तुएँ विद्यमान हैं तथा आकाशकुसुम वगैरह जो अविद्यमान हैं, उन सब का वर्णन अस्तिनास्ति प्रवाद में हैं। इस में साठ लाख पद है।

(५) ज्ञानप्रवाद पूर्व—इसमें मतिज्ञान आदि ज्ञान के पांच भेदों का विस्तृत वर्णन है। इसमें एक करोड पद है।

(६) सत्यप्रवाद पूर्व—इसमें सत्यरूप या सत्यवचन का विस्तृत वर्णन हैं। इसमें छह अधिक एक करोडपद है।

(७) आत्मप्रवाद पूर्व—इसमें अनेक नय तथा मतों की अपेक्षा से आत्मा का प्रतिपादन किया गया है। इसमें छब्बीस करोड पद है।

(८) कर्मप्रवाद पूर्व—जिसमें आठ कर्मों का निरूपण प्रकृति स्थिति, अनुभाग और प्रदेश आदि भेदों द्वारा विस्तृत रूप से प्रतिपादन किया गया है। इसमें एक करोड अस्सी लाख पद हैं।

(९) प्रत्याख्यानप्रवाद पूर्व—इसमें प्रत्याख्यानों का भेद प्रभेद पूर्वक वर्णन है। इसमें चौरासी लाख पद हैं।

(१०) विद्यानुप्रवाद पूर्व—ईस पूर्व में विविध प्रकार की विद्या तथा सिद्धियों का वर्णन है। इसमें एक करोड दस लाख पद है।

(११) अवन्ध्यपूर्व—इसमें ज्ञान, तप, संयम आदि शुभ फलवाले तथा प्रमाद आदि अशुभ फलवाले अवन्ध्य अर्थात् निष्फल न जानेवाले कार्यो का वर्णन है। इसमें छब्बीस करोड पद है।

(१२) प्राणायु प्रवाद पूर्व—इसमें दस प्राण आयु आदि का भेद प्रभेद पूर्वक विस्तृत वर्णन है। इसमें एक करोड छप्पन लाख पद है।

(१३) क्रियाविशाल पूर्व—इसमें कायिकी अधिकरणिकी आदि तथा संयम में उपकारक क्रियाओं का वर्णन है। इसमें नौ करोड पद है।

(१४) लोकविन्दुसार पूर्व—लोक में अर्थात् संसार में श्रुतज्ञान में जो शास्त्र बिन्दु की तरह सब से श्रेष्ठ है, वह लोक बिन्दुसार है। इसमें साढे बारह करोड पद है।

पूर्वों में वस्तु—पूर्वों के अध्याय विशेषों को वस्तु कहते हैं।

वस्तुओं के अवान्तर अध्यायों को चूलिकावस्तु कहते हैं।

उत्पादपूर्व में दस वस्तु और चार चूलिका वस्तु है। अग्रायणीय पूर्व में चौदह वस्तु हैं और बारह चूलिका वस्तु हैं। वीर्यप्रवादपूर्व में आठ वस्तु और आठ चूलिका वस्तु है। अस्तिनास्तिप्रवाद पूर्वमें अठारह वस्तु और दस चूलिका वस्तु है। ज्ञान प्रवाद पूर्वमें बारह वस्तु हैं। सत्यप्रवाद पूर्व में दो वस्तु है। आत्मप्रवाद पूर्व में सोलह वस्तु है। कर्मप्राद पूर्वमें तीस वस्तु है। प्रत्याख्यान पूर्वमें बीस। विद्यानुप्रवाद पूर्व में पंद्रह। अवन्ध्य पूर्वमें बारह प्राणायु पूर्व में तेरह। क्रिया विशाल पूर्व में तीन लोक बिन्दु-सार पूर्व में पच्चीस। चौथे से आगे के पूर्वो में चूलिका वस्तु नहीं है।

वैदिक ऋषि भक्ति-भावना से प्रेरित होकर उस महाप्रभु की स्तुति करता हुआ कहता है—

मखस्य ते तीवषस्य प्रजूतिमियभि वाचमृताय भूषन्।
इन्द्र क्षितीमामास मानुषीणां विशां दैवीनामुत पूर्वयायाः॥ ऋग्वेद॥ २। ३४॥ २।

हे आत्मद्रष्टा प्रभो! परम सुखपानेके लिए मै तेरी शरण में आना चाहता हू, क्योंकि तेरा उपदेश और तेरी वाणी शक्तिशाली है—उनको मैं अवधारण करता हूँ। हे प्रभो! सभी मनुष्यों और देवों में तुम्ही पहले पूर्व या पूर्वगत ज्ञान के प्रतिपादक हो।

'जे अप्पा से परमप्पा' आत्मा ही परमात्मा है यह जैनधर्म का मूल सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त को ऋग्वेद के शब्दो में भगवान श्रीऋषभदेव ने इस रूप में प्रतिपादित किया—

त्रिधा वद्धो वृषभोरोरवीती । महोदेवो मर्त्यां आविवेश ॥ ऋग्वेद ॥ ४ । ५८ । ३ ॥

मन, वचन, काया के तीनों योगों से बद्ध संयत ऋषभ ने घोषणा की कि महादेव अर्थात् परमात्मा मर्त्यों में निवास करता है उन्होंने स्वयं कठोर तपश्चरणरूप साधना कर वह आदर्श जनता के समक्ष प्रस्तुत किया । इसलिए ही ऋग्वेद के मेधावी महर्षिने लिखा है कि "तन्मर्त्यस्य देवत्व सजातमग्रः ॥ [ऋग्वेद ३१ । १७ ॥] अर्थात् ऋषभ स्वयं आदि पुरुष थे जिन्होंने सबसे प्रथम मर्त्य दशा में देवत्व की प्राप्ति की थी ।

अथर्ववेद का ऋषि मनुष्यों को ऋषभदेव का आवाहन करने के लिए यह प्रेरणा देता है कि"

अहो मुचं वृषभं यज्ञियानं विराजन्तं प्रथममध्वराणाम् ।
अपां न पातमश्विनां हुवे दिय इंद्रियेण तमिन्द्रियं धत्तभोजः ॥

अथर्ववेद कारिका ॥ १९ । ४२ । ४ ॥

पापों से मुक्त पूजनीय देवताओं में सर्व प्रथम तथा भवसागर के पोतको हृदय से आवाहन करता हू । हे सहचर बन्धुओं ! तुम आत्मीय श्रद्धा द्वारा उसके आत्मबल और तेज को धारण करो । क्यों कि वे प्रेम के राजा है उन्होंने उस संघ की स्थापना की है जिसमें पशु भी मानव के समान माने जाते थे और उनको कोई भी मार नहीं सकता था । "नास्य पशून् समानान् हिनस्ति [अथर्ववेद]"

अठारह पुराण महर्षि व्यास के द्वारा रचित हैं । ये व्यास महर्षि महाभारत के समयवर्ती बतलाएँ जाते हैं । चाहे कुछ भी हो हमें यह देखना है कि पुराण इस विषय में क्या कहते हैं । श्रीमद् भागवत में श्रीऋषभ देव भगवान का उल्लेख इस प्रकार से किया गया है—

नित्यानुभूत निजलाभनिवृत्ततृष्णः श्रेयस्य तद्रचनया चिरसुप्तबुद्धेः ।
लोकस्य यः करुणया भयमात्मलोक-माख्यान्नमो भगवते ऋषभाय तस्मै ॥

श्रीमद् भागवत ५।६।१९।५६॥

जिन्होंने विषय भोगों की अभिलाषा करने के कारण अपने वास्तविक श्रेय से भूले-बिसरे मानवों को करुणावश निर्भय आत्मलोक का उपदेश दिया और जो स्वयं निरन्तर अनुभव करने वाले आत्म-स्वरूप की प्राप्ति के द्वारा सब प्रकार की तृष्णा से मुक्त थे, उन भगवान श्रीऋषभदेव को नमस्कार है ।

शिवपुराण में कहा है—

कैलासे पर्वते रम्ये, वृषभोऽयं जिनेश्वरः । चकार स्वावतारञ्च, सर्वज्ञः सर्वगः शिवः ॥

केवलज्ञान द्वारा सर्वव्यापी, कल्याण स्वरूप, सर्वज्ञान जिनेश्वर ऋषभदेव सुन्दर कैलास पर्वत पर उतरे । इस में आया हुआ वृषभ और जिनेश्वर शब्द जैनधर्म को सिद्ध करते हैं । इतना ही नहीं श्रीमद् भागवत पुराण के पाँचवें स्कन्ध के प्रथम छ अध्यायों में ऋषभदेव के वंश, जीवन व तपश्चरण का वृत्तांत वर्णित हैं ।, जो सभी मुख्य मुख्य बातों में जैन कथा ग्रन्थों से मिलता है । उनके माता पिता के नाम नाभि और मरुदेवी पाये जाते हैं । तथा उन्हें स्वयंभू, मनुसे पांचवी पीढी में इस क्रम से कहा गया है स्वयंभू मनु, प्रियव्रत, अग्नीध्र, नाभि और ऋषभ । उन्होंने अपने जेष्ठ पुत्र भरत को राज्य देकर संन्यास ग्रहण किया । वे नग्न रहने लगे (अमूर्छाभाव) और केवल शरीर मात्र ही उनके पास था । लोगों द्वारा तिरस्कार किये जाने, गाली गलौज किये जाने व मारे जाने पर भी वे मौन ही रहते थे । अपने कठोर तपश्चरण द्वारा उन्होंने कैवल्य की प्राप्ति की । तथा दक्षिण कर्णाटक तक नाना प्रदेशों में परिभ्रमण किया । वे कुटकाचल पर्वत के वन में योग की परमोच्च साधना में विचरने लगे । वासों की रगड

से वन में आग लग गई और उसी में उन्होंने अपने को भस्म कर डाला। भागवत पुराण में यह भी कहा गया है कि ऋषभदेव के इस चरित्र को सुनकर कौल, वेंक व कूटक का राजा अर्हन् कलयुग में अपनी इच्छा से उसी धर्म का संप्रवर्तन करेगा, इत्यादि। इस वर्णन से इसमें कोइ संदेह नहीं रह जाता कि भागवत पुराण का तात्पर्य जैन ग्रन्थों में वर्णित ऋषभदेव से ही है और अर्हन् राजा द्वारा प्रवर्तित धर्म का अभिप्राय जैन धर्म से। अतः यह आवश्यक हो जाता है कि भागवत पुराण तथा वैदिक परम्परा के अन्य प्राचीन ग्रन्थों में ऋषभदेव के सम्बन्ध की बातों की कुछ गहराई से जांच पडताल की जाय।

भागवत पुराण में कहा गया है—

वर्हिषि तस्मिन्नेव विष्णुदत्त भगवान परमर्षिभिः प्रासादितो नाभः प्रियचिकीर्षया तदवरोधायने मेरु देव्या धर्मान् दर्शयितुकामो वातदशनां श्रमणानाम् ऋषीणाम् उर्ध्वमन्थिनां शुक्लया तन्वावततार।" (भागवत पु० ५. ३. २०)

"यज्ञ में परमऋषियों द्वारा प्रसन्न किये जाने पर विष्णुदत्त पारीक्षित स्वयं श्री भगवान(विष्णु) महाराज नाभि को प्रिय करने के लिये उनके रनवासमें महारानी मरुदेवी के गर्भ में आये। उन्होंने इस पवित्र शरीर का वातरशना श्रमणऋषियों के धर्मों को प्रकट करने की इच्छा से ग्रहण किया।"

भागवत पुराण के इस कथन में दो बातें विशेष ध्यान देने योग्य हैं, क्योंकि उनका भगवान ऋषभदेव के भारतीय संस्कृति में स्थान तथा उनकी प्राचीनता और साहित्यिक परम्परा से बडा घनिष्ठ और महत्वपूर्ण सम्बन्ध है। एक तो यह कि ऋषभदेव की मान्यता और पूज्यता के सम्बन्ध में जैन और हिन्दुओं के बीच कोई मतभेद नहीं है। जैसे वे जैनों के आदि तीर्थंकर हैं, उसी प्रकार वे हिन्दुओं के लिए साक्षात् भगवान विष्णु के अवतार है। उनके ईश्वरावतार होने की मान्यता प्राचीनकाल में इतनी बद्धमूल होगई थी कि शिवमहापुराण में भी उन्हें शिव के अट्ठाईस योगावतारों में गिनाया गया है (शिव महापुराण ७,२,९) दूसरी बात यह है कि प्राचीनता में यह अवतार राम और कृष्ण के अवतारों से भी पूर्व का माना गया है। इस अवतार का जो हेतु भागवत पुराण में बतलाया गया है उससे श्रमणधर्म की परम्परा भारतीय साहित्य के प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद से निःस्सन्देह रूप से जुड जाती है। ऋषभावतार का हेतु वातरशना श्रमण ऋषियों के धर्म को प्रगट करना बतलाया गया है। भागवत पुराण में यह भी कहा गया है कि—

अयमवतारो रजसोपप्लुत- कैवल्योपशिक्षणार्थः भाग० पु० ५, ६, १२

अर्थात् भगवान का यह अवतार रजोगुण से भरे हुए लोगो को कैवल्य की शिक्षा देने के लिये हुवा। किन्तु उक्त वाक्य का यह अर्थ भी संभव है कि यह अवतार रज से उपप्लुत अर्थात् रजो धारण (मल धारण) वृत्ति द्वारा कैवल्य प्राप्ति की शिक्षा देने के लिये हुआ था। जैन मुनियों के आचार में अस्नान, अदन्तधावन जल्ल मल परिषह आदि द्वारा रजोधारण संयम का आवश्यक अंग माना गया है। बुद्ध के समयमेंभी रजोजल्लिक श्रमण विद्यमान थे बुद्ध ने श्रमणों की आचार प्रणाली में व्यवस्था लाते हुए एक बार कहा था—

नाहं भिक्खवे संघाटिकस्य संघाटि धारण मत्तेग सामञ्जं वदामि, अचेलकस्स अचेलकमत्तेण रजोजल्लिकस्स रजोजल्लिक मत्तेण...जटिलकस्स जटाधारणमत्तेग सामञ्जं वदामि।

अर्थात् हे भिक्षुओ मैं संघाटिक के संघाटिधारण मात्र से श्रामण्य नहीं कहता। अचेलक के अचेलकत्व मात्रसे, रजोजल्लिकके रजोजल्लित्व मात्र से और जटिलक के जटाधारण मात्र से भी श्रामण्य नहीं कहता।

अब प्रश्न यह होता है कि जिन वातरशना मुनियो के धर्मो की स्थापना करने तथा रजोजलिक वृत्तिद्वारा कैवल्य की प्राप्ति सिखाने के लिए भगवान श्रीऋषभदेव का अवतार हुआ था। वे कब से भारतीय साहित्य में उल्लिखित पाये जाते हैं इसके लिए जब हम भारत के प्राचीनतम ग्रन्थ वेदोंको देखते हैं तो हमें वहाँ भी वातरशना मुनियों का उल्लेख अनेक स्थलों में दिखाई देता है।

ऋग्वेद की वातरशना मुनियो के सम्बन्ध की ऋचाओं में उन मुनियों की साधनाएं ध्यान देने योग्य है। एक सूक्त की कुछ ऋचाए देखिये—

मुनयो वातरशनाः पिशंगा वसते मला। वातस्यानु ध्राजियन्ति यद्देवासो अविक्षत ॥
उन्मदिता मौने येन वातां आतस्थिमा वयम्। शरीरेदस्माकं यूयं मर्तासो अभिपश्यथ ॥

विद्वानों के नाना प्रयत्न होने पर भी अभी तक वेदों का निस्संन्देह रूपसे अर्थ बैठाना संभव नहीं हो सका। तथापि सायन भाष्य की सहायता से उक्त ऋचा का अर्थ इस प्रकार होता है—अतीन्द्रियार्थदर्शी वातरशना मुनि मल धारण करते हैं, जिससे वे पिंगल वर्ण दिखाई देते हैं। जब वे वायुकी गति को प्राणोपासना द्वारा धारण कर लेते हैं, अर्थात् रोक लेते हैं, तब वे अपनी तप की महिमा से दीव्य देदीप्यमान होकर देवता स्वरूप को प्राप्त हो जाते हैं। सवलौकिक व्यवहार को छोडकर हमेंसा मौनवृत्ति से उन्मत्तवत् (उत्कृष्ट आनन्दसहित) वायु भाव को (अशरीरि ध्यानवृत्ति) को प्राप्त होते हैं, और तुम साधारण मनुष्य हमारे बाह्य शरीर मात्र कों देख पातेहो। हमारे सच्चे आभ्यन्तर स्वरूप को नहीं। एसा वातरशामुनि प्रगट करते हैं।

ऋग्वेद में उक्त ऋचाओं के साथ 'केशी' की स्तुति की गई है—

केश्यग्निं केशीविषं केशी बिभर्त्ति रोदसी
केशी विश्वं स्वर्दशे केशीदं ज्योतिरुच्यते ॥ ऋग्वेद १०, १३६, १)

केशी अग्नि जल तथा स्वर्ग और पृथ्वी को धारण करता है। केशी समस्त विश्व के तत्त्वों का दर्शन करता है। केशी ही प्रकाशमान (ज्ञान) ज्योति (केवलज्ञानी) कहलाता है।

केशी की यह स्तुति उक्त वातरशना मुनियों के वर्णन आदि में की गई है, जिससे प्रतीत होता है कि केशी वातरशना मुनियो के वर्णन के प्रधान थे।

ऋग्वेद के इन केशी व वातरशना मुनियों की साधनाओं की तुलना करने योग्य है। ऋग्वेद के वातरशना मुनि और भागवत के वातरशना श्रमण ऋषि एक ही संप्रदाय के वाचक हैं। इसमें तो किसी को किसी प्रकार का सन्देह होने का अवकाश नहीं दिखाई देता। केशी का अर्थ केशधारी होता है जिसका अर्थ सायनाचार्य ने 'केशस्थानीय रश्मियों को धारण करनेवाले किया है और उससे सूर्य का अर्थ निकाला है। किन्तु उसकी कोई सार्थकता व संगति वातरशना मुनियों के साथ नहीं बैठती। जिनकी साधनाओं का उस सूक्त में वर्णन है। केशी स्पष्टतः वातरशना मुनियों के अधिनायक ही हो सकते हैं जिनकी साधना में मल धारण मौनवृत्ति और उन्माद भावका विशेष उल्लेख है। सूक्त में आगे उन्हें ही "मुनि देंवस्य देवस्य सौकृत्याय सखा हितः" (ऋ. १०-१३६, ४ अर्थात् देव देवों के मुनि व उपकारी और हितकारी सखा कहा गया है। वातरशना शब्द में और मलरूपी वसन धारण करने में उनकी नाग्न्यवृत्ति का भी संकेत है। इसकी भागवत पुराण में ऋषभदेव के वर्णन से तुलना कीजिए—

उर्वरित-शरीरमात्र-परिग्रह उन्मत्त इव गगनपरिधानः प्रकीर्णकेशः आत्मन्यारोपिताहवनीयो ब्रह्मावर्तात् प्रधव्राज। जडान्ध-मूक बधिर पिशाचोन्मादकवद् अवधूत वेशो अभिभाष्यमाणोऽपि जनानां गृहित मौनव्रतः

तूर्णीं बभूव ।... परागवलम्बमान–कुटिल–जटिल–कपिश केश–भूरि–भारः अवधूतमलिननिजशरीरेण ग्रह ग्रहीत इवादृश्य भा० पु० ५–६ २८–३१

अर्थात् ऋषभदेव भगवान के शरीरमात्र परिग्रह बच रहा था। वे उन्मत्त के समान नग्न वेशधारी बिखरे हुए केशों सहित आहवनीय अग्नि कों अपने धारण करके ब्रह्मावर्त देश से प्रव्रजित हुए। वे जड, अन्ध, मूक बधिर पिशाचोन्माद युक्त जैसे अवधूतवेशमें लोगों के बुलाने पर भी मौन वृत्ति धारण किये हुए चुप रहते थे।... सब ओर लटकते हुए अपने कुटिल, जटिल कपिश केशों के भार सहित अवधूत और मलीन शरीर सहित वे दृष्टिगोचर होते थे।

यथार्थतः यदि ऋग्वेद के उक्त सूक्त को तथा भागवत पुराण में वर्णित ऋषभदेव के चरित्र को सन्मुख रखकर पढाजाय तो पुराण में वेद के सूक्त का विस्तृत भाष्य किया गया–सा प्रतीत होता है। वही वात–रशना या गगन परिधान वृत्ति, केशधारण, कपिशवर्ण, मलधारण मौन और उन्माद भाव समान रूप से दोनों में वर्णित है ऋषभ भगवान के कुटिल केशों की परम्परा प्राचीनतम काल से आजतक अक्षुण्ण रूपसे पाई जाती है। यथार्थतः समस्त तीर्थकरों में केवल ऋषभदेव के सिर पर ही कुटिल केशों को धारण करने का उल्लेख आता है। इस सम्बन्ध में मुझे केशरिया नाथ का स्मरण आता है जो ऋषभनाथ का ही नामान्तर है। केशर, केश, और जटा एक ही अर्थ के वाचक है "सटा जटा केसरयो" सिंह भी अपने केशों के कारण केसरी कहलाता है। इस प्रकार केशी और केशरी एक ही केसरिया नाथ या ऋषभदेव के वाचक प्रतीत होते है। केशरीयानाथ पर जो केशर चढाने की विशेष मान्यता प्रचलित है वह नाम साम्य के कारण उत्पन्न हुई प्रतीत होती है। वह जैन सिद्धान्त से सर्वथा विरुद्ध है जैन ग्रन्थों में भी ऋषभदेव की जटाओं का उल्लेख किया गया है। इस प्रकार ऋग्वेद के केशी और वातरशना मुनि तथा भागवत पुराण के ऋषभदेव और वातरशना श्रमण ऋषि एवं केसरियानाथ ऋषभ तीर्थकर और उनका निर्ग्रन्थ संप्रदाय एक ही सिद्ध होते हैं।

उक्त वातरशना मुनियों की जो मान्यता व साधनाए वैदिक ऋचाओंमें भी उल्लिखित हैं। उन पर से हम इस परम्परा को वैदिक परम्परा से स्पष्टतः पृथक् रूप से समझ सकते हैं। वैदिक ऋषि वैसे त्यागी और तपस्वी नहीं थे जैसे ये वातरशना मुनि। वैदिक ऋषि स्वयं ग्रहस्थ हैं यज्ञ सम्बन्धी विधि विधान में आस्था रखते हैं और अपनी इह लौकिक इच्छाओं जैसे पुत्र, धन, धान्य आदि सम्पत्ति की प्राप्ति के लिये इन्द्रादि देवी देवताओं का आहवान करते कराते हैं। तथा इनके उपलक्ष में यजमानों से धन-सम्पत्ति का दान स्वीकार करते हैं। किन्तु इनके विपरीत ये वातरशना मुनि उक्त क्रियाओं में रत नहीं होते। समस्त क्रिया गृहद्वार स्त्री–पुत्र धन–धान्य आदि परिग्रह, यहां तक की वस्त्र का भी परित्याग कर भिक्षावृत्ति से रहते हैं। शरीर का स्नानादि संस्कार न कर मल धारण किये रहते हैं। मौनवृत्ति से रहते हैं तथा अन्य देवी देवताओं की आराधना से मुक्त रहकर नित्य आत्मध्यान में ही अपना कल्याण मानते हैं। स्पष्टतः यह उस श्रमण परम्परा का प्राचीन रूप हैं जो आगे चलकर अनेक आवैदिक संप्रदायों के रूप में प्रगट हुई और जिनमें से दो अर्थात् जैन और बौद्ध संप्रदाय आज तक भी विद्यमान है। प्राचीन समस्त भारतीय साहित्य वैदिक, बौद्ध और जैन तथा शिलालेखों में भी ब्राह्मण और श्रमण संप्रदाय का उल्लेख मिलता है। जैन और बौद्ध साधु आजतक भी श्रमण कहलाते हैं। वेदिक परम्परा के धार्मिक गुरु कहलाते थे ऋषि, जिनका वर्णन ऋग्वेद में बारं बारं आया है। किन्तु श्रमण परम्परा के साधुओं की संज्ञा मुनि थी; जिनका उल्लेख ऋग्वेद में केवल उन वातरशना मुनियों के सम्बन्व को छोड़ अन्यत्र नहीं आया। ऋषि मुनि कहने से दोनों सप्रदायों का ग्रहण समझना चाहिये। पीछे परस्पर इन संप्रदायों का खूब आदान प्रदान हुआ और दोनों शब्दों को प्रायः एक दूसरे का पर्यायवाची माना जाने लगा।

वैदिक साहित्य में यति और व्रात्य

ऋग्वेद् में मुनियों के अतिरिक्त यतियों का भी उल्लेख बहुतायत से आया है । ये यति भी ब्राह्मण परम्परा के न होकर श्रमण परम्परा के ही साधु सिद्ध होते हैं । जिनके लिये यह संज्ञा समस्त जैन साहित्य में उपयुक्त होते हुए भी आज तक भी प्रचलित है । यद्यपि आदि में ऋषियां, मुनियों और यतिओं के बीच मेल पाया जाता है और वे समानरूप से पूज्य माने जाते थे । किन्तु कुछ ही काल के पश्चात् यतियों के प्रति वैदिक परम्परा में महान रोष उत्पन्न होने के प्रमाण हमें ब्राह्मण ग्रन्थों में मिलते हैं । जहाँ इन्द्र द्वारा यतियों को शालावृक्षों शृगालों व कुत्तों द्वारा नुचवाए जानेका उल्लेख मिलता है । तैतरीय संहिता २, ४, ९, २, ६, २, ७, ५, ताण्डव ब्राह्मण १४, २, २८, १८, १९ किन्तु इन्द्र के इस कार्यको देवोने उचित नहीं समझा और उन्होंने इसके लिये इन्द्रका बहिष्कार किया (ऐतरेय ब्राह्मण ७, २८ ताण्डव ब्राह्मण के टीकाकारोने यतियों का अर्थ किया है वेदविरुद्धनियमोंपेत, कर्मविरोधिजन, ज्योतिष्टोमादि अकृत्वा प्रकारान्तरेण वर्तमान आदि, इन विशेषणों से उनकी श्रमण परम्परा स्पष्ट प्रमाणित हो जाती है । भगवत् गीता में ऋषियों मुनियों और यतियों का स्वरुप भी बतलाया है । और उन्हें समान रूप से योग साधना में प्रवृत्तमाना है । यहाँ मुनिको इन्द्रिय और मनका संयम करनेवाला, इच्छा, भय और क्रोध रहित, मोक्ष परायण व सदा मुक्त के समान माना है भ० गी० ५, २८ । अथर्ववेद के १५ वें अध्यायमें व्रान्यों का वर्णन आया । ये व्रात्य वैदिक विधि से अदिक्षित व संस्कार हीन थे वे अदुरुक्त वाक्य को दुरुक्त रीति से (वैदिक व संस्कृत नहीं, किन्तु अपने समय की प्राकृत भाषा) में बोलते थे । वे ज्याहृद (प्रत्यंचा रहित धनुष्य) धारण करते थे । मनुष्मृति अ० १० में लिच्छवि, नाथ, मल्ल आदि क्षत्रिय जातियों को व्रात्यों में गिणाया है । इन सब उल्लेखों पर सूक्ष्मता पूर्वक विचार करने से इसमें सन्देह नहीं रहता कि ये व्रात्य भी श्रमण परम्परा के साधु व ग्रहस्थ थे । जो वेध विरोधि होने से वैदिक अनुयाइयों के कोप भाजन हुए है । जैन धर्म के मुख्य पांच अहिंसादि नियमों को व्रत कहा है । उन्हें ग्रहण करने वाले श्रावक देश विरती या अणुव्रती और मुनि महाव्रतीकहलाते हैं । जो विधिवत् व्रत ग्रहण नहीं करते तथापि धर्म में अत्यंत श्रद्धा रखते हैं वे अविरत सम्यग्दृष्टि कहे जाते हैं । इसीप्रकार के व्रत धारी व्रात्य कहे गये प्रतीत होते हैं क्योंकि वे हिंसात्मक यज्ञ विधियों के नियम से त्यागी होते हैं । इसीलिए उपनिषदों में कही कही उनकी बडी प्रशंसा की गइ है । जैसे प्रश्नोपनिषद् में कहा गया है व्रात्यस्वं प्राणैक ऋषिस्ता विश्वस्य सतपतिः (२, ११) शांकर भाष्य में व्रात्यों का अर्थ स्वभावतः एक शुद्ध इत्याभिप्राय: किया गया है इस प्रकार श्रमण साधनाओं की परम्परा हमें नाना प्रकार के स्पष्ट व अस्पष्ट उल्लेखों द्वारा ऋग्वेद आदि समस्त वैदिक साहित्य में दृष्टिगोचर होती है । इन सब बातों से यह प्रमाणित होता है कि श्रमण संकृति भारत की नहीं विश्वकी एक मौलिक संस्कृति हैं । इस संस्कृति के बीज वर्तमान इतिहास की परिधि से बहुत परे प्राचीनतम भारत की मूल संस्कृति में है । सिन्धु उपत्यका की खुदाइ से प्राप्त होनेवाली सामग्री से इस बात पर प्रकाश पडता है कि आर्यो के भारत आगमन के पूर्व यहाँ एक विशिष्ट सभ्यता प्रचलित थी । इससे यह अनुमान मिथ्या सिद्ध हो जाता है कि भारत में आदि सभ्यता का दर्शन वेद काल से हि होता है । आर्यो के आने के पहले प्राग्वैदिक संस्कृति के ज्ञान के लिये भी विद्वानों के पास पर्याप्त साधन उपलब्ध होगये हैं । उनसे यह सिद्ध होता है कि उस समय में सर्व उपरि भारत में एक प्राचीन सभ्य दार्शनिक और विशेषतया नैतिक सदाचार व कठिन तपश्चर्या वाला श्रमणधर्म—जैन धम भी विद्यमान था । तात्पर्य यह है कि जैन संस्कृति भारत की प्राचीन और मौलिक संस्कृति है ।

श्रीतीर्थंकर नमिनाथ—

वेदकालीन आदि तीर्थंकर ऋषभनाथ के पश्चात् जैन ग्रन्थों में जो अन्य तेईस तीर्थंकरों के नाम आते हैं व जीवन वृत्त मिलते हैं, उनमें बहुतों के तुलनात्मक अध्ययन के साधनों का अभाव है। तथापि अन्तिम चार तीर्थंकरों की ऐतिहासिक सत्ता के थोडे बहुत प्रमाण यहाँ उल्लेखनीय हैं। इक्कीसवें तीर्थंकर नमिनाथ थे। नमि मिथिला के राजा थे। और उन्हें हिन्दू पुराण में भी जनक के पूर्वज माना गया है। नमि की प्रव्रज्या का एक सुन्दर वर्णन हमें उत्तराध्ययन सूत्र के नौवें अध्ययन में मिलता है और यहाँ उन्हीं के द्वारा वे वाक्य कहे गये हैं, जो वैदिक और बौद्ध परम्परा के संस्कृत व पालि साहित्य में गूंजते हुए पाये जाते हैं, तथा जों भारतीय अध्यात्म सम्बन्धी निस्काम कर्म व अनासक्ति भावना के प्रकाशन के लिए सर्वोत्कृष्ट वचन रुप से जहाँ तहाँ उद्धृत किये जाते हैं वे वचन है—

सुहं वसामो जीवामो जेसिं मे नत्थि किंचण।
मिहिलाए डज्झमाणीए ण मे डज्झइ किंचण ॥ (उत्त. ९ १४)
सुसुखं वत जीवाम येसं मे नो नत्थि किंचनं।
मिथिलाए दहमानाए न मे किंचि अदयहथ ॥ (पालि महाजन जातक)
मिथिलायां प्रदीप्तायां न मे किंचिन दह्यते। (शान्ति पर्व महा० भा०)

नमि की यह अनासक्त वृत्ति मिथिला राजवंश में जनक तक पाइ जाती हैं। प्रतीत होता है कि जनक के-कुलकी इसी आध्यात्मिक परम्परा के कारण वह वंश तथा उनका समस्त प्रदेश ही विदेह (देह से निर्मोह जीवन्मुक्त) कहलाया और उनकी अहिंसात्मक वृत्ति के कारण ही उनका धनुषः प्रत्यंचा-हीन रूप में उनके क्षत्रियत्व का प्रतीकमात्र सुरक्षित रहा। संभवतः यही वह जीर्ण धनुष्य था जिसे राम ने चढाया और तोंड डाला। इस प्रसंग में व्रात्यों के 'ज्याहृद' शस्त्र के सम्बन्ध में ऊपर कह आये है वह वात भी ध्यान देने योग्य है।

तीर्थङ्कर श्रीनेमिनाथ—

तत् पश्चात् महाभारत काल में वावीसवें तीर्थंकर श्रीनेमिनाथ हुए। महाभारत का काल ई. पू.—१००० क लगभग माना जाता है। अतएव ऐतिहासीक दृष्टि से यही काल श्रीनेमिनाथ तीर्थंकर का मानना उचित प्रतीत होंता है। यहाँ प्रसंग वश यह भी ध्यान देने योग्य है कि महाभारत के शान्तिपर्व में जो भगवान् तीर्थवित् और उनके द्वारा दिये गये उपदेश का वृत्तांत मिलता है वह जैन तीर्थंकर द्वारा उपदिष्ट धर्म के समरूप है।

तीर्थङ्कर श्रीपार्श्वनाथ—

तेइसवें तीर्थंकर श्रीपार्श्वनाथ का जन्म बनारस के राजा अश्वसेन और उनकी रानी वामा से हुआ था। उन्होंने तीस वर्ष की अवस्था में गृह त्याग कर सम्मेत शिखर पर्वत पर तपस्या की। यह पर्वत आजतक भी पारसनाथ पर्वत के नाम से प्रसिद्ध है। उन्होंने केवल ज्ञान प्राप्तकर सत्तर वर्ष तक श्रमणधर्म का उपदेश और प्रचार किया। जैन ग्रन्थानुसार उनका निर्वाण भगवान श्रीमहावीर के निर्वाण से २५० वर्ष पूर्व और तदनुसार ई० पूर्व ५२७+२५०=७७७ वर्ष में हुआ था। श्रीपार्श्वनाथ का श्रमण परम्परा पर वड़ा गहरा प्रभाव पडा। जिसके परिणामस्वरूप आजतक भी जैन समाज प्रायः पार्श्वनाथ के अनुयाईयों की मानी जाती है। ऋषभनाथ की सर्वस्व परित्याग रूप अकिंचनमुनिवृत्ति, नमि की निरीहता व नेमि-नाथ की अहिंसा को उन्होंने अपने चातुर्याम रूप सामायिक धर्म मे व्यवस्थित किया। चातुर्याम का उल्लेख निर्ग्रन्थों के सम्बन्ध में पालि साहित्य में भी मिलता है। और जैन आगमों में भी। जैन आगमानुसार

पार्श्वनाथ के चार याम इस प्रकार थे (१) सर्व प्राणातिपात से विरमण (२) सर्व मृषावाद से विरमण (३) सर्व अदत्तादान से विरमण (४) सर्व बहिद्धादान (परिग्रह) से विरमण ! श्रीपार्श्वनाथ का चतुर्याम रूप सामायिक धर्म श्रीमहावीर से पूर्व ही सुप्रचलित था यह जैन परम्परा के अतिरिक्त बौद्ध पालि साहित्य गत उल्लेखों से भली भांति सिद्ध हो जाता है । बौद्ध ग्रन्थ अंगुत्तरनिकाय आगम के चतुक्कनिपात और उनकी अट्ठकथा में उल्लेख है कि गौतम बुद्ध का चाचा 'वप्प' शाक्य निर्ग्रन्थ श्रावक था । स्वयं बुद्धने बोधी प्राप्त करने के पूर्व पार्श्व परम्परा के निर्ग्रन्थों के समीप दीक्षा ग्रहण की थी और निर्ग्रन्थ आचार का पालन किया था जिसका उल्लेख मज्झिमनिकाय में बुद्ध स्वयं करते हैं । पार्श्वापत्यों तथा निर्ग्रन्थ श्रावकों के इसी प्रकार के और भी अनेक उल्लेख मिलते हैं । जिनसे निर्ग्रन्थ धर्म की सत्ता बुद्ध से पूर्व भली भांति सिद्ध हो जाती है ।

एक समय था जब श्रीपार्श्वनाथ तथा उनसे पूर्व के जैन तीर्थंकरों व जैन धर्म की उस काल में सत्ता को पाश्चात्य विद्वान स्वीकार नहीं करते थे । किन्तु जब जर्मन विद्वान हर्मनयाकोबी ने जैन और बौद्ध प्राचीन साहित्य के सूक्ष्म अध्ययन द्वारा श्रीमहावीर से पूर्व निर्ग्रन्थ संप्रदाय के अस्थित्व को सिद्ध किया है। तब से विद्वान श्रीपार्श्वनाथ की ऐतिहासिकता को स्वीकार करने लगे हैं और उनके महावीर निर्वाण से २५० वर्ष पूर्व निर्वाण प्राप्ति की जैन परम्परा को भी मान देने लगे हैं । बौद्ध ग्रन्थों में जो निर्ग्रन्थों के चातुर्याम का उल्लेख मिलता है वह और उसे निर्ग्रन्थ ज्ञातपुत्र भ. श्रीमहावीर का धर्म कहा है, उनका सम्बन्ध आवश्यक ही श्रीपार्श्वनाथ की परम्परा से होना चाहिये । क्यों कि जैन संप्रदाय में उनके साथ ही चातुर्याम का उल्लेख पाया जाता है, महावीर के साथ कदापि नहीं ।

जैन धर्म की दृष्टि में प्राचीन इतिहास—

भारत का इतिहास देश की उस काल की अवस्था के वर्णन से प्रारंभ होता है, जब आधुनिक नागरिक सभ्यता का निकास नहीं हुआ था । उस समय भूमि घास और सुन्दर सघन वृक्षों से भरी हुई थी । सिंह व्यांघ्र, हांथी गाय भैंस, आदि सभी पशु वनों में पाये जाते थे । मनुष्य ग्राम व नगरों में नहीं बसते थे, और कौटुम्बिक व्यवस्था भी कुछ नहीं थी । उस समय न लोग खेती करना जानते थे, न पशुपालन, न अन्य कोई उद्योग धन्धे । वे अपने खान, पान, शरीराच्छदन आदि की आवश्यकताएँ कल्पवृक्षों से ही पूरी कर लेते थे । इसीलिएं उस काल के वृक्षों को कल्प वृक्ष (देववृक्ष) कहा गया है । कल्पवृक्ष अर्थात् ऐसे वृक्ष जो मनुष्यों की सब इच्छाओं की पूर्ति कर सके । भाई बहन ही पति पत्नी रूप से रहने लगते थे, और माता-पिता अपने उपर सन्तान का कोई उत्तर दायित्व अनुभव नहीं करते थे । इस काल में धर्म-साधना, पुण्य पाप की भावना आदि कोई विचार विवेक नहीं थे । इस परिस्थिति को शास्त्रकारों ने भोग भूमि-व्यवस्था कहा है, क्योंकि उसमें आगे आनेवाली कर्म भूमि सम्बन्धी कृषि और उद्योग आदि की व्यवस्थाओं का अभाव था ।

क्रमशः उक्त अवस्था में परिवर्तन हुआ, और उस युग का प्रारंभ हुआ जिसे शास्त्रकारों ने कर्म-भूमि का युग कहा है, व जिसे हम आधुनिक सभ्यता का प्रारंभ कह सकते हैं । इस युग को विकास में लानेवाले चौदह महापुरुष माने गये हैं । जिन्हें 'कुलकर' या 'मनु' कहा है । इन्होंने क्रमशः अपने अपने काल में लोगों को हिंसक पशुओं से अपनी रक्षा करने के उपाय बताये । भूमि और वृक्षों के वैयक्तिक स्वामित्व की सीमाएँ निर्धारित की । हाथी अश्व आदि वन पशुओं का पालन कर, उन्हें वाहन के उपयोग में लाना सिखाया । बाल बच्चों के लालन पालन व उनके नामकरण आदि का उपदेश दिया । शीत, तुषार आदि से अपनी रक्षा करना सिखाया । नदियों को नौकाओं द्वारा पार करना आदि सिखाया । पहाड़ों पर सिढियाँ बनाकर चडना, वर्षा से छत्रादि धारण कर अपनी रक्षा करना सिखाया । और अन्त में कृषिद्वारा

अन्न उत्पन्न करने की कला सिखाई, जिसके पश्चात् वाणिज्य, शिल्प आदि वे सब कलाएँ व उद्योग धन्धे उत्पन्न हुए जिसके कारण यह भूमि कर्म भूमि कहलाने लगी।

चौदह कुलकरों के पश्चात् जिन महापुरुषों ने कर्मभूमि की सभ्यता के युग में धर्मोपदेश व अपने चारित्रद्वारा अच्छे बुरे का भेद सिखाया ऐसे त्रेसठ महापुरुष हुए जो शलाका पुरुष अर्थात् विशेष गणनीय पुरुषमाने गये हैं। इन त्रेसठ शलाका पुरुषों में चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ बलदेव, नौ वासुदेव और नौ प्रति वासुदेव सम्मिलित है।

इन त्रेसठ शलाका पुरुषों में सब से प्रथम आदि तीर्थङ्कर भगवान् श्रीऋषभदेव हैं। जिनसे इस अवसर्पिणि में जैनधर्म का प्रारंभ माना जाता है। उनका जन्म उक्त चौदह कुलकरों में से अन्तिम कुलकर नाभिराजा और उनकी पत्नी मरुदेवी से हुआ था। अपने पिता के मृत्यु के पश्चात् वे राजसिंहासन पर बैठे और उन्होंने कृषि, असि मसि, शिल्प, वाणिज्य और विद्या इन छ आजीवका के साधनों की विशेष रुप से व्यवस्था की। तथा देश व नगरां वर्ण व जातियां आदि का सुविभाजन किया। इनके सौं पुत्र जिनमें भरत बाहुबलि मुख्य थे तथा दो पुत्रियाँ ब्राह्मी और सुन्दरी थीं। जिन्हें उन्होंने समस्त कलाएँ गणित व विद्याएँ एवं सर्व प्रकार की लिपियाँ सिखलाई। श्रीऋषभदेव को संसार से वैराग्य हो गया और वे राज्य का परित्याग कर तपस्या कर बनको चले गये। उनके जेष्ट पुत्र भरत राजा हुए और उन्होंने अपने दिग्विजय द्वारा सर्वप्रथम चक्रवर्ती पद प्राप्त किया। उनके लघुभ्राता बाहुबलि भी विरक्त होकर तपस्या में प्रवृत्त हो गये।

जैन ग्रन्थों में ऋषभदेव के जीवन व तपस्या का तथा केवलज्ञान प्राप्त कर धर्मोपदेश का विस्तृत वर्णन पाया जाता है। जैनी इसी काल से अपगे धर्म की उत्पत्ति मानते हैं। भगवान ऋषभदेव के काल का अनुमान लगाना कठीन है। उनके काल की दूरी का वर्णन जैन ग्रन्थ सागरोंपम के प्रमाण से करते हैं। जैन ग्रन्थों में भगवान श्रीऋषभदेव का विस्तृत वर्णन मिलता है पाठकों की जानकारी के लिए उसे संक्षिप्त में दे रहे हैं—

कालचक्र

काल की उपमा चक्र से दी जाती है। जैसे गाडी का चक्र (पहियां) घूमा करता है। वैसे ही काल भी सदा घूमता रहता है। वह कभी भी एक सा नहीं रहता। काल का स्वभाव ही परिवर्तन शील है। उत्कर्ष और कपकर्ष ये दोनों सापेक्ष हैं। जहां उन्नति है वहां अवनति भी है जहाँ अवनति है वहाँ उन्नति भी है। जो उठता है वह गिरता भी है। और जो गिरता है वह उठता भी है। घूमते समय चक्केका जो भाग उच्चा उठता है वह नीचे भी जाता है और उपर भी आता है। यही इस संसार की दशा है। एक बार वह उन्नत से अवनति की ओर जाता तो दूसरी बार अवनति से उन्नति की ओर जाता है जिस काल में यह विश्व अवनति से उन्नत की ओर जाता है उसे उत्सर्पिणी काल कहते हैं। इस काल में सहनन संस्थान, आयु, अवगाहना, उत्थान, बल, वीर्य कर्म, पुरुषाकार और पराक्रम बढते जाते हैं अतः इस काल को उत्सर्पिणी काल कहते हैं। इसके छह भेद है—

१. दुषम दुषमा २. दुषमा ३. दुषम सुषमा ४. सुषम दुषमा ५. सुषमा ६. और सुषम सुषमा।

इस काल में जीवों के संहनन और संस्थान क्रमशः अधिकाधिक शुभ होते जाते हैं। आयु और अवगाहना बढती जाती है। तथा जीवों की तरह सर्व पुद्गलों के वर्ण गन्ध, रस स्पर्श, भी इस काल में क्रमशः शुभ होते जाते हैं। अशुभतम भाव शुभतर होते हुए शुभतम हो जाते है। और ह्रास से उत्तरोत्तर वृद्धि की अवस्था कों प्राप्त होते जाते है।

जिस काल में जीवों के संहनन और संस्थान क्रमशः हीन होते जाय आयु और अवगाहना घटते जाय तथा उत्थान कर्म, बल, वीर्य, पुरुषाकार और पराक्रम घटते जाय वह अवसर्पिणी काल है। इस काल में पुद्गलों के वर्ण, गन्ध, रस, और स्पर्श हीन होते जाते है। शुभ भाव घटते जाते हैं। और अशुभ भाव बढते जाते हैं। अवसर्पिणी काल दस कोडाकोडी सागरोपम का होता है।

अवसर्पिणी काल के छ विभाग हैं, जिन्हें आरे कहते हैं। वे इस प्रकार हैं —१. सुषम सुषमा २. सुषमा ३. सुषमदुषमा ४. दुषम सुषमा ५. दुषमा ६. दुषम दुषमा। १.—सुषम सुषमा—यह आरा चार कोडा कोडी सागरोपम का है। इसमें मनुष्यों की अवगाहना तीन कोस की और आयु तीन [1]पल्योपम की होती है। इस आरे में पुत्र पुत्री युगल (जोडा) रूप से उत्पन्न होते हैं। बडे होकर वे ही पति पत्नी रूप से बन जाते हैं। युगल रूप से उत्पन्न होने के कारण इस आरे के मनुष्य युगलिया कहलाते हैं। माता पिता की आयु छ मास शेष रहने पर एक युगल उत्पन्न होता है। ४९ दिन तक माता—पिता उसकी प्रतिपालना करते है। आयु समाप्ति के समय माता को छींक और पिता को जंभाई (उबासी) आती है और दोनों काल कर जाते हैं। वे मरकर देवलोक में उत्पन्न होते हैं। इस आरे के मनुष्य दश प्रकारके कल्पवृक्षो से मनोवांछित सामग्री पाते हैं। तीन दिन के अन्तर से इन्हें आहार की इच्छा होती है। युगलियों के वज्रऋषभनाराच संहनन और समचतुरस्त्र संस्थान होता है। इनके शरीर में २५६ पसलियां होती हैं। युगलिए असि, मसि, और कृषि कोई कर्म नहीं करते।

इस आरे में पृथ्वी का स्वाद मिश्री आदि मधुर पदार्थों से भी अधिक स्वादिष्ट होता है। पुष्प और फलों का स्वाद चक्रवर्ती के श्रेष्ठ भोजन से भी बढकर होता है। भूमी भाग अत्यन्त रमणीय होता है। और पांच वर्णवाली विविध मणियों वृक्षों और पौधो से सुशोभित होता है। सब प्रकार के सुखों से पूर्ण होने के कारण यह आरा सुषम सुषमा कहलाता है।

(२) सुषमा—यह आरा तीन कोडा कोडी सागरोपम[2] का होता है। इसमें मनुष्यो की अवगाहना दो कोस की और आयु दो पल्योपमकी होती है। पहले आरे के समान इस आरे में भी युगल धर्म रहता है पहले आरे के युगलिओं से इस आरे के युगलियों में इतना अंतर होता है कि इनके शरीर में १२८ पसलियाँ होती हैं। माता पिता बच्चों का ६४ दिन तक पालन पोषण करते है। दो दीनके अन्तर से आहार की इच्छा होती है। यह आरा भो सुख पूर्ण है। शेष सारी बाते स्थूल रुप से पहले आरे जैसी जाननी चाहिए। अवसर्पिणी काल होने के कारण इस आरे में पहले की अपेक्षा सब बातों में क्रमशः हीनता होती जाती।

३ सुषम दुषमा—सुषम दुषमा नामक तीसरा आरा दो कोडा कोडी सागरोपम का होता है। इसमें दूसरे आरे की तरह सुख है परन्तु साथ में दुःख भी है। इस आगरे के तीन भाग हैं। प्रथम दो भागों में मनुष्यों की अवगाहना एक कोस की और स्थिति एक पल्योपम की होती है। इनमें भी युगलिये उत्पन्न होते हैं जिनके ६४ पसलियां होती है। माता पिता ७९ दिन तक बच्चों का पालन पोषण करते हैं। एक दिन के अन्तर से आहारकी इच्छा होती है। पहले दूसरे आरों के युगलियों की तरह ये भी छींक और जंभाई के आने पर काल कर जाते हैं। और देवलोक में उत्पन्न होते हैं। शेष विस्तार स्थूल रूप से पहले दूसरे आरे जैसा जानना चाहिए।

सुषम दुषमा आरे के तीसरे भाग में छहों संहनन और छहों संस्थान होते हैं। अवगाहना हजार

१-पल्योपम-पल्य अर्थात् कूप की उपमा से गिना जानेवाला काल पल्योपम कहलाता है।

२ सागरोपम-दस कोडा कोडी पल्योपम के काल को एक सागरोपम कहते हैं।

धनुष्य से कम रह जाती है। आयु जघन्य संख्यात वर्ष और उत्कृष्ट असंख्यात वर्ष की होती है। मृत्यु होने पर जीव स्वकृत कर्मानुसार चारों गतियों में जाते हैं।

वर्तमान अवसर्पिणी के तीसरे आरे के तीसरे भाग की समाप्ति में जब पल्योपम का आठवां भाग शेष रह गया उस समय कल्पवृक्षों की शक्ति काल दोष से न्यून हो जाती हैं। युगलियों में द्वेष और कषाय की मात्रा बढने लगे। अपने विवादों का निपटारा करने के लिए उन्होंने विमलवाहन को स्वामी के रूप में स्वीकार किया। ये प्रथम कुलकर थे। इसके बाद क्रमशः सात कुलकर हुए। जैन शास्त्रों में ७, १४, अथवा १५ कुल करों के भी नाम मिलते हैं। जम्बूद्वीपप्रज्ञप्ति में उनके नाम इस प्रकार है—

१ सुमति २ प्रतिश्रुति ३ सीमंकर ४ सीमंधर ५ क्षेमंकर ६ क्षेमधर ७ विमलवाहन ८ चक्षुषमान् ९ यशस्वी १० अभिचन्द्र ११ चन्द्राभ १२ प्रसन्नजित् १३ मरुदेव १४ नाभी १५ ऋषभ

समवायांग और आवश्यक निर्युक्ति में सात कुल करों के नाम आते हैं—

१ विमलवाहन २ चक्षुषमान् ३ यशस्वी ४ अभिचन्द्र ५ प्रश्रेणी ६ मरुदेव और ७ वें नाभि। ये सात कुलकर मनु भी कहलाते हैं।

विमलवाहन की पत्नी का नाम चन्द्रयशा था। विमलवाहन के द्वारा बनाई गई मर्यादा का सब युगलिये पालन करने लगे। इसने 'हा कार' नीति का प्रचलन किया। 'हा' तुम ने यह क्या किया! इतना कहना ही उस समय के अपराधी के लिए प्राणदण्ड के बराबर था। इस शब्द के कहने मात्र से ही अपराधी भविष्य के लिए अपराध करना छोड देता था।

विमलवाहन की जब आयु छ महिने शेष थी तब उसकी पत्नी चन्द्रयशा ने एक युगल सन्तान को जन्म दिया। इस पुरुष का नाम चक्षुष्मान् और स्त्री का नाम चन्द्रकांता रखा। विमलवाहन की मृत्यु के बाद द्वितीय कुलकर चक्षुष्मान् बने। इन्होंने अपने पिता की 'हा' कार नीति से ही युगलियों पर अनुशासन किया। चक्षुष्मान की पत्नी चन्द्रकांता ने भी यशस्वी और सुरूपा नाम के युगल–पुत्र–पुत्री को जन्म दिया। अपनी माता पिता की मृत्यु के बाद यशस्वी कुलकर बने। सुरूपा पत्नी बनी। इसने 'हां' कार और 'मा कार' नामक दण्ड नीति का प्रचलन किया।

यशस्वी कुलकर की पत्नी ने अभिचन्द्र नामक बालक और प्रतिरूपा नामक बालिका को जन्म दियां। पिता की मृत्यु के बाद अभिचन्द्र चौथा कुलकर बना। इसने भी हाकर और माकार नीति का प्रचलन किया।

अभिचन्द्र की पत्नी प्रतिरूपा ने भी एक युगल को जन्म दिया। प्रसेनजित् व चक्षुकांता इनका नाम रक्खा।

पिता की मृत्यु के बाद प्रसेनजित् पांचवां कुलकर बना। इसने हाकार माकार व धिक्कार नीति से युगलियों पर अनुशासन किया। आयु के कुछ मास पहले प्रसेनजित की पत्नी चक्षुकान्ता ने युगल सन्तान को जन्म दिया। इनका नाम मरुदेव और श्रीकान्ता रक्खा। पिता की मृत्यु के बाद मरुदेव कुलकर बना। इसने अपने पिता की तरह तीनों नीतियों का प्रचलन किया। मृत्यु के कुछ मास पहले उन्होंने एक युगल सन्तान को जन्म दिया उनका नाम नाभि और मरुदेवी रखा। माता–पिता की मृत्यु के बाद नाभि कुलकर बने। मरुदेवी नाभि कुलकर की पत्नी बनी। पिता की तरह इन्होंने हांकार माकार और धिक्कार नीतियों से युगलियों पर अनुशासन किया।

(४) दुषम सुषमा—यह आरा बयालीस हजार वर्ष कम एक कोडा कोडी सागरोपम का होता है। इसमें मनुष्यों के छहों संहनन और छहों संस्थान होते हैं। अवगाहना बहुत से धनुषों की होती है और

आयु जघन्य अन्तमुहूर्त, उत्कृष्ट एक करोड़ पूर्व की होती है। एक पूर्व सत्तरलाख करोड़ वर्ष और छप्पन हजार करोड वर्ष (७०५६०००००००००००) का होता है। यहां से आयु पूरी करके जीव स्वकृत कर्मानुसार चारों गतियों में जाते हैं और कई जीव सिद्ध, बुद्ध एवं मुक्त होकर सकल दुःखों का अन्त कर देते हैं अर्थात् सिद्ध गति को प्राप्त करते हैं।

वर्तमान अवसर्पिणी के आरे में तीन वंश उत्पन्न हुए। अरिहन्त वंश चक्रवर्ती वंश। और दशार वंश इसी आरे में तेईस तीर्थंकर ग्यारह चक्रवर्ती, नौ बलदेव, नौ वासुदेव और नौ प्रतिवासुदेव उत्पन्न हुए। दुख विशेष और सुख कम होने से यह आरा दुषम सुषमा कहा जाता है।

(५) दुषमा–पांचवां दुषमाआरा इक्कीस हजार वर्ष का है। इस आरे में मनुष्यों के छहो संस्थान और छहों संहन न होते हैं। शरीर की अवगाहना ७ हाथ तक की होती है। आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट सौवर्ष झाझेरी होती है। जीव स्वकृत कर्मानुसार चारों गतियों में जाते है चौथे आरे में उत्पन्न हुआ कोई जीव मुक्ति भी प्राप्त कर सकता है। जैसे जम्बूस्वामी। वर्तमान पंचम आरे का तीसरा भाग बीतजाने पर गण (समुदाय जाती) विवाहादि व्यवहार, पाखण्डधर्म, राजधर्म, अग्नि तथा अग्नि से होने वाली रसोई आदि क्रियाए चारित्रधर्म और गच्छ व्यवहार–इन सभी का विच्छेद हो जायगा। यह आरा दुख प्रधान है। इसलिये इसका नाम दुषमा है।

६–दुषम दुषमा-अवसर्पिणी का दुषमा आरा बीत जाने पर अत्यन्त दुखों से परिपुर्ण दुषमदुषमा नामक छठा आरा प्रारंभ होगा। यह काल मनुष्य और पशुओं के दुख जनित हाहाकार से व्याप्त होगा इस आरे के प्रारंभ में धूलिमय भयङ्कर आंधी चलेगी तथा संवर्तक वायु बहेगी। दिशाए धूली से भरी होंगी इसलिए प्रकाश शून्य होंगी। अरस, विरस, क्षार, खात, अग्नि, विद्युत् और विष प्रधान मेघ बरसेंगे। प्रलयकालीन पवन और वर्षा के प्रभाव से विविध वनस्पतियां एवं त्रसप्राणी नष्ट हो जायेंगे। पहाड और नगर पृथ्वी से मिल जायेंगे। पर्वतों में एक वैताढय पर्वत स्थिर रहेगा। और नदियों में गंगा और सिन्धु नदियाँ रहेगी। काल के अत्यन्त रुक्ष होने से सूर्य खूब तपेगा। और चन्द्रमा अतिशीत होगा। गंगा और सिन्धु नदियो का पाट रथ के चीले जितना अर्थात् पहियों के बीच के अन्तर जितना चौडा होगा और उनमें रथ की धुरी जितना गहरा पानी होगा। नदियां मच्छ कच्छपादि जलचर जीवों से भरी होंगी। भरतक्षेत्र की भुमि अंगार, भोभर राख तथा तपे हुए तवे के सदृश होंगी। ताप में वह अग्नी जैसी तथा धुली और कीचड से भी भरी होगी। इस कारण पृथ्वी पर कष्ट पूर्वक चल फिर सकेंगे। इस आरे के मनुष्यों की उत्कृष्ट अवगाहना एक हाथ की और आयु बीस वर्ष की होगी। ये अधिक सन्तानवाले होंगे। इनके वर्ण गंध, रस, स्पर्श, संहनन. संस्थान सभी अशुभ होंगे। शरीर सब तरह से बेडौल होगा। अनेक व्याधियां घर किये रहेंगी। राग द्वेष और कषाय की मात्रा अधिक होगी धर्म श्रद्धा बिलकुल न रहेंगी। वैत्ताढय पर्वत में गंगा और सिन्धु महानदियों के पूर्व पश्चिम तट पर ७२ बिल है वे ही इस काल के मनुष्यों के निवासस्थान होंगे। ये लोग सूर्योदय और सूर्यास्त के समय अपने अपने बिलों से निकलेंगे और गंगा सिन्धू महानदी से मच्छ कच्छपादि पकडकर रेतमें गाड देंगे। शाम के गाडे हुए मच्छादि को सुबह निकाल कर खाएँगे और सुबह के गाडे हुए मच्छादि शाम को निकाल कर खायेंगे। व्रत नियम और प्रत्याख्यान से रहित मांस भोजी, सक्लिष्ट परीणामवाले ये जीव मरकर प्रायः नरक और तिर्यन्च में उत्पन्नहोंगे।

उत्सर्पिणी काल के छ आरे–

अवसर्पिणी काल के जो छह आरे हैं। वे ही आरे इस काल में व्यत्यय (उल्टे) रूप से होतें हैं इनका स्वरूप भी ठीक उन्हीं जैसा है, किन्तु विपरीत क्रम से। पहला आरा अवसर्पिणी के छठे आरें

जैसा है। छठे आरे के अन्त समय में जो हीनतम अवस्था होती है। उससे इस आरे का प्रारंभ होता है। और क्रमिक विकास द्वारा बढते बढते छठे आरे की प्रारम्भिक अवस्था आने पर यह आरा समाप्त होता हैं। इसी प्रकार शेष आरों में भी क्रमिक विकास होता है। सभी आरे अन्तिम अवस्था से शुरु होकर क्रमिक विकास से प्रारम्भिक अवस्था को पहुचते हैं। यह काल भी अवसर्पीणी काल की तरह दस कोडा कोडी सागरोपम का है। उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी में जो अन्तर है वह इस प्रकार है—

उत्सर्पिणी के छ आरे —दुषम, दुषमा दुषमा, दुषम, सुषमा, सुषम दुषमा, सुषमा, सुषम सुषमा, ।

(१) दुषम दुषमा—अवसर्पीणी का छटा आरा आषाढ सुदी पूनम को समाप्त होता है और सावन वदी एकम को चन्द्रमा के अभिजित् नक्षत्र में होने पर उत्सर्पिणी का दुषम दुषमा नामक प्रथम आरा प्रारंभ होता है। यह आरा अवसर्पिणी के छठे आरे जैसा होता है। इसमें वर्ण गन्ध, रस, स्पर्श आदि पर्यायों में तदा मनुष्यों की अवगाहना स्थिति, संहनन, और संस्थान आदि में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है। यह आरा इक्कीस हजार वर्ष का है।

२—दुषमा—इस आरे के प्रारंभ में सात दिन तक, भरत क्षेत्र जितने विस्तारवाले पुष्कर संवर्तक मेघ बरसेंगे। सात दिन की इस वर्षा से छठे आरे के अशुभभाव रुक्षता उष्णता नष्ट हो जायेंगी। इसके बाद सात दिन तक क्षीर मेघ की वर्षा होगी इसमें शुभवर्ण गन्ध रस और स्पर्ष की उत्पत्ति होगी। क्षीर मेघ के बाद सात दिन तक घृत मेघ बरसेगा। इस वृष्टि से पृथ्वी में स्निग्ध (चिकनाहट) उत्पन्न हो जायगी। इसके बाद सात दिन तक अमृत मेघ वृष्टि बरसेगा। जिसके प्रभाव से वृक्ष गुच्छ गुल्म लता आदि बनस्पतियों के अंकूर फूटेंगे। अमृत मेघ के बाद सात दिन तक रस मेघ बरसेगा। रस मेघ की वृष्टि से वनस्पतियों में पांच प्रकार का रस उत्पन्न होगा और उनमें पत्र प्रवाल अंकुर पुष्प फल की वृद्धि होगी।

उक्त प्रकार की वृष्टि होने पर जब पृथ्वी सरस हो जायेगी तथा वृक्ष लतादि वनस्पतियों से हरि, भरि और रमणीय हो जायेगी तब लोग बिलोंसे निकलेंगे। वे पृथ्वी को सरस सुन्दर और रमणीय देखकर बहुत प्रसन्न होंगे। एक दूसरे को बुलावेंगे और खूब खुशियां मनावेंगे। पत्र, पुष्प, फल आदि से सुशोभित वनस्पतियाँ से अपना निर्वाह होते देख वे मिलकर यह मर्यादा बाधेंगे कि आज से हमलोग मांसाहार नही करेंगे और मांसाहारी प्राणी को छाया तक हमारे लिए त्याज्य होगी।

इस प्रकार इस आरे में पृथ्वी रमणीय हो जायेगी। प्राणी सुख-पूर्वक रहने लगेंगे। इस आरे के मनुष्यों के छहों संहनन और छहो संस्थान होंगे। उनकी अवगाहना बहुत से हाथ की और आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट सौ वर्ष की झाझेरी होगी। इस आरे के जीव मरकर अपने कर्मो के अनुसार चारों गतियों में उत्पन्न होंगे, सिद्ध नहीं होंगे। यह आरा इक्कीस हजार वर्ष का होगा।

(३) दुषमा सुषमा—यह आरा बयालीस हजार वर्ष कम एक कोडा कोडी सागरोपम का होगा। इसका स्वरुप अवसर्पिणी के चौथे आरे के सदृश जानना चाहिए। आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट एक करोड पूर्व का होगा। इस आरे में तीन वंश होंगे—तीर्थङ्कर वंश चक्रवर्ती वंश, और दशार वंश इस आरे में तेविस तिर्थंकरभगवान ग्हारह चक्रवर्ती नौ बलदेव, नौ वासुदेव और नौ प्रतिवासुदेव होंगे।

(४) सुषम—दुषमा—यह आरा दो कोडा कोडी सागरोपम का होगा और सारी बातें अवसर्पिणी के तीसरे आरे के समान होगी इसके भी तीन भाग होंगे किन्तु इनका क्रम उल्टा होगा। अवसर्पिणी के तीसरे भाग के समान इस आरे का प्रथम भाग होगा। इस आरे में श्रीऋषभदेव स्वामी के समान चौवीसवें श्रीभद्रकृत तीर्थंकर होंगे। शिल्पकलादि तीसरे आरे से चले आयेंगे। इसलिए उन्हें कला आदि का उपदेश देने की आवश्यकता नहीं होगी। कहीं कहीं १५ कुलकर उत्पन्न होने की बात लिखी है। वे लोग क्रमशः धिक्कार मकार, और हाकार दण्ड का प्रयोग करेंगे। इस आरे के तीसरे भाग में राज एवं चारित्र

धर्म का विच्छेद हो जायेगा। दूसरे और तीसरे त्रिभाग अवसर्पिणी के तीसरे आरे के दूसरे और तीसरे त्रिभाग अवसर्पिणी के तीसरे आरे के दूसरे और पहले त्रिभाग के सदृश होंगे।

(५) (६) सुषमा और सुषम सुषमा नामक पांचवाँ और छठा आरा अवसर्पिणी के द्वितीय और प्रथम आरे के समान होगा। इसी अवसर्पिणी काल के तीसरे आरे के चोरासी लक्ष पूर्व और नवासी पक्ष अर्थात् तीन वर्ष और साढे आठ महिने बाकी रहे थे तब भगवान श्रीऋषभदेव मरुदेवी के उदर में अवतरित हुए थे। जिनका संक्षिप्त वृत्तान्त आगे पढें।............

भगवान श्री ऋषभदेव

भगवान श्रीऋषभदेव के तेरह भवः—

भगवान श्रीऋषभदेव के जीव ने धन्ना सार्थवाह के भव में सम्यक्त्व प्राप्त किया था। उस भव से लेकर मोक्ष जाने तक तेरह भव किये थे। वे ये हैं—

(१) धन्ना सार्थवाह (२) युगलिया (३) देव (सौधर्म देवलोक में) (४) महाबल (५) ललितांगदेव (दूसरे देवलोक में) (६) वज्रजंघ (७) युगलिया (८) देव (सौधर्म देवलोक में) (९) जीवानन्द वैद्य (१०) देव (अच्युत देवलोक में) (११) वज्रनाभ चक्रवर्ती (१२) देव (सर्वार्थसिद्ध विमान में) (१३) प्रथम तीर्थंकर भगवान श्रीऋषभदेव।

प्रथम भव धन्ना सार्थवाहः—

जम्बूद्वीप के पश्चिम महाविदेह में क्षितिप्रतिष्ठित नामका नगर था। वहाँ प्रसन्न चन्द्र नामका एक प्रतापी राजा राज्य करता था। वह अपनी महदृद्धियों के कारण इन्द्र की तरह शोभायमान था। उस नगर में धन्ना सार्थवाहनामका श्रेष्ठी रहता था। जिस तरह अनेक नदियाँ समुद्र में आश्रित रहती है। उसी प्रकार उस श्रेष्ठी के घर अनेक निराश्रित आश्रय पा रहे थे। वह अपनी सम्पत्ति को परोपकार में ही खर्च करता था। वह सदाचारी और धर्म परायण था।

एक समय उसने किराणा लेकर वसन्तपुर जाने का निश्चय किया। उसने सारे नगर में यह घोषणा करवाई कि "धन्ना श्रेष्ठी व्यापारार्थ वसन्तपुर जानेवाला हैं जिस किसी को वसन्तपुर चलना हो वह चले। जिसके पास चढने को सवारी नहीं होगी वे उसे सवारी देंगे। जिसके पास अन्न वस्त्र नहीं है उसे वे अन्न वस्त्र भी देगे। जिसके पास व्यापार के लिए धन नहीं उसे धन भी प्रदान करेंगे। तथा रास्ते में चोर डाकुओ से एवं व्याघ्र आदि हिंस्र प्राणिओं से उनका रक्षण करेंगे। इस प्रकार की घोषणा करवाने के बाद धन्ना श्रेष्ठी ने चार प्रकार की वस्तुएं गाडियों में भरी। घर की स्त्रियों में उनका प्रस्थान मंगल किया। शुभ मुहूर्त में सेठ रथ पर आरूढ होकर नगर से बाहर चले। सेठ के प्रस्थान के समय जो भेरी बजी उसको क्षितिप्रतिष्ठित निवासियों ने अपने बुलाने का आमंत्रण समझा और अपनी २ साधन समाग्रियों के साथ तैयार होकर सेठ के साथ नगर के बाहर आये। धन्नाश्रेष्ठी नगर के बाहर उद्यान में आकर ठहरे।

उस समय धर्मघोष नामके तेजस्वी आचार्य अपनी शिष्य मण्डली के साथ नगर में पधारे हुए थे। वे भी वसन्तपुर जाना चाहते थे किन्तु मार्ग की कठीनाईयो के कारण वे जा नहीं सकते थे। उन्होंने भी यह घोषणा सुनी धन्ना सार्थवाह का मणिभद्र नामक प्रधान मुनीम था श्रीधर्मघोष आचार्य ने उनके पास अपने दो साधुओ को भेजा। अपने घर पर आये हुए मुनियो को देखकर मणिभद्र ने उन्हें प्रणाम किया और विनयपूर्वक आने का कारण पूछा। साधुओने कहा। धन्नासार्थवाह का वसन्त पूर गमन सुन-

जैसा है। छठे आरे के अन्त समय में जो हीनतम अवस्था होती है। उससे इस आरे का प्रारंभ होता है।' और क्रमिक विकास द्वारा बढते बढते छठे आरे की प्रारम्भिक अवस्था आने पर यह आरा समाप्त होता हैं। इसी प्रकार शेष आरों में भी क्रमिक विकास होता है। सभी आरे अन्तिम अवस्था से शुरु होकर क्रमिक विकास से प्रारम्भिक अवस्था को पहुचते हैं। यह काल भी अवसर्पीणी काल की तरह दस कोडा कोडी सागरोपम का है। उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी में जो अन्तर है वह इस प्रकार है—

उत्सर्पिणी के छ आरे —दुषम, दुषमा दुषमा, दुषम, सुषमा, सुषम दुषमा, सुषमा, सुषम सुषमा,।

(१) दुषम दुषमा—अवसर्पीणी का छठा आरा आषाढ सुदी पूनम को समाप्त होता है और सावन वदी एकम को चन्द्रमा के अभिजित् नक्षत्र में होने पर उत्सर्पिणी का दुषम दुषमा नामक प्रथम आरा प्रारंभ होता है। यह आरा अवसर्पिणी के छठे आरे जैसा होता है। इसमें वर्ण गन्ध, रस, स्पर्श आदि पर्यायों में तदा मनुष्यों की अवगाहना स्थिति, संहनन, और संस्थान आदि में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है,। यह आरा इक्कीस हजार वर्ष का है।

२—दुषमा—इस आरे के प्रारंभ में सात दिन तक, भरत क्षेत्र जितने विस्तारवाले पुष्कर संवर्तक मेघ बरसेंगे। सात दिन की इस वर्षा से छठे आरे के अशुभभाव रुक्षता उष्णता नष्ट हो जायेंगी। इसके बाद सात दिन तक क्षीर मेघ की वर्षा होगी इसमें शुभवर्ण गन्ध रस और स्पर्ष की उत्पत्ति होगी। क्षीर मेघ के बाद सात दिन तक घृत मेघ बरसेगा। इस वृष्टि से पृथ्वी में स्निग्ध (चिकनाहट) उत्पन्न हो जायगी। इसके बाद सात दिन तक अमृत मेघ वृष्टि बरसेगा। जिसके प्रभाव से वृक्ष गुच्छ गुल्म लता आदि बनस्पतियों के अंकूर फूटेंगे। अमृत मेघ के बाद सात दिन तक रस मेघ बरसेगा। रस मेघ की वृष्टि से वनस्पतियों में पांच प्रकार का रस उत्पन्न होगा और उनमें पत्र प्रवाल अंकुर पुष्प फल की वृद्धि होगी।

उक्त प्रकार की वृष्टि होने पर जब पृथ्वी सरस हो जायेगी तथा वृक्ष लतादि वनस्पतिओं से हरि, भरि और रमणीय हो जायेगी तब लोग बिलोंसे निकलेंगे। वे पृथ्वी को सरस सुन्दर और रमणीय देखकर बहुत प्रसन्न होंगे। एक दूसरे को बुलावेंगे और खूब खुशियां मनावेंगे। पत्र, पुष्प, फल आदि से सुशोभित वनस्पतियाँ से अपना निर्वाह होते देख वे मिलकर यह मर्यादा बांधेंगे कि आज से हमलोग मांसाहार नही करेंगे और मांसाहारी प्राणी को छाया तक हमारे लिए त्याज्य होगी।

इस प्रकार इस आरे में पृथ्वी रमणीय हो जायेगी। प्राणी सुख-पूर्वक रहने लगेंगे। इस आरे के मनुष्यों के छहों संहनन और छहों संस्थान होंगे। उनकी अवगाहना बहुत से हाथ की और आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट सौ वर्ष की झाझेरी होगी। इस आरे के जीव मरकर अपने कर्मो के अनुसार चारों गतियों में उत्पन्न होंगे, सिद्ध नहीं होंगे। यह आरा इक्कीस हजार वर्ष का होगा।

(३) दुषमा सुषमा—यह आरा बयालीस हजार वर्ष कम एक कोडा कोडी सागरोपम का होगा। इसका स्वरुप अवसर्पिणी के चौथे आरे के सदृश जानना चाहिए। आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट एक करोड पूर्व का होगा। इस आरे में तीन वंश होंगे—तीर्थङ्कर वंश चक्रवर्ती वंश, और दशार वंश इस आरे में तेविस तिर्थंकरभगवान ग्हारह चक्रवर्ती नौ बलदेव, नौ वासुदेव और नौ प्रतिवासुदेव होंगे।

(४) सुषम—दुषमा—यह आरा दो कोडा कोडी सागरोपम का होगा और सारी बातें अवसर्पिणी के तीसरे आरे के समान होगी इसके भी तीन भाग होंगे किन्तु इनका क्रम उल्टा होगा। अवसर्पिणी के तीसरे भाग के समान इस आरे का प्रथम भाग होगा। इस आरे में श्रीऋषभदेव स्वामी के समान चौवीसवें श्रीभद्रकृत तीर्थंकर होंगे। शिल्पकलादि तीसरे आरे से चले आयेंगे। इसलिए उन्हें कला आदि का उपदेश देने की आवश्यकता नहीं होगी। कही कहीं १५ कुलकर उत्पन्न होने की बात लिखी है। वे लोग क्रमशः धिक्कार मकार, और हाकार दण्ड का प्रयोग करेंगे। इस आरे के तीसरे भाग में राज एवं चारित्र

धर्म का विच्छेद हो जायेगा । दूसरे और तीसरे त्रिभाग अवसर्पिणी के तीसरे आरे के दूसरे और तीसरे त्रिभाग अवसर्पिणी के तीसरे आरे के दूसरे और पहले त्रिभाग के सदृश होंगे ।

(५) (६) सुषमा और सुषम सुषमा नामक पांचवाँ और छठा आरा अवसर्पिणी के द्वितीय और प्रथम आरे के समान होंगा । इसी अवसर्पिणी काल के तीसरे आरे के चोरासी लक्ष पूर्व और नवासी पक्ष अर्थात् तीन वर्ष और साढे आठ महिंने बाकी रहे थे तब भगवान श्रीऋषभदेव मरुदेवी के उदर में अवतरित हुए थे । जिनका संक्षिप्त वृत्तान्त आगे पढें ।............

भगवान श्री ऋषभदेव

भगवान श्रीऋषभदेव के तेरह भवः—

भगवान श्रीऋषभदेव के जीव ने धन्ना सार्थवाह के भव में सम्यक्त्व प्राप्त किया था। उस भव से लेकर मोक्ष जाने तक तेरह भव किये थे । वे ये हैं—

(१) धन्ना सार्थवाह (२) युगलिया (३) देव (सौधर्म देवलोक में) (४) महाबल (५) ललितांगदेव (दूसरे देवलोक में) (६) वज्रजंघ (७) युगलिया (८) देव (सौधर्म देवलोक में) (९) जीवानन्द वैद्य (१०) देव (अच्युत देवलोक में) (११) वज्रनाभ चक्रवर्ती (१२) देव (सर्वार्थसिद्ध विमान में) (१३) प्रथम तीर्थंकर भगवान श्रीऋषभदेव ।

प्रथम भव धन्ना सार्थवाहः—

जम्बूद्वीप के पश्चिम महाविदेह में क्षितिप्रतिष्ठित नामका नगर था । वहाँ प्रसन्न चन्द्र नामका एक प्रतापी राजा राज्य करता था । वह अपनी महद्ऋद्धियों के कारण इन्द्र की तरह शोभायमान था । उस नगर में धन्ना सार्थवाहनामका श्रेष्ठी रहता था । जिस तरह अनेक नदियाँ समुद्र में आश्रित रहती है । उसी प्रकार उस श्रेष्ठी के घर अनेक निराश्रित आश्रय पा रहे थे । वह अपनी सम्पत्ति को परोपकार में ही खर्च करता था । वह सदाचारी और धर्म परायण था ।

एक समय उसने किराणा लेकर वसन्तपुर जाने का निश्चय किया । उसने सारे नगर में यह घोषणा करवाई कि "धन्ना श्रेष्ठी व्यापारार्थ वसन्तपुर जानेवाला हैं जिस किसी को वसन्तपुर चलना हो वह चले । जिसके पास चढने को सवारी नहीं होगी वे उसे सवारी देंगे । जिसके पास अन्न वस्त्र नहीं है उसे वे अन्न वस्त्र भी देगे । जिसके पास व्यापार के लिए धन नहीं उसे धन भी प्रदान करेंगे । तथा रास्ते में चोर डाकुओं से एवं व्याघ्र आदि हिंस्र प्राणियों से उनका रक्षण करेंगे । इस प्रकार की घोषणा करवाने के बाद धन्ना श्रेष्ठी ने चार प्रकार की वस्तुएं गाडियों में भरी । घर की स्त्रियों में उनका प्रस्थान मंगल किया । शुभ मुहूर्त में सेठ रथ पर आरुढ होकर नगर से बाहर चले । सेठ के प्रस्थान के समय जो भेरी बजी उसको क्षितिप्रतिष्ठित निवासियों ने अपने बुलाने का आमंत्रण समझा और अपनी २ साधन समाग्रियों के साथ तैयार होकर सेठ के साथ नगर के बाहर आये । धन्नाश्रेष्ठी नगर के बाहर उद्यान में आकर ठहरे ।

उस समय धर्मघोष नामके तेजस्वी आचार्य अपनी शिष्य मण्डली के साथ नगर में पधारे हुए थे । वे भी वसन्तपुर जाना चाहते थे किन्तु मार्ग की कठीनाईयो के कारण वे जा नहीं सकते थे । उन्होंने भी यह घोषणा सुनी धन्ना सार्थवाह का मणिभद्र नामक प्रधान मुनीम था श्रीधर्मघोष आचार्य ने उनके पास अपने दो साधुओ को भेजा । अपने घर पर आये हुए मुनियो को देखकर मणिभद्र ने उन्हें प्रणाम किया और विनयपूर्वक आने का कारण पूछा । साधुओने कहा । धन्नासार्थवाह का वसन्त पूर गमन सुन-

जैसा है। छठे आरे के अन्त समय में जो हीनतम अवस्था होती है। उससे इस आरे का प्रारंभ होता है। और क्रमिक विकास द्वारा बढते बढते छठे आरे की प्रारम्भिक अवस्था आने पर यह आरा समाप्त होता हैं। इसी प्रकार शेष आरों में भी क्रमिक विकास होता है। सभी आरे अन्तिम अवस्था से शुरु होकर क्रमिक विकास से प्रारम्भिक अवस्था को पहुचते हैं। यह काल भी अवसर्पीणी काल की तरह दस कोडा कोडी सागरोपम का है। उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी में जो अन्तर है वह इस प्रकार है—

उत्सर्पिणी के छ आरे —दुषम, दुषमा दुषमा, दुषम, सुषमा, सुषम दुषमा, सुषमा, सुषम सुषमा,।

(१) दुषम दुषमा—अवसर्पीणी का छठा आरा आषाढ सुदी पूनम को समाप्त होता है और सावन वदी एकम को चन्द्रमा के अभिजित् नक्षत्र में होने पर उत्सर्पिणी का दुषम दुषमा नामक प्रथम आरा प्रारंभ होता है। यह आरा अवसर्पिणी के छठे आरे जैसा होता है। इसमें वर्ण गन्ध, रस, स्पर्श आदि पर्यायों में तदा मनुष्यों की अवगाहना स्थिति, संहनन, और संस्थान आदि में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है.। यह आरा इक्कीस हजार वर्ष का है।

२—दुषमा—इस आरे के प्रारंभ में सात दिन तक, भरत क्षेत्र जितने विस्तारवाले पुष्कर संवर्तक मेघ बरसेंगे। सात दिन की इस वर्षा से छठे आरे के अशुभभाव रुक्षता उष्णता नष्ट हो जायेंगी। इसके बाद सात दिन तक क्षीर मेघ की वर्षा होगी इसमें शुभवर्ण गन्ध रस और स्पर्ष की उत्पत्ति होगी। क्षीर मेघ के बाद सात दिन तक घृत मेघ बरसेगा। इस वृष्टि से पृथ्वी में स्निग्ध (चिकनाहट) उत्पन्न हो जायगी। इसके बाद सात दिन तक अमृत मेघ वृष्टि बरसेगा। जिसके प्रभाव से वृक्ष गुच्छ गुल्म लता आदि वनस्पतियों के अंकूर फूटेंगे। अमृत मेघ के बाद सात दिन तक रस मेघ बरसेगा। रस मेघ की वृष्टि से वनस्पतियों में पांच प्रकार का रस उत्पन्न होगा और उनमें पत्र प्रवाल अंकुर पुष्प फल की वृद्धि होगी।

उक्त प्रकार की वृष्टि होंने पर जब पृथ्वी सरस हो जायेगी तथा वृक्ष लतादि वनस्पतिओ से हरि, भरि और रमणीय हो जायेगी तब लोग बिलोंसे निकलेंगे। वे पृथ्वी को सरस सुन्दर और रमणीय देखकर बहुत प्रसन्न होंगे। एक दूसरे को बुलावेंगे और खूब खुशियां मनावेंगे। पत्र, पुष्प, फल आदि से सुशोभित वनस्पतियाँ से अपना निर्वाह होते देख वे मिलकर यह मर्यादा बाधेंगे कि आज से हमलोग मांसाहार नही करेंगे और मांसाहारी प्राणी को छाया तक हमारे लिए त्याज्य होगी।

इस प्रकार इस आरे में पृथ्वी रमणीय हो जायेगी। प्राणी सुख-पूर्वक रहने लगेंगे। इस आरे के मनुष्यां के छहां संहनन और छहों संस्थान होंगे। उनकी अवगाहना बहुत से हाथ की और आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट सौ वर्ष की झाझेरी होगी। इस आरे के जीव मरकर अपने कर्मों के अनुसार चारों गतियां में उत्पन्न होगे, सिद्ध नहीं होंगे। यह आरा इक्कीस हजार वर्ष का होगा।

(३) दुषमा सुषमा—यह आरा बयालीस हजार वर्ष कम एक कोडा कोडी सागरोपम का होगा। इसका स्वरुप अवसर्पिणी के चौथे आरे के सदृश जानना चाहिए। आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट एक करोड पूर्व का होगा। इस आरे में तीन वंश होंगे—तीर्थङ्कर वंश चक्रवर्ती वंश, और दशार वंश इस आरे में तेविस तिर्थकरभगवान ग्हारह चक्रवर्ती नौ बलदेव, नौ वासुदेव और नौ प्रतिवासुदेव होंगे।

(४) सुषम–दुषमा—यह आरा दो कोडा कोडी सागरोपम का होगा और सारी बातें अवसर्पिणी के तीसरे आरे के समान होगी इसके भी तीन भाग होंगे किन्तु इनका क्रम उल्टा होगा। अवसर्पिणी के तीसरे भाग के समान इस आरे का प्रथम भाग होगा। इस आरे में श्रीऋषभदेव स्वामी के समान चौबीसवें श्रीभद्रकृत तीर्थकर होंगे। शिल्पकलादि तीसरे आरे से चले आयेंगे। इसलिए उन्हें कला आदि का उपदेश देने की आवश्यकता नहीं होगी। कही कहीं १५ कुलकर उत्पन्न होने की बात लिखी है। वे लोग क्रमशः धिक्कार मकार, और हाकार दण्ड का प्रयोग करेंगे। इस आरे के तीसरे भाग में राज एवं चारित्र

धर्म का विच्छेद हो जायेगा । दूसरे और तीसरे त्रिभाग अवसर्पिणी के तीसरे आरे के दूसरे और तीसरे त्रिभाग अवसर्पिणी के तीसरे आरे के दूसरे और पहले त्रिभाग के सदृश होंगे ।

(५) (६) सुषमा और सुषम सुषमा नामक पांचवाँ और छठा आरा अवसर्पिणी के द्वितीय और प्रथम आरे के समान होंगा । इसी अवसर्पिणी काल के तीसरे आरे के चोरासी लक्ष पूर्व और नवासी पक्ष अर्थात् तीन वर्ष और साढे आठ महिने बाकी रहे थे तब भगवान श्रीऋषभदेव मरुदेवी के उदर में अवतरित हुए थे । जिनका संक्षिप्त वृत्तान्त आगे पढ़ें ।............

भगवान श्री ऋषभदेव

भगवान श्रीऋषभदेव के तेरह भवः—

भगवान श्रीऋषभदेव के जीव ने धन्ना सार्थवाह के भव में सम्यक्त्व प्राप्त किया था । उस भव से लेकर मोक्ष जाने तक तेरह भव किये थे । वे ये हैं—

(१) धन्ना सार्थवाह (२) युगलिया (३) देव (सौधर्म देवलोक में) (४) महाबल (५) ललितांगदेव (दूसरे देवलोक में) (६) वज्रजंघ (७) युगलिया (८) देव (सौधर्म देवलोक में) (९) जीवानन्द वैद्य (१०) देव (अच्युत देवलोक में) (११) वज्रनाभ चक्रवर्ती (१२) देव (सर्वार्थसिद्ध विमान में) (१३) प्रथम तीर्थंकर भगवान श्रीऋषभदेव ।

प्रथम भव धन्ना सार्थवाहः—

जम्बूद्वीप के पश्चिम महाविदेह में क्षितिप्रतिष्ठित नामका नगर था । वहाँ प्रसन्न चन्द्र नामका एक प्रतापी राज़ा राज्य करता था । वह अपनी महद्ऋद्धियों के कारण इन्द्र की तरह शोभायमान था । उस नगर में धन्ना सार्थवाहनामका श्रेष्ठी रहता था । जिस तरह अनेक नदियाँ समुद्र में आश्रित रहती है । उसी प्रकार उस श्रेष्ठी के घर अनेक निराश्रित आश्रय पा रहे थे । वह अपनी सम्पत्ति को परोपकार में ही खर्च करता था । वह सदाचारी और धर्म परायण था ।

एक समय उसने किराणा लेकर वसन्तपुर जाने का निश्चय किया । उसने सारे नगर में यह घोषणा करवाई कि "धन्ना श्रेष्ठी व्यापारार्थ वसन्तपुर जानेवाला हैं जिस किसी को वसन्तपुर चलना हो वह चले । जिसके पास चढने को सवारी नहो होंगी वे उसे सवारी देंगे । जिसके पास अन्न वस्त्र नहीं है उसे वे अन्न वस्त्र भी देगे । जिसके पास व्यापार के लिए धन नहीं उसे धन भी प्रदान करेंगे । तथा रास्ते में चोर डाकुओं से एवं व्याघ्र आदि हिंस्र प्राणियों से उनका रक्षण करेंगे । इस प्रकार की घोषणा करवाने के बाद धन्ना श्रेष्ठी ने चार प्रकार की वस्तुएं गाडियों में भरी । घर की स्त्रियों में उनका प्रस्थान मंगल किया । शुभ मुहूर्त में सेठ रथ पर आरुढ होकर नगर से बाहर चले । सेठ के प्रस्थान के समय जो भेरी बजी उसको क्षितिप्रतिष्ठित निवासियों ने अपने बुलाने का आमंत्रण समझा और अपनी २ साधन समाग्रियों के साथ तैयार होकर सेठ के साथ नगर के बाहर आये । धन्नाश्रेष्ठी नगर के बाहर उद्यान में आकर ठहरे ।

उस समय धर्मघोष नामके तेजस्वी आचार्य अपनी शिष्य मण्डली के साथ नगर में पधारे हुए थे । वे भी वसन्तपुर जाना चाहते थे किन्तु मार्ग की कठीनाईयो के कारण वे जा नहीं सकते थे । उन्होंने भी यह घोषणा सुनी धन्ना सार्थवाह का मणिभद्र नामक प्रधान मुनीम था श्रीधर्मघोष आचार्य ने उनके पास अपने दो साधुओं को भेजा । अपने घर पर आये हुए मुनियो को देखकर मणिभद्र ने उन्हें प्रणाम किया और विनयपूर्वक आने का कारण पूछा । साधुओने कहा । धन्नासार्थवाह का वसन्त पूर गमन सुन-

जैसा है। छठे आरे के अन्त समय में जो हीनतम अवस्था होती है। उससे इस आरे का प्रारंभ होता है। और क्रमिक विकास द्वारा बढते बढते छठे आरे की प्रारम्भिक अवस्था आने पर यह आरा समाप्त होता हैं। इसी प्रकार शेष आरों में भी क्रमिक विकास होता है। सभी आरे अन्तिम अवस्था से शुरु होकर क्रमिक विकास से प्रारम्भिक अवस्था को पहुचते हैं। यह काल भी अवसर्पाणी काल की तरह दस कोडा कोडी सागरोपम का है। उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी में जो अन्तर है वह इस प्रकार है—

उत्सर्पिणी के छ आरे —दुषम, दुषमा दुष्रमा, दुषम, सुषमा, सुषम दुषमा, सुषमा, सुषम सुषमा,।

(१) दुषम दुषमा—अवसर्पीणी का छठा आरा आषाढ सुदी पूनम को समाप्त होता है और सावन वदी एकम को चन्द्रमा के अभिजित् नक्षत्र में होने पर उत्सर्पिणी का दुषम दुषमा नामक प्रथम आरा प्रारंभ होता है। यह आरा अवसर्पिणी के छठे आरे जैसा होता है। इसमें वर्ण गन्ध, रस, स्पर्श आदि पर्यायों में तदा मनुष्यों की अवगाहना स्थिति, संहनन, और संस्थान आदि में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाती है। यह आरा इक्कीस हजार वर्ष का है।

२—दुषमा—इस आरे के प्रारंभ में सात दिन तक, भरत क्षेत्र जितने विस्तारवाले पुष्कर संवर्तक मेघ बरसेंगे। सात दिन की इस वर्षा से छठे आरे के अशुभभाव रुक्षता उष्णता नष्ट हो जायेंगी। इसके बाद सात दिन तक क्षीर मेघ की वर्षा होगी इसमें शुभवर्ण गन्ध रस और स्पर्श की उत्पत्ति होगी। क्षीर मेघ के बाद सात दिन तक घृत मेघ बरसेगा। इस वृष्टि से पृथ्वी में स्निग्ध (चिकनाहट) उत्पन्न हो जायगी। इसके बाद सात दिन तक अमृत मेघ वृष्टि बरसेगा। जिसके प्रभाव से वृक्ष गुच्छ गुल्म लता आदि वनस्पतियों के अंकूर फूटेंगे। अमृत मेघ के बाद सात दिन तक रस मेघ बरसेगा। रस मेघ की वृष्टि से वनस्पतियों में पांच प्रकार का रस उत्पन्न होगा और उनमें पत्र प्रवाल अंकुर पुष्प फल की वृद्धि होगी।

उक्त प्रकार की वृष्टि होंने पर जब पृथ्वी सरस हो जायेगी तथा वृक्ष लतादि वनस्पतिओं से हरि, भरि और रमणीय हो जायेगी तब लोग बिलोंसे निकलेंगे। वे पृथ्वी को सरस सुन्दर और रमणीय देखकर बहुत प्रसन्न होंगे। एक दूसरे को बुलावेंगे और खूब खुशियां मनावेंगे। पत्र, पुष्प, फल आदि से सुशोभित वनस्पतियाँ से अपना निर्वाह होते देख वे मिलकर यह मर्यादा बांधेंगे कि आज से हमलोग मांसाहार नहीं करेंगे और मांसाहारी प्राणी को छाया तक हमारे लिए त्याज्य होगी।

इस प्रकार इस आरे में पृथ्वी रमणीय हो जायेगी। प्राणी सुख-पूर्वक रहने लगेंगे। इस आरे के मनुष्यों के छहों संहनन और छहों संस्थान होंगे। उनकी अवगाहना बहुत से हाथ की और आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त की, उत्कृष्ट सौ वर्ष की झाझेरी होगी। इस आरे के जीव मरकर अपने कर्मों के अनुसार चारों गतियों में उत्पन्न होंगे, सिद्ध नहीं होंगे। यह आरा इक्कीस हजार वर्ष का होगा।

(३) दुषमा सुषमा—यह आरा बयालीस हजार वर्ष कम एक कोडा कोडी सागरोपम का होगा। इसका स्वरुप अवसर्पिणी के चौथे आरे के सदृश जानना चाहिए। आयु जघन्य अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्ट एक करोड पूर्व का होगा। इस आरे में तीन वंश होंगे—तीर्थङ्कर वंश चक्रवर्ती वंश, और दशार वंश इस आरे में तेविस तिर्थंकरभगवान ग्हारह चक्रवर्ती नौ बलदेव, नौ वासुदेव और नौ प्रतिवासुदेव होंगे।

(४) सुषम—दुषमा—यह आरा दो कोडा कोडी सागरोपम का होगा और सारी बातें अवसर्पिणी के तीसरे आरे के समान होगी इसके भी तीन भाग होंगे किन्तु इनका क्रम उल्टा होगा। अवसर्पिणी के तीसरे भाग के समान इस आरे का प्रथम भाग होगा। इस आरे में श्रीऋषभदेव स्वामी के समान चौबीसवें श्रीभद्रकृत तीर्थंकर होंगे। शिल्पकलादि तीसरे आरे से चले आयेंगे। इसलिए उन्हें कला आदि का उपदेश देने की आवश्यकता नहीं होगी। कहीं कहीं १५ कुलकर उत्पन्न होने की बात लिखी है। वे लोग क्रमशः धिक्कार मकार, और हाकार दण्ड का प्रयोग करेंगे। इस आरे के तीसरे भाग में राज एवं चारित्र

धर्म का विच्छेद हो जायेगा । दूसरे और तीसरे त्रिभाग अवसर्पिणी के तीसरे आरे के दूसरे और तीसरे त्रिभाग अवसर्पिणी के तीसरे आरे के दूसरे और पहले त्रिभाग के सदृश होंगे ।

(५) (६) सुषमा और सुषम सुषमा नामक पांचवाँ और छठा आरा अवसर्पिणी के द्वितीय और प्रथम आरे के समान होंगा । इसी अवसर्पिणी काल के तीसरे आरे के चोरासी लक्ष पूर्व और नवासी पक्ष अर्थात् तीन वर्ष और साढे आठ महिंने बाकी रहे थे तब भगवान श्रीऋषभदेव मरुदेवी के उदर में अवतरित हुए थे । जिनका संक्षिप्त वृत्तान्त आगे पढें ।............

भगवान श्री ऋषभदेव

भगवान श्रीऋषभदेव के तेरह भवः—

भगवान श्रीऋषभदेव के जीव ने धन्ना सार्थवाह के भव में सम्यक्त्व प्राप्त किया था । उस भव से लेकर मोक्ष जाने तक तेरह भव किये थे । वे ये हैं—

(१) धन्ना सार्थवाह (२) युगलिया (३) देव (सौधर्म देवलोक में) (४) महाबल (५) ललितांगदेव (दूसरे देवलोक में) (६) वज्रजंघ (७) युगलिया (८) देव (सौधर्म देवलोक में) (९) जीवानन्द वैद्य (१०) देव (अच्युत देवलोक में) (११) वज्रनाभ चक्रवर्ती (१२) देव (सर्वार्थसिद्ध विमान में) (१३) प्रथम तीर्थंकर भगवान श्रीऋषभदेव ।

प्रथम भव धन्ना सार्थवाह:—

जम्बूद्वीप के पश्चिम महाविदेह में क्षितिप्रतिष्ठित नामका नगर था । वहाँ प्रसन्न चन्द्र नामका एक प्रतापी राजा राज्य करता था । वह अपनी महदृद्धियों के कारण इन्द्र की तरह शोभायमान था । उस नगर में धन्ना सार्थवाहनामका श्रेष्ठी रहता था । जिस तरह अनेक नदियाँ समुद्र में आश्रित रहती है । उसी प्रकार उस श्रेष्ठी के घर अनेक निराश्रित आश्रय पा रहे थे । वह अपनी सम्पत्ति को परोपकार में ही खर्च करता था । वह सदाचारी और धर्म परायण था ।

एक समय उसने किराणा लेकर वसन्तपुर जाने का निश्चय किया । उसने सारे नगर में यह घोषणा करवाई कि "धन्ना श्रेष्ठी व्यापारार्थ वसन्तपुर जानेवाला हैं जिस किसी को वसन्तपुर चलना हो वह चले । जिसके पास चढने को सवारी नहा होंगी व उसे सवारी देंगे । जिसके पास अन्न वस्त्र नहीं है उसे वे अन्न वस्त्र भी देगे । जिसके पास व्यापार के लिए धन नहीं उसे धन भी प्रदान करेंगे । तथा रास्ते में चोर डाकुओं से एवं व्याघ्र आदि हिंस्र प्राणियों से उनका रक्षण करेंगे । इस प्रकार की घोषणा करवाने के बाद धन्ना श्रेष्ठी ने चार प्रकार की वस्तुएं गाडियों में भरी । घर की स्त्रियों में उनका प्रस्थान मंगल किया । शुभ मुहूर्त में सेठ रथ पर आरुढ होकर नगर से बाहर चले । सेठ के प्रस्थान के समय जो भेरी बजी उसको क्षितिप्रतिष्ठित निवासियों ने अपने बुलाने का आमंत्रण समझा और अपनी २ साधन समाग्रियों के साथ तैयार होकर सेठ के साथ नगर के बाहर आये । धन्नाश्रेष्ठी नगर के बाहर उद्यान में आकर ठहरे ।

उस समय धर्मघोष नामके तेजस्वी आचार्य अपनी शिष्य मण्डली के साथ नगर में पधारे हुए थे । वे भी वसन्तपुर जाना चाहते थे किन्तु मार्ग की कठीनाईयो के कारण वे जा नहीं सकते थे । उन्होंने भी यह घोषणा सुनी धन्ना सार्थवाह का मणिभद्र नामक प्रधान मुनीम था श्रीधर्मघोष आचार्य ने उनके पास अपने दो साधुओ को भेजा । अपने घर पर आये हुए मुनियो को देखकर मणिभद्र ने उन्हें प्रणाम किया और विनयपूर्वक आने का कारण पूछा । साधुओने कहा । धन्नासार्थवाह का वसन्त पूर गमन सुन-

कर आचार्य महाराज हमें आपके पास भेजा है। यदि सार्थवाह को स्वीकार हो तो वे भी उनके साथ जाना चाहते है। मणिभद्र ने उत्तर दिया—सार्थवाह का अहोभाग्य है अगर आचार्य महाराज साथ में पधारे किन्तु जाने के समय अचार्य महराज स्वयं आकर सार्थवाह को कह दें। यह कहकर नमस्कार पूर्वक उसने मुनियो को विदा किया। साधुओ ने जाकर सारीबात श्री आचार्य महाराज को कही उसे स्वीकार करके आचार्य महाराज अपने मुनि परिवार के साथ सार्थवाह को दर्शन देने के लिए उनके डेरे पर गये। अपने द्वार पर आये हुए आचार्य महाराज का सार्थवाह ने उचित सत्कार किया और उनसे विनयपूर्वक आने का कारण पूछा। आचार्य महाराज ने कहा हम भी तुम्हारे साथ वसन्तपुर जाना चहाते है।

धन्ना सार्थवाह ने अपना सद्भाग्य मानते हुए कहा—आचार्य प्रवर ! आज मै धन्य हू आप जैसे महापुरुष के साथ रहने से हमारा काफला पवित्र हो जायगा। हमारे जैसे अनेक व्यक्ति आपके उपदेशांमृत का पान कर सन्मार्ग की ओर आकृष्ट होगे। आप अवश्य मेरे साथ पधारे, उसी समय सार्थवाह ने अपने रसोईयो को बुलाया और कहा—अशनपान आदि जैसा आहार इन मुनिवरो को चाहिए उसे बिना संकोच के देना। इन्हें भोंजन विषयक किसी प्रकार का कष्ट न हो इस बात का पुरा ध्यान रखना।

यह सुनकर आचार्य महाराज ने कहा— हे सार्थपते ! इस प्रकार हमारे निमित्त तैयार किया हुआ आहार हम अहीं लेते किन्तु दूसरो के लिए बनाया गया निर्दोष आहार की माधुकरी वृत्ती से ग्रहण करते है। तथा कुआं वापी और तालाव का अग्नि आदि से असंस्कारित सचित्त जल भी हम ग्रहण नहीं करते।

उसी समय किसी ने पके हुए सुगन्धित आम्रफलो से भरा हुआ थाल सार्थपति को उपहार स्वरुप भेट दिया। उसे देखकर प्रसन्न होते हुए सार्थपति ने आचार्य श्री से कहा—भगवन् ? इन फलो को ग्रहण करके मुझ पर अनुग्रह कीजिए। आचार्य ने कहा—श्रेष्ठिन् ! मुनि सचित्त फल, बीज, कन्द, मूल, ग्रहण कभी नहीं करते। ये पदार्थ निर्जीव ही ग्राह्य है। यह सुनकर सार्थवाह बोला—आपका व्रत अत्यन्त कठोर है। मोक्ष का शाश्वत सुख बिना कष्ट के कहीं मिलता। यद्यपि आपका हमारे से बहुत कम प्रयोजन है फिर भी मार्ग में किसी प्रमार का कष्ट हो तो अवश्य हमें आज्ञा दीजियेगा। ऐसा कहकर सार्थवाह ने आचार्य को प्रणाम किया। आचार्य श्री अपने स्थान पर चले आये।

दूसरे दिन प्रातः काल होते ही आचार्य महाराज सार्थवाह के काफले के साथ रवाना हुए। सार्थवाह अपने काफले के साथ आगे बढा। सबसे आगे धन्नासार्थवाह अपने रक्षको के साथ चल रहा था उसके पीछे उसका प्रधान मुनिम मणिभद्र और दोनो ओर उसके वीर रक्षक दल था। उनके साथ आचार्य धर्मघोष भी अपनी शिष्य मण्डली के साथ चल रहे थे। उनके पीछे-पीछे अन्य व्यापारी अपने- अपने वाहनो के साथ अपने अपने लक्ष्यकी ओर आगे बढ रहे थे धन्नासार्थवाह अपने साथ के सभी व्यक्तियों का पूरा ध्यान रखता था और उनकी हर कठिनाई को दूर करता था। ईस प्रकार सार्थपति का विशाल काफला गर्मी की ऋतु में भो सतत प्रयाण करता हुआ आगे बढ रहा था। बडी तेजी से आगे बढते हुए सार्थवाह के काफले ने भयंकर जंगली जानवरों से युक्त अटवी में प्रवेश किया। वह अटवी वृक्षों से ईतनी सघन थी कि उससे सूर्य का प्रकाश भी नहीं आता था। सघन तथा लम्बी अटवी को पार करते हुए गर्मी को ऋतु समाप्त हो गई और वर्षाकाल प्रारंभ आ गया। आकाश बादलों से छा गया। आंधी और तूफान के साथ बिजली चमकने लगी। बादल गरजने लगे। और मूसलधार वर्षा होने लगी। नदी नाले पानी से भर गये। मार्ग कीचड और पानी से दुर्गम बन गया। वाहनों का आगे बढना दुष्कर हो गया। स्थान स्थान पर उभरते हुए नदीं नाले सार्थवाह के काफले को आगे बढने से रोक रहे थे। ऐसी

स्थिति में काफले को वहीं रुकना पडा। सार्थवाह ने अपने साथियों से पूछ कर वहीं सुरक्षित स्थल पर अपना पडाव डाल दिया। सामान की सुरक्षा के लिये वृक्षों पर मंच बनाये गये। रहने के लिये घांस की झोपडियां बनाई गई। मणिभद्र ने अपने लिये बनाई हुई एक निर्दोष झोपडी आचार्य श्री को रहने के लिये दी। आचार्य श्री उस झोपडी में अपनी शिष्य मण्डली के साथ रहने लगे। और धर्मध्यान में समय बिताने लगे।

वर्षा बहुत लम्बी चली। अतः सार्थवाह को अपनी कल्पना से भी अधिक रुकना पडा, लम्बे समय तक अटवी में रहने के कारण काफले के समीपको खाद्य सामग्री खूट गई। लोग कंद मूल खा कर अपना जीवन व्यतीत करने लगे।

एक समय सार्थवाह जब आराम कर रहा था उस समय उसके मुनीम ने कहा स्वामिन् ? खाद्य सामग्री के कम होने से सभी लोग कन्द, मूल और फल खाने लगी है ओर तापसों जैसा जीवन बिताने लगे हैं। भूख के कारण काफले की स्थिति अत्यंत दयनीय हो गई है। मणिभद्र की बात सुनकर धन्ना-सार्थवाह चौक गया। उसे अपने आपकी स्थिति पर एवं काफले कि दशापर अत्यन्त दुःख हुआ वह सोचने लगा मेरे काफले में सबसे अधिक दुःखी कौन है ? यह सोचते सोचते उसे धर्मघोष आचार्य का स्मरण हो आया। वह अपने आपको कहने लगा। इतने दिन तक मैंने उन महाव्रत धारियों का नाम तक नहीं लिया। सेवा करना तो दूर रहा कन्द, मूल फल वगैरह वस्तुएँ उनके लिए अभक्ष्य हैं। वे निर्दोष आहार ग्रहण करते हैं। अतः उनकी खाद्याभाव में क्या स्थिति रही होगी। उसकी मुझे जांच करनी चाहिए।

दूसरे दिन सार्थवाह शय्या से उठा। प्रातः कृत्य से निपटकर वह बहुत से लोगों के साथ आचार्य के समीप गया। वहां पहुँच कर मुनियों से घिरे हुवे धर्मघोष आचार्य के दर्शन किये और पास में बैठकर आचार्य से कहने लगा–भगवन् ! मैं पुन्यहीन हूँ ? पुन्यहीन के घर में कल्पवृक्ष नहीं उगता। न वहां कभी धन की वृष्टि होती है। आप संसार–समुद्र से पार होने के लिये जहाज के समान हैं। आप सच्चे धर्मोपदेशक व सद्गुरु हैं। आप जैसे सद्गुरु को प्राप्त करके भी मैंने कभी अमृत के समान आप श्री के वचन नहीं सुने। प्रभो ! मेरे इस प्रमाद को क्षमा कीजिए।

सार्थवाह के ये वचन सुनकर अवसर के ज्ञाता आचार्य श्री कहने लगे–सार्थपते ? आपको दुःखी नहीं होना चाहिए। जंगल में क्रूर प्राणियों से हमारी रक्षा करके आपने सब कुछ कर लिया है। काफलें के लोगों से इस देश और कल्प के अनुसार आहार पानी आदि मिल जाते हैं।

सार्थवाह ने कहा–भगवन् ! यह आपकी महानता है कि मेरे अपराध की ओर ध्यान न देकर आप मेरी प्रशंसा करते हैं तथा प्रत्येक परिस्थिति में संतुष्ट रहते हैं। किसी दिन मुझे भी दान का लाभ देने की कृपा कीजिए।

आचार्य श्री ने कहा–कल्पानुसार देखा जायगा। इसके बाद सार्थवाह वन्दना करके चला गया।

उस दिन के बाद सार्थवाह भोजन के समय मुनियों की प्रतीक्षा करने लगा। एक दिन गौचरी के लिए फिरते हुए दो मुनि उसके निवास स्थान पर पधारे। सार्थवाह को बडी प्रसन्नता हुई। वह सोचने लगा–आज मेरे धन्य भाग्य है जो मेरे घर मुनियों का आगमन हुआ है किन्तु इन्हें क्या दिया जाय ? पास में ताजा घी पड़ा था। सार्थवाह ने उसे हाथ में लेकर मुनियों को प्रार्थना की। यदि वह ग्रहणीय हो तो आप इसे ग्रहण करें। ग्रहणीय हैं। यह कहकर मुनियों ने पात्र वहां रखा। सार्थवाह बहुत प्रसन्न हुआ। और अपने जन्म को कृतार्थ समझता हुआ घी देने लगा। घी देते समय सेठ के परिणाम इतने

उच्च हुए कि देवों को भी आश्चर्य होने लगा। सेठ के परिणामों की परीक्षा करने के लिए देवताओं ने मुनि की दृष्टि बांध दी। जिससे मुनि अपने पात्र को देख नहीं सकते थे। इस कारण सेठ का बहराया हुआ घी पात्र भर जाने से बाहर जाने लगा। फिर भी सेठ घी डालता रहा। परिणामों की उच्चता के कारण वह यही समझता रहा कि मेरा दिया हुआ घी तो पात्र में ही जाता है। सेठ के दृढ परिणामों को देखकर देवों ने अपनी माया समेट ली। और दान का माहात्म्य बताने के लिए वसुधारा आदि पांच दिव्य प्रगट हुए। धन्नासार्थवाह ने भाव पूर्वक दान देकर बोधिबीज सम्यक्त्व को प्राप्त किया। भव्यत्त्व का परिपाक होने से वह अपार संसार समुद्र के किनारे पहुँच गया।

२ दूसरा भव—

सुखपूर्वक अपनी आयु पूर्ण करके व उत्तर कुरुक्षेत्र में तीन पल्योपम की आयुवाला युगलिया हुआ।

३ तीसरा भव—

युगलिये का आयुष्य पूर्णकर धन्नासार्थवाह सेठ का जीव सौधर्म देवलोक में उत्पन्न हुआ।

४–चौथा भव—

पश्चिम महाविदेह में गन्धिलावती नामका विजय है। इस विजय में गान्धार नामका देश है। उस देश की राजधानी का नाम गन्धसमृद्धि है। इस नगरी में शतबल नामके विद्याधर राजा राज्य करते थे। उनकी रानी का नाम चन्द्रकान्ता था। धन्नासार्थवाह का जीव देव सम्बन्धी अपनी आयु पूरी करके महारानी चन्द्रकान्ता के गर्भ में उत्पन्न हुआ। गर्भकालके पूर्ण होने पर महारानी ने एक शक्तिशाली पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम महाबल रखा गया। महाबल अच्छे कलाचार्यों के समागम तथा पूर्वभव के संस्कार के सुयोग से समस्त विद्याओं में निपुण हो गया। महाराज शतबल ने अपने पुत्र की योग्यता को प्रकट करने वाले विनय आदि सद्गुणों से प्रभावित होकर उसे युवराज बना दिया।

कुछ समय के बाद विषय भोगों से विरक्त होकर महाराजा शतबल ने दीक्षा लेने का विचार किया राज्याभिषेक पूर्वक समस्त राज्य अपने पुत्र महाबल को सौंप कर वे बन्धन से छूटे हुए हाथी की तरह बन्धन से निकल पड़े। वह आचार्य के समीप जाकर चारित्र ग्रहण कर लिया।

पिता के दीक्षित होने पर महाराजा महाबल ने राज्य की बागडोर संभाली। वे अत्यन्त न्यायपूर्वक राज्य करने लगे। उनके जैसे न्यायी व प्रजावत्सल राजा को पाकर प्रजा अपने को धन्य मानने लगी।

महाराजा महाबल के चारों बुद्धिनिधान साम, दाम, दण्ड भेद नीति के ज्ञाता चार महामन्त्री थे। इनके नाम थे स्वयंबुद्ध, संभिन्नमति, शतमति, और महामति। ये चारों महाराजा के बाल मित्र व राज्य के हितचिन्तक थे। इनमें स्वयंबुद्ध मन्त्री सम्यग्दृष्टि था। शेष तीन मन्त्री मिथ्यादृष्टि थे। यद्यपि उनमें इस तरह का मतभेद था परन्तु स्वामी का हित करने में चारों ही तत्पर रहते थे।

एक समय महाराजा महाबल अपनी राजसभा में बैठे हुए थे। चारों मन्त्री भी महाराज के साथ अपने अपने आसन पर आसीन थे। शहर के गण्यमान्य नागरिक भी सभा में उपस्थित थे। राजनर्तकी अपने मनमोहक नृत्य से महाराज व सभासदों को मन्त्रमुग्ध कर रही थी। महाराज बडे मुग्ध होकर नर्तकी का नृत्य देख रहे थे। महाराज महाबल की इस आसक्ति को देखकर महामन्त्री स्वयंबुद्ध सोचने लगा "हमारे स्वामी संसार के कार्यों में इतने अधिक निमग्न हैं कि उन्हें परलोक सम्बन्धी विचार करने का समय भी नहीं मिलता। स्वामी के इन्द्रियों पर विजय पाने की अपेक्षा इन्द्रियां स्वयं उन पर विजय पा रही हैं। अगर हमेशा यही स्थिति रही तो महाराज महाबल का परलोक अवश्य बीगड जायगा। अतः राज्य और स्वामी के सच्चे हितैषी होने के नाते महाराज को इस मोह के कीचड़ से निकालना चाहिए।" यह विचार कर स्वयंबुद्धमन्त्री नम्रभाव से बोला—राजन्! जो शब्दादि विषय हैं वहीं संसार के

कारण हैं, जो संसार के मूल कारण हैं वे विषय है इसलिए विषयाभिलाषी प्राणी प्रमादी बनकर शारीरिक और मानसिक बड़े बड़े दुःखों का अनुभव कर सदा परितप्त रहता है। मेरी माता, मेरे पिता, मेरे भाई मेरे कुटुम्बी स्वजन, मेरे परिचित मेरे हाथी घोड़े मकान आदि साधन मेरी धन सम्पत्ति, मेरा खान-पान, वस्त्र, इस प्रकार के अनेक प्रपंचों में फसा हुआ यह प्राणी आमरण प्रमादी बनकर कर्म बन्धन करता है। मानव की विषयेच्छा अगाध समुद्र की तरह है। जिस तरह अनेक नदियों का अथाग जल मिलने पर भी समुद्र सदा अटल रहता है, उसी प्रकार अनंत भोग सामग्री के मिलने पर भी मानव सदा अतृप्त रहता है। विषयाभिलाषी मानव भवान्तर में महादुखी होता है। अतः हे स्वामी! विषयों से अपनी रुचि हटाकर अपने मन को धर्म मार्ग की ओर लगाईए। कारण इस जीवन का कोई निश्चय नहीं। कभी भी मृत्यु आसकती है। इस आदर्श सत्य को न समझकर जीवन को शाश्वत समझने वाले लोग कहा करते हैं कि धर्म की आराधना फिर कभी कर लेंगे। अभी क्या जल्दि है? ये लोग न पहले ही धर्म की आराधना करपाते हैं न पीछे ही। यों कहते कहते ही उनकी सर्व आयु पूरी हो जाती है और काल आकर खड़ा हो जाता है। तब अन्त समय में केवल पश्चात्ताप ही उनके हाथ में रह जाता है। अतः आप इस मानव भव को सफल बनाने के लिए शाश्वत धर्म की आराधना कीजिए।

स्वयंबुद्ध मंत्री की असमय धर्म की बाते सुनकर महाराजा महाबल बोले–मन्त्रीप्रवर! तुमने धर्माचरण की जो बात कही है वह विना अवसर कि कही है। अभीं यह अवस्था धर्माचरण की नहीं है। यह बात सुनकर मन्त्री बोला–राजन्! धर्माचरण के लिए कोई समय का निर्धारण नहीं होता। मानव जीवन को असारता देखते हुए प्रत्येक क्षण में धर्म का आचरण करना चाहिए। मैंने जो आपको विना अवसर के धर्माचरण की सलाह दी है। जरा उसका कारण भी सुनिये। मैं आज नन्दनवन में गया था। वहां मैंने दो चारणमुनियों को एक वृक्ष के नीचे ध्यान करते हुए देखा। मैं उनके पास गया। और दर्शन कर उनके पास बैठ गया। मुनियों ने अपना ध्यान समाप्त कर मुझे उपदेश दिया। उपदेश समाप्ति के बाद मैंने उनसे आपके आयुष्य का प्रमाण पुछा उन्होंने आपका आयुष्य एक मास बताता। हे स्वामी! यही कारण है कि मैं आपसे धर्माचरण करने की जल्दी कर रहा हूँ। स्वयंबुद्ध मन्त्री से अपने एक मास की आयु जानकर महाबल राजा बोला मन्त्री! सोए हुए मुझ को जगाकर तुमने बहुत अच्छा किया किन्तु अल्प समय में किस तरह धर्म की साधना करूँ? स्वयंबुद्ध बोला–महाराज! घबराइए मत। एक दिन का धर्माचरण भी मुक्ति दे सकता है तो फिर स्वर्गप्राप्ति तो कितनी दूर है। महाबल राजा ने पुत्र को राज्यगद्दी भार सौंप दिया। दीनअनाथों को दान दिया। स्वजनों और परिजनों से क्षमा याचना की और स्थविर मुनि के पास आलोचना पूर्वक सर्व सावद्य योगोंका त्याग कर अनशन व्रत ग्रहण कर लिया। यह अनशन व्रत २२ दिन तक चला। अन्त में नमस्कार मन्त्र का ध्यान करते हुए देह का त्याग किया।

५ वाँ भव—

मानव भव का आयुष्य पूर्ण करके महाबलराजा का जीव दूसरे देवलोक में श्रीप्रभनामक विमान का स्वामी ललितांग नामक देव बना। उसकी प्रधान देवी का नाम स्वयंप्रभा था।

महाराजा महाबल की मृत्यु का समाचार सुनकर स्वयंबुद्धमंत्री को वैराग्य प्राप्त हुआ। उसने सिद्धाचार्य के पास दीक्षा धारण की। शुद्ध चारित्र का पालन कर व भी ईशानकल्प में ईशानेन्द्र का दृढ़धर्मा नामक सामानिक देव हुआ।

ललितांगदेव ने स्वयंप्रभादेवी के साथ भोगविलास करते हुए अपनी आयु के शेष दिन व्यतीत किये। उसकी मृत्यु नजदीक आ गई। जिससे उसके वक्षस्थल पर पडी हुई पुष्पमाला भी म्लान हो गई उसकी

कान्ति मन्द पड गई। मुख पर दीनता आ गई। अन्ततः उसकी देव आयु जलते हुए कपूर की तरह समाप्त हो गई।

ललितांगदेव स्वर्ग से च्युत हो जाने पर स्वयंप्रभादेवी की वही दशा हुई जो चकवे के विछोह में चकवी की होती है। वह रात दिन पति के वियोग में चुपचाप बैठी रहती थी। अन्ततः उसने अपने पति का ध्यान करते हुए अपनी देवआयु समाप्त की।

६–७–वाँ भव—

ईशान देवलोक का आयुष्य समाप्त कर ललितांगदेव का जीव महाविदेह क्षेत्र के पुष्कलावती विजय में स्थित लोहार्गल नगर के राजा स्वर्णजंघ की रानी लक्ष्मीदेवी की कुक्षि से पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ। उसका नाम वज्रजंघ रखा गया। स्वयंप्रभा देवी का जीव इसी पुष्कलावती विजय में स्थित पुण्डरीकिणी नगरी के राजा वज्रसेन की पुत्रीरूप से उत्पन्न हुई। इसका नाम श्रीमती रखा गया।

श्रीमती युवा हुई। एक समय वह अपने महल की छत पर बैठी थी। उसी समय उस ओर से कुछ देवविमान निकले। उन्हें देखकर उसे जातिस्मर का ज्ञान पैदा हो गया। उसे अपने पूर्वभव के पति ललितांगदेव का स्मरण हो आया। उसने मनमें दृढ संकल्प कर यह प्रण कर लिया कि जब तक मुझे अपने पूर्व भवका पति न मिलेगा तब तक मैं किसी से न बोलूंगी। अत: उसने मौन धारण कर लिया।

श्रीमती की पण्डिता नामकी सखी थी। वह बहुत चतुर थी। उसने इसका कारण जान लिया कि श्रीमति की सहायता से उसने दूसरे देवलोक ईशानकल्प का तथा ललितांगदेव के विमान का एक चित्र बनाया किन्तु उसमें त्रुटियाँ रहने दी। उस चित्रपट को राजपथ पर टांग दिया। संयोगवश उस समय कुमार वज्र जंघ उधर से निकला। राजपथ पर टंगे हुए उस चित्रपट को देखकर उसे भी जातिस्मरण ज्ञान हो गया उस सुन्दर चित्रपट में रही हुई कमी को दूर कर दी। इस बात का पता श्रीमती तथा उसके पिता वज्रसेन को लगा। इससे उसको प्रसन्नता हुई। वज्रसेन ने श्रीमति का विवाह वज्रजंघ के साथ कर दिया।

बहुतकाल तक सांसारिक भोग भोगने के बाद दोनोंको वैराग्य हो गया। "प्रातः काल पुत्र को राज्य देकर दीक्षा अंगीकार कर लेंगे" ऐसा विचार कर राजा और रानी सो गये।

उसी दिन राजपुत्र ने किसी शस्त्र अथवा विषप्रयोग द्वारा राजा को मारकर राज्य प्राप्त कर लेने का विचार किया। राजदम्पति तो सोए हुए जानकर राजपुत्र ने विष मिश्रित धूआं छोड दिया। दीक्षा लेने की उत्कृष्ट भावना और परिणामों की सरलता के कारण राजा वज्रजंघ और रानी श्रीमती के जीव उत्तर कुरुक्षेत्र में तीन पल्योपम की आयुवाले युगलिए हुए।

८वाँ भव—

युगलिये का आयुष्य समाप्त कर दोनों पति पत्नी सौधर्म देवलोक में देव हुए।

९वाँ भव—

जम्बूद्वीप के महाविदेह क्षेत्रमें क्षितिप्रतिष्ठित नामका रमणीय नगर था। उस नगर में सुविधिनामका एक वैद्य रहता था। देवलोक से चवकर वज्रजंघ का जीव सुविधिवैद्य के यहां पुत्र रूप से जन्मा। उसका नाम जीवानन्द रक्खा गया उसी समय के लगभग उस नगर में अन्य चार बालकों ने भी जन्म लिया। उनमें ईशानचन्द्र राजा की कनकावती रानी की कुक्षि से महीधर नामक पुत्र हुआ। दूसरा सुनासीर नामक मंत्री की लक्ष्मी नामक पत्नी से सुबुद्धि नामक पुत्र हुआ। तीसरा सागरदत्त सार्थवाह की अभयमती स्त्री से पूर्णभद्र नाँमक बालक हुआ। चौथा धन श्रेष्ठी की शीलवती स्त्री के उदर से गुणाकर नामक पुत्र हुआ। प्रथम सौधर्म देवलोक से चवकर यहाँ श्रीमती के जीव ने इसी क्षितिप्रतिष्ठित नगर के प्रसिद्ध श्रेष्ठी ईश्वर दत्त के घर जन्म लिया। उसका नाम केशव रखा गया।

राजा राज्य करते थे । उनके धारिणी नाम की रानी थी। बारहवें देवलोक का आयुष्य समाप्त करके जीवानन्द वैद्य का जीव धारिणी रानी के गर्भ में आया। उसी रात में रानी ने चौदह महास्वप्न देखे। महाराज वज्रसेन के पास जाकर रानी ने अपने देखे हुए स्वप्न सुनाये । उन्हें सुनकर महाराजा को बड़ी प्रसन्नता हुई । उन्होंने रानी को स्वप्नों का फल बतला कर कहा कि तुम चक्रवर्ती पुत्र को प्रसव करोगी। महाराजा द्वारा कहा गया अपने स्वप्नों का फल सुनकर वह बहुत हर्षित हुई । यतना पूर्वक वह अपने गर्भ का सुखपूर्वक पालन करने लगी। समय पूर्ण होनेपर रानी ने सर्वलक्षण सम्पन्न पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम वज्रनाभ रक्खा गया । जीवानन्द के शेष पाँच मित्र भी देवलोक का आयुष्य पूर्ण कर रानी धारिणी की कुक्षि सें उत्पन्न हुए वे वज्रनाभ के छोटे भाई हुए।

महाराज वज्रसेन तीर्थंकर थे । इसलिये लोकान्तिक देवोंने उनसे तीर्थ प्रवर्तानि की प्रार्थना की । अपने भोगावली कर्मों का क्षय हुआ जानकर महाराजा वज्रसेन ने अपने पुत्र वज्रनाभ को राज सिंहासन पर बैठा कर दीक्षा ले ली । घाती कर्मों का क्षयकर केवलज्ञान केवलदर्शन उपार्जन किया । और चार तीर्थ की स्थापना की ।

पिता के दीक्षित होने पर राज्य को वज्रनाभ ने संभालिया । उनकी आयुध शाला में चक्र रत्न की उत्पत्ति हुई । चक्र रत्न की सहायता से वज्रनाभ ने भारत के छहोंखण्ड पर विजय प्राप्त कर चक्रवर्ती पद प्राप्त किया । वह चौदह रत्न और नो निधि का स्वामी बना । वज्रनाभ के चक्रवर्ती बनने के बाद उनके छोटे भाई बाहु, सुबाहु पीठ और महापीठ मांडलिक राजा बने । सुयशा चक्रवर्ती का सारथी बना ।

कुछ समय के बाद चक्रवर्ती वज्रनाभ को तीर्थंकर वज्रसेन का उपदेश सुनकर वैराग्य उत्पन्न हो गया उन्होंने अपने पुत्र को राज्य सौपकर भगवान वज्रसेन समीप प्रव्रज्या ग्रहण की । साथ में बाहु, सुबाहु, पीठ महापीठ और सुयशा ने भी प्रव्रज्या ग्रहण की । ये छहों दीक्षा ग्रहण कर कठोर तप करने लगे ।

मुनि वज्रनाभ ने अरिहंत, सिद्ध, आचार्य स्थविर बहुश्रुत, तपस्वी और जिन प्रवचन का गुण गान सेवा, भक्ति आदि तीर्थंकर के पद के योग्य बीस स्थानों की वारंवार आराधना करके उत्कृष्ट भावों द्वारा तीर्थंकर नाम कर्म का उपार्जन किया।

इन छहों मुनिराजो ने निरतिचार पूर्वक चौदह लाख वर्ष तक चारित्र का पालन किया । वज्रनाभ मुनि की कुल ८४ लाख पूर्व की आयु थी । जिन में तीस लाख पूर्व कुमारावस्था में सोलह लाख पूर्व मांडलिक अवस्था में २४ लाखपूर्व चक्रवर्ती पद में एवं १४ लाख पूर्व श्रामण्य अवस्था में व्यतीत किये ।

अपनी अन्तिम अवस्था में इन छहों मुनि राजों ने पादोपगमन अनशन ग्रहण किया और समाधि पूर्वक देहको त्याग कर मुनिराज तैतीस सागरोपम की उत्कृष्ट आयुवाले सर्वार्थ सिद्ध विमान में देव बने।

भगवान ऋषभदेव का जन्मः—

गत चौवीसी के २४ वें तीर्थंकर सम्प्रति के निर्वाण के बाद अठारह कोटा कोटी सागरोपम के बीतने पर इस अवसर्पिणी काल के तीसरे आरे के चौरासी लाख पूर्व और नवासी पक्ष अर्थात् तीनवर्ष साढे आठ महिने बाकी रहे थे तब आषाढ महिने की कृष्ण चतुर्दशी के दिन उत्तराषाढा नक्षत्र में चन्द्र का योग होते ही वज्रनाभ का जीव तैतिस सागरोपम का आयु भोग कर सर्वार्थसिद्ध विमान से चवकर जिस तरह मानस सरोवर से गंगातट में हंस उतरता है उसी तरह नाभि कुलकर की स्त्री—मरुदेवी के उदर में अवतीर्ण हुए । उसी रात्रि में मरुदेवी ने चौदह महास्वप्न देखे—१ वृषभ, २, हाथी, ३ सिंह, ४ लक्ष्मी, ५ पुष्पमाला, ६ चन्द्रमण्डल, ७ सूर्यमण्डल, ८ ध्वजा ९ कलश, १० पद्मसरोवर, ११ क्षीर समुद्र, १२ देवविमान, १३ रत्न राशि और १४ निर्धूम अग्नि ।

इन स्वप्नों को देख कर मरुदेवी तत्काल जाग उठी । अपने देखे हुए महास्वप्नों का चिन्तन कर हर्षित होती हुई माता मरुदेवी अपने पति कुलकर श्री नाभिराजा के पास गई । और उन्हें अपने देखे हुए महा-स्वप्न सुनाए । स्वप्नों को सुन कर नाभि कुलकर को बहुत प्रसन्नता हुई । उन्होंने कहा--भद्रे ! इन महान् स्वप्नों के प्रभाव से तुम एक महान भाग्यवान पुत्र को जन्म दोगी । इस बात को सुनकर महारानी को अत्यन्त प्रसन्नता हुई । नौ मास और साढे सात रात्रि व्यतीत होने पर चैत्र कृष्णा अष्टमी की रात्रि में उत्तराषाढा नक्षत्र का चन्द्र के साथ योग होने पर मरुदेवी ने त्रिलोकपूज्य पुत्र को जन्म दिया । तीर्थंकर का जन्म हुआ जान कर छप्पन दिग्कुमारियाँ और शक्रेन्द्र माता मरुदेवी की सेवा में उपस्थित हुए । पुत्रको मेरुपर्वत पर लेजा कर चौसठ इन्द्रों ने भगवान का जन्म कल्याण किया ।

भगवान श्री ऋषभदेव के युवा होने पर उस समय की पद्धति के अनुसार सुमंगला नामक कन्या के साथ ऋषभ कुमार का सांसारिक सम्बन्ध हुआ । समय की विषमता के कारण एक युगल (पुत्र कन्या के जोडे) में से पुरुष की अल्पवय में ही मृत्यु हो गई । उस असहाय कुवारी कन्या का विवाह श्री ऋषभ कुमार के साथ कर दिया गया । यहीं से विवाह पद्धति प्रारम्भ हुई । दोनों पत्नियों के साथ ऋषभकुमार आनन्द पूर्वक समय बिताने लगे । देवी सुमंगला के उदर से क्रमशः एक पुत्र और एक पुत्री हुई । पुत्र का नाम भरत और पुत्री का नाम ब्राम्ही रखा । इसके अतिरिक्त ४९ युगल पुत्र उत्पन्न हुए । देवी सुनन्दा के उदर से एक बाहुबल नामक पुत्र और सुन्दरी नामक पुत्री उत्पन्न हुई ।

समय की विषमता के कारण अब कल्पवृक्ष फल रहित होने लग गये । लोग भूखे मरने लगे और हा हा कार मच गया । इस समय ऋषभदेव की आयु बीस लाख पूर्व की हो चुकी थी । इन्द्रादि देवों ने आकर ऋषभदेव का राज्याभिषेक किया । राजसिंहासन पर बैठते ही महाराजा ऋषभदेव ने भूख से पीडित लोगों का दुःख दूर करने का निश्चय किया उन्होंने लोकों को विद्या और कला सिखलाकर परा-वलम्बी से स्वावलम्बी बनाया और लोंकनीति का प्रादुर्भाव कर अकर्म भूमि को कर्म भूमि के रूप में परिणत कर दिया । इससे लोगों का दुःख दूर हो गया । वे सुख पूर्वक रहने लगे । भगवान ने त्रेसठ लाख पूर्व राज्यकाल में व्यतीत किये ।

एक दिन भगवान को विचार आया--मैंने लौकिक नीति का प्रचारतो किया किन्तु इसके साथ यदि धर्म नीति का प्रचार न किया गया तो लोग संसार में ही फसे रह कर दुर्गति के अधिकारी बनेंगे, इसलिए अब लोगों को धर्म से परिचित करना चाहिए । इसी समय ऋषभदेव के भोगावली कर्मो का क्षय हुआ जान कर लोकान्तिक देवों ने आकर उनसे धर्म तीर्थ प्रवर्तने की प्रार्थना की । अपने विचार एवं देवों की प्रार्थना के अनुसार भगवान ने वार्षिक दान देना आरंभ किया । प्रतिदिन एक प्रहर दिन चढने तक एक करोड आठ लाख स्वर्णमुद्रा दान देने लगे । इस प्रकार एक वर्ष तक दान देते रहे । इसके पश्चात् अपने ज्येष्ठ पुत्र भरत को विनीता नगरी का और निन्यानवें पुत्रों को अलग अलग नगरों का राज्य दे दिया । माता मरुदेवी की आज्ञा लेकर वे विनीता नगरी के बाहर सिद्धार्थ बाग में पधारे । अपने हाथों से ही अपने कोमल केशों का लुंचन किया किन्तु इन्द्र की प्रार्थना पर शिखा रहने दी । भगवान ने स्वयमेव दीक्षा धारण की । इन्द्रादि देवों ने बडे हर्ष से भगवान का दीक्षा कल्याण मनाया । दीक्षा लेते ही भगवान को मनः पर्यव ज्ञान उत्पन्न हो गया । भगवान के साथ चार हजार पुरुषों ने दीक्षा धारण की ।

दीक्षा लेकर भगवान वन की ओर पधारने लगे, तब मरुदेवी माता उन्हें वापिस महल चलने के लिये कहने लगी । जब भगवान वापिस न मुडे तब वह बडी चिन्ता में पड गई । अन्त में इन्द्रने माता मरुदेवी को समझाबुझा कर अपने घर भेजी और भगवान वन की ओर विहार कर गये ।

इस अवसर्पिणी काल में भगवान सर्वप्रथम मुनि थे। इससे पहले किसी ने भी संयम नहीं लिया था। इस कारण सभी जनता मुनियों के आचार विचार, दान आदि की विधि से बिलकुल अनभिज्ञ थी। जब भगवान भिक्षा के लिए जाते तो लोग हर्षित होकर वस्त्र, आभूषण, हाथी, घोड़े स्त्री आदि लेने के लिए आमन्त्रित करते किन्तु शुद्ध मर्यादा युक्त और एषनीक आहार पानी कहीं से भी नहीं मिलता। भूख और प्यास से व्याकुल हो कर भगवान के साथ दीक्षा लेने वाले चार हजार मुनि वर तो अपनी इच्छानुसार प्रवृत्ति करने लग गये।

एक वर्ष बीत गया किन्तु भगवान को कहीं भी शुद्ध आहारपानी नहीं मिला। विचरते विचरते भगवान हस्तिनापुर पधारे। वहां के राजा सोमप्रभ के पुत्र श्रेयांसकुमार के हाथों से इक्षुरस द्वारा भगवान का पारणा हुआ। देवों ने पांच दिव्य प्रकट करके दान का महात्म्य बताया। भगवान का पारणा हुआ जानकर सभी लोगों को बड़ा हर्ष हुआ। लोग तभी से मुनी दान की विधि समझने लगे। वह दिन अक्षय तृतीया के नामसे प्रसिद्ध हुआ।

छद्मस्थ अवस्था में विचरते हुए भगवान को एक हजारवर्ष व्यतीत हो गये। एक समय वे पुरिमताल नगर के शकटमुख उद्यान में पधारे। फाल्गुन कृष्णा एकादशी के दिन भगवान तेले का तप करके वट वृक्ष के नीचे कायोत्सर्ग में स्थित हुए। उत्तरोत्तर परिणामों की शुद्धता के कारण चार घाती कर्मों का क्षय करके भगवान ने केवलज्ञान केवलदर्शन प्राप्त किया। देवों ने केवलज्ञान महोत्सव करके समवशरण की रचना की। देव, देवी, मनुष्य स्त्री आदि बारह प्रकार की परिषद् प्रभु का दिव्य उपदेश सुनने के लिए एकत्रित हुई।

दीक्षा लेकर जब से भगवान विनीता नगरी से विहार कर गये थे तभी से माता मरुदेवी अपने पुत्र के कुशल समाचार प्राप्त न होने के कारण बहुत चिन्तातुर होरही थी। इसी समय भरत महाराज उनके चरण वन्दन के लिए गये। वह उनसे भगवान के विषय में पूछ ही रही थी कि इतने में एक पुरुष ने आकर भरत महाराज को "भगवान को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ है" यह बधाई दी। उसी समय दूसरे ने आयुधशाला में चक्ररत्न उत्पन्न होने की और तीसरे ने पुत्रजन्म की बधाई दी। सब से पहले केवलज्ञान महोत्सव मनाने का निश्चय करके भरत महाराज भगवान को वन्दन करने के लिए रवाना हुए, हाथी पर सवार हो कर मरुदेवी माता भी साथ पधारी। जब समवशरण के नजदीक पहुँचने पर देवों का आगमन केवलज्ञान के साथ प्रकट होनेवाले अष्ट महाप्रातिहार्यादि विभूति को देख कर माता मरुदेवी को बहुत हर्ष प्राप्त हुआ। वह मन ही मन विचार करने लगी कि मैं तो समझती थी कि मेरा ऋषभकुमार जंगल में गया है, इससे उसको तकलीफ होगी परन्तु मैं देख रही हू। कि ऋषभ कुमार तो बडे आनंद में है और उसके पास तो बहुत ठाट लगा हुआ है मैं वृथा हि मोह कर रही हू। इस प्रकार अध्यवसायों की शुद्धि से माता मरुदेवी ने घाती कर्मों का क्षय कर केवल ज्ञान केवल दर्शन प्राप्त किया उसी समय आयुकर्म भी क्षीण हो चुका था अतः हाथी के हौदे पर बैठे बैठे ही उन्होने सर्व कर्म क्षय करके मोक्ष प्राप्त कर लिया!

भरत महाराज भगवान को वन्दना कर समवशरण में बैठ गये। भगवान ने उपदेश दिया। भगवान का उपदेश श्रवण कर भरत महाराज के पांच सौ पुत्रों और सातसौ पौत्रों के साथ ऋषभ सेन ने भगवान के पास दीक्षा ग्रहण की। भरत महाराजा की बहिन ब्राह्मी ने भी अनेक स्त्रियों के साथ दीक्षा ग्रहण की अनेक श्रोताओं ने श्रावक व्रत ग्रहण किये। चतुर्विध संघ की स्थापना हुई। ऋषभसेन आदि ८४ पुरुषों ने गणधर पद प्राप्त कर द्वादशाङ्गी की दिव्य रचना की।

भगवान केवलज्ञान के बाद एक हजार वर्ष कम एक लाख पूर्व तक विचरते रहें। भगवान श्री ऋषभदेव के ऋषभसेन आदि ८४ गणधर, ८४००० मुनि, ३००००० साध्वी, ३० ५००० श्रावक, ५५४००० श्राविकाएं, ४७० चौदह पूर्व धर, ९००० अवधिज्ञानी, २०००० केवलज्ञानी, ६०० वैक्रिय लब्धि धारी, १२६५० मनः पर्यवज्ञानी और १२६५० वादी थे।

अपना निर्वाण काल समीप जानकर भगवान दस हजार मुनियों के साथ अष्टापद पर्वत पर पधारे। वहां छ दिन का अनशन ग्रहण कर माघ कृष्णा त्रयोदशी के दिन अभिजित नक्षत्र में मोक्ष प्राप्त किया। भगवान के निर्वाण के समय १०७ पुरुषों ने भी सिद्धि प्राप्त की। दस हजार मुनियों ने भी मोक्ष प्राप्त किया। भगवान का एवं अन्य मुनियों का निर्वाण महोत्सव इन्द्र, देव देवियों ने किया।

भगवान श्रीअजितनाथ का पूर्वभव

जम्बूद्वीप के महाविदेह क्षेत्र में सीता नदी के दक्षिण तट पर वत्सनामक देश में सुशीमा नाम की नगरी थी। वहां विमलवाहन नामका राजा राज्य करता था। वह बडा न्यायी एवं धर्म प्रिय था।

एक समय संसार की विचित्रता पर विचार करके उसे वैराग्य उत्पन्न हो गया। उसने अरिंदम नामक आचार्य के पास दीक्षा ग्रहण की। निरतिचार संयम का पालन करते हुए उसने वीस स्थान की वारंवार आराधना की और तीर्थंकर नाम कर्म का उपार्जन किया। एकावली, कनकावली रत्नावलि आदि अनेक प्रकार की तपस्या की। अन्त में संथारा ग्रहण कर देह का त्याग किया। वह मर कर विजय नामक प्रथम अनुत्तर विमान में तेतीस सागरोपम की उत्कृष्ट आयु वाला देव हुआ।

वहां देवताओं के शरीर एक हाथ के होते हैं। उनके शरीर चन्द्र किरणों की तरह उज्ज्वल होते हैं। वे सदैव अनुपम सौख्य का अनुभव करते रहते हैं। वे अपने अवधिज्ञान से समस्त लोकनालिका का अवलोकन करते हैं। वे तेतीस पक्ष वीतने पर एक बार श्वास लेते हैं। तेतीस हजार वर्ष में एक हि बार उन्हें भोजन की इच्छा होती है। विमलवाहन मुनि का जीव भी इसी स्वर्गीय सुख का अनुभव करने लगा। जब आयु के छह महिने शेष रहें तब अन्य देवताओं की तरह उन्हें देवलोक से चवने का किंचित् भी दुःख नहीं हुआ प्रत्युत भावी तीर्थंकर होने के नाते उनका तेज और भी बढा। वे देवलोक में भी धर्म और धर्म के स्वरूप के विषय में चिन्तन करते ही रहते थे। ऐश्वर्य सम्पन्न देव भव का आयु पूर्ण कर वे अनुत्तर विमान से च्युत हुए।

भगवान श्रीअजितनाथ का जन्म—

भरत क्षेत्र में विनीता नामकी नगरी थी। इस नगरी में इक्ष्वाकु वंश तिलक जितशत्रु नामका राजा राज्य करता था उनके छोटे भाई का नाम सुमित्र विजय था यह युवराज था। जितशत्रु राजा की रानी का नाम विजयादेवी था एवं सुमित्रविजय की रानी का नाम वैजयन्ती था। दोनों रानियां अपने रूप और गुणों में अनुपम थीं।

वैशाख शुक्ला १३ को विमलवाहनमुनिराज का जीव महारानी विजयादेवी की कुक्षि में विजयनामके अनुत्तर विमान से आकर उत्पन्न हुआ। उस रात्रि के अन्तिम प्रहर में महारानी ने चौदह महास्वप्न देखे उसी रात को सुमित्र विजय की महारानी ने भी चौदह महास्वप्न देखे किन्तु श्रीमती विजयादेवी के स्वप्नों की प्रभा की अपेक्षा इनके स्वप्नों की प्रभा कुछ मंद थी।

गर्भकाल के पूर्ण होने पर महारानी विजयादेवी ने माघ शुक्ला अष्टमी की रात्रि में लोकोत्तम पुत्ररत्न को जन्म दिया। देव देवियो एवं राजा ने पुत्र जन्मोत्सव किया। भगवान के जन्म के थोडे काल के बाद ही युवराज्ञी वैजयन्ती ने भी एक दिव्य बालक को जन्म दिया। शुभ मुहूर्त में पुत्र का नाम करण किया

इस अवसर्पिणी काल में भगवान सर्वप्रथम मुनि थे। इससे पहले किसी ने भी संयम नहीं लिया था। इस कारण सभी जनता मुनियों के आचार विचार, दान आदि की विधि से बिल्कुल अनभिज्ञ थी। जब भगवान भिक्षा के लिए जाते तो लोग हर्षित होकर वस्त्र, आभूषण, हाथी, घोड़े स्त्री आदि लेने के लिए आमन्त्रित करते किन्तु शुद्ध मर्यादा युक्त और एषनीक आहार पानी कहीं से भी नहीं मिलता। भूख और प्यास से व्याकुल हो कर भगवान के साथ दीक्षा लेने वाले चार हजार मुनि वर तो अपनी इच्छानुसार प्रवृत्ति करने लग गये।

एक वर्ष वीत गया किन्तु भगवान को कहीं भी शुद्ध आहारपानी नहीं मिला। विचरते विचरते भगवान हस्तिनापुर पधारे। वहां के राजा सोमप्रभ के पुत्र श्रेयांसकुमार के हाथों से इक्षुरस द्वारा भगवान का पारणा हुआ। देवों ने पांच दिव्य प्रकट करके दान का महात्म्य बताया। भगवान का पारणा हुआ जानकर सभी लोगों को बडा हर्ष हुआ। लोग तभी से मुनी दान की विधि समझने लगे। वह दिन अक्षय तृतीया के नामसे प्रसिद्ध हुआ।

छद्मस्थ अवस्था में विचरते हुए भगवान को एक हजारवर्ष व्यतीत हो गये। एक समय वे पुरिमताल नगर के शकटमुख उद्यान में पधारे। फाल्गुन कृष्णा एकादशी के दिन भगवान तेले का तप करके बट वृक्ष के नीचे कायोत्सर्ग में स्थित हुए। उत्तरोत्तर परिणामों की शुद्धता के कारण चार घाती कर्मों का क्षय करके भगवान ने केवलज्ञान केवलदर्शन प्राप्त किया। देवों ने केवलज्ञान महोत्सव करके समवशरण की रचना की। देव, देवी, मनुष्य स्त्री आदि बाहर प्रकार की परिषद् प्रभु का दिव्य उपदेश सुनने के लिए एकत्रित हुई।

दीक्षा लेकर जब से भगवान विनीता नगरी से विहार कर गये थे तभी से माता मरुदेवी अपने पुत्र के कुशल समाचार प्राप्त न होने के कारण बहुत चिन्तातुर होरही थी। इसी समय भरत महाराज उनके चरण वन्दन के लिए गये। वह उनसे भगवान के विषय में पूछ ही रही थी कि इतने में एक पुरुष ने आकर भरत महाराज को "भगवान को केवलज्ञान उत्पन्न हुआ है" यह बधाई दी। उसी समय दूसरे ने आयुधशाला में चक्ररत्न उत्पन्न होने की और तीसरे ने पुत्रजन्म की बधाई दी। सब से पहले केवलज्ञान महोत्सव मनाने का निश्चय करके भरत महाराज भगवान को वन्दन करने के लिए रवाना हुए, हाथी पर सवार हो कर मरुदेवी माता भी साथ पधारी। जब समवशरण के नजदीक पहुँचने पर देवों का आगमन केवलज्ञान के साथ प्रकट होनेवाले अष्ट महाप्रातिहार्यादि विभूति को देख कर माता मरुदेवी को बहुत हर्ष प्राप्त हुआ। वह मन ही मन विचार करने लगी कि मैं तो समझती थी कि मेरा ऋषभकुमार जंगल में गया है, इससे उसको तकलीफ होगी परन्तु में देख रही हू। कि ऋषभ कुमार तो बडे आनंद में है और उसके पास तो बहुत ठाट लगा हुआ है मैं वृथा हि मोह कर रही हू। इस प्रकार अध्यवसायों की शुद्धि से माता मरुदेवी ने घाती कर्मों का क्षय कर केवल ज्ञान केवल दर्शन प्राप्त किया उसी समय आयुकर्म भी क्षीण हो चुका था अतः हाथी के हौदे पर बैठे बैठे ही उन्होने सर्व कर्म क्षय करके मोक्ष प्राप्त कर लिया!

भरत महाराज भगवान को वन्दना कर समवशरण में बैठ गये। भगवान ने उपदेश दिया। भगवान का उपदेश श्रवण कर भरत महाराज के पांच सौ पुत्रों और सातसौ पौत्रों के साथ ऋषभ सेन ने भगवान के पास दीक्षा ग्रहण की। भरत महाराजा की बहिन ब्राह्मी ने भी अनेक स्त्रियों के साथ दीक्षा ग्रहण की अनेक श्रोताओं ने श्रावक व्रत ग्रहण किये। चतुर्विध संघ की स्थापना हुई। ऋषभसेन आदि ८४ पुरुषों ने गणधर पद प्राप्त कर द्वादशाङ्गी की दिव्य रचना की।

भगवान केवलज्ञान के बाद एक हजार वर्ष कम एक लाख पूर्व तक विचरते रहें। भगवान श्री ऋषभदेव के ऋषभसेन आदि ८४ गणधर, ८४००० मुनि, ३००००० साध्वी, ३० ५००० श्रावक, ५५४००० श्राविकाएं, ४७० चौदह पूर्व धर, ९००० अवधिज्ञानी, २०००० केवलज्ञानी, ६०० वैक्रिय लब्धि धारी, १२६५० मनः पर्यवज्ञानी और १२६५० वादी थे।

अपना निर्वाण काल समीप जानकर भगवान दस हजार मुनियों के साथ अष्टापद पर्वत पर पधारे। वहां छ दिन का अनशन ग्रहण कर माघ कृष्णा त्रयोदशी के दिन अभिजित नक्षत्र में मोक्ष प्राप्त किया। भगवान के निर्वाण के समय १०७ पुरुषों ने भी सिद्धि प्राप्त की। दस हजार मुनियों ने भी मोक्ष प्राप्त किया। भगवान का एवं अन्य मुनियों का निर्वाण महोत्सव इन्द्र, देव देवियों ने किया।

भगवान श्रीअजितनाथ का पूर्वभव

जम्बूद्वीप के महाविदेह क्षेत्र में सीता नदी के दक्षिण तट पर वत्सनामक देश में सुशीमा नाम की नगरी थी। वहां विमलवाहन नामका राजा राज्य करता था। वह बडा न्यायी एवं धर्म प्रिय था।

एक समय संसार की विचित्रता पर विचार करके उसे वैराग्य उत्पन्न हो गया। उसने अरिंदम नामक आचार्य के पास दीक्षा ग्रहण की। निरतिचार संयम का पालन करते हुए उसने बीस स्थान की बारंबार आराधना की और तीर्थंकर नाम कर्म का उपार्जन किया। एकावली, कनकावली रत्नावलि आदि अनेक प्रकार की तपस्या की। अन्त में संथारा ग्रहण कर देह का त्याग किया। वह मर कर विजय नामक प्रथम अनुत्तर विमान में तेतीस सागरोपम की उत्कृष्ट आयु वाला देव हुआ।

वहां देवताओं के शरीर एक हाथ के होते हैं। उनके शरीर चन्द्र किरणों की तरह उज्ज्वल होते हैं। वे सदैव अनुपम सौख्य का अनुभव करते रहते हैं। वे अपने अवधिज्ञान से समस्त लोकनालिका का अवलोकन करते हैं। वे तेतीस पक्ष बीतने पर एक बार श्वास लेते हैं। तेतीस हजार वर्ष में एक हि बार उन्हें भोजन की इच्छा होती है। विमलवाहन मुनि का जीव भी इसी स्वर्गीय सुख का अनुभव करने लगा। जब आयु के छह महिने शेष रहें तब अन्य देवताओं की तरह उन्हें देवलोक से चवने का किंचित् भी दुःख नहीं हुआ प्रत्युत भावी तीर्थंकर होंने के नाते उनका तेज और भी बढा। वे देवलोक में भी धर्म और धर्म के स्वरूप के विषय में चिन्तन करते ही रहते थे। ऐश्वर्य सम्पन्न देव भव का आयु पूर्ण कर वे अनुत्तर विमान से च्युत हुए।

भगवान श्रीअजितनाथ का जन्म—

भरत क्षेत्र में विनीता नामकी नगरी थी। इस नगरी में इक्ष्वाकु वंश तिलक जितशत्रु नामका राजा राज्य करता था उनके छोटे भाई का नाम सुमित्र विजय था यह युवराज था। जितशत्रु राजा की रानी का नाम विजयादेवी था एवं सुमित्रविजय को रानी का नाम वैजयन्ती था। दोनों रानियां अपने रूप और गुणों में अनुपम थी।

वैशाख शुक्ला १३ को विमलवाहनमुनिराज का जीव महारानी विजयादेवी की कुक्षि में विजयनामके अनुत्तर विमान से आकर उत्पन्न हुआ। उस रात्रि के अन्तिम प्रहर में महारानी ने चौदह महास्वप्न देखे उसी रात को सुमित्र विजय की महारानी ने भी चौदह महास्वप्न देखे किन्तु श्रीमती विजयादेवी के स्वप्नों की प्रभा की अपेक्षा इनके स्वप्नों की प्रभा कुछ मंद थी।

गर्भकाल के पूर्ण होने पर महारानी विजयादेवी ने माघ शुक्ला अष्टमी की रात्रि में लोकोत्तम पुत्ररत्न को जन्म दिया। देव देवियों एवं राजा ने पुत्र जन्मोत्सव किया। भगवान के जन्म के थोडे काल के बाद ही युवराज्ञी वैजयन्ती ने भी एक दिव्य बालक को जन्म दिया। शुभ मुहूर्त में पुत्र का नाम करण किया

गया । महारानी विजयादेवी के गर्भ के दिनों में महाराजा के साथ पासे के खेल में सदा महारानी की विजय होती थी इस जीत को गर्भ का प्रभाव मानकर बालक का नाम अजित कुमार एवं युवराज्ञी के पुत्र का नाम सगर रखा गया ।

युवा काल में दोनों राजकुमारों का विवाह हुआ । अवसर पाकर महाराजा जितशत्रु ने अजितकुमार का राज्याभिषेक किया और सगर को युवराज पद पर प्रतिष्ठित किया महाराजा जितशत्रु ने भगवान श्री ऋषभदेव की परम्परा के स्थविरों के पास प्रव्रज्या ग्रहण की और विशुद्ध चारित्र की आराधना करके केंवलज्ञान और केवल दर्शन प्राप्त किया और वे मोक्ष में गये ।

महाराजा अजितकुमार ने तिरपन्न लाख पूर्व तक राज्य का संचालन करने के बाद प्रव्रज्या लेने का निश्चय किया । भगवान के दीक्षा समय को निकट जान लोकान्तिक देवों ने भगवान से निवेदन किया—

हे भगवन् ! बुझो ! हे लोकनाथ ! जीवों के हित सुख और मुक्ति दायक धर्म तीर्थ का प्रवर्तन करो

भगवान श्री अजितनाथ ने एक वर्ष तक नित्य प्रातः काल एक करोड आठ लाख सुवर्णमुद्रा के हिसाब से तीन अरब अठासी करोड अस्सीलाख स्वर्णमुद्राओं का दान दिया वर्षीदान देने के पश्चात् माघ शुक्ला नवमी के दिन 'सुप्रभा' नामकी शिविका में आरूढ हो कर नगर के बाहर सहस्राम्रनामक उद्यान में बडे उत्सव के साथ पधारे । दिवस के पिछले प्रहर में जब चन्द्रमा रोहिणी नक्षत्र में आया तब भगवान ने सम्पूर्ण वस्त्रालंकार उतार दिये और इन्द्र द्वारा दिये गये देवदूष्य वस्त्र को धारण कर पंचमुष्ठि लोचन किया और सिद्ध भगवान को नमस्कार करके सामायिक चारित्र का ग्रहण किया । उस दिन भगवान के छठ का तप था । सामायिक चारित्र स्वीकार करते समय भगवान अप्रमत्तगुणस्थान में स्थित थे । भावों की उच्चतम अवस्था के कारण उसी समय भगवान को मनः पर्यवज्ञान उत्पन्न हुआ । भगवान के साथ एक सहस्र राजाओं ने भी दीक्षा धारण की दीक्षा के पश्चात् भगवान ने अन्यत्र विहार कर दिया ।

दूसरे दिन श्रीअजितनाथ भगवान ने वेले का पारणा ब्रह्मदत्त राजा के घर अयोध्या में परमान्न से किया । बारह वर्ष छद्मस्थकाल में विचरने के बाद अयोध्या नगर के बाहर सहसाम्र नाम उद्यान में पधारे । उस दिन भगवान को छठ का तप था । पौषशुक्ला एकादशी के दिन शुक्लध्यान की परमोच्च अवस्था में आपने केवलज्ञान और केवल दर्शन प्राप्त किया । केवलज्ञान के बाद देवोंने समवशरण की रचना की महाराज सगर भी समवशरण में पहुँचे । बारह प्रकार की भव्य परीषद् में भगवान ने देशना दी । भगवान की देशना सुन कर हजारों नर नारियों ने त्याग मार्ग स्वीकार किया जिनमें गणधर पद के अधिकारी सिंहसेन आदि ९५ महापुरुषों ने दीक्षा ग्रहण की । और गणधर पद प्राप्त किया । भगवान ने चार तीर्थ की स्थापना की । सहसाम्र उद्यान से विहार कर भगवान 'शालिग्राम' पधारे । वहां शुद्धभट और उसकी पत्नी सुलक्षणा ने भगवान के पास प्रव्रज्या ग्रहण की ।

भगवान श्रीअजितनाथ के ९५ गणधर थे । एक लाख साधु, तीनलाख तीस हजार साध्वियाँ सत्ताईस सौ बीस चौदह पूर्वधारी बारह हजार पांच सौ पांच मनः पर्यवज्ञानी, बाईससौ केवली, बारह हजार बारसौ वैक्रियलब्धिधारी । दो लाख अठ्यानु हजार श्रावक एवं पांच लाख पैंतालीस हजार श्राविकाएँ थी ।

दीक्षा के बाद एक पूर्वांग कम लाख पूर्व बीतने पर अपना निर्वाणकाल समीप जानकर भगवान समेत शिखर पर जंगलमें पधारे वहाँ एक हजार मुनियों के साथ एक मास के अनशन के अन्तमें चैत्र शुक्ला पंचमी के दिन मृगशिर नक्षत्र में भगवान ने निर्वाण प्राप्त किया । इन्द्रादि ने निर्वाण उत्सव मनाया । भगवान की उंचाई ४५० धनुष थी भगवानने अठारहलाख पूर्व कुमार अवस्था में त्रेपनलाखपूर्व चोरासी लाख वर्ष राज्यत्वकाल में बारहवर्ष छद्मस्थ अवस्था में चोरासीलाख बारहवर्ष कम एक लाख पूर्व केवल

ज्ञान अवस्था में बिताये। इस तरह बहत्तर लाख पूर्व की आयु समाप्त कर भगवान श्रीअजितनाथ ऋषभदेव के निर्वाण के पचास लाख करोड सागरोपम वर्ष के बाद मोक्ष में गये

३—भगवान श्री संभवनाथ का पूर्व भव—

धातकी खण्ड द्वीप के ऐरावत क्षेत्र में 'क्षेमपुरी' नाम की नगरी थी। वहां विपुल वाहन नाम का राजा राज्य करता था। वह प्रजा का पुत्र की तरह पालन करता था। एक बार राज्य में दुष्काल पड गया। वर्षा के अभाव में वर्षा काल भी दूसरा ग्रीष्मकाल जैसा बन गया था। नैऋत्य कोण के भयंकर वायु से रहे सहे पानी का शोषण और वृक्षों का विच्छेद होने लगा। भूखे मनुष्यों के भटकते हुए दुर्बल कंगालों से नगर के प्रमुख बाजार और मार्ग भी स्मशान जैसे लग रहे थे। ऐसे भयंकर दुष्काल को देखकर राजा बहुत चिन्तित हुआ। उसे प्रजा को दुष्काल की भयंकर ज्वाला से बचाने का कोई साधन दिखाई नहीं दिया। उसने सोचा यदि मेरे पास जितना धान्य है वह सभी बाट दूं। तो भी प्रजा की एक समय की भूख भी नहीं मिटा सकता, इसलिए इस सामग्री का सदुपयोग कैसे हो ? उसने विचार करके निश्चय किया कि प्रजा में भी साधर्मी अधिक गुणवान होते हैं और साधर्मी से साधु विशेष रक्षणीय होते हैं। मेरी सामग्री से संघ रक्षा हो सकती है। उसने अपने रसोइये को बुलाकर कहा—"तुम मेरे लिए जो भोजन बनाते हो वह साधु साध्वियों को दिया जावे और और अन्य आहार संघ के सदस्यों को दिया जावे। इसमें से बचा हुआ आहार मैं काम में लूगा।

राजा इस प्रकार चतुर्विध संघ की सेवा करने लगा वह स्वयं उल्हास पूर्वक सेवा करता था। जब तक दुष्काल रहा तब तक इसी प्रकार सेवा करता रहा। संघ की वैयावृत्य करते हुए भावों के उल्लास में राजा तीर्थंकर नामकर्म का उपार्जन किया। कालान्तर में राजा ने स्वयंप्रभ नाम के आचार्य के पास दीक्षा ग्रहण की और दीर्घकाल तक कठोर तपस्या कर अनशन पूर्वक देह का त्याग किया और मरकर नौवे स्वर्ग में उत्पन्न हुआ।

३—भगवान श्रीसंभवनाथ

श्रावस्ती नगरी में जितारी नाम के राजा राज्य करते थे। उनकी रानी का नाम सेनादेवी था। सप्तम ग्रैवेयक से चवकर विपुलवाहन के, जीव फाल्गुन शुक्ला अष्टमी के दिन महारानी के गर्भ में आया। महास्वप्न और उत्सवादि तीर्थंकर के गर्भ एवं जन्मकल्याण के अनुसार शरीर सुंदर अश्वचिन्हसे युक्त प्रभु का जन्म मार्गशीर्ष शुक्ला चतुर्दशी के दिन हुआ। भगवान का नाम संभवकुमार रखा। चारसौ धनुष उचाई वाले भगवान का विवाह अनेक श्रेष्ठ राज कन्याओं के साथ हुआ। पंद्रहलाख पूर्व तक कुमार अवस्था में रहे। पिता ने संभवकुमार को राज्याधिकार देकर प्रव्रज्या अंगीकार करली। प्रभु ने चार पूर्वांग और चवालीस लाख पूर्वकी उम्र में वर्षीदान देकर और सिद्धार्था नामक शिबिका में आरूढ होकर नगर के बाहर सहस्त्राम्र उद्यान में दिवस के पिछले प्रहर में मृगसिर नक्षत्र के योग में प्रव्रज्या स्वीकार करली। उस दिन भगवान को छठ की तपस्या थी। दूसरे दिन श्रावस्ती नगरी में सुरेन्द्रदत्त के घर परमान्न से पारणा किया। चौदह वर्ष तक छद्मस्थ रहने के बाद कार्तिक कृष्णा पंचमी के दिन सहस्राम्र उद्यान में बेले के तपयुक्त प्रभु के घातिकर्म नष्ट हुए और केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। केवलज्ञान के बाद भगवान ने चतुर्विध संघ की स्थापना की। चारू आदि १०२ व्यक्तियों ने भगवान के पास प्रव्रज्या लेकर गणधर पद प्राप्त किया। भगवान को केवल ज्ञान होने के बाद चार पूर्वांग और चउदह वर्ष कम एक लाख पूर्व तक तीर्थंकर पद पर रह करके एक हजार मुनियों के साथ सम्मेत शिखर पर्वत पर चैत्रशुक्ला पंचमी के दिन मोक्ष प्राप्त किया। भगवान श्री संभव नाथ ने कुल ६० लाख पूर्वकी आयु पूर्ण कर श्रीअजितनाथ भगवान के निर्वाण के तीस लाख कोटी सागर के बाद निर्वाण पद प्राप्त किया।

भगवान श्री संभवनाथ के दो लाख साधु, तीन लाख छत्तीस हजार साध्वियां, चारु आदि १०२ गणधर, (इक्कीससौ पचास चौदह पूर्वधर, ९६०० सौ अवधिज्ञानी १२५० मनः पर्यवज्ञानी, १५००० केवलज्ञानी, १९८०० वैक्रियलब्धिधारी, १२०० वादी, २९३००० श्रावक एवं ६३६००० श्राविकाएँ हुईं।

४—भगवान श्रीअभिनन्दन

अयोध्या नामकी नगरी में इक्ष्वाकु वंश तिलक संवर नाम के राजा राज्य करते थे। उनकी रानी का नाम 'सिद्धार्था' था। वह कुल मर्यादा का पालन करनेवाली श्रेष्ठ नारी थी।

महाबल मुनिका जीव विजय विमान से चवकर वैशाख शुक्ला चतुर्थी के दिन अभिजित नक्षत्र में महारानी 'सिद्धार्था' की कुक्षि में उत्पन्न हुआ। महारानी ने चौदह स्वप्न देखे। गर्भकाल पूर्ण होने पर माघ शुक्ला द्वितीया के दिन जब चन्द्र अभिजित नक्षत्र में तब महारानी ने पुत्ररत्न को जन्म दिया। बालक का वर्ण स्वर्ण जैसा था और वानर के चिह्न से चिह्नित था। बालक के जन्मते ही समस्त दिशाएँ प्रकाश से जगमगा उठीं। इन्द्रों के आसन चलायमान हुए। इन्द्र, देव देवियों ने मेरुपर्वत पर भगवान का जन्मोत्सव किया। जब भगवान गर्भ में थे। तब सर्वत्र आनन्द छा गया था इसलिए माता पिता ने बालक का नाम 'अभिनन्दन' रखा।

अभिनन्दन कुमार युवा हुए। उनका अनेक श्रेष्ठ राजकुमारियों के साथ विवाह हुआ। साढे बारह लाख पूर्व तक कुमार अवस्था में रहने के बाद भगवान का राज्याभिषेक हुआ। आठ अंग सहित साढे छत्तीसलाख पूर्व तक राज्य धर्म का पालन किया।

जब भगवान ने दीक्षा लेने का विचार किया तब लोकान्तिक देवोंने आकर भगवान को दीक्षा के लिए प्रेरणा दी। भगवान ने नियमानुसार वार्षिक दान दिया। माघ शुक्ला १२ दिन अभिजित नक्षत्र में इन्द्रों द्वारा तैयार की गई अर्थसिद्धा नामकी शिविका पर आरूढ होकर सहस्राम्र उद्यान में पधारे। वहां एक हजार राजाओं के साथ भगवान ने प्रव्रज्या ग्रहण की। परिणामों की उच्चता के कारण भगवान को उसी क्षण मनः पर्यवज्ञान उत्पन्न हो गया। दीक्षा के समय भगवान ने छठ की तपस्या की थी। दूसरे दिन अयोध्या नगरी के राजा इन्द्रदत्त के घर परमान्न (खीर) से पारणा किया। उनके प्रभाव से वसुधारादि पांच दिव्य प्रकट हुए।

अठारह वर्ष तक छद्मस्थ अवस्था में विचर कर भगवान अयोध्या नगरी के सहस्राम्र उद्यान में पधारे। वहां शष्ठ तप कर शालवृक्ष के नीचे ध्यान करने लगे। शुक्लध्यान की परमोच्चस्थिति में भगवान ने घाति कर्मों का क्षयकर केवलज्ञान और केवल दर्शन प्राप्त किया। देवोने समवशरण रचा। भगवान ने देशना दी। भगवान की देशना सुनकर वज्रनाथ आदि एकसौ सोलह व्यक्तियों ने प्रव्रज्या लेकर गणधर पद प्राप्त किया। भगवान की देशना के बाद वज्रनाथ गणधर ने देशना दी।

भगवान के शासक रक्षक देव यक्षेश्वर एवं शासन देवी कालिका थी ये व्यंतरदेव होते हैं। भगवान के ३००००० साधु, ६३०००० साध्वियाँ, ९८०० अवधिज्ञानी १५०० चौदह पूर्वधर, ११६५० मनः पर्यवज्ञानी, ११०००, वाद लब्धिधारी, २८८००० श्रावक, एवं ५२७००० श्राविकाएं हुई! केवलज्ञान प्राप्त करने के बाद आठ पूर्वांग अठारह वर्ष न्यून लाख पूर्व व्यतीत होने पर एवं अपना निर्वाण काल समीप जानकर भगवान सम्मेत शिखर पर पधारे। वहां एक हजार मुनियों के साथ अनशन ग्रहण किया। वैशाख शुक्ला अष्टमी के दिन सम्पूर्ण कर्मों का अन्तकर भगवान हजार मुनियों के साथ निर्वाण को प्राप्त हुए। इन्द्रादि देवों ने भगवान के देह का संस्कार कर निर्वाण महोत्सव मनाया। श्री संभवनाथ भगवान के बाद दस लाख करोड सागरोपम व्यतीत होने पर भगवान श्री अभिनन्दन मोक्ष पधारे।

५–भगवान श्री सुमतिनाथ :—

अयोध्या नाम की नगरी में मेघ नामके राजा राज्य करते थे। उनकी रानी का नाम मंगलादेवी था। पुरुषसिंह का जीव वैजयन्त विमान से चवकर श्रावण शुक्ला द्वितीया के दिन माघ नक्षत्र में महारानी मंगला के उदर में उत्पन्न हुए। महारानी ने तीर्थंकर को सूचित करने वाले चौदह महास्वप्न देखे। रानी गर्भवती हुई। गर्भकाल के पूर्ण होने पर वैशाख शुक्ला अष्टमी के दिन माघ नक्षत्र के योग में क्रौंच पक्षी के चिन्ह से चिह्नित सुवर्ण कान्ति वाले ईक्ष्वाकु कुल के दीपक समान पुत्र को जन्म दिया। भगवान के जन्म से तीनो लोक प्रकाशित हो उठे। दिग्कुमारिकाएँ आई। इन्द्रादि देवों ने मेरुपर्वत पर लेजाकर जन्माभिषेक किया। जब भगवान गर्भ में थे तब कुल की शोभा बढाने वाली उत्तम बुद्धि उत्पन्न हुई थी। अतः माता पिता ने बालक का नाम 'सुमति' रखा। युवावस्था में भगवान का विवाह किया गया। उस समय भगवान की काया तीनसौ धनुष्य ऊँची थी। जन्म से दसलाख पूर्व बीतने पर पिता के आग्रह से राज्य ग्रहण किया बारह पूर्वांग सहित उनतीस लाख पूर्व राज्यावस्था में रहने के बाद भगवानने दीक्षा लेने का विचार किया। भगवान के मनोगत विचारों को जानकर लोकान्तिक देवों ने भी जग कल्याण के लिए दीक्षा ग्रहण करने की प्रार्थना की। तदनुसार भगवान ने वर्षीदान्त दिया। वर्षीदान में भगवाने तीन अरब अठासी करोड अस्सीलाख सुवर्णमुद्राओं का दान किया। वर्षीदान के समाप्त होने पर देवों द्वारा तैयार की गई 'अभयकरा' नाम कि शिविका पर भगवान आरूढ हुए और सुर असुर एवं मनुष्य के विशाल समूह के साथ सहस्राम्र उद्यान में पधारे। वैशाख शुक्ला नवमी के दिन मध्याह्न के समय मघा नक्षत्र के योग में भगवान ने एक हजार राजाओं के साथ दीक्षा ग्रहण की। भगवान को उसी क्षण चतुर्थज्ञान मनःपर्यव उत्पन्न हुआ।

दूसरे दिन भगवान ने बिजयपुर के राजापद्म के घर परमान्न (खीर) से पारणा किया। उस दिन पद्मराजा के घर वसुधारा आदि पांच दिव्य प्रकट हुए।

बीस वर्ष तक भगवान छद्मस्थ अवस्था में पृथ्वी पर विचरण करते रहे।

अनेक ग्राम नगरों को पावन करते हुए भगवान अयोध्या नगरी के बाहर सहस्राम्र उद्यान में पधारे। वहां प्रियंगु वृक्ष के नीचे ध्यान करने लगे। उस दिन भगवान के षष्ठ तप था। चैत्र शुक्ला एकादशी के दिन मघा नक्षत्र में भगवान ने समस्त घाति कर्मों को क्षय कर केवलज्ञान प्राप्त किया। देवों ने केवल-ज्ञान उत्सव मनाया। समवशरण की रचना हुई। भगवान ने उपदेश दिया। भगवान की देशना सुनकर अनेक नरनारियों ने भगवान से प्रव्रज्या ग्रहण की उनमें 'चमर' आदि सौ गणधर मुख्य थे। भगवान ने चतुर्विध संघ की स्थापना की।

भगवान के तीर्थ में 'तुंबरु' नामक यक्ष एवं महाकाली नाम की शासन देवी हुई।

भगवान के परिवार में ३,२०००० साधु, ६,३०००० साध्वो, २४०० चौदह पूर्वधर, ११००० अवधिज्ञानी, १०४५० मनः पर्ययज्ञानी, १३००० केवधज्ञानी, १८४०० वैक्रिय लब्धिधारी १०४५० वादी, २८१००० श्रावक एवं ५ १६००० श्राविकाएं थी।

वे केववज्ञान प्राप्ति के बाद बीस वर्ष बाहर पूर्वांग न्यून एक लाख पूर्व तक पृथ्वीपर विचरण करते रहे। अपना मोक्षकाल नजदीक जान कर प्रभु समेत शिखर पर पधारे वहां एक हजार मुनियों के साथ अनशन ग्रहण किया। एक मास के अन्त में चैत्र शुक्ला नवमी के दिन पुनर्वसु नक्षत्र में अवशेष कर्मो को क्षयकर एक हजार मुनियों के साथ निर्वाण प्राप्त किया।

भगवान दस लाख पूर्व कौमार अवस्था में, उनतीस लाख बारह पूर्वांग राज्य अवस्था में एवं बारह

पूर्वांग कम लाख पूर्व चारित्रावस्था में रहें। इस प्रकार भगवान की आयु चालीस लाख पूर्व की थी। भगवान श्री अभिनंदन के निर्वाण के पश्चात् नौलाख करोड सागरोपम वीतने पर सुमतिनाथ भगवान मोक्ष पधारे।

६—भगवान श्रीपद्मप्रभु—

वत्स देश की राजधानी कोशाँवी नगरी थी। वहां के शासक का नाम 'धर' था। महाराज 'धर' की रानी का नाम 'सुसीमा' था। अपराजित मुनि का जीव देवलोक का आयुष्य पूर्ण करके चौदह महास्वप्न पूर्वक माघ कृष्णा छठ की रात्रि में चित्रा नक्षत्र में महारानी सुसीमा की कुक्षि में उत्पन्न हुए। गर्भकाल पूरा होने पर कार्तिक कृष्णा द्वादशी को चित्रा नक्षत्र के योग में भगवान का जन्म हुआ। गर्भ में माता 'पद्म' की शय्या का दोहद होने से बालक का नाम 'पद्मप्रभ' रखा गया। युवावस्था में भगवान का विवाह हुआ। साढे तीन लाख पूर्व तक युवराज रहकर फिर भगवान का राज्यारोहन हुआ। साढे इक्कीस लाख पूर्व और १६ पूर्वांग तक राज्य का संचालन किया। इसके बाद कार्तिक कृष्णा तेरस को चित्रा नक्षत्र के योग में संसार का त्याग कर वर्षीदान दे कर वैजयन्ती नामक शिबिका में बैठकर सहस्राम्र उद्यान में एक हजार राजाओं के साथ दिन के पिछले प्रहर में छठ—दो दिनके उपवास के तप के साथ प्रव्रजित हुए। दूसरे दिन भगवान ने ब्रह्मस्थल के राजा सोमदेव के घर परमान्न से पारणा किया। छमास तक छद्मस्थ काल में विचर कर चैत्र पूर्णिमा के दिन कौशाम्बी के सहसाम्र उद्यान में चित्रा नक्षत्र के योग में केवलज्ञान केवल दर्शन प्राप्त किया। समवशरण की रचना की। उस अवसर पर सुव्रत आदि १०७ व्यक्तियों ने प्रव्रज्या लेकर गणधर पद प्राप्त किया।

अपने सोलह पूर्वांग कम एक लाख पूर्व तक संयम का पालन किया। इस प्रकार कुल तीसलाख पूर्व का आयुष्य भोग कर मार्गशीर्ष एकादशी के दिन चित्रा नक्षत्र के योग में एकमास की संलेखना पूर्वक आप सम्मेत शिखर पर ३०८ मुनियों के साथ सिद्ध गति को प्राप्त हुए।

भगवान के सुव्रत आदि १०७ गणधर, थे ३३०००० साधु, ४२०००० रति आदि साध्वियां, २३०० चौदहपूर्व धर, १०००० अवधिज्ञानी, १०३०० मनः पर्यवज्ञानी, १२००० केवलज्ञानी, १६१०८ वैक्रियलब्धि धारी, ९६०० वादलब्धि सम्पन्न, २७६००० श्रावक एवं ५०५००० श्राविकाओं का परिवार था।

भगवान श्री सुमतिनाथ के निर्वाण के बाद ९० हजार करोड सागरोपम वीतने पर भगवान श्री पद्म प्रभु का निर्वाण हुआ।

७—भगवान श्रीसुपार्श्वनाथ—

काशी देश की राजधानी वाणारसी में प्रतिष्ठसेन नामका राजा राज्य करता था। उनकी रानी का नाम पृथ्वी था। जैसा उनका नाम है वैसा ही उनमें दिव्य गुण थे। नंदिषेणमुनि का जीव ग्रैवयेक से चवकर भाद्रपद कृष्णा अष्टमी को अनुराधा नक्षत्र में महारानी पृथ्वी की कुक्षि में चौदह महास्वप्न पूर्वक उत्पन्न हुए। गर्भकाल में महारानी ने क्रमशः पांच और नौ फणवाले नाग की शय्या पर स्वयं को सोई हुई देखा। ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशी को विशाखा नक्षत्र में भगवांन ने जन्म ग्रहण किया। अन्य तीर्थंकरों की तरह भगवान का भी इन्द्रादि देवों ने जन्मोत्सव आदि किया। गर्भकाल में माता का पार्श्व—(छाती और पेट के अलग बगल का हिस्सा) बहुत ही उत्तम और सुशोभित लगता था। अतः पुत्र का नाम भी सुपार्श्व-कुमार रखा गया। सुपार्श्वकुमार ने क्रमशः योवन वय को प्राप्त किया। युवा होने पर सुपार्श्व कुमार का अनेक राजकुमारियों के साथ विवाह हुआ। पांच लाख पूर्व तक युवराज पद पर प्रतिष्ठित रहने के वाद पिता ने सुपार्श्व कुमार को राज गद्दी पर स्थापित किया। भगवान की उंचाई २००

धनुष, वर्ण स्वर्णसा एवं लक्षण स्वस्तिक था। इस प्रकार चौदहलाख पूर्व और बीस पूर्वांग तक राज्य का संचालन करने के बाद जेष्ठ कृष्णा त्रयोदशी के शुभ दिन अनुराधा नक्षत्र में देवों द्वारा तैयार की गई 'जयन्ती' नामक शिबिका पर आरूढ होकर नगरी के बाहर सहस्राम्र उद्यान में पधारे। वहां एक हजार राजाओं के साथ दिवस के पिछले प्रहर में प्रव्रज्या ग्रहण की। परिणामों की उच्चता के कारण भगवान को उसी क्षण मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न हो गया। दीक्षा के समय भगवान ने छठ की तपस्या की थी। दूसरे दिन पाटलीखण्ड के महाराजा महेन्द्रकुमार के घर परमान्न से पारणा किया। उस समय वसुधारादि पांच दिव्य प्रकट हुए। नौ मास की कठिन साधना के बाद घनघाती कर्मों का क्षय कर फाल्गुण कृष्णा छठ के दिन चित्रा नक्षत्र के योग में केवलज्ञान और केवलदर्शन प्राप्त किया। प्रथम देशना में विदर्भ आदि ९५ व्यक्तियों ने प्रव्रज्या ग्रहण कर गणधर पद प्राप्त किया।

केवलज्ञान प्राप्त कर बीस पूर्वांग और नौ मास कम एक लाख पूर्व तक भव्य प्राणियों को प्रतिबोध देते रहे। बीस लाख पूर्व का आयु पूर्ण कर भगवान ने समेत शिखर पर्वत पर फाल्गुन कृष्णा सप्तमी को मूल नक्षत्र के योग में पांचसो मुनियों के साथ निर्वाण प्राप्त किया।

भगवान श्री'पद्मप्रभ' के निर्वाण के पश्चात् नौ हजार करोड़ सागरोपम बीतने पर श्री सुपार्श्वनाथ भगवान का निर्वाण हुआ।

भगवान के मुख्य गणधर का नाम विदर्भ था। आपके ३००००० तीन लाख साधु, ४३०००० चारलाख तीस हजार साध्वियां २०३० तीन हजार तीस चौदह पूर्वधर ९००० नव हजार अवधिज्ञानी, ९१५० नव हजार एक सो पचास मनः पर्यवज्ञानि ११००० अग्यारह हजार केवलज्ञानी १५३०० पन्दर हजार तीन सो वैक्रियलब्धिधारी ८४०० आठ हजार चार सो वादलब्धिसम्पन्न २५०००० दो लाख पचास हजार श्रावक एवं ४९३००० चार लाख पच्चाणु हजार श्राविकाओं का परिवार था।

८ भगवान श्रीचन्द्रप्रभ

धातकी खण्ड द्वीप के पूर्व विदेह में मंगलावती विजय में 'रत्नसंचया' नामकी नगरी थी। वहां 'पद्म' नाम के प्रतापी राजा राज्य करते थे। वे संसार में रहते हुए भी जलकमलवत् निरासक्त थे। कोई कारण पाकर उन्हें संसार से विरक्ति हो गई। और उन्होंने युगंधर नामके आचार्य के पास प्रव्रज्या ग्रहण की। चिरकाल तक संयम का उत्कृष्ट भाव से पालन करते हुए उन्होंने तीर्थङ्कर नाम गोत्र का उपार्जन किया। आयु पूर्ण होने पर पद्मनाभ मुनि वैजयन्त नामक विमान में ऋद्धि सम्पन्न देव हुए। वहां वे सुख पूर्वक देव आयु व्यतीत करने लगे।

विजय नामक अनुत्तर विमान से बत्तीस सागरोपम की आयु पूर्णकर चैत्र वदि पंचमी के शुभ दिन अनुराधा नक्षत्र में 'पद्म' का जीव 'चन्द्रानना' नगरी के वीर राजा 'महासेन' की रानी लक्ष्मणा के गर्भ में आया। इन्द्रादि देवो ने गर्भ कल्याणक मनाया। गर्भकाल के पूर्ण होने पर पौष कृष्णा द्वादशी को अनुराधा नक्षत्र में लक्ष्मणा देवी ने पुत्र रत्न को जन्म दिया। इन्द्रादि देवों ने जन्म कल्यानक मनाया। माता को गर्भकाल में चन्द्रपान करने की इच्छा जागृत हुई जिससे पुत्र का नाम 'चन्द्रप्रभ' रखा गया। भगवान का वर्ण चन्द्रमा के समान उज्वल व गौर था। वे चन्द्रमा के चिह्न से चिह्नित थे।

बाल्यकाल को पार कर जब भगवान युवा हुए तब उनका अनेक राजकुमारियों के साथ विवाह हुआ ढाई लाख पूर्व तक कुमार अवस्था में रहने के बाद प्रभु का राज्याभिषेक हुआ। साढे छ लाख पूर्व और चोवीस पूर्वांगतक राज्य का संचालन किया। तदनन्तर भगवान ने दीक्षा लेने का निश्चय किया। लोकांतिक देवों ने प्रार्थना की। तीन अरब अठयासी करोड अस्सी लाख सुवर्णमुद्रा का वर्षीदान देकर

पौषवदी १३ के दिन अनुराधा नक्षत्र में देवों द्वारा तैयार की गई 'अपराजिता' नामकी शिबिका में बैठकर एक हजार राजाओं के साथ सहस्राम्र उद्यान में दिन के पिछले पहर में प्रव्रज्या ग्रहण की। उस समय भगवान को मनः पर्ययज्ञान उत्पन्न हुआ।

दूसरे दिन भगवान ने पद्मखण्ड के राजा सोमदत्त के घर परमान्न से छठ का पारणा किया। तीन महिने की उत्कृष्ट साधना के बाद चन्द्राननना नगरी के सहस्राम्र उद्यान में फाल्गुनवदि सप्तमी के दिन अनुराधा नक्षत्र में भगवान ने केवलज्ञान और केवलदर्शन प्राप्त किया। इन्द्रादि देवो ने केवलज्ञान उत्सव मनाया और समवशरण की रचना की। भगवानने भव्य जीवो को उपदेश दिया। उस समय दत्त आदि ९३ महापुरुषों ने दीक्षा लेकर गणधर पद प्राप्त किया।

२४ पूर्व तीन मास न्यून एक लाख पूर्वतक विहार करते हुए भगवान भव्य जीवों को प्रतिबोध देते रहे। अपना निर्वाण काल समीप जानकर भगवान सम्मेतशिखर पर पधारे। वहां पर एक हजार मुनियों के साथ एक मास का अनशन कर निर्वाण प्राप्त किया। निर्वाण का दिन भाद्रपदवदि सप्तमी था और श्रवन नक्षत्र का योग था। भगवान की काया १५० धनुष उंची थी। भगवान के दत्त आदि ९३ गण घर, २५०००० साधु, सोमानी आदि ३८०००० हजार साध्वियाँ २००० चौदह पूर्वधर ८००० अवधिज्ञानी, ८००० मनः पर्ययज्ञानी १०००० केवली, १४००० वैक्रियधारी, ७६०० वादी, २५०००० श्रावक और ४९१००० श्राविकाए हुई।

श्रीसुपार्श्वनाथ के मोक्ष गये पीछे नौ सौ कोटी सागरोपम बीतने पर श्रीचन्द्रप्रभ भगवान मोक्ष में पधारे।

९ भगवान श्रीसुविधिनाथ—

पुष्करवर द्वीपार्ध के पूर्व विदेह में पुष्कलावती विजय में पुडरीकिनी नामकी नगरी थी। वहां महापद्म नामके राजा राज्य करते थे।। उन्होंने संसार से विरक्त हो जगन्नद नामके स्थविर अणगार के पास दीक्षा ग्रहण की। एकावली आदि कठोर तपश्चर्या करते हुए महापद्म मुनि ने तीर्थङ्कर नामकर्म का उपार्जन किया। अन्त में वे शुभ अध्यवसाय से कालकर वैजयन्त नामक देव विमान में महर्द्धिक देव रूप में उत्पन्न हुए।

भरत क्षेत्र में कांकदी नामकी नगरी थी। उस नगरी का राजा सुग्रीव था। उनकी महारानी का नाम रामा था। वैजयन्त विमान में ३३ सागरोपम की आयु पूर्ण करके महापद्मदेव का जीव फाल्गुन कृष्णा नवमी को मूल नक्षत्र के योग में महाराज रामा देवी की कुक्षि में उत्पन्न हुआ। चौदह महास्वप्न देखे। मार्गशीर्ष कृष्णा पंचमी के दिन मूल नक्षत्र में गौर वर्णीय मत्स्य के चिह्न से चिह्नित महारानी ने पुत्र रत्न को जन्म दिया। इन्द्रादि देवों ने जन्म कल्याणक मनाया। गर्भावस्था में गर्भ के प्रभावसे रामादेवी सभी प्रकारके कार्यों को सम्पन्न करने की विधि में कुशल हुई इस लिए पुत्र का नाम 'सुविधि' रखा गया और गर्भ काल में माता को पुष्प का दोहद उत्पन्न हुआ था इसलिए बालक का दूसरा नाम 'पुष्पदन्त' रखा गया पुष्पदंत युवा होने पर पिता के आग्रह से भगवान ने विवाह किया। वे ५० पचास हजार पूर्व तक युवराज पद पर रहे। बाद में पिता ने उन्हे राज्यगदी पर अधिष्ठित किया। पचास हजार पूर्व और अट्ठाइस पूर्वांग तक राज्य का शासन किया। एक समय लोकान्तिक देवों ने आकर प्रार्थना की कि हे प्रभु! अब आप जगत के हिंतार्थ दीक्षा धारण कीजिये। तब प्रभु ने वर्षी दान दिया और मार्गशीर्ष कृष्णा छठ ६ के दिन मूल नक्षत्र में देवों द्वारा तैयार की गई 'अकण-प्रभा' नामकी शिबिका में बैठकर एक हजार राजाओं के साथ सहस्राम्र उद्यान में जा कर दीक्षा ग्रहण की। इन्द्रादि देवोंने भगवान का दीक्षा उत्सव मनाया। उस दिन भगवान के छठ की तपश्चर्या थी।

तीसरे दिन भगवान ने श्वेतपुर के राजा 'पुष्प के घर परमान्न (खीर) से पारणा किया ।
वहां से विहार कर चार मास के बाद भगवान उसी उद्यान में आये मालूरवृक्ष के नीचे कायोत्सर्ग कर कार्तिक सुदी तीज ३. के दिन मूल नक्षत्र में चार घनघाती कर्म को नष्ट कर केवलज्ञान और केवलदर्शन प्राप्त किया । देवों द्वारा समवशरण की रचना हुई । भगवान ने उपदेश दिया । भगवान का उपदेश श्रवण कर वराह आदि ८८ व्यक्तियों ने दीक्षा ग्रहण कर गणधर पद को प्राप्त किया ।

भगवान के परिवार में ८८ गणधर थे जिनमें मुख्य गणधर का नाम 'वराह' था । दो लाख २००००० साधु एवं एक लाख बीस हजार १२०००० साध्वियाँ थी । आठ हजार चार सौ ८४०० अवधज्ञानी थे । १५०० पंदरह सो चौदह पूर्वधारी । ७५०० सात हजार पांच सो मनः पर्ययज्ञानी, ७५०० सात हजार पांचसो केवल ज्ञानी १३००० तेरह हजार वैक्रिय लब्धिवाले, २२९००० दो लाख उन्नतीस हजार श्रावक और ४७२००० चार लाख बहोतर हजार श्राविकाएं थी ।

आयुष्यकाल की समाप्ति निकट आने पर भगवॉन समेतशिखर पर एक हजार मुनियों के साथ पधारे । यहाँ एक मास का अनशन कर कार्तिक कृष्णा नवमी को मूल नक्षत्र में अठाइस पूर्वाङ्ग और चार मास कम एक लाख पूर्व तक तीर्थङ्कर पद भोगकर मोक्ष पधारे ।

भगवान के निर्वाण के बाद कुछ समयतक तो धर्मशासन चलता रहा, किन्तु बाद में हुण्डा अवसर्पिणी काल के दोष से श्रमणधर्म विच्छेद हो गया । एक भी साधु न रहा । लोग वृद्ध श्रावकों से धर्म का स्वरूप जानते थे । भक्त गण वृद्ध श्रावकों की अर्थ–धन से पूजा करने लगे । इस प्रकार धीरे धीरे धार्मिक शिथिलता बढनेलगी यह शिथिलता भगवान श्रीशीतलनाथ के तीर्थ प्रवर्तन तक अनवरत रूप से चलती रही । इस काल में ब्राह्मणों का ही भरत क्षेत्र पर धार्मिक आधिपत्य रहा । इस प्रकार छ तीर्थङ्कर छ तीर्थंकरों के [शितलनाथ से शान्तिनाथ के अन्तर में इसी प्रकार बीच बीच में तीर्थच्छेद होता रहा और मिथ्यात्व बढता रहा ।

१० भगवान श्रीशीतलनाथः—

पुष्करार्द्ध द्वीप के वज्र नामक विजय में 'सुसीमा' नाम की नगरी थी । वहाँ पद्मोत्तर नाम के राजा राज्य करते थे । उन्हें संसार की असारता का विचार करते हुए वैराग्य उत्पन्न हो गया । उन्होंने अस्ताघ नाम के आचार्य के समीप दीक्षा धारण की दीक्षा लेकर वे कठोर तप करने लगे । तीर्थङ्कर नामकर्म उपार्जन के बीस स्थानों में से किसी एक का आराधन कर उन्होंने तीर्थङ्कर नामकर्म का उपार्जन किया । अन्त समय में अनशन करके प्राणत नाम के देवलोक में उत्पन्न हुए ।

भद्दिलपुर नामके नगर में दृढरथ नाम के राजा राज्य करते थे । उनकी रानी का नाम नन्दा था । पद्मोत्तर मुनि का जीव प्राणत कल्प से चवकर वैशाख कृष्णा छट के दिन पूर्वाषाढा नक्षत्र के योग में महारानी नन्दा के उदर में आया । उत्तम गर्भ के प्रभाव से महारानी ने चौदह महास्वप्न देखे । गर्भकाल के पूर्ण होने पर माघकृष्णा द्वादशी के दिन पूर्वाषाढा नक्षत्र के योग में श्रीवत्स के चिह्न से चिह्नित सुवर्णकान्ति वाले पुत्रको जन्म दिया । भगवान के जन्मते ही समस्त लोक में अत्यंत प्रकाश फैल गया । इन्द्रादिदेवों ने भगवान का जन्मोत्सव किया । बाद में दृढरथ महाराजा ने भी पुत्र जन्मोत्व किया । जब भगवान माता के गर्भ में थे तब दृढरथ राजा के शरीर में दाह उत्पन्न हो गया था । अनेक उपचार करने पर भी वह शान्त नहीं हुआ । किन्तु महारानी के स्पर्श करते ही दाह रोग शान्त हो गया । इसलिये माता पिता ने अपने बालक का नाम 'शीतलनाथ'' रखा अनेक धात्री देव और देवियों के संरक्षण में भगवान युवा हुए । उनका अनेक राजकुमारियों के साथ विवाह किया गया । दृढधर महा राजा शीतलनाथ कुमारको राज्य भार संभला कर संयमी व्रती बन गये । पचास हजार वर्ष तक अपने अतुल पराक्रम से राज्य

करते हुए एक समय उन्हें वैराग्य उत्पन्न हो गया। उन्हों ने प्रव्रज्या लेने का निश्चय किया। उस समय लोकान्तिक देवों ने आकर लोक कल्याण के लिए दीक्षा लेने की भगवान से प्रार्थना की तदनुसार वर्षीदान देकर माघ कृष्णा द्वादशी १२ के दिन पूर्वाषाढा नक्षत्र में देवों द्वारा सजाई गई 'चन्द्रप्रभा' नामक शिविका पर आरूढ होकर सहस्राम्र उद्यान में आये। दिन के अन्तिम प्रहर में छट्ठ के तप के साथ प्रव्ज्या ग्रहण की। भगवान के साथ एक हजार राजाओं ने भी दीक्षा ग्रहण की। भगवान को उस समय मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न हुआ। तीसरे दिन भगवान ने छठ तप का पारणा रिष्ट नगर के महा राजा पुनर्वसु के घर परमान्न से पारणा किया। वहाँ वसुधारादि पांच दिव्य प्रकगट हुए।

तीन महीने तक छद्मस्थकाल में विचरण कर भगवान भद्दिलपुर के सहस्राम्र उद्यान में पधारे। वहां पीपल वृक्ष के नीचे पौष कृष्णा चतुर्दशी के दिन पूर्वाषाढा नक्षत्र में घनघाती कर्मों का क्षय कर केवल ज्ञान केवल दर्शन प्राप्त किया। देवों ने समवशरण की रचना की। उपस्थित परिषद् में भगवान ने उपदेश दिया। भगवान के उपदेश से अनेक नर नारियों ने चारित्र ग्रहण किया उनमें आनन्द आदि ८१ गणधर मुख्य थे। भगवान ने चार तीर्थ की स्थापना की। भगवान के शासन का अधिष्ठायक देव ब्रह्मयक्ष और अशोका नाम की देवी अधिष्ठायिका हुई।

तीन मास कम पच्चीस हजार वर्ष तक भगवान भव्यजीवों को उपदेश देते रहें। अपना निर्वाणकाल समीप जान कर भगवान समेत शिखर पर पधारे। वहां एक हजार मुनियों के साथ अनशन ग्रहण किया एक मास के अन्त में वैशाख कृष्णा द्वितीया के दिन पूर्वाषाढा नक्षत्र में अवशेष कर्मो को खपा-कर भगवान हजार मुनियों के साथ मोक्ष में पधारे। इन्द्रों ने भगवान का देह संस्कार किया।

भगवान के परिवार में एक लाख मुनि १००००० एक लाख छ हचार १०६००० साध्वियां १४०० चौदह सो पूर्वधर, सात हजार दोसो ७२०० अवधिज्ञानी, साढे सात हजार ७५०० मनःपर्यय ज्ञानी, सात हजार ७००० केवलज्ञानी, बारह हजार १२००० वैक्रिय लब्धिवाले, पांच हजार आठसौ ५८०० वाद लब्धिवाले, दों लाख नवासी हजार २८९००० श्रावक एवं चारलाख अठावन ४५८००० हजार श्राविकाएं थी।

भगवान ने कुमार वस्था में पच्चीस हजार पूर्व, राज्यत्व काल में पचास हजार पूर्व, दीक्षा पर्याय में पचीस हजार पूर्व, व्यतीत किये। इस प्रकार भगवान की कुल आयु एक लाख पूर्व की थी।

भगवान श्रीसुविधिनाथ के निर्वाण के पश्चात् नौ कोटि सागरोपम बीतने पर भगवान श्रीशीतलनाथ मोक्ष में पधारे!

११—भगवान श्री श्रेयांसनाथ——

पुष्करार्द्ध द्वीप के पूर्वविदेह में कच्छविजय के भीतर क्षेमा नाम की बडी सुन्दर नगरी थी। वहां नलिनीगुल्म नाम का राजा राज्य करता था। उन्होंने वज्रदत्त मुनि के पास दीक्षा ग्रहण की तप करते हुए उन्होंने तीर्थकर नामकर्म का उपार्जन किया। वे बहुत वर्षोंतक संयम का पालन करते हुए आयुपूर्ण करके महाशुक्र देवलोक में महर्द्धिक देव रूप से उत्पन्न हुए।

भारत वर्ष में सिंहपुर नाम का नगर था। इस नगर के महाराजा विष्णुराज राज्य करते थे। उनकी पटरानी का नाम विष्णुदेवी था। नलिनीगुल्म विमान का जीव देवलोक का सुखमय जीवन व्यतीत करके आयुष्य पूर्ण होने पर ज्येष्ठ कृष्णा नवमी के दिन श्रवण नक्षत्र के योग में विष्णुदेवी की कुक्षि में उत्पन्न हुआ। विष्णुदेवी ने तीर्थंकर के योग्य चोदह महास्वप्न देखे। भाद्रपद कृष्णा द्वादशी के दिन श्रवण नक्षत्र में गेंडे के चिह्न से चिह्नित सुवर्णवर्णी पुत्र को जन्म दिया। भगवान के जन्मते ही समस्त

दिशाएँ प्रकाश से प्रकाशित हो उठीं । देव देवियाँ एवं इन्द्रों ने भगवान का जन्मोत्सव किया । माता पिता ने बालक का नाम श्रेयाँसकुमार रखा । कुमार क्रमशः देवदेवीयों एवं धात्रियों के संरक्षण में बढने लगा । यौवन वय प्राप्त होने पर भगवान की काया ८० धनुष उँची थी । उस समय अनेक देश के राजाओं ने अपनी पुत्रीयों का विवाह श्रेयांसकुमार के साथ किया । कुमार सुख पूर्वक रहने लगे ।

भगवान ने जन्म से इक्कीस लाख वर्ष बीतने पर पिता के आग्रह से राज्य ग्रहण किया । बयालीस लाख वर्ष आप अपने राज्य पर अनुशासन करते रहे । इसके बाद आपने दीक्षा लेने का निश्चय किया । तदनुसार लोकान्तिक देव आये और भगवान को तीर्थ प्रवर्ताने की प्रार्थना कि । भगवान ने वर्षीदान दिया । देवों द्वारा बनाई गई विमलप्रभा नाम की 'शिवीका' पर आरूढ होकर भगवान सहस्राम्र उद्यान में पधारे । वहां फाल्गुन मास की कृष्ण त्रयोदशी के दिन पूर्वाह्न के बारह बजे से पहिले समय श्रवण नक्षत्र के चन्द्र के साथ योग आने पर षष्ठतप के साथ भगवान ने एक हजार राजाओं के साथ प्रव्रज्या ग्रहण की ।

तीसरे दिन सिद्धार्थ नगर के नन्द राजा के घर प्रभु ने परमान्न से पारणा किया । देवों ने वहां पांच दिव्य प्रगट किये । दो मास तक छद्मस्थ काल में विचरण कर भगवान सिंहपुरी के सहस्राम्र उद्यान में पधारे । वहां अशोकवृक्ष के नीचे कायोत्सर्ग करने लगे । ध्यान करते हुए भगवान ने शुक्ल ध्यान की परमोच्चस्थिति में पहुँच कर समस्तघातीकर्मों को सर्वथा नष्ट कर दिया । माघ मास की अमावस्या के श्रवण नक्षत्र के साथ चन्द्र के योग में षष्ठतप की अवस्था में केवलज्ञान एवं केलदर्शन उत्पन्न होगया इन्द्रादि देवों ने केवलज्ञान महोत्सव किया । और समवशरण की रचना की उसमें विराजकर भगवान ने अपूर्व देशना दी । देशना सुनकर गोथुभ आदि ७६ गणधर हुए । अनेक राजाओं ने भगवान के पास दीक्षा ग्रहण की । भगवान ने चार तीर्थ की स्थापना की और विशाल साधु समूह के साथ विहार कर दिया ।

भगवान के परिवार में चौरासी हजार ८४००० साधु, एक लाख तीन हजार १३०००० साध्वियां, १३०० तेरहसो चौदहपूर्वधारी छ हजार ६००० अवधिज्ञानी, छ हजार ६००० मनः पर्यवज्ञानी, साढे छ हजार ६५००० केवली, ग्यारह हजार ११००० वैक्रियलब्धि धारी, पांच हजार ५००० वादी, दो लाख उगण्यासी हजार २७९००० श्रावक, एवं चारलाख अडतालीस हजार ४४८००० श्राविकाएँ थीं ।

अपना निर्वाणकाल समीप जानकर भगवान समेत शिखर पर पधारे । वहां एक हजार मुनियों के साथ अनशन ग्रहण किया । श्रावण मास की कृष्णा तृतीया के दिन धनिष्टा नक्षत्र में एक मास का अनशन कर एक हजार मुनियों के साथ मोक्ष प्राप्त किया । इन्द्रादिदेवों ने भगवान का निर्वाण उत्सव किया ।

कौमार्यवय में २१ लाख, राज्यगद्दी पर ४२ लाख, दीक्षा पर्याय में २१ लाख, इस प्रकार भगवान ने कुल ८४ लाख वर्ष की आयु व्यतीत की ।

भगवान श्रीशीतलाथ के निर्वाण के बाद ६६ लाख और ३६ हजार वर्ष तथा सौ सागरोपम कम एक कोटी सागरोपम बीतने पर श्रीश्रेयांसनाथ भगवान मोक्ष में पधारे ।

१२–भगवान श्री वासुपूज्य

पुष्करार्द्ध द्वीप के पूर्वविदेह को मंगलावती विजय में रत्नसंचया नाम की एक प्रसिद्ध नगरी थी । वहां के शासक का नाम पद्मोत्तर राजा था । उसने संसार का त्याग करके वज्रनाभमुनि के समीप दीक्षा धारण की । संयम की कठोर साधना करते हुए उन्होंने तीर्थंकर गोत्र का बन्ध किया और आयुष्य पूर्ण करके प्राणत कल्प में महर्द्धिक देव बने ।

भारतवर्ष में चंपा नामकी एक सुशोभित नगरी थी । उस नगरी के महाराज वसुराय थे : उनकी

पट्टरानी का नाम 'जया' था । प्राणतकल्प की आयु पूर्ण करके पद्मोत्तर मुनि का जीव ज्येष्ठ शुक्ला नवमी के दिन शतभिषा नक्षत्र में जया रानी की कुक्षि में उत्पन्न हुए चौदह महास्वप्न देखे । गर्भकाल के पूर्ण होने पर फाल्गुन कृष्णा चतुर्दशी के दिन शतभिषा नक्षत्र में रक्तवर्णाय महिषलांछन से युक्त एक पुत्र रत्न को जन्म दिया । देवी देवताओं और इन्द्रों ने जन्मोत्सव किया । पिता के नाम पर ही पुत्र का नाम वासुपूज्य दिया गया कुमार देव देवियों एवं धात्रियों के संरक्षण में बढने लगे ।

यौवन वय के प्राप्त होने पर भगवान की काया ७० धनुष ऊँची हो गई । अब राजकुमार वासुपूज्य के साथ अपनी राजपुत्रियों का विवाह कराने के लिए अनेक राजाओं के सन्देश महाराजा वासुपूज्य के पास आने लगे । माता पिता भी अपने पुत्र को विवाहित देखना चाहते थे किन्तु वासुपूज्य सांसारिक भोग विलास से सदैव विरक्त रहते थे । उन्हें संसार के प्रति किंचित् भी आसक्ति नहीं थी । एक दिन अवसर देखकर माता पिता ने वासुपूज्य से कहा--पुत्र ! हम वृद्ध होते जा रहे हैं । हम चाहते हैं कि तुम विवाह करके हमारे इस भार को अपने कन्धे पर ले लो । हमें तुम्हारी यह उदासीनता अच्छी नहीं लगती । पिता की बात सुनकर वासुपूज्य कहने लगे--पूज्य पिताजी ! आपका पुत्र स्नेह मै जानता हूँ । किन्तु मै चतुर्गति रूप संसार में परिभ्रमण करते हुए ऐसे सम्बन्ध अनेक बार कर चुका हूँ । संसार सागर में भटकते हुए मैने अनेक दुःख भोगे है । अब मैं संसार से उद्विग्न हो गया हू । इसलिए अब मेरी इच्छा मोक्ष प्राप्त करने की है । आप मुझे स्वपर कल्याण करने के लिए प्रव्रज्या ग्रहण करने कि आज्ञा दीजिए ।

वासुपूज्य के तीव्र वैराग्य--भाव के सामने माता पिता को झुकना पडा । अन्त में उन्होंने वासु पूज्य कुमार को प्रव्रज्या लेने की स्वीकृति दे दी । उसके पश्चात् लोकान्तिक देवों ने भी भगवान को प्रव्रजित होने की प्रार्थनो की । भगवानने वर्षीदान दिया । देवों द्वारा सज्झाई गई पृथ्वी नामकी शिविका पर आरूढ होकर विहारगृह नामक उद्यान में भगवान पधारे । उस दिन भगवान ने उपवास किया था । फाल्गुनी अमावस्या के दिन वरुण नक्षत्र में दिवस के अपराह्न में पंचमुष्ठी लुचन कर प्रव्रज्या ग्रहण की । भगवान के साथ छः सौ राजाओं ने भी दीक्षा ग्रहण की । भगवान को उस दिन मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न हुआ इन्द्र द्वारा दिये गये देव--दूष्य वस्त्र को धारण कर भगवान ने अन्यत्र विहार कर दिया ।

दूसरे दिन भगवान ने उपवास का पारणा महापुर के राजा सुनन्द के घर परमान्न से किया ।

एक मास तक छद्मस्थकाल में विचरण कर भगवन विहारगृह नामक उद्यान में पधारे । वहां पाटल वृक्ष के नीचे ध्यान करने लगे । माघ शुक्ला द्वितीया के दिन शतभिषा नक्षत्र में चतुर्थ भक्त के साथ भगवान ने शुक्ल ध्यान की परमोच्चस्थिति में चारों घनघाती कर्मों नो क्षयकर केवलज्ञान और केवलदर्शन प्रास किया, देवों ने केवलज्ञान उत्सव किया । समवशरण की रचना हुई । भगवान ने देशना दी । देशना सुनकर अनेक नर, नारियों ने प्रव्रज्या ग्रहण की । उनमें 'सूधर्म' आदि ६६ छासट गणधर मुख्य थे ।

भगवान के परिवार में ७२ हजार साधु, १ लाख साध्वियां, १२०० बारहसो चौदह पूर्वधर, ५४०० चौंपनसो अवधिज्ञानी छ हजार एक सौ ६०१०० मनः पर्यवज्ञानी, छ हजार ६००० केवलज्ञानी दस हजार १०००० वैक्रियलब्धिधारी, चार हजार सातसौ ४७०० वादलब्धिधारी, दो लाख १५ हजार श्रावक एवं चार लाख ३६ हजार श्राविकाएं हुई । इस प्रकार अपने विशाल साधु परिवार के साथ एक मास कम चौवन लाख वर्ष तक केवली अवस्था में भव्यों को भगवान उपदेश देते रहे ।

अपना मोक्ष काल समीप जानकर भगवान चम्पा नगर पधारे । वहां आपने छ सौ मुनियों के साथ अनशन ग्रहण कर एक मास के अन्त में अवशेष कर्मों को खपाकर आषाढ शुक्ला चतुर्दशी के दिन उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में निर्वाण प्रास किया ।

भगवान ने कुमारावस्था में अठारह लाख वर्ष, एवं संयम व्रत में ५४ लाख वर्ष व्यतीत किए। इस प्रकार कुल ७२ लाख वर्ष आयु के पूर्ण होने पर भगवान मोक्ष में पधारे। भगवान श्री श्रेयांस प्रभु के निर्वाण के बाद ५४ सागरोपम बीतने पर भगवान श्रीवासुपूज्य का निर्वाण हुआ।

१३—भगवानश्री विमलनाथ—

घातकीखण्ड द्वीप के प्राग्विदेह क्षेत्र में भरत नामक विजय में महापुरी नाम की एक महान रमणीय नगरी थी। वहाँ पद्मसेन नाम के राजा राज्य करते थे। वे धर्मात्मा एवं न्यायप्रिय थे। उन्होंने सर्वगुप्त नामके आचार्य के पास दीक्षा ग्रहण की और साधना के सोपान पर चढते हुए तीर्थङ्कर नामकर्म का उपार्जन किया। कालान्तर में आयुष्यपूर्ण करके सहस्रार देवलोक में उत्पन्न हुए।

इसी जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में कांपिल्यपुर नामका नगर था। वहाँ कृतवर्मा नाम के न्यायप्रिय राजा राज्य करते थे। उनकी रानीका नाम श्यामा था। पद्मसेन मुनि का जीव सहस्रार देवलोक से च्युत होकर वैशाख शुक्ला द्वादशी के दिन उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र में श्यामा देवी की कुक्षि में उत्पन्न हुए। चौदह महास्वप्न देखे। माघमास की शुक्ला तृतीया के दिन मध्यरात्रि में उत्तरा नक्षत्र में शूकर चिह्न से चिह्नित तप्तसुवर्ण की कान्तिवाले पुत्र को महारानी ने जन्म दिया। देवी देवताओं ने भगवान का जन्मोत्सव किया गुण के अनुसार भगवान का नाम विमलनाथ रखा गया। युवा होने पर विमलकुमार का विवाह अनेक राजकुमारियों के साथ हुआ। साठ धनुष ऊँचे एवं एक सौ आठ लक्षण से युक्त प्रभु का उनके पिता ने राज्याभिषेक किया। ३० लाख वर्ष तक राज्यपद पर रहने के बाद भगवान ने वर्षीदान देकर देवों द्वारा तैयार की गई 'देवदत्ता' नामक शिविका पर आरूढ हो माघमास की शुक्ल चतुर्थी के दिन उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र में छठ तप सहित सहस्राम्र उद्यान में दीक्षा धारण की। साथ में एक हजार राजाओं ने भी प्रव्रज्या ग्रहण की। उस समय भगवान को मनःपर्यवज्ञान उत्पन्नहुआ इन्द्र द्वारा दिये गये देव दूष्य वस्त्र को धारण कर भगवान ने अन्यत्र विहार कर दिया।

तीसरे दिन 'धान्यकूट' नगर के राजा 'जय' के घर परमान्न से पारणा किया।

दो वर्ष तक छद्मस्थ अवस्था में रहने के बाद भगवान पुनः कांपिल्यपुर के सहस्राम्र उद्यान में पधारे। वहाँ जम्बू वृक्ष के नीचे पौष मास की शुक्ला षष्ठी केदिन उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र में षष्ट तप की अवस्था में शुक्ल ध्यान की परमोच्चस्थिति में केवलज्ञान और केवलदर्शन प्राप्त किया। देवों ने मिलकर केवलज्ञान उत्सव मनाया समवशरण की रचना हुई। भगवान की देशना से 'मंधर' आदि सत्तावन गणधर हुए। शासनदेव षण्मुख यक्ष और 'विदिता' नामकी शासन देवी हुई।

भगवान के परिवार में अडसठ हजार ६८०००साधु, एक लाख आठ सौ१००८०० साध्वियाँ, ग्यारह सौ ११०० चौदह पूर्वधर, चार हजार आठसौ ४८०० अवधिज्ञानी, पांच हजार पांचसौ ५५०० मनः पर्ययज्ञानी पांच हजार पांचसौ ५५०० केवलज्ञानी, नौ हजार ९००० वैक्रियलब्धिधारी, २०८००० दो लाख आठ हजार श्रावक, एवं ४३४००० चार लाख चौतीस हजार श्राविकाएँ थी। केवल ज्ञान के बाद दो वर्ष कम १५ लाख वर्ष तक भव्यों को प्रतिबोध देने के बाद उन्होंने आषाढ कृष्णा सप्तमी के दिन पुष्य नक्षत्र में छ हजार साधुओं के साथ एक मास का अनशन ग्रहण कर समेतशिखर पर मोक्ष प्राप्त किया।

पन्द्रह लाख वर्ष कौमारावस्था में तीस लाख वर्ष राज्यकाल में, दो वर्ष कम पन्द्रह लाख वर्ष चारित्र में व्यतीत किए। भगवान की कुल आयु ६० लाख वर्ष की थी। भगवान श्रीवासुपूज्य के निर्वाण के तीस लाख सागरोपम बीतने पर भगवानश्री विमलनाथ प्रभु मोक्ष में पधारे।

१४–भगवानश्री अनन्तनाथ प्रभु—

धातकीखण्ड द्वीप के प्राग् विदेह क्षेत्र में ऐरावत् नामक विजय में अरिष्टा नाम की एक नगरी थी। वहाँ पद्मरथ नामके राजा राज्ज करते थे। वे बड़े धर्मात्मा एवं न्यायप्रिय थे। उन्होने चित्तरक्षक नामके आचर्य के पास दीक्षा धारण की। और साधना के सोपान पर चढते हुए तीर्थङ्कर नामकर्म का उपार्जन किया। कालान्तर में वे आयुष्य पूर्ण करके दसवें प्राणत देवलोक में उत्पन्न हुए।

भारत वर्ष में अयोध्या नामकी नगरी थी वहां सिंहसेन नामका राजा राज्य करताथा। उनकी रानी का नाम 'सुयशा' था।

पद्मरथ मुनि का जीव प्राणत देवलोक से च्युत होकर श्रावण कृष्णा सप्तमी के दिन रेवती नक्षत्र में सुयशा रानी की कुक्षि में उत्पन्न हुए। चौदह महास्वप्न देखे। वैशाख कृष्णा त्रयोदशी के दिन मध्य रात्रि में रेवती नक्षत्र में बाज के चिह्न से चिह्नित तप्त सुहर्ण की कान्तिवाले पुत्र को महारानी ने जन्म दिया। देवी देवताओं एवं इन्द्रो ने भगवान का जन्मोत्सव किया। गुण के अनुसार भगवान का नाम अनन्तनाथ रखा गया। युवा होने पर अनन्तनाथ का विवाह अनेक सुराज्य कन्याओं के साथ हुआ। पचास धनुष ऊँचे एवं एकसौ आठ लक्षण से युक्त प्रभु का उनके पिता ने राज्या भिषेक किया। १५ लाख बर्ष तक राज्य पद पर रहने के बाद भगवान ने वर्षीदान दिया। और देवों द्वारा तैयार की गई। 'सागरदत्ता' नामक शिविका पर आरूढ हो वैशाख मास की कृष्णा चतुर्दशी के दिन रेवती नक्षत्र में अपराह्न में छठ तप सहित सहस्राम्र उद्यान में दीक्षा धारण की। साथ में एक हजार राजाओं ने भी प्रव्रज्या ग्रहण को। इन्द्र द्वारा दिये गये देव दूष्य वस्त्र को धारण कर भगवान ने विहार कर दिया।

तीसरे दिन भगवान ने विजय नगर के राजा विजयसेन के घर परमान्न से पारणा किया। तीन वर्ष तक छद्मस्थ काल में विचरने के बाद भगवान अयोध्या नगरी के सहस्राम्र उद्यान में पधारे। अशोकवृक्ष के नीचे 'कायोत्सर्ग' में रहे। वैशाख कृष्णा १४ के दिन रेवती नक्षत्र में घनघाति कर्मों का क्षय कर केवलज्ञान केवलदर्शन प्राप्त किया। देवोंने मिलकर केवलज्ञान उत्सव किया। समवसरण की रचना हुई भगवान ने देशना दी। देशना सुन कर 'यश' आदि ५० गणधर हुए छ सौ धनुष ऊँचा चैत्यवृक्ष था। पाताल नामक यक्ष एवं अंकुशा नाम की देवी शासन अधिष्ठायक देव देवी हुए।

भगवान के परिवार में ६६००० छासठ हजार साधु ६२००० बासट हजार साध्वियाँ ९०० नौ सौ चौदह पूर्वधर, ४३०० सौ अवधिज्ञानी, ४५०० मनः पर्ययज्ञानी, ५००० पांच हजार केवलज्ञानी ८००० आठ हजार वैक्रियलब्धिधारी, ३२०० तीन हजार दो सौ वादी, २०६००० दो लाख छ हजार श्रावक एवं ४१४००० चार लाख चौदह हजार श्राविकाएँ थीं।

संयम व्रत ग्रहण के पश्चात् साढे सात लाख वर्ष बीतने के बाद चैत्र शुक्ला पंचमी के दिन रेवती नक्षत्र में समेत शिखरपर एक मास का अनशन कर सात हजार साधुओं के साथ भगवान ने निर्वाण प्राप्त किया।

भगवान ने कुमारावस्था में साढे सात लाख वर्ष, १५ लाख वर्ष पृथ्वीपालन में एवं साढे सात लाख वर्ष संयमव्रत पालन में व्यतीत किये! इस प्रकार भगवान की आयु तीस लाख बर्ष की थी। श्रीविमलनाथ भगवान के निर्वाण से नौ सागरोपम व्यतीत होने पर श्रीअनन्तनाथ भगवान ने निर्वाण प्राप्त किया।

१५ भगवानश्री धर्मनाथ—

धातकी खण्ड द्वीप के पूर्व विदेह में भरत नामक विजय में भद्दिलपुर नाम का नगर था। वहां दृढरथ नामका राजा राज्य करता था। उन्होंने बिमलवाहन मुनि के समोप दीक्षा ली और कठोर साधना

कर तीर्थङ्कर नामकर्म का उपार्जन किया। अन्तिम समय में संथारेके साथ समाधिपूर्वक देह का त्याग करके वैजयन्तविमान में महार्द्धिक देव बने।

जम्बूद्वीप के भारतवर्ष में रत्नपुर नाम का नगर था। वहां सूर्य की तरह प्रतापी भानु नामका राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम 'सुव्रता' था। वह शीलवती एवं पतिपरायणा थी। दृढ़रथ मुनि का जीव वैजयन्त विमान से चवकर वैशाख शुक्ला सतमी के दिन पुष्य नक्षत्र के योग में महारानी के उदर में उत्पन्न हुए। महारानी नें तीर्थङ्कर के सूचक चौदह महास्वप्न देखे।

गर्भकाल के पूर्ण होने पर माघशुक्ला तृतीया के दिन पुष्य नक्षत्र में वज्र चिह्न से चिह्नित शुद्धस्वर्णवर्णी पुत्र को जन्म दिया। जब भगवान गर्भ में थे तब माता को धर्म करने का पवित्र दोहद उत्पन्न हुआ था। इसलिए बालक का नाम श्रीधर्मनाथ रखा। भगवान शिशु अवस्था को पार कर युवा हुए। युवावस्था में भगवान के शरीर की ऊँचाई पैतालीस धनुप ऊँची थी। अनेक राजकुमारियों के साथ भगवान का विवाह हुआ। जन्म से ढाईलाख वर्ष बीतने पर पिता के आग्रह से भगवान ने राज्य ग्रहण किया।

पांच लाख वर्ष तक राज्य करने के बाद भगवान ने प्रव्रज्या लेने का निश्चय किया। तदनुसार लौकान्तिक देवों ने भी दीक्षा लेंने के लिए विनती की। नियमानुसार भगवान ने वर्षीदान दिया। देवों द्वारा सजाई गई 'नागदत्ता' नामक शिविका में बैठकर वप्रकांचन उद्यान में पधारे। भगवान षष्ठ तप की दिव्य अवस्था में एक हजार राजाओं के साथ माघशुक्ला त्रयोदशी के दिन पुष्य नक्षत्र में दीक्षा ग्रहणकी भगवान को उसी समय मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न हो गया। तीसरे दिन भगवान ने सोमनसपुर के राजा धर्मसिंह के घर परमान्न से पारणा किया। देवों ने वसुधारादि पांच दिव्य प्रकट किये।

दो वर्ष तक छद्मस्थ अवस्था में रहने के बाद भगवान दीक्षा स्थल वप्रकांचन उद्यान मै पधारे। वहां दधिपर्ण वृक्ष के नीचे ध्यान करते हुवे पौषमास की पूर्णिमा के दिन पुण्य नक्षत्र में केवलज्ञान प्राप्त किया। देवों ने केवलज्ञान उत्सव मनाया। समवशरण की रचना हुई। भगवान ने देशना दी। भगवान का उपदेश सुनकर पुरुष सिंह वासुदेव ने सम्यक्त्व ग्रहण किया। सुदर्शन बलदेव ने श्रावक व्रतग्रहण किये। अरिस्ट आदि ४३ महापुरुषोने प्रव्रज्या ग्रहण कर गणधर पद प्राप्त किया। भगवान का दधिपर्ण नामक चैत्यवृक्ष पांचसौ चालीस धनुप उंचा था। भगवान के शासन में किन्नर नाम का यक्ष एवं कंदर्पा नामक शासनदेवी हुई।

भगवान के परिवार में ६४००० चोसट हजार साधु, ६२४०० बासठ हजार चारसौ साध्वियां ९०० नौसौ चौदह पूर्वधर, ३६०० तीन हजार छसौ अवधिज्ञानी, ४५०० पैतालीससौ मनःपर्ययज्ञानी ७००० सात हजार वैक्रियलब्धि धारी, १८०० दो हजार आठसौ वादलब्धिवाले, २४०००० दो लाख चालीस हजार श्रावक, एवं ४१३००० चार लाख तेरह हजार श्राविकाएँ थी।

संयमव्रत में ढाईलाख वर्ष व्यतीत करने के बाद भगवान अपना निर्वाण काल समीप जानकर समेतशिखर पर पधारे। वहां आठसो मुनियों के साथ अनशन ग्रहण किया। एक मास के अंत में ज्येठमास की शुक्ला पंचमी के दिन पुष्यनक्षत्र में निर्वाण प्राप्त किया।

भगवान ने कुमारावस्था में ढाई लाख वर्ष, राज्य में पांच लाख वर्ष, एवं संयमकाल में ढाई लाख वर्ष व्यतीत किये। इस प्रकार भगवान की कुल आयु दस लाख वर्ष की थी। श्रीअनन्तनाथ भगवान् के निर्वाण के बाद चार सागरोपम बीतने पर भगवान् श्रीधर्मनाथ मोक्ष में पधारे।

१६ भगवान श्रीशान्तिनाथः—(दसवां और ग्यारहवाँ पूर्व भव)

जम्बूद्वीप के महाविदह के पुष्कलावती विजय में पुण्डरीकिणी नाम की नगरी थी। वहां धनरथ नामके राजा राज्य करते थे। उनके दो रानियां थी। एक का नाम प्रीयमती और दूसरी का नाम मनोरमा था। ग्रैवेयक का आयु पूर्ण कर वज्रायुध का जीव महारानी प्रीयमती के उदर में मेघ का स्वप्न सूचित कर उत्पन्न हुआ। जन्मने पर बालक का नाम 'मेघरथ' रखा। सहस्त्रायुध का जीव भी देवलोक से चव कर मनोंरमा के उदर में आया। जन्म लेने पर उसका नाम दृढरथ रखा गया। दोनों बालक युवा हुए।

सुमन्दिरपुर के महाराज निहत शत्रु की तीन पुत्रियां थी उनमें प्रियमित्रा और मनोरमा का विवाह युवराज मेघरथ के साथ हुआ। एवं छोटी राजकुमारी सुमति का विवाह दृढरथ के साथ संपन्न हुआ। दोनो राजकुमार सुखपूर्वक कालयापन करने लगे।

कालान्तर में राजकुमार मेघरथ की रानी प्रियमित्रा ने एक पुत्र को जन्मदिया, उसका नाम नन्दिषेण रखा गया। मनोरमा ने भी मेघसेन नामक पुत्र को जन्म दिया। राजकुमार दृढरथ की पत्नी ने भी एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम रथसेन रखा गया।

कुछ काल के बाद लोकान्तिक देवो ने आकर महाराजा धनरथ से निवेदन किया—"स्वामिन्! अब आप के धर्मप्रवर्तन का समय आ गया है। कृपा कर लोक हित के लिए आप प्रव्रज्या ग्रहण करें"।

महारज धनरथ तो तीन ज्ञान के धनी और संसार से विरक्त थे ही। संयम का योग्य अवसर भी आ गया था। अतएव महराज ने युवराज मेघरथ को राज्य भार सौंपा और राजकुमार दृढरथ को युवराज पद प्रदान कर वर्षीदान दिया और संसार छोड कर दीक्षा ग्रहण की। कठोर तप कर केवलज्ञान प्राप्त किया और चार तीर्थ की स्थापना की।

मेघरथ राजा न्याय और नीति से राज्य संचालन करने लगे। उनके राज्य में समस्त प्रजा सुख पूर्वक रहती थी महाराजा स्वयं धार्मिक होने से प्रजा में भी धार्मिक वातावरण फैला हुआ था।

एक दिन महाराजा मेघरथ पौषधशाला में पौषध कर रहे थे कि सहसा एक भयभीत कबूतर महाराजा मेघरथ की गोद में आकर बैठ गया। कबूतर घबराया हुआ था। और भय से कांप रहा था। कांपता हुआ वह मनुष्य की बोली में बोला—महाराज मेरी रक्षाकरो मुझे बचावो महाराजा मेघरथ ने अत्यन्त प्रेम से उसकी पीठ पर हाथ फेरा और कहा कबूतर ! तुम्हें डरने की जरूरत नही है। मेरे रहते तेरा कोई बाल भी वांका नही कर सकता। तुम निर्भय होकर रहो। इतने में एक बाज आया और मानव बोली में बोला—राजन्! यह कबूतर मेरा भक्ष्य है। मै कभी का भूखा हूँ। अतः इस कबूतर को आप लौटा दें मैं इसे खाकर अपनी भूख शान्त करना जाहता हूँ।

मेघरथ ने कहा—बाजः तुम कबूतर के सिवाय जो चाहो मांग सकते हो। यह कबूतर अब मेरी शरण में आगया है। मैने इसे प्राण रक्षा का आश्वासन दे दिया है, अतः अब किसी भी स्थिति में यह कबूतर तेरा भक्ष्य नहीं बन सकता।

बाज बोला—नराधिपः आप कबूतर की रक्षा करते हैं तो भला मेरी भी रक्षा कीजिये। मुझे भूख से तडफते हुए मरने से बचाईए प्राणी जबतक क्षुधातुर रहता है तब तक उसे धर्माधर्मका विचार कभी नहीं आता। क्षुधा की शान्ति के बाद ही मैं आपकी धर्म की बाते सुनूंगा। प्रथम मेरा भक्ष्य मुझे दीजिये। मैं मांसाहारी हूँ। अतः मांस खाकर ही मैं तृप्त हो सकता हूँ।

मेघरथ बोले–बाज ! क्या तू मांस ही खाता है ? दूसरा कुछ भी नहीं खा सकता ! यदि ऐसा ही है तो लो, मैं तेरी इच्छा पूरी करने को तैयार हूँ । तुझे केवल मांस ही चाहिये तो मैं अपने शरी के मांस को काट कर कबूतर के बराबर तुझे देता हूँ । फिरतो तू इस कबूतर की मांग नही करेगा !

बाज–नहीं महाराज ! मुझे कबूतर नहीं चाहिए अगर आप अपने शरीर का माँस काट कर देंगे तो मैं उसे खा कर ही तृप्त हो जाऊंगा ।

महाराजा मेघरथ ने बिना कुछ विचार किये कबूतर की प्राणरक्षा के लिए उसीक्षण छूरी और तराजू मंगवाया । तराजू के एक पल्ले में कबूतर को बिठाया और महाराज स्वयं अपने शरीर का मांस काटकर दूसरे पल्ले में रखने लगे । यह देखकर राज्य परिवार में हा हा कार होउठा । रानियां राजकुमार मंत्रीगण एवं प्रजागण बड़ा आक्रन्दन करने लगे । महाराजा को ऐसा न करने के लिए खूब समझाने लगे । किन्तु महाराज मेघरथ उन सब की उपेक्षाकर अपने शरीर का मांस काट काट कर तराजू में रखने लगे । शरीर का बहुत कुछ हिस्सा काट कर तराजू में रखने के बावजूद भी कबूतर वाला पलडा ऊपर उठा ही नहीं । महाराज को तीव्र वेदना हो रही थी किन्तु अत्यन्त शान्त भाव से उसे सह रहे थे । अन्त में महाराज स्वयं पलडे में बैठ गये ।

महाराज का यह आत्मसमर्पण देखकर देव अवाक् हो गया । आकाश से पुष्प बरसने लगे । सर्वत्र धन्य धन्य की आवाज आने लगी । शरणागत रक्षक महामानव मेघरथ महाराज की जय हो " यह कहता हुआ एक दिव्यकुण्डलधारी देव प्रकट हुआ और महारजा मेघरथ को प्रणाम कर बोला है राजन् ! मैं ईशान देवलोक का एक देव हूँ । एक बार देवसभा में ईशानेन्द्र ने आपकी दयालुता धार्मिकता और शरणागत वात्सल्य आदिगुणोंकी प्रशंसा कीं । मुझे इन्द्र की बात पर विश्वास नहीं हुआ और मैं आपकी परीक्षा करने आया हूँ । आप धन्य हैं । जैसी इन्द्र ने आपकी प्रशंसा की थी, उससे भी अधिक आप गुणवान हैं । आपके जन्म से यह पृथ्वी धन्य हो गई है । मैंने अकारण ही आप को जो कष्ट दियां उसके लिये आप मुझे क्षमा करें ।

देवने अपनी माया समेटली और वह अपने स्थान चला गया । महाराजा मेघरथ ने प्रजाजनों के पूछने पर कबूतर और बाजरूपधारी देवों का पूर्वभव बताया ।

एक बार महारज पौषधव्रत कर रहे थे । उन्हें अट्ठम तप था । धर्मध्यान में निमग्न देखकर ईशानेन्द्र मेघरथ राजा को प्रणाम किया । हाथ जोड़ते हुए इन्द्र को देखकर इन्द्रानियों ने पूछा–स्वामिन् ! आप किसको नमस्कार कर रहे हैं ? इन्द्र ने कहा–मेघरथ राजा को प्रणाम कर रहा हूँ । महाराज मेघरथ आगामी भव में सोलहवें शान्तिनाथ नाम के तीर्थंकर भगवान होंगे । उनका ध्यान इतना निश्चल और दृढ होता है कि उन्हें चलायमान करने में कोई भी देव या देवी समर्थ नहीं ।

इन्द्र की इस बात पर सुरूपा और प्रतिरूपा नाम की दो इन्द्रानियों को विश्वास नहीं हुआ । वे मेघरथ को ध्यान से विचलित करने के लिए वहां आई और अनुकूल तथा प्रतिकूल उपसर्ग करने लगी । रातभर उपसर्ग करने के बाद भी जब मेघरथ को अविचल देखा तो वह हार गई । अन्त में इन्द्रानियों ने अपना असली रूप प्रकट कर मेघरथ की धार्मिक दृढता की प्रशंसा करते हुए अपने अपराध की क्षमा मांगी तथा मेघरथ को प्रणाम कर अपने स्थान चली गई ।

एक बार तीर्थंकर भगवान धनरथ स्वामी का समवशरण हुआ । महाराजा मेघरथ ने अपने समस्त परिवार के साथ भगवान के दर्शन किये । और उपदेश श्रवण किया । उपदेश सुनकर मेघरथ को वैराग्य उत्पन्न हो गया । युवराज दृढरथ के साथ मेघरथ राजा ने दीक्षा ग्रहण की । साथ में सात सौ पुत्रों औ चार

१६ भगवान श्रीशान्तिनाथः—(दसवां और ग्यारहवाँ पूर्व भव)

जम्बूद्वीप के महाविदह के पुष्कलावती विजय में पुण्डरीकिणी नाम की नगरी थी। वहां धनरथ नामके राजा राज्य करते थे। उनके दो रानियां थी। एक का नाम प्रीयमती और दूसरी का नाम मनो-रमा था। ग्रैवेयक का आयु पूर्ण कर वज्रायुध का जीव महारानी प्रीयमती के उदर में मेघ का स्वप्न सूचित कर उत्पन्न हुआ। जन्मने पर बालक का नाम 'मेघरथ' रखा। सहस्त्रायुध का जीव भी देवलोक से चव कर मनोंरमा के उदर में आया। जन्म लेने पर उसका नाम दृढरथ रखा गया। दोनों बालक युवा हुए।

सुमन्दिरपुर के महाराज निहत शत्रु की तीन पुत्रियां थी उनमें प्रियमित्रा और मनोरमा का विवाह युवराज मेघरथ के साथ हुआ। एवं छोटी राजकुमारी सुमति का विवाह दृढरथ के साथ संपन्न हुआ। दोनो राजकुमार सुखपूर्वक कालयापन करने लगे।

कालान्तर में राजकुमार मेघरथ की रानी प्रियमित्रा ने एक पुत्र को जन्मदिया, उसका नाम नन्दिषेण रखा गया। मनोरमा ने भी मेघसेन नामक पुत्र को जन्म दिया। राजकुमार दृढरथ की पत्नी ने भी एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम रथसेन रखा गथा।

कुछ काल के बाद लोकान्तिक देवो ने आकर महाराजा धनरथ से निवेदन किया—"स्वामिन्! अब आप के धर्मप्रवर्तन का समय आ गया है। कृपा कर लोक हित के लिए आप प्रव्रज्या ग्रहण करें"।

महारज धनरथ तो तीन ज्ञान के धनी और संसार से विरक्त थे ही। संयम का योग्य अवसर भी आ गया था। अतएव महराज ने युवराज मेघरथ को राज्य भार सौंपा और राजकुमार दृढरथ को युवराज पद प्रदान कर वर्षीदान दिया और संसार छोड कर दीक्षा ग्रहण की। कठोर तप कर केवलज्ञान प्राप्त किया और चार तीर्थ की स्थापना की।

मेघरथ राजा न्याय और नीति से राज्य संचालन करने लगे। उनके राज्य में समस्त प्रजा सुख पूर्वक रहती थी महाराजा स्वयं धार्मिक होने से प्रजा में भी धार्मिक वातावरण फैला हुआ था।

एक दिन महाराजा मेघरथ पौषधशाला में पौषध कर रहे थे कि सहसा एक भयभीत कबूतर महाराजा मेघरथ की गोद में आकर बैठ गया। कबूतर घबराया हुआ था। और भय से कांप रहा था। कांपता हुआ वह मनुष्य की बोली में बोला—महाराज मेरी रक्षाकरो मुझे बचावो महाराजा मेघरथ ने अत्यन्त प्रेम से उसकी पीठ पर हाथ फेरा और कहा कबूतर ? तुम्हें डरने की जरूरत नही है। मेरे रहते तेरा कोई बाल भी वांका नही कर सकता। तुम निर्भय होकर रहो। इतने में एक बाज आया और मानव बोली में बोला —राजन्! यह कबूतर मेरा भक्ष्य है। मै कभी का भूखा हूँ। अतः इस कबूतर को आप लौटा दें मैं इसे खाकर अपनी भूख शान्त करना जाहता हूँ।

मेघरथ ने कहा—बाजः तुम कबूतर के सिवाय जो चाहो मांग सकते हो। यह कबूतर अब मेरी शरण में आगया है। मैने इसे प्राण रक्षा का आश्वासन दे दिया है, अतः अब किसी भी स्थिति में यह कबूतर तेरा भक्ष्य नहीं बन सकता।

बाज बोला—नराधिपः आप कबूतर की रक्षा करते हैं तो भला मेरी भी रक्षा कीजिये। मुझे भूख से तडफते हुए मरने से बचाईए प्राणी जबतक क्षुधातुर रहता है तब तक उसे धर्माधर्मका विचार कभी नहीं आता। क्षुधा की शान्ति के बाद ही मैं आपकी धर्म की बाते सुनूगा। प्रथम मेरा भक्ष्य मुझें दीजिये! मैं मांसाहारी हूँ। अतः मांस खाकर ही मैं तृप्त हो सकता हूँ।

मेघरथ बोले—बाज ! क्या तू मांस ही खाता है ? दूसरा कुछ भी नहीं खा सकता ! यदि ऐसा ही है तो लो, मैं तेरी इच्छा पूरी करने को तैयार हूँ । तुझे केवल मांस ही चाहिये तो मैं अपने शरी के मांस को काट कर कबूतर के बराबर तुझे देता हूँ। फिरतो तू इस कबूतर की मांग नही करेगा !

बाज—नहीं महाराज ! मुझे कबूतर नहीं चाहिए अगर आप अपने शरीर का माँस काट कर देंगे तो मैं उसे खा कर ही तृप्त हो जाऊंगा ।

महाराजा मेघरथ ने बिना कुछ विचार किये कबूतर की प्राणरक्षा के लिए उसीक्षण छूरी और तराजू मंगवाया । तराजू के एक पल्ले में कबूतर को बिठाया और महाराज स्वयं अपने शरीर का मांस काटकर दूसरे पल्ले में रखने लगे । यह देखकर राज्य परिवार में हा हा कार होउठा। रानियां राजकुमार मंत्रीगण एवं प्रजागण बड़ा आक्रन्दन करने लगे । महाराजा को ऐसा न करने के लिए खूब समझाने लगे । किन्तु महाराज मेघरथ उन सब की उपेक्षाकर अपने शरीर का मांस काट काट कर तराजू में रखने लगे । शरीर का बहुत कुछ हिस्सा काट कर तराजू में रखने के बावजूद भी कबूतर वाला पलडा ऊपर उठा ही नहीं । महाराज को तीव्र वेदना हो रही थी किन्तु अत्यन्त शान्त भाव से उसे सह रहे थे । अन्त में महाराज स्वयं पलडे में बैठ गये ।

महाराज का यह आत्मसमर्पण देखकर देव अवाक् हो गया । आकाश से पुष्प बरसने लगे । सर्वत्र धन्य धन्य की आवाज आने लगी। शरणागत रक्षक महामानव मेघरथ महाराज की जय हो " यह कहता हुआ एक दिव्यकुण्डलधारी देव प्रकट हुआ और महारजा मेघरथ को प्रणाम कर बोला हे राजन् ! मैं ईशान देवलोक का एक देव हूँ । एक बार देवसभा में ईशानेन्द्र ने आपकी दयालुता धार्मिकता ओर शरणागत वात्सल्य आदिगुणोंकी प्रशंसा कीं । मुझे इन्द्र की बात पर विश्वास नहीं हुआ और मैं आपकी परीक्षा करने आया हूँ । आप धन्य हैं । जैसी इन्द्र ने आपकी प्रशंसा की थी, उससे भी अधिक आप गुणवान हैं । आपके जन्म से यह पृथ्वी धन्य हो गई है । मैंने अकारण ही आप को जो कष्ट दियां उसके लिये आप मुझे क्षमा करें ।

देवने अपनी माया समेटली और वह अपने स्थान चला गया । महाराजा मेघरथ ने प्रजाजनों के पूछने पर कबूतर और बाजरूपधारी देवों का पूर्वभव बताया ।

एक बार महारज पौषधव्रत कर रहे थे । उन्हें अट्ठम तप था । धर्मध्यान में निमग्न देखकर ईशानेन्द्र मेघरथ राजा को प्रणाम किया । हाथ जोड़ते हुए इन्द्र को देखकर इन्द्रानियों ने पूछा—स्वामिन् ! आप किसको नमस्कार कर रहे हैं ? इन्द्र ने कहा—मेघरथ राजा को प्रणाम कर रहा हूँ । महाराज मेघरथ आगामी भव में सोलहवें शान्तिनाथ नाम के तीर्थंकर भगवान होंगे । उनका ध्यान इतना निश्चल और दृढ होता है कि उन्हें चलायमान करने में कोई भो देव या देवी समर्थ नहीं ।

इन्द्र की इस बात पर सुरूपा और प्रतिरूपा नाम की दो इन्द्रानियों को विश्वास नहीं हुआ । वे मेघरथ को ध्यान से विचलित करने के लिए वहां आई और अनुकूल तथा प्रतिकूल उपसर्ग करने लगी। रातभर उपसर्ग करने के बाद भी जब मेघरथ को अविचल देखा तो वह हार गई । अन्त में इन्द्रानियों ने अपना असली रूप प्रकट कर मेघरथ की धार्मिक दृढता की प्रशंसा करते हुए अपने अपराध कीं क्षमा मांगी तथा मेघरथ को प्रणाम कर अपने स्थान चली गई ।

एक बार तीर्थंकर भगवान धनरथ स्वामी का समवशरण हुआ । महाराजा मेघरथ ने अपने समस्त परिवार के साथ भगवान के दर्शन किये । और उपदेश श्रवण किया । उपदेश सुनकर मेघरथ को वैराग्य उत्पन्न हो गया । युवराज दृढरथ के साथ मेघरथ राजा ने दीक्षा ग्रहण की । साथ में सात सौ पुत्रों औ चार

हजार राजाओं ने भी दीक्षा ली एक लाख पूर्वतक विशुद्ध संयम का पालन कर पुन्योदये तीर्थंकर नामकर्म का उपार्जन कर अनशन पूर्वक मरकर सर्वार्थसिद्ध विमान में देवरूप से उत्पन्न हुए।

१६ भगवानश्री शान्तिनाथ का जन्म—

कुरुदेश में हस्तिनापुर नामका नगर था। वहां विश्वसेन नाम के राजा राज्य करते थे। उनकी रानी का नाम अचिरा था। मेघरथ देव का जीव सर्वार्थसिद्ध विमान से चवकर भाद्रपद कृष्णा सप्तमी के दिन भरणी नक्षत्र में जब चन्द्रमा का योग आया तब महारानी अचिरा देवी की कुक्षि में अवतरित हुए। उस समय महारानी अचिरादेवी ने चौदह महास्वप्न देखे। महारानी ने गर्भ धारण किया। गर्भ में भगवान के आने से सारे विश्वमें शान्ति व्याप्त हो गई। और महामारी, दुष्काल जैसी विपत्तियां शान्त हो गई।

गर्भकाल के पूर्ण होने पर जेष्ठ मास की कृष्ण पक्षकी त्रयोदशी के दिन भरणी नक्षत्र में महारानी ने पुण्य पुंज पुत्र को जन्म दिया। भगवान के जन्मते ही तीनोंलोक में प्रकाश फैल गया। इन्द्रों के आशन कम्पित हो उठे। दिशाकुमारियां आई अने इन्द्र भी आये और मेरुपर्वत पर बाल भगवान का जन्माभिषेक किया। महाराज विश्वसेन ने भी पुत्र का जन्मोत्सव मनाया। जब भगवान गर्भ में थे तब उनके प्रभाव से नगर की महामारी शान्त हो गई थी अतः बाल भगवान का नाम शान्तिनाथ रखा।

युवा होने पर यशोमती आदि अनेक राजकुमारियों के साथ उनका विवाह हुआ। राजकुमार शांतिनाथ जब पच्चीस हजार वर्ष के हुए तब उन्हें महाराज विश्वसेन ने राज्य भार सौंप कर स्वयं प्रव्रज्या ग्रहण की और वे आत्मसाधना करने लगे।

भगवान श्रीशान्तिनाथ की रानी यशोमती ने चक्रायुद्ध नामक पुत्र को जन्म दिया। कालान्तर में शान्तिनाथ के शस्त्रागार में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ। चक्ररत्न के बाद अन्य तेरह रत्न भी उत्पन्न हुए उनकी सहायता से महाराजा शान्तिनाथ ने भरत क्षेत्र के छह खण्डों को जीता। छहों खण्डों पर विजय प्राप्त करने में आठ सौ वर्ष लगे। देवों और इन्द्रों ने और मनुष्यों ने मिलकर शान्तिनाथ को चक्रवर्ती पद पर अधिष्ठित किया उन्हें इस अवसर्पिणी काल का पाचवां चक्रवर्ती घोषित किया।

आठ सौ वर्ष कम पच्चीस हजार वर्ष तक भगवान चक्रवर्ती पद पर आशीन रहें।

एक समय चक्रवर्ती शान्ति नाथ संसार की असारता का विचार कर रहे थे। इतने में लोकान्तिक देव भगवान के पास आये और प्रणाम कर कहने लगे—भगवान्! अब आप धर्मचक्र का प्रवर्तन करें। जनकल्यान के लिए चारित्र ग्रहण कर तीर्थ की स्थापना करें।

भगवान पूर्व से ही वैराग्य रंग में रंगे हुए थे। देवों की प्रेरणा पर उन्हों ने दीक्षा लेने का दृढ निश्चय किया। अपने पुत्र चक्रायुद्ध को राज्य भार देकर वे वर्षीदान देने लगे। वर्षीदान की समाप्ति पर इन्द्रादि देवों ने सागरदत्ता नाम की शिविका सजाई। शिविका पर आरूढ होकर जेष्ठ कृष्णा चतुर्दशी के दिन भरणी नक्षत्र में सहस्राम्र उद्यान में पधारे। वहां एक हजार राजाओं के साथ प्रव्रज्या ग्रहण की भावों की उच्चता से भगवान को मनः पर्ययज्ञान उत्पन्न हुआ। उस दिन भगवान के वेले का तप था। तीसरे दिन भगवान ने मन्दिरपुर के राजा सुमित्र के घर परमान्न से पारणा किया।

एक वर्ष तक भगवान छद्मस्थ अवस्था में विचरने के बाध पुनः हस्तिनापुर के सहस्राम्र उद्यान में पधारे। वहां पोष सुदि नवमी के दिन भरणी नक्षत्र में शुक्लध्यान की परमोच्चस्थिति में उन्हें केवलज्ञान और केवल दर्शन उत्पन्न हो गया। इन्द्रों ने केवल उत्सव मनाया। समवशरण की रचना की। भगवान ने समवशरण में विराजकर देशना दी। इस देशना से प्रभावित हो महाराजा चक्रायुध ने अपने पुत्र

कुलचन्द्र को राज देकर अन्य पैतीस राजाओं के साथ दीक्षा ग्रहण कर ३५ पैतीस ने गणधर पद प्राप्त किया। भगवान के शासन में गरुड शासन देवता और निर्वाणी शासन देवी हुई।

भगवान के शासन में बासट हजार ६२००० साधु, इकसट हजार छसो ६१६०० साध्वियां, पैतीस ३५ गणधर, आठ सौ ८०० चौदहपूर्वधर, ३००० तीन हजार अवधिज्ञानी, चार हजार ४००० मनः पर्यवज्ञानी, चार हजार तीनसो ४३०० केवली, छ हजार ६००० वैक्रियलब्धि वाले, दो हजार चारसो २४०० वादी २९०००० दोलाख नेउ हजार श्रावक, एवं ३९३००० तीन लाख तराणु हजार श्राविकाएँ हुई।

भगवान ने अपना निर्वाणकाल समीप जानकर सम्मेत शिखर पर पदार्पन किया वहां नौ सौ मुनियो के साथ अनशन ग्रहण कर एक मासके अन्त में निर्वाणपद प्राप्त किया। वह दिन जेष्ठवदि त्रयोदशी का था भगवान की कुल आयु एक लाख वर्ष की थी। उनका शरीर ४० धनुप उंचा था और वर्ण स्वर्ण जैसा भगवान श्रीधर्मनाथ के निर्वाण के बाद पौन पल्योपम न्यून तीन सागरोपम बीतने पर भगवान श्री शान्तिनाथ का निर्वाण हुआ।

१७ भगवान श्री कुंथुनाथ—

जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह के आवर्तदेश में खड्गी नाम की एक महान नगरी थी। वहां सिंहावह नाम का राजा राज्य करता था। संवराचार्य के आगमन पर वह उनके दर्शन के लिए गया। उनका उपदेश सुनकर उसे संसार के प्रति वैराग्य उत्पन्न हो गया और उसने अपने पुत्र को राज्यगद्दी पर स्थापित कर दीक्षा ग्रहण की। वे दीक्षा लेने के बाद उच्चकोटि का तप और मुनियों की सेवा करने लगे जिससे उन्होंने तीर्थंकर नाम कर्मका उपार्जन कर लिया। अन्तिम समय में समाधि पूर्वक अनशन के साथ कालकर के सर्वार्थसिद्ध विमान में तेतीस सागरोपम की आयु वालें अहमीन्द्र देव बने।

भारत वर्ष के हस्तिनापुर नाम के नगर में शूर नाम का महान प्रतापी राजा राज्य करता था। उनकी रानी का नाम श्री देवी था। तेतीस सागरोपम का आयु पूरी कर सिंहावह देव का जीव श्रावणवदी नवमी के दिन कृतिकानक्षत्र के योग में श्री देवी के गर्भ में उत्पन्न हुआ। उत्तम गर्भ के प्रभाव से महा रानी ने चौदह महास्वप्न देखे। गर्भकाल पूर्ण होने पर महारानी ने वैशाखवदी चतुर्दशी के शुभ दिन कृतिका नक्षत्र के योग में अजगर चिह्नसे चिह्नित कंचन वर्णवाले महान तेजस्वी पुत्र रत्न को जन्म दिया। भगवान के जन्मने पर इन्द्रादि देवों ने उत्सव मनाया। गर्भकाल के समय श्रीदेवी ने कुंथुनाम का रत्न-संचय देखा था। अतः जन्म के बाद बालक का नाम कुंथनाथ रखा गया। यौवन वय के प्राप्त होने पर कुंथनाथ का अनेक राजकुमारियों के साथ विवाह हुआ। जन्म से तेइस हजार साढेसातसौ वर्ष के बाद राजा बने और उतने ही वर्ष के बाद उनकी आयुधशाला में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ। उसी के बल से छसौ वर्ष में उन्होंने भरतक्षेत्र के छ खण्डो पर विजय प्राप्त किया। छ खण्डों पर विजय पाने के बाद आप विधि-पूर्वक चक्रवर्ती पद पर अधिष्ठित हुए तेइसहजार सातसौपचास वर्ष तक चक्रवर्ती पद पर रहने के बाद इन्हें वैराग्य भाव उत्पन्न हुआ। लोकान्तिक देवों ने आकर भगवान से दीक्षा के लिए निवेदन किया। देवों की प्रार्थना पर भगवान ने दीक्षा लेने का दृढ निश्चय कर लिया और एक वर्ष तक नियमानुसार वर्षीदान दिया। वर्षीदान देने के बाद वैशाख कृष्णा पंचमी के दिन अन्तिम प्रहर में कृतिका नक्षत्र के योग में एक हजार राजाओ के साथ दीक्षित हुए। उस दिन भगवान को परिणामों की उच्चता के कारण मनः पर्यव-ज्ञान उत्पन्न हुआ। तीसरे दिन षष्ट तप का पारणा. चक्रपुर के राजा व्याघ्रसिंह के घर परमान्न से किया। देवों ने पांच दिव्य प्रकट किये।

सोलह्वर्ष तक छद्मस्थ अवस्था में विचरण कर भगवान हस्तिनापुर के सहस्राम्र उद्यान में पधारे और तिलकवृक्ष के नीचे वेले का तप कर ध्यान करने लगे । शुक्लध्यान की परमोच्च स्थिति में भगवान को केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ । वह दिन था चैत्र शुक्ला तृतीया । केवलज्ञान के पश्चात् भगवान ने समवशरण में देशना दी । उस समय स्वयं भू आदि पैतिस आत्माओं ने भगवान के पास प्रव्रज्या ग्रहण की और गणधर पदप्राप्त किया ।

भगवान के शासन में ६०००० साठहजार साधु थे ६०६०० साठ हजार छ सो साध्वियां थो, ६७० छ सो सीतेर चौदह पूर्वधारी, २५०० पचीससो अवधज्ञानी, ३३४० तेतीससो चालीस मनः पर्ययज्ञानी, ३२००० बत्रीस हजार केवलज्ञानी, ५१०० एकावनसो वैक्रियलब्धि धरने वाले, २००० दो हजार वादी, १७९००० एक लाख उगण्यासी हजार श्रावक और ३८१००० तीन लाख एकासी हजार श्राविकाएँ हुई । आपके शासनकाल में गन्धर्व नामका यक्ष और बला नामकी शासन देवी हुई ।

केवलज्ञान के पश्चात् २३७३४ वर्ष तक भव्य प्राणियों को प्रतिबोध देते हुए भगवान विचरते रहें । निर्वाणकाल समीप जानकर भगवान एक हजार मुनियों के साथ समेतशिखर पर पधारे । वहां एक मासका अनशन कर वैशाखवदी प्रतिपदा केंदिन कृतिका नक्षत्र के योग में भगवान ने एकहजार मुनियों के साथ निर्वाण प्राप्त किया । भगवान की कुल आयु ९५००० वर्ष की थी । उनका शरीर ३५ धनुष उँचा था । भगवान श्रीशान्तिनाथ के निर्वाण के बाद आधा पल्योपम बीतने पर भगवान. श्रीकुन्थनाथ का निर्वाण हुआ ।

१८ भगवान श्री अरनाथ

जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह में सुसीमा नामकी नगरी थी । वहा धनपति नॉम के प्रजावत्सल महाराजा राज्य करते थे ! वे राज्य का संचालन करते हुए भी जिन धर्म का हृदय से सदा शुद्ध पालन करते थे । संवर नामके आचार्य महाराज का उपदेश सुनकर उन्हें वैराग्य उत्पन्न हो गया । उन्हों ने अपने पुत्र को राज्य गद्दी पर स्थापित करके संवराचार्य के पास दीक्षा धारण कर ली । प्रव्रजित होकर धनपतिमुनि महान कठोर तप करने लगे । वीस स्थानक की शुद्ध भावनापूर्वक आराधना करते हुए उन्होंने तीर्थङ्कर नामकर्म का उपार्जन किया । अनेक वर्ष तक शुद्ध भावना से संयम का पालन कर समाधि पूर्वक उन्हों ने देह त्याग किया । और ग्रैवेयक विमान में महर्द्धिक देव बने ।

वहाँ से चवकर धनपतिमुनि का जीव हस्तिनापुर के प्रतापी राजा सुदर्शन की कुक्षि में फाल्गुनशुक्ला द्वितीया के दिन चन्द्र रेवती नक्षत्र के योग में उत्पन्न हुआ । उस रात्रि में महारानीं ने चौदह महास्वप्न देखे । इन्द्रो ने गर्भ कल्याण महोत्सव किया ।

गर्भकाल के पूर्ण होने पर मार्गशीर्ष शुक्ला दशमी के दिन रेवती नक्षत्र के शुभ योगमें नन्दावर्त लक्षण से युक्त स्वर्णवर्णी पुत्र को महारानी ने जन्म दिया । इन्द्रादिदेवों ने भगवान का जन्मोत्सव किया, गर्भकाल में महादेबी ने आरा– चक्र देखा था अतः बालक का नाम अरहनाथ रखा । शैशव अवस्था को पारकर भगवान ने युवावस्थामें प्रवेश किया । भगवान का ६४०००, चौसठहजार सुन्दर राजकन्याओ के साथ विवाह हुआ । २१००० वर्ष तक युवराज अवस्था में रहने के बाद उनकी आयुधशाला में चक्र रत्न उत्पन्न हुआ ।

चक्ररत्न की सहायता से भगवान ने भरतक्षेत्र के छ खण्ड पर विजय प्राप्त करने पर आप चक्रवर्ती पद पर अधिष्ठित हुए । २१०००हजार वर्ष तक चक्रवर्ती पद पर रहने के बाद आप को वैराग्य उत्पन्न हो गया । उस समय लोकान्तिक देव भगवान के पास आये और वन्दना कर भगवान से प्रार्थना करने लगे–हे प्रभु ! भव्यजीवो के कल्याणार्थ अब आप धर्मचक्र का प्रवर्तन करें ।

देवों की इस प्रार्थना के बाद भगवान ने दीक्षा लेने का दृढ निश्चय किया। उन्होने वर्षीदान देना प्रारंभ कर दिया। एक वर्षतक सुवर्णदान देकर माघ शुक्ला ११ के दिन रेवती नक्षत्र में छट का तप कर सहस्राम्र उद्यान में मनुष्य और देवों के विशाल समूह के बीच दीक्षा ग्रहण की। भावों की उत्कृष्टता के कारण आपको उसी समय मनःपर्यवज्ञान उत्पन्न हो गया। इन्द्रों ने भगवान का दीक्षा महोत्सव किया। आपके साथ एक हजार राजाओं ने भी दीक्षा ग्रहण की।

दीक्षा के तीसरे दिन छठ का पारणा राजगृह के राजा अपराजित के घर परमान्नसे पारणा किया। देवों ने इस अवसर पर पांच दिव्य प्रकट किए।

तीन वर्ष तक छद्मस्त अवस्था में रहने के वाद ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए आप पुनः हस्तिनापुर के सहस्राम्र उद्यान में पधारे। कार्तिक शुक्ला द्वादशी के दिन रेवती नक्षत्र में चन्द्र के योग में आम्रवृक्ष के नीचे ध्यान करते हुए भगवान को केवलज्ञान एवं केवल दर्शन उत्पन्न हो गया। देवों ने भगवान का केवलज्ञान उत्सव मनाया। समवशरण की रचना हुई। भगवान ने उपदेश दिया। भगवान का उपदेश श्रवण कर कुंभ आदि ३३ पुरुषों ने दीक्षा धारण की। और तेतीस ने ही गणधर पद प्राप्त किया। चार तीर्थ की स्थापना की। प्रभु ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए भव्यों का कल्याण करने लगे।

भगवान के विचरण काल में ५०००० पचास हजार साधु ६०००० साठ हजार साध्वियाँ, ६१० छ सो दश चौदहपूर्वधर, २६०० दो हजार छ सो अवधज्ञानी, २५५१ दो हजार पाच सो एकावन मनः पर्ययज्ञानी, २८०० दो हजार आठ सो केवली, ७४०० सात हजार चार सो वैक्रियलब्धि धारी, १६०० एक हजार छ सो वादी, १८४००० एक लाख चौरासी हजार श्रावक, एवं ३७२००० तीन लाख बहोतेर हजार श्राविकाएँ हुई।

निर्वाण का समय समीप जान भगवान एक हजार मुनियों के साथ समेतशिखर पर पधारे। वहां एक मास का अनशन कर हजार मुनियों के साथ मार्गशीर्ष शुक्ला दशमी के दिन रेवती नक्षत्र के योग में निर्वाण प्राप्त किया। इन्द्रादि देवों ने भगवान का निर्वाणोत्सव किया।

भगवान की कुल आयु ८४ हजार वर्ष की थी शरीर की उंचाई ३० धनुप की थी श्रीकुन्थुनाथ भगवान के निर्वाण के बाद हजार करोड़ वर्ष कम पल्योपम का चौथा अंश बीतने पर श्रीअरनाथ भगवान का निर्वाण हुआ।

१९ श्री मल्ली नाथ भगवान—

जम्बूद्वीप के महाविदेह क्षेत्र में सलीलावर्ती नाम का विजय था। इस विजय की राजधानी थी बीतशोका नगरी। यहां बल नामके राजा राज्य करते थे। वे न्यायप्रिय एवं प्रजा पालक थे। उनकी रानी का नाम धारिणी था। महारानी धारिणी ने एक सुन्दर पुत्र रत्न को जन्म दिया. उसका नाम महाबल रखा गया। महाबल युवा हुए और उनका पांच सौ राजकुमारी के साथ विवाह हुआ। युवराज महाबल के छह मित्र थे उनके नाम क्रमशः अचल, धरण, पूरण, वसु, वैश्रमण और अभिचन्द थे। ये छहों राजकुमार थे और महाबल के अनुगामी थे। उनके सुख दुःख में साथ देने वाले थे। बचपन से ही वे साथ में रहते थे।

एक बार धर्म घोप नाम के स्थविर अणगार अपने शिष्य परिवार के साथ वीतशोका नगरी में पधारे। महाराजा बल और नगरी की जनता उनका उपदेश सुनने के लिए गई। महाराज बल को स्थविर के उपदेश से वैराग्य उत्पन्न हो गया। और उन्होंने महाबल को राज्य पर स्थापित करके दीक्षा अंगीकार

करली। कुछ समय के बाद महाराज बल को भी एक पुत्र रत्न हुआ जिसका नाम बलभद्र रखा था। बलभद्र युवा हुआ और उसका अनेक सुन्दर राजकुमारियों के साथ विवाह कर दिया गया।

कुछ समय के बाद फिर धर्मघोष मुनि का इस नगरी में आगमन हुआ। उनका उपदेश सुनकर महाराजा महाबल के मन में संसार के प्रति विरक्ति हो गई उन्होंने अपने मित्रों से संयम धारण करने की भावना प्रकट की। सभी मित्रों ने महाबल की मनो कामना की भूरि भूरि प्रशंसा करते हुए स्वयं भी दीक्षा धारण करने का निश्चय किया। मित्रों का सहयोग पाकर महाबल का उत्साह बहूत बढ गया। उन्होंने अपने उत्तराधिकारि सुपुत्र बलभद्र का राजसिंहासन पर अभिषेक किया। राजा बनने के बाद बलभद्र ने राजोचित समारोह के साथ अपने पिता की दीक्षा आ उत्सव मनाया। महाबल ने अपने छहों मित्रों के साथ धर्मघोप स्थविर के समीप दीक्षा धारण की और संयम की उत्कृष्ट भावना से आराधना करते हुए विचरने लगे। जिस प्रकार राज्यकार्य में छहों मित्रों ने महाबल को साथ दिया था उसी प्रकार संयम साधना में भी देने लगे।

एक बार सभी ने मिलकर यह निश्चय किया कि हम सब मिलकर एक साथ तप कि आराधना करेंगे। और साथ ही में पारणा भी करेंगे। ईसी संकल्प के अनुसार सातों मुनिराजो ने छठ छठ का तप प्रारंभ कर दिया। एक छठ की तपस्या में महाबल मुनि ने अपने मित्र मुनियों से भी अधिक तप करने का निश्चय किया। तदनुसार छठ का पारणा न करके अष्टमभक्त का प्रत्याख्यान कर लिया किन्तु यह बात मित्रों से गुप्त रक्खी। छठ की समाप्ति पर अन्यमुनियों ने पारणा करने के भाव प्रकट किये तो महाबलमुनि ने भी यही भाव व्यक्त किया। जब अन्यमुनियों ने पारणा कर लिया तो वो कहने लगे कि में तेला करूगा। जब छहों अनगार चतुर्थ भक्त (उपवास) करते तो वे महाबल अनगार षष्ठमभक्त ग्रहण करते। इस प्रकार अपने साथी मुनियों से छिपाकर कपट पूर्वक महाबल मुनि अधिक तप करते थे। इसी कपट के फलस्वरूप उन्हें स्त्री वेद का बन्ध हुआ।

अरिहन्त वत्सलता १, सिद्ध वत्सलता २, प्रवचनवत्सलता ३, गुरुवत्सलता ४, स्थविरवत्सलता ५, बहुश्रुतवत्सलता ६, तपस्वीवत्सलता ७, अभीक्ष्णज्ञानोपयोग ८, दर्शनविशुद्धि ९, तत्त्वार्थविनय १०, आवश्यक (प्रतिक्रमण) ११, शीलव्रतानतिचार १२, क्षणवलसंवेग १३, तप १४, त्याग १५, वैयावृत्य १६, समाधि—शाताउपजाना १७, अपूर्वज्ञानग्रहण १८, श्रुतभक्ति १९, प्रवचनप्रभावना २० इन वीस स्थान कों में वसनेवाला ही स्थानकवासी कहलाता है, इसी से तीर्थङ्कर नाम कर्म उपार्जन करते हैं इसके अतिरिक्त महाबल मुनि ने उत्कृष्ट भावना से अनेक प्रकार की कठोर तपस्या प्रारंभ करदी जिसके फलस्वरूप उन्होंने तीर्थंकर नाम कर्म का बन्ध कर लिया। बारह प्रकार की भिक्षु प्रतिमा की सम्पूर्ण आराधना कर सिंहनिष्क्रीडित, लघुसिंहनिष्क्रीडित एवं महासिंहनिष्क्रीत तप किये।

अनेक प्रकार के अन्य भी तप करने के कारण उनका शरीर अन्यन्त कृष हो गया। शरीर का रक्त और मांस सूख गया। शरीर हड्डियों का ढाचामात्र रह गया। अन्त में अपना आयुष्य अल्प रहा जानकर सातो मुनिवर स्थविर की आज्ञा प्राप्तकर 'चारु' नामक वक्षस्कार पर्वत पर आरूढ हुए। वहां दो मास की संलेखना करके अर्थात् एक सौ बीस भक्त का अनशन कर चौरासी लाख वर्षों तक संयम पालन करके, चौरासी लाख पूर्व का आयुष्य भोग कर जयन्त नामक तीसरे अनुत्तर विमान में देव पर्याय से उत्पन्न हुए। इन में महाबलमुनि ने ३२ सागरोपम की और शेष छह मुनिवरों ने कुछ कम ३२ सागरोपम की उत्कृष्ट आयु प्राप्त की। महाबल के सिवाय छह देव, देवायु पूर्ण होने पर भारत वर्ष में विशुद्ध माता—पिता के वंशवाले राजकुलों में अलग अलग कुमार के रूप में उत्पन्न हुए। वे इस प्रकार है—

१ पहला मित्र 'अचल' प्रतिबुद्धि नामक इक्ष्वाकु वंश का अथवा इक्ष्वाकु–कोशल वंश का राजा हुआ। उनकी राजधानी अयोध्या थी।

२–दूसरा मित्र 'धरण' चन्द्रच्छाय नाम से अंग देश का राजा हुआ। जिसकी राजधानी चंपा थी।

३–तीहरा मित्र 'पूरण' रुक्मि नामक कुणाल देशका राजा हुआ जिसकी राजधानी श्रावस्तीनगरी थी।

४–चौथा मित्र वसु, शंख नामक काशी देश का राजा हुआ जिसकी राजधानी वाणारसी थी।

५–पाचवाँ मित्र वैश्रमण अदीणशत्रु नाम धारणकर कुरुदेश का राजा हुआ जिसकी राजधानी हस्तिनापुर थी।

६–छठा मित्र अभियचंद, जितशत्रु नामका पांचाल देश का राजा हुआ जिसकी राजधानी कांपिल्यपुर थी।।

भगवान श्री मल्ली कुमारी का जन्म—

महाबलदेव तीन ज्ञान से युक्त होकर जब समस्त ग्रह उच्च स्थान में रहे हुए थे, सभी दिशाएं सौम्य थी, सुगन्ध, मंद और शीतलवायु दक्षिण की ओर बह रहा था और सर्वत्र हर्ष का वातावरण छाया हुवा था ऐसी सुमंगल रात्रि के समय अश्विनी नक्षत्र के योग में हेमन्त ऋतु के चौथे मास आठवें पक्ष अर्थात् फाल्गुण शुक्ला चतुर्थी की रात्रि में बत्तीस सागरोपम की स्थिति को पूर्णकर जयन्तनामक विमान से च्युत होकर इसी जम्बू द्वीप में भरत क्षेत्र की मिथिला नामक राजधानी में कुंभ राजा की महारानी प्रभावती देवी की कोख में अवतरित हुए। उस रात्रि में प्रभावती देवी ने गज, ऋषभ, सिंह, लक्ष्मीदेवी, पुष्पमाला, चन्द्र, सूर्य, ध्वजा कुम्भ, पद्मयुक्त सरोवर, क्षीर सागर, देवविमांन, रत्नराशि एवं धूमरहितअग्नि ये चौदह महास्वप्न देखे। महारानी गर्भवती हुई।

तीन मास के पूर्ण होने पर महारानी प्रभावती को पंचरंगे पुष्पों से अच्छादित शय्या पर सोने का एवं विविध प्रकार के पुष्पों एवं पत्तों से गूथा हुआ 'श्रीदामकाण्ड' (फूलों की सुन्दर माला) सूंघने का दोहद उत्पन्न हुआ। देवताओं ने महारानी के इस दोहद को पूर्ण किया।

प्रभावती देवी ने नौ मास और साढे सात दिवस के पूर्ण होने पर मार्ग शीर्ष शुक्ला एकादशी के दिन मध्यरात्री में अश्विनी नक्षत्र का चंद्रमा के साथ योग होनेपर उन्नीसवें तीर्थंकर को जन्म दिया। इन्द्रादि देवों एवं महाराजा कुम्भ ने पुत्री जन्म का महोत्सव किया। व दोहद के अनुसार बालिका का नाम श्रीमल्लीकुमारी रखा गया।

भगवती मल्ली का बाल्यकाल सुख समृद्धि और वैभव के साथ बीतने लगा। भगवती मल्लीकुमारी अत्यन्त रूपवती थी। उसके रूप यौवन के सामने अप्सराएँ भी लज्जित होती थी उसके लम्बे और काले केश सुन्दर आंखें और बिम्बफल जैसे लाल अधर थे। वह कुमारी जब युवा हों गई। उन्हें जन्म से अवधिज्ञान था और उसज्ञान से उन्होंने अपने मित्रों की उत्पत्ति तथा राज्य प्राप्ति आदि बाते जान ली थीं। उन्हें अपने भावी का पता था आने वाले संकट से बचने के लिए उन्होंने अभी से प्रयोग प्रारंभ कर दिया।

भगवतीं मल्लीकुमारी ने अपने सेवकों को अशोक वाटिका में एक विशाल मोहनगृह (मोह उत्पन्नकरने वाला अतिशय रमणीय घर) बनाने की आज्ञा दी। साथ में यह भी आदेश दिया कि "यह मोहनगृह अनेक स्तम्भों वाला हो। उस मोहनगृह के मध्य भाग में छह गर्भगृह (कमरे) बनाओ। उस छहों गर्भ गृहों के बीच में एक जालगृह जिसके चारों ओर जाली लगी हो और जिसके भीतर की वस्तु बाहर वाले देख सकते हो ऐसा घर बनाओ। उस झालगृह के मध्य में एक मणिमय पीठिका बनाओ तथा उस मणिमयपीठिका पर मेरी एक सुवर्ण की सुन्दर प्रतिमा बनवाओ उस प्रतिमा का मस्तक ढक्कन वाला होना

चाहिए । भगवती मल्लीकुमारी की आज्ञा पाकर शिल्पकारों ने मोहनगृह बनाया और उसमें मल्ली कुमारी की सुन्दर प्रतिमा बनाई ।

अब मल्ली कुमारी प्रतिदिन अपने भोजन का एक कवल प्रतिमा के मस्तक का ढक्कन खोलकर उस में डालती थी और पुनः उसे ढक देती थी। अन्न के सड़ने से उस प्रतिमा के भीतर अत्यन्त दुसह्य दुर्गन्ध पैदा हो गई थी । मल्लीकमारी का प्रति दिन यही काम चलता रहा ।

उस समय कोशल जनपद में साकेत नाम का नगर था । वहां इक्ष्वाकु वंश के प्रतिबुद्धि नाम के राजा राज्य करते थे । उनकी रानी का नाम पद्मावती था। राजा के प्रधान मन्त्री का नाम सुबुद्धि था । वह राजनीति में कुशल एवं राज्य का शुभचिन्तक था ।

एक बार पद्मावती देवी का नाग पूजन का उत्सव आया । महारानी पद्मावती ने राजा प्रतिबुद्धि से निवेदन किया—स्वामी ? कल नागपूजा का दिन है । आप की इच्छा से उसे बड़े धामधूम से मनाना चाहती हूं । उस में आप की उपस्थिति भी अनिवार्य है ।

राजा ने पद्मावती देवी की प्रार्थना स्वीकार की । राजा ने अपने सेवकों को बुलाकर कहा—कल मैरे साथ महारानी पद्मावती नागपूजा करेगी अतः जल और स्थल में उत्पन्न होने वाले पांच वर्ण के पुष्पों को विविध प्रकार से सजाकर एक विशाल पुष्प मण्डप बनाओ । उस में फूलों के अनेक प्रकार के हंस, मृग, मियूर, क्रौंच आदि पक्षी एवं वन लता आदि के विविधप्रकार—चित्रों को बनाया जाए । उस पुष्प मण्डप के बीच सुगन्धित पदार्थ रखो एवं उसमें श्रीदामकाण्ड (पुष्पमालाएं) लटकाओ ।" सेवकों ने माली से जाकरा महाराजा की उक्त आज्ञा कहीं । मालियों ने महाराजा की आज्ञानुसार वैसा ही किया ।

प्रातः महाराजा एवं महारानी ने स्नान किया एवं सुन्दर वस्त्रालंकारों से विभूषित हो सुबुद्धि प्रधान के साथ हाथी पर बैठकर नागगृह आये ।वहां पूजा आदि से निवृत्त होकर वे पुष्प मण्डल में आये और श्रीदामकाण्ड की अपूर्व रचना का निरीक्षण करने लगे । कलात्मक पुष्पमण्डप की रचना को देख कर महाराजा अत्यन्त आश्चर्य चकित हुए । अमात्य को बुलाकर महाराज प्रतिबुद्धि कहने लगे—मंत्री ! तुम मेरे मंत्री और दूत के रूप में अनेक ग्राम नगरों में घूमे हो । राजा महाराजाओं के महलों में भी गये हो । कहो, आज तुमने पद्मावतीदेवी का जैसा श्रीदामकाण्ड देखा वैसा अन्यत्र भी कहीं देखा है ?

सुबुद्धि बोला—स्वामी ! एक दिन आपके दूत के रूप में मैं मिथिला नगरी गया था । वहां विदेह-राजा कुम्भ की पुत्री मल्लीकुमारी की जन्मगांठ के महोत्सव के समय मैंने एक दिव्य श्रीदामकाण्ड देखा था । उस दिन मैने पहले पहल जो श्रीदामकाण्ड देखा। पद्मावती देवी का यह श्रीदामकाण्ड उसके लाखवें भाग की भी बराबरी नहीं कर सकता ।

महाराज ने पूछा— "वह विदेह राजकन्या मल्लीकुमारी रूप में कैसी है ?

मंत्री ने कहा—स्वामी ! विदेहराजा की श्रेष्ठ कन्या मल्लीकुमारी सुप्रतिष्ठित कूर्मोन्नत (कछुए के समान उन्नत) एवं सुन्दर चरणवाली है । वह अनुपम सुन्दरी है । उसका लावन्य अवर्णनीय है । तीनों लोक में भी उसके सौंदर्य की तुलना में अन्य कोई स्त्री नहीं है ।

मंत्री के मुख से मल्लीकुमारी के रूप की प्रशंसा सुनकर महाराजा प्रतिबुद्ध बड़े प्रसन्न हुए और उसी क्षण दूत को बुलाकर कहने लगे—

"तुम मिथिला राजधानी जाओ । वहाँ कुम्भराजा की पुत्री एवं प्रभावती देवी की आत्मजा और विदेह की श्रेष्ठतम राजकन्या मल्लीकुमारी की मेरी पत्नी के रूप में मंगनी करो । यदि इसके लिए मेरा [illegible] राज्य भी देना पड़े तो स्वीकार कर लेना ।" महाराजा की आज्ञा प्राप्त कर दूत कुछ चुने हुए [illegible] आरूढ हुआ और विदेह जनपद की राजधानी मिथिला की ओर चल पड़ा ।

शीघ्र ही वह मिथिला पहुचा । उसने महाराजा कुम्भ के समक्ष अपने महाराजा प्रतिबुद्धि के लिए मल्ली-कुमारी की मंगनी का पत्र पेश किया

अंगदेश में चंपा नामकी नगरी थी। वहां चन्द्रच्छाय नामका राजा राज्य करता था । उस नगरी में अर्हन्नक आदि बहुत से नौ वणिक् (नौका से व्यापार करनेवाले) रहते थे । वे बडे ऋद्धि सम्पन्न और धनाढ्य थे । उनमें अर्हन्नक नामक श्रमणोपासक भी था, वह जीव, अजीव आदि नव तत्त्वों का ज्ञाता था ।

एक बार अर्हन्नक श्रमणोपासक ने अपने साथियों से विचार विमर्ष किया कि हमें चार प्रकार की वस्तुएं (गणिम–गिन गिनके वेचने योग्य नारियल आदि, धरीम तोलकर वेचने योग्य वस्तु घृत तेल आदि, मेय=मापकर वेचने योग्य अनाज आदि, और परिच्छेद्य=काट कर वेचने योग्य सुवर्ण आदि) जहाज में भरकर समुद्र के रास्ते विदेश में प्रवास करना चाहिए । अर्हन्नक श्रावक की यह बात सभीने स्वीकार की बहुमूल्य वस्तुएं गाडियों में भरदी गई । खाने पीने की चीजों का संग्रह भी गाडियों में यथास्थान रख दिया गया । शुभतिथि और शुभ मुहूर्त में अपने ज्ञातिजनों व मित्रों को भोजन कराया और उनसे विदा ले वे गम्भीर नामक बन्दरगाह पर पहुचे । वहां पूर्व से ही सज्जित जहाज में उन्होने सामान भर दिया । अपने परिजनो का मंगलमय आशिर्वाद प्राप्त कर वे यात्रा के लिए चले ।

सो योजन से भी अधिक दूरी पर पहुँचे तो अचानक समुद्र में भयंकर तुफान आया । आकाश में काले बादल छा गये । बिजली के साथ मेघ भयानक गर्जना करने लगा । देखते देखते जहाज उछलने लगा । गेंद की तरह उपर नीचे जाने लगा । इतने में अट्टहास करता हुआ एक पिशाच दिखाई दिया । ताड के समान उसकी लम्बी जांघे थी और उसकी भूजाएं आकाश तक पहुंची हुई थी । उसका तन काजल की तरह काला रंग जैसा था । हाथी की तरह बाहर निकले हुए लम्बे-लम्बे दांत थे । सांप की तरह दो लम्बी जीभे बिजली के समान लपके मार रही थी । उनकी भृकुटी वक्र और अत्यन्त डरावनी थी । उसके हाथ में बिजली की तरह चमकती हुई तलवार थी । गले में नरमुण्ड की माला थी । भयानक विषैले जन्तु उसके शरीर के अवयवों पर इधर उधर रेंगते हुए दृष्टिगोचर हो रहे थे । वह पिशाच जहाज पर पहुँचा । उसका एकपैर जहाज पर था और एक पैर आकाश में अधर लटक रहा था ।

उसके भयानक रूप को देखकर और हृदय को भयभीत करने वाला अट्टहास सुनकर नौ वणिक् घबरा उठे । कोई शिव को याद करने लगा तो कोई भगवान विष्णु को । सभी अपने अपने इष्ट देवों से इस भयंकर संकट से परित्राण पाने के लिए प्रार्थना करने लगे और मनौतियां मनाने लगे ।

अर्हन्नक श्रमणोपासक भयानक पिशाच को देख अपने स्थान से खडा हुआ । उस पिशाच के भयानक रूप से जराभी भयभीत नहीं हुआ । वह एकान्त स्थान में पहुंचा जगह को साफ कर आसन विछाया और हाथ जोड़कर बोला—

हे अरिहंत भगवन्त यावत् सिद्धि को प्राप्त प्रभु को नमस्कार हो । यदि मैं इस उपद्रव से मुक्त हो जाऊं तो मैं अपना कायोत्सर्ग पूरा करुंगा यदि संकट से मुक्त न होऊं तो मैं तब तक अपना कायोत्सर्ग जारी रखूंगा । इस प्रकार सर्वसावद्ययोग (पापमय योग) का परित्याग कर भगवान का ध्यान करने लगा ।

ध्यानस्थ श्रमणोपासक अरहन्नक को देख पिशाच बोला–अकाल में मोत की इच्छा करने वाले अरहन्नक ! यदि तुम अपनी और अपने साथिदारो की भलाई चाहते हो, अपने प्राणों का रक्षण चाहते हो तो तुम अपने धर्म का तथा–प्रत्याख्यान का त्याग करो । इसी में तुम्हारी भलाई है । यदि तुमने धर्म श्रद्धा का, ग्रहण किये गये व्रतों का त्याग नहीं किया तो इस नंगी तलवार से तुम्हारे शरीर के

टुकडे–टुकडे कर दूगा । इतना ही नहीं सारे जहाज को अपनी दो अंगुलियों पर उठाकर समुद्र में डूबो दुंगा । और तुम लोग अपने माल सामान के साथ समुद्र के रसातल में सदा के लिए सो जावोगे ।

बार बार डराने धमकाने पर भी अरहन्नक अपने ध्यान में अविचल था । इन धमकियों का उसपर तनिक भी असर नहीं हुआ । नौ वणिक् भी अरहन्नग से कहने लगे–अरहन्नग ! तुम इस पिशाच की बात मान जाओ । इसी में हम सर्व की भलाई है । वरना यह पिशाच हमारे जहाज को समुद्र में डूबो देगा और हम सदा के लिए अपने जीवन से हाथ धो बैठेंगे ।" अहरहन्नक पर नौ वणिकों की इस बात का कोई असर नहीं पड़ा । वह तो अपने ध्यान में इतना लवलीन बना था कि बाहर क्या हो रहा है उसका उसे कोई पता भी नहीं था । आत्मा की अमरता और देह की भिन्नता पर वह निरन्तर विचार करता था । संसार के ये सर्व पदार्थ जीवात्मा के लिए सर्व सुलभ है । किन्तु धर्म का मिलना हि दुर्लभ है । बाह्यवस्तुओं के प्रलोभन में धर्म का परित्याग नहीं किया जा सकता ।

अर्हन्नक श्रमणोपासक की अविचल धर्मश्रद्धा के समक्ष पिशाच पराजित हो गया । उसका भय या त्रास अरहन्नक को धर्म से च्युत नहीं कर सका । उसने अपने पिशाच रूप को समेट लिया और उसके स्थान पर एक दिव्य रूप में प्रकट हुआ । समुद्र का तुफान शान्त हो गया । जहाज पूर्ववत् स्थिर हो गया और गंतव्य मार्ग की ओर बढने लगा । अकाश के बीच खड़ा हो देव मधुर स्वर में बोला–

श्रमणोपासक अरहन्नक ! तुम धन्य हो ! तुम्हारी अविचल धर्म श्रद्धा के सामने मेरा यह मस्तक नत है । मैं सौधर्म देवलोक का एक देव हूँ । सौधर्मेन्द्रजी ने देवसभा में तुम्हारी अत्यंत प्रशंसा करते हुए देवों से कहा–चंपा नगरी का निवासी अर्हन्नक श्रमणोपासक को कोई भी देव दानव या मानव उसे धर्म से च्युत नहीं कर सकता उसे विचलित नहीं कर सकता ।" शक्रेन्द्र की इस बात पर मुझे विश्वास नहीं हुआ । मेरे मन में विचार आया–मनुष्य तो हाडपिंजर का बना हुआ पुतला है । दुःख कातर (कायर) है । वह धर्म तो क्या प्रिय से प्रिय वस्तु का भी त्याग कर सकता है यदि सौधर्मेन्द्र की बात सच है तो मुझे स्वयं चलकर उसकी परीक्षा करनी चाहिए ।" यह सोच मैं यहां तुम्हारी परीक्षा करने आया । भयानक पिशाच का रूप बनाकर तुम्हें धर्म श्रद्धा से च्युत करने का भरसक प्रयत्न किया । किन्तु तुम्हारी अविचल धर्म श्रद्धा के सामने मेरे सब प्रयत्न विफल हो गये । जैसी इन्द्र ने तुम्हारी प्रशंसा की थी तुम्हें उससे भी बढकर धर्म में दृढ पाया । तुम्हारा जीवन सचमुच धन्य है । जिन धर्म को निर्ग्रन्थ प्रवचन को तुमने अपने जीवन में उतारा है मेरे अपराध की आप क्षमा करें । मैंने आपको बड़ा कष्ट दिया । भयभीत किया । आपके साथ किये गये अनुचित व्यवहार के लिए मैं लज्जित हूँ । आप महान हैं और मैं अधम हूँ । यह कहकर अरहन्नक श्रमणोपासक को देव ने प्रणाम किया और एक दिव्य कुण्डल युगल भेंट किया । देव वहां से चला गया ।

समस्त उपद्रव दूर हुआ जान कर अरहन्नक ने कार्योत्सर्ग को पाला । सब लोगों ने अरहन्न की भूरि भूरि प्रशंसा की । जहाज चलते चलते गम्भीर नामक बन्दरगाह पर पहुंचा । जहाज में से सामान उतारा गया और उसे गाडियों में भरा । सामान भर कर नौ बणिक मिथिला की ओर चल पड़े ।

मिथिला पहुँचने पर अरहन्नक श्रावक ने महाराज कुम्भ की भेंट ली और देव प्रदत्त दिव्य कुण्डल युगल को उपहार के रूप में महाराजा को समर्पित किया । महाराजा कुम्भ ने अपनी मल्ली कुमारी को बुलाकर उसे दिव्य कुण्डल युगल पहना दिये महाराजा ने अरहन्नकादि व्यापारियों का बहुत आदर सत्कार किया और उनका राज्य महसूल माफ कर दिया । तथा रहने के लिए एक बड़ा आवास दे दिया । वहां कुछ दिन व्यापार करने के बाद उन्होंने अपने जहाजों में चार प्रकार का किराणा भर कर समुद्रमार्ग से चम्पा नगरी की ओर प्रस्थान कर दिया ।

चम्पा नगरी में पहुँचने पर उन्होंने बहुमूल्य कुण्डल युगल वहां के राजा चन्द्रच्छाय को भेंट किये । अंगराज चन्द्रच्छाय ने भेंट को स्वीकार कर अर्हन्नकादि श्रावकों से पूछा—तुम लोग अनेकानेक ग्राम नगरों में घूमते हो । बार बार लवण समुद्र की यात्रा भी करते हो । बताओ ऐसा कोई आश्चर्य है जिसे तुमने पहलीबार देखा हो ?

अर्हन्नक श्रमणोपासक बोला "स्वामी ! इस बार हम लोग व्यापारार्थ मिथिला नगरी गये थे । वहां हम लोगों ने कुम्भराजा को दिव्य कुण्डल युगल की भेंट दी । महाराजा कुम्भ ने अपनी सुपुत्री मल्ली कुमारी को बुलाकर वे दिव्यकुण्डल उसे पहना दिये । मल्लीकुमारी को हमने वहां एक आश्चर्य के रूप में देखा । विदेह की श्रेष्ठ कन्या मल्लीकुमरी का जैसा रूप और लावण्य है वैसा रूप देवकन्याओं को भी प्राप्त नहीं है । महाराजा चन्द्रच्छाय ने अरहन्नकादि व्यापारियों का सत्कार सम्मान कर उन्हें विदा कर दिया।

व्यापारियों के मुख से मल्ली कुमारी के रूप एवं सौंदर्य की प्रशंसा सुन कर महाराजा चन्द्रच्छाय उस पर अनुरक्त हो गये । दूत को बुलाकर कहा तुम मिथिला नगरी जाओ और वहां के महाराजा कुंभ से मल्ली कुमारी की मेरी भार्या के रूप में याचना करो । महाराज का सन्देश लेकर दूत मिथिला पहुँचा ।

उस समय कुनाल जनपद की राजधानी श्राववस्ती थी । वहां रुक्मि नाम के राजा राज्य करते थे । उसकी रानी का नाम धारिणी था । उसके रूप और लावण्य में अद्वितीय सुबाहु नाम की एक कन्या थी । उसके हाथ पैर अत्यन्त कोमल थे, एक बार सुबाहु कुमारी का चातुर्मासिक स्नान का उत्सव आया इस अवसर पर महाराज के सेवकों ने पांचवर्णों के पुष्पों का एक विशाल मण्डप बनाया और उस मण्डप में श्रीदामकाण्ड लटकाएं । नगरी के चतुर सुवर्णकारों ने पांचरंग के चावलों से नगरी का चित्र बनाया । उस चित्र के मध्य भाग में एक पद– बाजोट स्थापित किया ।

महाराज रुक्मि ने स्नान किया और सुन्दर वस्त्राभूषण पहने और अपनी पुत्री सुबाहु के साथ गंधहस्ति पर बैठे । कोरंट पुष्प की माला और छत्र को धारण किये हुए चतुरंगी सेना के साथ राजमार्ग से होते हुए वे मण्डप में पहुंचे । गन्धहस्ति से नीचे उतरकर पूर्वाभिमूख हो उत्तम आसन पर आसीन हुए । उसके बाद राजकुमारी को पट्ट पर बैठाकर श्वेत और पीत चान्दी और स्वर्ण के कलशों से उसका अभिषेक किया । औंर उसे सुन्दर वस्त्रालंकारों से विभूषित किया । फिर उसे पिता के चरणों में प्रणाम करने के लिए लाया गया ।

सुबाहुकुमारी पिता के पास आई और उन्हें प्रणाम कर उनकी गोद में बैठ गई । गोद में बैठी हुई पुत्री का लावण्य देख कर महाराज बडे विस्मित हुए । उसी समय महाराजा ने "वर्षधर को बुलाकर पूछा—"वर्षधर ! तुम मेरे दौत्य कार्य के लिए अनेक नगरों में और राजमहलों में जाते हो । तुमने कही भी किसी राजा महाराजा सेठ साहूकारों के यहां ऐसा मज्जनक (स्नानउत्सव) पहले कभी देखा है, जैसा इस सुबाहुकुमारी का मज्जन महोत्सव है ? उत्तर में वर्षधर ने कहा—

"स्वामी ! आपकी आज्ञा से में एक बार मिथिला नगरी गया था । यहां मैंने कुम्भराजा की पुत्री मल्लीकुमारी का स्नान महोत्सव देखा था । सुबाहुकुमारी का यह मज्जन महोत्सव उस मज्जन महोत्सव के लाखवें अंश को भी नहीं पा सकता है। इतना ही नहीं मल्लीकुमरी का जैसा रूप है वैसा स्वर्ग की अप्सरा का भी नहीं है । उसके सौन्दर्यरूपी दीप के सामने संसार की राजकुमारियाँ जुगनू जैसी लगती हैं ।

वर्षधर के मुख से मल्लीकुमारी की प्रशंसा सुनकर राजा उसकी ओर आकर्षित हो गया और राजकुमारीमल्ली की मंगनी के लिए अपना दूत कुम्भराजा के पास मिथिला भेज दिया ।

उस समय काशी नामके जनपद में वाराणसी नामकी नगरी थी । वहां शंख नाम का राजा राज्य करता था ।

टुकडे–टुकडे कर दूगा । इतना ही नहीं सारे जहाज को अपनी दो अंगुलियों पर उठाकर समुद्र में डूबो दुंगा । और तुम लोग अपने माल सामान के साथ समुद्र के रसातल में सदा के लिए सो जावोगे ।

बार बार डराने धमकाने पर भी अरहन्नक अपने ध्यान में अविचल था । इन धमकियों का उस-पर तनिक भी असर नहीं हुआ । नौ वणिक् भी अरहन्नग से कहने लगे–अरहन्नग ! तुम इस पिशाच की बात मान जाओ । इसी में हम सर्व की भलाई है । वरना यह पिशाच हमारे जहाज को समुद्र में डूबो देगा और हम सदा के लिए अपने जीवन से हाथ धो बैठेंगे ।" अहरहन्नक पर नौं वणिकों की इस बात का कोई असर नहीं पड़ा । वह तो अपने ध्यान में इतना लवलीन बना था कि बाहर क्या हो रहा है उसका उसे कोई पता भी नहीं था । आत्मा की अमरता और देह की भिन्नता पर वह निरन्तर विचार करता था । संसार के ये सर्व पदार्थ जीवात्मा के लिए सर्व सुलभ है । किन्तु धर्म का मिलना हि दुर्लभ है । बाह्यवस्तुओं के प्रलोभन में धर्म का परित्याग नहीं किया जा सकता ।

अर्हन्नक श्रमणोपासक की अविचल धर्मश्रद्धा के समक्ष पिशाच पराजित हो गया । उसका भय या त्रास अरहन्नक को धर्म से च्युत नहीं कर सका । उसने अपने पिशाच रूप को समेट लिया और उसके स्थान पर एक दिव्य रूप में प्रकट हुआ । समुद्र का तुफान शान्त हो गया । जहाज पूर्ववत् स्थिर हो गया और गंतव्य मार्ग की ओर बढने लगा । अकाश के बीच खड़ा हो देव मधुर स्वर में बोला–

श्रमणोपासक अरहन्नक ! तुम धन्य हो ! तुम्हारी अविचल धर्म श्रद्धा के सामने मेरा यह मस्तक नत है । मैं सौधर्म देवलोक का एक देव हूँ । सौधर्मेन्द्रजी ने देवसभा में तुम्हारी अत्यंत प्रशंसा करते हुए देवों से कहा–चंपा नगरी का निवासी अर्हन्नक श्रमणोपासक को कोई भी देव दानव या मानव उसे धर्म से च्युत नहीं कर सकता उसे विचलित नहीं कर सकता ।" शक्रेन्द्र की इस बात पर मुझे विश्वास नहीं हुआ । मेरे मन में विचार आया–मनुष्य तो हाडपिंजर का बना हुआ पुतला है । दुःख कातर (कायर) है । वह धर्म तो क्या प्रिय से प्रिय वस्तु का भी त्याग कर सकता है यदि सौधर्मेन्द्र की बात सच है तो मुझे स्वयं चलकर उसकी परीक्षा करनी चाहिए ।" यह सोच मैं यहां तुम्हारी परीक्षा करने आया । भयानक पिशाच का रूप बनाकर तुम्हें धर्म श्रद्धा से च्युत करने का भरसक प्रयत्न किया । किन्तु तुम्हारी अविचल धर्म श्रद्धा के सामने मेरे सब प्रयत्न विफल हो गये । जैसी इन्द्र ने तुम्हारी प्रशंसा की थी तुम्हें उससे भी बढकर धर्म में दृढ पाया । तुम्हारा जीवन सचमुच धन्य है । जिन धर्म को निर्ग्रन्थ प्रवचन को तुमने अपने जीवन में उतारा है मेरे अपराध की आप क्षमा करें । मैंने आपको बड़ा कष्ट दिया । भयभीत किया । आपके साथ किये गये अनुचित व्यवहार के लिए मैं लज्जित हूँ । आप महान हैं और मैं अधम हूँ । यह कहकर अरहन्नक श्रमणोपासक को देव ने प्रणाम किया और एक दिव्य कुण्डल युगल भेंट किया । देव वहां से चला गया ।

समस्त उपद्रव दूर हुआ जान कर अरहन्नक ने कार्योत्सर्ग को पाला । सब लोगों ने अरहन्न की भूरि भूरि प्रशंसा की । जहाज चलते चलते गम्भीर नामक बन्दरगाह पर पहुंचा । जहाज में से सामान उतारा गया और उसे गाडियों में भरा । सामान भर कर नौ बणिक मिथिला की ओर चल पड़े ।

मिथिला पहुँचने पर अरहन्नक श्रावक ने महाराज कुम्भ की भेंट ली और देव प्रदत्त दिव्य कुण्डल युगल को उपहार के रूप में महाराजा को समर्पित किया । महाराजा कुम्भ ने अपनी मल्ली कुमारी को बुलाकर उसे दिव्य कुण्डल युगल पहना दिये महाराजा ने अरहन्नकादि व्यापारियों का बहुत आदर सत्कार किया और उनका राज्य महसूल माफ कर दिया । तथा रहने के लिए एक बड़ा आवास दे दिया । वहां कुछ दिन व्यापार करने के बाद उन्होंने अपने जहाजों में चार प्रकार का किराणा भर कर समुद्रमार्ग से चम्पा नगरी की ओर प्रस्थान कर दिया ।

चम्पा नगरी में पहुँचने पर उन्होंने बहुमूल्य कुण्डल युगल वहां के राजा चन्द्रच्छाय को भेंट किये। अंगराज चन्द्रच्छाय ने भेंट को स्वीकार कर अर्हन्नकादि श्रावकों से पूछा–तुम लोग अनेकानेक ग्राम नगरों में घूमते हो। बार बार लवण समुद्र की यात्रा भी करते हो। बताओ ऐसा कोई आश्चर्य है जिसे तुमने पहलीबार देखा हो ?

अर्हन्नक श्रमणोपासक बोला "स्वामी ! इस बार हम लोग व्यापारार्थ मिथिला नगरी गये थे। वहां हम लोगों ने कुम्भराजां को दिव्य कुण्डल युगल की भेंट दी। महाराजा कुम्भ ने अपनी सुपुत्री मल्ली कुमारी को बुलाकर वे दिव्यकुण्डल उसे पहना दिये। मल्लीकुमारी को हमने वहां एक आश्चर्य के रूप में देखा। विदेह की श्रेष्ठ कन्या मल्लीकुमरी का जैसा रूप और लावण्य है वैसा रूप देवकन्याओं को भी प्राप्त नहीं है। महाराजा चन्द्रच्छाय ने अरहन्नकादि व्यापारियों का सत्कार सम्मान कर उन्हें विदा कर दिया।

व्यापारियों के मुख से मल्ली कुमारी के रूप एवं सौंदर्य की प्रशंसा सुन कर महाराजा चन्द्रच्छाय उस पर अनुरक्त हो गये। दूत को बुलाकर कहा तुम मिथिला नगरी जाओ और वहां के महाराजा कुंभ से मल्ली कुमारी की मेरी भार्या के रूप में याचना करो। महाराज का सन्देश लेकर दूत मिथिला पहुँचा।

उस समय कुनाल जनपद की राजधानी श्राववस्ती थी। वहां रुक्मि नाम के राजा राज्य करते थे। उसकी रानी का नाम धारिणी था। उसके रूप और लावण्य में अद्वितीय सुबाहु नाम की एक कन्या थी। उसके हाथ पैर अत्यन्त कोमल थे, एक बार सुबाहु कुमारी का चातुर्मासिक स्नान का उत्सव आया इस अवसर पर महाराज के सेवकों ने पांचवर्णों के पुष्पों का एक विशाल मण्डप बनाया और उस मण्डप में श्रीदामकाण्ड लटकाएं। नगरी के चतुर सुवर्णकारों ने पांचरंग के चावलों से नगरी का चित्र बनाया। उस चित्र के मध्य भाग में एक पद– बाजोट स्थापित किया।

महाराज रुक्मि ने स्नान किया और सुन्दर वस्त्राभूषण पहने और अपनी पुत्री सुबाहु के साथ गंधहस्ति पर बैठे। कोरंट पुष्प की माला और छत्र को धारण किये हुए चतुरंगी सेना के साथ राजमार्ग से होते हुए वे मण्डप में पहुंचे। गन्धहस्ति से नीचे उतरकर पूर्वाभिमुख हो उत्तम आसन पर आसीन हुए। उसके बाद राजकुमारी को पट्ट पर बैठाकर श्वेत और पीत चान्दी और स्वर्ण के कलशों से उसका अभिषेक किया। और उसे सुन्दर वस्त्रालंकारों से विभूषित किया। फिर उसे पिता के चरणों में प्रणाम करने के लिए लाया गया।

सुबाहुकुमारी पिता के पास आई और उन्हें प्रणाम कर उनकी गोद में बैठ गई। गोद में बैठी हुई पुत्री का लावण्य देख कर महाराज बडे विस्मित हुए। उसी समय महाराजा ने "वर्षधर को बुलाकर पूछा–"वर्षधर ! तुम मेरे दौत्य कार्य के लिए अनेक नगरों में और राजमहलों में जाते हो। तुमने कहीं भी किसी राजा महाराजा सेठ साहूकारों के यहां ऐसा मज्जनक (स्नानउत्सव) पहले कभी देखा है, जैसा इस सुबाहुकुमारी का मज्जन महोत्सव है ? उत्तर में वर्षधर ने कहा—

"स्वामी ! आपकी आज्ञा से में एक बार मिथिला नगरी गया था। यहां मैंने कुम्भराजां की पुत्री मल्लीकुमारी का स्नान महोत्सव देखा था। सुबाहुकुमारी का यह मज्जन महोत्सव उस मज्जन महोत्सव के लाखवें अंश को भी नहीं पा सकता है। इतना ही नहीं मल्लीकुमरी का जैसा रूप है वैसा स्वर्ग की अप्सरा का भी नहीं है। उसके सौन्दर्यरूपी दीप के सामने संसार की राजकुमारियाँ जुगनू जैसी लगती हैं।

वर्षधर के मुख से मल्लीकुमारी की प्रशंसा सुनकर राजा उसकी ओर आकर्षित हो गया और राजकुमारीमल्ली की मंगनी के लिए अपना दूत कुम्भराजा के पास मिथिला भेज दिया।

उस समय काशी नामके जनपद में वाराणसी नामकी नगरी थी। वहां शंख नाम का राजा राज्य करता था।

उस समय विदेहराज की कन्या मल्लीकुमारी का देवप्रदत्त कुण्डल युगल का सन्धिभाग खुल गया। उसने सांधने के लिए नगरी के चतुर से चतुर सुवर्णकारों को बुलाया गया। सुवर्णकार उस कुण्डल युगल को लेकर घर आए और उसे जोड़ने का प्रयत्न करने लगे। नगरी के सभी स्वर्णकार इस काम में जुट गये लेकिन अनेक प्रयत्नों के बावजूद भी वे कुण्डल--युगल के सन्धि--भाग को नहीं जोड सके। अन्त में हताश होकर वे महाराज के पास पुनः पहुँच कर और अनुनयविनय करते हुए कहने लगे —

"स्वामी! हमने इस कुण्डल युगल को जोडने का बहुत प्रयत्न किया लेकिन हम इसमें असफल हो गये। अगर आप चाहें तो हम ऐसा ही दूसरा दिव्य कुण्डल युगल बनाकर आपकी सेवामें उपस्थित कर सकते हैं।" महाराज सुवर्णकारों की बात सुनकर अत्यन्त क्रुद्ध हुए और उन्हों ने स्वर्णकारों को देश निर्वासन की आज्ञा दे दी। महाराज के आदेश से ये लोग अपने परिवार और सामान के साथ मिथिला से निकल कर काशी देश की राजधानी बनारस आ पहुँचे, वे लोग बहुमूल्य उपहार लेकर महाराजा शंख की सेवा में पहुंचे और उपहार भेंटकर कहनेलगे--"स्वामी! हम लोगों को मिथिला नगरी के कुम्भराजा ने देश निष्कासन की आज्ञा दी है वहां से निर्वासित होकर हम लोग यहां आये हैं हम लोग, आप की छत्र छाया में निर्भय होकर सुख पूर्वक रहने की इच्छा करते हैं।

काशी नरेश ने स्वर्णकारों से पूछा--कुम्भराजा ने आपको देश निकालने की आज्ञा क्यों दी। स्वर्णकारों ने उत्तर दिया-- स्वामी कुम्भराजा की पुत्री मल्लीकुमारी का कुण्डल-युगल टूट गया। हमने उसे जोडने का प्रयत्न किया लेकिन उसे हम जोड नहीं सके जिससे क्रुद्ध होकर महाराजा ने देश निकाले की आज्ञा दी है।

शंख राजा ने पूछा--मल्लीकुमारी का रूप कैसा है? स्वर्णकारों ने कहा--मल्लीकुमारी के रूप की क्या प्रशंसा की जाय ऐसा रूप तों देव कन्या का भी नहीं हो सकता। महाराज शंख ने जब मल्लीकुमारी के रूप की प्रशंसा सुनी तो वह उस पर आसक्त हो गया। महाराज शंख ने स्वर्णकारों को नगरी में रहने की आज्ञा प्रदान कर दी। बाद में उसने अपना दूत बुलाया और उसे कहा--तुम मिथिला जाओ और मल्ली कुमारी की मेरी भार्या के रूप में मंगनी करो। महाराजा की आज्ञा प्राप्त कर दूत ने मिथिला नगरी की ओर प्रस्थान कर दिया।

एक समय विदेह के राजकुमार मल्लदिन्न ने अपने प्रमद--वन में एक विशाल चित्रसभा का निर्माण कराया तथा नगर के अच्छे से अच्छे चित्रकों को चित्र निर्माण का आदेश दिया। राजकुमार के आदेश से चित्रकारों ने चित्रसभा को विविध चित्रों से अलंकृत करना आरम्भ कर दिया। उनमें एक ऐसा भी चित्रकार था जो किसी भी पदार्थ का एक भाग देखकर उसका संपूर्ण चित्र आलेखित कर लेता था एक बार इस चित्रकार की दृष्टि पर्दे के अन्दर रही हुई मल्लीकुमारी के अंगूठे पर पडी। उसे अपनी कला का परिचय देने का एक अच्छा अवसर मिला जानकर उसने उसी क्षण अपनी तूलिका से मल्लीकुमारी का संपूर्ण चित्र बनाडाला अन्य चित्रकारों ने भी एक से एक सुन्दर चित्रो को बनाकर चित्रशाला को सजाया। युवराज ने चित्रकारों का खूब सत्कार किया तथा उन्हें बडा पुरस्कार दे कर विदा किया।

एक बार चित्रशाला--का निरिक्षण करते हुए मल्लदिन्नकुमार की दृष्टि मल्लीकुमारी के चित्र पर पड़ी मल्लीकुमारी के हूबहू चित्र को देख कर युवराज मल्लदिन्न अत्यन्त क्रुद्ध हुआ उसने चित्रकार के बध का हुक्म सुना दिया। अन्य चित्रकारों को जब इस बात का पता लगा तो वे राजकुमार के पास पहुंचे और राजकुमार से चित्रकार का वध न करने की प्रार्थना करने लगे। चित्रकारों की प्रार्थना पर राजकुमार ने चित्रकार के बध के बदलें उसके अंगुष्ठ और कनिष्ठ अंगुली को छेदने की और देश निर्वासन की आज्ञा दे दी।

चित्रकार मिथिला से निर्वासन होकर हस्तिनापुर गया । वहाँ उसने मल्लिकुमारी का एक चित्र बनाया और उस चित्रपट को साथ में लेकर राजा अदीनशत्रु के पास पहुंचा । बहुमूल्य उपहार के साथ मल्लीकुमारी का चित्र भेट करते हुए कहा—स्वामी ! मिथिला नरेश ने अपने देश से मुझे निष्कासिन कर दिया है । मैं आप की छत्र छाया में रहना चाहता हूँ । चित्रकार के मुख से निर्वासन का समस्त हाल सुनकर महाराजा ने उसे अपने शरण में रख लिया । मल्लीकुमारी के अनुपम सौन्दर्य को देख कर महाराज अत्यन्त मुग्ध हो गये । उन्होंने अपने दूत को बुलाकर आज्ञा दी—,, तुम मिथिला नगरी जाओ और महाराज कुम्भ से मल्लीकुमारी को मेरी भार्या के रुप में मंगनी करो ,, दूत ने महाराज की आज्ञा प्राप्त रक मिथिला की ओर प्रस्थान कर दिया ।

तत्कालीन पांचाल देश की राजधानी कांपिल्यपुर थी । वहाँ जितशत्रु राजा राज्य करते थे । उसके धारिणी आदि हजार रानियाँ थीं ।

एक समय चोखा नाम की परिव्राजिका मिथिला नगरी में आई । वह ऋग्वेदादि षष्टी तंत्र की विज्ञा थीं । वह दान, धर्म, शौचधर्म तीर्थाभिषेक--की परुपणा किया करती थी । एक दिन वह राजमहल में पहुंची और मल्लीकुमारी को शौचधर्म का उपदेश देने लगी श्रीमल्लीकुमारी स्वयं विदुषी थी । चोखा को यह ज्ञान नहीं था कि जिसे मैं शौचधर्म का उपदेश दे रही हूँ वह एक महान तत्त्वज्ञानी है । वह परिव्रा-जिका मल्ली को शौचधर्म का तत्त्वज्ञान समझाते हुए कहने लगी--अपवित्र वस्तु की शुद्धि जल और मिट्टी से होती है । मल्लीकुमारी ने कहा-- परिव्राजिके ! रुधिर से लिप्त वस्त्र को रुधिर से धोने पर क्या उस की शुद्धि हो सकती है ? इसपर परिव्राजिका ने कहा--"नहीं । "मल्लीकुमारी बोली--,, इस प्रकार हिंसा से हिंसा की शुद्धि नहीं हो सकती ।,, जैसे रुधिरवाले वस्त्र क्षार आदि दे धोने से शुद्ध होते हैं वैसेही अहिंसामय धर्म और शुद्ध श्रद्धा से पाप स्थानों की शुद्धि होती है । जल और मिट्टी से केवल बाह्य पदार्थो की शुद्धि होती है आत्माकी नहीं ।

मल्लीकुमारी के युक्ति पूर्ण वचन सुनकर चोखा परिव्राजिका निरुत्तर हो गई । दासियों ने निरुत्तर परिव्राजिका को अपमानित कर उसे बाहर निकाल दी ।

मल्लीभगवती के राजमहल से अपमानित वह चोखा अपनी शिष्याओं के साथ मिथिला से निकल कर पांचाल देश की राजधानी कांपिल्यपुर पहुँची । एक दिन वहां अपनी शिष्याओं के साथ महाराजा जित शत्रु के महल में गई और वहां महाराजा को दान धर्म, शौच धर्म का उपदेश देने लगी ।

महाराज जितशत्रु को अपने अंतपुर की विशालता एवं अनुपम सुन्दरियों पर बड़ा अभिमान था । महाराज ने परिव्राजितका से पूछा—

परिव्राजिके ! तुम अनेक ग्राम—नगरों में घूमती हो और अनेक राजमहलों में भी प्रवेश करती हो । राजा महाराजाओं के वैभव को अपनी आखों से देखती हो । कहो--मेरे जैसा अन्तपुर भी तुमने कहीं देखा है ?

परिव्राजिका ने उत्तर दिया राजन् ! आप कूपमण्डूक प्रतीत होते हैं । आपने दूसरों की पुत्र वधुओ, भार्याओं, एवं पुत्रियो को नहीं देखा इसीलिए ऐसा कहते हो । मैने मिथिला के विदेहराज की कन्या मल्ली कुमारी का जो रूप देखा है वैसारुप किसी देवकुमारो या नागकन्या का भी नही, मल्ली कुमारी के रुप की प्रशंसा सुनकर महाराज ने मल्लीकुमारी के साथ विवाह करने का निश्चय किया और उसी समय दूत को बुलाकर उसे मल्लीकुमारी की मंगनी के लिए मिथिला जाने का आदेश दे दिया । महाराजा की आज्ञा पाकर दूत मिथिला की ओर चला ।

छहों राजाओं के दूत मिथिलापति कुंभ के पास पहुँचे और अपने अपने राजाओं की ओर से मल्ली कुमारी की मंगनी करने लगे। महाराजा कुभ ने छहों राजाओं के प्रस्ताव को मानने से इनकार कर दिया और अत्यन्त क्रुद्ध हो कर दूतों को अपमानित कर उन्हें निकाल दिया। महाराज कुंभ से अपमानित दूत अपने अपने राजा के पास पहुँचे और उन्होंने सारा वृत्तान्त कह सुनाया।

कुम्भ महाराज का निराशा जनक उत्तर सुनकर वे बहुत कुपित हुए और सब ने सम्मिलित होकर राजा कुम्भ पर चढाई करने का निश्चय कर लिया। छहों राजाओं ने अपनी अपनी विशाल सेना के साथ मिथिला पर चढाई करने के लिए प्रस्थान कर दिया। इधर महाराज कुम्भ ने भी छहों राजाओं का मुकाबला करने के लिए युद्ध की तैयारी करली। कुछ चुनी हुई सेना को साथ लेकर महाराज कुम्भ भी अपने राज्य की सीमा पर पहुँच गये। दोनों ओर की सेनाओं में घमसान युद्ध आरंभ हो गया। एक ओर छह् राजाओं की विशाल सेनाएँ थीं और दूसरी ओर अपनी कुछ सेना के साथ अकेले कुम्भ राजा। कुम्भ बडी वीरता के साथ लडे किन्तु शत्रुपक्ष की विशाल सेना के सामने इनकी मुट्ठी भर सेना नहीं टिक सकी। अन्त में हार कर पीछे हटने लगी और इधर उधर भागने लगी। अपने पक्ष को कमजोर होता देख वे अपने कुछ बहादुर सिपाहियों के साथ नगर लौट आये। नगरी के चहूंओर दरवाजे के फाटक बन्द करवा दिये और अपनी सेना को किले पर सजा कर दुश्मनों की प्रतीक्षा करने लगे। इधर छहों राजाओं की सेनाने मिथिला को घेर लिया और नगरी के द्वार को तोड कर अन्दर घुसने का प्रयत्न करने लगी। मिथिला की बहादुर सेना के शत्रु सेना ने सब प्रयत्न असफल कर दिये।

महाराजा कुम्भ सिंहासन पर बैठे हुए युद्ध की परिस्थिति का विचार कर रहे थे। उसी समय भगवती मल्लीकुमारी अपने सुन्दर वस्त्राभूषणों में सजी हुई प्रति दिन के नियमानुसार पिता के चरण छूने आई। पिता के चरण छू कर वह एक ओर खडी हो गई। महाराज कुम्भ अपने विचार में इतने मग्न थे कि उन्हें मल्ली के आने का ध्यान तक नहीं रहा। पिता को अत्यन्त चिन्ता निमग्न देख वह बोली—

"तात ! जब मैं आपके पास आती तब आपबडे प्रसन्न हो कर मुझे गोद में उठा लेते थे और मीठी मीठी बाते करते थे किन्तु क्या कारण है कि, आज आप मेरी ओर नजर उठा कर भी नहीं देख रहे है ?

कुम्भ ने आदि से अन्त तक सारी घटना कह सुनाई और कहा पुत्री ! आई हुई इस विपत्ति से छुटकारा पाने के लिये मैं उपाय सोच रहा हूँ।

मल्ली कुमारी ने कहा—तात! आप पर आई हुई इस विपत्ति से छुटकारा पाने का उपाय मेरे पास है। हम युद्ध से शत्रु को परास्त नहीं कर सकते किन्तु बुद्धिबल से ही शत्रुओं पर विजय पा सकते हैं। यदि आप का मेरे पर पूरा विश्वास हो तो आप इस विपत्ति के बादलों को छिन्न भिन्न कर देने का भार मुझ पर छोड दे। मैंने राजाओं पर विजय पाने का उपाय सोच लिया है। महाराज कुम्भ ने कहा-पुत्री कौनसा वह उपाय है जिससे ये राजा लोग तुम्हारी बात मान जायेंगे।

मल्ली ने कहा--तात ! मैं क्या करना चाहती हूँ यह तो आप को यथा समय मालूम हों ही जायगा। आप सब राजाओं के पास अलग अलग दूत भिजवा दीजिए और उन्हें यह सन्देश कहलवा दीजियेगा कि मैं आपको अपनी कन्या देना चाहता हूँ शर्त इतनी है कि मेरा सन्देश अन्य राजा तक नहीं पहुचना चाहिए। महाराज कुम्भ को अपनी पुत्री की बुद्धिमत्ता और विवेक पर पूरा विश्वास था। उसने सभी राजाओं के पास दूत भेजे और उन्हें मोहन घर अकेले ही आने को कहा गया।

महाराज कुम्भ का सन्देश पा कर सभी राजा प्रसन्न हुए और अकेले ही दूत के साथ मोहन घर में आ पहुँचे। छहों राजाओं को अलग अलग बिठलाया गया। छहों राजाओं की मोहनगृह के बीच

खडी सुवर्णमूर्ति पर दृष्टि पडी। वे बडे मुग्ध हो गये और उसे एक दृष्टि से देखने लगे। सुन्दर वस्त्रा-भूषणों से सज्जित होकर राजकुमारी मल्ली जब मोहन घर में आई तभी उनको होश हुआ कि यह मल्ली कुमारी नहीं है परन्तु उसकी मूर्तिमात्र है। वहां आकर राजकुमारी मल्ली ने बैठने के पहले मूर्ति के ढक्कन को हटा दिया। ढक्कन के हटाते ही मूर्ति के भीतर से बडी भयंकर दुर्गन्ध निकली। उस भयंकर दुर्गन्ध के मारे छहों राजाओं की नाक फटने लगी। और दम घुटने लगा। उन्होंने अपनी अपनी नाक बन्द करली और मुह फेर लिया। नाक भौं सिकोडते राजाओं को देख मल्ली कुमारी बोली—

हे राजाओं! आप लोग अभी इस पुतली की ओर बडे चाव से देख रहे थे अब नाक भौं क्यों सिकोड रहे हो? क्या यह पुतली तुम्हें पसंद नहीं?। जिस मूर्ति के सौंदर्य को देखकर आपलोग मुग्ध हो गये थे उसी मूर्ति में से यह दुर्गंध निकल रही है। यह मेरा सुन्दर दिखाई देनेवाला शरीर भी इसी तरह रक्त, थुंक, मल- मूत्र आदि आदि घृणोत्पादक वस्तुओं से भरा पडा है। शरीर में जानेवाली अच्छी से अच्छी सुगन्धवाली और स्वादिष्ठ वस्तुएँ भी दुर्गन्ध युक्त विष्ठा बन कर बाहर निकलती है तब फिर इस दुर्गन्ध से भरे हुए और विष्ठा के भण्डार--रूप शरीर के बाह्य सौंदर्य पर कौन विवेकी पुरुष मुग्ध होगा।

मल्ली कुमारी की मार्मिक बातों को सुनकर सब के सब राजा बडे लज्जित हुए और अधोगति के मार्ग से बचानेवाली मल्ली का आभार मानते हुए कहने लगे--हे देवानुप्रिये! तूं जो कहती है, वह बिलकुल ठीक है। हम लोग अपनी भूल के कारण अत्यन्त पछता रहे हैं।

पुनः मल्ली कुमारी बोली राजाओ! आप मेरे पूर्व जन्म के मित्र थे। अब से तीसरे भव में सलीलावती विजय में हम लोग उत्पन्न हुए थे। मेरा नाम महाबल था। अपन लोग साथ साथ खेले कूदे थे और साथ ही में मुनि भी बने थे। पूर्व भव में अपनलोग एक जैसी तपस्या करते थे पर थोडे से कपटाचार के कारण मुझे स्त्री--वेद का बन्ध हुआ। वहां से अपन सब जयन्त विमान में उत्पन्न हुए। वहां का आयु पूर्ण कर तुम सब राजा हुए हो और मैंने महाराजा कुम्भ के घर कन्या के रूप में जन्म ग्रहण किया है।

मल्ली कुमारी के इन वचनों का राजाओं पर बडा प्रभाव पडा। वे अपने पूर्व भव का विचार करने लगे। विचार करते करते शुद्ध अध्यवसाओं से उन्हें जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न हो गया। वे अपने अपने पूर्व भवों को दर्पण की तरह स्पष्ट देखने लगे। भगवती मल्ली की बात पर उन्हें पूरा विश्वास हो गया। भगवती मल्ली ने मोहनघर के द्वार खुलवा दिये। सब एक दूसरों से खूब मित्र भाव से मिले।

भगवती मल्ली कुमारी ने राजाओं से कहा--मैं दीक्षा लेना चाहती हूँ। इस सम्बन्ध में आप लोगों के क्या विचार है?

राजाओं ने कहा—हम लोग भी आपकी ही तरह काम सुखों का त्याग कर प्रव्रज्या ग्रहण करेंगे। जैसे पूर्वभव में आपके मित्र थे सहयोगी थे वैसे ही इस भव में भी आपका ही अनुकरण करेंगे।

तब भगवती मल्ली कुमारी ने कहा—आप शीघ्र ही अपने अपने पुत्र को राज्य भार दे कर तथा उनकी अनुमति लेकर यहाँ चले आवो।

यह निश्चय हो जाने पर मल्लीकुमारी सब राजाओं को लेकर अपने पिता के पास आई। वहाँ पर सब राजाओं ने कुम्भराजा से क्षमा याचना की। कुम्भराजा ने भी उनका यथेष्ट सत्कार किया और सबको अपनी अपनी राजधानी की ओर विदा किया।

भगवती मल्लीकुमारी ने तीर्थङ्कर की परम्परा के अनुसार वार्षिक दान देना आरम्भ कर दिया वर्षीदान समाप्ति के बाद देवों द्वारा तैयार की गई मनोरमा नाम की शिविका पर आरूढ होकर सहस्राम्र उद्यान में

आई। उस दिन पौष शुक्ला एकादशी का दिन था। तीन दिन के उपवास कर भगवती मल्लीकुमारी ने प्रव्रज्या ग्रहण की। आपके साथ तीन सौ स्त्रियों ने भी दीक्षा धारण की आपके साथ नन्द, नन्दिमित्र, सुमित्र, बलमित्र, भानुमित्र, अमरपति, अमरसेन और महासेन इन आठ इक्ष्वाकुवंशी राजकुमारों ने भी दीक्षा ग्रहण की देवों ने भगवती मल्ली का दीक्षा महोत्सव किया।

दीक्षा लेने के बाद दिन के अन्तिम प्रहर में अशोक वृक्ष के नीचे केवल ज्ञान और केवलदर्शन उत्पन्न हो गया देवों ने उनका कैवल्य उत्सव किया। पूर्वोक्त जितशत्रु आदि छहों राजाओं ने भी भगवती मल्ली के पास प्रव्रज्या ग्रहण की। चौदह पूर्व का अध्ययन किया और सम्पूर्ण कर्मों का क्षय करके मोक्ष प्राप्त किया।

भगवती मल्लीनाथ सहस्राम्र उद्यान से निकलकर बाहर जनपद में विहार करने लगे।

भगवती मल्लीनाथ के अट्ठाईस गण और भिषक आदि अट्ठाईस गणधर थे। ४००००चालीस हजार साधु और बन्धुमती आदि ५५०००पचपन हजार साध्वियाँ थी। इनके श्रमणसंघ में ६१४छ सौ चौदह पूर्वधर, (त्रिषष्टी के अनुसार ६६८), २०००दो हजार अवधिज्ञानी (त्रिषष्टी के अनुसार २२००), ३२०० बत्तीस सौ केवलज्ञानी (त्रिषष्टी के अनुसार २९००), ८००आठ सौ मनः पर्ययज्ञानी, (त्रिषष्टी के अनुसार १७५०) १४०० चवद सौ वादलब्धिवाले २००० दो हजार अनुत्तरोपपातिक (त्रिषष्टी के अनुसार–१८३०००) १८४००० एक लाख चौरासी हजार श्रावक, एवं ३६५००० तीन लाख पैंसठ हजार श्राविकाएं थी। (त्रिषष्टी के अनुसार ३७००००)

भगवान मल्ली कुमारी के तीर्थ में दो प्रकार की अंतकृत भूमि हुई–एक युगान्तर भूमि और दूसरी पर्यायान्त कर भूमि। इनमें से शिष्य प्रशिष्य आदि बीस पुरुषों रूप युगों तक अर्थात् बीसवें पाट तक युगान्तर भूमि हुई अर्थात् बीस पाट तक साधुओं ने मुक्ति प्राप्त की। बीसवे पाट के बाद उनके तीर्थ में किसी ने भी मोक्ष प्राप्त नही किया और दो वर्ष का पर्याय होने पर अर्थात् भगवान मल्ली के केवलज्ञान प्राप्ति के दो वर्ष बाद पर्यायान्ततर भूमि हुई। भव पर्याय का अन्त करनेवाले साधु हुए। इससे पहले कोई जीव मोक्ष नहीं गया।

मल्ली अरिहंत २५ धनुष उंचे थे। उनके शरीर का वर्ण प्रियंगु के समान था समचतुरस्त्र संस्थान और वज्रऋषभनाराच संहनन था। वे मध्यदेश में सुख पूर्वक विचरकर सम्मेत शिखर पर आये और पादोपगमन अनशन अंगीकार किया।

मल्ली अरिहंत एक सौ वर्ष गृहवास में रहे। सौ वर्ष कम पचपन हजार वर्ष केवलीपर्याय पालकर कुल पचपन हजार वर्षकी आयु में चैत्र शुक्ला चौथ के दिन भरणी नक्षत्र के साथ चन्द्रमा का शुभ योग होने पर [त्रिषष्टी श० च० के अनुसार फाल्गुन शुक्ला द्वादशी के दिन] अर्ध रात्रि के समय आभ्यंतर परिषद् की पांचसौ साध्वयाँ के साथ एवं बाह्य परिषद् के पांचसौ साधुओं के साथ निर्जल एक मास के अनशन पूर्वक दोनों हाथ लम्बे कर वेदनीय, आयु नाम और गोत्र कर्म के क्षीण होने पर सिद्ध हुए।

इन्द्रादि देवों ने भगवान का निर्वाण उत्सव मनाया।

भगवान अरहनाथ के निर्वाण के बाद कोटि हजार वर्ष के बीतने पर मल्ली अरहंत ने निर्वाण प्राप्त किया।

१९ वें तीर्थङ्कर का स्त्री पर्याय में जन्म होना इस युग के दश आश्चर्यों में से एक आश्चर्य माना गया है।

२०. भगवान श्रीमुनिसुव्रत स्वामी—

जम्बूद्वीप के अपरविदेह में भरतनामक विजय में चंपा नाम की नगरी थी। वहां सुरश्रेष्ठ नाम का

राजा राज्य करता था। उसने नन्दनमुनि के पास दीक्षा ग्रहण की और तपस्या कर तीर्थंकर नाम कर्म का उपार्जन किया। अन्त समय में संथारा कर वे प्राणत देवलोक में महर्द्धिक देवता हुए।

वहां से चवकर सुरश्रेष्ठ मुनि का जीव राजगृह नगर के प्रतापी राजा सुमित्र की रानी पद्मावती की कुक्षि में श्रावणपूर्णिमा के दिन श्रवण नक्षत्र के योग में उत्पन्न हुआ। तीर्थंकर को सूचित करने वाले चौदह महास्वप्न महारानी ने देखे। रानी गर्भवती हुई।

गर्भकाल के समाप्त होने पर जेष्ठ वदि अष्टमी के दिन श्रवण नक्षत्र में कूर्म लांछनवाले श्यामवर्णी पुत्र को महारानी ने जन्म दिया। इन्द्रादि देवों ने जन्मोत्सव किया। माता पिता ने बालक का नाम मुनिसुव्रत रखा। युवावस्था में भगवान मुनिसुव्रत का प्रभावती आदि श्रेष्ठ राजकुमारियों के साथ विवाह हुआ। भगवान की काया २० धनुष उंची थी। मुनिसुव्रत कुमार को प्रभावति रानी से एक पुत्र हुआ। जिसका नाम सुव्रत रखा गया। साडे सात हजार वर्ष की अवस्था में भगवान ने पिता द्वारा प्रदत्त राज्य को ग्रहण किया। १५ हजार वर्ष तक राज्य करने के बाद भगवान ने दीक्षा लेने का निश्चय किया। लोकान्तिक देवों ने भी आकर भगवान से दीक्षा के लिए निवेदन किया। भगवान ने बर्षीदान दिया। देवों द्वारा सजाई गई अपराजिता नामकी शिबिका पर आरूढ होकर नीलगुहा नामके उद्यान में आये। वहां फाल्गुन शुक्ला १२ के दिन श्रवण नक्षत्र में दिवस के अन्तिम प्रहर में एक हजार राजाओं के साथ प्रव्रजित हुए। भगवान को उस समय मनः पर्ययज्ञान उत्पन्न हुआ। तीसरे दिन भगवान ने राजगृही के राजा ब्रह्मदत्त के घर परमान्न से पारण किया। वहाँ पांच दिव्य प्रकट हुए।

ग्यारह मास तक छद्मस्थ अवस्था में रहने के बाद भगवान नीलगुहा उद्यान में पधारे। वहां चंपक वृक्ष के नीचे ध्यान करते हुए फाल्गुण कृष्णा द्वादशी के दिन श्रवण नक्षत्र में संपूर्ण घाती कर्म का क्षय कर केवलज्ञान प्राप्त किया। इन्द्रोंने आकर भगवान का केवलज्ञान उत्सव मनाया। समवशरण की रचना हुई। समवशरण में बैठ कर भगवान ने धर्मदेशना दी। धर्मदेशना सुनकर अनेक नर नारियों ने भगवान के पास दीक्षा ग्रहण की। देशना के प्रभाव से इन्द्रादि अठारह व्यक्तियों ने दीक्षा ग्रहण कर गणधर पद प्राप्त किया। भगवान के शासन में वरुण नामक शासनदेव एवं नरदत्ता नाम की शासन देवी हुई।

एक बार भगवान विहार करते हुए भृगुकच्छ पधारे। वहां जितशत्रु नामके राजा राज्य करते थे। भगवान का समवशरण हुआ। देशना सुनने के लिए जितशत्रु राजा घोडे पर चढ़कर आया। राजा अन्दर गया। घोडा बाहर खडा रहा। घोडे ने भी कान उँचे कर प्रभु का उपदेश सुना।

उपदेश समाप्त होने पर इन्द्र गणधर ने भगवान से पूछा—"इस समवशरण में किसने धर्म प्राप्त किया? प्रभु ने उत्तर दिया—जितशत्रु राजा के घोडे ने धर्म प्राप्त किया है। जितशत्रु राजा ने पूछा—यह घोडा कौन है और उसकी आपके धर्म के प्रति श्रद्धा कैसे हुई? उत्तर में भगवान ने घोडे के पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनाया। घोडे के पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनकर राजा ने घोडे को मुक्त कर दिया।

भगवान ने वहां से विहार कर दिया। वे हस्तिनापुर पधारे। वहां कार्तिक नाम का श्रावक रहता था। वह अपने धर्म पर अत्यन्त दृढ था। अपने देव, गुरु, धर्म के सिवाय वह किसी के भी सामने नहीं झुकता था।

एक बार उस नगर में भगवावस्त्रधारी संन्यासी आया। उसने अपने पाखण्ड से लोगों पर अच्छा प्रभाव जमाया। वह मासोपवासी था। महिने के पारणे के अवसर पर नगर के सभी प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने संन्यासी को निमंत्रित किया परंतु।

सम्यक्त्व धारी श्रावक होने के कारण कार्तिक सेठ ने संन्यासी को आमन्त्रित नहीं किया। और न उपदेश सुनने के लिए उसके पास गया। कार्तिक सेठ की इस धार्मिक दृढता पर वह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ।

आई। उस दिन पौष शुक्ला एकादशी का दिन था। तीन दिन के उपवास कर भगवती मल्लीकुमारी ने प्रव्रज्या ग्रहण की। आपके साथ तीन सौ स्त्रियों ने भी दीक्षा धारण की आपके साथ नन्द, नन्दिमित्र, सुमित्र, बलमित्र, भानुमित्र, अमरपति, अमरसेन और महासेन इन आठ इक्ष्वाकुवंशी राजकुमारों ने भी दीक्षा ग्रहण की देवों ने भगवती मल्ली का दीक्षा महोत्सव किया।

दीक्षा लेने के बाद दिन के अन्तिम प्रहर में अशोक वृक्ष के नीचे केवल ज्ञान और केवलदर्शन उत्पन्न हो गया देवो ने उनका कैवल्य उत्सव किया। पूर्वोक्त जितशत्रु आदि छहों राजाओं ने भी भगवती मल्ली के पास प्रव्रज्या ग्रहण की। चौदह पूर्व का अध्ययन किया और सम्पूर्ण कर्मों का क्षय करके मोक्ष प्राप्त किया।

भगवती मल्लीनाथ सहस्राम्र उद्यान से निकलकर बाहर जनपद में विहार करने लगे।

भगवती मल्लीनाथ के अट्ठाईस गण और भिषक आदि अट्ठाईस गणधर थे। ४००००चालीस हजार साधु और बन्धुमती आदि ५५०००पचपन हजार साध्वियाँ थी। इनके श्रमणसंघ में ६१४छ सौ चौदह पूर्वधर, (त्रिषष्टी के अनुसार ६६८), २०००दो हजार अवधिज्ञानी (त्रिषष्टी के अनुसार २२००), ३२०० बत्तीस सौ केवलज्ञानी (त्रिषष्टी के अनुसार २९००), ८००आठ सौ मनः पर्ययज्ञानी, (त्रिषष्टी के अनुसार १७५०) १४०० चवद सौ वादलब्धिवाले २००० दो हजार अनुत्तरोपपातिक (त्रिषष्टी के अनुसार—१८३०००) १८४००० एक लाख चौरासी हजार श्रावक, एवं ३६५००० तीन लाख पैंसठ हजार श्राविकाएं थी। (त्रिषष्टी के अनुसार ३७००००)

भगवान मल्ली कुमारी के तीर्थ में दो प्रकार की अंतकृत भूमि हुई—एक युगान्तर भूमि और दूसरी पर्यायान्त कर भूमि। इनमें से शिष्य प्रशिष्य आदि बीस पुरुषों रूप युगों तक अर्थात् बीसवें पाट तक युगान्तर भूमि हुई अर्थात् बीस पाट तक साधुओं ने मुक्ति प्राप्त की। बीसवे पाट के बाद उनके तीर्थ में किसी ने भी मोक्ष प्राप्त नही किया और दो वर्ष का पर्याय होने पर अर्थात् भगवान मल्ली के केवलज्ञान प्राप्ति के दो वर्ष बाद पर्यायान्ततर भूमि हुई। भव पर्याय का अन्त करनेवाले साधु हुए। इससे पहले कोई जीव मोक्ष नहीं गया।

मल्ली अरिहंत २५ धनुप उंचे थे। उनके शरीर का वर्ण प्रियंगु के समान था समचतुरस्त्र संस्थान और वज्रऋषभनाराच संहनन था। वे मध्यदेश में सुख पूर्वक विचरकर सम्मेत शिखर पर आये और पादोपगमन अनशन अंगीकार किया।

मल्ली अरिहंत एक सौ वर्ष गृहवास में रहे। सौ वर्ष कम पचपन हजार वर्ष केवलीपर्याय पालकर कुल पचपन हजार वर्षकी आयु में चैत्र शुक्ला चौथ के दिन भरणी नक्षत्र के साथ चन्द्रमा का शुभ योग होने पर [त्रिषष्टी श० च० के अनुसार फाल्गुन शुक्ला द्वादशी के दिन] अर्ध रात्रि के समय आभ्यंतर परिषद् की पांचसौ साध्वयाँ के साथ एवं बाह्य परिषद् के पांचसौ साधुओं के साथ निर्जल एक मास के अनशन पूर्वक दोनो हाथ लम्बे कर वेदनीय, आयु नाम और गोत्र कर्म के क्षीण होने पर सिद्ध हुए।

इन्द्रादि देवों ने भगवान का निर्वाण उत्सव मनाया।

भगवान अरहनाथ के निर्वाण के वाद कोटि हजार वर्ष के बीतने पर मल्ली अरहंत ने निर्वाण प्राप्त किया।

१९ वें तीर्थङ्कर का स्त्री पर्याय में जन्म होना इस युग के दश आश्चर्यों में से एक आश्चर्य माना गया है।

२०. भगवान श्रीमुनिसुव्रत स्वामी—

जम्बूद्वीप के अपरविदेह में भरतनामक विजय में चंपा नाम की नगरी थी। वहां सुरश्रेष्ठ नाम का

राजा राज्य करता था। उसने नन्दनमुनि के पास दीक्षा ग्रहण की और तपस्या कर तीर्थंकर नाम कर्म का उपार्जन किया। अन्त समय में संथारा कर वे प्राणत देवलोक में महर्द्धिक देवता हुए।

वहां से चवकर सुरश्रेष्ठ मुनि का जीव राजग्रह नगर के प्रतापी राजा सुमित्र की रानी पद्मावती की कुक्षि में श्रावणपूर्णिमा के दिन श्रवण नक्षत्र के योग में उत्पन्न हुआ। तीर्थंकर को सूचित करने वाले चौदह महास्वप्न महारानी ने देखे। रानी गर्भवती हुई।

गर्भकाल के समाप्त होने पर जेष्ठ वदि अष्टमी के दिन श्रवण नक्षत्र में कूर्म लांछनवाले श्यामवर्णी पुत्र को महारानी ने जन्म दिया। इन्द्रादि देवों ने जन्मोत्सव किया। माता पिता ने बालक का नाम मुनिसुव्रत रखा। युवावस्था में भगवान मुनिसुव्रत का प्रभावती आदि श्रेष्ठ राजकुमारियों के साथ विवाह हुआ। भगवान की काया २० धनुष उंची थी। मुनिसुव्रत कुमार को प्रभावति रानी से एक पुत्र हुआ। जिसका नाम सुव्रत रखा गया। साढे सात हजार वर्ष की अवस्था में भगवान ने पिता द्वारा प्रदत्त राज्य को ग्रहण किया। १५ हजार वर्ष तक राज्य करने के बाद भगवान ने दीक्षा लेने का निश्चय किया। लोकान्तिक देवों ने भी आकर भगवान से दीक्षा के लिए निवेदन किया। भगवान ने वर्षीदान दिया। देवों द्वारा सजाई गई अपराजिता नामकी शिबिका पर आरूढ होकर नीलगुहा नामके उद्यान में आये। वहां फाल्गुन शुक्ला १२ के दिन श्रवण नक्षत्र में दिवस के अन्तिम प्रहर में एक हजार राजाओं के साथ प्रव्रजित हुए। भगवान को उस समय मनः पर्ययज्ञान उत्पन्न हुआ। तीसरे दिन भगवान ने राजगृही के राजा ब्रह्मदत्त के घर परमान्न से पारण किया। वहाँ पांच दिव्य प्रकट हुए।

ग्यारह मास तक छद्मस्थ अवस्था में रहने के बाद भगवान नीलगुहा उद्यान में पधारे। वहां चंपक वृक्ष के नीचे ध्यान करते हुए फाल्गुण कृष्णा द्वादशी के दिन श्रवण नक्षत्र में संपूर्ण घाती कर्म का क्षय कर केवलज्ञान प्राप्त किया। इन्द्रोंने आकर भगवान का केवलज्ञान उत्सव मनाया। समवशरण की रचना हुई। समवशरण में बैठ कर भगवान ने धर्मदेशना दी। धर्मदेशना सुनकर अनेक नर नारियों ने भगवान के पास दीक्षा ग्रहण की। देशना के प्रभाव से इन्द्रादि अठारह व्यक्तियों ने दीक्षा ग्रहण कर गणधर पद प्राप्त किया। भगवान के शासन में वरुण नामक शासनदेव एवं नरदत्ता नाम की शासन देवी हुई।

एक बार भगवान विहार करते हुए भृगुकच्छ पधारे। वहां जितशत्रु नामके राजा राज्य करते थे। भगवान का समवशरण हुआ। देशना सुनने के लिए जितशत्रु राजा घोडे पर चढ़कर आया। राजा अन्दर गया। घोडा बाहर खडा रहा। घोडे ने भी कान उँचे कर प्रभु का उपदेश सुना।

उपदेश समाप्त होने पर इन्द्र गणधर ने भगवान से पूछा—"इस समवशरण में किसने धर्म प्राप्त किया? प्रभु ने उत्तर दिया—जितशत्रु राजा के घोडे ने धर्म प्राप्त किया है। जितशत्रु राजा ने पूछा—यह घोडा कौन है और उसकी आपके धर्म के प्रति श्रद्धा कैसे हुई? उत्तर में भगवान ने घोडे के पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनाया। घोडे के पूर्व जन्म का वृत्तान्त सुनकर राजा ने घोडे को मुक्त कर दिया।

भगवान ने वहां से विहार कर दिया। वे हस्तिनापुर पधारे। वहां कार्तिक नाम का श्रावक रहता था। वह अपने धर्म पर अत्यन्त दृढ था। अपने देव, गुरु, धर्म के सिवाय वह किसी के भी सामने नहीं झुकता था।

एक बार उस नगर में भगवावस्त्रधारी संन्यासी आया। उसने अपने पाखण्ड से लोगों पर अच्छा प्रभाव जमाया। वह मासोपवासी था। महिने के पारणे के अवसर पर नगर के सभी प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने संन्यासी को निमंत्रित किया परंतु।

सम्यक्त्व धारी श्रावक होने के कारण कार्तिक सेठ ने संन्यासी को आमन्त्रित नहीं किया। और न उपदेश सुनने के लिए उसके पास गया। कार्तिक सेट की इस धार्मिक दृढता पर वह अत्यन्त युद्ध हुआ।

उसने कार्तिक सेठ को हर प्रकार से अपमानित करने का निश्चय किया। वह इसके लिए उपयुक्त अवसर की खोज करने लगा।

एक समय जितशत्रु राजा ने मासखमण के पारणे के लिए संन्यासी को अपने घर निमंत्रित किया। संन्यासी ने राजा को कहलवाया कि अगर कार्तिक सेठ मुझे भोजन परोसेगा तो मैं आपके घर पारणा करूंगा। राजा ने सेठ को बुलाकर उसे संन्यासी को भोजन परोसने की आज्ञादेदी। राजाज्ञा को मानकर कार्तिक सेठ संन्यासी को भोजन परोसने लगा। भोजन परोसते हुए कार्तिक सेठ का वह बार बार तिरस्कार करता था। संन्यासी से तिरस्कृत कार्तिक सेठ सोचने लगा—यदि मैं दीक्षित होता तो मुझे यह विडम्बना न सहन करनी पडती।

दूसरे दिन जब उसे भगवान मुनिसुव्रत के आगमन का समाचार मिला तो वह एक हजार आठवणिकों के साथ भगवान की सेवा में पहुचा और प्रव्रज्या ग्रहण कर आत्म साधना करने लगा। बारह वर्ष तक चारित्र पालन कर वह मरकर सौधर्मेन्द्र बना। संन्यासी मरकर सौधर्मेन्द्र का वाहन एरावत हाथी बना, पूर्वजन्म का वैर स्मरणकर हेरावत इधर उधर भागने लगा। इन्द्र ने वज्र के प्रहार से उसे वश में कर लिया।

भगवान के परिवार में ३०००० तीस हजार साधु, ५०००० पचास हजार साध्वियां, ५०० पांचसो चौदह पूर्वधर, १८०० अठारह सो अवधिज्ञानी, १५०० पन्नरह सो मनःपर्ययज्ञानी, १८०० अठारहसो केवलज्ञानी, २००० दो हजार वैक्रियलब्धिधारी, १२०० एक हजार दो सौ वादी, १७२००० एक लाख बहोतर हजार श्रावक, एवं ३ लाख ५० हजार श्राविकाएँ थीं।

अपना निर्वाणकाल समीप जानकर भगवान समेतशिखर पर पधारे। वहां एक हजार मुनियों के साथ अनशन ग्रहण किया। एक मास के अन्त में ज्येष्ठ कृष्णा नवमीं के दिन श्रवण नक्षत्र में अवशेष कर्मों को खपाकर भगवान मोक्ष में पधारे। भगवान की कुल आयु तीस हजार वर्ष की थी। भगवान मल्ली-नाथ के निर्वाण के बाद ५४ लाख वर्ष के बीतने पर भगवान मुनिसुव्रत प्रभु का निर्वाण हुआ।

२१ भगवान श्रीनमिनाथ—

जम्बूद्वीप के पश्चिम विदेह में भरत नामक विजय में कौशांबी नाम की नगरी थी। वहां सिद्धार्थ नामका राजा राज्य करता था। उन्होंने संसार से विरक्त होकर सुदर्शन नामक मुनि के समीप दीक्षा ग्रहण की। सिद्धार्थमुनि ने कठोर तप करते हुए तीर्थंकर नामकर्म के बीस बोलों की सम्यग् आराधना कर तीर्थंकर नाम कर्म का उपार्जन किया। अन्तिम समय में अनशन कर वे अपराजित नामक विमान में देवरूप से उत्पन्न हुए।

जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में मिथिला नामकी नगरी थी। वहां विजय नाम के प्रतापी राजा राज्य कर-ते थे। उनकी पट्टरानी का नाम वप्रा था। वह गंगा को तरह पावनमूर्ति थी।

सिद्धार्थ मुनि का जीव अपराजित विमान से तेतीस सागरोपम की उत्कृष्ट आयु पूर्ण कर आश्विन मास की पूर्णिमा के दिन अश्विनी नक्षत्र के योग में महारानी वप्रा के गर्भ में उत्पन्न हुआ। महारानी वप्राने गर्भ के प्रभाव से चौदह महास्वप्न देखे। महारानी गर्भ का विधिवत् पालन करने लगी।

गर्भकाल के पूर्ण होने पर महारानी वप्रा ने श्रावणकृष्णा अष्टमी के दिन अश्विनी नक्षत्र के योग में नील कमल चिन्ह से चिह्नित सुवर्ण कान्ति वाले दिव्य पुत्र रत्न को जन्म दिया। भगवान के जन्मते ही समस्तदिशाएँ प्रकाशित हो उठीं। इन्द्रों, के आसन चलायमान हुए। छप्पन दिग्कुमारिकाएँ आई। उन्होंने मेरु पर्वत पर भावी तीर्थंकर को लेजाकर जन्मोत्सव किया। विजय राजा ने भी पुत्र जन्म के उपलक्ष में बडा उत्सव किया।

जब भगवान वप्रा रानी के गर्भ में थे तब मिथिला नगरी को शत्रुओं ने घेर लिया था । उस समय महारानी महल पर चढी । गर्भस्थ बालक के प्रभाव से महल पर खडी रानी को देखकर शत्रु भाग खडा हुआ । और महाराज विजय के सामने झुक गया-नमगया । इसलिए महाराजा विजय ने बालक का नाम नमि रखा । शैशव अवस्था को पारकर भगवान ने यौवन अवस्था में प्रवेश किया युवावस्था में नमि कुमार की ऊँचाई १५ धनुष थी । महाराज विजय ने नमिकुमार का अनेक राजकन्याओं के साथ विवाह किया । जन्म से ढाई हजार वर्ष के बाद विजय राजा ने नमिकुमार को राज्य गद्दी पर स्थापित किया । पांच हजार वर्ष तक राज्य करने के बाद स्वयं की प्रेरणा से एवं लोकान्तिक देवों की प्रार्थना से भगवान ने दीक्षा लेने का निश्चय किया । तदनुसार भगवान ने वर्षीदान दिया और सुप्रभ नामके राजकुमार को राज्यभार सौंप कर आषाढ कृष्णा नवमी के दिन अश्विनी नक्षत्र में देवकुरु नामक शिविका में बैठकर सहस्राम्र उद्यान में छठ के तप के साथ दीक्षा ग्रहण की । साथ में एक हजार राजाओं ने भी प्रव्रज्या ली । परीणामों की परम उच्चता के कारण उसी क्षण भगवान नमिनाथ को मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न हुआ । तीसरे दिन भगवान ने छठ का पारणा वीरपुर के राजा दत्त के घर परमान्न से किया । वहां वसुधारादि पांच दिव्य प्रकट हुए ।

नौ मास पर्यन्त छद्मस्थ अवस्था में रहने के बाद भगवान पुनः मिथिला के सहस्राम्र उद्यान में पधारे । षष्ठ तप कर बोरसली वृक्ष के नीचे ध्यान करने लगे । मार्गशीर्ष शुक्ला एकादशी के दिन अश्विनी नक्षत्र के योग में शुक्लध्यान की परमोच्च स्थिति में भगवान श्रीनमिनाथ ने समस्त घाति कर्मो को नष्ट कर दिया । कर्मो के नष्ट होते ही भगवान को केवलज्ञान और केवलदर्शन उत्पन्न हुआ । उसी समय देवों ने भगवान का समवशरण रचा । वह समवशरण एक सौ अस्सी धनुष्र ऊँचे अशोक वृक्ष से सुशोभित हो रहा था । अशोक वृक्ष के नीचे पूर्व दिशा की ओर मुख करके रत्नसिंहासन पर आसीन हो भगवान ने देशना दी । भगवान की देशना सुनकर अनेक नरनारियों ने प्रव्रज्या ग्रहण की उनमें कुंभ आदि सत्रह गणधर मुख्य थे । भगवान की देशना के बाद कुभ गणधर ने भी उपदेश दिया । भगवान ने चतुर्विध संघ की स्थापना की ।

भगवान के तीर्थ में भृकुटी नामक यक्ष एवं गांधारी नामक शासनदेवी हुई । इस प्रकार भगवान नौ मास कम ढाई हजार वर्ष तक केवली अवस्था में विचर करके भव्य जीवों को प्रतिबोध देते रहे । भगवान के हरिसेन चक्रवर्ती परमभक्त थे ।

भगवान के विहारकाल में बीस हजार २०००० साधु, इकतालीस हजार ४१००० साध्वियाँ चार सो पचास ४५० चौदह पूर्वधर एक हजार छसौ १६०० अवधिज्ञानी, बारह सौ आठ १२०८ मनःपर्ययज्ञानी, सौलहसो १६०० केवली, पांच हजार ५००० वैक्रियलब्धिवाले, एक हजार १००० वादी, एक लाख सत्तर हजार ११७००० श्रावक एवं तीनलाख अडतालीस हजार ३४८००० श्राविकाएँ हुई ।

अपना निर्वाणकाल समीप जानकर भगवान समेत शिखर पर पधारे । वहां एक हजार मुनियों के साथ अनशन ग्रहण किया । एक मास के अन्त में वैशाख कृष्णा दसमी के दिन अश्विनी नक्षत्र के योग में हजार मुनियों के साथ अक्षय अव्यय पद प्राप्त कियां । भगवान के निर्वाणका उत्सव इन्द्रादि देवों ने किया ।

ढाई हजार वर्ष कुमारावस्था में, पांच हजार वर्ष राजत्व काल में एवं ढाई हजार वर्ष दीक्षा काल में व्यतीत किये । इस प्रकार भगवान की कुल आयु दस हजार वर्ष की थी । भगवान मुनिसुव्रत प्रभु के निर्वाण के बाद छह लाख वर्ष व्यतीत होने पर भगवान नमिनाथ का निर्वाण हुआ ।

भरत क्षेत्र में हस्तिनापुर नाम का नगर था । वहाँ श्रीषेण नामका राजा राज्य करता था । उसकी रानी का नाम श्रीमती था । अपराजित मुनि का जीव देवलोक से चवर श्रीमती रानी के उदर से जन्मा ।

उसका नाम शंख रखा गया। शंख ने शैशव काल पार कर यौवन अवस्था में कदम रखा।

इधर प्रतिमती का जीव देव लोक से चवकर अंगदेश की नगरी चंपा के राजा जितारी के घर पुत्री के रूप में जन्मा। [इनके एक से छह सभी के वर्णन के लिए देखिए भगवान श्रीअरिष्टनेमि का जीवन चरित्र] उसका नाम यशोमती रखा गया। यशोमतीं अत्यन्त रूपवती थी। उसने श्रीषेण के पुत्र शंख की प्रशंसा सुन रखी थी। उसने मन ही मन शंख को अपने पति के रूप में चुन लिया था।

इधर विद्याधरपति मणिशेखर भी यशोमती को चाहता था। उसने जितारी से यशोमती की मांग की किन्तु जितारी ने मणिशेखर की मांग को ठुकरा दिया। तब विद्या के बलसे मणिशेखर यशोमती को हरकर ले गया। शंखकुमार को जब इस बात का पता लगा तो वह यशोमती को ढूंढने निकला। अन्त में एक पर्वत पर मणिशेखर को पकडा और उसको ललकारा। दोनों में युद्ध हुआ। मणिशेखर हार गया। उसने क्षमा याचना कर यशोमती को उसे सौंप दिया। शंख ने यशोमती के साथ विवाह किया। शंख की वीरता से प्रसन्न होकर अनेक विद्याधरों ने भी अपनी कन्याएँ उसे अर्पण की। शंख सबको लेकर हस्तिनापुर गया। शंख की पराक्रम गाथा सुनकर उसके माता-पिता को बडी प्रसन्नता हुई।

शंख के पूर्वजन्म के बन्धु सूर और सोम भी आरण देवलोक से चवकर श्रीषेण के घर यशोधर, और गुणधर नाम से पुत्र हुए।

राजा श्रीषेण ने पुत्र को राज्यगद्दी देकर दीक्षा धारण की। जब उन्हें केवलज्ञान उत्पन्न हुआ तब राजा शंख अपने छोटे भाईयों के साथ उनका उपदेश सुनने गया। उपदेश के अन्त में शंख ने पूछा भगवन्! मेरा यशोमती पर इतना प्रेम क्यों है ?।

श्रीषेण केवली भगवानने कहा—जब तू धन्य कुमार था तब यह तेरी धनवतीं पत्नी थी। सौधर्मदेव-लोकमें यह तेरी मित्र हुई। चित्रगति के भव में यह तेरी रत्नवती नाम की प्रिया थी। महेन्द्रदेवलोक में यह तेरी मित्र हुई अपराजित के भव में यह तेरी प्रीतिमती नामकी पत्नी थी। आरण देवलोक में यह तेरी मित्र हुई। इस भव में यह तेरी यशोमती नाम की पत्नी हुई है। इस तरह यशोमती के साथ तुम्हारा सात भवों का सम्बन्ध है। आगामी भव में तुम दोनों अपराजित देवलोक में उत्पन्न होओगे और वहां से चवकर तूं भरतखण्ड में अरिष्टनेमि नामका बावीसवाँ तीर्थंङ्कर होगा। यशोमती राजीमती नाम की स्त्री होगी। तुम से ही विवाह की निश्चय कर यह अविवाहित अवस्था में ही दीक्षित बनेगी और मोक्ष में जायगी।

अपने पूर्वभव का वृत्तान्त सुनकर शंख राजाको वैराग्य उत्पन्न हो गया। उसने अपने पुत्र को राज्य देकर दीक्षा ले ली। यशोमती ने एवं उनके छोटे भाईयों ने एवं मित्रों ने भी शंख राजा के साथ दीक्षा ग्रहण की। शंख मुनि ने बीस स्थानों की आराधना कर तीर्थङ्कर नाम कर्म का उपार्जन किया।

अन्त में अनशन कर शंखमुनि अपराजित नाम के अनुत्तर विमान में तेतीस सागरोपम की उत्कृष्ट स्थितिवालें महर्द्धिक देव बने उनके अनुजमुनि एवं यशोमती साध्वी भी अपराजित विमान में महर्द्धिक देव बने।

यदुवंश में अंधकवृष्णि और भोजवृष्णि नाम के दो परम प्रतापी राजा हुए। अंधकवृष्णि शौर्यपुर के और भोजवृष्णि मथुरा के राजा थे।

महाराज अंधकवृष्णि के समुद्रविजय, अक्षोभ स्तिमित, सागर, हिमवान, अचल, धरण, पूरण, अभिचंद, और वसुदेव ये दस दशार पुत्र थे। समुद्र विजय के बडे पुत्र का नाम अरिष्टनेमि था जिनका वर्णन पाठकों के सामने सक्षेप से दिया जाता है। महाराज अंधकवृष्णि के छोटे पुत्र वसुदेव के श्रीकृष्ण आदि पुत्र हुए। कृष्ण की माता का नाम देवकी था। देवकी ने एक समान आकृति रूप एवं रंगवाले आठ

पुत्रों को जन्म दिया। जिनमें श्रीकृष्ण सातवें और गजसुकुमाल आठवें पुत्र थे। महाराज वसुदेव के कुंती और माद्री ये दो छोटी बहने थीं। भोजवृष्णि के एक भाई मृत्तिकावती नगरी में राज्य करते थे। भोजवृष्णि के पुत्र महाराज उग्रसेन हुए। इनकी रानी का नाम धारिणी था।

जम्बूद्वीप के भरत क्षेत्र में शौर्यपुर नाम का नगर था। वहां के शासक का नाम था समुद्रविजय। उनकी रानी का नाम शिवा देवी था। शंखमुनि का जीव अनुत्तर विमान से चवकर कार्तिक वदि १२ के दिन चित्रा नक्षत्र के योग में महारानी शिवा देवी की कुक्षि में उत्पन्न हुआ। महारानी ने उसी रात्रि में तीर्थङ्कर के सूचक १४ महास्वप्न देखे। गर्भवती महारानी अपनी गर्भ का यत्नपूर्वक पालन करने लगी।

गर्भ के पूर्ण होने पर महारानी शिवा देवी ने श्रावन शुक्ला पंचमी के दिन चित्रा नक्षत्र में शंख के चिह्न से चिह्नित श्यामवर्णीय पुत्र को जन्म दिया। भगवान के जन्मते ही समस्तदिशाएं प्रकाश से प्रकाशित हो उठी। नरक के जीव भी कुछ समय के लिए शांति का अनुभव करने लगे। भगवान की माता का सूतिकाकर्म करने के लिए छप्पन दिग्कुमारिकाएँ आईं। इन्द्रादि देवों ने भगवान को मेरुपर्वत पर ले जाकर नहलाया और उत्सव किया। माता पिता ने भी पुत्र जन्मोत्सव किया। जब भगवान गर्भ में थे तब उनकी माता ने स्वप्न में अरिष्ठरत्नमयी चक्रधारा देखो थी इसलिए बालक का नाम अरिष्टनेमि रखा। अरिष्ठनेमि शैशव को पार कर युवावस्था को प्राप्त हुए।

एक समय श्रीअरिष्टनेमि घूमते हुए महाराजा श्रीकृष्ण के शस्त्रागार में पहुँच गये। शस्त्रागार का संरक्षक अरिष्टनेमि को वासुदेव श्रीकृष्ण ने शस्त्रों को दिखाने लगा। शस्त्रों का निरीक्षण करते हुए अरिष्टनेमि की दृष्टि सारंग धनुष पर पडो। उन्होंने उसी समय सारंग धनुष को उठाया। सारंग धनुष को उठाते देख संरक्षक अरिनेमि से बोला—"स्वामी यह धनुष श्रीकृष्ण के अतिरिक्त और कोई उठा नहीं सकता। यह बडा भारी और भयंकर धनुष है। आप इसे उठाने का व्यर्थ प्रयत्न न करें। अरिष्टनेमि हंसे और धनुष को उठाकर उसे कमलनालकी भान्ति झुकाकर प्रत्यंचा भी चढाई। और टंकार भी की। इस टंकार को सुनकर सभी लोग कांप गये। शस्त्रागार का रक्षक विस्फारित नेत्रों से देखता रह गया।

उसी समय अरिष्ठनेमि ने पांचजन्य शंख उठाया और फूंका। पांच जन्यकी आवाय सुनकर सारी पृथ्वी कांपने लगी और प्रजाजन घबरा उठे। उधर श्री अरिष्टनेमि ने सुदर्शनचक्र भी उठाकर और उसे घुमाया। फिर गदाएं और खड्ग चलाये जिनके विषय में सभी को ज्ञान था श्रीकृष्ण के अतिरिक्त उन्हें उठाने की शक्ति किसी में नहीं है।

अस्त्रशस्त्रों की आवाज सुनकर श्री कृष्ण के महल में खलबली मचगई। सभी बड़े बडे वीर एकत्र हुए जिनमें श्री कृष्ण के बडे भाई बलदेव भी थे। सभी दौड़कर श्रीकृष्ण के पास आये और बोले—गोविंद ! यह कैसी आवाजे आ रही हैं ! अभी अभो हमने सारंगधनुष की टंकार सुनी, पांचजन्य शंख की ध्वनि सुनी। कैसी आवाजे आ रहीं हैं। कोई चक्रवर्ती या वासुदेव तो पैदा नहीं हुआ हैं।

श्री कृष्ण स्वयं विस्मित थे। वे सोच ही रहे थे कि पहरेदार ने आकर सूचना दी कि श्रीअरिष्टनेमि शस्त्रागार में पहुचकर आपके शस्त्रों का प्रयोग कर रहे हैं। श्री कृष्ण को पहरेदार की सूचना पर विस्वांस नहीं हुआ। वे स्वयं अपने साथियों के साथ आयुधशाला में पहुंचे। वहां पहुँचने पर उन्होंने देखा कि अरिष्टनेमि सारंगधनुप को धारण कर पाँचजन्य शंख फूक रहे हैं। उनके आश्चर्य की सीमा न रही। अरिष्टनेमि ने श्री कृष्ण की ओर मुस्कराते हुए देखा और कहा—"भैया ! आपके शस्त्रागार के संरक्षक कहते थे कि इन अस्त्रशस्त्रों को आपके सिवाय और कोई नहीं उठा सकता और न चलाही सकता है। किन्तु मै इनमें ऐसी कोई विशेषता नहीं देखता।

श्रीकृष्ण अरिष्टनेमि के इस अतुलपराक्रम को देखकर विचार में पड़ गये। इस अतुलपराक्रमी के सामने श्रीकृष्ण को अपना भविष्य अंधकारमय दिखाई देने लगा। उन्हों ने अरिष्टनेमिको वास्तविक बल का पता लगाने का निश्चय किया अवसर देखकर श्रीकृष्ण श्रीअरिष्टनेमि से कहा—"भाई आज हम कुस्ती करें देखे कौन बली हैं ?" श्रीअरिष्टनेमि ने कहा—बन्धुवर। आप बडे हैं इसलिये आप हमेशा ही बली हैं। श्रीकृष्ण ने कहा इसमें क्या हर्ज है ! थोडी देर खेल ही हो जायेगा। श्रीअरिष्टनेमि बोले—धूल में लोटने की मेरी इच्छा नहीं है किन्तु मै बल परीक्षा का दूसरा उपाय बताता हूं। आप हाथ लम्बा कीजिए मै उसे झुका दूं। जो हाथ नहीं झुका सकेगा वही कम ताकत वाला मानां जायेगा। श्रीअरिष्टनेमि के इस प्रस्ताव को श्री कृष्ण ने मानलिया और उसी क्षण उन्होंने अपना हाथ लम्बा कर दिया। अरिष्टनेमि ने उनका हाथ इस तरह झुका दिया जैसे कोई बेंत की पतली लकडी को झुका देता हो। फिर श्रीअरिष्टनेमि ने हाथ लम्बा किया परन्तु श्रीकृष्ण उसे नहीं झुका सके। श्रीकृष्ण ने अपना पूरा बल अजमा लिया पर भुजा ज्यों की त्यों अकडी रही। श्रीकृष्ण स्वयं उनकी भुजा पर लटक गये किन्तु वे श्रीअरिष्टनेमि की भुजा को तनिक भी नहीं झुका सके। श्रीकृष्णने अजेय बली भाई को स्नेहातिरेक में गले लगाया।

वे भगवान श्रीअरिष्टनेमि के इस अपरिमेयबल को देखकर चिन्तित हो उठे। उनके मन में केई प्रकार की शंका—कुशंका होने लगी। वे अपने महल में आकर सोचने लगे—अगर श्रीअरिष्टनेमि इतना शक्तिशाली व्यक्ति है तो कहीं सारे भरतखण्ड में अपना राज्य स्थापित करने की लालसा तो उसके हृदय में जाग्रत नही हो जायगी ? इतने में कुलदेवी ने आकर कहा—हे कृष्ण ! चिन्ता की बात नहीं है। श्रीअरिष्टनेमि बावीसवें तीर्थङ्कर हैं। वे राज्यप्राप्ति के लिये नहीं किंतु जगत का उद्धार करने के लिए ही जन्मे हैं। यह कहकर देवी अन्तर्द्धान हो गई। देवी के मुख से बात सुनकर श्रीकृष्ण की चिन्ता कुछ कम हुई। फिर भी विचार आया—मैं सोलह हजार स्त्रियों के साथ भोग भोगता हूँ और श्रीअरिष्टनेमि अखण्ड ब्रह्मचारी है। इसी कारण उसका बल प्रबल है और वह अजेय है। यदि उसका विवाह हो जाय तो मेरा बल प्रयोग उस पर सफलता प्राप्त कर सकेगा।

श्रीकृष्ण ने अरिष्टनेनि को विवाहित करने का निश्चय किया। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए उन्होंने सत्यभामा को सहायक बनाया। उससे कहा—प्रिये ! तुम जानती हो कि श्रीअरिष्टनेमि युवा हो गया है फिर भी अविवाहित है। उसके माता—पिता बहू को देखने के लिए लालायित हैं। किन्तु वह सुनी अनसुनी कर देता है। समझता है कि विवाह गले का फन्दा है। दुनियां क्या समझती होगी कि तीन खण्ड के नाथ का भाई अविवाहित ही रह गया है। किसी ने एक लडकी भी उसे नहीं दी ! तुम चाहो तो उसे विवाह के लिए राजी कर सकते हो।

सत्यभामा ने कहा—नाथ ! मैं इसके लिए अवश्य प्रयत्न करूँगी। वसन्तोत्सव के अवसर पर में हर प्रकार का प्रयत्न कर देवरजी को मनाने का प्रयत्न करूंगी।

कुमार श्रीअरिष्टनेमि अलौकिक महापुरुष हैं। संसार में रहते हुए भी संसार से उचे उठे हुए हैं। राजप्रासाद में वास करते हुए भी राजसगुण से अलिप्त हैं। उनका लक्ष्य सुमेरु शिखर से भी अधिक उच्च और हिमालय के हिमशृंगों से भी अधिक उज्ज्वल और शुभ्र हैं। उनके आध्यात्मिक चिन्तन और संसार के प्रति औदास्यभाव से माता पिता भी चिन्तित हो उठे। वे भी अपने पुत्र को विवाहित देखना चाहते थे। अब चारों ओर अरिष्टनेमि को विवाहित करने के लिए प्रयत्न होने लगे। वसन्तोत्सव समीप आ गया रैवतगिरि अपनी प्राकृतिक सुषमा के लिए अनुपम है। उसी पर वासुदेव श्रीकृष्ण ने वसन्तोत्सव मनाने का निश्चय किया। धूम धाम से तैयारियां शुरू हो गई। श्रीकृष्ण, बलदेव आदि सभी यादवगण अपनी अपनी प्रियतमाओं के साथ रैवतगिरिपर पहुँचे और वहां क्रीडा में निमग्न हो

गये। निसर्ग की सर्वोत्तम वनश्री से सुशोभित रैवतगिरि पर यादवगण खुलकर क्रीडा करने लगे। रंग रस के रसिया श्रीकृष्ण वहां स्वयं मौजूद थे। और अपनी सहेलियों के साथ उनकी पटरानी सत्यभामा भी थी। ऐसा जान पडता था कि मानो रति के साथ कामदेव ने आज इस स्वभाव-सुन्दर गिरिराज को अपना क्रीडास्थल बनाया हो परंतु। युवक श्रीअरिष्टनेमि को इस रागरंग में कोई अभिरुचि नहीं थी। वे एकान्त में वृक्ष की शीतल छाया में बैठकर संसार को असारता का विचार करने लगे।

सत्यभामा की दृष्टि एकान्त में बैठे हुए कुमार श्रीअरिष्टनेमि पर पडी। अच्छा अवसर देखकर वह भी अपनी सहेलियों के साथ उनके पास पहुँच गई वस्तुतः यह सारा आयोजन श्रीअरिष्टनेमि को लक्ष्य कर के ही किया गया था। अवसर पाकर सत्यभामा श्रीअरिष्टनेमि से कहने लगी—

देवरजी! योग साधना का समय अभी दूर है भोग की साधना में सिद्धि प्राप्त करने के बाद योग की साधना सरल हो जावेगी। मुझे आपकी यह एकान्त प्रियता अच्छी नहीं लगती। आपके भ्रातृवृन्द सृष्टि सौंदर्य का रसपान कर रहे हैं और आप एकांत वृक्ष के नीचे बैठे बैठे आत्मा परमात्मा की बातें सोंच रहे हैं। आपकी इस उदासीनता के कारण हमारा राग उत्सव रस रहित हो जाता है। आप भी आओ। और इस आमोद प्रमोद में समुचित भाग लो। जीवन की ऐसी घडियां बार-बार नहीं आतीं। मै जानती हूँ आपके अकेलेपन का कारण। आपको एक योग्य सहचरी की आवश्यकता है। क्या वह बात सच है न? ।

कुमार श्रीअरिष्टनेमि चुपचाप सत्यभामा की यह बात सुन रहे थे। उन्होंने भाभी की इस मोहदशा पर मुस्करा दिया। वह सोचने लगे। "अनन्त काल तक भोग भोगने पर भी जिनसे तृप्ति नहीं हो सकती जो दुर्गति के कारण हैं और जिनसे आत्मा का अधःपतन होता है, उन भोगों के प्रति इतनी उत्सुकता क्यों है? जिस देवदुर्लभ मानव देह से अनुत्तर और अव्याबाधसुख की प्राप्ति होती है उस मानवदेह को भोग की भट्टी में झोंक देना क्या विडम्बना नहीं है?

इस प्रकार संसार की विचित्रदशा पर कुमार श्रीअरिष्टनेमि को हँसी आ गई। सत्यभामा ने इस हँसी को विवाह का सूचक समझ लिया, यही नहीं, उसने कुमार की लग्न स्वीकृति की घोषणा भी कर दी।

श्रीअरिष्टनेमि को विवाह के लिए राजी हुआ समझकर सारा यादव परिवार हर्ष से उन्मत्त हो गया। वसन्तोत्सव भी समाप्त हो गया। यादव गण अपने अपने परिवारों के साथ लौट आये। श्रीकृष्ण ने श्रीअरिष्टनेमि के द्वारा विवाह की स्वीकृति का वृत्तान्त समुद्रविजय तथा शिवादेवी से कहा उन्हें यह जान कर अत्यन्त प्रसन्नता हुई। उन्होंने श्रीकृष्ण से फिर कहा—श्रीअरिष्टनेमि के लिए योग्य कन्या को खोजने का काम भी आप ही का है। इसे भी आप ही पूरा कीजिए। श्रीकृष्णने यह जिम्मेदारी अपने पर ले ली।

भोजकवृष्णि के पुत्र महाराज उग्रसेन मिथिला में शासन करते थे। उनकी रानी का नाम धारिणी था। इनके एक पुत्र था जिनका नाम कंस था। अपराजित विमान से चवकर यशोमती का जीव धारिणी की कुक्षि में उत्पन्न हुआ। उसका नाम राजीमती रखा गया। राजीमती अत्यन्त सुशील सुन्दर और सर्वगुण सम्पन्न राजकन्या थी। उसकी कान्ति बीजली की तरह देदीप्यमान थी। वह शैशवकाल को पार कर युवा अवस्था को प्राप्त हुई तब माता पिता को योग्यवर की चिन्ता हुई। महाराज उग्रसेन राजीमती का विवाह श्रीअरिष्टनेमि कुमार से करना चाहते थे और स्वयं श्रीकृष्ण की भी यही इच्छा थी।

कन्या की मांग करने के लिए श्रीकृष्ण स्वयं महाराज उग्रसेन के घर गये। श्रीकृष्ण वासुदेव के

आगमन से उग्रसेन को आनन्द की सीमा न रही। उन्होंने बडी श्रद्धा और भक्ति से श्रीकृष्ण का राजोचित सन्मान किया। महाराज उग्रसेन से कुशल क्षेम सम्बन्धी वार्ताविनिमय के बाद श्रीकृष्ण बोले—महाराज ! मैं आपकी गुणवती पुत्री राजोमती का विवाह यदुकुलनन्दन श्रीअरिष्ठनेमि से करना चाहता हूँ। आपकी कन्या की याचना करने के लिए ही मैं आपके द्वार पर आया हूं। आप मुझे निराश तो न करेंगे !

राजा उग्रसेन श्रीअरिष्टनेमि के गुणों की प्रशंसा तो सुन चुके हि थे। हृदय में उमडते हुए प्रसन्नता के समुद्र को रोकते हुए उन्होंने कहा—"आपको निराश किया ही कैसे जा सकता है। जब कि हम स्वयं राजीमती के लिए ऐसे ही उपयुक्त वर की खोज में थे।" आप सपरिवार यहां पधारे। आप शीघ्र ही विवाव की तैयारियां आरंभ कर दें। श्रावणशुक्ला षष्ठी के शुभ मूहूर्त में कुमार का विवाह होगा।" श्रीकृष्ण उग्रसेन से स्वीकृति प्राप्त कर द्वारावती लौट आये।

श्रीकृष्ण के लौटते ही महाराज समुद्रविजय ने विवाह की तैयारियां प्रारंभ कर दीं। सभी यादवों को आमंत्रण भेजे गये। द्वारिका नगरी सजायी गई। जगह जगह बाजे बजने लगे। मंगलगीत गाये जाने लगे। छप्पनकोटी यादवों के स्वामी श्रीकृष्ण अपने लघु भ्राता श्रीनेमिकुमार की विशाल बारात लेकर विवाह करने के लिए चल पडे। अश्व, हाथी, रथ और शिबिकाओं से भरी हुई यह बारात जहां ठहरतीं वहां एक छोटी सी नगरी जैसी बन जाती थी। उसकी सजावट और शोभा को देखने के लिए दूर दूर से लोग पंक्तियों में चले आ रहे थे। आकाश में रहे हुए देवतागण पुष्प बरसाकर भगवान श्रीअरिष्टनेमि कुमार का स्वागत कर रहे थे।

इधर महाराजा उग्रसेन यादवों की विशाल बारात का स्वागत करने के लिए आतुर थे। वे चाहते थे कि श्रीअरिष्टनेमि की इस बारात का स्वागत ऐसा हो कि द्वारिका के महारथी भी एक बार दांतों तले अंगुली दबाने लगे।

राजद्वार पर नगारे बज रहे थे और शहनाईयों के अमृतस्वर तो समाप्त ही नहीं होते थे।

महारांनी धारिणी भी अन्तःपुर में तैयारियां कर रही थी। राजकुल की नववधुओं के उत्साह का कोई पार न था। उनके उत्साह सूचक नूपुरों की आवाजों से सारा महल गूंज रहा था। उनके हास्य से सांरा महल हंस पडता था। लग्नवेला समीप आ रही थी। राजमहल के प्रांगन में तैयारिया हो रही थी। पुरोहित आ गये थे। वेदिका पर कुंकुम और अक्षत रख दिये गये थे। मण्डप के बाहर नव-युवतियां मंगल कलश लिये वर राजा का स्वागत करने के लिए खडी थीं।

यादवकुल—शिरोमणि श्रीनेमिकुमार का रूप अद्भूत था। सिर पर मुकुट, भुजाओं में भुजबंध, कानों में कुण्डल अजानुबाहु में सुन्दर चाप। वे कामदेव के दूसरे अवतार लगते थे। वे अकेले ही सारथी के साथ रथपर बैठे हुए थे। महल के निकट पहुंचते ही शहनाईयों और गीतों की आवाज को भेदते हुए पशुओं के चीत्कार सुनाई दिये। श्रीअरिष्टनेमि के कानों में यह चीत्कार शूल की भांति चुभे। कुछ क्षण के बाद शहनाई के बजाय केवल पशुओं की चीत्कार ही चीत्कार सुनाई देने लगी। वे सिहर उठे। हृदय धडकने लगा। उन्होंने सारथी से पूछा के यह शोकपूर्ण हृदय को हिलादेने वाला आक्रन्दन क्यों और कहाँ से आ रहा है ?

सामने बाडो में बन्ध पशुओं की ओर इशारा करके सारथी बोला—स्वामी ! ये पशु पक्षी बारात में आए हुए मांस—भोजी अतिथियों की भोजन सामग्री हैं अपना स्थान छूट जाने से, स्वाधीनता लूट जाने से और अपने प्रिय साथियों का साथ छूट जाने से अपने प्रिय प्राणों के नाश के भय से व्याकुल एवं भयभीत हो रहे हैं। अज्ञात पीडा से छटपटा रहे हैं अश्रुतपूर्व वाद्यध्वनियों से एवं मृत्यु की आशंका से उनका हृदय विह्वल हो रहा है।

सारथी के मुख से यह सुनकर उनकी आत्मा कांप उठी। उन्होंने इस अनर्थ को टालने का निश्चय किया। करुणा के सागर भगवान इस महान हिंसा के भागीदार कैसे बन सकते हैं! वे मनही मन सोचने लगे–इस समय मेरे ही कारण इन पशुओं की बलि होगी। मैं इन पशुओं के शव पर सुख का बडा महल खडा नहीं करूंगा उसी क्षण नेमिकुमार ने सारथी से कहा सारथी! जाओ! बाडे के द्वार खोल कर इन पशुओं को मुक्त कर दो। मैं इन पशुओं की बलिवेदी पर सेहरा नहीं बाँध सकता। सारथी ने श्रीनेमिकुमार के आदेश से बाडे का द्वार खोल दिया! द्वार खुलते हि उन्मुक्त मन से प्रसन्नता की किलकारियां करते हुए पशु पक्षी अपने–अपने निवास स्थान की ओर भागने लगे। पशुओं को उन्मुक्त मन से भागते देख श्रीअरिष्टनेमि अपार हर्ष का अनुभव करने लगे। साथी के इस कार्य पर प्रसन्न होकर श्रीनेमिकुमार अपने समस्त अमूल्य आभूषण सारथी को दे दिया। भगवान विना विवाह किये शौर्यपुर लौट आये।

भगवान को वापस लौटता देख एक दूत दौडता हुआ लग्नमण्डप के पास पहुँचा। उसने महाराज उग्रसेन से कहा–स्वामी! श्रीनेमिकुमार विवाह करने से इनकार करके आधे मार्ग से ही वापिस लौट आये। क्यों! महाराज ने धडकते हुए हृदय से प्रश्न किया। सन्देश वाहक दूत ने कहा–महाराज। पाकशाला के पास में बन्धे हुए पशुओं की चीत्कारों ते उनके हृदय को भारी आघात पहुँचाया। वहाँ गये और सर्व पशुओं को बन्धन से मुक्त कर विना कुछ कहे सुने सारथी को रथ लौटाने का आदेश दिया मैं उस समय वहाँ उपस्थित था। वे कुछ न बोले किन्तु उनकी आखों में अद्‌भूत चमत्कार था। ऐसा लगता था मानो उन्होने सब कुछ पा लिया।

चहल पहल रुक गई। महाराज उग्रसेन महारथी श्रीकृष्ण आदि सब के सव अपने अपने शीघ्रगामी वाहन पर आरूढ होकर घटना स्थल पर पहुँचे। महारानी भी दों चार दासियों के साथ शिबिका में बैठकर रवाना होने की तैयारी करने लगी। शहनाई के स्वर शिथिल पड गये। राजकुमारी राजुल तो मूर्च्छित होकर जमीन पर गिर पड़ी। महारानी राजुल को धैर्य बंधा रही थी श्रावण के बादलों की तरह सबकी आंखों में आंसू बह रहे थे।

समुद्रविजय, महारथी श्रीकृष्ण तथा महाराज उग्रसेन श्रीनेमिकुमार को समझाने आये किन्तु श्रीनेमिकुमार अपने निश्चय पर अटल थे। वे सांसारिक भोग विलासों को छोड़ने का निश्चय कर चुके थे। महाप्रभु श्रीनेमिकुमार के दृढ वैराग्य व अटल तर्क के सामने वे सब निरुत्तर थे। अन्त में वे निराश होकर अपने–अपने स्थान में लौट आये। भगवान श्रीनेमिनाथ बारात छोड़ कर अपने नगर की ओर रवाना हुए।

भगवान के जाते ही बरातियों की सारी उमंगे हवा हो गई। सभी के चेहरे पर उदासी छा गई। महाराजा उग्रसेन की दशा और भी विचित्र हो रही थी। उन्हें कुछ नहीं सूझ रहा था कि इस समय क्या करना चाहिए?

राजीमती को जब चेतना आई तो उसका सारा दुःख बाहर उमड आया। वह अपना सर्वस्व श्रीनेमिकुमार के चरणों में अर्पित कर चुकीं थी। उनके विमुख होने पर वह अपने को सुनीसी, निराधारसी एवं नाविक रहित नौका-सी मानने लगी। उसकी आंखोमें अविराम आंसू वह रहे हे थे माता–पिता पुत्री – इस दुःख को देख नहीं सके। उन्हों ने कहा–"बेटी! राजकुमार श्रीनेमि ने हमारी बात नही मानी। वह वापिस चला गया। हजारां युक्तियाँ का एकही उत्तर था और वह था उसका अवलोकन

सभी उसके सामने अकिंचित्कर सिद्ध हुए। बेटी ! हमारा दुर्भाग्य ऐसें रत्न सरीखे जामाता को देख कर मेरा हृदय कितने उल्लासें भरता !

राजीमती बोली–माताजी ! यदि वे वापिस नहीं आ ये तो मेरा क्या होगा !

महारानी ने उत्तर दिया– बेटी ! उन्हों ने दीक्षा लेने का दृढ निश्चय कर लिया है । उस महापुरुष के निश्चय को बदलने की अब किसी में ताकत नहीं है। अब तो उन्हें भूल जाने में ही अपनी भलाई है। किसी नये राजकुमार की खोज करेंगे। कुँवारी कन्या के सौ वर होते हैं। ऐसे सन्यासी का क्या विश्वास। बेटी, जो हुआ सो ठीक हुआ। पांच फेरे फिर गये होतें तो न जानें क्या होता ? राजमाताको संतोष था।

राजीमती बोली – माता जी ! आप क्या कहती हैं ! यह प्रीति इस भव में कम हो सकती ! राजकुमार को देखतेहीं मेरे मन में अनन्त भवों की प्रीति उत्पन्न होती थी। मैं तो उनसें कभी का विवाह कर चुकी थी। "

पुत्री ! लग्नसंस्कार तो होना ही चाहिए न ! विना उसके विवाह कैसा ! पुत्री तू मूर्खता न कर ! भावावेश में अपना भव न विगाड। यह रूप, यह यौवन, यह विद्या !

राजकुमारी हंसी–माता जी इसीलिए कहती हूं कि मेरा विवाह हो चुका था। लग्न संस्कार और विधि से क्या प्रयोजन ? ये तो हृदय में कभी के मेरे पति हो चुके थे। यह अग्नि यह लग्नमंत्र यह राजगुरु तो आन्तरिक लग्न होने के पश्चात् होनेवाली शोभा के पुतले मात्र हैं। राजकुमार श्रीनेमि मेरे है। और मै उनकी हूँ। अनेक भव की प्रीति आज कैसे तोडुं !–बस हमारा विवाह अमर है। पुत्री ! नेमिकुमार तो दीक्षा लेंगे क्या उनके पीछे तुम भी ऐसी ही रह जाओगी !

राजमती– माताजी ! जब वे दीक्षा लेंगे तो मैं भी उनके मार्ग पर चलूंगी। पति कठोर संयम का पालन करे तो पत्नीं को भोग विलासों में पडे रहना शोभा नहीं देता। जिस प्रकार वे काम क्रोध आदि आत्मा के शत्रुओं को जीतेंगे उसी प्रकार में भी उन पर विजय प्राप्त करूगीं।

राजीमती के इस दृढ निश्चय को कोई भी बदल नहीं सका। वह भी नेमिकुमार के मार्ग पर चलने के लिए कृत निश्चय हो गई। अब वह सारा समय धार्मिक आचरणों में बिताने लगी।

महल में लौट आने के बाद भगवान श्रीअरिष्टनेमि ने वार्षिक दान देना आरंभ किया। धीरे धीरे एक वर्ष बीत गया। भगवान श्रीअरिष्टनेमि का वार्षिकदान समाप्त हो गया। इन्द्र आदि देव दीक्षा–महोत्सव मनाने के लिए आये। श्री कृष्ण तथा यादवों ने भी खूब तैयारियाँ की। अन्त में श्रावण शुक्ला षष्ठी के दिन 'उत्तरकुरु नाम की शिविका पर आरूढ होकर उज्जयंत पर्वत पर सहस्राम्र नामक उद्यान में भगवान ने दीक्षा धारण कर ली। उनके साथ उनके लघु भ्राता रथनेमि दृढनेमि आदि एक हजार राजाओं ने भी दीक्षा ग्रहण की उस दिन भगवान ने छट की तपस्या की थी।

तीसरे दिन गोष्ठ में वरदत्त ब्राह्मण के घर परमान्न से पारणा किया। देवताओं ने वसुधारादि पांच दिव्य प्रगट किये। भगवान अन्यत्र विहार कर दिया।

चौवन दिनरात छद्मस्थ काल में विचरने के पश्चात् भगवान रैवतगिरि के सहस्राम्र उद्यान में पधारे। वहाँ वेतस्–वृक्ष के नीचे अष्टमभक्त तप की अवस्था में आश्विनमास की अमावस्या के दिन घातिकर्मो को क्षय कर भगवान ने केवलज्ञान और केवल दर्शन प्राप्त किया। भगवान को केवल ज्ञान हुआ जानकर इन्द्रादिदेव भगवान की सेवा में आये। समवशरण की रचना हुई। एक सौ बीस धनुष उँचे चैत्यवृक्षके नीचे रत्नमय सिंहासन पर आरूढ होकर भगवान उपस्थित परिषद्को धर्मोपदेश देनें

लगे। भगवान की वाणी श्रवण कर वरदत्त आदिने दीक्षा ग्रहण कर गणधर पद प्राप्त किया। भगवान की देशना समाप्त होने पर वरदत्त गणधर ने उपदेश दिया। भगवान के उपदेश से अनेक राजाओं तथा यादवकुमारों ने श्रावक व्रत एवं साधुव्रत ग्रहण किये। भगवान के शासन में गोमेधयक्ष एवं अम्बिकादेवी शासन रक्षक देव देवी के रूप में प्रकट हुए।

भगवान श्रीअरिष्टनेमि की दीक्षा का समाचार राजीमती को भी मालूम पड़ा। समाचार सुन कर वह विचार में पड़ गई कि अब मुझे क्या करना चाहिये। इस प्रकार विचार करते-करते उसे जातिस्मरण ज्ञान हो गया उसे मालूम पड़ा कि मेरा और भगवान का प्रेम सम्बन्ध पिछले आठभवों से चला आ रहा है। इस नवें भव में भगवान का संयम अंगीकार करने का निश्चय पहले से था। मुझे प्रतिबोध देने की इच्छा से ही उन्होने ने विवाह का आयोजन स्वीकार कर लिया था। अब मुझे शीघ्र संयम अंगीकार करके उनका अनुशरण करना चाहिए।

महासती श्रीराजीमती ने माता पिता को पूछकर सातसौ सखियों के साथ दीक्षा ग्रहण की। महाराज उग्रसेन तथा श्रीकृष्ण ने उसका दीक्षा महोत्सव किया। राजकुमारी श्रीराजीमती साध्वी बन गई। श्रीकृष्ण तथा सभी यादवों ने उसे वंदना की। अपनी शिष्याओं सहित राजीमती तप-संयम की आराधना करने लगी। थोडे समय में ही वह बहुश्रुत हो गई।

एक बार राजीमती भगवान श्रीअरिष्टनेमि के दर्शन के लिए अपनी शिष्याओं के साथ गिरनार पर्वत की ओर जा रही थी। मार्ग में जोर से आंधी चलने लगी। साथ में पानी भी बरसने लगा। कालीघटाओं के कारण अंधेरा छा गया। साध्वी राजीमती उस बावण्डर में पडकर अकेली रह गई। सभी साध्वियों का साथ छुट गया। वर्षा के कारण उसके सारे कपडे भीग गये। राजीमती को पास ही में एक गुफा दिखाई पडी। कपडे सुखाने के विचार से वह उसी में चली गई। उसने एकान्त स्थान देखकर एक एक करके समस्त वस्त्र उतार दिये और सुखाने के लिए फैला दिये।

रथनेमि उसी गुफा के एक कोने में ध्यान कर रहे थे। अन्धेरा होने से राजीमती को वे दिखाई नहीं दिये किन्तु रथनेमि की दृष्टि राजीमती के शरीर पर पडी। उनके हृदय में कामवासना जागृत हो गई। एकान्तस्थान, वर्षा का समय, सामने वस्त्र रहित सुन्दरी, ऐसी अवस्था में रथनेमि अपने स्वरूप को न सम्भाल सके। वे राजीमती के निकट गये और कहने लगे-सुन्दरी! मैं तुम्हारा देवर रथनेमि हूँ। अचानक एक पुरुष को अपने सामने देख वह अचका गई। उसी समय उसने अपने अंगों को ढंक लिया।

राजीमती को सम्बोधित कर रथनेमि कहने लगे-प्रिये! डरो मत! भय और लज्जा को छोड दो! आओ हम तुम मनुष्योचित सुख भोगे। यह स्थान एकान्त है, कोई देखनेवाला नहीं है। दुर्लभ मानवदेह को पाकर सुख से वंचित रहना उचित नहीं है।

राजीमती ने कहा-कुमार रथनेमि! आप अन्धक वृष्णि के पौत्र हैं, महाराज समुद्रविजय के पुत्र एवं तीर्थङ्कर भगवान श्रीअरिष्टनेमि के भाई हैं। त्यागी हुई वस्तु का फिर भोगना लज्जा जनक है।

पक्खंदे जलियं जोई, धूमकेउ दूरासयं।
नेच्छँति वंतयं भोतुं कुले जाया अंगधणे॥

"अगन्ध कुल में पैदा हुए सर्प जाज्वल्यमान प्रचण्ड अग्नि में गिरकर भस्म हो जाते हैं। किन्तु उगले हुए विष को कभी पीना पसन्द नहीं करते।" आप तो मनुष्य हो, महापुरुषों के कुल में आपका जन्म हुआ है फिर यह दुर्भावना कहां से आई?

आपने घर–द्वार छोडकर प्रव्रज्या ग्रहण की है । आप और भगवान दोनों एक कुल के हैं । इस प्रकार श्रेष्ठ कुल में जन्म लेकर वमन की हुई वस्तु को फिर ग्रहण करना श्रेष्ठ मानव का कार्य नही हो सकता । हे महामुने ! अपने इस दुष्कृत्य का पश्चाताप कर पुनः संयम में दृढ होइये ।

राजीमती के उक्त प्रभावपूर्ण वचन सुनकर रथनेमि का सिर लज्जा से झुक गया । उसे अपने कृत्य पर पश्चाताप होने लगा । अपने अपराध के लिए राजीमतो से बारं बार क्षमा मांगने लगे ।

रथनेमि ने भविष्य के लिए संयम में दृढ रहने की प्रतिज्ञा को । राजीमती साध्वी ने उन्हें कई प्रकार के हित वचन सुनाकर संयम में दृढ किया । जैसे मदोन्मत्त हाथी अंकुश की मार से वश में हो जाता है, उसी प्रकार राजीमती के सुभाषित वचनो से कामोन्मत्त रथनेमि पुनः ठिकाने आ गये । वे फिर संयम में स्थित हो गये ।

बार बार चोट खाये रथनेमि ने अपनी समस्त शक्ति कामवासना के उन्मूलन में लगा दी । उन्होंने उग्रतर तपस्या करके घातीकर्मों को नष्ट किया और केवलज्ञान ओर केवल दर्शन प्राप्त करके मोक्ष की राह ली ।

रथनेमि को संयम में स्थिर कर राजीमती गुफा से निकली और अपने साध्वी समूह में आ मिली । सब के साथ वह पहाड पर चढी और भगवान श्रीअरिष्टनेमि के दर्शन किये । राजीमती की चीर अभिलाषा पूर्ण हुई । आनन्द से उसका हृदय गद्‌गद्‌ हो उठा । उसने भगवान का उपदेश सुना और अपनी आत्मा को सफल बनाया । भगवान के उपदेशानुसार कठोर तप और संयम की आराधना करने लगी । फलस्वरूप उसके सभी कर्म नष्ट हो गये । भगवान मोक्ष पधारने से चौदह दिन पहले वहसिद्ध, बुद्ध और मुक्त हो गई ।

भगवान श्रीअरिष्टनेमि ने अनेक स्थलों पर विहार कर यादव कुमारो को राजाओं को एवं श्रेष्ठियों को प्रतिबोध दिया । भगवान के उपदेश से अठारह हजार साधु हुए, वरदत्त आदि ग्यारह गणधर हुए । ४० हजार साध्वियां, ४०० चारसौ चौदहपूर्वधर, १५०० पंदरसौ अवधिज्ञानी, १५०० पंदरसौ वैक्रियलब्धिवाले, १५०० पंदरसौ केवली १००० एक हजार मनः पर्ययज्ञानी, ८०० आठसौ वादी, १ लाख ६९ हजार श्रावक एवं ३ तीन लाख ३९ हजार श्राविकाएँ हुई ।

विहार करते हुए भगवान रेवतगिरि पर पधारे । वहां अपना निर्वाणकाल समीप जानकर ५३६ साधुओं के साथ अनशन ग्रहण किया । एक मास के अन्त में आषाढ शुक्ला अष्टमी के दिन चित्रा नक्षत्र में ५३६ मुनियों के साथ भगवान निर्वाण पधारे ।

भगवान श्रीअरिष्टनेमि कुमारावस्था में तीन सौ वर्ष एवं साधु पर्या में ७०० वर्ष व्यतीत किये । भगवान की कुल आयु १००० एक हजार वर्ष की थी । शरीर की उंचाई १० धनुष प्रमाण थी ।

भगवान श्रीनमिनाथ के निर्वाण के बाद पांच लाख वर्ष के बीतने पर भगवान अरिष्टनेमि का निर्वाण हुआ ।

२३ भगवान श्रीपार्श्वनाथ (पूर्वभव)

जम्बूद्वीप के पूर्वविदेह में पुराणपुर नामका नगर था । उसमें वज्रबाहू नामका राजा राज्य करता था । उसकी रानी का नाम सुदर्शना था । वज्रनाभ मुनि का जीव देव आयु पूरी कर सुदर्शना की कुक्षि में पुत्र रूप से जन्मा । उसका नाम 'सुवर्णबाहु' रखा गया । सुवर्णबाहु युवा हुए । उनका योग्य राजकुमारी के साथ विवाह हुआ । उनके पिता वज्रवाहु ने उन्हें राज्यगद्दी पर बिठला कर दीक्षा ले ली ।

एक दिन सुवर्णबाहु घोडे पर सवार होकर घूमने निकले । घोडा वेकाबू हो गया और उन्हें एक भयानक जंगल में ले गया वहां एक सुन्दर सरोत्र के किनारे गालवऋषि का आश्रम था । राजा विश्राम लेने के लिये आश्रम में गया । वहां पद्मा नाम की राजकुमारी तापस कन्याओं के साथ रहती थी । राजा

की दृष्टि उस पर पडी । वह उसके सौंदर्य को देखकर मुग्ध हो गया । राजा ने मालवऋषि से पद्मा की मांग की । मालवऋषि ने बडे प्रेम से पद्मादेवी का विवाह-सुवर्णबाहु से कर दिया । कुछ समय तक वहां रहकर सुवर्णबाहु अपनी राजधानी पुराणपुर लौट आया ।

राज्य करते हुए सुवर्णबाहु की आयुधशाला में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ । बाद में क्रमशः अन्य तेरह रत्न भी उत्पन्न हो गये । रत्नों की सहायता से सुवर्णबाहु ने छह खण्ड पर विजय प्राप्त कर ली । वे चक्र-वर्ती बनकर पृथ्वी पर एक छत्र राज्य करने लगे ।

एक बार जगन्नाथ तीर्थंकर भगवान का पुराणपुर में आगमन हुआ । सुवर्णबाहु परिवार सहित उनके दर्शन के लिए गया । वहां उपदेश सुनकर उन्हें जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न हो गया । अपने पूर्वभव को देख उन्हें वैराग्य उत्पन्न हो गया । उन्होंने अपने पुत्र को राज्यभार देकर जगन्नाथ भगवान के समीप दीक्षा ग्रहण कर ली । वहाँ कठोर तप करके उन्होंने तीर्थंकर नामकर्म का उपार्जन किया ।

कमठ का जीव नरक से निकल कर क्षीणवना वन में सिंह रूप से उत्पन्न हुआ । वह भ्रमण कर रहा था दो दिन से उसे आहार नहीं मिला था । उधर सुवर्णबाहु मुनि उसी वन में विहार कर रहे थे । मुनि को सामने आता देख वह उन पर झपटा । मुनि ने उसी समय संथारा कर लिया । पूर्व जन्म के वैर के कारण सिंहने उन्हें मार डाला । समभाव से सुवर्णबाहु मुनि ने देह को छोडा । मरकर वे महाप्रभ नामके विमान में महर्द्धिक देव बने ।

कमठ का जीव सिंह मरकर चौथी नरक में पैदा हुआ ।

भगवान श्री पार्श्वनाथ का जन्म—

इसी जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में काशीदेश में वाराणसी नामकी नगरी थी । उस नगर में अश्वसेन नाम के शूर-वीर राजा राज्य करते थे । उनकी रानी का नाम वामा देवी था । वह रूप लावण्य एवं सुलक्षणों से सुशोभित थी । उस समय महाप्रभ विमान में सुवर्णबाहु का जीव अपनी २२ सागरोपम की स्थिति पूर्ण कर चुका था । वह वहां से चैत्रकृष्ण चतुर्थी के दिन विषाखा नक्षत्र में चवकर महारानी वामा देवी की कुक्षिमें उत्पन्न हुआ । महारानी ने चौदह महास्वप्न देखे ।

गर्भकाल की समाप्ति के बाद पौष कृष्णा दशमी के दिन अनुराधा नक्षत्र में नीलवर्णी सर्प लक्षण-वाले एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया । इन्द्रादि देवों ने आकर सुमेरु पर्वत पर जन्मोत्सव किया । भगवान गर्भ में थे उस समय एक भयंकर सर्प फूत्कार करता हुआ माता की बगल से निकल गया था इसलिए बालक का नाम पार्श्वकुमार रखा गया । पार्श्वकुमार युवा हुए । वे अब अपने पिता के राज्यकार्य में हाथ बटाने लगे ।

एक बार एक दूत राजा अश्वसेन के दरबार में आकर बोला—नरदेव ! मैं कुशलस्थल नगर के राजा नरवर्मा का दूत हूँ । महाराज नरवर्मा अपने पुत्र प्रसेनजित को राज्य सौंपकर दीक्षित हो गये हैं । राजा प्रसेनजित की पुत्री का नाम प्रभावती है । वह अत्यन्त रूपवती है । एक बार प्रभावती ने राजकुमार पार्श्वनाथ की प्रशंसा सुनी और उसने अपना जीवन उनके चरणों में समर्पण करने का संकल्प कर लिया वह रात दिन उन्हीं के ध्यान में लीन हो एक त्यागिनी की तरह जीवन बिताने लगी । राजा प्रसेनजित को जब ये समाचार मिले तो उसने प्रभावती को स्वयंवरा की तरह बनारस भेजने का संकल्प किया । कलिंगदेश के यवनराज को जब इस बात का पता चला तो वह प्रभावती को प्राप्त करने के लिए सेना सहित कुशस्थल पर चढ आया । उसने अपनी विशाल सेना से सारे नगर को घेर लिया । महा-राज प्रसेनजित इस कार्य में आपकी सहायता चाहते हैं । अब आप जैसा उचित समझे वैसा करें ।

की दृष्टि उस पर पडी। वह उसके सौंदर्य को देखकर मुग्ध हो गया। राजा ने मालवऋषि से पद्मा की मांग की। मालवऋषि ने बडे प्रेम से पद्मादेवी का विवाह सुवर्णबाहु से कर दिया। कुछ समय तक वहां रहकर सुवर्णबाहु अपनी राजधानी पुराणपुर लौट आया।

राज्य करते हुए सुवर्णबाहु की आयुधशाला में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ। बाद में क्रमशः अन्य तेरह रत्न भी उत्पन्न हो गये। रत्नों की सहायता से सुवर्णबाहु ने छह खण्ड पर विजय प्राप्त कर ली। वे चक्रवर्ती बनकर पृथ्वी पर एक छत्र राज्य करने लगे।

एक बार जगन्नाथ तीर्थंकर भगवान का पुराणपुर में आगमन हुआ। सुवर्णबाहु परिवार सहित उनके दर्शन के लिए गया। वहां उपदेश सुनकर उन्हें जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न हो गया। अपने पूर्वभव को देख उन्हें वैराग्य उत्पन्न हो गया। उन्होंने अपने पुत्र को राज्यभार देकर जगन्नाथ भगवान के समीप दीक्षा ग्रहण कर ली। वहाँ कठोर तप करके उन्होंने तीर्थंकर नामकर्म का उपार्जन किया।

कमठ का जीव नरक से निकल कर क्षीणवना वन में सिंह रूप से उत्पन्न हुआ। वह भ्रमण कर रहा था दो दिन से उसे आहार नहीं मिला था। उधर सुवर्णबाहु मुनि उसी वन में विहार कर रहे थे। मुनि को सामने आता देख वह उन पर झपटा। मुनि ने उसी समय संथारा कर लिया। पूर्व जन्म के वैर के कारण सिंहने उन्हें मार डाला। समभाव से सुवर्णबाहु मुनि ने देह को छोडा। मरकर वे महाप्रभ नामके विमान में महर्द्धिक देव बने।

कमठ का जीव सिंह मरकर चौथी नरक में पैदा हुआ।

भगवान श्री पार्श्वनाथ का जन्म—

इसी जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में काशीदेश में वाराणसी नामकी नगरी थी। उस नगर में अश्वसेन नाम के शूर–वीर राजा राज्य करते थे। उनकी रानी का नाम वामा देवी था। वह रूप लावण्य एवं सुलक्षणों से सुशोभित थी। उस समय महाप्रभ विमान में सुवर्णबाहु का जीव अपनी २२ सागरोपम की स्थिति पूर्ण कर चुका था। वह वहां से चैत्रकृष्ण चतुर्थी के दिन विशाखा नक्षत्र में चवकर महारानी वामा देवी की कुक्षिमें उत्पन्न हुआ। महारानी ने चौदह महास्वप्न देखे।

गर्भकाल की समाप्ति के बाद पौष कृष्णा दशमी के दिन अनुराधा नक्षत्र में नीलवर्णी सर्प लक्षणवाले एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया। इन्द्रादि देवों ने आकर सुमेरु पर्वत पर जन्मोत्सव किया। भगवान गर्भ में थे उस समय एक भयंकर सर्प फूत्कार करता हुआ माता की बगल से निकल गया था इसलिए बालक का नाम पार्श्वकुमार रखा गया। पार्श्वकुमार युवा हुए। वे अब अपने पिता के राज्यकार्य में हाथ बटाने लगे।

एक बार एक दूत राजा अश्वसेन के दरबार में आकर बोला—नरदेव ! मैं कुशलस्थल नगर के राजा नरवर्मा का दूत हूँ। महाराज नरवर्मा अपने पुत्र प्रसेनजित को राज्य सौंपकर दीक्षित हो गये हैं। राजा प्रसेनजित की पुत्री का नाम प्रभावती है। वह अत्यन्त रूपवती है। एक बार प्रभावती ने राजकुमार पार्श्वनाथ की प्रशंसा सुनी और उसने अपना जीवन उनके चरणों में समर्पण करने का संकल्प कर लिया वह रात दिन उन्हीं के ध्यान में लीन हो एक त्यागिनी की तरह जीवन बिताने लगी। राजा प्रसेनजित को जब ये समाचार मिले तो उसने प्रभावती को स्वयंवरा की तरह बनारस भेजने का संकल्प किया। कलिंगदेश के यवनराज को जब इस बात का पता चला तो वह प्रभावती को प्राप्त करने के लिए सेना सहित कुशस्थल पर चढ आया। उसने अपनी विशाल सेना से सारे नगर को घेर लिया। महाराज प्रसेनजित इस कार्य में आपकी सहायता चाहते हैं। अब आप जैसा उचित समझे वैसा करें।

आपने घर–द्वार छोडकर प्रव्रज्या ग्रहण की है। आप और भगवान दोनों एक कुल के हैं। इस प्रकार श्रेष्ठ कुल में जन्म लेकर वमन की हुई वस्तु को फिर ग्रहण करना श्रेष्ठ मानव का कार्य नही हो सकता। हे महामुने! अपने इस दुष्कृत्य का पश्चाताप कर पुनः संयम में दृढ होइये।

राजीमती के उक्त प्रभावपूर्ण वचन सुनकर रथनेमि का सिर लज्जा से झुक गया। उसे अपने कृत्य पर पश्चाताप होने लगा। अपने अपराध के लिए राजीमतो से बार बार क्षमा मांगने लगे।

रथनेमि ने भविष्य के लिए संयम में दृढ रहने की प्रतिज्ञा को। राजीमती साध्वी ने उन्हें कई प्रकार के हित वचन सुनाकर संयम में दृढ किया। जैसे मदोन्मत्त हाथी अंकुश की मार से वश में हो जाता है, उसी प्रकार राजीमती के सुभाषित वचनों से कामोन्मत्त रथनेमि पुनः ठिकाने आ गये। वे फिर संयम में स्थित हो गये।

बार बार चोट खाये रथनेमि ने अपनी समस्त शक्ति कामवासना के उन्मूलन में लगा दी। उन्होंने उग्रतर तपस्या करके घातीकर्मों को नष्ट किया और केवलज्ञान और केवल दर्शन प्राप्त करके मोक्ष की राह ली।

रथनेमि को संयम में स्थिर कर राजीमती गुफा से निकली और अपने साध्वी समूह में आ मिली। सब के साथ वह पहाड पर चढी और भगवान श्रीअरिष्टनेमि के दर्शन किये। राजीमती की चीर अभिलाषा पूर्ण हुई। आनन्द से उसका हृदय गद्‌गद् हो उठा। उसने भगवान का उपदेश सुना और अपनी आत्मा को सफल बनाया। भगवान के उपदेशानुसार कठोर तप और संयम की आराधना करने लगी। फलस्वरूप उसके सभी कर्म नष्ट हो गये। भगवान मोक्ष पधारने से चौदह दिन पहले वहसिद्ध, बुद्ध और मुक्त हो गई।

भगवान श्रीअरिष्टनेमि ने अनेक स्थलो पर विहार कर यादव कुमारों को राजाओं को एवं श्रेष्ठियों को प्रतिबोध दिया। भगवान के उपदेश से अठारह हजार साधु हुए, वरदत्त आदि ग्यारह गणधर हुए। ४० हजार साध्वियां, ४०० चारसौ चौदहपूर्वधर, १५०० पंदरसौ अवधिज्ञानी, १५०० पंदरसौ वैक्रियलब्धिवाले, १५०० पंदरसौ केवली १००० एक हजार मनः पर्ययज्ञानी, ८०० आठसौ वादी, १ लाख ६९ हजार श्रावक एवं ३ तीन लाख ३९ हजार श्राविकाएँ हुई।

विहार करते हुए भगवान रेवतगिरि पर पधारे। वहां अपना निर्वाणकाल समीप जानकर ५३६ साधुओं के साथ अनशन ग्रहण किया। एक मास के अन्त में आषाढ शुक्ला अष्टमी के दिन चित्रा नक्षत्र में ५३६ मुनियो के साथ भगवान निर्वाण पधारे।

भगवान श्रीअरिष्टनेमि कुमारावस्था में तीन सौ वर्ष एवं साधु पर्या में ७०० वर्ष व्यतीत किये। भगवान की कुल आयु १००० एक हजार वर्ष की थी। शरीर की उंचाई १० धनुष प्रमाण थी।

भगवान श्रीनमिनाथ के निर्वाण के बाद पांच लाख वर्ष के बीतने पर भगवान अरिष्टनेमि का निर्वाण हुआ।

२३ भगवान श्रीपार्श्वनाथ (पूर्वभव)

जम्बूद्वीप के पूर्वविदेह में पुराणपुर नामका नगर था। उसमें वज्रबाहू नामका राजा राज्य करता था। उसकी रानी का नाम सुदर्शना था। वज्रनाभ मुनि का जीव देव आयु पूरी कर सुदर्शना की कुक्षि में पुत्र रूप से जन्मा। उसका नाम 'सुवर्णबाहु' रखा गया। सुवर्णबाहु युवा हुए। उनका योग्य राजकुमारी के साथ विवाह हुआ। उनके पिता वज्रबाहु ने उन्हें राज्यगद्दी पर बिठला कर दीक्षा ले ली।

एक दिन सुवर्णबाहु घोडे पर सवार होकर घूमने निकले। घोडा बेकाबू हो गया और उन्हें एक भयानक जंगल में ले गया वहां एक सुन्दर सरोव के किनारे गालवऋषि का आश्रम था। राजा विश्राम लेने के लिये आश्रम में गया। वहां पद्मा नाम की राजकुमारी तापस कन्याओं के साथ रहती थी। राजा

की दृष्टि उस पर पडी । वह उसके सौंदर्य को देखकर मुग्ध हो गया । राजा ने मालवऋषि से पद्मा की मांग की । मालवऋषि ने बडे प्रेम से पद्मादेवी का विवाह-सुवर्णबाहु से कर दिया । कुछ समय तक वहां रहकर सुवर्णबाहु अपनी राजधानी पुराणपुर लौट आया ।

राज्य करते हुए सुवर्णबाहु की आयुधशाला में चक्ररत्न उत्पन्न हुआ । बाद में क्रमशः अन्य तेरह रत्न भी उत्पन्न हो गये । रत्नों की सहायता से सुवर्णबाहु ने छह खण्ड पर विजय प्राप्त कर ली । वे चक्रवर्ती बनकर पृथ्वी पर एक छत्र राज्य करने लगे ।

एक बार जगन्नाथ तीर्थंकर भगवान का पुराणपुर में आगमन हुआ । सुवर्णबाहु परिवार सहित उनके दर्शन के लिए गया । वहां उपदेश सुनकर उन्हें जाति स्मरण ज्ञान उत्पन्न हो गया । अपने पूर्वभव को देख उन्हें वैराग्य उत्पन्न हो गया । उन्होंने अपने पुत्र को राज्यभार देकर जगन्नाथ भगवान के समीप दीक्षा ग्रहण कर ली । वहाँ कठोर तप करके उन्होंने तीर्थंकर नामकर्म का उपार्जन किया ।

कमठ का जीव नरक से निकल कर क्षीणवना वन में सिंह रूप से उत्पन्न हुआ । वह भ्रमण कर रहा था दो दिन से उसे आहार नहीं मिला था । उधर सुवर्णबाहु मुनि उसी वन में विहार कर रहे थे । मुनि को सामने आता देख वह उन पर झपटा । मुनि ने उसी समय संथारा कर लिया । पूर्व जन्म के वैर के कारण सिंहने उन्हें मार डाला । समभाव से सुवर्णबाहु मुनि ने देह को छोडा । मरकर वे महाप्रभ नामके विमान में महर्द्धिक देव बने ।

कमठ का जीव सिंह मरकर चौथी नरक में पैदा हुआ ।

भगवान श्री पार्श्वनाथ का जन्म—

इसी जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र में काशीदेश में वाराणसी नामको नगरी थी । उस नगर में अश्वसेन नाम के शूर–वीर राजा राज्य करते थे । उनकी रानी का नाम वामा देवी था । वह रूप लावण्य एवं सुलक्षणों से सुशोभित थी । उस समय महाप्रभ विमान में सुवर्णबाहु का जीव अपनी २२ सागरोपम की स्थिति पूर्ण कर चुका था । वह वहां से चैत्रकृष्ण चतुर्थी के दिन विशाखा नक्षत्र में चवकर महारानी वामा देवी की कुक्षिमें उत्पन्न हुआ । महारानी ने चौदह महास्वप्न देखे ।

गर्भकाल की समाप्ति के बाद पौष कृष्णा दशमी के दिन अनुराधा नक्षत्र में नीलवर्णी सर्प लक्षण-वाले एक सुन्दर पुत्र को जन्म दिया । इन्द्रादि देवों ने आकर सुमेरु पर्वत पर जन्मोत्सव किया । भगवान गर्भ में थे उस समय एक भयंकर सर्प फूत्कार करता हुआ माता की बगल से निकल गया था इसलिए बालक का नाम पार्श्वकुमार रखा गया । पार्श्वकुमार युवा हुए । वे अब अपने पिता के राज्यकार्य में हाथ बटाने लगे ।

एक बार एक दूत राजा अश्वसेन के दरबार में आकर बोला—नरदेव ! मैं कुशलस्थल नगर के राजा नरवर्मा का दूत हूँ । महाराज नरवर्मा अपने पुत्र प्रसेनजित को राज्य सौंपकर दीक्षित हो गये हैं । राजा प्रसेनजित की पुत्री का नाम प्रभावती है । वह अत्यन्त रूपवती है । एक बार प्रभावती ने राजकुमार पार्श्वनाथ की प्रशंसा सुनी और उसने अपना जीवन उनके चरणों में समर्पण करने का संकल्प कर लिया वह रात दिन उन्हीं के ध्यान में लीन हो एक त्यागिनी की तरह जीवन बिताने लगी । राजा प्रसेनजित को जब ये समाचार मिले तो उसने प्रभावती को स्वयंवरा की तरह बनारस भेजने का संकल्प किया । कलिंगदेश के यवनराज को जब इस बात का पता चला तो वह प्रभावती को प्राप्त करने के लिए सेना सहित कुशस्थल पर चढ आया । उसने अपनी विशाल सेना से सारे नगर को घेर लिया । महाराज प्रसेनजित इस कार्य में आपकी सहायता चाहते हैं । अब आप जैसा उचित समझे वैसा करें ।

दूत के मुख से यह बात सुनकर महाराज अश्वसेन यवनराज पर अत्यन्त क्रुद्ध हुए। उन्होंने दूत से कहा—तुम जाओ ! मैं यवनराज को पराजित करने के लिए शीघ्र ही सेना के साथ आ रहा हूँ। दूत महाराज का सन्देश लेकर चला गया। महाराज अश्वसेन ने अपनी सेना को युद्ध प्रयाण का आदेश दे दिया। महाराज स्वयं युद्ध के लिये तैयार हो गये।

जब श्रीपार्श्वकुमार को इस बात का पता लगा तो वे स्वयं पिता के पास आये और कहने लगे—पिताजी ! मेरे होते हुए आप को युद्ध स्थल पर जाने की आवश्यकता नहीं है। मैं स्वयं युद्ध स्थल पर जाकर कलिंगराज को पराजित करूंगा।" पार्श्वकुमार के विशेष आग्रह को देखकर पिता ने उन्हें युद्ध स्थल पर जाने की आज्ञा दे दी।

श्रीपार्श्वकुमार ने अपनी विशाल सेना के साथ कुशलस्थल की ओर प्रयाण कर दिया। चलते—चलते वे कुशलस्थल पहुचे। वहाँ उन्होंने अपनी छावनी डाल दी। तुरंत ही दूत को बुलाकर उसे यवनराज के पास भेजा और कहलवाया—यदि तुम अपनी खैरियत चाहते हो तो शीघ्र ही तुम अपनी सेना के साथ वापिस लौट जाओ वरना युद्ध के लिए तैयार हो जाओ। पार्श्वकुमार का सन्देश सुनकर प्रथम तो यवन-राज क्रुद्ध हुआ किन्तु उसे जब पार्श्वकुमार की शक्ति का पता चला तो वह नम्र हो गया। उसने पार्श्व-कुमार के साथ सन्धि करली और अपनी सेना के साथ वापस लौट चला।

घेरा उठ जाने पर कुशलस्थल के निवासी बडी प्रसन्नता का अनुभव करने लगे। शहर के हजारों निवासियों ने अपने रक्षक पार्श्वकुमार का स्वागत किया राजा प्रसेनजित भी अनेक तरह की भेटें लेकर सेवा में उपस्थित हुआ और प्रार्थना करने लगा है राजकुमार ! आप मेरी कन्या को ग्रहण कर मुझे उपकृत करें ! पार्श्वकुमार ने कहा— मै पिताजी की आज्ञा से कुशस्थल का रक्षण करने के लिये आया था विवाह करने नहीं। अतः आपके इस अनुरोध को पिता की बिना आज्ञा के स्वीकार करने में असमर्थ हूँ।

पार्श्वकुमार अपनी सेना के सॉथ बनारस लौट आये। प्रसेनजित् भी अपनी कन्या को लेकर बना-रस गया महाराज अश्वसेन ने पार्श्वकुमार का विवाह प्रभावती के साथ कर दिया।

एक दिन पार्श्वकुमार अपने झरोखे में बैठे हुए थे। उस समय उन्होंने देखा लोगों के टोले बनारस के बाहर जा रहे हैं उनमें किसी के हाथ में पुष्पों के हार किसी के हाथ में खाने की वस्तु और किसी के हाथ में पूजा को सामग्री थी। पूछने पर पता चला कि नगर के बाहर एक कठ नामका तपस्वी आया है, और वह पंचाग्नि तप की कठोर तपस्या कर रहा है। उसी के लिए लोग भेंट ले जा रहे हैं। पार्श्व-कुमार भी उस तपस्वी को देखने के लिए अपनी माता वामादेवी के साथ गये !

यह कठ तपस्वी कमठ का जीव था। जो सिंह के भव से मरकर अनेक योनियों में भ्रमण करता हुआ एक गांव में एक गरीब ब्राह्मण के घर जन्मा उसका जन्म होने के थोडे दिन के बाद उनके माता-पिता की मृत्यु हो गई। वह अनाथ बालक कठ तापसों के सत्संग में आया और तापस बनगया। तापस बनकर वह कठोर तप करने लगा। वह अपने चारों ओर आग जलाकर बीच में बैठता और सूर्य को आतापना लेता। उसकी कठोर तपस्या की लोग बडी तारीफ करमें लगे।

श्रीपार्श्वकुमार कठ के पास पहुँचे। उन्होने अवधिज्ञान से देखा कि तापस की धूनी के एक लक्कड में नाग का जोडा झुलस रहा है। वे बोले—तापस ! यह तुम्हारा कैसा तप कि जिसमें अंशतः भी दया धर्म नहीं। तुम्हारा यह अज्ञान तप मुक्ति का कारण नही हो सकता। जिसमें दया है वही वास्तव में धर्म है। दयाशून्य धर्म विधवा के श्रृंगार जैसा निरर्थक है। हे तापस ! यह जो तुम पांचाग्नि तप तप रहे हो वह वास्तव में हिंसा ही कर रहे हो। इस प्रकार के अज्ञान तप से तुम्हारा कल्याण नहीं हो सकता।

कठ बोला—राजकुमार ! धर्म का स्वरूप क्या है यह तुम नहीं जा सकते हो। मैं जो कर रहा हूँ। वह ठीक हो कर रहा हूं और तुम जो मुझ पर हिंसा का आरोप लगाते हो यह तुम्हारी निरी मूर्खता ही है।

श्रीपार्श्वकुमार ने कहा— तपस्वी ठहरो ? अभी बताये देता हूं कि तुम इस अज्ञान तप में कितनी बडी हिंसा कर रहे हो। श्रीपार्श्वकुमार ने उसी समय अपने आदमियों को धूनी में से लक्कड खींचनेकी आज्ञा दी। सेवकों ने धूनी में जलता हुआ एक वडा काष्ठ खींच लिया। श्रीपार्श्वकुमार ने लक्कड को चीर कर उसमें अध जले नाग के जोडे को बताया। कुमार ने "नमोक्कार" मंत्र सुनाकर नागराज को संथारा करवा दिया। उसके प्रभाव से नागराज वहां से मरकर भवनपति देवनिकाय में धरण नाम का इन्द्र हुआ और नागिनी मरकर उसकी पद्मावती नामकी देवी बनी।

अर्धमृत सर्प को देखकर कठ अत्यन्त लज्जित हुआ। श्रीपार्श्वकुमार पर उसे अत्यन्त क्रोध आया कठ की प्रतिष्ठा में धक्का लग गया। लोंग अब कठ की प्रशंसा के बजाय उसकी निंदा करने लगे। कुमार के विवेक एवं ज्ञान की प्रशंसा करने लगे। कुछ समय के बाद कठ मरकर अज्ञान तप के प्रभाव से मेघमाली नाम का देव बना।

भगवान श्रीपार्श्वनाथ के संसार त्याग का समय निकट आ रहा था। लोकान्तिक देव आपकी सेवा में उपस्थित होकर निवेदन करने लगे—"हे भगवान् ! अब आप का धर्म तींर्थ प्रवर्तन करनेका सुअवसर आगया इतना कहकर और प्रणाम करके वे रवाना हो गये। इसके बाद प्रभु ने वर्षीदान दिया। वर्षीदान की समाप्ति के बाद इन्द्रादि देव आये और उन्हौने सुन्दर शिविका बनाई। उसका नाम विशाला था। सुन्दर वस्त्राभूषण पहन कर भगवान् शिविका पर आरूढ हुए। भगवान नगर के बाहर आश्रमपद नामक उद्यान में पधारे बहाँ पौषवदी एकादशी के दिन अनुराधा नक्षत्र में तीन सौ राजाओं के साथ दीक्षा ग्रहण की इन्द्रादि देवों ने भगवान का दीक्षा महोत्सव किया।। दीक्षा ग्रहण करते ही भगवान को मनःपर्ययज्ञान उत्पन्न हो गया।

तीसरे दिन कोकट गाँव में धन्य नामक गृहस्थ के घर परमान्न से पारणा किया। उस समय 'धन्य' गृहस्थ के घर देवों ने वसुधारादि पांच दिव्य प्रकट किये। भगवान ने वहाँ से अन्यत्र विहार कर दिया।

भगवान ग्रामानु ग्राम विचरण करते हुए एक वन में सूर्यास्त के समय ठहर गये। वहाँ तापसों का आश्रम था। भगवान एक जीर्ण कूप के समीप वृक्ष के नीचे खडे होकर ध्यान करने लगे। उस समय कठ तापस का जीव मेघमाली देव की दृष्टि भगवान पर पडी। तत्काल उसे अपना पूर्व का वैर याद आ गया उसने विभंग ज्ञान से अपना पूर्व भव देखलिया। अपने वैर का बदला लेने के लिये वह भगवान के पास आया सांप बिच्छू, शेर चीते हाथी आदि अनेक क्रूर रूप बनाकर भगवान कों कष्ट देने लगा। गर्जना तर्जना फूत्कार चीत्कारें कर भगवान को डराने लगा परन्तु पर्वत के समान स्थिर प्रभु जरा भी विचलित नही हुए। वे मेरू पर्वत की तरह अडोल और अकम्प रहे। जब इन उपद्रवों से भगवान विचलित नहीं हुए तो उसने आकाश में भयंकर मेघ बनाये और अत्यन्त मूसलधार पानी बरसाने लगा। आकाश में काल जिह्वा के समान भयंकर विजली चमकाने लगा और कानों के पर्दों को फाडने वाली गर्जना करने लगा।

मूसलाधार वर्षा होने लगी। बडे—बडे ओले बरसने लगे। सर्वत्र जलही जल दिखलाई देने लगा। पानी बढते—बढते भगवान की कमर और छाती से भी आगे नाक तक जा पहुँचा तब धरणेन्द्र का आसन चलायमान हुआ अपने आसन चलायमान होने का कारण जानकर वह तत्काल पद्मावती के साथ भगवान के पास आया। उसने सुवर्ण का कमल बनाया और भगवान को उस पर रख दिया। नाग का रूप बना-

कर धरणेन्द्रदेव ने भगवान पर फन फैला दिये। धरणेन्द्र की देवियां प्रभु के सन्मुख आ वंदन कर अपनी भक्ति प्रदर्शित करने लगी।

धरणेन्द्रदेव मेघमाली से कहने लगा— अरे दुष्ट अब तू अपनी यह उपद्रव लीला बन्द कर अगर तूं अपनी इस प्रकार की प्रवृत्ति चालू रखेगा तो उसका तेरे लिये भयंकर परिणाम होगा।

धरणेन्द्र के मुख से यह बात सुनकर मेघमाली चौका। वह घबराया हुआ नीचा उतरा, अपने अपराध की क्षमा मांगता हुआ भगवान के चरणों में गिरा। भगवान तो समभावी थे। उन्हें न क्रोध ही था और न राग। वे तो अपने ध्यान में ही लीन थे। भगवान को उसने उपद्रव रहित कर दिया अत्यंत नम्रभाव से भगवान की भक्ति कर वह अपने स्थान पर चला गया।

दीक्षा ग्रहण करने के चौरासी दिन के बाद भगवान विचरण करते हुए बनारस के आश्रमपद नामक उद्यान में पधारे। वहाँ धातकी वृक्ष के नीचे ध्यान करने लगे। चैत्र कृष्णा चतुर्थी के दिन विशाखा नक्षत्र में ध्यान की परमोच्च स्थिति में भगवान को केवलज्ञान और केवल दर्शन॰ उत्पन्न हुआ। इन्द्रादि देवों ने भगवान का केवलज्ञान महोत्सव किया और समवशरण की रचना की। महाराज अश्वसेन के साथ उनके प्रजाजन भी भगवान की देशना सुनने के लिए समवशरण में आये। भगवान ने उपदेश दिया भगवान का उपदेश श्रवण कर अपने छोटे पुत्र हस्तिसेन को राज्य देकर अश्वसेन राजा ने दीक्षा ग्रहण की। माता वामा देवी एवं महारानी प्रभावती ने भी भगवान के समीप दीक्षा ग्रहण की। अन्य भी अनेकों ने दीक्षा ली।

भगवान के शासन में पार्श्व नामक शासन देव और पद्मावती नामकी शासन देवी हुई।

भगवान के परिवार में शुभदत्त, आर्यघोप, वशिष्ठ, ब्रह्मचारी, सोम, श्रीधर, वीरभद्र और यशस्वी ये दस गणधर थे। १६००० साधु, ३८००० साध्वियां, ३५॰ चौदह पूर्वधर, एक हजार चार सौ अवधी-ज्ञानी, ७५० मनः पर्ययज्ञानी १००० केवली, ११०० सौ वैक्रियलब्धिधारी. ६०० वादी एक लाख चौसठ हजार श्रावक एवं तीन लाख ७० हजार श्राविकाएँ थी।

अपना निर्वाण काल समीप जानकर भगवान समेतशिखर पर पधारे। वहाँ उन्हों ने तेंतीस मुनियों के साथ अनशन ग्रहण किया। श्रावण शुक्ला ८ के दिन विशाखा नक्षत्र में एकमास का अनशन कर निर्वाण प्राप्त किया। भगवान की उंचाई नव हाथ थी।

भगवान की कुल आयु १०० वर्ष की थी। उसमें तीस वर्ष गृहस्थ पर्याय में एवं ७० वर्ष साधु पर्याय में व्यतीत किये। श्रीनेमिनाथ भगवान के निर्वाण के बाद ८३ हजार सात सौ पचास वर्ष बीतने पर भगवान श्रीपार्श्वनाथ का निर्वाण हुआ।

भगवान पार्श्वनाथ ने चातुर्याम धर्म का उपदेश दिया—

(१) प्राणातिपात विरमण (२) मृषावाद विरमण (३) अदत्तादान विरमण (४) परिग्रह विरमण व्रत

जैन शास्त्रों में भगवान महावीर के निर्वाण से २५० वर्ष पूर्व भगवान पार्श्वनाथ का निर्वाण बतलाया गया है।

भगवान श्रीमहावीर और उनके पूर्वभव प्रथम और द्वितीय भवः—

जम्बूद्वीप के पश्चिम महाविदेह में महावप्र नामका विजय था। उस विजय में जयन्ती नाम की नगरी थी। वहां शत्रुमर्दन नाम का राजा राज्य करता था। उसके राज्य में पृथ्वीप्रतिष्ठान नाम के गाँव में नयसार नाम का ग्रामाधिकारी रहता था। राजा अपने लिए एक सुन्दर महल बनवाना चाहता था। उसके लिये उसे उच्चकोटि के काष्ठ की आवश्यकता पडी। उसने नयसार को जंगल में से काष्ठ लाने की आज्ञा दी। राजा की आज्ञा मिलने पर नयसार अपने सेवकों के साथ गाडियाँ लेकर जंगल में

गया । मध्याह्न का समय हुआ और नयसार तथा उसके साथी दोपहर के भोजन कि तैयारी करने लगे। ठीक उस समय वहाँ एक साधु समुदाय आया। साधु किसी एक सार्थ के साथ चल रहे थे। और सार्थ के आगे निकल जाने पर मार्ग भूलकर भटकते हुए दोपहर को उस प्रदेश में आये जहाँ नयसार की गाड़ियों का पडाव था । मुनियों को देखते ही नयसार का हृदय दयार्द्र हो गया । वह उठा और आदर पूर्वक श्रमणों को अपने पास बुलाकर निर्दोष आहार पानी से उनका आतिथ्य सत्तकार किया और साथ चलकर मार्ग बताया । मार्ग में चलते मुनियों ने नयसार को उपदेश दिया । नवसार पर मुनि के उपदेश का अच्छा असर पड गया। साधु को मार्ग बताकर नयसार वापस अपने पडाव पर लौट आया। मुनियों के उपदेश से नयसार ने सम्यक्त्व प्राप्त किया । यथाशक्तिव्रत–प्रत्याख्यान करता हुआ और जिनमार्ग की प्रशंसा करता हुआ स्वर्गवासी हुआ । वह नयसार मरकर सौधर्म देवलोक में एक पल्योपम की आयुवाला देव बना ।

तृतीय और चतुर्थ भव—

देवगति का आयुष्य पूर्ण कर नयसार का जीव तीसरे भव में चक्रवर्ती भरत का पुत्र मरिचि नाम का राजकुमार बना। युवावस्था में आकर मरिचि ने भगवान श्री ऋषभदेव के पास दीक्षा ग्रहण की। कालान्तर में वह श्रमण मार्ग से च्युत होकर त्रिडण्डी संन्यासी बन गया । किन्तु उसकी श्रद्धा जिनमार्ग पर अटूट थी । वह समवशरण के बाहर रहकर सैकडों व्यक्ति को प्रतिबोध देकर भगवान श्रीऋषभदेव के पास भेजता था । मरिचि के द्वारा प्रतिबोधित व्यक्ति को भगवान प्रव्रजित करते थे इस प्रकार की धर्मदलाली से उसने महापुण्य का उपार्जन किया ।

एक समय भरत चक्रवर्ति ने पुछा भगवान यहां कोई तीर्थंकर बनने वाला है क्या ? तब भगवान ऋषभदेव ने भरत चक्रवर्ती से कहा कि तेरा पुत्र मरिचि २४ वाँ तीर्थंङ्कर श्री महावीर होगा । इतना नहीं, तीर्थङ्कर होने से पहले वह भारतवर्ष में त्रिपृष्ठ नामका वासुदेव होगा । उसके बाद पश्चिम विदेह में प्रियमित्र नामका चक्रवर्ती होगा और अन्त में चरमतीर्थङ्कर श्रीमहावीर होगा ।

भगवान के मुख से मरिचि का भावी वृत्तान्त सुनकर भरत महाराजा मरिचि के पास गया और आदर पूर्वक वन्दना कर बोला—मरिचि, मैं तुम्हारे इस परिव्राजकत्व को वन्दन नहीं कर रहा हूँ किन्तु तुम अन्तिम तीर्थ-कर होंने वाले हो यह जानकर तुम्हें बन्दना करता हूँ । तुम इसी भारतवर्ष में त्रिपृष्ठ नामके वासुदेव, महा-विदेह में प्रियमित्र नाम के चक्रवर्ती और फिर वर्द्धमान नामक २४ वें तीर्थंकर होंगे ।

भरत चक्रवर्ती की बात सुनकर मरिचि को बडी प्रसन्नता हुई । वह त्रिदण्डी खूब उछलता हुआ बोला अहो ! मैं वासुदेव चक्रवर्ती और तीर्थंकर होउंगा । बस मेरे लिए इतना ही वहुत है ।

मैं वासुदेवों में पहला, पिता चक्रवर्तियों में पहले, और दादा तीर्थंकरों में पहले अहो ! मेराकुल कैसा श्रेष्ठ है ! इस प्रकार कुलाभिमान से मरिचि ने नीच गोत्र का बन्धन किया । चौरासी लाख पूर्व का आयु पूर्ण कर मरिन्चि स्वर्गगामी हुआ । और मरकर ब्रह्म देवलोक में देव बना ।

पांचवा और छटा भवः—

ब्रह्मदेवलोक में दस सागरोपम का आयुष्य पूर्णकर नयसार का जीव कोल्लाकसन्निवेश में कोशिक नामक ब्राह्मण हुवा । यहाँ उसने सांख्य प्रव्रज्या ग्रहण की । यहाँ भी लंवेसमय तक सांख्य मत के अनुसार प्रव्रज्या और तपकर के ८४ लाख पूर्व की आयु भोगकर सोधर्म देवलोक में देवरूप से उत्पन्न हुआ ।

सातवां और आठवां भवः—

देवलोक से चवकर नयसार के जीव ने अनेक छोटे बडे भव किये । सातवें मुख्य भव में नयसार

का जीव थुना नगरी में पुष्यमित्र नामक ब्राह्मण हुआ । यहां भी युवावस्था में उन्होंने सांख्य प्रव्रज्या ग्रहण की । लम्बे समय तक तपश्चर्या कर ७२ लाख पूर्व की पूर्णायु प्राप्त कर मरे और सौधर्म देवलोक में देवबने ।

नौवां और दसवां भवः—

देवलोक की आयु पूर्णकर नयसार का जीव चैत्यनामक सन्निवेश में अग्निघोत नामक ब्राह्मण हुआ । अग्निघोत ने सांख्य प्रव्रज्या ग्रहण की । दीर्घ तपश्चर्या की । चौसठ लाख पूर्व की पूर्णायु प्राप्त कर मरा और ईशान देवलोक में देव बना ।

ग्यारहवां और बारहवां भवः—

देवलोक का आयुष्य पूर्णकर नयसार का जीव मन्दिर सन्निवेश नाम के गांव में अग्निभूति नामका ब्राह्मण हुआ । वहां भी परिव्राजक दीक्षा ग्रहण की । छप्पन लाख पूर्व की आयु प्राप्त कर अन्त में मरा और सनत्कुमार देवलोक में देव बना ।

तेरहवां और चौदहवांभवः—

सनत्कुमार देवलोक से च्युत होकर नयसार का जीव श्वेताम्बिका नगरी में भारद्वाज नामक ब्राह्मण हुआ । भारद्वाज ने युवावस्था में परिव्राजक प्रव्रज्या ग्रहण की । लम्बे समय तक परिव्राजक दीक्षा पालकर चवालींस लाख पूर्व वर्ष की आयु पूर्णकर मरा और माहेन्द्रकल्प में देव बना । माहेन्द्रकल्प के बाद नयसार ने छोटे बडे अनेक भव किये ।

पन्द्रहवां और सोलहवां भवः —

अनेक भव परिभ्रमण करते हुए उस नयसार के जीव ने राजगृह नामक नगर में एक ब्राह्मण के घर जन्म लिया । यहाँ उसका नाम स्थावर रखा । पूर्वभव के संस्कार बश यहां भी उसने परिव्राजक दीक्षा ग्रहण की । खूब तप किया और अन्त में मरकर ब्रह्मदेवलोक में देवत्व प्राप्त किया ।

सत्रहवां और अठारहवां भवः—

ब्रह्मदेवलोक का आयुपूर्णकर नयसार का जीव. राजगृह नगर में विश्वनन्दी राजा के भाइ बिशाखभूति का पुत्र विश्वभूति नामक राजकुमार हुआ । राजा विश्वनन्दी का विशाखानन्दी नामका पुत्र था । विशाखानन्दी के व्यवहार से दुखी होकर विश्वभूति ने आचार्य आर्यसंभूति के पास दीक्षा धारण की । कठोरतप किया । तपश्चर्या के प्रभाव से विश्वभूति मुनिको अनेक लब्धियां प्राप्त हुई ।

एक बार राजकुमार विश्वनन्दी ने विश्वभूति का अपमान किया अपमान का बदला लेने के लिये विश्वभूति मुनि ने निदानपूर्वक अन्तिम अनशन किया । एक क्रोड बर्ष की आयु भोगकर विश्वभूति मुनि स्वर्गगामी बने । मृत्यु के पश्चात् महाशुक्र नामक विमान में मिहर्द्धिक देव बने ।

उन्नीस, बीस, इक्कीस और बाइसवां भवः—

महाशुक्र देवलोक से च्युत होकर नयसार का जीव अपने निदान के फल स्वरूप पोतन पुर के राजा प्रजापति की रानी मृगावती के उदर में जन्म लिया । महारानी मृगावती ने सात महास्वप्न देखे । गर्भकाल के पूर्णहोने पर महारानी ने तीन पसलींवाले एक शक्तिशालीं पुत्र को जन्म दिया । तीन पसली को देखकर महाराजा प्रजापति ने बालक का नाम त्रिपृष्ठ रक्खा । इनके बडे भ्राता का नाम अचल था । त्रिपृष्ठ और अचल युवा हुए ।

युवावस्था में एक बार त्रिपृष्ठकुमार ने एक बलिष्ट सिंह को अपने दोनों हाथों में पकडकर चीर डाला तीन खण्ड के स्वामी प्रतिवासुदेव अश्वग्रीव को युद्ध में मार कर वासुदेव पद प्राप्त किजा । अचल बलदेव बने । वासुदेव के ऐश्वर्य का उपभोग करते हुए इन्होंने अनेक पाप उपार्जित किये । ८४ लाख वर्ष की

आयु पूरी करके मर कर सातवीं नरक में तेतीस सागरोपम की आयुवाले नारक बने । यहां पर अनेक दुखों को भोगकर नरकायु पूरी कर ।

वहाँ से निकलकर त्रिपृष्टवासुदेव का जीव सिंह योनि में पैदा हुए । वहाँ भी अनेक प्राणियों की हिंसासे नरकायु बान्धकर पुनः नरक में उत्तपन्न हुवा ।

तेइसवां और चोविसवां भवः—

तेईसवां भव में नयसार का जीव पश्चिम महाविदेह की राजधानी मूका नगरी में प्रियमित्र नामक चक्रवर्ती राजा हुआ । चक्रवर्ती के सम्पूर्ण सुख भोगकर इसने पोट्टीलाचार्य के पास दीक्षा ग्रहण की । दीर्घ तपश्चर्या की । अन्त में शुद्ध चारित्र पाल कर अन्तिम समय में संथारा कर ८४ लाख पूर्व का आयुष्य भोगकर स्वर्गगामी हुआ । और महाशुक्र कल्प में सर्वार्थ नामक महर्द्धिक देव बना ।

पच्चीसवाँ और छब्बीसवाँ भव :–

छत्रा नाम की नगरी थी । वहाँ जितशत्रु नाम के महापराक्रमी राजा राज्य करते थे । उनकी महारानी की कुक्षि में नयसार के जीव ने जन्म लिया । युवावस्था में इन्होंने पिता के स्वर्गवासी बनने के बाद राज्य प्राप्त किया । २४ लाख बर्ष तक राज्य करने के बाद नन्द राज ने पोट्टिलाचार्य के पास दीक्षा धारण की । दीक्षा लेकर आपने ग्यारह अंग सूत्रों का संपूर्ण अध्ययन किया । इसके बाद आपने कठोर तपश्चर्या की आराधना की । एक लाख वर्ष तक आपने निरन्तर मासखमण की तपश्चर्या की ।

इसके अतिरिक्त नन्द मुनि ने उत्कृष्ट भावना से अनेक प्रकार की कठोर तपश्चर्यां की और तीर्थकर नामकर्म उपार्जन करने वाले बीस स्थानों की सम्यक् आराधना कर तीर्थंकर नामकर्म का उपार्जन किया । ये बीस स्थान ये है–

१. अरिहन्त वत्सलता २. सिद्ध वत्सलता ३. प्रवचन· श्रुतज्ञान वत्सलता ४. गुरु-धर्मोपदेशकवत्सलता । ५. स्थविर- साठ वर्ष की उम्रवाले वय स्थविर, समवायांग के ज्ञाता सूत्र स्थविर, और बीस वर्ष की दीक्षावाले पर्याय स्थविर, ये तीन प्रकार के स्थविर साधु । ६. बहुश्रुत—दूसरों की अपेक्षा अधिक श्रुत के ज्ञाता । ७. तपस्वी-इन सातों के प्रति वत्सलता धारण करना अर्थात् इनका यथोचित सत्कार-सन्मान करना, गुणोत्कीर्तन करना । ८. बारंबार ज्ञान का उपयोग करना । ९. दर्शन-सम्यकत्व । १०. ज्ञानादि का विनय करना । छह आवश्यक करना । १२. उत्तरगुणो और मूलगुणों का निरतिचार पालन करना । १३— क्षणलव- संवेग भावना एवं ध्यान करना । १४. तप करना । १५. त्याग- मुनियों को उचित सुपात्र दान देना । १६. वैयावृत्य करना । १७. समाधि-गुरु आदि को साता उपजाना । १८. नया-नया ज्ञान ग्रहण करना । १९. श्रुत की भक्ति करना । २०. प्रवचन की प्रभावना करना ।

इस प्रकार नन्द मुनि ने अप्रमत्त भाव से शुद्ध संयम की अराधना की और समाधिपूर्वक काल करके प्राणतकल्प के पुष्पोत्तर नामक देव विमान में महार्द्धिक देव बने ।

सत्ताईसवाँ भवः–

भगवान श्रीमहावीर का जन्मः–

भारत के इतिहास में विहार प्रान्त का गौरवपूर्ण स्थान हैं । इसी गौरव-गरिमा से सम्पन्न प्रान्त में वैशाली नाम की नगरी थी काल के अप्रतिहत प्रभाव से आज वैशाली का वह सुन्दर वैभव नहीं रहा फिर भी उसके खण्डहर आज भी विद्यमान हैं । गंगातट के उत्तरीय भाग अर्थात् हाजीपुर सबडिविजन से करीब १३-१४ मील उत्तर में "बसाढ" नामका ग्राम है जो आज भी मौजूद हैं । इस गांव के उत्तर में एक बहुत बडा खण्डहर हैं । उसे लोग राजा विशाल का गढ कहते है । इस गढ के समीप एक विशाल अशोक स्तंभ है । पुरातत्ववेत्ताओं के मत से यही लिच्छवीयों की प्रताप भूमि वैशाली है ।

वैशाली नगरी के यह ध्वंसावशेष करीब ढाई हजार वर्ष पहले की अनेक सुखद स्मृतियाँ जाग्रत करते है। यही गौतमबुद्ध और भगवान श्रीमहावीर जैसे महान क्रान्तिकारी पुरुषों की कर्मभूमि रही है, जिनके ज्ञान आलोक से सारा विश्व आज भी प्रकाशित है।

वैशाली नगरी का नाम ही सूचित कर रहा है कि किसी जमाने में यह बडी विशाल नगरी थी। रामायण में बताया गया हैं कि वैशाली बडी विशाल, रम्य, दिव्य और स्वर्गोपम नगरी थी। जैनागमों में उसका वर्णन बड़ा भव्य है। बारहयोजन लम्बी और नौ योजन चौडी; सुन्दर प्रासादों से सम्पन्न धन धान्य से समृद्ध और सब प्रकार के सुख सुविधाओं से युक्त; वैशाली अत्यन्त रमणीय नगरी थी। यह नगरी तीन बडी दिवारों से घिरी हुई थी। किल्ले में प्रवेश करने के लिए तीन विशाल द्वार थे। संसार के समस्त गणतन्त्रों से पुरानी गणतन्त्रशासन प्रणाली उस समय वैशाली में प्रचलित थी। वहाँ का गणतन्त्र विश्व का सबसे पुराना गणतन्त्र था। उसे जन्म देने का श्रेय उसी नगरी को हैं। हैहय वंश के राजा चेटक इस गणतन्त्र के प्रधान थे। इनके नेतृत्व में वैशाली की ख्याति; समृद्धि एवं वैभव चरमसीमा तक पहुँच चुका था।

तत्कालीन भारत के प्रसिद्ध राजा शतानिक; चम्पा के राजा दधिवाहन, तथा मगध के सम्राट बिम्बिसार, अवन्ती के राजा चण्डप्रद्योतन; सिन्धुसौवीर के सम्राट उदायन और भगवान श्रीमहावीर के ज्येष्ठ भ्राता नन्दिवर्द्धन महाराजा चेटक के दामाद होते थे। इनके शासनकाल में प्रजा अत्यन्त सुखी थी।

वैशाली के पश्चिम भाग में गण्डकी नदी बहती थी उसके पश्चिम तट पर स्थित ब्राह्मणकुण्डपुर, क्षत्रियकुण्डपुर, वाणिज्यग्राम; कमरिग्राम, और कोल्लागसन्निवेश जैसे अनेक उपनगर वैशाली की समृद्धि बढा रहे थे।

ब्राह्मणकुण्डपुर और क्षत्रियकुण्डपुर क्रमशः एक दूसरे के पूर्व और पश्चिम में थे। उन दोनों के दक्षिण और उत्तर ऐसे दो दो भाग थे। दोनों नगर पास-पास में थे, इनके बीच बहुसाल नामका उद्यान था।

ब्राह्मणकुण्ड का दक्षिण विभाग ब्रह्मपुरी के नाम से प्रसिद्ध था। उसमें अधिकांश ब्राह्मणों का ही निर्वास था। इसका नायक कोडालगोत्रीय ऋषभदत्तब्राह्मण था। वह वेदादि शास्त्रों में पारंगत था। उसकी स्त्री देवानन्दा जालन्धर गोत्रीया ब्राह्मणी थी। ऋषभदत्त और देवानन्दा भगवान श्री पार्श्वनाथ के शासनानुयायी थे।

उत्तर क्षत्रियकुण्ड पर करीब ५०० घर ज्ञातवंशीय क्षत्रियों के थे। उनके नायक थे महाराजा सिद्धार्थ वे सर्वाधिकार सम्पन्न राजा थे इनका काश्यप गोत्र था। महाराजा सिद्धार्थ की रानी त्रिशला वैशाली के सम्राट चेटक की बहन एवं वासिष्ठ गोत्रीयाँ क्षत्रियाणी थी। वे दोनों भगवान श्री पार्श्वनाथ की श्रमण परम्परा को मानने वाले थे। इनके जेष्ठ पुत्र का नाम नन्दिवर्द्धन था। नन्दिवर्द्धन का विवाह वैशाली के राजा चेटक की पुत्रीज्येष्ठा के साथ हुआ था।

महामुनि नन्द का जीव 'प्राणत' कल्प के पुष्पोत्तरविमान से चवकर आषाढ शुक्ला छठ के दिन हस्तोत्तरां नक्षत्र में चन्द्रमा का योग होने पर देवानन्दा ब्राह्मणी के गर्भ में आया। उस रात्रि में देवानन्दा ने चौदह महास्वप्न देखे। स्वप्नदेखकर वह तुरन्त अपनी शय्या से उठी और ऋषभदत्त के शयन कक्ष में जाकर बोली हे प्राणनाथ! मैंने चौदह महास्वप्न देखे हैं। ये शुभ हैं या अशुभ? इनका फल क्या है?

ऋषभदन्त ने मधुर स्वर में कहा—प्रिये! तुमने उदार स्वप्न देखे हैं-कल्याणरूप, शिवरूप, धन्य मंगलमय और शोभा युक्त स्वप्नों को देखा है। इन शुभ स्वप्नों से तुम्हें पुत्रलाभ अर्थलाभ, और राज्य. लाभ होगा तुम सर्वांगसुन्दर, उत्तम लक्षणों से युक्त, त्रिलोक पूज्य पुत्र को जन्म दोगी" स्वप्न का फल

सुनकर देवानन्दा पति को प्रणाम करके वापिस शयनकक्ष में लोट आई और शेष रात्रि को धर्मध्यान में बिताने लगी ।

गर्भ सुखपूर्वक बढने लगा । गर्भ के अनुकूल प्रभाव से देवानन्दा के शरीर कीं शोभा,कान्ति और लावण्य भी बढने लगा । एवं ऋषभदत्त की ऋद्धि यश तथा प्रतिष्ठा में भी वृद्धि होने लगी । इस प्रकार गर्भ के ८२ दिन वीत गये ८३ वें दिंन की ठीक मध्यरात्रि में देवानन्दा ने स्वप्न देखा कि मेरे स्वप्न त्रिशला क्षत्रियानी ने चुरा लिये हैं । "

जिस समय देवानन्दा ने त्रिशला द्वारा किया गया अपने स्वप्नों का हरण देखा उसी समय त्रिशलारानी ने भी चौदह महास्वप्न देखे । जो पहले देवानन्दा ने देखे थे

स्वप्न हरण का मूल कारण यह था कि जब अवधिज्ञान से सौधर्मेन्द्र को भगवान के अवतरण की बात ज्ञात हुई तो उसे विचार आया कि तीर्थङ्कर. चक्रवर्ती, बलदेव एवं वासुदेव केवल क्षत्रियकुल में ही उत्पन्न होते हैं किन्तु आश्चर्य है कि भगवान का अवतरण ब्राह्मण कुल में हुआ है । तीर्थंकर न कभी ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न हुए हैं और न होंगे । अतः इस अपवाद से बचाने के लिए भगवान को अन्य किसी क्षत्रियाणी के गर्भ में रखनाहोगा। उन्होंने उसी समय हरिणगमेषी देव को बुलाया और उसे भगवान को महाराणी त्रिशला के गर्भ में रखनेका आदेश दिया । इन्द्र का आदेश पाकर हरिणगमेषीदेव ने भगवान को देवानन्दा के गर्भ से निकाल कर आश्विनकृष्णा त्रयोदशी के दिन मध्यरात्रि में त्रिशला रानी के गर्भ में रख दिया और त्रिशला के गर्भ में रही हुई कन्या को देवानन्दा के गर्भ में रख दि । जब भगवान गर्भ में आये तब त्रिशला देवी ने १४ चौदह महास्वप्न देखे । महारानी जागृत हुई ।उसने अपने पति से स्वप्न का फल पूछा । महाराजा सिद्धार्थ ने अपनी मति के अनुसार स्वप्न का फल बताते हुए कहा– देवी ! तुम महान् पुत्र को जन्म दोगी । दूसरे दिन स्वप्न पाठकों से स्वप्न का अर्थ कराया । उन्होंने गम्भीर विचार के साथ महारानी त्रिशला के गर्भ में लोकोत्तम लोकनाथ तीर्थङ्कर भगवान का जीव आया है । रानी ने जो चौदह महास्वप्न देखे हैं उनका संक्षिप्त फल इस प्रकार हैं—

(१) चार दांत वाले हाथी को देखने से वह जीव चार प्रकार के धर्म को कहने वाला होगा ।

(२) ऋषभ को देखने से इस भरत क्षेत्र में बोधि–बीज का वपन करेगा ।

(३) सिंह को देखने से कामदेव आदि उन्मत्त हाथियों से भग्न होते भव्य जीव रूप वनका रक्षण करेगा ।

(४) लक्ष्मी को देखने से वार्षिकदान देकर तीर्थङ्कर–ऐश्वर्य को भोगेगा ।

(५) माला देखने से तीन भुवन के मस्तक पर धारण करने योग्य होगा ?

(६) चन्द्र को देखने से भव्यजीव रूप चन्द्र–विकासी कमलों को विकसित करने वाला होगा ।

(७) सूर्य को देखने से महातेजस्वी होगा ।

(८) ध्वज को देखने से धर्मरूपी ध्वज को सारे संसार में लहराने वाला होगा ।

(९) कलश को देखने से धर्मरूपी प्रासाद के शिखर पर उनका आसन होगा ।

(१०) पद्मसरोवर को देखने से देवनिर्मित स्वर्ण कमल पर उनका विहार होगा ।

(११) समुद्र को देखने से केवलज्ञान रूपी रत्न का धारक होगा ।

(१२) विमान को देखने से वैमाणिक देवों से पूजित यानि सर्व गुणो से युक्त होगा ।

(१३) रत्न राशि को देखने से रत्न के गहनों से विभूषित होगा ।

(१४) निर्धूम अग्नि को देखने से भव्य प्राणिरूप सुवर्ण को शुद्ध करने वाला होगा ।

इन चौदह महास्वप्न के समुचित फल यह है कि वह चौदह राजलोक के अग्रभाग पर स्थित सिद्धशिला के ऊपर निवास करने वाला होगा। रानी अपने स्वप्नदर्शन के फल सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुई। और बार-बार अपने स्वप्नो का का ही स्मरण करती हुई अपने स्थान पर चली आई। राजा ने स्वप्नपाठको को विपुल दान दक्षिणा देकर विदा किया।

भगवान गर्भावस्था से ही विशिष्टज्ञानीं थे। अर्थात् उन्हें मति श्रुति और अवधिज्ञान था। जब गर्भ का सातवां महीनावीत चुका था तब एक दिन भगवन ने सोचा-मेरे हलन चलन से माता को कष्ट होता है अतः उन्हों ने गर्भ में हिलना चलना बन्द कर दिय!।

अचानक गर्भ का हिलना चलना बन्द होने से माता त्रिशला अमंगल की कल्पना से शोकसागर में डूब गई। उन्हें लगा कि कहीं गर्भ में बालक की मृत्यु तो नहीं हो गई? धीरे-धीरे यह खबर सारे राज्य कुटुम्ब में फैल गई। सभी यह बात सुन सुनकर दुःखी होने लगे।

भगवान ने यह सर्व अपने ज्ञान से देखा और सोंचा-माता-पिता की सन्तान विषयक ममता बड़ी प्रबल होती है। मैंने तो मां के सुख के लिए ही हलन चलन बन्द कर दिया था। परन्तु उसका परिणाम विपरीत हीं हुआ। माता-पिता के इस स्नेह भाव को देखकर भगवान ने अंग संचालन किया और साथ में यह प्रतिज्ञा की कि जब तक माता-पिता जीवित रहेंगे तब तक मैं प्रव्रज्या को ग्रहण नहां करूँगा।

जब गर्भस्त बालक का हलन चलन हुआ तो त्रिशला देवी को अपार हर्ष हुआ। रानी त्रिशलाको हर्षित देखकर सारा राज भवन आनन्द से नाच उठा और खूब उत्सव मनाने लगा।

गर्भ के प्रभाव से सिद्धार्थ राजा की ऋद्धि यश प्रभाव और प्रतिष्ठा में वृद्धि होने लगी। गर्भ के समय त्रिशलां के मन में जो प्रशस्त इच्छायें उत्पन्न होती थी महाराज उसे पूरी कर देते थे। इस प्रकार गर्भ का काल सुख पूर्वक बीता।

चैत्र मास कीं शुक्ल पक्ष की त्रयोदशी के दिन नौ मास और साढे सात रात्रि सम्पूर्ण होने पर त्रिशला माता ने हस्तोत्तरा नक्ष में सुवर्ण जैसी कान्तिवाले एवं सिंह लक्षण वाले पुत्र रत्न को जन्म दिया। जिस प्रकार देवों कीं उपपात शय्या में देव का जन्म होता है उसी प्रकार रुधिरादि से वर्जित, कर्मभूमि के महामानव २४ वें तीर्थङ्कर भगवान का जन्म हुआ। दिशाएँ प्रफुल्लीत हुई जनसमुदाय में स्वभाव से ही आनन्द का वातावरण निर्मित हो गया। तीनों लोक में प्रकाश फैल गया। नारक के जींवों को क्षण भर के लिये अपूर्वसुख की प्राप्ति हुई। आकाश देव दुंदुभियो से गूंज उठा। मेघ सुगन्धित जलधारा बरसाने लगा। मंद मंद सुगन्धित पवन रजकणों को हटाने लगा। इन्द्रों के आसन चलायमान हुए। अवधिज्ञान से भगवान के जन्म को जानकर उनके हर्ष का पार नहीं रहा। वे आसन से नीचे उतरे और भगवान की दिशा में सात आठ कदम चलकर दाहिणे घुटने को नीचा कर और बाये घुटने को खड़ाकर दोनों हाथ जोडकर भगवान की स्तुति करने लगे। उसके बाद अपने अपने आज्ञाकारी देवों को भगवान के जन्मोत्सव में शरीक होने की 'सुघोषा' घंटा द्वारा सूचना दी। छप्पन दिग्कुमारिकाओं ने माता त्रिशला के पास आकर उनका सूतिकाकर्म किया और मंगलगान करती हुई माता का मनोरंजन करने लगी।

सौधर्मेन्द्र पालक विमान में बैठकर भगवान के पास आया और भगवान को तथा माता को प्रणाम कर स्तुति करने लगा। स्तुति कर लेने के बाद बोला 'मैं सोधर्म स्वर्ग का इन्द्र हूँ और आप के पुत्र का जन्मोत्सव करने के लिये यहां आया हूँ इतना कहकर इन्द्र ने माता त्रिवला को निद्राधीन कर दिया और भगवान का एक वैक्रियआकार बनाकर त्रिशला के पास रख दिया। इसके बाद पांच रूपधारी इन्द्र ने भगवान को अपने दोनों हाथों से उठा लिया। आकाश मार्ग से चलकर वे मेरुपर्वत के पाण्डुकवन में आये

वहाँ अतिपाण्डुकम्बला नामक शिलापर सिंहासन रखा और अपनी गोदी में प्रभु को लेकर सौधर्मेन्द्र पूर्व दिशा की तरफ मुँहकर के बैठ गया। उस समय अन्य ६३ इन्द्र और उनके आधीन असंख्य देवी देवता भी वहाँ उपस्थित हुए। आभियोगिक देव क्षीरसमुद्र से जल ले आये और सर्व इन्द्र–इन्द्रानियों ने एवं चार निकाय के देवों ने भगवान का जन्माभिषेक किया। सर्व दो सौ पचास अभिषेक हुए एक एक अभिषेक में ६४ हजार कलश होते है।

इस अवसर्पिणी काल में चोवीसवें तीर्थंकर का शरीर प्रमाण दूसरे तेईस तीर्थंकरों के शरीर प्रमाण से बहुत छोटा था, इसलिए अभिषेक करने की सम्मति देने के पहले इन्द्र के मन में बड़ी शंका हुई कि भगवान का यह बाल-शरीर इतनी अभिषेक की जलधारा को कैसे सह सकेगा ?

भगवान अवधि ज्ञानी थे। वे इन्द्र की शंका को जान गये। तीर्थंकर का शरीर प्रमाण में छोटा हो या बडा किन्तु बल की अपेक्षा सभी तीर्थंकर समान होते हैं और यह बताने के लिए उन्होंने अपने बाएं पैर के अंगूठे से मेरू पर्वत को जरासा दबाया तो सारा मेरू पर्वत कम्पायमान हो गया[1]।

मेरु पर्वत के अचानक हिल उठने से इन्द्र विचार में पड गया। अवधिज्ञान से उपयोग लगाया तो उसे पता चला कि भगवान ने तीर्थंकर के अनन्तबली होने की बात बताने के लिये ही मेरु पर्वत को अंगुठे के स्पर्शमात्र से हिलाया हैं। इन्द्र ने उसी समय भगवान से क्षमा मांगी। अभिषेक के बाद इन्द्र ने भगवान के अंगूठे में अमृत भरा और नंदीश्वर पर्वत पर अष्टाह्लिक महोत्सव मनाकर और फिर अष्ट-मंगल का आलेखन करके और स्तुति करके भगवान को अपने माता के पास वापिस रख दिया।

प्रातःकाल प्रियंवदा नामकी दासी ने राजा सिद्धार्थ को पुत्र जन्म की खबर सुनाई। राजा ने मुकुट और कुंडल छोड़कर अपने समस्त आभूषण दासी को भेट में दे दिये और उसे दासीत्व से मुक्त कर दिया।

राजा सिद्धार्थ ने नगर में दस दिन का उत्सव मनाया। प्रजा के आनन्द और उत्साह की सीमा न रही। सर्वत्र धूम मच गई। कैदियों को बन्धन मुक्त कर दिया। प्रजा को कर मुक्त कर दिया सारा नगर उत्सव और आनन्द का स्थान बन गया।

जन्म के तीसरे दिन चन्द्र और सूर्य का दर्शन कराया गया छठे दिन रात्रि जागरण का उत्सव हुआ। बारहवे दिन नाम संस्कार कराया गया। राजा सिद्धार्थ ने इस प्रसंग पर अपने मित्र, ज्ञातिजन कुटुम्ब परिवार एवं स्नेहियों को आमन्त्रित किया और भोजन, ताम्बूल, वस्त्र अलंकारों से सब का सत्कार कर कहा- जब से यह बालक हमारे कुल में अवतरित हुआ हैं तब से हमारे कुल में धन, धान्य, कोश, कोष्ठागार, बल स्वजन, और राज्य में वृद्धि हुई है। अतः हम इस बालक का नाम 'वर्धमान' रखना चाहते है। सब ने इस सुन्दर नाम का अनुमोदन किया।

वर्द्धमान कुमार का बाल्यकाल दास दासियों एवं पांच धात्रियों के संरक्षण में सुख पूर्वक बीतने लगा।

वर्धमान कुमार ने आठ वर्ष की अवस्था में प्रवेश किया एकबार वे अपने समवयस्क बालकों के साथ प्रमदवन में आमल की नामक खेल खेलने लगे। उस समय इन्द्र अपनी देव सभा में वर्द्धमान कुमार

---

१ बारह योद्धाओं का बल एक सांढ में होता है। दस सांढों का बल एक घोडे में होता है। बारह घोडों का बल ऐक भैसे में होता है पंद्रह भैसों का बल एक मत्त हाथी में होता है। पांचसौ हाथीयों का बल एक केशरी सिंह में होता है। दो हजार केशरी सिंह का बल एक अष्टापद पक्षि में, दसलाख अष्टापद पक्षि का बल एक बालदेव में, दो बलदेव का बल एक वासुदेव में, दो वासुदेव का बल एक चक्रवर्ती में। एक लाख चक्रवर्ती का बल एक देव में एक करोड देव का बल एक इन्द्र में और असंख्य इन्द्र मिलकर भी भगवान की तर्जनी अंगुली को नमाने में भी असमर्थ होते हैं।

की प्रशंसा करते हुए कहने लगे- वर्धमान कुमार बालक होते हुए भी बडे पराक्रमी, विनयी और बुद्धिमान है। इन्द्र देव दानव कोई भी उन्हें पराजित नहीं कर सकता ! एक देव को इन्द्र की इस बात पर विश्वास नहीं हुआ वह वर्धमान कुमार के बल साहस एवं धैर्य की परीक्षा करने की इच्छा से जहाँ वर्धमान कुमार अपने साथियों के साथ खेल रहे थे वहाँ आया। और भयंकर सर्प का रूप धारण करके पीपल वृक्ष से लिपट गया। उस समय वर्धमान कुमार साथियों के साथ पीपल पर चढे हुए थे। फूत्कार करते हुए भयानक सर्प को देखकर सभी बालक भय से कांपने लगे और बचाओ ! बचाओ !! की आवाज से रोने लगे। किन्तु ,वर्धमान कुमार' जरा भी भयभीत नहीं हुए। वें धैर्य पूर्वक सर्प की ओर बढे उसे हाथ से खींचकर दूर फेंक दिया।

पुनः खेल प्रारंभ हो गया वे तिंदूसक' नामका खेल खेलने लगे। इसमें यह नियम था कि अमुक वृक्ष को लक्ष्य करके लड़के दौड़ें। जो लड़का सबसे पहले उस वृक्ष को छू ले वह विजयी और शेष पराजित मानेजायंगे। इस बार वह देव बालक के रूप में उनके साथ खेल खेलने लगा। क्षण भर में बालक रूपधारी देव अपने हरीफ़ वर्धमान कुमार से हार गया। और शर्त के अनुसार वर्धमान कुमार को अपनी पीठ पर लेकर दौड़ने लगा। वह दौड़ता जाता था और अपना शरीर बढाता जाता था। क्षण भर में उसने अपना शरीर सात ताड जितना उंचा बना लिया और बडा भयंकर बन गया। वर्धमान को दैवी माया समझते देर न लगी उन्होंने जोर से उसकी पीठ पर एक घूसा जमा दिया। श्रीवर्धमान कां वज्रमय प्रहार देव सह नहीं सका वह तुंरत नीचे बैठ गया। अब देव को विश्वास हो गया कि वर्धमान कुमार को पराजित करना उसकी शक्ति के बाहर है। वह असली रूप में प्रकट होकर बोला। हे वर्धमान ! सचमुच ही तुम 'महावीर' हो ! । सौधर्मेन्द्र ने आपकी जैसी प्रशंसा की है वैसे ही आप हैं। कुमार ! मैं तुम्हारा परीक्षक बन कर आया था और प्रशंशक बनकर जाता हूं। देव चला गया किन्तु वर्धमान कुमार का 'महावीर' विशेषण सदा के लिये अमर बनगया।

महावीर का लेखनशाला में प्रवेश—

भगवान श्रीमहावीर के आठवर्ष से कुछ अधिक समय होने पर उनके माता पिता ने शुभ मुहूर्त देखकर सुन्दर वस्त्र अलंकार धारण कराके हाथी पर बैठाकर भगवान श्रीमहावीर को पाठशाला में भेजा। अध्यापक को भेट देने के लिये अनेक उपहार और छात्रों को बाँटने के लिये नाना प्रकार की सुंदर वस्तुएँ भेजी गईं। जब भगवान पाठशाला में पहुँचे तो अध्यापक ने उन्हें सम्मान पूर्वक आसन पर बिठलाया।

उस समय इन्द्र का आसन प्रकम्पित हुआ। अवधि ज्ञान से उसने भगवान को पाठशाला में बैठा हुआ देखा। इन्द्र उसी क्षण वृद्ध ब्राह्मण का रूप बनाकर पाठशाला में उपस्थित हुआ। कुमार महावीर को प्रणाम कर वह व्याकरण विषयक विविध प्रश्न कुमार महावीर से पुछने लगा—भगवान महावीर आलौकिक ज्ञानी तो थे ही उन्होंने सुन्दर ढंग से वृद्ध ब्राह्मण के प्रश्नों का उत्तर दिगा।

कुमार के विद्वत्तापूर्ण उत्तरों से पाठशाला का अध्यापक चकित हो गया। वह अपने शंकास्थानों को याद कर कुमार महावीर से पूछने लगा। महावीर ने अध्यापक के सभी प्रश्नों का समाधान कर दिया। महावीर की इस अलौकिक बुद्धि और विद्वत्ता से अध्यापक गण दंग रह गया। तब ब्राह्मणवेश धारी इन्द्र ने अध्यापक से कहा पण्डित ! यह बालक कोई साधारण छात्र नहीं है। ये सकल शास्त्र पारंगत भगवान महावीर है।" अध्यापक गण अपने सामने अलौकिक बालक को देख चकित हो गया। उसने भगवान को प्रणाम किया। इन्द्र ने भी अपना असली रूप प्रकट किया और भगवान को प्रणाम कर अपने स्थान पर चला गया। महावीर के मुख से निकले हुए वचन ऐन्द्र' व्याकरण के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

भगवान महावीर को अलौकिक पुरुष मानकर अध्यापक बालक महावीर को लेकर राजा सिद्धार्थ के पास आया और बोला—भगवान महावीर स्वयं अलौकिक ज्ञानी हैं। उन्हें पढाने की आवश्यकता नहीं। भगवान श्रीमहावीर ने बाल्य अवस्था को पारकरने पर यौवनवय बुद्धि की प्रशंसा सुनकर अनेक देश के राजाओंने राजकुमार महावीर के साथ अपनी राजकन्याओं का वैवाहिक सम्बन्ध जोड़ने के लिये सन्देश भेजे किन्तु विरक्त श्रीमहावीर ने उन्हें वापिस लौटा दिये। अन्त में अपनी अनिच्छा होते हुए भी भोगावली कर्म को शेष जानकर एवं माता पितां तथा बडे भाई की आज्ञा को शिरोधार्य कर वसन्तपुर के राजा समरवोर की रानी पद्मावती के गर्भ से उत्पन्न राजकुमारी यशोदा के साथ शुभ मुहूर्त में पाणि ग्रहण किया।

राजकुमार महावीर यशोदा के साथ सुख पूर्वक रहने लगे। कालान्तर से उन्हें प्रियदर्शना नामकी पुत्री हुई। प्रियदर्शना जब युवा हुई तब उसका विवाह क्षत्रियकुण्ड के राजकुमार जमालि के साथ कर दिया गया।

राजकुमार श्रीवर्धमान स्वभाव से ही वैराग्य शील और एकान्त प्रिय थे। उन्होंने माता पिता के आग्रह से ही गृहवास स्वीकार किया। जब भगवान महावीर २८ वर्ष के हुए तब उनके माता पिता का स्वर्गवास हो गया। माता पिता के स्वर्गवास के बाद भगवान ने अपने बडे भ्राता नन्दिवर्द्धन से कहा—भाई : अब मै दीक्षा लेना चाहता हूँ। नन्दिवर्द्धन ने कहा भाई! घाव पर नमक न छिडको। अभी माता पिता का वियोग का दुःख तो भूले ही नहीं कि तुम भी मुझे छोडने क बात करने लगे। जब तक हमारा स्वस्थ मन न हो जाय तब तक के लिये घर छोडने की बात मत करो। भगवान श्रीमहावीर ने कहा तुम मेरे बडे भ्राता हो अतः तुम्हारी आज्ञा का उल्लंन करना उचित नहीं किन्तु गृहवास में रहने की मेरी अवधि बता दो। नन्दिवर्द्धन! भाई! कम से कम दो वर्ष तक।

वर्धमान—अच्छा, पर आज से मेरे लियें कुछ भी आरंभ समारंभ मत करना। नन्दिवर्धन ने भगवान की बात मान ली। भगवान महावीर गृहस्थवेश में रह कर भी त्याग मय जीवन विताने लगे। वे अचित्त धोवन व गर्म पानी पीते थे। निर्दोष भोजन ग्रहण करते थे। रात्रि को वे कभी नहीं खाते थे। जमीन पर सोते थे और ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करते थे। भगवान की दीक्षा की बात जानकर सारास्वत आदि नौ लोकान्तिक देव भगवान के पास आये और उन्हें प्रणाम कर कहने लगे—हे क्षत्रियवर वृषभ! आपकी जय हो विजय हो! हे भगवान्! आप दीक्षा ग्रहण करें! लोक हित के लिये धर्मचक्र का प्रवर्तन करें। ऐसा कह कर वे देव स्वस्थान चले गये। उसके पश्चात् भगवान ने वर्षीदान देना प्रारंभ कर दिया। वे प्रतिदिन १ करोड ८ लाख सुवर्ण मुद्रा का दान करने लगे। इस प्रकार एक वर्ष की अवधि में ३ अरब ८८ करोड ८० लाख स्वर्ण मुद्रा का दान दिया। वर्षीदान की समाप्ति के बाद भगवान नन्दिवर्धन तथा अपने चाचा सुपार्श्व के पास आये और बोले अब मै दीक्षा के लिये आपकी आज्ञा चाहता हूँ। तब नन्दिवर्धन ने एवं सुपार्श्व ने साश्रुनयनों से भगवान को दीक्षा लेने की आज्ञा दे दी।

सौधर्म आदि इन्द्रों के आसन चलायमान होने से उन्हें भी भगवान के दीक्षा का समय मालूम हो गया। सभी इन्द्र अपने अपने देव देवियों के असंख्य परिवारों के साथ क्षत्रिय कुण्ड आये और भगवान का दीक्षा भिषेक किया। नन्दिवर्धन ने भी भगवान को पूर्वाभिमुख विठला करके दीक्षा भिषेक किया। उसके बाद भगवान ने स्नान किया चन्दन आदि का लेप कर दिव्य वस्त्र और अंलकार परिधान किये।

देवों ने पचास धनुष लम्बी ३६ धनुष उँची और २५ धनुष चौडी चन्द्रप्रभा नाम की दिव्य पालखी तैयार की। यह पालखी अनेक स्तभों से एवं मणिरत्नों से अत्यन्त सुशोभित थी। भगवान इस पालखी में पूर्वदिशा की ओर मुख करके सिंहासन पर बैठ गये। प्रभु की दाहिनी ओर हंस लक्षण युक्त

पंट लेकर कुल महत्तरिका बैठी । बाई ओर दीक्षा का उपकरण लेकर प्रभु की धाई मां बैठी । राजा नन्दिवर्धन की आज्ञा से पालखी उठाई गई । उस समय शक्रेन्द्र दाहिनी भुजा को, इशानेन्द्र बायी भुजा को चमरेन्द्र दक्षिण ओर के नीचे की वाह को और बलेन्द्र उत्तर ओर के नीचे की बाह को उठाये हुए थे। इनके अतिरिक्त अन्य व्यन्तर, भुवनपति, ज्योतिष्क और वैमानिक देवो ने भी हाथ लगाया । उस समय देवों ने अकाश पुष्पवृष्टि की । दुंदुभी बजाई । भगवान की पालखी के आगे रत्न मय अष्टमंगल चलने लगे । जूलूस के आगे आगे भंभा भेरी मृदंग आदि बाजे बजने लगे । भगवान की पालखी के पीछे पीछे उग्रकुल भोग कुल, राज्यकुल और क्षत्रियकुल के राजा महाराजा तथा सार्थवाह आदि देव देवियां तथा पुरुष चलने लगे उन पर श्वेत चमर बींजा जा रहे थे । हाथी घोडे रथ एवं पैदल सेना उनके साथ थी । उसके बाद स्वामी के आगे १०८ घोडे; १०८ हाथी एवं १०८ रथ अगल बगल में चल रहे थे । इस प्रकार ऋद्धि सम्पदा के साथ भगवान की शिविका ज्ञात खण्डवन में अशोक वृक्ष के नीचे आई । भगवान पालखी से नीचे उतरे । तत्पश्चात् भगवान ने अपने समस्त वस्त्रालंकार उतार दिये । उस दिन हेमन्त ऋतु की मार्गशीर्ष कृष्णा १० रविवार का तीसरा प्रहर था । भगवान को वेले की तपस्या थी । विजय मुहूर्त में भगवान ने पंचमुष्ठिलुंचन किया । उस समय शक्रेन्द्रने महाराजके उनकेशों को एक वस्त्र में ग्रहण किये और उसे क्षीरसमुद्र में बहा दिये । भगवान ने णमोसिद्धाणं कह कर करेमि समाइयं सव्वं सावज्जं जोगं पच्चक्खामि कहा । इस प्रकार उच्चारित करते ही शुभ अध्यवसायो के कारण चतुर्थ मनः पर्ययज्ञान उत्पन्न हो गया । नन्दिवर्धन आदि वन्धु जनोने भगवान को वन्दन कर अत्यन्त दुःखी हृदय से विदा ली ।

उस समय भगवान के कन्धे पर सौधर्मेन्द्र ने देवदूष्य वस्त्र रख दिया । भगवान श्रामण्य ग्रहण कर अपने भाई बन्धुओं से विदा ले ज्ञातखण्ड से आगे विहार कर गये । भगवान की इस समय तीस वर्ष की अवस्था थी ।

प्रथम वर्षाकाल :—दीक्षा ग्रहण करने के बाद भगवान ने निम्न कठोरतम प्रतिज्ञा की—बारह वर्ष तक जब तक कि मुझे केवलज्ञान नहीं होगा मै इस शरीर की सेवा सुश्रषा नही करूंगा और मनुष्य तिर्यंच एवं देवता सम्बन्धी जो भी कष्ट आएंगे उनकों समभाव पूर्वक सहन करूंगा । मन में किञ्चित् मात्र भी रंज नहीं आने दूंगा । इस प्रकार की कठोर प्रतिज्ञा कर भगवान ने एकाकी विहार कर दिजा ।

भगवान महावीर ज्ञातखण्ड उद्यान से विहार करके उस दिन शाम को जब एक मुहूर्त दिन शेष रहा तो कर्मार ग्राम आ पहुचे । वहां वे ध्यान में स्थिर हो गये ।

एक ग्वाला सारे दिन हल जोत कर संध्या के समय बैलों को साथ में लिये घर की ओर लौंट रहा था । वह भगवान को खडे देखकर अपने बैल उनके पास छोंडकर बोला मैं गांव में जाता हूं तब तक तुम मेरे बैलों का ध्यान रखना यह कह कर वह गांव में गाय दुहने के लिए चला गया । बैल भूख प्यास से पीडित होने के कारण चरते चरते बहुत दूर जंगल में निकल गये । जब ग्वाला लौटा तो उसने भगवान के पास बैलों को नहीं पाया । उसने भगवान से पूछा आर्य ! मेरे बैल कहा गये ? भगवान की ओर से प्रत्युत्तर नहीं मिलने पर उसने समझा कि उनको मालूम नहीं है । वह जंगल में बैलों को खोजने के लिए चला गया । बहुत खोजने पर भी जब बैल नहीं मिले तो वह वापस लोंट आया । बैल भी चरते-फिरते पुनः भगवान के पास आकर खडे हो गये और चुगाली करने लगे । उसने भगवान के पास बैलों को खडे हुए देखा । बैलों को भगवान के पास देख वह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और भगवान के पास आकर बोला—अरे दुष्ट ! तेरा विचार मेरे बैलों को चुरा कर भगने का था इसी लिए जानते हुए भी तू

ने मेरे बैल नहीं बताये । ऐसा कह कर वह भगवान को मारने के लिए दौडा। भगवान शान्त थे । उस समय इन्द्र अपनी सौधर्म सभा में बैठकर अंतरमें विचार कर रहा था कि जरा देखूं तो सही कि भगवान प्रथम दिन क्या करते हैं । इन्द्र ने अपने ज्ञान का उपयोंग लगाया तो पता चला की ग्वाला भगवान को मारने के लिए भगवान के सन्मुख भाग रहा हैं । इन्द्र ने अपने स्थान पर रह कर उसे तत्काल स्तंभित कर दिया । वह ग्वाले के पास आया और बोंला अरे दुरात्मन ! तूं यह क्या अनर्थ करने जा रहा है. जानता नहीं ये कौन हैं ? ये महाराजा सिद्धार्थ के पुत्र वर्द्धमान है समस्त ऋद्धियों का त्याग कर श्रमण बने हैं । ग्वाला यह सुनकर लज्जित हो गया और बैलों को लेकर चला गया ।

ग्वाले के चले जाने के बाद इन्द्र भगवान महावीर कों वन्दन कर बोंला—हे भगवन ! आपको भविष्य में बडे बडे कष्ट झेलने पड़ेगें । आपकी आज्ञा हांतो मैं आपकी सेवा करूं ।

भगवान ने उत्तर दिया—हे शक्र तुम्हारा यह शिष्टाचार विनय उचित ही हैं किन्तु न अभी ऐसा हुका है न होगा और न होता है कि देवेन्द्र सुरेन्द्र की सहायता से अर्हन्त केवलज्ञान और केवल दर्शनरूप सिद्धि प्राप्त करते हों । यदि अन्य की सहायता से ही आत्मापूर्व संचित कर्म खपा सकता हो तो धर्म क्रिया निष्फल हो जायगी प्रत्येक जीव को अपने संचित कर्मो को अपने ही पुरूषार्थ से खपाना होता है यह कह कर भगवान मौन हो गये और ध्यान में लीन हो गये क्योंकि महापुरुष हमेशा मितभाषी होते हैं ।

इतने में भगवान के मोसी का पुत्र सिद्धार्थ जिसने बालतप करके व्यन्तर पद पाया था वह उधर से निकला । भगवान को ध्यान रत देख कर वह वन्दन के लिए उनके पास आया । इन्द्र ने सिदार्थ व्यन्तर से कहा—हे सिद्धार्थ भगवान तेरे मोसी के पुत्र है । दूसरी बात मेरी यह आज्ञा है कि तुम भगवान के पास रहो और भगवान को कोई मारणान्तिक कष्ट न दे इस बात का ध्यान रखो । इन्द्र की आज्ञा को सिद्धार्थ ने बडे विनय पूर्वक स्वीकार की । इन्द्र भगवान को वन्दन कर अपने स्थान चला गया ।

दूसरे दिन भगवान कर्मारग्राम से विहार कर कोल्लाग सन्निवेश में बहुल नामका ब्राह्मण रहता था। उसके घर उत्सव था । उसने आगत अतिथियों के लिए विशिष्ट प्रकार का भोजन बनाया था । इधर भगवान भी पारने के समय उंच नीच मध्यम कुलों में प्रयटन करते हुए बहुल के घर पहुँच गये । भगवान के दिव्य रूप शरीर की कान्ति और श्रेष्ट लक्षणों को देखकर सोचने लगा ये कोई विशिष्ट महात्मा लगते हैं। ऐसा दिव्य भव्य शरीर सामान्य व्यक्ति का नहीं हो सकता । यह सोचकर उसने भगवान का बडा विनय किया । और आदर पूर्वक परमान्न (खीर) को भगवान के छिद्र रहित हस्तपुट में अर्पण किया । भगवान ने उसे ग्रहन किया । भगवान को छठ का पारणा हुआ । देवताओंने भक्ति पूर्वक वसुधारादि पाँच दिव्य प्रगट किये ।

दीक्षा के समय प्रभु के शरीर पर देवों ने गोशीर्ष चन्दन आदि सुगन्धित पदार्थों का विलेपन किया था । इससे अनेक भँवरे आकर भगवान को डंक मारते थे । अनेक युवक भगवान के शरीर के सुगन्ध से आकर्षित हों उनके पास आकर पूछते थे "आपका शरीर ऐसा सुगन्ध पूर्ण कैसे रहता है ? हमें भी तरकीब बताईए वह औषध दीजिए जिससे हमारा शरीर भी सुगंध मय रहे ।" परन्तु मौनालम्बी प्रभु से उन्हे कोई उत्तर नहीं मिलता । इससे वे बहुत क्रुध होते और प्रभु को अनेक कष्ट देते । अनेक स्वेच्छा-चारिणी स्त्रियां प्रभु के मन मोहक रूप को देखकर कामपीडित होती और दवा की तरह प्रभुसे अंगसग चाहती परन्तु वह नहीं मिलता । तब वे अनेक तरह का उपसर्ग करती और अन्त हारकर चली जातीं ।

भगवान महावीर कोल्लांग सन्निवेश से विहार कर मोंराक सन्निवेश पधारे । वहां दूइज्जन्तक नामक तापसों का आश्रम था। भगवान वहाँ पधारे । उस आश्रम का कुलपति राजा सिद्धार्थ का मित्र था । भगवान महावीर को आते देखकर वह उनके सम्मान के लिए: सामने गया। कुलपति की प्रार्थना पर भगवान ने उस रात्रि को वही रहने का विचार किया । वे रात्रि की प्रतिमा को धारण कर वही ध्यान करने लगे ।

दूसरे दिन प्रातः ही जब भगवान विहार करने लगे तब कुलपति ने अगामी चातुर्मास आश्रम में ही व्यतीत करने की प्रार्थना की। ध्यान के लिये योग्य एकान्त स्थल देखकर भगवान ने कुलपति की प्रार्थना स्वीकार की। भगवान ने वहा से विहार कर दिया। आस पास के स्थलों में विचर कर भगवान चातुर्मास काल व्यतीत करने के लिये आश्रम में पधार गये। कुलपति ने उन्हें घास की एक झोपडी में ठहराये, भगवान झोपडी में रहकर अपना सारा समय ध्यान में व्यतीत करने लगे।

यद्यपि कुलपति के आग्रहवश प्रभु ने वर्षाकाल आश्रम में ही बिताना स्वीकार तो कर लिया था पर कुछ समय रहने पर उन्हें मालूम हो गया कि यहाँ पर उन्हें शांतिं नहीं मिलेगी। आश्रमवासियों कि विपरीत प्रवृत्तियों के कारण भगवान के ध्यान में विक्षेप होने लगा।

जंगलों में घास का अभाव हो गया था वर्षा से नवीन घास अभी उगी न थी। इसलिये जंगल में चरने वाले ढोर जहां घास देखते वहीं दौड जाते। कुछ गायें तापसों के आश्रम में आती और झोपडियों का घास चर जाती तापस लोग अपनी झोपडियों की रक्षा के लिये डंडे ले ले कर गायों के पीछे दौंडते और उन्हें मार भगाते। किन्तु भगवान तापसों की इन प्रवृत्तियों में जरा भी भाग नहीं लेते। वे सदैव ध्यान में लीन रहते कौन क्या करता है उनपर वै जरा भी ध्यान नहीं देते। भगवान की झोपडी के घास को गाये खा जाती तब भी भगवान उन्हे जरा भी नहीं रोकते। भगवान की इस अपूर्व क्षमता से तापस जल उठे। कुलपति के पास आकर कहने लगे अरे—आप यह कैसे अतिथि को लाये हो ? वह तो अकृतज्ञ उदासीन और आलसी है। झोपडी का घास ढोर खा जाते हैं और वह चुपचाप बैठा देखता रहता हैं।

तापसों की इस शिकायत पर कुलपति स्वयं भगवान के पास आया और बोला—कुमार ! एक पक्षी भी अपने घोसले का रक्षण करता हैं और तुम क्षत्रिय होकर भी अपने आश्रयस्थान की रक्षा नहीं कर सकते महद् आश्चर्य है। आश्रमवासियों के इस व्यवहार से भगवान का दिल उठ गया। उन्होंने सोंचा—अब मेरा यहाँ रहना आश्रमवासियों के लिये अप्रितकर होगा, इसलिये वर्षाकाल के पन्द्रह दिन व्यतीत हो जाने पर भी वहां से अस्तिक ग्राम की ओर प्रमाण कर दिया। उस समय भगवान ने पांच प्रतिज्ञाएँ की १—अब से अप्रीतिकर स्थान में नहीं रहूँगा ॥ २—नित्य ध्यान में रहूँगा। ३—नित्य मौन रहूँगा ४—हाथ में भोजव करुँगा। ५—गृहस्थ का विनय नहीं करुंगा। श्री भगवान मोराक गांव से विहार कर अस्थिक गांव में आये। वहां शूल पानी व्यंतर के मन्दिर में ठहरने के लिये भगवान ने गांव वालों से आज्ञा मांगी। गांववालों ने कहा देवार्य ! रात्रि में यदि कोई पथिक इस मन्दिर में ठहरता है तो यह यक्ष उसको मार डालता है। अतः यहां रहना खतरनाक हैं।

भगवान ने कहा—इस बात की आप लोग चिन्ता न करें। मुझे केवल आपलोगों की अनुमति चाहिये। भगवान के विशेष आग्रह पर गांववाले ने मझबूर होकर मन्दिर में ठहरने की आज्ञाँ दे दी। भगवान मन्दिर के एक कोंने में जाकर ध्यान करने लगे ॥:

भगवान की इस निर्भयता कों शूलपानी यक्ष ने धृष्टता समझा। उसने सोंचा—यह व्यक्ति बडा धृष्ट है। मरने की इच्छा से ही यहां आया है। गांववालों के मना करने पर भी इसने यहां रात्रि व्यतीत करने का निश्चय किया है। रात होने दो फिर इसकी खबर लेता हूं ॥

सूर्य अस्ताचलकी ओर चला गया। धीरे धीरे सर्वत्र अंधेरा फैल गया। शूलपानी यक्ष ने भी अपने पराक्रम दिखलाने शुरू कर दिये ॥ सर्वप्रथम उसने अट्टहास किया जिसकी आवाज से सारा जंगल गूंज उठा। गांव में सोते हुए मनुष्यों की छातियां धड़कने लगी ओर हृदय दहल उठे पर इस भीषण अट्टास का भगवान पर जरा भी असर नहीं हुआ। वे निश्चल भाव से ध्यान में मग्न रहे। अब शूलपानी यक्षने हाथी का रूप बनाकर भगवान पर दन्त प्रहार किये और उन्हे पेरों तले रौंधा किन्तु शूलपानी यक्ष फिर भीःउन्हें

विचलित नहीं कर सका । अन्त में कई क्रूर प्राणिकों के रूप बना बना कर भगवान को कष्ट दिया लेकिन भगवान के मन को वह क्षुब्ध नही कर सका । अंत में वह भगवान की दृढता एवं अपूर्व क्षमता के सामने हार गया । वह शांत होकर क्षमाशील भगवान के चरणों में गिर पडा और अपनी क्रूरता के लिये भगवान से क्षमा याचना करने लगा भगवान के प्रभाव से शूलपानी यक्ष की क्रूरता जाती रही और वह सदा के लिये दयावान बन गया।

उस दिन भगवान ने पिछली रात में एक मुहूर्त भर निद्रा ली जिसमें उन्होंने निम्न दस स्वप्न देखे—
१–अपने हाथ से ताल पिशाच कों मारना २–अपनी सेवा करता हुआ श्वेत पक्षी ३–चित्र कोकिल पक्षी को अपनी सेवा करते हुए ४–सुगन्धित दो पुष्पमालाएँ ५–सेवा में उपस्थित गोवर्ग ६–पुष्पित-कमलोवाला पद्मसरोवर ७–समुद्र को अपनी भुजा से पार करना ८–उदीयमान सूर्य की किरणों का फैलना ९–अपनी आतों से मानुष्योत्तर पर्वत को लपेटना १०–मेरु पर्वत पर चढना ।

रात्री को शूलपानी का अट्टास सुनकर गाँव के लोगों ने यह अनुमान कर लिया था कि शूलपानी यक्षने भगवान को मार डाला है । और गीत गान करते हुए सुना तब समझा कि यह पक्ष महावीर की मृत्यु की खुशी में अब आनन्द मना रहा है ॥

अस्थिक गांव में उत्पल नामका एक निमित्त वेत्ता रहता था । वह किसी समय पार्श्वनाथकी परम्परा का साधु था । बाद में गृहस्थ होकर निमत्त ज्योतिष से अपनी आजीविका चलाता था ।

उत्पलने जब सुनाकि शूलपानी यक्ष के देवालय में भगवान महावीर ठहरे हैं तो उसे बडी चिन्ता हुई और अशुभ कल्पनाओं में सारी रात बीताकर सवेरे ही इन्द्रशर्मा पूजारी एवं अन्य ग्रामवालों के साथ शूलपानि यक्ष के मन्दिर में पहुचा । वहाँ पहुचते ही उत्पलने देखाकि महावीर के चरणों में पुष्प गन्धादि द्रव्य चढे हुए हैं । यह दृश्य देख ग्रामवासी और उत्पल नैमित्तिक के आनन्द की सीमा न रही । वे भगवान के चरणो में गिर पडे और भगवान के गुणगान गाने लगे । उन्होंने भगवान से कहा–भगवन् ! आपने यक्ष की क्रूरता मिटाकर ग्राम निवासियों पर महान् उपकार किया है । सचमुच आप धन्य है।

उत्पल हर्षावेश में बिना कहे ही भगवान के दस स्वप्नों का फल बताते हुए कहने लगा–१. आप मोहनीय कर्म का अन्त करेंगे । २. शुक्लध्यान में आप सदा रहेंगे । ३. आप द्वादशाङ्गी का उपदेश देंगे । ४. चतुर्विध संघ आपकी सेवा करेगा । ५. संसार समुद्र को आप पार करेंगे । ६. कापको अल्प समय में ही केवलज्ञान होगा । ७. तीन लोक में आपका यश फैलेगा । ८. समवशरण में विराज कर आप देशना देंगे । ९. समस्त देवदेवेन्द्र आपकी सेवा करेंगे । १०. आपने दो पुष्प की माला देखी है लेकिन उसका फल मै नहीं जानता । अपने इस स्वप्न का फल खुद भगवान ने बतलाते हुए कहा–उत्पल ! इस स्वप्न का फल यह है कि मैं साधु और गृहस्थ ऐसे दो धर्म की प्ररूपणा करूंगा ।

यह प्रथम वर्षावास भगवान ने १५–१५ उपवास की आठ तपस्याओं से पूर्ण किया । मार्गशीर्ष कृष्ण प्रतिपदा को भगवान ने अस्थिक गांव से विहार कर दिया । भगवान मोराक सन्निवेश पधारे । वहाँ वहाँ अच्छंदक नामका एक पाखण्डी रहता था । वह ज्योतिष मंत्र तंत्रादि से अपनी आजीविका चलता था । उसका सारे गांव में अच्छा प्रभाव था । उसके प्रभाव को सिद्धार्थ व्यन्तर सह नही सका । इससे प्रभु की पूजा कराने के विचार से उसने गांव वालों कों चमत्कार दिखाया इससे लोग अच्छंदक की उपेक्षा करने लगे । अपनी महत्ता घटते देख वह भगवान के पास आया और प्राथना करने लगा देव आप अन्यत्र चले जाईए कारण आप के यहां रहने से मेरी आजिविका ही नष्ट हों जायेगी और मैं दुखी हो जाउंगा ऐसी परिस्थिति में भगवान ने वहाँ रहना उचित नहीं समझा और वहां से विहार कर दिजा ।

वाचाला नामके दो सन्निवेश थे। एक उत्तरवाचाला और दूसरा दक्षिणवाचाला। दोनों सन्निवेशों के बीच स्वर्णबालुका तथा रुप्पवालुका नामकी दो नदीयाँ बहती थी ॥ भगवान महावीर दक्षिणवाचाला होकर उत्तरवाचाला जा रहे थे ॥ उस समय दीक्षा के समय का देव दूष्यवस्त्रको सुवर्णबालु का नदी के किनारे भगवान ने त्याग कर दिया। भगवान १३ महिने से कुछ अधिक समय तक सचेलक रहे इसके बाद भगवान यावज्जीवन अचेलक रहे ऐसा भगवान ने आचारांग सूत्र में कहा है। (यही बात पू० आचार्य श्रीघासी लालजी महाराजने आचारांग सूत्र की टीका में भी लिखी है)

उत्तर वाचाला जाने के लिए दो मार्ग थे। एक कनखल आश्रमपद के भीतर होकर जाता था। और दूसरा आश्रम के भीतर होकर जाता था। भीतरवाला मार्ग सीधा सीधा होने पर भी भयंकर और उजडा था। बाहर का मार्ग लम्बा और टेढा था। भगवान महावीर ने भीतर के मार्ग से प्रयाण कर दिया मार्ग में उन्हें ग्वाले मिले। उन्होंने भगवान से कहा—देवार्य· यह मार्ग ठीक नही है। रास्ते में एक भयानक दृष्टि विष सर्प रहता हैं जो राहगिरों को जलाकर भस्म कर देता है। अच्छा हो आप वापस लौटकर बाहर के मार्ग से जायें। भगवान महावीर ने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया वे चलते हुए सर्प के बिल के पास यक्ष के देवालय में जाकर ध्यानारूढ हो गये।

सारे दिन आश्रम पद में घूमकर सर्प जब अपने स्थान पर लौटा तो उसकी दृष्टि ध्यान में खडे भगवान पर पडी। वह भगवान को देखकर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ। उसने अपनी विषमय दृष्टि भगवान पर डाली साधारण प्राणी तो उस सर्प की एक ही दृष्टिपात से जलकर भस्म हो जाता था। किन्तु भगवान पर उस सर्प की विषमयी दृष्टि का कुछ भी प्रभाव नहीं पडा। दूसरी तीसरी बार भी उसने भगवान पर विषमय दृष्टि फेकी किन्तु भगवान पर उसका कुछ भी असर नहीं पडा।

तीन बार विषमय एवं भयंकर दृष्टि डालने पर भी जब भगवान को अचल देखा तो वह भगवान पर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और वह भगवान पर जोरोंसे झपटा। उसने भगवान के अंगुष्ठ को मुंह में पकड लिया और उसे चूसने लगा। रक्त के स्वाद में दूध सा स्वाद पाकर वह स्तब्ध हो गया। वह भगवान की ओर देखने लगा भगवान की शान्त मुद्रा देखकर उसका क्रोध शान्त हो गया। इसी समय महावीर ने ध्यान समाप्त कर उसे संबोधित करते हुए कहा—"समझ ! चण्डकौशिक समझ !
भगवान के इस वचनांमृत से सर्प का क्रूर हृदय पानी पानी हो गया। वह शान्त होकर सोचने लगा—चण्डकौशिक यह नाम मैंने कहीं सुना हुआ है। उहापोह करते करते उसे जातिस्मरण ज्ञान हो गया। किस प्रकार उसका जीव पूर्व के तीसरे भव में इस आश्रम का 'चण्डकौशिक' नामका कुलपति था; किस प्रकार दौडता हुआ गढे में गिरकर मरा और पूर्व संस्कार वश भवान्तर में सर्पकी जाति में उत्पन्न होकर इसका रक्षण करने लगा इत्यादि सब बातें उसको याद आगई। वह विनीत शिष्य की तरह भगवान महावीर के चरणो में गिर पडा। और अपने पाप का प्रायाश्चित करते हुए वर्तमान पापमय जीवन का अन्त करने के लिये अनशन कर लिया। भगवान भी वहीं ध्यानारूढ हो गये।

सर्प को स्थीर देखकर ग्वाले उसके नजदीक आने लगे और उसे पत्थर मारने लगे। ग्वालों ने जब देखा कि वह सर्प किंचित् मात्र भी हिलता नहीं, तो वे निकट आये और भगवान को वन्दन कर उनकी महिमा गाने लगे। ग्वालों ने सर्प की पुजा की दूध दही और घी बेचनेवाली जो औरते उधर से जाती तो वे उस सर्प पर भक्ति से घी आदि डालती और नमस्कार करती। फल यह हुआ कि सर्प के शरीर पर चींटियां लगने लगीं। इस प्रकार सारी वेदनाओं को समभाव से सहन करके वह सर्प आठवें देवलोक सहस्त्रकार में देव रूप से उत्पन्न हुआ।

भगवान ने आगे विहार किया और उत्तर वाचाला गांव में नागसेन के घरपर जाकर पंद्रह दिन के उपवास का पारणा खीर से किया । वहाँ देवताओं ने पंज दिव्य प्रकट किये । नागसेन का लडका १२ वर्षो से बाहर चला गया था । अकस्मात् वह भी उसी दिन घर वापस लौटा ।

उत्तर वाचाला से विहार कर भगवान श्वेताम्बीका नगरी आये । वहाँ के राजा प्रदेशी ने भगवान को वैभव पूर्वक वन्दन किया ये प्रदेशीराजा केशी श्रमण से श्रावक व्रत ग्रहण करनेवाले प्रदेशीराजा से भिन्न है । वहाँ से भगवान ने सुरभिपुर की ओर विहार किया । सुरभिपुर जाते हुए; मार्ग में भगवान को रथों पर जाते हुए पांच नैयक राजा मिले । उन सब ने भगवान को वन्दन किया । ये राजा प्रदेशी राजा के पास जा रहे थे ।

आगे विहार करते हुए रास्ते में गंगा नदी आयी भगवान ने सिद्धदत्त नाविक की नौका में बैठकर गंगा नदी पार की । नौका पार करते समय सुदंष्ट्र नामक देवने नौका को उलटाने की कोशिश की किन्तु भगवान के भक्त कम्बल और शंबल नामके नागकुमार देवोने उसके इस दुष्ट प्रयत्न को सफल नहीं होने दिया । भगवान नौका से उतरकर थूनाक सन्निवेश पधारे और वहाँ गांव के बाहर ध्यान करने लगे ।

थूनाक सन्निवेश में 'पुष्प' नामक सामुद्रिक महावीर के सुन्दर लक्षण देखकर बडा प्रभावित हो गया । उसे पता लगा कि यह भावी तीर्थंकर है ।

भगवान थूनाक से विहारकर राजगृह पधारे । वहाँ तन्तुवाय की शाला में ठहरे । और वर्षाकाल वहीं व्यतीत करने लगे । इसी तन्तुवाय शाला में गोशालक नामक एक मंख जातीय युवा भिक्षु भी चातुर्मास बिताने के लिये ठहरा हुआ था ।

भगवान महावीर मास खमण कें अन्त में आहार लेते थे । महावीर के इस तप; ध्यान और अन्य गुणों से गोशालक बहुत प्रभावित हुआ और उसने महावीर का शिष्य होने का निश्चय कर लिया । उसने भगवान से भेट की और अनेक बार अपना शिष्याव स्वीकार करने की प्रार्थना की । अन्त में भगवान ने मौन भाव से उसका शिष्यत्व स्वीकारकर लिया । चातुर्मास की समाप्ति के बाद भगवान कोल्लाग सन्निवेश पधारे । कोल्लाग से भगवान गोशालक के साथ सुवर्णखल, नन्दपादक, आदि गावों से होते हुए चंपा पधारे । तीसरा चातुर्मास भगवान ने चंपा में ही व्यतीत किया । इस चातुर्मास में भगवान ने दो दो मास की तपस्या की पहले दोमासखमण का का पारणा चम्पा में किया और दूसरे दो मास खमण का पारणा चपा के बाहर । वहाँ से आपने कालाय सन्निवेश की ओर विहार कर दिया पत्तकालय, कुमारा सन्निवेश; चोराक सन्निवेश आदि गावों में अनेक प्रकार के उपसर्ग और परिषह सहते हुए भगवान पृष्ट चंपा पधारे चौथा चातुर्मास आपने पृष्ठ चम्पा में ही व्यतीत किया । चातुर्मास समाप्त होने पर बाहरगाँव में तप का पारणा कर आपने कयंगला की ओर विहार कर दिया । कयंगला में दरिद्रथेर के मन्दिर में एक रात भर रहे । साथ में गोशालक भी था । दूसरे दिन विहार कर भगवान श्रावस्ती पधारे । भगवान वहाँ कायोत्सर्ग किया। बहां से हलिद्दुग गांव पधारे और रात्रि में हलिद्दुगा नामक विशाल वट्ट वृक्ष के नीचे ध्यान किया । वहाँ आग के कारण ध्यानस्थ भगवान के पैर झुलस (जल) गये । दोपहरके समय भगवान ने वहाँ से विहार किया द्रिऔर, नँगला गांव के बहार वासुदेव के मन्दिर में जाकर ठहरे । नगला से आप आवती गांव गये और बलदेव के मंदिर में ठहरकर ध्यान किया । आवतासे विहार करते हुए भगवान और गोशालक चोराय सन्निवेश होकर कलंबुआ सन्तिवेश की ओर गये ।

वाचाला नामके दो सन्निवेश थे। एक उत्तरवाचाला और दूसरा दक्षिणवाचाला। दोनों सन्निवेशों के बीच स्वर्णबालुका तथा रुप्पबालुका नामकी दो नदीयाँ बहती थी ॥ भगवान महावीर दक्षिणवाचाला होकर उत्तरवाचाला जा रहे थे॥ उस समय दीक्षा के समय का देव दूष्यवस्त्रको सुवर्णबालु का नदी के किनारे भगवान ने त्याग कर दिया। भगवान १३ महिने से कुछ अधिक समय तक सचेलक रहे इसके बाद भगवान यावज्जीवन अचेलक रहे ऐसा भगवान ने आचारांग सूत्र में कहा है। (यही बात पू० आचार्य श्रीघासी लालजी महाराजने आचारांग सूत्र की टीका में भी लिखी है)

उत्तर वाचाला जाने के लिए दो मार्ग थे। एक कनखल आश्रमपद के भीतर होकर जाता था। और दूसरा आश्रम के भीतर होकर जाता था। भीतरवाला मार्ग सीधा सीधा होने पर भी भयंकर और उजडा था। बाहर का मार्ग लम्बा और टेढा था। भगवान महावीर ने भीतर के मार्ग से प्रयाण कर दिया मार्ग में उन्हें ग्वाले मिले। उन्होंने भगवान से कहा—देवार्य· यह मार्ग ठीक नही है। रास्ते में एक भयानक दृष्टि विष सर्प रहता हैं जो राहगिरों को जलाकर भस्म कर देता है। अच्छा हो आप वापस लौटकर बाहर के मार्ग से जायें। भगवान महावीर ने उनकी बात पर ध्यान नहीं दिया वे चलते हुए सर्प के बिल के पास यक्ष के देवालय में जाकर ध्यानारूढ हो गये।

सारे दिन आश्रम पद में घूमकर सर्प जब अपने स्थान पर लौटा तो उसकी दृष्टि ध्यान में खडे भगवान पर पडी। वह भगवान को देखकर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ। उसने अपनी विषमय दृष्टि भगवान पर डाली साधारण प्राणी तो उस सर्प की एक ही दृष्टिपात से जलकर भस्म हो जाता था। किन्तु भगवान पर उस सर्प की विपमयी दृष्टि का कुछ भी प्रभाव नही पडा। दूसरी तीसरी बार भी उसने भगवान पर विषमय दृष्टि फेकी किन्तु भगवान पर उसका कुछ भी असर नहीं पडा।

तीन बार विषमय एवं भयंकर दृष्टि डालने पर भी जब भगवान को अचल देखा तो वह भगवान पर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और वह भगवान पर जोरोंसे झपटा। उसने भगवान के अंगुष्ठ को मुंह में पकड लिया और उसे चूसने लगा। रक्त के स्वाद में दूध सा स्वाद पाकर वह स्तब्ध हो गया। वह भगवान की ओर देखने लगा भगवान की शान्त मुद्रा देखकर उसका क्रोध शान्त हो गया। इसी समय महावीर ने ध्यान समाप्त कर उसे सबोधित करते हुए कहा—"समझ ! चण्डकौशिक समझ !
भगवान के इस वचनामृत से सर्प का क्रूर हृदय पानी पानी हो गया। वह शान्त होकर सोचने लगा—चण्डकौशिक यह नाम मैंने कहीं सुना हुआ है। उहापोह करते करते उसे जातिस्मरण ज्ञान हो गया। किस प्रकार उसका जीव पूर्व के तीसरे भव में इस आश्रम का 'चण्डकौशिक' नामका कुलपति था; किस प्रकार दौडता हुआ गढे में गिरकर मरा और पूर्व संस्कार वश भवान्तर में सर्पकी जाति में उत्पन्न होकर इसका रक्षण करने लगा इत्यादि सब बातें उसको याद आगई। वह विनीत शिष्य की तरह भगवान महावीर के चरणो में गिर पडा। और अपने पाप का प्रायश्चित करते हुए वर्तमान पापमय जीवन का अन्त करने के लिये अनशन कर लिया। भगवान भी वहीं ध्यानारूढ, हो गये।

सर्प को स्थीर देखकर ग्वाले उसके नजदीक आने लगे और उसे पत्थर मारने लगे। ग्वालों ने जब देखा कि वह सर्प किंचित् मात्र भी हिलता नहीं, तो वे निकट आये और भगवान को वन्दन कर उनकी महिमा गाने लगे। ग्वालों ने सर्प की पुजा की दूध दही और घी बेचनेवाली जो औरते उधर से जाती तो वे उस सर्प पर भक्ति से घी आदि डालती और नमस्कार करती। फल यह हुआ कि सर्प के शरीर पर चींटियाँ लगने लगीं। इस प्रकार सारी वेदनाओं को समभाव से सहन करके वह सर्प आठवें देवलोक सहस्त्रकार में देव रूप से उत्पन्न हुआ।

भगवान ने आगे विहार किया और उत्तर वाचाला गांव में नागसेन के घरपर जाकर पंद्रह दिन के उपवास का पारणा खीर से किया। वहाँ देवताओं ने पंज दिव्य प्रकट किये। नागसेन का लडका १२ वर्षों से बाहर चला गया था। अकस्मात् वह भी उसी दिन घर वापस लौटा।

उत्तर वाचाला से विहार कर भगवान श्वेताम्बीका नगरी आये। वहाँ के राजा प्रदेशी ने भगवान को वैभव पूर्वक वन्दन किया ये प्रदेशीराजा केशी श्रमण से श्रावक व्रत ग्रहण करनेवाले प्रदेशीराजा से भिन्न है। वहाँ से भगवान ने सुरभिपुर की ओर विहार किया। सुरभिपुर जाते हुए; मार्ग में भगवान को रथों पर जाते हुए पांच नैयक राजा मिले। उन सब ने भगवान कों वन्दन किया। ये राजा प्रदेशी राजा के पास जा रहे थे।

आगे विहार करते हुए रास्ते में गंगा नदी आयी भगवान ने सिद्धदत्त नाविक की नौका में बैठकर गंगा नदी पार की। नौका पार करते समय सुदंष्ट्र नामक देवने नौका को उलटाने की कोशिश की किन्तु भगवान के भक्त कम्बल और शंबल नामके नागकुमार देवोने उसके इस दुष्ट प्रयत्न को सफल नहीं होने दिया। भगवान नौका से उतरकर थूनाक सन्निवेश पधारे और वहाँ गांव के बाहर ध्यान करने लगे।

थूनाक सन्निवेश में 'पुष्प' नामक सामुद्रिक महावीर के सुन्दर लक्षण देखकर बडा प्रभावित हो गया। उसे पता लगा कि यह भावी तीर्थंकर है।

भगवान थूनाक से विहारकर राजगृह पधारे। वहाँ तन्तुवाय की शाला में ठहरे। और वर्षाकाल वहीं व्यतीत करने लगे। इसी तन्तुवाय शाला में गोशालक नामक एक मंख जातीय युवा भिक्षु भी चातुर्मास बिताने के लिये ठहरा हुआ था।

भगवान महावीर मास खमण कें अन्त में आहार लेते थे। महावीर के इस तप; ध्यान और अन्य गुणों से गोशालक बहुत प्रभावित हुआ और उसने महावीर का शिष्य होने का निश्चय कर लिया। उसने भगवान से भेट की और अनेक बार अपना शिष्याव स्वीकार करने की प्रार्थना की। अन्त में भगवान ने मौन भाव से उसका शिष्यत्व स्वीकारकर लिया। चातुर्मास की समाप्ति के बाद भगवान कोल्लाग सन्निवेश पधारे। कोल्लाग से भगवान गोशालक के साथ सुवर्णखल, नन्दपादक, आदि गावों से होते हुए चंपा पधारे। तीसरा चातुर्मास भगवान ने चंपा में ही व्यतीत किया। इस चातुर्मास में भगवान ने दो दो मास की तपस्या की पहले दोमासखमण का का पारणा चम्पा में किया और दूसरे दो मास खमण का पारणा चंपा के बाहर। वहाँ से आपने कालाय सन्निवेश की ओर विहार कर दिया पत्तकालय, कुमारा सन्निवेश; चोराक सन्निवेश आदि गावों में अनेक प्रकार के उपसर्ग और परिषह सहते हुए भगवान पृष्ठ चंपा पधारे चौथा चातुर्मास आपने पृष्ठ चम्पा में ही व्यतीत किया। चातुर्मास समाप्त होने पर बाहरगाँव में तप का पारणा कर आपने कयंगला की ओर विहार कर दिया। कयंगला में दरिद्दथेर के मन्दिर में एक रात भर रहे। साथ में गोशालक भी था। दूसरे दिन विहार कर भगवान श्रावस्ती पधारे। भगवान वहाँ कायोत्सर्ग किया। वहां से हलिद्दुग गांव पधारे और रात्रि में हलिद्दुगा नामक विशाल वट्ट वृक्ष के नीचे ध्यान किया। वहाँ आग के कारण ध्यानस्थ भगवान के पैर झुलस (जल) गये। दोपहरके समय भगवान ने वहाँ से विहार किया द्रिऔर, नँगला गांव के बहार वासुदेव के मन्दिर में जाकर ठहरे। नगला से आप आवती गांव गये और बलदेव के मंदिर में ठहरकर ध्यान किया। आवतासे विहार करते हुए भगवान और गोशालक चोराय सन्निवेश होकर कलंबुआ सन्तिवेश की ओर गये।

कलंबुआ के अधिकारी मेघ और काल हस्ती जमीदार होते हुए भी आसपास के गाँवों में डाका डालते थे। जिस समय भगवान वहां पहुँचे काल हस्ती डाकुओं के साथ डाका डालने जा रहा था। इन दोनों को देखकर डाकुओंने पूछा—तुम कोन हो ?" इन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। कालहस्ती ने विशेष शंकित होकर भगवान को पिटवाया और प्रत्युत्तर न मिलने से बन्धवाकर मेघ के पास भेज दिया।

मेघ ने महावीर को गृहस्थाश्रम में एक बार क्षत्रियकुण्ड में देखा था। उसने महावीर को देखते ही पहिचान लिया और तुरंत मुक्त करवा कर बोला—भगवान् ! क्षमा कीजिये ! आपको न पहिचानने से यह अपराध होगया है। ऐसा कहकर उसने भगवान का बहुमान किया और उन्हें विदा किया।

अभी बहुत कर्म भगवान को क्षय करना बाकी है। और अनार्य देश में कर्म निज्झरा के सहायक अधिक मिलेंगे। यह सोचकर भगवान ने राढ भूमि की ओर विहार कर दिया। यहाँ पर अनार्य लोगों की अवहेलना निंदा, तर्जना और ताड़ना आदि अनेक उपसर्गो को सहते हुए आपने बहुत से कर्मो की निझरा कर डाली। भगवान राढ़भूमि की तरफ से लौट रहे थे उसके सीमा प्रदेश के पूर्णकलश नामक अनार्य गाँव से निकलकर आप आर्य देश सीमा में आ रहे थे। रास्ते में चोर मिले उन्होंने भगवान के दर्शन को अपशकुन मान कर उन पर आक्रमणकर दिया। इन्द्रने तत्काल उपस्थित होकर चोरों के आक्रमण को निष्फल कर दिया।

आपने आर्य देश में पहुँच कर मलयदेश की राजधानी भद्दिल नगरीं में पांचवाँ चातुर्मास व्यतीत किया। चातुर्मास समाप्ति पर भगवान ने भद्दिल नगर के बाहर पारणा किया और वहाँ से चलकर आप कवलि समागम पधारे !

भगवान कयलि समागम से अम्बूसंड और तंबाय सन्निवेश गये। तंबाय सन्निवेश में नन्दिषेण पार्श्वापत्य से गोशालक की तकरार हुई। तंबाय सन्निवेश से भगवान कूपिय सन्निवेश गये। यहाँ पर आपको गुप्त चर समझकर राजपुरुषों ने पकडा और पीटा और कैद करलिया। विजया और प्रगलभा नामकी एक परिव्राजिका को जब इस बात का पता चला तो वह तत्काल राजपुरुषों के पास पहुँची और उन्हें भगवान महावीर का परिचय दिया। भगवान महावीर का वास्तविक परिचय जब राज पुरूषों को मिला तो उन्होंने भगवान से क्षमा याचना की। और भगवान को वन्दन कर उन्हें विदा किया।

कुपित सन्निवेश से भगवान ने वैशाली की ओर विहार किया। गोशालक ने इस समय आपके साथ चलने से इन्कार कर दिया। उसने कहा आपके साथ रहते हुए मुझे बहुत कष्ट उठाना पडता है, परन्तु आप कुछ भी सहायता नहीं देते। इसलिये मैं आपके साथ नहीं चलूंगा। भगवान ने कुछ नहीं कहा। भगवान क्रमशः वैशालीं पहुँचे ओर लोहे के कारखाने में ठहरे। यहाँ एक लोहार भगवान के दर्शन को अमंगल मानकर हथौडा लेकर उन्हें मारने के लिये दौडा। परन्तु उसके हाथ पांव वही स्तंभित हो गये।

वैशाली से आप ग्रामाक सन्निवेश पधारे। वहाँ बिभेलक यक्ष ने आपकी खूब महिमा की। ग्रामाक से शालिशीर्ष पधारे। यहाँ कटपूतना नामकी व्यंतरी ने आपको बडा कष्ट दिया। अन्त में वह भगवान की प्रशंशक बनी।

शालीपीर्ष से विहार कर भद्दिया नगरी पधारे और छठा चातुर्मास आपने भद्दिया में ही व्यतीत किया। चातुर्मास समाप्ति के बाद चातुर्मासिक तप का पारणा नगरी के बारह किया। वहाँ से आपने मगध देश की ओर विहार कर दिया।

सातवां चातुर्मास आपने मगध देश की नगरी आलंभिया में व्यतीत किया। चातुर्मास समाप्ति कर

आपने चातुर्मासिक तव कर पारणा किया । वहां से विहार कर आप कुण्डाक सन्निवेश होते हुए मद्दना सन्निवेश बहुसाल तथा लोहार्गल पधारे । लोहार्गल के राजा जितशत्रु ने आपको शत्रुपक्ष का आदमी मानकर पकड लिया । यहां उत्पल ज्योतिपी राजा को आपका परिचय देकर आपको मुक्त करवा दिया । वहां से पुरिमताल उन्नाग गोभूमि होते हुए राजगृह पधारे । आठवां चातुर्मास आपने राजगृह में ही व्यतीत किया ।

चातुर्मास के बाद विशेष कर्मों को खपाने के लिये आपने वज्रभूमि तथा शुद्धिभूमि जैसे अनार्य प्रदेश में विहार किया यहाँ भी आपको अनेक प्रकार के उपसर्ग सहने पडे । अनार्य भूमि में आपको चातुर्मास के योग्य कही भी स्थान नहीं मिला अतः आपने नौवा चातुर्मास चलते फिरते व्यतीत किया ।

अनार्य भूमि से निकलकर भगवान गोशालक के साथ कूर्मग्राम पधारे । कूर्म ग्राम के बाहर वैश्यायन नामका तापस औंधे मुख लटकता हुआ तपस्या कर रहा था । धूपसे आकुल होकर उसकी जटाओं से जूएँ गिर रही थी और वैश्यायन उन्हें पकड पकड कर वापिस अपनी जटा में डाल देता था । गोशालक यह दृश्य देखकर बोला--भगवान् ! यह जुओं का सेजारी--स्थान देने वाला मुनि है या पिचास ?

गोशालक ने बार बार उक्त बात दोहराई । गोशालक के मुह से उक्त बाते बार बार सुनकर वह अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और उसने गोशालक को मारने के लिये तेजो लेश्या छोडी । परन्तु उस समय भगवान ने शीतल लेश्या छोडकर गोशालक को बचा लिया । इस अवसर पर गोशालक ने ते जो लेश्या प्राप्ति का उपाय भगवान से पूछा । भगवान ने उपाय बता दिया । तेजो लेश्या कीं साधना करने के लिये वह भगवान से जुदा हुआ और श्रावस्ती में हालाहला कुम्भारिण के घर रह कर तेजो लेश्या की साधना करने लगा । भगवान की कही हुई विधि के अनुसार छ मास तक तप और आतापना करके गोशालक ने तेजो लेश्या प्राप्त करली । और परीक्षा के तौर पर उसका पहला प्रयोग कुएँ पर पानी भरती हुइ एक दासी पर किया ।

तेजो लेश्या प्राप्त करने के बाद गोशालक ने छ दिशाचरों से निमित्तशास्त्र पढा जिससे वह सुख दुःख लाभ; हानि जीवित और मरण इन छ बातों में सिद्ध वचन नैमित्तिक बन गया । तेजो लेश्या और निमित्त ज्ञान से जैसी असाधारण शक्तियों से गोशालक का महत्व बहूत बढ़ गया और उसके अनुयाई बढने लगे । वह अपने संप्रदाय आजीवकों का आचार्य बन गया ।

सिद्धार्थ पुर से भगवान वैशाली पधारे । वहाँ के बालक आपको पिशाच मान कर सताने लगे । सिद्धार्थ राजा के मित्र शंख को इस बात का पता लगा तो उसने बालकों को भगादिया और शंखराजाने भगवान से क्षमा याचना कर वन्दना की । वैशाली से भगवान वाणिज्य ग्राम पधारे । वैशाली और वाणिज्य ग्राम के बीच गंडकी नदी पडती थी । भगवान ने उसे नावद्वारा पार किया । वाणिज्य ग्राम में एक आनन्द नामक अवधिज्ञानी श्रावक था उसने आपको वन्दना कर कहा--"भगवान् ! अब आप को अल्प काल ही में केवल ज्ञान--केवल दर्शन उत्पन्न होगा ।

वाणिज्य ग्राम से भगवान क्रमशः विचरण करते हुए श्रावस्ती पधारे । आपने वर्षाकाल समीप जान दसवां चातुर्मास श्रावस्ती में ही व्यतीत किया । चातुर्मास की समाप्ति के बाद भगवान सानुलट्ठिय नामक ग्राम में पधारे । वहां आपने सोलह दिन की तपस्या की । और महाभद्र सर्वतोभद्र प्रतिमाओ नामक तप का आराधन किया । अपनी तपस्या का पारणा आनन्द गाथापति को दासी द्वारा फेंके जाने वाले अन्न से किया । सानुलट्ठिय से भगवान ने विहार दृढभूमि की तरफ किया और पेढाल गांव के पास स्थित पेढाल उद्यान में पोलास नामक चैत्य में जाकर अष्टम तप करके रातभर एक अचित्त पुद्गल पर अनिमेष दृष्टि से ध्यान किया । भगवान के इस ध्यान की सौधर्मेन्द्र ने प्रशंसा कि संगम नाम के देव को वह प्रशंसा

अच्छी नहीं लगी। वह तत्काल भगवान के पास आया और उन्हे ध्यान से विचलित करने के लिए उसने भगवान को बीस प्रकार के उपसर्ग किये। किन्तु वह भगवान को ध्यान से विचलित नहीं कर सका। इसके बाद भी वह भगवान को छ माह तक निरन्तर कष्ट देता रहा किन्तु वह भगवान को किसी भी रूप में विचलित नहीं कर सका। अन्त में हार कर भगवान के पास आया और बोला—"इन्द्र ने आपकी जो स्तुति की थी वह पूर्णतः सत्य थी। आप सत्य प्रतिज्ञ है और में अपनी प्रतिज्ञा से भ्रष्ट हुआ हूँ। मुझे क्षमा करिये, में भविष्य में ऐसा अपराध कभी नही करूँगा। भगवान समतारस के सागर थे। उन्होंने संगम को क्षमा प्रदान कर दी। पूरे छ महिने तक संगम देव के द्वारा दिये गये विविध कष्टो को सहने के बाद भगवान ने वज्रगाम में एक वत्सपालक वृद्धा के हाथ से खीर से पारण किया।

व्रजगाम से भगवान ने श्रावस्ती की ओर विहार किया। अलभिया सेयविया आदि अनेक नगरों में होते हुए आप श्रावस्ती पहूँचे और नगर के उद्यान में ध्यानारूढ हो गये।

श्रवस्ती से कौशाम्बी, वाराणसी राजगृह, मिथिला आदि अनेक नगरों में होते हुए आप वैसाली पधारे। और ग्यारहवां चातुर्मास आपने वही व्यतीत किया। वैशाली में एक जिनदत्त नामका श्रेष्ठीं रहता था। उसकी ऋद्धि-समृद्धि क्षीण हो जाने से जगत में वह जीर्ण श्रेष्ठी के नाम से विख्यात था। जिनदत्त सरल एवं परम श्रद्धालु था। वह प्रतिदिन भगवान को वन्दन करने के लिये जाता था और आहार पानी के लिए प्रार्थना करता था। लेकिन भगवान नगर में कभी जाते ही न थे। सेठ ने सोचा भगवान के मासखमण जब पूरा होगा, तब आयेंगे। महीना पूरा हुआ तब सेठ ने विशेष आग्रह पूर्वक भगवान से प्रार्थना की लेकिन भगवान न आये। तब उसने द्वि मासिक मास खमण की कल्पना की। जब दो महीना के अन्त में भी प्रार्थना करने पर भगवान नहीं आये तो उसने त्रिमासिक मास खमन की कल्पना की। जब तीन महीने पूरे हुए तो उसने फिर भगवान से प्रार्थना की और इस बार भी जब न आये तो उसने सोच लिया कि भगवान ने चातुर्मासिक तप किया है। अब वह चातुर्मासिक तप की समाप्ति की प्रतीक्षा करने लगा। उसने सोचा की चातुर्मासिक तप का पारणा कराऊँगा और अपने जीवन को सफल करूंगा।

चातुर्मास समाप्त हुआ। जीर्ण सेठ ने प्रभु को भक्ति पूर्वक वन्दनाकर प्रार्थना की—भगवन्! आज मेरे घर पारणा करने के लिये पधारिए। वह घर आया और भगवान के आने की प्रतीक्षा करने लगा समय पर प्रभु आहार के लिये निकले और घूमते हुए पूरण सेठ के घर में प्रवेश किया। भगवान को देखकर पूरण सेठ ने दासी से संकेत किया जो कुछ तैयार हो इन्हें दे दो। दासी ने उबाले हुए उड़द के बाकुले भगवान के हाथों में रख दिये। भगवान ने उसे निर्दोष आहार मानकर ग्रहण किया। देवताओं ने उसके घर पंच दिव्य प्रकट किये। लोग उसकी प्रशंसा करने लगे। वह मिथ्याभिमानी पूरण कहने लगा कि मैंने खुद प्रभु को परमान्न से पारणा कराया है।

जीर्ण सेठ प्रभु को आहार देने की भावना से बहुत देर तक राह देखता रहा। उसके अन्तकरण में शुभ कामनाएं उठ रही थी। उसी समय उसने आकाश में होता हुआ देव दुंदुभि नाद सुना अहोदान अहोदान! की ध्वनि से उसकी भावना भंग हुई। उसे मालूम हुआ कि प्रभु ने पूरण सेठ के घर पारणा कर लियां है तो वह बहुत निराश हो गया। अपने भाग्य को कोशने लगा। पूरण सेठ के दान की प्रशंसा करने लगा। शुभ भावना के कारण जीरण सेठ ने अच्युत देवलोक का आयु बांधा।

वैशाली से विहार कर प्रभु अनेक स्थानों में भ्रमण करते हुए सुसुभारपुर में आये और अष्टम तप सहित एक रात्रि की प्रतिमा ग्रहण कर अशोक वृक्ष के नीचे ध्यान करने लगें। यहां चमरेन्द्र ने

शक्रेन्द्र के वज्र से भयमीत होकर भगवान की शरण ग्रहण की

दूसरे दिन भगवान भोगपुर पधारे । यहाँ महेन्द्र नामक क्षत्रिय भगवान को लकड़ी लेकर मारने आया किन्तु सनत्कुमार देवेन्द्र ने उसे समझा कर रोक दिया ।

भोगपुर से विहार कर प्रभु नंदी गाँव आये और मेंढक गांव होकर कोशाम्बी नगरी में आये पौषवदि प्रतिपदा का दिन था । भगवान ने उस दिन तेरह बोल का भीषण अभिग्रह धारण किया । (१) राज कन्या हो, (२) अविवाहित हो, (३) सदाचारिणी हो (४) निरपराध होने पर भी जिसके पावों में बेडियाँ तथा हाथों में हथकडियां पड़ी हुई हो, (५) सिर मुण्डा हुआ हो, (६) शरीर पर काछ लगी हुई हो; (७) तीन दिन का उपवास किया हो, (८) पारणे के लिये उडद के बाकले (९) सूप में लिये हुए हो, (१०) न घर में हो न बाहर हो, (११) एक पैर देहली के भीतर तथा दूसरा बाहर हो । (१२) दान देने की भावना से अतिथि की प्रतीक्षा कर रही हो, (१३) प्रसन्न मुख हो और आंखों में आंसू भी हो, इन तेरह बातों से युक्त कोई स्त्री मुझे आहार दे तो मैं उसी से आहार ग्रहण करूँगा । अभिग्रह को पूरा करने के उद्देश्य से भगवान प्रतिदिन कोशाम्बी में आहार के लिए जाते और अभिग्रह के पूरा न होने पर पुनः लौट आते । इस प्रकार भगवान को भ्रमण करते चार मास बीत गये । परन्तु उन्हें आहार का लाभ न हुआ । वे नंदा के घर गये । नन्दा कोशाम्बी के महामात्य सुगुप्त की पत्नी थी । नंदा बडे आदर के साथ आहार लेकर उपस्थित हुई । परन्तु भगवान अपना अभिग्रह पूरा न होने से वे वापस लौट गये । नंदा को बहुत दुःख हुआ । यह बात उसने महामात्य से कहा इतने दिन हो गये, हमारे नगरी में भगवान को भिक्षा नहीं मिल रही हैं । अवश्य ही इसमें कोई कारण होना चाहिए । कोई ऐसा उपाय कीजिए जिससे भगवान को आहार मिले । उस समय नंदा के घर मृगावती रानी की प्रतिहारी आई हुई थी । उसने जो कुछ सुना अपनी रानी से कहा । रानी ने राजा से कहा कि ऐसे राज्य से अपने को क्या लाभ जो भगवान को आहार तक नहीं मिलता ? राजा ने मंत्री को बुलाकर इस बात की चर्चा की । राजा ने अपने धर्मगुरु से सब भिक्षुओ के आचार व्यवहार पूछकर उनका अपनी प्रजा में प्रचार किया परन्तु फिर भी भगवान को आहार प्राप्त नहीं हुआ ।

भगवान के अभिग्रह को पांच महिने हो चुके थें और छठा महिना पूरा होने में सिर्फ पाँच दिन शेष रह गये थे । भगवान नियमानुसार इस दिन भी कोशम्बी में भिक्षाचर्या के लिये निकले और फिरते हुए सेठ धनावह के घर पहुंचे । यहां आपका अभिग्रह पूर्ण हुआ । और आपने चन्दना-राजकुमारी के हाथों से भिक्षा ग्रहण की । उस समय आकाश में देव दुंदुभि बज उठी । पांच दिव्य प्रकट हुए । और चन्दना का रूप पहले से भी अधिक चमक उठा । और सर्वत्र उसके शील की ख्याति फैल गयी । राजा और प्रजा में प्रसन्नता का वातावरण फैल गया ।

कोशांबी से सुमंगल सुच्छेता पालक आदि गांवों में होते हुए भगवान श्रीमहावीर चम्पानगरी पधारे और चातुर्मासिक तप कर वहीं स्वादित्त ब्राह्मण की यज्ञशाला में वर्षावास किया । यहाँ पर भगवान के तप साधना से आकृष्ट होकर पूर्णभद्र और माणिभद्र नामक दो यक्ष रात्रि के समय आकर आपकी भक्ति करने लगे । स्वातिदत्त को जब इस बात का पता चला तो वह भी भगवान के पास आया और बोला भगवन ! आत्मा क्या वस्तु है ? सूक्ष्म का क्या अर्थ है और प्रत्याख्यान किसे कहते हैं ? भगवान ने उसका समाधान कर दिया ।

चातुर्मास की समाप्ति के बाद भगवान जंभिय गाँव की तरफ पधारे । जंभियगांव में कुछ समय ठहर कर भगवान वहां से मिंढिय गांव होते हुए छम्माणि गये और गांव के बाहर कायोत्सर्ग में लीन हो गये ।

संध्या के समय एक ग्वाला (जिसके कानों में भगवान ने अपने वासुदेव के पूर्व भव में सीसा तपाकर डाला था वही जीव) भगवान के पास अपने बैलों को छोड़ कर गांव में चला गया और जब वह वापस लौटा तो उसे बैल नहीं मिले। उसने भगवान से पूछा है देवार्य ! मेरे बैल कहाँ है ? भगवान मौन रहे। इस पर ग्वाले ने क्रुद्ध होकर भगवान के दोनों कानों में काष्ठ के कीले ठोक दिये।

छम्माणि गांवसे भगवान मध्यमा पधारे। और आहार के लिये फिरते हुए सिद्धार्थ वणिक के घर गये। सिद्धार्थ अपने मित्र खरक से बाते कर रहा था। भगवान को देखकर उठा और आदर पूर्वक वन्दन किया। उस समय भगवान को देखकर खरक बोला भगवान का शरीर सर्वलक्षण सम्पन्न होते हुए भी सशल्य है।

सिद्धार्थ ने कहा मित्र भगवान के शरीर में कहा शल्य हैं ? जरा देखो तो सही ?

देखकर खरक ने कहा यह देखो भगवान के कान में किसी ने काष्ठ की कील ठोक दी है। सिद्धार्थ ने कहा वैद्यराज शलाकाये निकाल डालो। महातपस्वी को आरोग्य पहुँचाने से हमें महापुण्य प्राप्त होगा।

वैद्य और वणिक शलाका निकालने के लिये तैयार हुए पर भगवान ने स्वीकृति नहीं दी और आप वहां से चल दिये। भगवान के स्थान का पता लगा कर सिद्धार्थ और खरक वैद्य औषध तथा आदमियों को साथ लेकर उद्यान में गये और भगवान को तैल द्रोणी पात्र विशेष में बिठाकर तैल की मालिश करवाई। फिर अनेक मनुष्यों से पकडवाकर कानों में से काष्ठकील खीच निकाली। शलाका निकालते समय भगवान के मुख से एक भीषण चीख निकल पडी। भगवान महावीर का यह अन्तीम भीषण परिषह था। परिषहों का प्रारंभ भी ग्वाले से हुआ और अन्त भी ग्वाले से ही हुआ।

वहाँ से विहार कर प्रभु जृंभग नामक गाँव के पास आये और वहां ऋजु पालिका नदी के उत्तर तट पर श्यामाक नामक कृषक के खेत में एक जीर्ण चैत्य के पास शालवृक्ष के नीचे छठ तप करके रहे और उत्कट आसन से आतापना लेने लगे। वहाँ विजय मुहूर्त शुक्ल ध्यान में लीन भगवान क्षपक श्रेणी में आरूढ हुए और उनके चार घनघाति कर्मो का नाश हो गया।

वि. सं. ५०१ (ई. सं. ५०८) पूर्व वैशाख सुदि दसमी के दिन हस्तोत्तरा नक्षत्र में चतुर्थ प्रहर में भगवान को केवल ज्ञान और केवल दर्शन उत्पन्न हो गया। अब भगवान सर्वज्ञ सर्वदर्शी हुए। सम्पूर्ण लोकालोकन्तर्गत भूत भविष्यत् सूक्ष्म व्यवहित मूतामूर्त समस्त पदार्थो को आप हस्तामलक वत देखने लगे।

भगवान ने अपने छद्मस्थ काल में निम्न तपश्चर्याएँ की—

१—षाण्मासिक एक २—पांच दिन कम षण्मासिक एक ३—चातुर्मासिक नौ ४—त्रिमासिक दो ५—सार्ध द्विमासिक दो ६—द्विमासिक छ ७—सार्धमासिक दो ८—मासिक बारह ९—पाक्षिक बहत्तर १० सोलह उपवास एक ११—अष्टमभक्त बारह १२—षष्ठ भक्त २२९ उक्त तपश्चर्या में भोजन दिन ३४९ होते हैं। साढे बारह वर्ष के दीर्घ काल में केवल ३४९ दिन ही आहार किया और शेष दिन निर्जल तप में बीताये।

केवलज्ञान की प्राप्ति के बाद भगवान एक मुहूर्त तक वहीं ठहरे। इन्द्रादि देवो ने आकर भगवान का केवल ज्ञान उत्सव मनाया। देवों ने समवशरण की रचना की। समवशरण में बैठकर भगवान ने देशना दी। इस प्रथम समवशरण में केवल देवता ही उपस्थित थे अतः विरति रूप संयम का लाभ किसी भी प्राणी को नहीं हुआ। यह आश्चर्य जनक घटना जैना गमो में 'अच्छेरा' के नाम से प्रसिद्ध है।

दश आश्चर्य—जो बात अभूतपूर्व (पहले कभी नहीं हुई) हो और लोक में जो विस्मय एवं आश्चर्य की दृष्टि से देखी जाती हो ऐसी बात को अच्छेरा (आश्चर्य) कहते हैं। इस अवसर्पिणी काल में दस बातें आश्चर्य जनक हुई है। वे इस प्रकार है १—उपसर्ग २—गर्भहरण ३—स्त्री तीर्थंकर ४—अभव्या

परिषद् ५-कृष्ण का अपरकंका गमन (६) चन्द्र सूर्य अवतरण (७) हरिवंश कुलोत्पत्ति (८) चमरोत्पात (९) अष्टशत सिद्धा (१०) असंयत पूजा ।

प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव स्वामी के समय में एक यानी एक समय में उत्कृष्ट अवगाहना वाले १०८ व्यक्तियों का सिद्ध होना । दसवेंतीर्थंकर श्री शीतलनाथ स्वामी के समय में एक अर्थात् हरिवंशोंत्पत्ति, उन्नीसवें तीर्थंकर श्री मल्लीनाथ स्वामी के समय एक यानी स्त्री तीर्थंकर । बाईसवें तीर्थंकर श्री नेमिनाथ भगवान के समय में एक अर्थात् कृष्णवासुदेवका अपरकंका गमन । चोवीसवें तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी के समय में पांच अथात् १. उपसर्ग, २. गर्भहरण ३. चमरोत्पात ४. अभव्या परिपद् ५. चन्द्रसूर्यावतरण नौवें तीर्थंकर भगवान सुविधिनाथ के समय तीर्थ के उच्छेद से होने वाली असंयती की पूजा रूप एक अच्छेरा हुआ । इस प्रकार असंयतों की पूजा भगवान सुविधिनाथ के समय प्रारंभ हुई थी, इसलिए यह अच्छेरा उन्हीं के समय में माना जाता है । वास्तव में नवें तीर्थंकर से लेकर सोलहवें भगवान शांतिनाथ तक बीच के सात अंतरों में तीर्थ का विच्छेद और असंयती की पूजा हुई थी । भगवान ऋषभदेव के समय मरीचिं कपिलं आदि असंयती की पूजा तीर्थ के रहते हुई थी इसीलिए उसे अच्छोरा में नहीं किया गया । उपरोक्त दश बातें इस अवसर्पिणी में अनन्त काल में हुई थी । अतः ये दस ही इस हुण्डा अवसर्पिणी में अच्छेरे माने जाते हैं ।

उस समय मध्यमा पावापुरी में सोमिल नामक ब्राह्मण बडा भारी यज्ञ करा रहा था । इस यज्ञ में भाग लेने के लिए दूर दूर से विद्वान ब्राह्मण आयें । उनमें ग्यारह विद्वान—१ इन्द्रभूति, अग्निभूति वायुभूति, व्यक्तभूति सुधर्माजी, मंडिकपुत्र, मौर्यपुत्र, अकम्पित, अचलभ्राता, मेतार्य एवं प्रभास ये विशेष प्रतिष्ठित थे । इनके साथ क्रमशः ५००, ५००, ५००, ५००, ५००; ३५०, ३५०, ३००, ३००, ३००, एवं ३००, छात्र थे । ये सभी कुलीन ब्राह्मण सोमिल ब्राह्मण के आमंत्रण से : विशाल छात्र परिवार के साथ मध्यमा आये इन ग्यारह विद्वानों को एक एक विषय में संदेह था परन्तु वे कभी किसी को पूछते नहीं थे क्योंकि उनकी विद्वत्ता की प्रसिद्धि उन्हें ऐसा करने से रोकती थी ।

बोधीप्राप्त भगवान ने देखा कि मध्यमा नगरी का यह प्रसंग अपूर्व लाभ का कारण होगा । यज्ञ में आये हुए विद्वान ब्राह्मण प्रतिबोध पायेंगे । और धर्मतीर्थ के आधार स्तंभ बनेंगे । यह सोच कर भगवान ने वहां से उग्र विहार कर बारह योजन चलकर मध्यमा नगरी के महासेन उद्यान में उन्होंने वास किया । देवों ने समवशरण की रचना की बत्तीस धनुष उँचे चैत्य वृक्ष के नीचे बैठकर भगवान ने देशना आरंभ कर दी । भगवान की देशना सुनने के लिए हजारों स्त्री पुरुष एवं देवता गण आने लगे।

भगवान महावीर के समवशरण में इतने बडे जन समूह को एवं देवों को जाते हुए देख इन्द्रभूति आदि ग्यारह ब्राह्मण भी क्रमशः अपने अपने छात्र समूह के साथ समवशरण में पहुँचे । इन्होंने भगवान से शास्त्रार्थ किया । अपनी अपनी शंकाओं का समाधान पाकर ये सभी अपने अपने छात्र समूह के साथ दीक्षित हो गये । इस प्रकार मध्यमा के समवशरण में एक ही दिन में ४४०० ब्राह्मणों ने निग्रन्थ प्रवचन को स्वीकार कर देवाधिदेव महावीर के चरणों में नत मस्तक हो श्रामण्य धर्म को स्वीकार किया ।

इन्द्रभूति आदि प्रमुख ग्यारह विद्वानों ने त्रिपदी पूर्वक द्वादशांगी की रचना की। अतः उन्हें गणधर पद से सुशोभित किये गये । इसके अतिरिक्त अनेक स्त्री पुरुषों ने साधु धर्म और श्रावक धर्म स्वीकार किया । इस प्रकार भगवान महावीर ने वैशाखशुक्ला दसमी के दिन चतुर्विध संघ की स्थापना की ।

इसके बाद भगवान महावीर ने विशाल शिष्य परिवार के साथ राजगृह की ओर विहार किया । क्रमशः विहार करते हुए भगवान राजगृह के गुणशील उद्यान में पधारे । यहाँ महाराज श्रेणिक ने आप

का उपदेश श्रवण किया और आपके उपदेश से प्रभावित हो राजकुमार मेघ कुमार, नन्दिपेण आदि अनेक स्त्री पुरुषोंने आप के पास प्रव्रज्या ग्रहण की। भगवान ने अपना १३वां चातुर्मास यहीं व्यतीत किया

वर्षावास समाप्त होने के बाद, अपने परिवार के साथ ग्रामानुग्राम में विहार करते हुए भगवान महावीर ने विदेह की ओर प्रस्थान किया और ब्राह्मणकुण्डग्राम पहुँचे। इसके निकट ही बहुशाल उद्यान था। भगवान अपनी परिषदा के साथ इसी बहुशाल उद्यान में ठहरे।

भगवान महावीर के आगमन का समाचार नगरनिवासियों को मिला तो वे बडी संख्या में भगवान का उपदेश सुनने उद्यान में गए। भगवान ने उन सव को उपदेश दिया।

ऋषभदत्त तथा देवानन्दा की दीक्षा—

ब्राह्मणकुण्ड ग्राम के मुखिया का नाम ऋषभदत्त था। यह कोडाल गोत्रीय प्रतिष्ठित ब्राह्मण था। इसकी पत्नी देवानन्दा जालंधर गोत्रीय ब्राह्मणी थी। ऋषभदत्त और देवानन्दा ब्राह्मण होते हुए भी जीव अजीव पुण्य पाप आदि तत्त्वों के ज्ञाता श्रमणोपासक थे। बहुसाल में भगवान का आवागमन सुनकर ऋषभदत्त वडा प्रसन्न हुआ। वह देवानन्दा को साथ में लेकर, धार्मिक रथ पर आरूढ हो बहुसाल उद्यान में पहुँचा। विधि पूर्वक सभा में जाकर वन्दन नमस्कार कर भगवान का उपदेश सुनने लगा।

देवानन्दा भगवान को अनिमेष दृष्टि से देखने लगी। उसका पुत्र स्नेह उमड पडा। स्तनों में से दूध की धारा बह निकली। उसकी कंचुकी भीग गई। उसका सारा शरीर पुलकित हो उठा।

देवानन्दा के इन शारीरिक भावों को देखकर गौतम स्वामी ने भगवान से प्रश्न किया भगवन्! आप के दर्शन से देवानन्दा का शरीर पुलकित क्यों हो गया? इनके नेत्रों में इस प्रकार की प्रफुल्लता कैसे आ गई? और इनके स्तनों से दुग्धस्राव क्यों होने लगा?

भगवान ने उत्तर दिया गौतम! देवानन्दा मेरी माता हैं, और मै इनका पुत्र हूँ। देवानन्दा के शरीर में जो भाव प्रकट हुए उनका कारण पुत्र स्नेह है।

उसके बाद भगवान ने महती सभा के बीच अपने माता देवानन्दा को एवं पिता ऋषभदत्त को उपदेश दिया। भगवान का उपदेश सुनकर दोनों को वैराग्य उत्पन्न हो गया। परिशद् के चले जाने पर ऋषभदत्त उठा और भगवान को वन्दन कर बोला भगवन्! आपका कथन सत्य है। मैं आपके पास प्रव्रज्या लेना चाहता हूं। आप मुझे स्वीकार कीजिए। उसके वाद ऋषभदत्त ने गृहस्थ वेश का परित्यागकर मुनि वेश पहन लिया और भगवान के समीप सर्व विरति रूप प्रव्रज्या ग्रहण कर ली। माता देवानन्दा ने भी अपने पति का अनुसरण किया। उसने आर्या चन्दना के पास दीक्षा ग्रहण कर ली

भगवान के पास प्रव्रज्या लेने के वाद ऋषभदत्त अनगार ने स्थाविरों के पास सामायिकादि एकादश अंगों का अध्ययन किया और कठोर तप कर केवल ज्ञान प्राप्त किया। देवानन्दा को भी केवल ज्ञान उत्पन्न हो गया। इन दोनों ने अन्तिम समय में एक मास का अनशन कर निर्वाण पद प्राप्त किया।

भगवान महावीर की पुत्री सुदर्शना ने भी जों जमाली से व्याही थी इसी वर्ष एक हजार स्त्रियों के साथ आर्या चन्दना के पास दीक्षा ग्रहण की। भगवान ने अपना १४ वाँ चातुर्मास वैशाली महानगर में व्यतीत किया।

१५वाँ चातुर्मास

चातुर्मास समाप्त होने पर भगवान ने वैशाली से वत्सभूमि की ओर विहार किया। मार्ग में अनेक ग्राम नगरों को पावन करते हुए वे कोशाम्बी पहुंचे और नगर के बाहर चन्द्रावतरण उद्यान में ठहरे।

कोशाम्बी के तत्कालीन राजा का नाम उदयन था। उदयन वत्सदेश के प्रसिद्ध राजा सहस्रानीक

का पौत्र तथा राजा शतानीक का पुत्र और वैशाली के सम्राट चेटक का दौहिना होता था। वह अभी नाबालिक था। अत: राज्य का प्रबन्ध उसकी माता महारानी मृगावती देवी प्रधानों की सलाह से करती थी। यहाँ जयन्ती नाम की प्रसिद्ध श्राविका रहती थी। वह भगवान महावीर का आगमन सुनकर महाराज उदयन, श्राविका जयन्ती, महारानी मृगावती, तथा नगरी के अनेक नागरिकों ने भगवान के दर्शन किये और उपदेश श्रवण किया। जयन्ती श्राविका ने भगवान से अनेक प्रश्न किये और उनका समाधान पाकर उसने आर्य चन्दना के समीप दीक्षा ग्रहण की। भगवान ने वहाँ से श्रमण गण के साथ श्रावस्ती की ओर विहार किया। श्रावस्ती पहुंचकर आप कोष्ठक उद्यान में ठहरे। यहां अनगार सुमनोभद्र और सुप्रतिष्ठित आदि की दीक्षाएँ हुईं।

कोशल प्रदेश से विहार करते हुए श्रमण भगवान श्रीमहावीर विदेह भूमि में पधारे। यहाँ वाणिज्य ग्राम निवासी गाथापति आनन्द ने एवं उनकी पत्नी शिवानन्दा ने श्रावक के बारह व्रत ग्रहण किये। इस वर्ष का चातुर्मास आपने वाणिज्यग्राम में व्यतीत किया।

१६ वां चातुर्मास

वाणिज्य ग्राम का चातुर्मास पूर्ण कर भगवान ने मुनिवरों के साथ मगध भूमि में प्रवेश किया। अनेक ग्राम नगरों को पावन करते हुए आप राजगृह के गुणशील उद्यान में पधारे। यहाँ के सम्राट राजा श्रेणिक सदल बल से भगवान के दर्शन किये। राजगृह के प्रसिद्ध धनपति शालिभद्र ने तथा धन्य कुमार आदि ने भगवान से प्रवज्या ग्रहण की।

इस वर्ष का चातुर्मास भगवान राजगृह में बिताया।

१७ वां चातुर्मास—

राजगृह से विहार कर भगवान चंपा पधारे। चंपा के राजा दत्त और उसकी रानी रक्तवती के पुत्र महचंद कुमार ने आपके उपदेश से दीक्षा ग्रहण की। चंपा से आप विकट मार्ग को पार करते हुए सिन्धु सोवीर की राजधानी वीतभय पधारे। वीतभय का राजा उदायन श्रमणोपासक था। भगवान श्रीमहावीर के दर्शन कर वह बड़ा प्रसन्न हुआ। कुछ काल वहाँ विराजकर भगवान वाणिज्य ग्राम पधारे। और आपने मुनिवरों के साथ यहीं चातुर्मास पूरा किया। चातुर्मास की समाप्ति के बाद आपने काशी देश की राजधानी बाणारसी की ओर विहार कर दिया। अनेक स्थानों पर निर्ग्रन्थ प्रवचन का प्रचार करते हुए आप बाणारसी पहुँचे और वहाँ कोष्ठक नामक उद्यान में ठहरे। यहाँ के करोडपति गृहस्थ चुलनीपिता और उसकी स्त्री श्यामा तथा सुरादेव और उसकी स्त्री धन्या ने भगवान से श्रावक व्रत ग्रहण किये। और निर्ग्रन्थ प्रवचन के आधार स्तंभ बने।

बाणारसी से आपने पुन: राजगृह की ओर विहार किया। मार्ग में आलंभिया नगरी आई। भगवान मुनिवरो के साथ आलंभिया के शंखवन उद्यान में ठहरे। यहाँ के हजारों स्त्री पुरुषों ने भगवान का प्रवचन सुना। आलंभिया के प्रसिद्ध धनिक गृहपति चुल्लशतक और उसकी स्त्री बहुला ने श्रावक धर्म स्वीकार किया। यहाँ पोग्गल नाम का एक विभंग ज्ञानी परिव्राजक रहता था उसने भगवान का प्रवचन सुनकर आर्हती दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा लेकर ग्यारह अंग पढे और कठोर तप करके अन्त में निर्वाण को प्राप्त हुआ।

आलंभिया से भगवान राजगृह पधारे ओर गुणशील उद्यान नें ठहरे। यहां के प्रसिद्ध धनिक मंकाती किंकिम अर्जुन और काश्यप ने निर्ग्रन्थ प्रवचन को सुनकर आप से दीक्षा ग्रहण की।

भगवान का यह चातुर्मास राजगृह में व्यतीत हुआ।

१९वां चातुर्मास—

चातुर्मास के बाद भी भगवान राजगृह में ही धर्म प्रचारार्थ ठहरे। इस सतत प्रचार का आशातीत लाभ हुआ। राजगृह के अनेक प्रतिष्ठित नागरिकोंने भगवान से श्रमणधर्म स्वीकार किया जैसे जालिकु-

मार, मयाली उवयालि, पुरूषपेन वारिषेग, दीर्घदन्त, लष्टदंत गूढदंत, शुद्धदंत, हल्लः द्रुम, द्रुमसेन महा-द्रुमसेन, सिंह, सिंहसेन, महासिंहसेन, पूर्णसेन इन श्रेणिक के तेइस पुत्रों ने और नंदा नन्दमती, नन्दोत्तरा नन्दसेणिया महया सुमरुता, महामरूता, मरुदेवी भद्रा सुभद्रा सुजाता, सुमणा और भूतदिन्ना आदि श्रेणिक की १३ रानियों ने भगवान से प्रव्रज्या ग्रहण की । उस समय भगवान श्रीमहावीर प्रभु के दर्शन के लिये मुनि आर्द्रक गुणशील उद्यान में जा रहे थे । मार्ग में उन्हें गोशालक बौद्ध भिक्षु हस्तितापस आदि अनेक अन्य तीर्थिक मिले । आर्द्रक ने उन्हें वाद में पराजित किया । वाद में पराजित कुछ हस्तितापसो स्वप्रति बोधित पांच सौ चोरों के साथ आर्द्रक मुनि भगवान से आ मिला । भगवान उन सब को प्रव्रजित किया । इस वर्ष भी भगवान ने वर्षावास राजगृह में ही बिताया ।

२०वां चातुर्मास--

वर्षाकाल पूरा होने पर भगवान ने कोशांबी की ओर विहार किया । मार्ग में आलंभिया नगरी पड़तीं थी । भगवान कुछ काल तक आलंभिया में ही विराजे । यहां ऋषिभद्र प्रमुख श्रमणोपासक रहते थे । उन्होंने भगवान से प्रश्न पूछे और योग्य समाधान पाकर बडे प्रसन्न हुए । आलंभिया से विहार कर भगवान कोशांबी पधारे । उस समय चण्डप्रद्योतन जो उज्जैनी का राजा था । उसने कोशांबी को घेर लिया था । कोशांबी पर शासन महारानी मृगावती करती थी । उनका पुत्र उदायन नाबालिक था । चण्डप्रद्योतन मृगावती को अपनी रानी बनाना चाहता था ।

भगवान महावीर के आगमन से मृगावतीं को बड़ी प्रसन्नता हुई । वह भगवान श्री महावीर के समवशरण में पहुंची । उस समय चण्डप्रद्योतन भी भगवान की सेवा में उपस्थित था । महारानी मृगावती ने आत्म कल्याण का सुन्दर अवसर जानकर सभा के बीच खडी होकर बोली भगवन ! मैं चण्डप्रद्योतन की आज्ञा लेकर आपके पास दीक्षा लेना चाहती हूँ । इसके बाद अपने पुत्र उदयन को चण्डप्रद्योतन के संरक्षण में छोडते हुए उससे दीक्षा की आज्ञा मांगी । यद्यपि चण्डप्रद्योतन की इच्छा मृगावती को स्वीकृति देने की नहीं थी पर उस महती सभा में लज्जावस इनकार नही कर सका । उस समय अंगारवती आदि चण्डप्रद्योतन की आठ रानियो ने भी दीक्षा लेने की आज्ञा मांगी । चण्डप्रद्योतन ने उन्हें भी आज्ञा दे दी । भगवान महावीर ने मृगावती अंगारवती आदि रानियों को दीक्षा देकर उन्हें आर्या चन्दना को सौप दी । भगवान कोशांबी से विहार कर विदेह की राजधानो वैशाली में पदार्पण किया । आपने यहां चातुर्मास व्यतीत किया ।

२१ वाँ वर्षावास---

वर्षावास पूरा होने पर भगवान ने वैशाली से उत्तर विदेह की ओर विहार किया और मिथिला होते हुए काकन्दी पधारे । काकंदी में धन्य कुमार सुनक्षत्र, कुमार आदि राज कुमारों को दीक्षा दी । काकन्दी से भगवान ने पश्चिम की ओर विहार किया और श्रावस्ती होते हुए काम्पिल्यपूर पधारे काम्पिल्यपूर निवासी कुण्डकोलिक गृहपति को श्रमणोपासक बनाकर अहिच्छत्रा नगरी होंते हुए गजपुर पहुँचे यहाँ अनेक व्यक्तियों को प्रतिबोधित कर आप पोलासपुर पधारे । पोलासपुर के अतो धनाढ्यच कुम्भकार सग्डालपुत्र जो गोशालक मतानुयाई था उसकी शाला में बीराजे ।

भगवान श्री महावीर का उपदेश सुनकर सद्दाल पुत्र के आजीविक संप्रदाय का परित्याग का समाचार मिला तो वह अपने संघ के साथ सग्डालपुत्र के पास आया और उसे पुनः आजीविक बनने के लिये समझाने लगा । गोशालक की बातों का सग्डालपुत्र पर जरा भी असर नहीं पडा । गोशालक निराश होकर चला गया । भगवान ने इस वर्ष का चातुर्मास वाणिज्य ग्राम में व्यतीत किया ।

२२ वाँ चातुर्मास —

वर्षाकाल बीतने पर भगवान राजगृह पधारे यहाँ महाशतक नाम का गाथा पति ने श्रावक धर्म

स्वीकार किया साथ ही अनेक पार्श्वापत्य श्रमणोंपासको ने भी आपके पास प्रव्रज्या ग्रहण की। इस वर्ष भगवान ने वर्षावास राजगृह में ही किया।

२३ वाँ वर्षावास—

वर्षाकाल पूरा होनेपर भगवान विहार करते हुए क्रमशः कृतंगला नगरी पधारे और छत्रपलास चैत्य में विराजे। यहाँ श्रावस्ती के विद्वान परिव्राजक कात्यायन गोत्री स्कन्धक, भगवान के पास आया और अपनी शंकाओं का समाधान पाकर भगवान के पास प्रव्रजित होगया। भगवान श्रावस्ती से विदेह भूमि की तरफ पधारे और वाणिज्य ग्राम में जाकर वर्षाकाल व्यतीत किया।

२४ वाँ चातुर्मास वर्ष—

वर्षाकाल पूरा होनेपर भगवान वाणिज्य ग्राम से ब्राह्मणकुण्ड के बहुसाल चैत्य में पधारे। यहाँ जमाली अपने पांचसौ साधुओं के साथ भगवान से अलग होगया और उसने अन्यत्र विहार कर दिया। ब्राह्मण कुण्ड ग्राम से भगवान कौशांबी पधारे, यहाँ सूर्य चन्द्रने पृथ्वी पर उत्तर कर भगवान के दर्शन किये। यहाँ से विहार कर काशी राष्ट्रमें से होकर भगवान राजगृह के गुणशील उद्यान में पधारे इस वर्ष में भगवान के शिष्य वेहास अभय आदि अनगारों ने विपुल पर्वत पर अनशनकर देवपद प्राप्त किया।

२५ वाँ वर्षावास—

भगवान ने इस वर्षका चातुर्मास राजगृह बीता कर चंपा की ओर विहार कर दिया। मगधपति श्रेणिक की मृत्यु के बाद कोणिक ने चम्पा को अपनी राजधानी बनाइ थी। इस कारण मगध का सर्व राजकुटुम्ब चम्पा में ही रहता था। भगवान निर्ग्रन्थ प्रवचन का प्रचार करते हुए चंपा पधारे और पूर्णभद्र उद्यान में ठहरे। भगवान के आगमन का समाचार सुनकर कोणिक बडे राजसी ठाट से भगवान के दर्शन के लिए गया। चंपा के नागरिक भी विशाल संख्या में भगवान के पास गये और भगवान की वाणी सुनी। कइयोंने सम्यक्त्व ग्रहण किया कइयोंने श्रावक व्रत लिये और कई मुनि बने। मुनिधर्म अंगीकार करने वालों में पद्म महापद्म, भद्र सुभद्र पद्मभद्र पद्मसेन, पद्मगुल्म, नलिनीगुल्म, आनन्द और नन्द मुख्य थे। ये सभी श्रेणिक के पौत्र थे। जिनपालित आदि धनपतियों ने भी श्रावक धर्म स्वीकार किया।

चम्पासे विहार कर प्रभु काकन्दी पधारे। यहाँ क्षेमक, धृतिधर आदि ने श्रमण धर्म स्वीकार किया। इसवर्ष का चातुर्मास आपने मिथिला में बिताया। चातुर्मास समाप्ति के बाद आपने अंग देश की ओर विहार किया।

इन दिनों विदेह की राजधानी वैशाली रणभूमि बनी हुई थी। एक ओर मगधपति कोणिक और उनके काल आदि सौतेले भाई अपनी अपनी सेना के साथ लड रहे थे, दुसरी ओर वैशाली पति चेटक राजा और काशी कोशल देश के अठारह गणराजा अपनी अपनी सेना के साथ कोणिक राजा का सामना कर रहे थे। इस युद्ध में कोणिक राजा विजयी हुआ। काल आदि दस कुमार चेटक राजा के हाथों मारे गये। भगवान पुनः चम्पा पधारे। अपने पुत्र के मृत्यु के समाचारों से काली आदि रानियों ने भगवान से प्रव्रज्या ग्रहण की।

कुछ समय तक चम्पा में बिराजकर भागवान पुनः मिथिला पधारे। आपने इस बर्ष का चातुर्मास मिथिला में ही विताया। चातुर्मास समाप्ति के बाद भगवान श्रावस्ती पधारे। यहाँ कोणिक के भाई वेहास (हल्ल) वेहल्ल जिनके निमित्त वैशाली में युद्ध हो रहा था किसी तरह भगवान के पास पहुँचे और दीक्षा लेकर भगवान के शिष्य बन गये। भगवान विचरते हुए श्रावस्ती पहुँचे और श्रावस्ती के ईशान कोण स्थित कोष्ठक उद्यान में ठहरे।

गोशालक प्रकरण—

उन दिनों मंखलिपुत्र गोशालक भी वहीं था। भगवान श्री महावीर से अलग होकर वह प्रायः श्रावस्ती के आस पास ही घूमता था। तेजो लेश्या की प्राप्ति और निमित्त शास्त्रों का अभ्यास गोशालक ने श्रावस्ती में ही किया था। श्रावस्ती में अयंपुल नामक गाथापति और हालाहला कुम्भारिण गोशालक कि परम भक्त थी। प्रायः गोशालक हलाहला कुम्भारिण की भाण्डशाला में ही ठहरता था।

गोशालक भगवान महावीर के छद्‌मस्थ काल में उनके साथ छ वर्षतक रहा था। भगवान महावीर से तेजो लेश्या प्राप्ति का उपाय पाकर वह उनसे अलग हो गया। हालाहला कुम्भारिण को भाण्डशाला में उसने तपश्चर्या कर तेजोलब्धि प्राप्त करली थी। कालान्तर में उसके पास शान, कलंद, कर्णिकार, अछिद्र, अग्निवेश्यायन और गोमायु पुत्र अर्जुन नामक छ दिशाचर (भगवान श्री पार्श्वनाथ की परंम्परा के पथ भ्रष्ट शिष्य) आये। उन दिशाचरों ने आठ प्रकार के निमित्त, नवम गीत मार्ग, तथा दशम नृत्य मार्ग का ज्ञान प्राप्त कर रखा था। उन्होंने गोशालक का शिष्यत्व अंगिकार किया। इन दिशा चरों से गोशालक ने निमित्त शास्त्र का अभ्यास किया जिससे वह सभी को लाभ—अलाभ, सुख दुःख जीवन मरण आदि के विषय में सत्य सत्य बताता था। अपने इस अष्टांग निमित्त ज्ञान के कारण उसने अपने को श्रावस्ती में जिन न होते हुए भी जिन, केवली न होते हुए भी केवली सर्वज्ञ न होते हुए भी सर्वज्ञ घोषित करना प्रारंभ कर दिया। वह कहा करता था—मैं जिन. केवली और सर्वज्ञ हूँ। उसकी इस घोषणा की श्रावस्ती में सर्वत्र चर्चा थी।

भगवान महावीर के प्रमुख शिष्य श्री इन्द्र भूति अनगार ने भिक्षार्थ घूमते समय यह जन प्रवाद सुना आज कल श्रावस्ती में दो तीर्थंकर विचर रहें हैं—एक श्रमण भगवान महावीर और दूसरे मंखलिपुत्र गोशालक। वे भगवान के पास आये और जनप्रवाद के सम्बन्ध में पूछा—भगवन ! आजकल श्रावस्ती में दो तीर्थंकर होने की चर्चा हो रही है, यह कैसे ? क्या गोशालक सचमुच तीर्थंकर सर्वज्ञ और सर्वदर्शी है ?

भगवान ने कहा—गौतम ! गोशालक के विषय में जो नगरी में बात हो रही है वह मिथ्या हैं। गोशालक जिन, केवली और सर्वज्ञ नहीं है। वह अपने विषय में जो घोषणा कर रहा है वह केवल मिथ्या है। वह जिन केवली, सर्वज्ञ आदि शब्दों का दुरुपयोग कर रहा है। गौतम ! यह शरवण ग्राम के बहुल ब्राह्मण को गोशाला में जन्म लेने से गोशालक और मंखलि नामक गांव के पुत्र होने से मंखलि पुत्र कहलाता है। यह आज से चौविस वर्ष पहले मेरा शिष्य होकर मेरे साथ रहता था। छ वर्ष तक मेरे साथ रहने के बाद यह मुझ से अलग हो गया। तदनन्तर इसने मेरे बताये गये उपाय से तेजोलब्धि और निमित्त शास्त्र के बल से यह अपने आप को सर्वज्ञ कहता फिरता है। वस्तुतः इसमें सर्वज्ञ होने की किंचित् भी योग्यता नहीं है।

भगवान महावीर ने यह सब बाते गौतम को सभा के बीच कही। सुनने वाले अपने अपने स्थानों की ओर चल दिये। भगवान महावीर ने गोशालक का जो विस्तृत परिचय दिया वह सारे नगर में फैल गया। सर्वत्र एक ही चर्चा होने लगी—"गोशोशालक जिन नहीं हैं परन्तु जिन प्रलापी है। श्रमण भगवान महावीर ऐसा कहते हैं। मंखलिपुत्र गोशालक ने भी अनेकों मनुष्शों से यह बात सुनी। वह कत्यन्त क्रोधित हुआ। क्रोध से जलता हुआ वह आतापना भूमि से हलाहल कुम्हारिण के भण्डशाला में आया और अपने आजीविक संघ के साथ अत्यन्त आमर्ष के साथ बैठा। और एतद् विषयक विचार करने लगा।

उस समय भगवान श्री महावीर के शिष्य आनन्द नाम के अनगार जो कि निरन्तर छठ छठ तप किया करते थे, आहार के लिये घूमते हुए हालाहला कुम्भकारायण के आगे होकर जा रहे थे। गोशालक

ने देखते ही उन्हें रोक कर बोला है देवानु प्रिय आनन्दा ? तेरे धर्माचार्य और धर्म गुरु श्रमण ज्ञात पुत्र ने उदार अवस्था प्राप्त की है। देव मनुष्यादि में उनकी कीर्ति तथा प्रशंसा हो रही है। पर यदि वे मेरे सम्बन्ध में कुछ भी कहेंगे तो अपने तप तेज से उन्हें उन लोभी वणिक की तरह जलाकर भस्म कर दूंगा। और हितैषी, वणिक की तरह केवल तुझे बचा दूंगा। तू अपने धर्माचार्य के पास जा और मेरी कही हुई बात उन्हें सुना दें ! गोशालक का क्रोध पूर्ण भाषण सुनकर आनन्द स्थवीर घबरा गया। वह जल्दी जल्दी महावीर के पास गया और गोशालक की बाते कह कर बोला—भगवन् गोशालक अपने तपस्तेज से किसी को जलाकर भस्म करने में समर्थ है !

भवगान ने कहा—आनन्द ! अपने तप तेज से मंखलीपुत्र गोशालक किसी को भी जलाने का सामर्थ्य रखता है किन्तु अनन्त शक्ति शाली अर्हन्त को जलाकर भस्म करने में वह समर्थ नहीं है। कारण जितना तपोबल गोशालक में है उससे भी अनन्त गुणा तपोबल निग्रन्थ अनगारों में है तो फिर अर्हत् के तपोबल के लिये कहना ही क्या ? किन्तु अनगार स्थविर एवं अर्हत् क्षमाशील होने से वे अपनी तपोलब्धि का उपयोग नहीं करते।

आनन्द ! गौतमादि स्थविरों को इस बात की सूचना कर देना कि गोशालक इधर आ रहा है। इस समय वह द्वेष और म्लेच्छा भाव से भरा हुआ है। इसलिये वह कुछ भी कहे, कुछ भी करे पर तुम्हें उसका प्रतिवाद नहीं करना चाहिये यहाँ तक की कोई भी श्रमण उसके साथ धार्मिक चर्चा तक न करे ! स्थविर आनन्द ने भगवान का सन्देश गौतमादि प्रमुख मुनियों को सुना दिया।

इधर ये बाते चल ही रही थी कि उधर गोशालक आजीवक संघ के साथ भगवान के समीप पहुंच गया और बोला—

हे आयुष्मान काश्यप। तुमने ठीक कहा है कि मंखलिपुत्र गोशालक मेरा शिष्य है। किन्तु तुम्हारा शिष्य मंखलिपुत्र कभी का मरकर देवलोक पहुंच गया है। मैं तुम्हारा शिष्य मंखलि पुत्र गोशालक नहीं हूं किन्तु गोशालक शरीर प्रविष्ट उदायी कुंडियायन नामक धर्म प्रवर्तक हूं। यह मेरा सातवाँ शरीरान्तर प्रवेश है। मैं गोशालक नहीं किन्तु गोशालक से भिन्न आत्मा हूँ।

भगवान महावीर ने कहा गोशालक तूं अपने आप को छिपाने का प्रयत्न न कर। यह आत्म गोपन तेरे लिये उचित नहीं। तू वही मंखलि पुत्र गोशालक ही है जो मेरा शिष्य हो कर रहा था।

भगवान के इस कथन से गोशालक अत्यन्त क्रुद्ध हुआ। और भगवान को तुच्छ शब्द से सम्बोधित करता हुआ बोला काश्यप अब तेरा विनाशकाल समीप आगया है। अब तूं शीघ्र ही भ्रष्ट होने की तैयारी में है।

गोशालक के ये अपमान जनक बचन सर्वानु भूति अनगार और सुनक्षत्र अनगार से सहा नहीं गया उन्होंने गोशालक को समझाने का प्रयत्न किया तो वह और भी क्रुध हुआ। उसने दोनों अनगारों के उपर तेजो लेश्या छोड दी। तेजोलेश्या कि प्रचण्ड ज्वाला से दोनों अनगारों का शरीर जलकर भस्म हो गया वे देवलोक गामी बने। दो मुनियों के भस्मसात् होने के बाद जब भगवान ने उसे पुनः समझाने का प्रयत्न किया तो इस के क्रोध की सीमा न रही। सात आठ कदम पीछे हट कर उसने भगवान पर तेजो लेश्या छोड दी तेजो लेश्या भगवान को चक्कर काटती हुई उपर आकाश में उछली और वापस गोशालक के शरीर में प्रविष्ट हुई। पुनः प्रविष्ट हुई तेजोलेश्या के कारण गोशालक का शरीर जलने लगा। सात दिन तक दाह के कारण उसका शरीर जलता रहा। अन्त में उसे अपने दुष्कृत्य का बडा पश्चाताप के कारण वह मर-कर अच्युत देवलोक में गया।

भगवान के शरीर में गोशालक के द्वारा फेंकी गई तेजो लेश्या के कारण कुछ समय तक दाहज्वर रहा किन्तु रेवती गाथा पत्नी के द्वारा बनाये गये बिजोरा पाक को औषधी सेवन से दाह ज्वर शान्त हो गया, और भगवान सिंह की तरह भव्यों को प्रतिबोध देने लगे। भगवान ने इस बार क्रमशः वाणिज्यग्राम, राजगृह, वाणिज्यग्राम, वैशाली पुनः वैशाली, राजगृह, नालंदा, वैशाली मिथिला, राजगृह नालंदा, मिथिला राजगृह में अपने ४१ वें चातुर्मास को पूर्णकर आप पावापूरी पधारे। इस वर्ष का वर्षाकाल पावापूरी में व्यतीत करने का निर्णय के कारण आप हस्तिपाल राजा की रज्जुक सभा में पधारे और वहीं चातुर्मास की स्थिरता की। यह आप का अन्तिम चातुर्मास था। इस वर्ष के चातुर्मास में आपने अनेक भव्यों को उद्बोधित किया। राजा पुण्यपाल आदि ने आप से श्रामण्य ग्रहण किया। एक एक करके वर्षाकाल के तीन महिने बीत गये। और चौथा महिना लगभग आधा बितने आया कार्तिक अमावस्या का प्रातः काल हो चुका था। उस समय राजा हस्तिपाल की रज्जुक सभा भवन में भगवान श्री महावीर के अन्तिम समवशरण की रचना हुई।

उसी दिन भगवान ने सोचा—आज मै मुक्त होने वाला हूँ और गौतम का मुझ पर अपार स्नेह है यह स्नेह बन्धन ही इसे केवली होने से रोक रहा है इसलिए इसके स्नेह बन्धन को नष्ट करने का उपाय करना चाहिए यह सोचकर भगवान ने गौतम स्वामी को बुलाया और कहा—गौतम पास के गांव में देव शर्मा ब्राह्मण रहता है वह तुम्हारे उपदेश से प्रतिबोध पायगा। इसलिए तुम उसे उपदेश देने जाओ। भगवान की आज्ञा प्राप्त कर गौतम, देवशर्मा ब्राह्मण को उपदेश देने चले गये।

प्रभु के समवशरण में अपापा पुरी का राजा हस्तिपाल, काशी कौशल के नौ लिच्छवी तथा नव मल्ली एवं अठारह गणराज भी आये। इन्द्रादि देव भी समवशरण में उपस्थित हुए।

भगवान ने अपनी देशना प्रारंभ कर दी। छठ का तप किये हुए भगवान ने ५५ अध्ययन पुण्य फल विपाक के और ५६ अध्ययन पाप फल विपाक सम्बन्धी कहे। उसके बाद ३६ अध्ययन प्रश्नव्याकरण—विना किसी के पूछे कहे। उसके बाद अन्तिम प्रधान नामक अध्ययन कहने लगे।

उस दिन भगवान को केवलज्ञान हुए २९ वर्ष ६ महिना, १५ दिन व्यतीत हुए थे। उस समय पर्यंक आसन से बैठे प्रभु ने निर्वाण प्राप्त किया।

जिस रात्रि में भगवान का निर्वाण हुआ उस रात्रि में बहुत से देवी देवता स्वर्ग से आये। अतः उनके प्रकाश से सर्वत्र प्रकाश हो गया।

उस समय नवमल्ली नौ लिच्छवी काशी कोशल के १८ गण राजाओं ने पौषध व्रत कर रखे थे। भाव ज्योति के अभाव में देवो के रत्नमय विमानो से प्रकाश हो रहा था उसेद्रव्य ज्योति तेजोमय दिख रही थी। उसकी स्मृति में तब से आज तक दीपोत्सव पर्व चला आरहा है। शोक संतप्त देवेन्द्र एवं नरेन्द्रों ने भगवान के शरिर का दाह संस्कार किया। भगवान की अस्थि को देवगण ले गये।

भगवान के निर्वाण के समाचार जब इन्द्रभूति को मिले तो वे मूर्च्छित हो कर गिर पडे। मूर्च्छा दूर होने पर वे भगवान के वियोग में हृदय द्रावक विलाप करने लगे अन्ततः उनका स्नेहावरण नष्ट हो गया। उन्होंने घातीकर्म नष्ट कर केवलज्ञान प्राप्त कर लिया।

एक-परम्परा के अनुसार वे बारह वर्ष तक संघ के नेता बने रहे। अन्तिम समय में अपने उत्तराधिकारी सुधर्मास्वामी को संघ का नेता बना कर निर्वाण को प्राप्त हुए। दूसरी परम्परा के अनुसार केवलज्ञान प्राप्त करने के बाद आपने अपने श्रमणसंघ का नेता सुधर्मा स्वामी को बनाया

भगवान महावीर की श्रमणपरम्परा—

श्रीगोतमगणधर

भगवान महावीर के ग्यारह गणधरों में इन्द्रभूति श्रीगौतम प्रमुख गणधर थे। आपका जन्म मगध

देश के गोब्बर नामक गांव में वि. सं. पूर्व ५५१ में हुआ था। गौतम गोत्रीय वसूभूति ब्राह्मण आपके पिता थे। माता का नाम पृथ्वीदेवी था।

आपने अपनी अलौकिक प्रतिभा और बुद्धि के कारण अल्पकाल में ही चौदह विद्याएँ सीख ली। अपनी प्रतिभा और विद्वत्ता के कारण सारे मगध में सम्मानीय स्थान प्राप्त किया था। आप अपने युग के समर्थ वेदाभ्यासी विद्वान थे। आपके पास ५०० छात्र अध्ययन करते थे।

उस समय मध्यमा पावापुरी में सोमिल नाम के एक धनाढ्य ब्राह्मण ने एक बड़े यज्ञ का आयोजन किया। उसमें दूर-दूर के विद्वान ब्राह्मणों को यज्ञ में सम्मिलित होने का निमंत्रण पाकर हजारों की संख्या में ब्राह्मण यज्ञ में सम्मिलित होने के लिए पावा पुरी में आए। उनमें ग्यारह विद्वान-इन्द्रभूति अग्निभूति, वायुभूति। व्यक्तभूति सुधर्माजी मंडिकपुत्र मौर्यपुत्र अकम्पिक, अचलभ्राता, मेतार्य एवं प्रभास विशेष प्रतिष्ठित थे।

भगावान महावीर का उस समय पावा पुरी में समवशरण हुआ। महावीर की महिमा से प्रभावित हो कर ये महावीर भगवान के समवशरण में अपने अपने छात्रों के साथ पहुँचे। महावीर के साथ शास्त्रार्थ किया और अपनी शंकाओं का समाधान प्राप्तकर अपने अपने छात्रों के साथ दीक्षा ग्रहण की उस समय इन्द्रभूति की अवस्था ५० वर्ष की थी। तीस वर्ष तक छद्मस्थ अवस्था में रहने के बाद आपको केवल ज्ञान उत्पन्न हुआ। बारह वर्ष तक केवली पर्यायमें रहने के बाद बाणु वर्ष की अवस्था में एक मासका अनशनकर उन्होंने राजगृह नगर में निर्वाण प्राप्त किया। आपके केवलज्ञान के बाद सुधर्मा स्वामी द्वितीय पट्टधर बने।

२ श्रीसुधर्मास्वामी—

श्रीगौतमस्वामी के केवलज्ञानी बनने के बाद समग्र संघ के आप अधिनायक बने।

ये कोल्लाग सन्निवेश के निवासी अग्निवेश्यायन गोत्रीय ब्राह्मण थे। इनका जन्म वि०सं. ५५१ वर्ष पूर्व हुआ था। आपकी माता का नाम भद्दिला और पिता का नाम धम्मिल था। आप अपने युग के समर्थ विद्वान थे। आपके पास ५०० छात्र अध्ययन करते थे। ये सोमिल ब्राह्मण के आमंत्रण से उनके यज्ञोत्सव में सम्मिलित होने के लिए पावा मध्यमा गये थे। वहां भगवान महावीर से शास्त्रार्थ कर आप अपने पांचसौ छात्रों के साथ प्रव्रजित हो गये। उस समय आपकी आयु ५० वर्ष की थी। वीर सं. १३ में अर्थात् अपनी आयु के ९३ वें वर्ष में कैवलज्ञान प्राप्त किया। वीर सं. २० में सौ वर्ष की आयु पूर्ण कर राजगृह नगर के वैभारगिरि पर मासिक अनशन पूर्वक मुक्त हुए। आप आगम साहित्य के पुरस्कर्ता थे।

३ श्रीजम्बूस्वामी

श्रीभगवान महावीर की शासन परम्परा के द्वितीय पट्टधर जम्बूस्वामी बड़े प्रभाविक महापुरुष हुए हैं। वीर सं. १६ में सोलह वर्ष पूर्व राजगृह के धनाढ्य श्रेष्ठी ऋषभदत्त के घर आपका जन्म हुआ था। आप की माता का नाम धारिणी था। जम्बू अपने माता पिता के इकलोते पुत्र थे। वे बाल्यकाल को पार कर युवा अवस्था प्राप्त हुए। उनका विवाह इभ्य सेठकी आठ कन्याओं के साथ होना तय हुआ।

उस समय सुधर्मास्वामी अपने शिष्य परिवार के साथ राजगृह पधारे जम्बू कुमार, उपदेश सुनने श्रीसुधर्मा स्वामी के पास पहुँचे। सुधर्मास्वामी की वैराग्यपूर्ण वाणी सुनकर उसने दीक्षा लेने का निश्चय किया। घर आकर उन्होंने माता पिता से दीक्षा की आज्ञा मांगी। माता पिता ने इकलौती सन्तान, अपार धन राशि होने से एवं पुत्र स्नेहवश उसे आज्ञा नहीं दी, किन्तु आठ सुन्दर कन्याओं के साथ

उनका विवाह कर दिया। विवाह के अवसर पर कन्याओं के माता पिता ने ९९ क्रोड़ का देहेज दिया था। घर आकर जम्बूकुमार ने रात्रि में अपनी आठ स्त्रियों को उपदेश दिया और उन्हें वैराग्य रंग से रंग दिया। जब वे अपनी स्त्रियों को संसार की असारता समझा रहे थे उसी समय प्रभवनामक चोर अपने पांचसौ साथियों के साथ चोरी करने वहाँ आया। जम्बूकुमार ने उन्हें भी प्रतिबोधदिया जम्बूकुमारके त्याग वैराग्य और ज्ञान से प्रभावित हो कर उसने भी अपने साथियों के साथ दीक्षा लेने का विचार किया।

दूसरे दिन आठ स्त्रियाँ, प्रभव और उसके पांच सौ साथी इन सब को लेकर अपने माता-पिता के के पास आये और उन्हें भी उपदेश देने लगे। अपने पुत्र की वैराग्य भरी वाणी को सुनकर उन्होंने भी प्रवज्या ग्रहण करने का निश्चय किया। इस प्रकार जम्बूकुमारने उनके माता-पिता, प्रभव और उनके पांचसौ साथो, जम्बूकुमार को आठ स्त्रियाँ एव उन स्त्रीयों के माता-पिता इस प्रकार ५२७ जनों के साथ आर्य सुधर्मास्वामी के पास दीक्षा ग्रहण की।

श्रीजम्बूकुमार ने वीर सं. १ में सोलह वर्ष की खिलती हुई तरुणाअवस्था में दीक्षा धारण कर आर्य सुधर्मा स्वामी के समीप अध्ययन करने लगे। बारह वर्ष तक सुधर्मा स्वामो से आगमों का गम्भीर अध्ययन किया। वीर सं. १३ में सुधर्मा स्वामी के केवली बनने के पश्चात् आप श्रमण संघ के प्रमुख आचार्य बने। आठ वर्ष तक आचार्य पद पर अधिष्ठित रहने के बाद वीर सं. २० में आपको केवलज्ञान उत्पन्न हुआ। ४४ वर्ष तक केवली अवस्था में धर्म प्रचार करते रहे। वीर सं. ६४ में ८० वर्ष की आयु पूर्णकर मथुरा नगरी में वे निर्वाण को प्राप्त हुए। आप के पट्ट पर आर्यस्वामी प्रभव विराजे।

२ श्रीप्रभव स्वामी—

आप विन्ध्याचल पर्वन्तर्गत जयपुर के राजा जेयसेन के पुत्र थे। आप का गोत्र कात्यायन था। इनका जन्म वीर संवत ३० के पुर्व (वि. सं. ५०० वर्ष पुर्व) हुआ था। पिता से अनबन होने के कारण अपने ४९९ साथियों के साथ राज्य छोड़कर लूट मार का धंधा करने लगे। एक बार वे अपने साथियों के साथ घूमते-घामते मगध आ पहुँचे जब इन्होंने जम्बूकुमार के विवाह करके ९९ करोड़ का दहेज लाने का समाचार सुना तो वे उसी रात्रि को अपने ४९९ साथियों के साथ उनके महल में चोरी करने के लिए पहुँचे। किन्तु चोरी करने के एवज में जम्बूकुमार के सदुपदेश से प्रभावित हो जम्बूकुमार के साथ प्रवर्जित होने का निश्चय किया। दूसरे दिन अपने ४९९ साथियों के साथ जम्बूकुमार के नेतृत्व में सुधर्मा स्वामी के पास (वि. सं. ४७० पूर्व) वीर सं. १ में तीस वर्ष की युवावस्था में दीक्षा धारण की। दीक्षां के बीस वर्ष पश्चात् ५० वर्ष की आयु में आचार्यपद पर प्रतिष्ठित हुए। १०५ वर्ष की आयु पूर्णकर (वि. सं. ३९ ५ वर्ष पूर्व) वीर सं. ७५ में अनशन कर समाधि पूर्वक स्वर्गवासी हुए। इनके पट्ट पर शय्यंभव आचार्य प्रतिष्ठित हुए।

३ श्रीआर्यशय्यंभव—

आर्य शय्यंभव राजगृह के निवासी वत्सगोत्री ब्राह्मण थे। ये वैदिक साहित्य के धुरन्धर विद्वान थे। श्रीप्रभवस्वामी ने अपने दो साधुओं को उसकी यज्ञशाला में भेजा, साधु वहाँ पहुँचे। वहाँ का दृश्य देखकर आचार्य की शिक्षा के अनुसार वे बोले—"अहो कष्टमहोकष्टं" तत्त्वं न ज्ञायते परम्।" शय्यंभव ने यह सुना और सोचा— ये उपशान्त तपस्वी असत्य नही बोलते। अवश्य ही इस में रहस्य है। वह उठा और अपने अध्यापक के पास जाकर बोला— " कहिए तत्त्व क्या है ? अध्यापक ने कहा " तत्त्व वेद है। शय्यंभव ने तलवार को म्यान से निकाला और कहा—" या तो तत्त्व बतलाइए अन्यथा इसी तलवार से सिर काट डालूगाँ।"

अध्यापक ने सोचा—अब समय आ गया हैं। वेदार्थ की परम्परा यह हैं कि सिर काट डालने का प्रसंग आए तब कह देना चाहिए अब यह प्रसंग उपस्थित है, इसलिए मै तत्त्व बतला रहा हुँ। अध्यापक ने कहा— "तत्त्व आर्हत् धर्म है।" आर्हत् धर्म की वास्तविकता सुनकर वह प्रतिबुद्धि हुआ। शय्यंभव ने अध्यापक के चरणों में वंदना की और संतुष्ट होकर यज्ञ की सारी सामग्री उसे भेट में दे दी। वह मुनिद्वय के साथ आचार्य श्री प्रभवस्वामी की सेवा में पहुँचा। प्रभवस्वामी के उपदेश से प्रभावित हो कर जैनमुनि बन गया। शय्यंभव अठाईस वर्ष के थे। अपनी सगर्भा पत्नी को छोड़कर वे दीक्षित हो गये। दीक्षा लेकर उन्होंने गुरू चरणों में रहकर श्रुत साहित्य का अध्ययन किया और चर्तुदश पूर्वधर श्रुत केवली हो गये।

शय्यंभव की पत्नी ने पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम 'मनक' रखा गया। यह आठ वर्ष का हो गया। एक दिन उसने अपनी मां से पिता के बारे में पूछा। माँ ने बताया—बेटा ! तेरे पिता मुनि बन गये। वे अब आचार्य हैं और अभी अभी चम्पा में विहार कर रहे हैं।" मनक ने मां से अनु-मति ली और चम्पा नगरी जा पहुचा। आचार्य शौच जा करके आ रहे थे। बीच में ही मनक मिल गया। आचार्य के मन में उसके प्रति कुछ स्नेह भाव जागा और पूछा—"तू किसका बेटा है ?" मेरे पिता का नाम शय्यंभव ब्राह्मण हैं" मनक ने प्रसन्न मुद्रा में कहा। आचार्य ने पूछा अब तेरे पिता कहा है ? मनक ने अहा वे अब आचार्य हैं और अब इस समय चम्पा में है" आचार्य ने पूछा तू यहाँ क्यों आया ? मनक के उत्तर दिया—मैं भी उनके पास प्रव्रज्या लूंगा। और उसने पूछा—क्या तुम मेरे पिता को जानते हो ? आचार्य ने कहा—मैं केवल जानता ही नहीं हूं किन्तु वह मेरा अभिन्न शिष्य है। तूं मेरे पास प्रव्रजित हो जा। उसने यह स्वीकार कर लिया। आचार्य मनक को साथ में लिए अपने स्थान चले आये और उसे उपाश्रय में ही प्रव्रजित कर लिया। आचार्य शय्यंभव ने अपने पुत्र को केवल ६ महिने का अल्पजीवि जानकर आत्म प्रवाद आदि पूर्व साहित्य से श्रीदशवैकालिक सूत्र की रचना की। दशवैकालिक सूत्र की रचना काल वीर सं. ८२ के आस पास है। आचार्य शय्यंभव ३४ वर्ष तक मुनि जीवन में रहकर वे २३ वर्ष तक युग प्रधान आचार्य पद पर प्रतिष्ठित रहें। इस प्रकार ६२ वर्ष की आयु में समाधिपूर्वक देह का त्याग कर वीर सवत् ९८ में स्वर्गवासी हुए।

५–वें पट्टधर आर्य यशोभद्र—

आर्य यशोभद्र आचार्यशय्यंभव के शिष्य थे। आर्ययशोभद्र तुंगियायन गोत्र के क्रियाकांडी ब्राह्मण थे और प्रकाण्ड वेदाभ्यासी। उनके जीवन के सम्बन्ध में विस्तृत जानकारी उपलब्ध नहीं होती है। तत्कालीन नंद राजवंश और उसके मंत्री—वंश पर इनका अच्छा प्रभाव था। महान प्रभावक आचार्य संभूतिविजय और भद्रबाहु स्वामी आपके प्रधान शिष्य थे। आर्य यशोभद्र ने २२ वर्ष गृहस्थ दशा में ६४ वर्ष संयमी जीवन में और इसी में से ५० वर्ष युग प्रधान आचार्य पद पर व्यतीत किया। अन्ततः ८६ वर्ष की आयु पूर्णकर वीर सं. १४८ वर्ष में स्वर्गवासी हुए।

६–पट्टधर आर्य संभूतिविजय—

–आर्य यशोभद्र के स्वर्गवासी होने के बाद आप उनके पट्ट पर आसीन हुए। आर्य संभूतिविजय माठर गोत्रीय प्रसिद्ध ब्राह्मण थे। आप का विशाल शिष्य परिवार था। कल्पस्थविरावली में आपके बारह प्रमुख शिष्यों के नाम इस प्रकार हैं—१ नन्दन भद्र २ उपनन्दन भद्र ३ तिष्य भद्र ४ यशोभद्र स्वप्न भद्र ६ मणिभद्र ७ पूर्णभद्र ८ स्थूलिभद्र ९ ऋजुमति, जम्बू ११ दीर्घभद्र १२ और पाण्डुभद्र।

आर्य संम्भूति विजय ४२ वर्ष गृहस्थ जीवन में ४८ वर्ष साधु जीवन में एवं आठ वर्ष युग प्रधान

आचार्यपद में रहे। वीर सं. १५६ में ९० वर्ष की आयु पूर्ण कर आप स्वर्गवासी हुए।

७ वें पट्टधर आर्य भद्रबाहु—

भगवान महावीर के सातवें पट्टधर आचार्य। एवं आर्य यशोभद्र के शिष्य। सम्भूति विजय के पश्चात् आप आचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए। आप प्राचीन गौत्रीय ब्राह्मण थे। आपका जन्म प्रतिष्ठानपुरका माना जाता हैं। वराहमिहिरसंहिता का निर्माता वराहमिहिर आपका छोटा भाई था। वराहमिहिर पहले साधु था। आचार्य पद न मिलने से वह गृहस्थ हो गया और भद्रबाहु की प्रतिद्वन्दना करने लगा। विद्वानों का मत है कि वर्तमान में उपलब्ध वराहमिहिर संहिता भद्रबाहु के समय की नहीं है।

भद्रबाहु प्रभव से प्रारंभ होनेवाली श्रुतकेवली परम्परा में पंचम श्रुत केवली है। चतुर्दश पूर्वधर है दशाश्रुतस्कन्धचूर्णी में आप को दशाश्रुत बृहत्कल्प और व्यवहार सूत्र का निर्माता बताया है। कल्पसूत्र के रचनाकार भी आपही थे। उवसग्गहर स्त्रोत्र के कर्ता भी आप ही माने जाते हैं सपादलक्ष सवालक्ष गाथा में प्राकृत में वसुदेव चरित्र की भी आप ने रचना की थी। जो इस समय अनुपलब्ध है। अनुश्रुति है कि भद्रबाहु ने प्राकृत भाषा में भद्रबाहुसंहिता नामक एक ज्योतिष ग्रन्थ भी लिखा था जिसके आधार पर उत्तरकालिन द्वितिय भद्र बाहु ने संस्कृतमें "भद्रबाहु संहिता" का निर्माण किया था। पाटलिपुत्र में अगामों की प्रथम वांचना आप के समय में ही पूर्ण हुई थी। उस समय में १२ वर्ष का भयंकर दुष्काल पडा। साधु संघ समुद्र तट पर चला गया। दुष्काल के समाप्त होने पर साधु संघ पाटलिपुत्र में एकत्रहुआ और एकादश अंगों का व्यवस्थित रूप से संकलन किया। दुष्कालका समय वीर सं. १५४ के आसपास बताते हैं क्योंकि इसी समय नन्द साम्राज्य का उन्मूलन होकर मौर्यचन्द्र गुप्त का साम्राज्य स्थापित हुआ। दुष्काल की समाप्ति पर वीर सं. १६० के लगभग पाटलिपुत्र में श्रमणसंघ की परिषद हुई। स्थुलिभद्र के नेतृत्व में इस परिपद ने यथास्मृति ११ अंगों का संकलन तो कर लिया परन्तु बारहवें दृष्टिवाद के ज्ञाता आचार्य भद्रबाहु थे परन्तु वे दुष्काल पडने पर ध्यान साधना के लिए नेपाल चले गये थे। उनसे दृष्टिवाद का ज्ञान प्राप्त करने के लिए स्थूलिभद्र आदि पांच सौ साधु नेपाल गये। स्थूलिभद्र ने १० पूर्व तक तो अर्थ सहित अध्ययन किया और अग्रिम चार पूर्व मात्र मुलहि पढ पाये, अर्थनहीं। भद्रबाहु प्रतिदिन मुनियों को सात वाचनाएं देते थे। शेष समय महाप्राण के ध्यान में व्यतीत करते थे।

कल्पसूत्र की स्थविरावली में भद्रबाहु स्वामी के चार शिष्यों का उल्लेख है स्थविर गोदास, अग्निदत्त यज्ञदत्त और सोमदत्त। उक्त शिष्यों में से गोदास की क्रमशः चार शाखाएं प्रारंभ हुई। १—ताम्रलिप्तिकार २ कोटि वर्षिका ३ पाण्डुवर्षिका ४ और क्षयी कर्वटिका। भद्रबाहु ने अपने जीवन के ४५ वें वर्ष में दीक्षा ग्रहण की। ६२वें वर्ष में युगप्रधान पद पर प्रतिष्ठित हुए। कुल ७६वर्ष की आयु में वीर सं. १७० वर्ष में स्वर्गवासी हुए।

एक मान्यता के अनुसार इन्होने दससूत्रों पर निर्युक्तियां लिखी हैं। वे इस प्रकार हैं—

१ आवश्यक नियुक्ति २ दशवैकालिक निर्युक्ति ४ उत्तराध्ययन निर्युक्ति ५ आचाराग निर्युक्ति ६ सूत्र कृतांग निर्युक्ति ७ दशाश्रुतस्कन्ध निर्युक्ति ८ बृहद्कल्प निर्युक्ति ९ व्यवहारसूत्र निर्युक्ति १० सूर्यप्रज्ञप्ति निर्युक्ति ११ वसुदेवचरियम् (अनुपलब्ध) भद्रबाहु संहिता (अनुपलब्ध) ऋषिभाषित व्यवहार सूत्र मूल, दशाश्रुतस्कन्ध मूल, पंचकल्प मूल, बृहद्कल्प मूल, पिण्डनिर्युक्ति ओघनिर्युक्ति पर्यूषणाकल्प निर्युक्ति उवसग्गहर स्तोत्र।

८ वें पट्टआर्य स्थूलिभद्र—

आचार्य भद्रबाहु के पट्टपर महाप्रतापी स्थूलिभद्र आसीन हुए।

पाटलीपुत्र नगर में महापद्म नाम का नौवां नन्द राजा राज्य करता था। कल्पक वंश में उत्पन्न गौतम-गोत्रीय ब्राह्मण शकडाल इसी नन्द साम्राज्य का महामंत्री था। यह चतुर राजनीतिज्ञ था। इसकी पत्नी का नाम लांछनदेवी था। इसके दो पुत्र और सात पुत्रियाँ थी। बडे का नाम स्थूलिभद्र और छोटे पुत्र का नाम श्रीयक था। इनको १ यक्षा २ यक्षदत्ता ३ भूता ४ भूतदत्ता, ५ सेना ६ रेणा और ७ वेणा ये सात बहने थी। सातों बहनों की स्मरण शक्ति बड़ी प्रबल थी। पहली एक बार सुनते ही कठिन से कठिन पद्य याद कर लेती थी। इसी प्रकार दूसरी दो बार में, तीसरी तीन बार में, चौथी चार बार में और क्रमशः सातवी सात बार में। स्थूलिभद्र बचपन से ही विरक्त रहते थे पर वे संसार के प्रति अधिक अनासक्त थे। उनकी यह अनासक्त वृत्ति शकडाल को अखरती थी। उन्होंने सोचा यदि यह कुछ भी चातुर्य प्राप्त नहीं करेगा तो इसका भावी जीवन अधिक अन्धकार पूर्ण बन जायेगा। बिना किसी योग्यता के इसे प्रधान मंत्री का पद कौन देगा? शकडाल ने इसी उद्देश्य से प्रेरित होकर स्थूलिभद्र को शहर की प्रमुख वेश्या कोशा के घर भेज दिया। ये कोशा के रूप यौवन में अनुरक्त हो गये और वहीं रहने लगे। शकडाल के द्वितीय पुत्र श्रीयक नन्दराजा के अंग रक्षक पद पर नियुक्त थे। ये राजा के अत्यन्त विश्वासपात्र बन गये।'

'पाटली पुत्र में वररुचि नामक एक ब्राह्मण रहता था, जो प्रतिदिन आठसौ नये नये श्लोकों से नन्द राजा की स्तुति करता था। वररुचि के श्लोकों से प्रसन्न होकर राजा शकडाल मंत्री की ओर देखता परन्तु वह उदासीनता दिखाता। अतएव वररुचि राजदान से वंचित रहता था। एक दिन शकडाल की किंचित् प्रशंसा से प्रसन्न होकर राजा ने वररुचि पण्डित को एक सौ आठ स्वर्णमुद्रा दी। अब प्रतिदिन एक सौ आठ श्लोक बनाने के पुरस्कार में राजा एक सौ आठ स्वर्णमुद्रा का उसे दान देने लगा।

एक दिन शकडाल ने सोचा इस तरह से तो राजकोष जल्दि खाली हो जायेगा। उसने नन्द राजा से कहा—'राजन्! आप इसे इतना द्रव्य क्यों देते है? नन्द ने उत्तर दिया—'तुम्हीं ने तो कहा था कि उसके श्लोक बहुत सुन्दर है।' शकडाल ने कहा—'महाराज यह लौकिक हैं?' शकडाल ने उत्तर दिया—इन श्लोकों को मेरी लडकियाँ तक जानती हैं। तब महाराज ने शकडाल से कहा अगर यह बात सत्य है तो इसका निर्णय कल ही राजसभा में होना चाहिए।

दूसरे दिन नियमानुसार वररुचि ने राजा की प्रशंसा में नये श्लोक बनाकर लाया और उसे पढना शुरू किया। शकडाल की सातों कन्याओं ने उसे बारी-बारी से सुनकर याद कर लिया और राजा के कहने पर उन्हें सभा में सुना दिया। सभाजनों को बडा आश्चर्य हुआ। राजा को भी यह विश्वास हो गया कि वररुचि पुराने लौकिक काव्य को ही पढता है। राजा ने वररुचि को पुरस्कार देना बंद कर दिया।

वररुचि को शकडाल के इस कृत्य पर अत्यंत क्रोध आया और वह उससे बदला लेने का अवसर खोजने लगा।

एक बार की बात है, शकडाल के पुत्र श्रीयक का विवाह होनेवाला था। शकडाल ने राजा को निमंत्रित किया और उसके स्वागत के लिए बडी धूम-धाम से तैयारियां की। शकडाल की दासी द्वारा वररुचि को उसके घर का सब हाल मालूम होता था। उसने सोचा कि शकडाल से बदला लेने का बहुत अच्छा अवसर है। उसने बहुत से बालक इकट्ठे किये और उन्हें लड्डू बाँटता हुआ जोर-जोर से गाने लगा—'नंदराजा को मालूम नहीं शकडाल क्या कर रहा है। राजा को मारकर वह अपने पुत्र श्रीयक को राजगद्दी पर बैठाना चाहता है। यह बात सुनकर राजा को बहुत क्रोध आया। उसने गुप्त रूप से मालूम किया कि सचमुच शकडाल के घर बडे जोरों की तैयारियाँ हो रही है। यद्यपि महामात्य

शकडाल छत्र, चँवर, आभूषण, मुकुट एवं शस्त्रों को तैयार करवा कर विवाह के अवसर पर राजा को भेंट देना चाहता था किन्तु राजा ने वररुचि के कहने से इसका विपरीत अर्थ लगाया। बात यहाँ तक बढी कि महाराज नंद स्वयं अपने हाथों से महामात्य शकडाल का वध करने के लिए तैयार हो गये। बात इससे भी आगे बढी महामात्य के साथ ही उसके कुल के सभी सदस्यों के वध की योजन तैयार की।

एक दिन शकडाल राजा के पैर छूने आया तो राजा ने क्रोध से अपना मुह फेरलिया और उसके प्रति अत्यन्त उपेक्षा दिखलाई। शकडाल समझ गया कि अब खैर नहीं। उसने घर आकर श्रीयक को सब हाल सुनाया और कहा कि 'यदि तुम कुटुम्ब को सुरक्षित रखना चाहते हो तो मुझे नन्द राजा के सामने मार डालो। पिता की यह बात सुनकर उसे बड़ा दुख हुआ। उसने कानों पर हाथ रखकर कहा—'पिताजी! यह आप क्या कह रहे हैं?' शकडाल के बहुत समझाने पर भी जब श्रीयक न माना तो शकडाल ने कहा—'कोई बात नहीं, मै तालपुट विप खाकर राजा के पैर छूने जाऊँगा। उस समय तुम मुझे मार देना।' बहुत कहने पर श्रीयक यह बात मान गया और अपनी कुटुम्ब की रक्षा के लिए उसने दूसरे दिन नंद राजा के पैर छूने के लिए आये हुए अपने पिता को तलवार के वार से मौत के घाट उतार दिया। राजसभा में हा हाकार मच गया। महाराज नंद ने उठकर हत्यारे का हाथ पकड लिया किन्तु दूसरे ही क्षण आश्चर्य से चिल्ला उठे कौन? श्रीयक तूने पितृहत्या की? श्रीयक ने कहा स्वामिन्! पितृहत्या नहीं, किन्तु कर्तव्य का पालन किया है। जो मेरे स्वामी का बुरा चाहता है, वह चाहे कोई भी क्यों न हो मेरा शत्रु है, और उसको मारना ही ठीक है। श्रीयक की स्वामिभक्ति से नन्द राजा बहुत प्रसन्न हुआ। और उसने उसे मंत्री का पद स्वीकार करने का आग्रह किया इस पर श्रीयक ने कहा—राजन्! मेरे बडे भ्राता स्थूलिभद्र ही महामात्य पद के योग्य हैं वे बारह वर्ष से गणिका के घर ही पर रहते हैं उन्हें बुलाकर मंत्री पद देना चाहिये। श्रीयक की इस प्रार्थना पर महाराजा नन्द ने स्थूलिभद्र को मंत्रीपद ग्रहण करने के लिए आमंत्रित किया राजा के आमंत्रण से स्थूलिभद्र राजसभा में पहुँचे तो उन्हे जब पता लगा कि पिताजी वररुचि के षड्यंत्र से मारे गये हैं तो वे बडे खिन्न हुए और सोचने लगे मैं कितना अभागा हूँ कि वेश्या के मोह के कारण मुझे पिता की मृत्यु की घटना तक का पता नहीं चला! उनकी सेवा सुश्रूषा करना तो दूर रहा. अन्तिम समय में मैं उनके दर्शन तक नहीं कर सका। धिक्कार है मेरे जीवन को! इस प्रकार शोक करते-करते स्थूलिभद्र का हृदय संसार से विरक्त हो गया मंत्रीपद के स्थान पर साधुपद उन्हें अधिक निराकुल लगा। अन्त में सब कुछ छोड़ कर वे आचार्य संभूति विजय के समीप पहुँचे और मुनित्व धारण कर लिया। तत् पश्चात् श्रीयक मंत्री बने।

कोशा गणिका के पास जब यह खबर पहुँची तो उसका हृदय भग्न हो गया। अब उसके लिए धीरज के सिवा कोई दूसरा सहारा नहीं था।

एक बार वर्षाकाल के समीप आने पर शिष्यगण आचार्य संभूतिविजय के पास आकर चातुर्मास की आज्ञा मांगने लगे। एक ने कहा मैं सिंह गुफा में जाकर चातुर्मास बिताऊंगा। दूसरे ने दृष्टि विष सर्प की बांबी पर चातुर्मास बिताने की एवं तीसरे ने कुए की डोली पर चार महीने खडे रहकर चातुर्मास बिताने की आज्ञा मांगी। जब मुनि स्थूलिभद्र के आज्ञा लेने का अवसर आया तो उन्होंने नाना कामोद्दीपक चित्रों से चित्रित अपनी पूर्व परिचिता सुन्दरी नायिका कोशा गणिका की चित्रशाला में षड्रस युक्त भोजन करते हुए चातुर्मास करने की आज्ञा मांगी। आचार्य ने सब को आज्ञा प्रदान की सब साधुओं ने अपने-अपने चातुर्मास के स्थान की ओर विहार किया। मुनि स्थूलिभद्र कोशा गणिका के घर पहुँचे।

कोशा का स्थूलिभद्र पर हार्दिक अनुराग था। उनके चले जाने से वह उदास रहती थी। चिरकाल

के बाद उन्हें मुनिवेष में उपस्थित हुए देख वह बहुत दुःखित हुई किन्तु इस बात से संतोष भी हुआ कि वे चार महिने उसी की चित्रशाला में रहेंगे। साथ ही उसने सोचा मेरे यहां चातुर्मास करने का और क्या अभिप्राय हो सकता है ? इसका कारण उनके हृदय में मेरे प्रति रहा हुआ सूक्ष्म मोह भाव ही है। चित्रशाला में स्थूलिभद्र को रहने की आज्ञा मिल गई। कोश्या गणिका की चित्रशाला साक्षात् कामदेव की मधुशाला थी। सब ओर कण कण में मादकता :एवं वासना का उद्दाम प्रवाह बहता था एक से एक बढकर कामोतेजक चित्रों की शृखला कोशा स्वर्गलोग से उतरी हुई मानों अप्सरा ! नील गगण. उमडती घुमडती काली घटाएँ, वर्षा की झमाझम शीतल बहार कोशा की संगीत कला की चिर साधना से मँजा निखरा गान और नृत्य ऐसा कि एक बार तो जडपत्थर भी द्रवित हो जाए परन्तु स्थूलिभद्र पद्मासन लगाये ध्यान मुद्रा में सदा लीन रहते । गणिका की नाना प्रकार की चेष्टाओं से वे किंचित भी विचलित नहीं हुए।

इधर कोशा उन्हें विचलित करना चाहती थी उधर मुनिवर स्थूलिभद्र उसे प्रतिबोधित करना चाहते थे। जब जब वह उनके पास जाती वे उसे संसार की असारता और कामभोग के कटुफल का उपदेश देते । मुनिवर स्थूलिभद्र के उपदेश से कोशा कों अन्तर प्रकाश मिला। उनकी अद्‌भुत जितेन्द्रियता को देखकर उसका हृदय पवित्र भावनाओं से भर गया। अपने भोगासक्त जीवन के प्रति उसे बडी घृणा हुई । वह महान अनुताप करने लगी। उसने मुनि से विनय पूवक क्षमा मांगी तथा सम्यकत्व और बारहव्रत अंगीकार कर वह श्राविका हुई । उसने नियम किया राजा के हुक्म से आये हुए पुरुष के सिवाय मैं अन्य किसी पुरुष से शरीर सम्बन्ध नहीं करूंगी। इस प्रकार व्रत और प्रत्याख्यान कर कोशा गणिका उत्तम श्राविका जीवन व्यतीत करने लगी। चातुर्मास समाप्त होने पर मुनिवर स्थूलिभद्र ने वहां से विहार कर दिया। अन्य मुनिगण भी चातुर्मास की समाप्ति के बाद गुरु देव के समीप पहुँच गये। गुरु वर ने प्रथम तीनों मुनिराजो का दुष्कर कारक तपस्वी के रूप में स्वागत किया परन्तु स्थूलिभद्र जब गुरु के समीप पहुँचे तो गुरुदेव उनके स्वागत में खडे हो गये, सात आठ कदम सन्मुख गये हर्ष युक्त गद्‌गद् वाचा में दुष्कर-दुष्कर कारक तपस्वी कह कर उनका भाव भीना स्वागत किया। यह देख कर दूसरे शिष्यों के मन में ईर्षा उत्पन्न हो गई । वे सोचने लगे-हमने इतना लम्बा तप किया और सिंह की गुफा में अथवा सांप की बांबी पर अथवा कुंए के कांठे पर चार महिने बिताए। स्थूलिभद्र तो वेश्या की चित्रशाला में आनन्द से रहे षड्रस भोजन किया। फिर भी गुरुने हमसे भी ज्यादा सत्कार किया।

सिंह गुफावासी मुनि ने ईर्षावश मुनिस्थूलिभद्र का अनुकरण करने का प्रयत्न किया किन्तु वह अपने कार्य में असफल रहा। अंत में वह मुनि आचार्य के पास पहुँचा। अवज्ञा के लिए क्षमा याचनो की। अपने दुष्कृत्य की निंदा करते हुए प्रायश्चित लेकर शुद्ध हुए।

महामुनि स्थूलिभद्र एक ऊंचे साधक ही नहीं किंतु बहुत बडे प्रभावशाली ज्ञानो भी थे। पाटलीपुत्र की प्रथम आगमवाचना में आचारांगादि ११ अंगों का संकलन इनकी अध्यक्षता में ही हुआ था। स्थूलिभद्र अर्थ सहित प्रथम दस पूर्व के ज्ञाता थे। शेष चार पूर्व मूल में याद थे।

आचार्य भद्रबाहु के पट्ट पर स्थूलिभद्र मुनि वीरसं. १७० में आसीन हुए और युगप्रधान बने। आचार्य स्थूलिभद्र की यक्षा आदि ७ बहनों द्वारा चूलिका सूत्रों के रूप में आगम साहित्य की वृद्धि हुई थी। चार चूलिकाओं में से भावना और विमुक्ति, आचारांग सूत्र के एवं रतिवाक्य और विविक्तचर्या दशवैकालिक सूत्र के परिशिष्ट रूप में वीर सं. १६८ के आस पास जोड दी गई जो आज भी साधना जीवन हें प्रकाश किरणे बिकीर्ग कर रहो हैं। आर्य महागिरि और आर्य सुहस्ति आपके प्रधान शिष्य

थे। आचार्य स्थूलिभद्र दीर्घायु थे। आपके समय में मगध में राज्यक्रांति हुई थी। तथा नंद साम्राज्य का उच्छेद और मौर्य साम्राज्य की स्थापना हुई थी। मौर्य सम्राट चन्द्रगुप्त, बिन्दुसार, अशोक और कुणाल भी आपके समक्ष थे। कौटिल्य अर्थशास्त्र का निर्माता महामंत्रीं चाणक्य भी आपके दर्शन से लाभान्वित हुआ था। वीर सं. २१४ में होनेवाले आषाढभूति के शिष्य तीसरे अव्यक्तवादी निह्नव भी आप ही के समय में हुए थे। आपके लघुभ्राता श्रीयक ने भी चारित्र ग्रहण कर उत्तमगति प्राप्त की।

वीर सं. २१५ में वैभारगिरि पर्वत पर १५ दिन का अनशन करके आपने स्वर्गरोहन कियो।

वीर सं. ११६ में आचार्य श्री स्थूलिभद्र का जन्म, १४६ में ३० वर्ष की अवस्था में दीक्षा, १६० के लगभग पाटलीपुत्र में प्रथम आगमवाचना, १६८ में लगभग चूलिकाओं की आगमरूप में प्रतिष्ठा १७० में आचार्यपद, और वीर सं. २१५ में स्वर्गवास।

९-१० वे पट्टधर आर्य महागिरि और सुहस्ती

आर्य महागिरि और सुहस्ती अपने युग के परम प्रभावक युग-पुरुष थे। आर्य स्थूलिभद्र के शिष्य रत्न और पट्टधर थे। बाल्यकाल में आर्य स्थूलिभद्र की बहन यक्षा साध्वी द्वारा आपको प्रतिबोध मिला था। दोनों की आयु में लगभग ४५ वर्ष जितना अन्तर पडता है। दोनों ही आचार्य सर्वश्रेष्ठ मेधावी, त्यागी एवं बहुश्रुत थे। अत्यंत निष्ठा के साथ ११ अंग और दस पूर्व तक का कण्ठस्थ अध्ययन दोनों ही आचार्यों ने किया। आर्य महागिरी उच्चकोटि के साधक थे। प्रायः जिनकल्प का आचार पालते थे। आपने आर्य सुहस्ती को मुनिगणों का नेतृत्व सौंप कर एकान्त वनवास स्विकार किया। आर्य सुहस्ती स्थविरकल्पी रहे और विशेषतः नगर एवं ग्राम वस्तीयों में ही उनका निवास रहा।

अवन्ती नरेश महाराजा सम्प्रति आपके परम भक्त थे। आपके उपदेश से महाराजा संप्रति ने जैन धर्म की प्रभावना के अनेक कार्य किये।

आर्य महागिरी और आर्य सुहस्ती की शिष्य परंपरा बहुत विशाल थी। आर्य महागिरि के शिष्य समूह से कोशाम्बी, चन्द्रनगरी, आदि अनेक शाखाएँ प्रचलित हुई। आर्य महागिरि के शिष्य कौशिक गोत्रीय रोहगुप्त ने त्रैराशिक निह्नवमत का प्रचलन किया। रोहगुप्त साक्षात शिष्य नहीं किन्तु परम्परागत शिष्य प्रतिभासित होता है क्योंकि उनका काल वीर सं. ५४४ निर्दिष्ठ है।

आर्य महागिरि का वीर सं. १४५ में जन्म, १७५ में दीक्षा २१५ में आचार्य पद और २४५ में १०० वर्ष की आयु पूर्णकर दशार्ण भद्र मालव देश में जिसे मन्दसौर कहते हैं जिसके नजदीक गजेन्द्रपुर में स्वर्गवास हुआ।

आर्य सुहस्ती के भी आर्य रोहण, यशोभद्र, मेघ, कामर्धि, सुस्थित और सुप्रतिबद्ध, आदि अनेक शिष्य थे, जिनसे उंदिज्जिया, काकंदिया, विज्जाहरी, बंभदीविया, आदि अनेक गण और कुलों का प्रारंभ हुआ। आर्य रोहण के उद्देहगण और नागभूत कुल का एक शिला लेख कनिष्क सं. ७ का प्राप्त हुआ है। जो उक्त गण और कुलों की ऐतिहासिकता पर प्रकाश डालना है।

आर्य सुहस्ती से गणवंश, वाचकवंश, और युग प्रधान-वंश-तीन श्रमण परंपराएँ प्रचलित हुई। गणधर-वंश गच्छाचार्य परम्परा है, वाचकवंश विद्यागुरुपरंपरा है और युगप्रधान विभिन्न गण एवं कुलो के प्रभावशाली आचार्यों की क्रमागत परम्परा है।

आर्य सुहस्ती का वीर सं. १९१ में जन्म २१५ में दीक्षा २४५ में युग प्रधानआचार्य पद और २९१ में १०० वर्ष की आयु पूर्णकर उज्जयिनी में स्वर्गवास हुआ।

११—१२ वें पट्टधर आर्य सुस्थित और सुप्रतिबद्ध

ये दोनो भगवान महावीर के संघ के ग्यारहवें एवं बारहवें पट्टधर आचार्य थे। आप आर्य सुहस्ती के युग प्रभावक शिष्य थे। दोनों काकन्दी नगरी के रहनेवाले, राजकुलोत्पन्न व्याघ्रापत्य गोत्रीय थे। दोनों आचार्यों ने भुवनेश्वर (उडीसा) के निकट कुमारगिरि पर्वत पर कठोर तपश्चरण किया था। आर्य सुस्थित गच्छनायक थे, तो आर्य सुप्रतिबद्ध वाचनाचार्य। हिमवन्त स्थविरावली के अनुसार इनके युग में भी कुमारगिरि पर्वत पर एक लघु साधु सम्मेलन हुआ था और द्वितीय आगमवांचना का सूत्रपात हुवा। आर्य सुस्थित और सुप्रतिबद्ध अपने समय के प्रभावशाली आचार्य थे। आर्य सुस्थित ३१ वर्ष गृहस्थ दशा में १७ वर्ष सामान्यव्रत पर्याय में ओर ४८ वर्ष आचार्य पद में रहकर ९६ वर्ष का सर्वायु पूर्णकर वीर सं. ३३९ में कुमारगिरि पर्वत पर स्वर्गवासी हुए।

१३ वें पट्टधर आर्य इन्द्रदिन

आर्य इन्द्रदिन्न कौशिक गोत्रीय ब्राह्मण थे। आप आर्य सुस्थित सुप्रतिबद्ध के शिष्य थे। आप के गुरु भ्राता आर्य प्रियग्रन्थ महा प्रभावक मुनि हुए थे। इन्होंने हर्षपुर में होनेवाले अजमेध का निवारण कर ब्राह्मण विद्वानों को अहिंसक बनाया था।

१४ वें पट्टधर दिन्न (दत्त)

आप आचार्य इन्द्र दिन्न के शिष्य थे। आपका गोत्र गौतम था। आप के शिष्य मण्डल में दो प्रमुख मुनिराज हैं—आर्य शान्ति श्रेणिक एवं आर्य सिंहगिरी।

१५ वें पट्टधर आर्य सिंहगिरि

आप कौशिक गोत्रीय ब्राह्मण थे। आप को जाति स्मरण पूर्व जन्म का स्मरण हुआ था। आपके चार प्रमुख शिष्य हुए हैं—आर्य समित आर्य धनगिरि आर्य वज्रस्वामी और और आर्य अर्हद्दत्त।

१६ वें पट्टधर आर्य वर्जस्वामी

गौतम गोत्री आर्य वज्र, आर्य समित के भानजे थे। आर्य समित की बहन सुनन्दा का धनगिरि से विवाह हुआ था। सुनन्दा गर्भवती थी कि धनगिरि अपने साले समिति के साथ आर्य सिंहगिरि के पास दीक्षित हो गये। सुनन्दा ने पुत्र को जन्म दिया। यही वज्र हुए। वज्र छ महिने के ही थे तब भिक्षार्थ आये धनगिरे के पात्र में सुनन्दा ने बालक को अर्पणकर दिया। वज्र को पात्र में लिए धनगिरि मुनि सिंहगिरि के पास पहुँचे। वज्र का श्रावकों के यहाँ पालन पोषण होने लगा। आपको जाति स्मरण ज्ञान भी हो गया था। दीक्षा के योग्य होने पर आर्य सिंहगिरि ने वज्र को मुनि दीक्षा दे दी। आर्य सिंहगिरि ने इन्हें वाचनाचार्य पद से विभूषित किया। आर्य वज्र ने दशपुर में भद्रगुप्त के पास दशपूर्व का अध्ययन किया। वज्रस्वामी अन्तिम दशपूर्व धर थे। अवन्ती में जृंभग देवों ने आहार शुद्धि के लिये परिक्षा ली। वज्र खरे उतरे। पाटलीपुत्र के धनकुबेर धनदेव की पुत्री रुक्मिणी आपके रूप सौंदर्य से मुग्ध होकर आप से विवाह करना चाहती थी। धनदेव श्रेष्ठी करोडों की सम्पत्ति के साथ पुत्री भी देना चाहता था किन्तु वज्रस्वामी ने इसका त्याग कर रुक्मिणी को साध्वी बनाया। एक बार उत्तर भारत में भयंकर दुर्भिक्ष पडा। तो आप अपने मुनिगण को आकाशगामिनी विद्या के बल से कलिंग प्रदेश में ले गये।

उत्तर भारत में वी. संवत ५८० में भयंकर दुष्काल पडा। उस समय आपने प्रमुख शिष्य वर्जसेन को साधु संघ के साथ सुभिक्ष प्रधान सोपारक एवं कोंकण देश में भेज दिया। और साथ में यह भी भविष्यवाणी की कि एक लाख स्वर्णमुद्रा के विष मिश्रित चावल जिस दिन आहार में तुम्हें मिलेगा उसके दूसरे ही दिन सुभिक्ष हो जायगा। स्वयं आपने साधु समूह के साथ रथावर्त पर्वत पर अनशन कर

दिवंगत हुए। इनके चार मुख्य शिष्य थे। आर्य वज्रसेन आर्य पद्म, आर्यरथ' और आर्य तापस। वज्र स्वामी से वीर सं. ५८४ में वज्रीशाखा निकली। आपका जन्म वीर सं; ४९६ में, वीर सं. ५०४ में दीक्षा, वी. सं. ५४८ में आचार्यपद एवं वीर सं. ५८४ में स्वर्गवास।

१७ वें पट्टधर आचार्य वज्रसेन—

आर्य वज्रस्वामी के पट्टधर शिष्य। आचार्य वज्रसेन का जन्म सीर सं. ४९२, दीक्षा ५०१, आचार्यत्व ५८४, और स्वर्गवास वीर सं. ६२० में, १२९ वर्ष की आयु में हुआ। आपके नागेन्द्र चन्द्र, निर्वृत्ति और विद्याधर नामक प्रमुख शिष्यों से जो परस्पर सहोदर बन्धु थे वीर सं. ६०६ के आसपास अपने स्वयं के नाम पर चार कुलों का विस्तार हुआ।

आर्य वज्रसेन के समय में भी द्वादशवर्षीय भयंकर दुष्काल पडा कथाग्रन्थ कहते है कि इतना भयंकर दुष्काल था कि निर्दोष भिक्षा न मिलने के कारण ७८४ साधु अनशन कर के परलोकवासी हो गये। जिनदास श्रेष्ठी ने एक लाख स्वर्णमुद्राओं में एक अंजलि अन्न खरीदा और दलिया में विष मिलाकर समस्त परिवार सहित मरने जा रहा था कि आचार्य वज्रसेन ने शीघ्र ही सुभिक्ष होने की घोषणा करके सबकी प्राण रक्षा की। अगले दिन अन्न से भरे हुए जहाज समुद्र तट पर आ लगे और जिनदास ने सब अन्न खरीदकर सर्वसाधारण में विनामूल्य वितरण करना प्रारंभ किया। कुछ समय के पश्चात् वर्षा भी हो गई और दुर्भिक्ष के प्राणहारी संकट से देश का उद्धार हो गया। यह दयामूर्ति श्रेष्ठी अपनी समस्त सम्पत्ति जनकल्याणार्थ अर्पण कर अंत में अपने नागेन्द्र, चन्द्र, निवृत्ति और विद्याधर इन चार पुत्रों के साथ आचार्य वज्रसेन के चरणों में दीक्षित हो गया। आर्य वज्रसेन अपने समय के महान प्रभावक आचार्य थे।

१८ वें पट्टधर आर्य रथ स्वामी—

आर्य वज्रस्वामी के द्वितीय पट्टधर आर्य रथ है। आर्य रथ वशिष्ठ गोत्रीय ब्राह्मण थे। ये अपने गुरुभ्राता आर्य वज्रसेन की तरह ही प्रभावशाली थे। आपका दूसरा नाम आर्य जयन्त है, इनसे जयन्ती शाखा का विकास भी हुआ था।

इनके पश्चात् कल्पसूत्र स्थविरावली में देवर्द्धिगणी तक अनेक आचार्यो के नाम पट्टधर के रूप में आते हैं परन्तु उनका विशेष्ट परिचय नहीं मिलता। अतः कल्पस्थविरावली के आधार केवल नामोल्लेख ही किया जाता है—

१८ आर्य पुष्यगिरि कौशिक गौत्र १९ आर्य फल्गुमित्र गौतम गौत्र २० आर्य घनगिरि वशिष्ठ गौत्र
२१ आर्य शिवभूति कुच्छस गोत्र २२ आर्य भद्र काश्यप गौत्र २३ आर्य नक्षत्र काश्यप गोत्र
२४ आर्य रक्ष काश्यप गौत्र २५ आर्य नाग गौतम गौत्र २६ आर्य जेहिल वशिष्ठ गौत्र
२७ आर्य विष्णु माठर गौत्र २८ आर्य कालक गौतम गौत्र २९ आर्य संपलित "
३० आर्य भद्र " ३१ " " " ३२ " संघपालित "
३३ " हस्ती काश्यप गौत्र ३४ आर्य धर्म साक्य गौत्र ३५ " हस्ती काश्यप गौत्र
३६ " धर्म " ३७ " सिंह " ३८ " धर्म "
३९ " जम्बू गौतम गौत्र ४० " नन्दी काश्यप गौत्र ४१ " देर्द्धिगणिक्षमाश्रमण
माठर गोत्र ४२ " स्थिरगुप्तक्षमाश्रमण वत्सगोत्र ४३ " आर्य कुमारधर्मगणि "
४४ " देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण कास्यपगोत्र

आचार्य देवर्द्धि क्षमाश्रमण कास्यप गौत्र के क्षत्रिय कुमार थे। आपकी जन्म भूमि वेरावल

(सौराष्ट्र) है। आपके पिता का नाम कामर्धि और माता का नाम कलावती है। आर्य देवर्धिगणि अपने युग के समर्थ आचार्य थे। आर्य स्कंदिल की वाचक परंपरा के अंतिम वाचनाचार्य और भारत के अंतिम पूर्वधर थे। आपके पश्चात् अन्य कोई पूर्वधर नहीं हुआ। आपका दूसरा नाम देववाचक भी है। नन्दी सूत्र आपके द्वारा ही संकलित एवं निर्मित है। नंदी चूर्णि में इनके गुरु का नाम दुष्यगणी बताया है। तो कोई इन्हें लोहित्याचार्य के शिष्य भी मानते है। वलभी पूर (सौराष्ट्र) में वीर संवत ९८० के आस पास एक बृहद् मुनि सम्मेलन का आयोजन हुवा और उसमें आचार्यश्री देवर्द्धि क्षमाश्रमण के नेतृत्व में सर्व सम्मत पांचवीं आगमवांचना सम्पन्न हुई। प्रस्तुत आगम वांचना में चतुर्थ कालकाचार्य विद्यमान थे, जो नागार्जुन की चतुर्थ वल्लभी वाचना के प्रखर अभ्यासी थे। और जिन्होंने वीर संवत् ९९६ में आनन्दपुर में बलभी वंसीय राजा ध्रुवसेन की अस्थिति में श्रीसंघ के समक्ष कल्पसूत्र का वांचन किया। वीर सं. १००० में शत्रुंजय पर्वत पर देवर्द्धिक्षमाश्रमण का स्वर्गवास हुआ।

आचार्य देवर्द्धिक्षमाश्रमण के बाद विविध गच्छों और संप्रदायों की पट्टावलियों में अनेक आचार्यों के नाम आते हैं। इनकी कही भी एक रूपता दृष्टि गोचर नहीं होती तथा पट्टावलियों में आनेवाले आचार्यों के संबंध में विशिष्ट जानकारी भी उपलब्ध नहीं होती। यहां पूज्य हुकमी चन्द्रजी महाराज की पट्टावली में सुधर्मा स्वामी से देवर्द्धिक्षमाश्रमण तक एवं उनके पश्चात् के आचार्यों की नामावली इस प्रकार हैं—

१	आचार्यश्री	सुधर्मा स्वामी	
२	,,	जम्बू स्वामी	
३	,,	प्रभव स्वामी	
४	,,	शय्यंभव स्वामी	
५	,,	यशोभद्र स्वामी	
६	,,	संभूतिविजय स्वामी	
७	,,	भद्रबाहु	,,
८	,,	स्थूलिभद्र	,,
९	,,	महागिरि	,,
१०	,,	बलिस्सह	,,
११	,,	उमास्वामी	,,
१२	,,	श्यामाचार्य	,,
१३	,,	सोवनस्वामी	,,
१४	,,	वैरस्वामी	,,
१५	,,	स्कंदिल स्वामी	
१६	,,	जीवंधर	,,
१७	,,	समेत	,,
१८	,,	नंदिल	,,
१९	,,	नागहस्ती	,,
२०	,,	रेवंत	,,
२१	,,	सिंहगणी	,,
२२	,,	स्कंदिल	,,
२३	,,	हेमवंत	,,
२४	आचार्य	नागजित	स्वामी
२५	,,	गोविंद	,,
२६	,,	भूतदिन्न	,,
२७	,,	छोहगणी	,,
२८	,,	दुस्सहगणी	,,
२९	,,	देवर्द्धिक्षमाश्रमण	,,
३०	,,	वीर भद्र	,,
३१	,,	शंकर भद्र	,,
३२	,,	यशो भद्र	,,
३३	,,	वीरसेन	,,
३४	,,	वीर संग्राम	,,
३५	,,	जिनसेन	,,
३६	,,	हरिसेन	,,
३७	,,	जयसेन	,,
३८	,,	जगमाल	,,
३९	,,	देवऋषि	,,
४०	,,	भीमऋषि	,,
४१	,,	कर्मऋषि	,,
४२	,,	राजऋषि	,,
४३	,,	देवसेन	,,
४४	,,	शंकरसेन	,,
४५	,,	लक्ष्मीसेन	,,

४६ आचार्यश्री	रामऋषि	,,		५५ आचार्यश्री	महासूरसेन	स्वामी
४७ ,,	पद्मऋषि	,,		५६ ,,	महासेन	,,
४८ ,,	हरिस्वामी	,,		५७ ,,	गजसेन	,,
४९ ,,	कुशलदत्त	,,		५८ ,,	जयराज	,,
५० ,,	उवनीऋषि	,,		५९ ,,	मिश्रसेन	,,
५१ ,,	जयसेन	,,		६० ,,	बिजयसिंह	,,
५२ ,,	विजयसेन	,,		६१ ,,	शिवराजर्षि	,,
५३ ,,	देवसेन	,,		६२ ,,	लालजी ऋषि	,,
५४ ,,	सूरसेन	,,		६३ ,,	ज्ञानजीऋषि	,,

धर्मप्राण लोंकाशाह

भगवान महावीर के निर्वाण के पश्चात् जैसे जैसे समय व्यतीत होता गया वैसे वैसे साधु परम्परा में भी बहुत कुछ मतभेद होता गया। इसी मतभेद के कारण उनके निर्वाण के ९८० वर्ष बाद अनेक गच्छ स्थापित हो गये। गच्छों की अनेकता के कारण उनकी परम्पराएँ भी विभिन्न होने से अनेक प्रकार की हो गई हैं। गच्छों का विविध जाल फैल जाने पर भी उनमें अनेक प्रकाण्ड दार्शनिक सिद्धान्तवेत्ता प्रभावशाली और विविध विषयों के ज्ञाता अनेक आचार्य हुए हैं। जिन्होंने महत्त्वपूर्ण कृतियों से जैन वाङ्मय की समृद्धि में संस्मरणीय योगदान दिया है। भगवान श्रीमहावीर द्वारा प्ररुपित तत्त्वज्ञान तथा आचार शास्त्र ऐसी ठोस भूमि पर स्थित था कि उसे लेकर इतने वर्षों बाद भी कोई खास उल्लेखनीय मतभेद नहीं हुआ, जैसा कि वैदिक दर्शन या ब्राह्मण परम्परा में दृष्टिगोचर होता है। या बौद्ध परम्परा में भी दिखाई देता है। परन्तु निष्प्राण बाह्य क्रियाकाण्डों को ही धर्म के अंग मानकर समय समय पर अनेक गच्छ उत्पन्न होते गये। क्रियाकाण्ड धर्म के अंग बन जाने से धीरे धीरे संघ में शिथिलता आने लगी। फलस्वरुप वह अनेक विकृतियों का आगार हो गया। कठोर संयम का पालन करनेवाले साधु प्रायः चैत्यवासी हो गये। यहाँ तक की यह चैत्यवास अपनि पराकाष्ठा तक जा पहुँचा। जो साधु समुदाय पहले जंगल. अरण्य, बन, उद्यान आदि शास्त्रों में वर्णित निरवद्य अठारह स्थानों में जहां कहीं प्रासुक स्थान मिल जाता, वहाँ सुखपूर्वक निवास करते थे, वह अब मठों की तरह उपाश्रय बनाकर रहने लगे।

इस पतन के पीछे यह कारण है—भगवान महावीर का जब निर्वाण हुआ, उस समय उनकी नाम राशि पर महाभस्मग्रह बैठा था, इस भस्मग्रह को देख कर भगवान के निर्वाण के पूर्व शक्रेन्द्रने भगवान से पूछा—"भगवान्! आपके नाम नक्षत्र पर भस्मग्रह बैठा है, उसका फल क्या है?

तब भगवान ने उत्तर में कहा—हे देवेन्द्र! इस भस्म के कारण दो हजार वर्षतक सच्चे साधु साध्वियों की पूजा मंद होगी। ठीक दो हजार वर्ष के बाद यह ग्रह उतरेगा, तब फिर से जैन धर्म में नव चेतना जाग्रत होगी और योग्य पुरुष तथा साधु–सन्तों का अथोचित सत्कार होगा।"

भगवान श्रीमहावीर की यह भविष्यवाणी अक्षरसः सत्य निकली। वीर निर्वाण के ४७० वर्ष बाद विक्रम संवत प्रारम्भ हुआ और विक्रम के १५३१ वें वर्ष में अर्थात् (४७०÷१५३१=२००१) वीर सं. २००१ के वर्ष में वीर लोकाशाह ने धर्म के मूलतत्त्वों को पुनः प्रकाशित किया और इस प्रकार के गुण पूजक धर्म विस्तार पाने लगा। महान क्रान्तिकारी लोंकाशाह के जन्म स्थान, समय और माता–पिता के नाम आदि के सम्बंध में भिन्न–भिन्न अभिप्राय मिलते हैं किन्तु कुछ विद्वानों के आधारभूत निर्णय के अनुसार श्री लोंकाशाह का जन्म अरहटवाडे में चौधरी गौत्र के ओसवाल गृहस्थ सेठ हेमा भाई की

पवित्र पतिपरायणा भार्या गंगाबाई की कूंख से विक्रम संवत् १४७२ कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा को शुक्रवार ता. १८–७–१४१५ के दिन हुआ था।

लोकाशाह का मन तो प्रारंभ से ही वैराग्यमय था, किन्तु माता–पिता के विशेष आग्रह के कारण उन्होंने संवत् १४८७ में सिरोही के सुप्रसिद्ध शाह ओधवजी की विचक्षण तथा विदुषी पुत्री सुदर्शना के साथ विवाह किया। विवाह के तीन वर्ष बाद उन्हें पूर्ण चन्द्र नामका एक पुत्र रत्न प्राप्त हुआ, इनके तेईसवें वर्ष की अवस्था में माता का एवं चौवीसवें वर्ष की अवस्था में पिता का देहावसान हो गया।

सिरोही और चन्द्रावती इन दोनों राज्यों के बीच में युद्धजन्य–स्थिति के कारण अराजकता और व्यापारिक अव्यवस्था प्रसारित हो जाने से वे अहमदावाद में आगये और वहाँ जवाहिरात का व्यापार करने लगे। अल्प समय में ही आपने जवाहिरात के व्यापार में अच्छी प्रगति एवं ख्याति प्राप्त करली।

तत्कालीन अहमदावाद के बादशाह मुहम्मद उनकी बुद्धि व चातुर्य से अत्यन्त प्रभावित हुए और लोंकाशाह को अपना खजांची बना लिया। एक समय मुहम्मद शाह के पुत्र कुतुबशाह ने अपने पिता को मतभेद होने के कारण विष देकर मरवा डाला। संसार की उस प्रकार की विचित्रस्थिति देखकर लोंकाशाह का हृदय कांप उठा। संसार से विरक्त होने के कार। उन्होंने राज्य की नौकरी छोड़ दी।

श्रीमान् लोंकाशाह प्रारंभ से ही तत्त्व शोधक थे। जैन धर्म एवं तत्त्व का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त करने के उद्देश्य से उन्होंने जैन आगमों को एवं अन्य तत्त्वज्ञान सम्बन्धी ग्रन्थों को पढना शुरू किया। ज्यों ज्यों उनका अध्ययन बढता गया त्यों त्यों उनके ज्ञान में परिपक्वता आने लगी। इन्होंने अल्प समय में ही जैन धर्म का गहराई के साथ अध्ययन कर लिया। इनके अक्षर अत्यन्त सुन्दर थे। ये यत्तियों से जीर्ण आगम लेते और अपने सुन्दर अक्षरों में उसकी प्रतिलिपि कर उन्हें वापस कर देते। जैसे जैसे ये प्रतिलिपि करते गये वैसे वैसे वे आगमों के अर्थ की गहराई में उतरने लगे।

एक समय ज्ञानजी यति इनके यहां आहार के लिये आये। इन्हों ने लोकाशाह के सुन्दर अक्षर शुद्धता पूर्वक लेखन शैली देखकर बड़े प्रभावित हुए और उन्होंने अपने पास के शास्त्रों की जो जीर्णप्राय अवस्था में प्रतियाँ थीं उनकी नकल करने के लिये कहा। लोकाशाह तो अधिक से अधिक आगमों का अध्ययन करना चाहते ही थे उन्हें ज्ञानजी यति का सुझाव अच्छा लगा। उन्हों ने श्रुत सेवा का यह पुनित कार्य तत्काल स्वीकार कर लिया। अब ये अपने लिए एवं ज्ञानजी यति के लिये आगमों की सुन्दर प्रतिलिपियां तैयार करने लगे। ज्यों ज्यों वे शास्त्रों की नकले करते गये त्यों त्यों शास्त्रों की गहन बात और भगवान की प्ररूपणाओं का रहस्य भी समझते गये। उनके नेत्र खुल गये। संघ और समाज में बढती हुई शिथिलता और आगमों के अनुसार आचरण का अभाव उन्हें दृष्टिगोचर होने लगा।

जब वे चैत्यवासियों के शिथिलाचार और अपरिग्रही निर्ग्रन्थों के असिधारा के समान प्रखर संयम का तुलनात्मक विचार करते तब उनके मनमें अत्यन्त क्षोभ होता था। मन्दिरों मठों और प्रतिमागृहों को आगम की कसौटी पर कसने पर उन्हें मोक्ष मार्ग में कहीं पर भी प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा का विधान नहीं मिला। शास्त्रो का विशुद्धज्ञान होने से अपने समाज की अंधपरंपरा के प्रति उन्हें ग्लानि हुई। शुद्ध जैनागमों के प्रति उनमें अडिग श्रद्धा का आविर्भाव हुआ। उन्होंने दृढता पूर्वक घोषित किया कि शास्त्रों में बताया हुआ निर्ग्रन्थ–धर्म आजके सुखाभिलाषी और संप्रदायवाद को पोषण करने वाले कलुषित हाथो में जाकर कलंक की कालिमा से विकृत हो गया है। मोक्ष को सिद्धि के लिये तप, त्याग, संयम और साधना के द्वारा आत्म शुद्धि की आवश्यकता है। अपने इस दृढ निश्चय के आधार पर उन्होंने शुद्ध शास्त्रीय उपदेश देना आरंभ किया। भगवान महावीर के उपदेशों के रहस्य को समझकर उनके सच्चे

प्रतिनिधि बनकर ज्ञान दिवाकर धर्मप्राण लौंकाशाह ने अपनी समस्त शक्ति को संचित कर मिथ्यात्व और आडम्बर के अंधकार के विरुद्धसिंह गर्जना की। अल्प समय में ही उन्हें अद्‌भुत सफलता मिली। लाखों लोग उनके अनुयाई बन गये। कुछ व्यक्ति लोंकाशाह की यह धर्मक्रांति देखकर घबरा गये और कहने लगे कि "लोंकाशाह नामके एक लहिये ने अहमदाबाद में शासन विरोध में विद्रोह खडा कर दिया है।" इस प्रकार उनके विरोध में उत्सूत्र पुरूपणा और धर्म भ्रष्टता के आक्षेप किये जाने लगे।

इस प्रकार की बातों को अनहिलपुर पाटनवाले श्रावक लखमशी भाई ने सुनीं। लखमशी भाई उस समय के प्रतिष्ठित, सत्ता-संपन्न तथा साधन संपन्न श्रावक थे। लोंकाशाह को सुधारने के विचार से वे अहमदाबाद में आये। उन्होंने लोंकाशाह के साथ गंभीरता पूर्वक बातचीत की। मूर्ति पूजा एवं साध्वाचार के विषय में अनेक प्रश्न किये। उनके प्रश्नों के उत्तर में लोंकाशाह ने कहा—"जैनागमों में मूर्तिपूजा के संबंध में कही भी विधान नहीं है। ग्रन्थों और टीकाओं की अपेक्षा हम आगमों को विशेष विश्वसनीय मानते हैं। जो टीका अथवा टिप्पणी शास्त्रों के मूलभूत हेतु के अनुकूल हो वही मान्य की जा सकती है। किसी भी मूल आगम में मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रतिमा की पूजा का उल्लेख नहीं है। दान, शील तप और भावना अथवा ज्ञान, दर्शन चारित्र और तप आदि धार्मिक अनुष्ठानोंमें मूर्ति पूजा अंतर्निहित नहीं हो सकती।"

जो लखमशी भाई लोंकाशाह को समझाने के लिए आये थे, वे खुद समझ गये। लोंकाशाह की निर्भीकता और सत्य प्रियता ने उनके हृदय को प्रभावित कर दिया और वे लोंकाशाह के अनुयायी बन गये।

एक समय अरहट्टबाडा, सिरोही, पाटण और सूरत इस प्रकार चार शहरों के संघ यात्रा के लिए निकले। वे अहमदाबाद आये। उस समय वर्षा की अधिकता के कारण उनको अहमदाबाद में ही रुक जाना पडा। इसलिए चारों संघों के संघपति नागजी, दलीचंदजी मोतीचंदजी और शंभूजी को श्री लोंकाशाह से विचार विमर्श करने का अवसर मिला। लोंकाशाह के उपदेश से उनके जीवन वीतराग परमात्मा के प्रति गहरी श्रद्धा का उन चारों संघों पर गहरा असर पडा। इस गहरे प्रभाव का यह परिणाम हुआ कि उनमें से पैतालीस श्रावक लोंकशाह की परूपणा के अनुसार मुनि बनने के लिए तैयार हो गये।

इसी समय ज्ञानजीमुनि हैदराबाद की तरफ विहार कर रहे थे। उनको लोंकाशाह ने बुलाया और वैशाख शुक्ला ३ सं. १५२७ में उन पैतालीस व्यक्तियों को ज्ञानजी मुनि द्वारा दीक्षा दिलवाई। दीक्षा अंगीकार करने के बाद उन महापुरुषोंने अपने उपकारी पुरुष के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करने के लिए अपने गच्छ का नाम लोंकागच्छ रखा। और अपने आचार-विचार और नियम लोंकाशाह के उपदेश के अनुसार बनाये। इन ४५ महापुरुषों द्वारा आरंभ "लोंकागच्छ" उत्तरोत्तर प्रगति पथ की ओर प्रयाण करने लगा। इनके शुद्ध आचार और विचार से प्रभावित होकर अनुयाई वर्ग में केवल श्रावक श्राविकाओं की संख्या ही नहीं बढी परंतु साधुओं की संख्या भी उत्तरोत्तर बढने लगी। लोंकाशाह अब तक तो अपने पास आनेवालों को ही समझाते और उपदेश देते थे। परन्तु उन्हें अब विचार आया कि क्रियोद्धार के लिए सार्वजनिक रूप से उपदेश करना और अपने विचार जनता के समक्ष सक्रीय रूप से उपस्थित करना परम आवश्यक है। इसी उद्देश्य से उन्होंने वैशाख शुक्ला ३ संवत १५२९ में सार्वजनिक उपदेश देना आरंभ कर दिया। ये अपनी बुलंद आवाज से शास्त्रोक्त आचार का प्रतिपादन करने लगे। उस समय यतियों द्वारा उन्हें पथभ्रष्ट करने के लिए अनेक षड्यंत्र रचे गये, उन्हें अनेक यातनाएं पहुँचाई गई पर वे अपने मार्ग से किंचित्मात्र भी विचलित नहीं हुए। उन्होंने अपने दृढ संकल्प और अद्‌भूत आत्मबल से उन सब संकटों पर विजय प्राप्त की।

ये स्वभावतः विरक्त तो थे ही किन्तु अब तक कुछ कारणों से दीक्षा नहीं ले सके। जबकि क्रियोद्धार के लिए यह आवश्यक था कि उपदेशक पहले स्वयं आचरण करके बताये अतः मार्गशीर्ष शुक्ला ५ सं. १५३६ को ज्ञानजी मुनि के शिष्य सोहनजी मुनि से आपने दीक्षा अंगीकार कर ली अल्प समय में ही आपके ४०० शिष्य और लाखों श्रावक अनुयायी बन गये। अहमदाबाद से लेकर दिल्ली तक आपने धर्म का जय घोष गुन्जा दिया। आपने आगम मान्य संयम धर्म का यथार्थ पालन किया। और इसी का उपदेश दिया।

अपने जीवन काल में आपने त्याग धर्म की खूब प्रतिष्ठा बढाई। आपके बढते हुए प्रताप को कुछ ईर्षालु व्यक्ति सह नहीं सके। जब आप अपने शिष्य परिवार के साथ दिल्ली से लौट रहे थे तब मार्गमें अलवर में मुकाम किया। उन्होंने अट्ठम तप किया था। पारणा के दिन किसी ईर्षालु विरोधी अभागे ने विषयुक्त आहार बहरा दिया। महामुनि ने उस आहार का सेवन किया। औदारिक शरीर और वह भी जीवन की लम्बी यात्रा से थका हुआ होने के कारण उस पर विष का तात्कालिक असर होने लगा। विचक्षण पुरुष शीघ्र ही समझ गये कि उनका अन्तिमकाल समीप हैं। किन्तु वे महामानव धैर्य और समता की मूर्ति थे। उन्होंने चोरासी लाख जीवायौनि से क्षमा याचका कर सथारा ग्रहण कर लिया। विकराल काल आपकी सुकीर्ति को सहन नहीं कर सका और देखते देखते चैत्र शुक्ला एकादशी सं. १५४६ के दिन वह युगस्रष्टा, महानक्रान्तिकारी धर्मनेता को हमसे छीन लिया।

महातपस्वी लोंकामुनि के स्वर्गवास के बाद आचार्य भानजी मुनि अत्यन्त निष्ठा पूर्वक लोंकामुनि के द्वारा उपदिष्ट मार्ग का प्रचार करने लगे। उनके नेतृत्व काल में मुनिवरों ने अच्छी प्रगति की।

ज्ञानजी मुनि के स्वर्गवास के पश्चात् उनके पट्ट पर भानजी मुनि प्रतिष्ठित हुए।

आचार्य भानजी

सिरोही के निकट अरहटवाला—अटकवाडा के निवासी, जाति से पोरवाल. सं. १५३१ में अहमदाबाद में दीक्षा। लोंकागच्छ के प्रथम आचार्य। कुछ पट्टावलियों में इस का दीक्षा काल १५३३ उल्लिखित हैं।

आचार्य भीदाजी

आचार्य भानजी स्वामी के बाद आप उनके पट्टधर आचार्य बने। आप सिरोही के निवासी थे। ज्ञाति से ओसवाल एवं साथडिया आपका गोत्र था। स्वर्गस्थ तोला रामजो के भाई थे। अहमदाबाद में सं. १५४० में ४५ जनों के साथ आपने भानजी स्वामी के पास दीक्षा ग्रहण की।

आचार्य नूनाजी स्वामी

सिरोही के ओसवाल दीक्षा सं. १५४५ या ४६ के आसपास।

आचार्य भीमाजी स्वामी

पाली निवासी, लौढा गोत्रीय, संयम ग्रहण १५५०

आचार्य जगमालजी स्वामी

उत्तराधवासी, ओसवाल सुराणागोत्रीय. दीक्षा ग्रहण-सं. १५५० झांझण नगर में

आचार्य सरवाजी स्वामी

दिल्ली निवासी श्रीश्रीमालज्ञातीय सिंधूड गोत्रीय, संयम ग्रहणकाल सं. १५५४, इन्होंने एक मास का संथारा किया था। आचार्य विजयमुनि (विजयगच्छ के संस्थापक (समय–१५६५ या १५७०)

६८ वें आचार्य गोधाजी महाराज ६९ वें आचार्य परशुरामजी महाराज ७० वें आचार्य लोकपालजी महाराज ७१ वें आचार्य मयारामजी महाराज ७२ वें आचार्य दौलरामजी महारज

पूज्य श्री दौलतरामजी महाराज क्रियोंद्धारक श्री हरजीऋषि के छट्टे पट्टधर आचार्य है। इन्होंने पूज्य मयारामजी महाराज के समीप वि. सं. १८१४ में दीक्षा ग्रहण की। ये लींबडी संप्रदाय के आचार्य अजरामरजी स्वामी के समकालीन थे। पूज्य दौलतरामजी म. सा. पूज्य हुकमीचन्दजी महाराज के दादा गुरु थे। ये बडे समर्थ व आगम सिद्धान्त के परगामी विद्वान थे। संस्कृत प्राकृत भाषाओं के आप प्रकाण्ड पण्डित थे। आपकी विद्वत्ता उच्च आचार और असाधारण ज्ञान की प्रशंसा अजरामजी महाराज ने सुनी। पू० अजरामरजी महाराज भी कमविद्वान् नहीं थे। फिर भी आगमविषयक विशिष्ट ज्ञान प्राप्त करने के लिए पू० दौलतरामजी महाराज से अपनी इच्छा व्यक्त की। इस पर लींवडी संघ ने एक आदमी के साथ पू० दौलतरामजी महाराज की सेवामें प्रार्थना पत्र भेजा। आचार्य प्रवर श्री दौलतरामजी महाराज उस समय कोटाबून्दी में विराजते थे। उन्होंने इस विज्ञप्ति को सहर्ष स्वीकृत कर काठियावाड़की ओर विहार कर दिया। पूज्य श्री अपने शिष्य परिवार के साथ अहमदाबाद पधारे। लींबडी संघ का व्यक्ति पूज्य श्री को अहमदाबाद छोड़ उनके पधारने की सूचना देने लींवडी पहुँचा। व्यक्ति ने लींबडी पहुँचकर पूज्य श्री के अहमदाबाद आने की सूचना दी। पूज्य श्री के आगमन के समाचार सुनकर लीन्बडी संघ को आनन्द का पार नहीं रहा। वधाई देनेवाले मनुष्य को लींबडी संघ ने १२५०) रुपयें की थेली भेट की। पूज्य श्री दौलतरामजी महाराज लींबडी पधारे।

आपके आगमन से जो संघ में हर्ष छा गया वह वर्णनातीत है। पूज्य श्री अजरामरजी स्वामी पूज्य श्री से आगम-सिद्धान्त का अध्ययन करने लगे। समकीतसार के कर्ता पं. मुनि श्री जेठमलजी महाराज उस समय पालनपुर विराजते थे वे भी सूत्र सिद्धान्त का अध्ययन करने के लिए लींबडी पधार गये। वे भी ज्ञान गोष्ठी का अपूर्व लाभ लेने लगे। पूज्य श्री अजरामजी महाराज कई वर्ष तक पूज्यश्री के साथ साथ विचरणकर ज्ञानाभ्यास करते रहें! जयपुर का चातुर्मास भी श्री अजरामजी म. ने पूज्य श्री के साथ ही में किया। जब ज्ञानाभ्यास पूरा हुआ। तब कहा जाता हैं कि पूज्य श्री अजरामजी महाराज सा. ने लींबडी का विशालज्ञान भंण्डार पूज्य श्री दौलतरामजी म० सा. के लिए खोल दिया और कहा कि-"यह ज्ञान भण्डार आप ही का है आप जो चाहे वह ग्रन्थ या शास्त्र इस भण्डार में से ले सकते हैं। इस पर पूज्य श्री ने कहा आप लोगों का प्रेम ही चाहिए। मुझे इस परिग्रह की आवश्यकता नहीं। उन्होंने एक भी ग्रन्थ उनमें से ग्रहण नहीं किया। यह थी उनकी अपरिग्रहवृत्ति। आप अपने शिष्य लालचन्द्रजी महाराज को अपना अनुगामी बनाकर एवं अन्तिम समय में अनशन ग्रहण कर स्वर्गवासी हुए।

६३ वें आचार्यश्री रूपजी स्वामी

अणहिलपुर पाटन निवासी ओसवाल वेद गोत्रीय। पिता देवजी माता मिरधाई। जन्म सं. १५४३, स्वयमेव दीक्षा सं. १५६८ माघ शुक्ला पूर्णिमा। इन्होने पाटनगच्छ गुजराती लोंकागच्छ की स्थापना की। इस बात का लोंकागच्छ की बडे पक्ष की पट्टावली में विशेष उल्लेख है कि रूपा शाह ने मुनिवरों के दर्शनार्थ संघ निकाला था उस समय सरवाजी ऋषि का अहमदाबाद में व्याख्यान सुनकर प्रव्रजीत हुए और वह भी ५०० व्यक्तियों के साथ। आचार्य रूपजी स्वामी ने सं. १५७८ में जीवराजजी को संयम देकर स्वपद पर स्थापित किया। सात वर्ष तक गुरु शिष्य साथमें विचरते रहे।

६४ वें आचार्य जीवराजजी महाराज—

आचार्य रूपजी महाराज ने आपको सं० १५७८ में स्वपद पर स्थापित किया। ये सूरत के देशलहरा गोत्रीय तेजल तेजपाल की पत्नी कपूराबाई के पुत्र थे। जन्म सं. १५५०, दीक्षा सं. १५६८ माघ शुक्ला २ गुरुवार, संवत १६१२ वैशाख सुदि ६ को बडे वरसिंघजी को पद पर स्थापित किया।

एवं स्वयं सं. १६१३ में ज्येष्ठ शुक्ला ६ सोमवार को पांच ५ दिन का अनशन कर ६३ वर्ष की आयुमें स्वर्गवासी हुए । इनके प्रभावसे गुजराती लोंकागच्छ प्रसिद्ध हुआ ।

६५ वै आचार्य तेजराजजी महाराज ६६ वें आचार्य कुँवरजी महाराज ६७ वें आचार्य हरजी ऋषि इन्होंने सं. १७८५ में क्रियोद्धार किया । इनके पाट पर आचार्य गोदाजी ऋषि प्रतिष्ठित हुए ।

पूज्य आचार्यश्री घासीलालजी महाराज की गुरु परम्परा

पूज्य श्री हुकमीचन्दजी महाराज

पूज्य श्री दौलतरामजी महाराज के पश्चात् श्री लालचन्द जी महाराज बडे प्रभाविक आचार्य हुए । उनके पाट पर परम प्रतापी पूज्य श्री हुकमीचन्द जी महाराज बिराजे ।

पूज्य श्री हुकमी चन्दजी महाराज एक आंचारनिष्ट विद्वान मुनि थे । आप का जन्म शेखावटी के 'टोडा' नामक ग्राम में हुआ था । आप का गोत्र चपलोत था । सं. १८७९ के मार्गशीर्ष में आप ने बून्दी में पूज्य श्री लालचन्दजी महाराज के पास प्रबल वैराग्य भाव से दीक्षा ग्रहण की थी ।

दीक्षा के बाद इक्कीस वर्ष तक आप ने बेले बेले कीं तपस्का की । घोर से घोर शीतकाल में भी आप एकही चादर का प्रयोग करते थे । सब प्रकार की मिठाई और तली हुइ चीजों का आप ने सदा के लिए त्याग कर दिया था । केवल १३ द्रव्य की ही छूट रखी थी । शेष सब प्रकार के द्रव्यों का आपने त्याग कर दिया था । प्रतिदिन दो हजार "नमोत्थुणं" द्वारा प्रभु को वन्दना करते थे । आप के अक्षर बडे सुन्दर थे । आप के द्वारा लिखित १९ सूत्रों की प्रतियां आज भी विद्यमान हैं । आप साध्वाचार के प्रति सदैव सजग रहते थे । इतने क्रियापात्र तपस्वी और विद्वान साधु होते हुए भी आप के मन में अभिमान लवलेश भी नही था । संवत् १९१७ में जावद ग्राम में वैशाख शुक्ला ५ मंगलवार के दिन संथारा कर पंडित मरण पूर्वक आपका स्वर्गवास हुआ । आपही के नाम से यह संप्रदाय चली ।

पूज्य श्री शिवलालजी महाराज

पूज्य श्री हुकमी चन्दजी महाराज के स्वर्गवास के पश्चात् आपके स्थान पर पूज्य श्री शिवलाल जी महाराज आचार्य पद पर आसीन हुए । आप ने विक्रम सं. १८९१ में पू० हुकमीचन्दजी महाराज के समीप दीक्षा ग्रहण की । आपने तेतीस वर्ष तक निरन्तर एकान्तर उपवास किया । शास्त्र स्वाध्याय ही एक मात्र आप का व्यसन था । धर्म के मर्म का परमार्थ प्रतिपादन करने में तत्कालिन सन्त समाज में आप का प्रमुख स्थान था । वयोवृद्ध होने के कारण आप केवल मालवा मेवाड और मारवाड के क्षेत्रों में ही विहार कर सके थे । फिर भी आप की सम्प्रदाय में साधु समुदाय का खूब विकाश हुआ सोलह वर्ष तक आचार्य पद पर रहकर वि. सं. १९३३ में पौष शुक्ला छठ को समाधि पूर्वक देहोत्सर्ग किया

पूज्य श्री उदयसागरजी महाराज

इनका जन्म मारवाड के सुप्रसिद्ध नगर जोधपुर में ओसवाल सद्गृहस्थ सेठ नथमलजी की पतिव्रता पत्नी जीबुबाई के उदर से वि. सं. १८७६ के पौष माह में हुआ । आपका विक्रम सं १९९१ में विवाह हुआ । बाल्यावस्था में विवाह होते हुए भी आप के हृदय में पूर्वजन्म संचित तीव्रवैराग्य जागृत हुआ । माता पिता एवं पत्नी की आज्ञा नहीं मिलने के कारण आप स्वयं ही संयमी जीवन व्यतीत करने लगे ! करीब बारह वर्ष तक मुनिवेष में ही विचरते रहे । अन्त में आपके उत्कट त्याग और वैराग्य को देखकर माता पिता ने आप को दीक्षा की आज्ञा प्रदान कर दी । दीक्षा की आज्ञा मिलते ही वि. सं. १९७८ के चैत शुक्ला ११ के दिन पूज्य श्री शिवलालजी महाराज के शिष्य हर्षचन्द्रजी महा-

राज के समीप दीक्षा धारण कर ली ! आप की स्मरनशक्ति अद्भुत थी । आपने अल्प समय में संपूर्ण शास्त्रों का अध्ययन कर लिया। आप की प्रवचन प्रतिभा अतिशय प्रभावशाली थी। आप जहाँ भी जाते आप के प्रवचनों को सुनने के लिए जैन अजैन बड़ी संख्या में उपस्थित होते थे । जो कोई भी साधु साध्वी श्रावक-या श्राविका आप का एक बार ही प्रवचन श्रवण कर लेता था, वह उसी बात को दूसरों को सुनाने के लिए तैयार हो जाता था । आप ने पंजाब की तरफ भी विहार किया था और अनेक जैन अजैनों को पवित्र उपदेशामृत पान कराकर सद्धर्म में स्थित किया था । श्रोता गण आप की बाणी को मंत्र मुग्ध होकर सुनते थे । पैर में असाता वेदनीक कर्म के उदय से व्याधि होने के कारण अंतिम १७ वर्ष आप को रतलाम में विताने पडे । अंत में मुनि श्री चौथमलजी महाज को आपने आचार्य पद पर स्थापित कर सं. १९५४ के माघ शुक्ला दशमी के रोज रतलाम में समाधि पूर्वक स्वर्गवासी हुए ।

पूज्य श्री चौथमलजी महाराज

पूज्य उदयसागरजी महाराज के पट्टधर आचार्य पूज्य श्री चौथमलजी महाराज का जन्म पाली (मारवाड) में हुआ था । १९०९ चैत्र शुक्ला १२ को दीक्षा ली आप अत्यन्त क्रियापात्र साधु थे आप वि. सं १९५७ में स्वर्ग वासी हुए । आप के पट्ट पर पूज्य श्री श्री लालजी महाराज बिराजे ।

पूज्य श्री श्रीलाल जी महाराज

जिंदगी और मौत के बीच पक्का रास्ता बनाने वाले श्री श्री लालजी बचपन से ही संसारी मायाजाल के प्रति अलिप्त भावना रखते थे । यही कारण था कि विवाह होजाने पर भी पत्नी मानकुँवरबाई को आपने नजर भर कर भी नहीं देखा अपितु जब वे एक बार दो पहर को कमरे में आई तो श्री लालजी दूसरे मंजील से पास की चाँदनी पर कूद गये । माताचांदकुवर बाई पिता चुनिलालजी बम्ब तथा जन्म भूमि टोंक को छोडकर २० वर्ष की वय में संवत १९४५ में आप पूज्य श्री किसन लालजी महाराज के पास दीक्षा ग्रहण कर जैन साधु बन गये । संसारी पत्नी श्री मानकुवर बाई ने भी बाद में दीक्षा अंगीकार कर ली । बचपन में दीक्षा कीं आज्ञा न मिलने से आप को मुनिवेष धारण कर एक लम्बे समय तक विचरना पड़ा । इस प्रकार रामपुरा में आपने सं' १९४४ में चातुर्मास किया जहां शास्त्र अध्नयन के कार्य में सुश्रावक केशरींचन्दजी सुराणा का योग उपयोगी साबित हुआ । ब्रह्मचर्य पुरुषार्थ विनय आदि सद्गुणों से युक्त श्री श्रीलालजी म. ने थोडे ही समय में कई शास्त्र व थोकडे कण्ठस्थ कर लिये । ज्ञान बल के साथ ही साथ वक्तृत्वकला में निपुण आचार्य श्री निडरता के साथ व्याख्यान में श्रोताओं को जिनवाणी रूप अमृत पिलाते । चारित्र विशुद्धि पर आप अत्यधिक जोर देते थे । तथा आहार पानी लेने में उतनी ही सावधानी रखते थे । जितनी भाषा समिति में। आप कीं स्मरण शक्ति बहुत तेज थी। आप के अनेक सद्गुणो में निरहंकारवृत्ति परमसहिष्णुता, कर्तव्य पालन में सावधानी, परनिंदा परिहार आदि प्रमुख थे । तपश्चर्या आप बहुत करते थे। प्रत्येक चातुर्मास में २-३ माह की एकान्तर तपश्चर्या तथा प्रत्येक मास प्रायः तेला तथा चोला पचोला अठाई भी आपने कई की । तपश्चर्या में भी आप व्याख्यान फरमाते थे । आपने १-३ उपवास का एक थोक भी किया था। गौचरी लेने भी आप प्रायः जाते रहते थे ।

मुनिश्री श्रीलालजी महराज पहले तो बलदेवजी म० की नेश्राय में रहे पर आचार भिन्नता के कारण कोटा संप्रदाय से पूज्यश्री हुक्मीचन्दजी म. की संप्रदाय में सम्मलित हो वरदीचन्दजी महराज श्री की नेश्राय में रहे थे। ३२ वर्ष के संयमी जीवन में पूज्य श्री श्री लालजी म० ने कई उपसर्ग सहे। मालव, पंजाब मध्य प्रदेश राजस्थान सौराष्ट आदि प्रदेशों में स्थान स्थान पर भ्रमण कर लोगों को सदुपदेश दिया । आपके

व्याख्यानों से प्रभावित होकर कई देशी रियासतों के रजवाडों ने अगते पालने के पट्टे भी करदिये। जावरा में सर्प के उपसर्ग की बात आपके धैर्य की सदैव गुणगाथा गाती रहेगी।

बलुंदा से विहार कर जब आप सं० १९७७ में अषाढ वदी १४ को जेतारण पधारे वहाँ दो दिन के बाद व्याख्यान के समय एकाएक आपकी आंखों की ज्योती चली गई। वेदना बढती गई पर आचार्य श्री धैर्य और शान्ति के साथ सहन करते गये। शिष्यों को पास बुलाकर अन्तिम शब्दों में आपने शुद्ध संयम पालने के लिए तथा एकता और अनुशासन के साथ रहने की प्रेरणा दी।

अन्त में आषाढ सुदी ३ सं. १९७७ को प्रातः काल अन्त समय में शूर वीर की तरह बडे सम-भाव से धैर्य और शान्ति के साथ वेदना सहन करते हुए आलोयणा संथारा के साथ सिद्ध भगवान का स्मरण करते हुए स्वर्ग वासी हो गये। देश में सर्वत्र शोक छा गया। दूर दूर से श्रावक श्राविकाएँ आपके अन्तिम दर्शन के लिए बड़ी संख्या में जैतारण में एकत्रित हुए। अंतिम पालखी निकाली गई। कवि और लेखकों ने बडे मार्मिक शब्दों में अपनी श्रद्धांजलियां प्रेशित की। सो साधु और एक माधू वाले माधव मुनि महाराज ने भी अपनी भव्य श्रद्धांजलि में कहा था—

"जगतारण जयतारण स्वर्ग सिधायो न" आदि—आपके पट्टधर महान सन्त श्रीजवाहिर लालजी म. थे

पूज्य आचार्य श्रीजवाहर लालजी महराज

पूज्य श्री श्रीलाल जी महराज के पाटपर पूज्य श्री जवाहरलाल जी महराज आचार्य के रूप में विराजमान हुए। आप मालवा प्रान्तमें झाबुआ रियासत के अन्तर्गत थांदला शहर के निवासी थे। आपके पिता कवाड गोत्रीय सेठ श्रीजीवराजजी थे। आपकी माता का नाम नाथीबाई था। आपका जन्म सं. १९३२ के कार्तिक शुक्ला द्वितीया वि. सं. १९४७ को मुनि श्री बडे घासीलालजी महराज के पास दीक्षा धारण की। आप मगनलालजी महराज के शिष्य बने दीक्षित बनने के बाद आपने अपने गुरु श्री मगनलालजी महराज से शास्त्रों का अध्ययन आरंभ किया। आप की बुद्धि अत्यंत तीक्ष्ण थी अतः आपने अल्प समय में ही बहुत से शास्त्र याद कर लिये थे। आपकी बुद्धि, एकाग्रता और सेवा शीलता आदि गुणों को देखकर सभी साधु आप पर प्रसन्न रहते थे। मुनि श्री मगनलालजी महराज तो यह सब गुण देखकर समझ चुके थे कि आप भविष्य में समाज में सूर्य के भांति चमकेगें। अतः वे बड़ी लगन के साथ आप को पढाते और संयम में उत्तरोत्तर वृद्धि के लिए उपदेश देते रहते। आप जब पटलावद पहुचे तो उस समय आपके गुरु श्री मगनलालजी महाराज का स्वर्गवास हो गया। गुरु के स्वर्गवास से आपको अपार दुःख हुआ। गुरु विरह के कारण वे दिन रात शोक और चिंता से आपका चित्त विक्षिप्त हो गया। इस अवसर पर तपस्वी श्री मोतीलालजी महाराज ने आपकी बडी सेवा की। अंत में डांक्टरों के इलाज से उनकी मानसिक अस्वस्थता मिट गई और पूर्ववत् स्वस्थ हो गये। स्वस्थ होने के बाद आपने अपना अध्ययन शुरु कर दिया। थोडे ही समय में जैनशास्त्रो को अध्ययन करके जैनशास्त्रों के हार्द को आपने समझ लिया। साथ ही संस्कृत, प्राकृत का भी खूब अच्छा अध्ययन कर लिया। आपकी योग्यता व प्रभाव को देखकर पूज्य श्री श्रीलालजी महराज ने वि. सं. १९७५ के चैत्र कृष्णा नवमी को आपको अपने संप्रदाय का युवाचार्य बनाये। जयतारण में पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज के स्वर्गवास के बाद इस संप्रदाय के चतुर्विध संघ ने आपको आचार्य पद से विभूषित किये। आचार्य बनने के बाद अपने संघ की अभिवृद्धि में आप सतत प्रयत्न शील रहने लगे। आपने समस्त जैन अजैन संघ में अच्छीख्याति प्राप्त की। लोक मान्य तिलक, महात्मागान्धी, सरदार वल्लभभाई पटेल, पंडित मदनमोहन मालवीया और

कवि नानालालजी जैसे राष्ट्र के परम सम्माननीय व्यक्तियों ने आपके प्रवचनों का लाभ उठाया था। आपके प्रवचनों से केवल नेता और विद्वान ही आकर्षित न होते थे वरन सामान्य और ग्राम्य जनता भी आपके प्रवचनों की और आकर्षित होती थी। लगभग २३ वर्ष तक आचार्य पद कों वहन कर स. २०००; में ता. १०—७—४३ के दिन पांच बंजे चोविहार संथारा करके जवाहर रूपी भास्कर की आत्मा ने दुर्बलशरीर का बन्धन त्याग कर स्वर्गकी ओर प्रयाण कर दिया।

तपस्वी श्री मोतीलालजी महाराज

तपस्वी श्री मोतीलाल जी महाराज का जन्म सिंगोली (मेवाड) में हुआ था। आप के पिता का नाम 'उदयचन्दजी' कटारिया और माता का नाम'विरदीबाई' था। अठारह वर्ष की आयु में आपने मुनि श्री राजमलजी महाराज से दीक्षा धारण की। वि. सं १९३२ की माघ शुक्ला पंचमी के दिन आपकी दीक्षा हुई। और वि. सं. १९८३ फाल्गुन कृष्णा एकादशी के दिन जलगांव में आप स्वर्गवासी हुए। आप एक महान उच्चकोटि के तपस्वी थे। आपकी तपस्या प्रायः चलती ही रहती थी। एक से लेकर अडतालीस (सेतालीस को छोड कर) तक के थोक किये थे।

आप जैसे उच्च कोटी के तपस्वी थे वैसे ही उत्कृष्ठ सेवा भावी भी थे। आप की सेवा परायणता साधुओं के सामने एक आदर्श उपस्थित करती थी पंडितरत्न मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज का जब चित्त विक्षिप्त हो गया था तब आपने उनकी अनुकरणीय सेवा की थी। विक्षिप्त चित्त के कारण मुनि श्री जवाहरलाल जी म. ने आप को बडा कष्ट दिया था भिन्तु आपने उस समय बडी भारी सहन शीलता का परिचय दिया। पू० श्री जवाहरलाल जी महाराज जैसे सम्प्रदाय के अनेक मुनियो पर इनका महान उपकार था। पूज्य श्री घासीलालजी महाराज के आप एक महान शिक्षा गुरु और मार्गदर्शक थे।

विषयावतार—

प्रकृत के गर्भागार में से विश्व के विशाल भूमण्डल पर प्रतिदिन अनेक व्यक्ति जन्म लेते हैं ? और मरते हैं। कौन किसको जानता है ? यों ही आये कुछ दिन रहे और भोगवासना सुख दुःख की अंधेरी गलियों में ठोकरें खा खाकर एक दिन चले गए। जिनका हंसना रोना प्रथम तो अपने तक हि सीमित रहा और यदि आगे भी बढा तो आस पास परिवार के गिने चुने लोगों तक। वे विश्व के सुख दुःख में तदाकार होकर विश्वात्मा का महतीय विराट् रुप प्राप्त न कर सके। वे जन्म के लिए जन्मते हैं और मृत्यु के लिए मरते हैं न उन का जन्म संसार के लिए उपयोगी होता हैं न उनका मरण। वे अन्धकार में से आते हैं। और अन्धकार में ही विलीन हों जाते हैं। किन्तु इसके विपरित महान पुरुषों का जन्म जीवन और मरण सूर्य की तरह होता है। जों जन्म से लेकर अस्त तक संसार को अपने दिव्य प्रकाश से प्रकाशित करते हैं। यद्यपि सूर्य संसार के लिए एक महान है किन्तु आध्यात्मिक विभूतियों के जीवन उससे भी अधिक महान हैं। इन विरल विभूतियों के जीवन आकाश के सम्मान अनन्त प्रशान्त सागर से गम्भीर और हिमाचल के समान उन्नत होते हैं। उनके जीवन में दैदीप्यमान दिवाकर की दीप्ति और शरद्पूर्णिमा के चन्द्रमा की निर्मल क्रान्ति होती है। भौतिकवाद के चक्कर में फंसी हुई दुनियां के अंधकारमय वातावरण में इन विरल विभूतियों के जीवन नीले आसमान में सितारों की तरह चमका करते हैं।

ये विभूतियां विश्व के लिए वरदान होती हैं। पाप के भयंकर दावानल से जलती हुई दुनियां को शान्ति प्रदान करने के लिए इनका अवनि पर जन्म होता है। सन्तों के रूप में प्रकृति संसार को सजीव और सर्वोतम वरदान देती है। वस्तुतः सन्त शान्ति के देव दूत हैं। वे दुनियां के खून से लथ पथ उजडे और सुनसान मरुस्थल में शांति की निर्मल मंदाकिनी प्रवाहित करनेवाले अक्षयस्त्रोत हैं। वे विनाश की ओर तेजीसे भागने वाली दुनियां को सावधान करनेवाले लाल प्रकाश स्तंभ हैं। दुनियां के विशाल

प्रांगन में सुख शान्ति के संचार का श्रेय सन्तों को हि हैं। सन्तों का परम पावन चरित्र सुख का मार्ग प्रदर्शन कराने वाला अनूठा आकाश दीप हैं उनकी जगमगाती हुई जीवन ज्योति जगत को नव जीवन प्रदान करती है। जब तक दुनियाँ इन सन्तों के बताए हुए मार्ग पर चलती हैं तब तक सुख ओर शांति का साम्राज्य अविच्छिन्न रूप से बना रहता है। जब तक संसार दानवीय चंगुल में फसकर संतो और उनके बताए हुए मार्ग का उपहास और अवहेलना करती है। तब तक दुःख का दानव उसकी छाती पर चढ कर अट्टहास करता रहता है। दुनियाँ कराहती है शांति पाने के लिए तडफडाती है और दुःख से मुक्ति पाने के लिए तिलमिलाती है। ऐसी अवस्था से संत ही दुनियां को उबारते हैं। वे स्वयं कष्टों को झेलकर दुनियां को दानवीय चंगुल से मुक्त करते हैं। वे अपने चरित्र और उपदेश के द्वारा सोई हुई मानवता को पुनः जागृत करते हैं। वे मानव समाज में जागृति का पवन फूंक कर प्रबल प्रेरणा प्रदान करते हैं। ऐसे परोपकारी सन्तों को पाकर दुनिया धन्य हो जाती है। ऐसे आध्यात्मिक महापुरुषों के जीवन में एसे जीवनतत्त्व होते हैं जिनके द्वारा अगणित प्राणी नवीन चेतना और नवस्फुरण प्राप्त करते हैं। जिस प्रकार दीप से अगणित दीप प्रकाशि हो सकते हैं। इसी तरह एक महापुरुष के जीवन तत्त्व से अगणित महापुरुष बन सकते हैं।

श्रध्देय पूज्य आचार्य श्री घासीलालजी महाराज आध्यात्म-साधना गगन के एक एसे जाज्वल्यमान तेजस्वी नक्षत्र के समान थे। जो तप संयम त्याग को दिव्य प्रभा लेकर जैन जगत में अवतीर्ण हुए और अपने प्रखर प्रकाश से जैन समाज को चमत्कृत और प्रकाशित कर रहे थे। इन्होंने जिस दिन से तप त्यागमय साधना का जीवन अपनाया जिस दिन से साधुवृत्ति स्वीकार की उस दिन से लेकर आज २०२९ के पोष कृष्णा आमावश्या तक उसे उसी शान से निभाया। सिंह वृत्ति से साधुत्व लियां और सिंह वृत्ति से ही पालन किया। इनका मुनि जीवन स्वच्छ निर्मल और परम उज्ज्वल था। इनकी वाणी मधुर एवं अति प्रिय थी। इन्होंने स्वयं ज्ञान की साधना की और दूसरों को भी खुलकर ज्ञान का दान दिया। इन महापुरुष की दृष्टि इतनी उदार और व्यापक थी कि इनके लिए कोई पर ही नहीं बलके सबको समान दृष्टि से देखना यह इनका सहज स्वाभाविक महान् गुण था। धर्म, दर्शन; व्याकरण, कोष; काव्य न्याय और ज्योतिष–शास्त्र के आप प्रकाण्ड पण्डित थे। संस्कृत प्राकृत, अपभ्रंश आदि प्राचीन भाषाओं के एवं हिन्दी मराठी, गुजराती अरबी फारसी उर्दू आदि सोलह भाषाओं के ज्ञाता थे। शास्त्रार्थ में आप परम कुशल थे आप की वक्तृत्व शैली मन मुग्ध कारी थी। सद्भाव, सदाचार, स्नेह, सहयोग शुद्धात्मवाद और सहिष्णुता का महत्व सबको समझाने और इन्हीं सद्गुणों को क्रियान्वित करने कराने में ही आपने अपना पवित्र जीवन व्यतित किया। अन्ध विश्वास अन्ध परम्परा, देवताओं के नाम होनेवाली पशुहत्या जातिवाद स्वार्थान्धता, उच्च-नीच विषयक विषमतादि दुर्गुणों का आप ने बडे वेग में युक्ति युक्त खण्डन किया और भद्र भावनाओं का प्रचार प्रसार कर जनता में जीवन ज्योति जागृत की।

महापुरुषों के जीवन सरीता के उस उद्गम स्रोत के समान होता हे जो आरम्भ में तो लघु होता है किन्तु आगे बढकर अन्य जल स्रोतों का सहयोग पाकर विशाल ओर विराट हो जाता हैं इस प्रकार महापुरुष का जीवन भी प्रारंभ में लघु था। किन्तु ज्ञान चरित्र के विशाल स्रोतों का सहयोग पाकर विशाल और विशालतर बन गया। पाठक स्वयं इन महापुरुष का जीवन चरित्र पढकर यह अनुभव कर लेंगे कि इन्होंने अनेक संघर्षों के बावजूद भी अपने जीवन को किस प्रकार विशाल बनाया है विकट परिस्थिति में भी ये अपने स्वीकृति पथ पर किस प्रकार अविचल रहे हैं। अपनी दीर्घ साधना से जो कुछ भी इन्होंने

प्राप्त किया है। उसे जनकल्याण के लिए अनेकों कष्ट सहकर भारत के विभिन्न प्रान्तों में विहार करके प्रसुप्त चेतना को किस प्रकार जाग्रत किया और समाज के दूषणों को दूर करके उसे पावन और पवित्र बनाया।

यद्यपि महापुरुषों का जीवन-काव्य व्यापक सत्य से इस प्रकार अनुप्राणित होता है कि उसकी गरिमा को शब्दों की सीमा में नहीं बांधा जा सकता तथापि गुरु भक्ति वश यह प्रयास किया जा रहा हैं ताकि उनके सुरम्य जीवन के अनुभवों से हम लाभान्वित हो सकें प्रेरणा लेकर आत्मकल्याण का मार्ग प्रशस्त बनासकें। उनके जीवन का एक पवित्र क्षण भी यदि हमारे जीवन में साकार हो जाय तो हम अपने को धन्य मानेंगे। इसी महती भावना से उत्प्रेरित होकर गुरु गुण संकीर्तन का वह प्राप्त अवसर मै हाथ से नहीं जाने देना चाहता। महापुरुषों के गुण स्तवन से आत्मा निर्मल पथ गामिनी बनती है। आत्मा में गुणो का प्रकाश फैलता है यह एक सनातन सत्य है।

जन्मभूमि (राजस्थान)

राजस्थान सांस्कृतिक दृष्टि से एक महान आदर्श प्रान्त रहा है। भारतीय सांस्कृति और सभ्यता के मुख को उज्ज्वल करनेवाली प्रचूर विभूतियों से यह भूखण्ड सदैव परिपूर्ण रहा है। यहां की समाजमूलक आध्यात्मिक क्रान्तियों ने समय-समय पर देशव्यापक जन मानस को प्रभावित किया है। सन्तों की समन्वयात्मक अन्तर्मुखी साधना से राष्ट्र का नैतिक स्तर समुन्नत रहा है। उनके आदर्श उपदेश और संयम प्रवाह ने जो उत्कर्ष स्थापित किया उससे शताब्दियों तक मानवता अनुप्राणित होती रहेगी। सन्तों का औपदेशिक साहित्य आज प्राचीन होकर भी नव्य और भावनाओं से परिपूरित है। समीचीन तथ्यों का नूतन मूल्यांकन भावी पीढी को प्रशान्त बना सकता है। राजस्थान की भूमि की विशेषता है कि उसने एक ओर अजेय योद्धाओं को जन्म दिया तो दूसरी ओर ऐसे सन्त भी अवतरित किये जिनकी संयमिक गरिमा आज भी स्वर्णिमपथका सफल प्रदर्शन करने में सक्षम है जिनकी तपश्चर्या की ध्वनि मुमुक्षु साधक को कर्णगोचर हो रही हैं। उन की प्रकाश किरणें और चिन्मय चेतना एसा स्फुलिंग है जो सहस्राब्दी तक अमरत्व को लिये हुए हैं।

मेवाड की गौरव गाथा—

राजस्थान का एक भाग मेदपाट (मेवाड) के नाम से प्रसिद्ध है। इसका स्वर्णिम अतीत अत्यन्त गौरवास्पद रहा है। वीरो की कीर्ती गाथा से यहां की भूमि परिप्लावित होती रही है। नारी जाति का उच्चतम आदर्श यहां की एक एसी विशेषता थी जो अन्यत्र दुष्प्राप्य है। मेवाड भूमी का इतिहास वीरों की भव्य परम्परा का प्रकाश पुञ्ज हैं जिनकी आभा ने अंतर्मुखी जीवन को भी प्रकाशित किया है। यह बिना किसी संकोच के कहा जा सकता है कि मेवाड की संस्कृति के निर्माण और विकाश में जैनों का योग सबसे अधिक और उल्लेखनीय रहा हैं। प्राचीन इतिहास इस बात का साक्षी हैं कि एक समय था जबकि सम्पूर्ण पश्चिमी भारत को मेवाडवासी जैनों ने ही संस्कृत के एक सुदृढ सूत्र में बांध रखा था। यहां का जन जीवन आज भी जैन. संस्कृति के मूल्यवान तत्त्व से प्रभावित है। पश्चात्वर्ती मुनि समाज के सतत विहार और उपदेश ने और भी जन हृदय को संस्कृति की ज्योति से प्रकाशित किया है। अपरिग्रहि उग्र विहारी जैंन मुनियों का सम्बन्ध झोपडों में रहने वाले साधारण मनुष्यों से लगाकर राजमहलों में निवास करने वाले शासक वर्ग तक व्यापक था। उनकी साधना सिक्त वाणी सभी को समान रूप से मार्ग दर्शन कराती थी। उनका ओज और आध्यात्मिक इतना अनुकरणीय था कि अहिंसा का आलोक स्वतः स्फुरित हुआ करता था। मेवाड़ मेवाड ही क्यों ? सम्पूर्ण भारत को ही लें, जहां भी जैन मुनियों का सतत

विहार होता रहा है वहाँ अहिंसा के मौलिक तत्त्व फेले है । स्वभावतः जन हृदय में सुकुमार भावनाओं ने घर बनाया है । सौम्य समत्व और नैतिकता ने अपनी निष्ठा द्वारा धर्म को आत्मा का वास्तविक अंग मान लिया हैं । यह निश्चित है कि जब जब देश का नैतिक धरातल गिरा है और अकर्मण्यता का प्रभाव बढा है, तब तब जैन सन्तों ने अपनी अनुभव युक्त वाणी से देश को ऊपर उठाया है और नैतिक चरित्र की सृष्टि कर जनोन्नयन का पथ उज्जवल किया है । यह उनके संयम मय जीवन का ही प्रबल प्रताप हैं ।

जैन संस्कृति का मेवाड पर गहरा असर प्राचीन काल से लेकर आज तक अक्षुण्ण रूप से चला आ रहा है । जब हम राजस्थान के इतिहास का अध्ययन करते हैं तो यह स्पस्ट झलक उठता है कि राजस्थान के शासकों के महान सहयोंगी और परामर्शदाता जैंन जाति के महापुरूप ही रहे हैं । कर्नल जेम्सटाड ने लिखा हैं कि मेवाड के राणा वंश गिल्हौतवंश के आदि पुरूष जैन धर्म के अनुयायि थे । आज भी इस वंश में जैंन धर्म को बहुत उंचा सन्मान प्राप्त है । कारण जैन धर्म राजा प्रजा का परम रक्षक हैं।

राजस्थान के निर्माण में जैनजाति का अग्रगण्य सहयोग रहा हैं । आरंभ से ही इस दूरदर्शी राज नीतिज्ञ वीर योद्धा देश भक्त महान साहित्यकारों त्यागी मुनियों के द्वारा इसके शासन तन्त्र के संचालन में एवं समाज के नैतिक पुनरुस्थान में महत्व पूर्ण भाग लिया है । भले ही राजस्थान में जैन जाति का कोई पुरुष राजा न हुआ हो परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि इसने कई राजाओं को बना दिया है । राजस्थान में जैन जाति राजा के रूप में न रहकर भी राजनिर्माता के रुप में महत्व प्राप्त करती आई है यदि एक दृष्टि से यह देखा जाय कि जैन वीरों ने राजस्थान का निर्माण और संरक्षण किया हैं तो कोई भी अत्युक्ति नहीं है !

उदयपुर, जोधपुर, वीकानेर सिरोही किशनगढ; आदि रयासतों के इतिहास जेंनों द्वारा प्रदर्शित दूर दर्शिता राजनीतिज्ञता और वीरता से भरी हुई गाथाओं से ओत प्रोत है। इन नररत्नों ने एसे विकट समय में जबकि युद्ध और अशांति का दौर दौरा था क्षण क्षण में बडे बडे सम्राज्यो ओर सम्राटों का परिवर्तन होता था, राजाओं के अस्तित्व का कोई ठिकाना नहीं था । कूट राजनीति के पांसे फैके जाते थे और जब पुस्तक के पन्नो की तरह राज्य बदलते जाते थे—इन राज्यों की नैय्या को कुशलता पूर्वक पार पहुंचाया, इस जाति के वीरों ने अपने देश के प्रति जिस भक्ति का परिचय दिया वह इतिहास के पृष्ठों पर स्वर्णाक्षर से अंकित है । अपने देश और स्वामी के प्रति वफादार रहने वाले और उनके लिए सर्वस्व अर्पण करने वाले व्यक्तियों की नामावली में सर्व प्रथम नाम 'भामाशाह' का आता हैं । इस जैन रत्न ने महाराणा प्रताप का एसे समय में जब कि वे निराश होकर जन्मभूमि मेवाड को छोड देने की तैयारी में थे । अपनी समस्त सम्पति को गाडियों में भरकर वे मेवाडाधीश महाराना प्रताप के समीप पहुचे और प्रणाम कर बोले—

चित छोडो संतापलिछमी अर्पण आपरे । पतरहसी परताप पगपूज्या प्रथीनाथरे ॥

है ! मेवाड के रत्न ! सिसोदियाकुलदिवाकर यह अथाघ लक्ष्मी किस काम आयगी । आप मातृभूमि को छोड़कर न जायें। मेरी सारी सम्पति आप के चरणों में समर्पित है । वीर महाराणा प्रताप दानवीर भामाशाह के इस महान् त्याग से गद् गद् हो उठे । वे कुछ भी नहीं बोल सके महाराणा का क्षात्र तेज पुनः चमक उठा । उन्होंने जैनमंत्री की विपुल सम्पति की सहायता से मेवाड के गौरव को रक्षा की । इस तरह की अनेक घटनाए इतिहास के पृष्ठों पर उल्लिखित हैं जिनसे प्रतीत होता है कि राजस्थान के

भव्य इतिहास में जैन जाति का कितना बडा महत्व हैं । इनके अतिरिक्त मेहताजालसी वीरआशाशाह संघवी दयालदास मेहताअगरचन्थजी सोमचन्दजी गान्धी सेनापति मेहता मालदासजी जोरावरमलजी बाफना मेहतागोकुलचन्दजी श्रीमान केशरीसिंहजीकोठारी छगनलालजीकोठारी मेहतापन्नालालजी फतेलालजी भोपाल सिंहजीजी जगन्नाथसिंहजो कोठारीबलवन्तसिंहजी नगर सेठ श्री नन्दलालजी बाफना आदि बडे राजनीतिज्ञ वीर और दूरदर्शी महामुत्सदि जैनों ने अपने कुशल संचालन में मेवाड राज्य को खूब समृद्ध किया।

इस तरह मेवाड राज्य के इतिहास में जैन वीरों के द्वारा किये गये राजनैतिक और सामाजिक आर्थिक और पारमार्थिक कृत्यों के द्वारा यह प्रमाणित हो जाता हैं कि जैनवीरों ने इस राज्य के निर्माण व रक्षण और समृद्धि में महत्वपूर्ण हिस्सा लिया हैं । इन वीरों ने जिस प्रकार अपनी बुद्धि का उपयोग देश के लिए किया उसी तरह वीर योद्धाओं की तरह ये रणमैदान में भी उतरे और विजय प्राप्त की। इन वीरों ने यह सिद्ध कर दिया कि जैन जैसे अपनी बुद्धि बल से राज्य का संचालन कर सकते हैं । वैसे रणमैदान में भी वीरता पूर्वक झूझ भी सकते हैं ।

एक और मेवाड–वीर भूमि हैं तो दूसरी ओर त्याग भूमि भी है । देश की रक्षा के लिए यहाँ के वीरों ने अपने आप तो होम दिया इसी प्रकार मानवता के नाम पर पनपनेवाली अमानवीय वृत्ति के विरुद्ध झूझनेवाले अनेक त्यागमूर्ति संन्त भी इसी मिट्टी में उत्पन्न हुए जिनकी साधना आज भी हमें मार्ग दर्शन कराती है सन्त संस्कृति के प्रभाव से समस्त मेवाडप्रदेश प्रभावित है । इसके गाँव गाँव में सन्त जीवन का सौरभ परिव्यास हैं । मेवाड प्रान्त के सन्तों की गौरवगाथा और उनकीं कीर्ति कथा सुनकर आज भी किस भद्र भावनावाले व्यक्ति का मस्तक श्रद्धानत नहीं हो जाता है ? यह भूमि संतो की भूमि है। सन्त भक्तों की भूमि है । इस भूमि ने अनेक दिव्य भव्य एवं तप त्याग की प्रत्यक्ष मूर्ति सन्तजनों को जन्म देकर अपनी गरिमा में अभिवृद्धि की हैं । मेवाड के सन्तों ने केवल जनता को धार्मिक बनाने का ही प्रयत्न नहीं किया बल्कि राजस्थानीभाषा, ज्ञान, साहित्य, चित्रकला, स्थापत्य की अभिवृद्धि में अपना महत्त्व पूर्ण योगदान भी दिया है ।

जैनधर्म का प्राचीन स्थलः—

मेवाड यह जैन धर्म का एक प्राचीनतम केन्द्र रहा हैं । जैन धर्म के अन्तिम तीर्थकर भगवान श्री महावीर स्वामी के निर्वाण के ८४ वर्ष के बाद ही मेवाड में मध्यमिका नगरी में जैन धर्म का एक महान केन्द्र होने की सूचना देनेवाला शिलालेख अजमेर से २६ मील दक्षिण पूर्व में स्थित वरली गाँव में प्राप्त हुआ हैं ।

मध्यमिका नगरी के खण्डहर आज भी मेवाड चित्तोडगढ़ से आठ मील उत्तर में बेडच नदी के किनारे नगरी नामक गांव और उसके आस पास फैले हुए हैं । वहाँ से मिलनेवाले कई तांबे के सिक्कों पर विक्रम संवत के पूर्व की तीसरी शताब्दी के आसपास की ब्राह्मी लिपि में "मज्झिमिकाय शिविजनपदस्य" लेख है । इससे अनुमान होता है कि मेद–पाट–मेवाड़ का प्राचीन नाम 'शिवि' जनपद था । इस प्रदेश में 'मेव' या 'मेर' जाति का ही अधिक निवास होने से और उनका ही इस प्रदेश पर अनुशासन होंने से यह देश मेद–पाठ मेवाड के नाम से प्रसिद्ध हुआ इस प्रदेश का दूसरा प्राचीन नाम 'प्राग्वाट' भी मिलता हैं ।

संस्कृत शिला लेखों में तथा पुस्तकों में पोरवाड महाजनों के लिए "प्राग्वाट" नाम का प्रयोग मिलता हैं और वे लोग अपना निवास मेवाड के 'पुर' कस्बे से बतलाते हैं जिससे संभव है कि प्राग्वाट देश के नाम पर से वे अपने को प्राग्वाटवंशी कहते रहें हो ।

मेवाड का भौगोलिक परिचयः—

इस देश कि सीमा पहले अलग अलग ढंग से गिनी जाती थीं। पूर्व में भेलसा और चंदेरी दक्षिण में रेवाकांठा और महिकांठा पश्चिम में पालन पुर और मण्डोवर, उत्तर में ब्रयाना, पूर्वोत्तर में रणथंभोर और ग्वालियर तक। ये सिमाएँ देशकाल और परिस्थितिं के बदलते समय चक्रके साथ बदली पर मेवाडी जीवन की छाप आज भी उन क्षेत्रों पर है! राजस्थान का कोई भी भूभाग हो, मारवाड ढूंढाड, हाडौत, बागड, या मेवात ये सभी देश मेवाडी मिट्टी से प्रभावित हैं इस देश के प्रहरी अर्वली (आडावला) पहाड की श्रेणियाँ अजमेर और मेरवाडे में होती हुई दिवेर के निकट मेवाड में प्रवेश करती है। ये पर्वतश्रेणियां राज्य के वायव्य कोन से लगाकर सारे पश्चिमी तथा दक्षिणी हिस्से में फैल गई है। उत्तरमें खारी नदी से लगाकर चित्तौड से कुछ दक्षिण तक और चित्तोड से देबारी तक समान भूमि है। दुसरी पर्वत श्रेणी राज्य के ईशान कोण में देवली के पास से शुरू होकर भीलवाडे तक चली गई। तीसरी पर्वतश्रेणी देवली के पाससे निकलकर राज्य के पूर्वी हिस्से में जहाजपुर मांडलगढ बिजोल्या भैसरोडगढ़ और मेनाल आदि प्रदेश में होती हुई चितोड से दक्षिण तक जा पहुँची है। देबारी से लगाकर राज्य का सारा पश्चिमी हिस्सा और दक्षिणी हिस्सा पहाडियों से भरा हुआ है मेवाड की पहाडियां बहुधा घने जंगलों से भरी हुई हैं। यहां जल की बहुतायत है।

इस राज्य के पूर्वी विभाग में उपजाऊ समतल प्रदेश है परन्तु दक्षिणी और पश्चिमी विभाग में घने जंगलों से भरी हुई रमणीय पहाडियां आगई है। जिनके बीच में जगह जगह खेती के योग्य भूमि भी है। दक्षिण में डूंगरपुर की सीमा से लगाकर पश्चिम में सिरोही की सीमातक सारा प्रदेश पहाडीयों होने से 'मगरा कहलाता हैं। जहाँ अधिकतर भील आदि जंगली लोगों की बस्ती है। पर्वत श्रेणी में होकर निक. लनेवाले तंग रास्तों को यहाँ नाल कहते हैं। इस राज्य में सालभर बहने वाली एक भी नदी नही हैं। मेवाड झीलों का प्रदेश है। जयसमुद्र, राजसमुद्र, उदयसागर, पिछोला सरुपसागर भोपालसागर, फते सागर आदि कई छोटी बडी झीलें इस प्रदेश के सौन्दर्य की अभिवृद्धि करती हैं। फतहसागर बाँधपर आनेवाली घुमांवदार सडक की एक तरफ सघन वृक्षों से अच्छादित सुन्दर पहाडियां दूसरी ओर दूर तक सरोवर का जल और संध्या के समय अस्तंगत सूर्य की रक्त किरणों का जल में प्रतिबिम्ब आदि दृश्य दर्शक के हृदय में आनन्द की लहर उत्पन्न करते हैं।

वंश परिचयः—

यही मेवाड हमारे चरितनायकजी की जन्म भूमि है। इसी भूमि के अन्तर्गत वैष्णवों का प्रसिद्ध-तीर्थधाम कांकरोली के समीप. राजसमुद्र के उत्तर में आठमील पर 'बनौल' नामका सुन्दर एक छोटा सा गांव है यह गाँव छोटी-छोटी पहाडियों के बीच बसा हुआ हैं। यहाँ की भूमि उपजाऊ कम और कंकरीली अधिक है। इस गाँव के समीप गढी नामका प्राचीन स्थल है। यहाँ जैनों के कुछ घर है किन्तु अधिक तर बस्ती वैष्णवों की है। यहाँ 'वैरागी साधु' नामकी जाति के चार पाँच घर थे। ये लोग मन्दिर पूजा व खेती का काम करते हैं। 'वैरागी साधु' जाति का केवल नाम है. किन्तु ये साधु नही गृहस्थ ही है ये 'वैरागीसाधु' पहले ब्राह्मण जाति में थे।

'बनोल' गाँव में 'वैरागीसाधु' जाति के घर वि. सं. १४४७ में बसे हैं। यहाँ आकर बसनेवालों में सर्वप्रथम धर्मदासजी का नाम आता है। ये पहले चित्तोड रहते थे। और सनावत जाति के ब्राह्मण थे। धर्मदासजी नागासंप्रदाय में दिक्षित हुए और महाराणा रायमलजी के शासन काल में यहाँ बनोल

आकर बस गये । तभी इनका परिचय वैरागीसाधु के रूप में प्रत्यक्ष आया । धर्मदासजी के वंश में ही चरितनायकजी का जन्म हुआ था । इनका वंश परिचय इस प्रकार है-*

धर्मदासजी

|

बालकदासजी

|

प्रेमदासजी. जुगलदासजी

|

मोहनदासजी किसनदासजी. रूपदासजी.

|

पूज्य श्री की वंश परम्परा अन्य रूप से प्राप्य है... ...

(पितामह) दादा-श्री परसरामजी । दादी-श्रीमती चतुरबाई । पिता-कनीरामजी । माता-नन्दुबाई

श्रीमान् कनीरामजी के तीन पुत्र और एक पुत्री थी । सबसे बडे पुत्र रतनदासजी थे उसके बाद द्वितीय पुत्र हमारे चरितनायकजी श्री घासीदासजी थे । तृतीय पुत्र का नाम धनदासजी था । धनदासजी का वि० सं. १९५६ के दुष्काल में स्वर्गवास हो गया । माता, पिता एवं बडे भ्राता श्री रतनदासजी का भी उसी साल में स्वर्गवास हो गया । पूज्य श्री की बहन का नाम वरजूबाई था घासीदासजी को सभी लोग प्यार से गोव्या के उपनाम से बोलते थे । वरजूबाई के पति का नाम खीमदासजी था । खीमदासजी के दो पुत्र थे । एक का नाम जेतरामजी और दूसरे का नाम रूपदासजी था । जेतरामजी के ६ पुत्र हुए । उनमें सब से बडे लड़के का नाम गणेशदासजी हैं । इनकी आयु इस समय ५० वर्ष की है । ये मेवाड के अन्तर्गत कोयला पो० उमरवास में रहते हैं । रूपदासजी सन्यासी हुए । संन्यासी बनने के बाद इनका नाम अवधविहारी पडा । अवधविहारीजी अभी मौजूद हैं ।

हरिदासजी भगवानदासजी जीवनदासजी, नन्दरामजी परसरामजी (धर्म पत्नी का नाम-चतुरबाई) भैरुदासजी-प्रभुदत्तजी,

(कनीरामजी) श्री प्रभुदत्तजी का जन्म वि. सं. १९२३ में हुआ था । इनकी देवमुरारी गोत थी । श्री प्रभुदत्तजी का विवाह चार भुजाजी के पास रूपजी गांव के अग्रावत गोत में विमलाबाई (नन्दूबाई) के साथ हुआ था । इनके पास खेती कुआं आदि जमीन जायदात अच्छी थी । ये सभी तरह से सुखी थे । ये रामानुज संप्रदाय को मानने वाले थे । अपनी संप्रदाय के नियमानुसार सेवा पूजा में आप सतत निरत रहते थे । गांव में आपका सर्वत्र मान था । हृदय के अत्यन्त सरल थे । दूसरों की भलाई के लिए सदैव तत्पर रहते थे । आप न्याय-नीति पूर्वक अर्थोपार्जन करते थे । नीति पूर्ण व्यवहार एवं प्रामाणिकता के कारण जन साधारण में आपकी अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त थी । आपकी पत्नी का नाम था विमलाबाई (नन्दूबाई) विमलाबाई अपने नाम के अनुरूप ही विमल हृदया थी । पवित्र आचार विचार तथा पातिव्रत्य धर्म की वह मंगलमूर्ति थी । उसका जीवन एकांगी नहीं था । धार्मिकज्ञान तथा चारित्र के विकास में यह जितनी उची उठी थी उतनी ही सांसारिक व्यवहार को निभाहने में रुचि लेती थी । यहां तक की वह अनेक वार अपने पतिकी सांसारिक कठिन समस्याओ को अपनी राय देकर सुलझा देतीं थी । इस प्रकार अपने पति के अन्तर्मुख और बाह्यजीवन के साथ पूर्ण रूप से एकाकार होकर विमलाबाई ने अर्द्धांगिनी शब्द को सार्थक किया था ।

पति के अनुरूप पत्नी और पत्नी के अनुरूप पति का प्राप्त हो जाना गार्हस्थिक दृष्टि से बड़े सौभाग्य की बात समझी जाती हैं । वास्तव में पुण्य के योग से ही ऐसी जोडी मिलती हैं । फिर इस अनुरूपता में यदि धार्मिकता कि सुन्दर तक का समावेश हो तब तो कहना ही क्या हैं

दम्पति की धर्मनिष्ठा समग्र परिवार में धर्म की भावना जाग्रत कर देती है । पति-पत्नी का समान स्वभाव, समान शील, समानधर्म, समान रुचि और समानवय होने पर गृहस्थी सुखमय बन जाती है । इस दम्पति का गृहस्थ जीवन भी आनन्द मय था सुख पूर्वक अपनी जीवन नौका को अग्रसर कर रहे थे । और ऐसा क्यों न होता ? प्रभुदत्तजी और विमलाबाई के स्वभाव में बड़ी ही सात्विकता और सहिष्णुता थी । दोनों एक दूसरे से बडे ही संतुष्ट थे । दोनों का जीवन बड़ा संयत था । कम से कम आवश्यकता उनके जीवन का लक्ष्य था यद्यपि उन्हें सभी प्रकार को सुख सामग्री उपलब्ध थी फिर भी उसमें उनकी आसक्ति नहीं थी । दोनों का जीवन सादगी पूर्ण था । पत्नी कभी अपनी जल-जलूल फरमाईशें करके पति को परेशान नहीं करती थी । और पति अपनी पत्नी की बात की कभी उपेक्षा नहीं करते थे । इस प्रकार इनकी छोटी-सी गृहस्थी आदर्श गृहस्थी थी । जहां धर्मकी प्रधानता होती है, वहां अशान्ति को स्थान नहीं मिलता और सब प्रकार आनन्द छाया रहता है । वह तथ्य प्रभुदत्तजी और विमलाबाई की गृहस्थी को देखकर अनायास ही समझा जा सकता था ।

श्रीमती विमलाबाई की एक बड़ी विशेषता यह थी कि उसने अपने पति के सुख को ही अपना सुख समझ लिया था । वह पति की सुख-सुविधा में ही अपनी सुख-सुविधा मानती और अनुभव करती थी । इसी प्रकार प्रभुदत्तजी भी विमलाबाई के सुख को अपना सुख समझते थे । दोनों मानों एकाकार हो गये थे इस प्रकार पति और पत्नी सांसारिक सुख का आस्वादन करते हुए आनन्द और प्रसन्नता के साथ समय यापन कर रहे थे ।

भारत वर्ष में दाम्पत्य जीवन की कल्पना बहुत उच्च श्रेणी की है । यहां के दाम्पत्य सम्बन्ध में न अधिकारों की छीना-झपटी है, न हकों की मांग है, न एक दूसरे से स्वार्थ साधनों की मनोकामना है । यहां त्याग की प्रधानता है । पति और पत्नी दोनों एक दूसरे के सामने अपने आपको निछावर कर देते हैं । दोनों एक दूसरे के परम सहायक बनते हैं । दोनों दोनों के आत्मीय बन जाते हैं । इस उदात्त भावना में कितना सुख है ! कितना माधुर्य है ! यह तो वही समझता है जिन्होंने इस प्रकार का जीवन व्यतीत किया हो दाम्पत्य सुख की दृष्टि से ही ऐसा जीवन प्रशस्त नहीं हैं, किन्तु जीवन के वास्तविक विकास की दृष्टि से भी वह अत्यन्त प्रशस्त है । इस पद्धति से व्यक्ति का 'अहम्' व्यापकता की ओर बढता हैं । धीरे धीरे वह दूसरों के सुख-दुःख को भी अपना सुख-दुःख समझने लगता हैं । उसमें 'सर्वभूतात्मभाव' का औदार्य प्रकट होने लगता हैं । इस प्रकार मनुष्य का पारिवारिक जीवन, प्राणीमात्र के प्रति सहानुभूति और समवेदना के सीखने का साधन बन जाता हैं । जो विचारशील इस प्रकार का जीवन व्यतीत करते है, वे अपने घर को ही विश्वप्रेम की पाठशाला बना लेते हैं । उनका जीवन 'सत्वेषुमैत्रीम्' अर्थात जीव मात्र के प्रति मैत्री भावना का कारण बन जाने से धन्य हो जाता हैं ।

कई लोग आज कल विभक्त कुटुम्ब प्रथा का समर्थन करते हैं । उनका कहना हैं कि बाप बेटे का और भाई-भाई का सम्मिलित रूप से एक परिवार में रहना अच्छा नहीं । सबको अलग-अलग होकर ही रहना चाहिए । किन्तु इस विचार में बडी संकीर्णता, स्वार्थ परायणता, और तुच्छता भरी हैं । जो व्यक्ति अपने पिता को अपना नहीं समझसकता, भाई को अपना नहीं समझसकता, उनके सुख-दुःख को

अपना सुख-दुःख नहीं समझता, जो परिवारिक जनो के प्रति भी आत्मीयता की भावनों नहीं रख सकता और अपने आनन्द के लिए उसने अपने आपको अलग कर देता है वह अपने पडौसी के प्रति सहानुभूति कैसे रख सकेगा ? वह जगत के प्राणीमात्र को अपना किस प्रकार समझेगा ? उसमें विश्वप्रेम की ज्योति कैसे जगेगी ? जहां स्वार्थ का घोर अन्धकार व्याप्त है, वहां उदारता का आलोक कैसे चमकेगा ? पश्चिम की स्वार्थपूर्ण जीवन नीति हमारे देश की उदारता जीवन नीति की तुलना है। विभक्त परिवार की विचार धारा पश्चिम की देन हैं। इससे हमारे देश की संस्कृति को आघात लगा है। हमारे यहां की जीवन नीति हमें उदारता और व्यापकता की ओर अग्रसर करने वाली है, जब कि पश्चिम की नीति मनुष्य को स्वार्थी और संकीर्ण बनाती हैं।

सम्मिलित एवं संगठित परिवार बडी आनन्द दायक वस्तु है। अतएव मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपने परिवार में सदा हिल मिल कह रहे। परिवार के जनों को अपना समझे। उनके सुख को अपना सुख और उनके दुःख को अपना दुःख समझे। निष्पक्ष भाव से सब के साथ वर्ताव करे पक्षपात की दुष्ट भावना चित्त में न आने दे। जिस परिवार के सभी व्यक्ति ऐसी ऊँची और उदार भावना रक्खेंगे वह परिवार सभी दृष्टियों से उत्तम बन जायेगा। ऐसे परिवार में पले बालक भी उदार होंगे। और धर्म की वृद्धि भी होगी।

विमलाबाई को यह उदात्त शिक्षा मायके में ही मिली थी। अतएव उसने अपने व्यक्तित्व को सिकोड कर अपने तक ही सीमित नहीं रक्खा था अपने पति आदि को भी उसने अपने 'अहम' की परीधि में समाविष्ट कर लिया था। यह तो संभव नहीं हैं किं दो व्यक्तियों के विचारों में कभी भिन्नता न हो कभी न कभी मतभेद तो हो ही जाता है। ऐसे अवसरों पर दोनों को सहनशीलता से काम लेना चाहिए प्रथम तो दोनों मिलकर प्रेम से मतभेद कों मिटा लें। नहीं मिटता हो तो कोई अपना विचार किसी पर जबर दस्ती थोपने का प्रयास नकरे। दोनों अपना अपना विचार रखे। कोई हठ न करे। विमलाबाई और प्रभुदत्तजी दोनों इस तथ्य को समझते थे। अतएव उनके आपसी सम्बन्ध में कभी मलीनता नहीं आने पाई। हृदय में कभी कटुता नहीं आई। सचमुच ऐसे दम्पति सराहनीय हैं वे देश और जाति के लिए आदर्श रूप हैं।

शुभ जन्मः—

नारी में मां बनने की सर्वदा भूख होती है। उसके जीवन की सबसे बड़ी साध (भावना) होती है सन्तान प्राप्ति। सन्तान का अभाव उसे प्रतिक्षण खलता है। पुत्र का हँसता मुखड़ा उसके सामने न हो तो उसका हृदय चित्कार कर उठता है। पुत्र का स्नेह पाने को वह सतत तृषित रहती है।

विमलाबाई सब तरह से सुखी थी प्रभुदत्तजी जैसे आदर्श पति को पाकर वह अपने आप में अत्यन्त संतुष्ट थी किन्तु उसे एक दुःख था अपनी गोद का सूनापन। नीतिज्ञों ने ठीक ही कहा है " अपुत्रस्य गृहं शून्यम्" पुत्र हीन का घर सूना है। वास्तव में पुत्र हीन का घर ही नहीं, जीवन भी शून्य है। ऐसे घर और उजडेवन में क्या अन्तर है ? गृहस्तों को पुत्र की लालसा स्वभावतः होती है। पुत्र का अस्तित्व जीवन को सरस और आह्लादमय बनाता है। इधर उधर से काम का मारा, नाना चिन्ताओं से व्याकुल मनुष्य जब घर में प्रवेश करता है और खिलखिलाता हुआ एवं अपने मधुर हास्य से अमृत की वर्षा करता हुआ, बालक सामने दौड़कर पैरों से लिपट जाता हैं, तो वह थोड़ी देर के लिए अपनी थकावट को भूल जाता हैं और चिन्ताओं से भी मुक्त हो जाता है ? बालक की सरल और मधुर मुस्कान मनुष्य को चिन्ताओं के बीहड़ वन से निकालकर आनन्द के ज्योतिर्मय लोक में पहुँचा देती है। इसके

अतिरिक्त मनुष्य में एक बात और होती है। बालक को वह अपनी वृद्धावस्था का सहारा समझता है कि जब मेरे शरीर के अवयव शिथिल पड जाएँगे, तब मेरा पुत्र मेरा आधार बनेगा। यद्यपि कोई कपूत अपने माता-पिता की वृद्धावस्था में सेवा नहीं करता अथवा किसी को बुढापा ही नहीं आता या दुर्भाग्य से पुत्र ही पहले चल बसता है, फिर भी उपर्युक्त कल्पना मनुष्य को आश्वासन अवश्य देती है। इस आश्वासन के बल पर मनुष्य मजे में जी लेता है। आत्मा स्वभावतः अमर है, किन्तु शरीर से वह अमर नहीं रह सकता; अतएव पुत्राभिलाषी व्यक्ति सन्तति के रूप में अमर होना चाहता है। कुछ भी हो, इसमें संदेह नहीं कि पुत्र नेत्रों का प्रकाश है, गृह की शोभा है और पुत्र हीन गृह आनन्द प्रद नहीं होता।

प्रभुदत्तजी भी इसी चिन्ता में सदैव निमग्न रहते थे। किन्तु पुत्र की प्राप्ति मनुष्य के प्रयत्न से बाहर की बात है—पुण्याधीन है, । पुण्य का योग आया और विमलाबाई ने वि, सं, १९४१ में अपनी कुक्षि से एक तेजस्वी बालक को जन्म दिया। पुत्र के जन्म से पितृ हृदय का हुलास उमड़ पड़ा। माता वात्सल्य में भीग गई और सलौने शिशु को ममता से अच्छादित कर पुलका उठी। बालक के जन्म से समस्त परिवार में हर्ष और उल्लास का वातावरण छागया। गोधूमवर्ण, विशाल ललाट और कान्तिमयी मुखाकृति वाले बालक पर जिसकी भी दृष्टि पड़ती वह यही कहता "यह बालक भविष्य में अवश्य ही कुल को उज्ज्वल करेगा। इस महापुरुष को जन्म देकर बनोल गाँव की मिट्टी भी पवित्र बन गई। विस्तृत्र परिवार एवं स्नेही गण इस बालक के जन्म से अपार हर्ष का अनुभव करने लगे। माता-पिता ने पुत्र जन्म की खुशी में उस समय की स्थिति एवं प्रथा के अनुसार जन्म-उत्सव किया। स्वजन सम्बन्धीजनों को प्रीति भोजन से सम्मानित किया और वृद्ध जनों ने बालक की दीर्घायु के आशीर्वचन बरसाये। प्रसूति स्नान के बाद इस होनहार बालक का नामकरण-संस्कार निष्पन्न हुआ उस अवसर पर गाँव के एक ज्योतिषी को बुलाया। जन्म समय देखकर ज्योतिषी ने बालक की जन्म कुण्डली बनाई। उसका फल बताते हुए ज्योतिषी ने कहा—" श्रीमान्‌जी ! यह बालक असाधारण है। भविष्य में यह बालक एक उच्च कोटि का होनहार महात्मा और विद्वान होगा। अपनी असाधारण प्रतिभा से समाज को शतकार्य की ओर प्रेरित करेगा।" ज्योतिषी के मुख से यह बात सुनकर माता-पिता एवं परिवार अन्य स्नेही जनों को कितना हर्ष हुआ होगा इसका माप तो वोही कर पाये होंगे, नाम और राशि के अनुरूप बालक का नाम " घासीलाल " रखा गया।

यह एक दार्शनिक सिद्धान्त है कि यह जीवात्मा अनन्त शक्तियों का भण्डार है। अनन्त गुण सम्पदाओं का आकर है परन्तु इस सत्तागत शक्तियों या गुणों का उसमें कब और कैसे विकास होगा ? कौन जीव किस समय कहां उत्पन्न होकर कैसे विकास करेगा ? यह सब तो भविष्य के गर्भ में निहित है इसका प्रत्यक्ष अनुभव तो समय आने पर ही होता है। जब कि वह व्यक्त दशा को प्राप्त करें। इससे पूर्व तो उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। कौन जानता था कि "बनोल" नाम के गांव में आकर बसे हुए एक साधारण वैरागी परिवार में जन्म लेने वाला 'घासीलाल' नामका यह बालक भविष्य में श्रमण-संस्कृति की एक विशिष्ट परम्परा के एक महान आचार्य के रूप में विश्व-विश्रुत होगा यह किसे खबर थी कि " विमलाबाई" जैसी ग्रामीण माता ने जिस बालक को जन्म दिया है भविष्य में वह उसी का गुणगरिमा के प्रभाव से वर्तमान युग में वैसी ही ख्याति प्राप्त करेंगी जैसी कि अतीत युग में स्वनाम धन्य त्याग-रत्न पुत्रों को जन्म देने वाली माताओं ने प्राप्त की हैं।

वैसे तो बालक निसर्ग का सुन्दर उपहार होने से स्वभावतः ही सुन्दर और प्रिय लगता है। इस पर भी विशेष पुण्य सामग्री लेकर आये हुए बालकों की मनभावनी मोहकता का तो कहना ही क्या ?

बालक घासीलाल कुछ ऐसी ही विशिष्ट रूप सम्पदा का धनी था। अतः वह सबको प्रिय लगने लगा। "होनहार विरवान के होत चिकने पात" इस उक्ती के अनुसार बालक की सुख मुद्रा पर होनहारता के स्पष्ट चिह्न दिखाई देते थे बुद्धि की कुसाग्रता तो इसकी जन्म–जात विशेषता थी बालक घासीलाल के जन्म के बाद उनके माता–पिता को अधिक से अधिक अनुकूल संयोगों की प्राप्ति होने लगी। यह तो स्पष्ट है कि पुण्यात्मा का जिस घर में प्रवेश होता है लक्ष्मी और सुख समृद्धि छाया की तरह उसकी अनुगामी होती है। बालक घासीलाल के पुण्य प्रभाव से वैरागी प्रभुदत्तजी के भाग्य का सितारा चमकउठा उनका यश और समृद्धि बढ़ने लगी इस समृद्धि का कारण माता–पिता बालक के पुण्य प्रभाव का फल मात्र समझते थे। अतः माता की ममता और पिता का प्रेम बालक पर विशेष रूप से उमड़ पड़ा बालक. घासीलाल माता–पिता की वात्सल्यमयी गोद में दूज के चान्द की तरह बढ़ने लगा। बाल सुलभ चेष्टाओं और अपनी सुकुमार मुखाकृति से वह अपने माता–पिता को आनन्दित करने लगा। उसकी एक मधुर मुसकान से माता–पिता के सुख का सरोवर तरंगित हो उठता था उसकी स्वाभाविक किलकारियो से उनके मानस प्रमोद से भर जाते थे।

शिक्षा और संस्कारः—

बालक प्रकृति की अनमोल देन है, सुन्दरतम कृति है, सबसे निर्दोष वस्तु है। बालक मनोविज्ञान का मूल है, शिक्षक की प्रयोगशाला है। बालक मानव–जगत का निर्माता है। बालक के विकास पर दुनियां का विकास निर्भर है। बालक की सेवा ही विश्व की सेवा है।" इस सिद्धान्त को हमारे चरितनायक के माता–पिता अच्छी तरह समझते थे अतः वे अपने उत्तम आचरण के द्वारा बालक में उत्तम संस्कारों के बीजारोपण करने लगे। बाल्यावस्था में प्राप्त होनेवाले संस्कारों का जीवन निर्माण में बहुत बडा हाथ होता हैं। बालक के द्वारा ग्रहण किए संस्कारों के अनुसार ही उसका जीवन बनता है और बिगडता है। बालक–जीवन एक उगता हुआ पौधा है। उसे प्रारंभ से ही सारसंभाल कर रक्खा जाए, तो वह पूर्ण विकसित हो सकता है। बडा होने पर उस पौधे को सुन्दर बनाना माली के हाथ की बात नहीं है। आपने देखा होगा घडा जब तक कच्चा होता है तब तक कुम्हार उसे अपनी इच्छा के अनुरुप जैसा चाहे वैसा बना सकता है। किन्तु वह घडा जब आपाक में पक जाता है, तब कुम्हार की कोई ताकत नहीं कि यह उसे छोटा या बडा बना सके, उसकी आकृति में किञ्चित् परिवर्तन कर सके।

यही बात बालकों के सम्बन्ध में भी है। माता पिता चाहे तो प्रारंभ से ही बालकों को सुन्दर शिक्षा और सुसंस्कृत वातावरण में रखकर उन्हें होनहार नागरिक बना सकते हैं। वे अपने स्नेह, और आचरण की पवित्र धारा से देश के नौनिहाल बच्चों का वर्तमान एवं भावी जीवन सुधार सकते हैं। बालक माता पिता के हाथ का खिलौना होता है। वे चाहे तो उसे बिगाड सकते हैं और चाहें तो सुधार सकते हैं। देश के सपूतों को बनाना उन्हीं के हाथ में है।

दुर्भाग्य से आज इस देश में घृणा, विद्वेष, छल और पाखण्ड भरा हुआ है। माता-पिता कहलाने वालों में भी अनेक दुर्गुण भरे पडे हैं। जैसे दारुपिना मांसखाना तमाखु वि. धुम्रपान करना सिनेमा देखना वेटाइम फिरते रहना गालिये बोलनी लडना झघडना द्वेष क्लेश में रक्त रहना वचनकी अप्रमाणिकता असत्य चोरीमय व्यवहार करना दुराचारो मय ज्यां जीवन है। ऐसी स्थिति में वे अपने बच्चों में सुन्दर संस्कारों का आरोपण किस प्रकार कर सकते हैं? प्रत्येक माता–पिता को सोचना चाहिए कि हमारी जिम्मेदारो केवल सन्तान को उत्पन्न करने में ही पूर्ण नहीं हो जाती बल्कि सन्तान को उत्पन्न करने पर तो जिम्मेदारो का आरंभ होता है। और जब तक सन्तान को सुशिक्षित एवं सुसंस्कार सम्पन्न नहीं बना दिया जाता, तब तक वह पूरी नहीं होतीं।

इसकी प्रशंसा करते थे। चारों ओर से इसे बडा आदर मिलता था। घासीलाल संस्कारी बालक था। अतः इसमें विनय, विचार शीलता, मधुर वाणी और व्यवहार शीलता दृढता आदि गुण खूब विकसित हुए थे। एक गुण इनमें विशिष्ट था--चिन्तन करने का। जीवन की हर घटना पर यह विचार और चिन्तन करता रहता था। अपने साथियों के साथ खेल कूद भी करता था, परन्तु उसकी प्रकृति की गम्भीरता व्यक्त हुए बिना नहीं रहती। वह खेलता कूदता भी था नाचता गाता भी था, हँसता हँसाता भी था और रूठता मचलता भी था। बालस्वभाव सुलभ यह सब कुछ होने पर भी उसकी प्रकृति की एक विलक्षणता थी चिन्तन और मनन। प्रकृति के परिवर्तनों की घटनाओ को बडे ध्यान से देखा करना और उन पर घंटों तक विचार करता रहता था। जब कभी अवसर मिलता था यह आस पास के जंगल में चला जाता और घंटों वृक्षों के सघन झुरमुटों में घुमता और वृक्ष की शीतल छाया में बैठकर किसी वात के चिन्तन में निमग्न हो जाता था, प्रारम्भ से ही इसे एकान्तवास प्रिय था। इस की इस एकान्तवास प्रियता को देखकर घर के माता--पिता और अन्य बडे बूढे आश्चर्य करने लगते थे। बाल मस्तिष्क से जब कभी वृद्धों जैसे सुलझे हुए गंभीर विचार निकलते थे तो सुनने वाले सहसा चकित से हो उठते थे।

प्रभुदत्तजी रामानन्द संप्रदाय के अनुयायी होने के कारण इनके घर वैष्णव साधु सन्तों और महन्तों का आगमन अधिक रहना था। गाव के लोग श्रद्धालु थे और जहां श्रद्धा एवं भक्तिभावना अधिक होती है वहीं साधु सन्तों का निवास भी प्रायः होता रहता है। बालक घासीलाल जब कभी साधु, सन्तों, महन्तों को देखता तो बड़ा प्रसन्न हो जाता था। घन्टों तक उनके पास बैठकर उनकी धार्मिक बाते सुनता और उस पर विचार करता था। निरन्तर सतसंग के कारण चरित्तनायक को कबीर, दादू और अन्य वैष्णवाचार्य की सैकडों वाणिया (कविता) कंठस्थ हो गई थी। प्रभुदत्तजी अपने प्रिय पुत्र की इन चेष्टाओं को सूक्ष्म दृष्टि से देखते रहते थे। वे कल्पना करके भी कल्पना नहीं कर पा रहे थे कि पुत्र का भविष्य किस दिशा की ओर जाने वाला है। एक बार एक ज्योतिषशास्त्र का पण्डित घूमता घामता प्रभुदत्तजी के घर पहुंचा। प्रभुदत्तजी ने उसको भोजनादि से सत्कार किया। भोजन के पश्चात प्रभुदत्तजी ने पण्डितजी से बालक घासीलाल का भविष्य पूछा। जन्म पत्रिका को देखकर ज्योतिषी ने अत्यन्त गम्भीर भाव से कहा प्रभुदत्तजी! यह बालक साधारण ब्राह्मण न रहकर ब्रह्मर्षि बनने का संस्कार लाया है। ज्योतिषी के मुख से यह बात सुनते ही प्रभुदत्तजी गम्भीर हो गये। पुत्र का भविष्य सुन्दर होते हुए भी अपने लिए असुन्दर मालूम हुआ। वे सहसा गहरी चिन्ता में निमग्न हो गये।

सौभग्यवती विमलाबाई ने यह दशा देखी तो वह स्तंभित--सी हो गई। उसका मन समझ न सका कि आखिर जन्म पत्रिका में चिन्ता को क्या बात है? उसने पूछा कि "क्या बात है! आप लोग इतने चिन्तित क्यों नजर आ रहे हो? मेरे घासीलाल का जीवन जोग तो अच्छा है न? पण्डितजी ने कहा जीव जोग तो अच्छा है परन्तु यहां तो कुछ और ही प्रभु को माया दिखाई दे रही है। घासीलाल की जन्मकुण्डली में तो ऋषि होने का योग पडा हैं। इनके महान भविष्य से घर को तो लाभ नही होगा किन्तु अपने कार्य से सारे देश को उपकृत करेगा। देख नहीं रही हो, अब भी घासीलाल किन संस्कारों में बहा जा रहा है। वह घर की अपेक्षा साधु सन्तो की सत्संगति में अधिक रस लेता है। हमारे लिए यह खतरे की घन्टी है।" माता विमलाबाई के कोमल हृदय को एक बार तो इस चर्चा से मर्मभेदी चोट पहुंची माता आखीर माता है। वह अपने पुत्र के उज्ज्वल भविष्य सम्बन्धी सुनहले स्वप्नों से सदा घिरि रहती हैं। भला कौन ऐसी माता है जो अपने पुत्र के सुन्दर भविष्य को इस प्रकार भिक्षु जीवन में परिवर्तित होने की कल्पना को सहसा सहन कर सके? हमारे चरितनायक की माता को भी उपयुक्त

भविष्यवाणी से धक्का लगा। परन्तु वह एक गम्भीर और धीर प्रकृति की माता थी। बहुत शीघ्र ही सम्भल गई और कहने लगी कि "आप क्यो चिन्ता कर रहे हो ? जो होनहार है वह होकर ही रहेगा। हम तुम इस नियति के विधान में क्या उलट फेरकर सकते हैं ? मुझे तो कोई चिन्ता नहीं है। मेरा घासीलाल कहीं भी रहे, कुछ भी बने बस आनन्द में रहें, यही प्रभु से प्रार्थना करती हूँ। यह ऋषि बनकर यदि स्वपर का कल्याण करता है तो इसमें क्या बुरा है। माता विमलाबाई के इस शब्द से प्रभुदत्तजी को धीरज आया प्रभुदत्तजी अब अपने इकलौते लाडले पुत्र की ओर विशेष ध्यान रखने लगे।

मानव जीवन अनेक प्रकार की विषम परिस्थितियों का केन्द्र है। इसमें अनेक तरह के उतार चढाव दृष्टिगोचर होते ही रहते हैं। जीवन यात्रा में इष्ट वियोग और अनिष्ट संयोग यह जीव के स्वोपार्जित शुभाशुभ कर्मो के हीं परिणाम हैं। इसी नियम के अनुसार यह मानव सुख–दुःख का अनुभव करते हुए अपनी भव–स्थिति को पूरा करता है। श्री प्रभुदत्तजी की आशालता अभिपल्लवित भी न होने पाई थी कि कराल काल की भयंकर अग्नि में वह भस्म हो गई। जब घासीलाल दस वर्ष के भी नहीं हुए थे तभी इनकी अचानक मृत्यु हो गई। इन्हें अपने प्रिय पुत्र की साहस पूर्ण बालचर्या में बीज रूप से रही हुई गुणसन्तति के भावी विकास को देखने का पुनीत अवसर नहीं मिल सका। पिता की मृत्यु से बालक घासीलाल एवं उनकी मातुश्री विमलाबाई पर वज्र टूट पडा। अब इन सब को चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दृष्टिगोचर होने लगा। नारी का गर्व, सुख, अभिलाषा, उसका सब कुछ उसके सौभाग्य पर निर्भर रहता है। यदि वह सुहागिन बनी रही तो वह इस लोक को स्वर्ग मानती है। चांद को सुधाकर कहती है और दुःख में भी फली–फूली फिरती है यदि उसका सुहाग–बाग हरा भरा और फूलाफला न रहा तो उसके लिए यह अनोखा संसार उतना ही निस्सार हो जाता है कि जितना योगियों के लिए भी नहीं होता। भारतीय परिवार को स्वर्गीय सुखों का लीला–स्थल बनाने वाली आर्य कुलांगना के अनेक रूपों में पत्नी और जननी का रूप सर्वापेक्षा और महिमा मण्डित है किन्तु जिस समय हिन्दू परिवार की विधवा पर दृष्टि पडती हैं उस समय सारी कामनाओं का भस्म रमाकर बैठी एक तरुण–तपस्विनी हीं ध्यान में आती है। उसके चारां ओर सर्वेन्द्रिय सुखों की चिन्ताग्नि धधकती रहती है। उसकी लालसाओं की लोल–लहरे किसी किनारे तक नहीं पहुँचने पाती। उसकी अभिलाषाओं की अल्हड–आन्धी हृदय में हाहाकार मचाकर उद्धत बवंडर की भान्ति उसके मस्तिक में चढ जाती है। संयमशीलता का कैसा निष्ठुर निदर्शन है। सहिष्णुता की फैली गगनाकार सीमा हैं। आत्म त्याग का कैसा ज्वलंत आदर्श है ? समाजिक शाप का कितना भयंकर चित्र है।

पति की अचानक मृत्यु से विमलाबाई को जो असह्य दुःख के बीच यदि कोई सहारा था तो वह अपने पुत्र का ही। देहातों में मुश्किल से ऐसे कुछ इने–गिने परिवार मिलेंगे जिनमें विधवाओं पर वस्तुतः उतना ही ध्यान दिया जाता हो जितना सधवाओं को सहज सुलभ है। हा दैव ! आँगन और घर में चारों ओर लालसाओं की ज्वाला धधक रही है, नाना प्रकार के मंगल मोद महोत्सव मनाये जा रहे हैं पर किसी व्यक्ति के हृदय को बेचारी करुण–कातर विधवा की मर्म वेदना छूने भी नहीं पाती। वह दूर ही से सब कुछ देखकर मन हीं मन आह भरती और चुपके से आंसू पोछ कर परिवार वालों के सुख संवर्द्धन में हाथ बटाती है। आखिर क्या करे ? हिन्दू परिवार से विधवा का कुछ दानभाग भी तो नहीं ? उनसे भर मुँह मीठी बात बोलने वाला कोई सहृदयी भी तो नहीं है। ताने और तिरस्कार के सिवा उसे समाज में और कुछ भी प्राप्त नहीं होता। पति के स्वर्गवास के बाद विमलाबाई पति वियोग में अत्यन्त दुःखी और व्याकुल रहने लगी पिता के मृत्यु से बालक घासीलाल

पर दुःख का वज्र टूटपडा किन्तु मां की स्नेहमयी गोद की शीतल छाया से उसे पिता का वियोग इतना नहीं अखरा।

संसार में स्थायित्व के नाम पर क्या स्थिर है। कुछ भी नहीं ? स्नेह और ममत्व भी बहकाए और बटाए बँट जाते हैं। स्नेह का स्रोत एक दिशा में बहते–बहते दूसरी दिशा में बहने लगता है। पत्नी का सम्पूर्ण स्नेह पति और पुत्र में केन्द्रित था। पति के स्वर्गवासी होने के बाद माता विमलाबाई का स्नेह पुत्र पर आधारित हो गया। बालक घासीलाल की भोली सूरत मधुर मुस्कान और हृदय को उल्लसित करने वाली मीठी बाते ओर अपनी गोद में सोते अपने लाडले को देख–देखकर वह उल्लास से भर जाती थी।

विपत्ति की गहरी छाया में

माता जानती थी, स्वजन–वैसे तो सभी स्वार्थ में डूबे हुए हैं। सारा संसार ही स्वार्थ की आग में जल रहा है। निरर्थक दूसरों की भलाई किसको सूझती है ? वे दिन वह समय अब नहीं है कि स्व और पर हित चिन्तन मनुष्य साथ–साथ किया करता था। इसके पिता बार बार कहा करते थे–घासीलाल की मां ! मेरी आंखे बन्द हो जाएगी तो तेरा और घासीलाल का क्या होगा ? मैं उन्हें कहा करती थी–आप ऐसी अशुभ कल्पना क्यों करते हो मेरा यह कहना, आज सोचती हूं झूठी सान्त्वना थी। झूठी हो या सच्ची, वे तो अनन्त पथ के पथिक हो गये अपनी राह चले गये। न जाने कौन सी अज्ञान शक्ति है जो अनजाने में ही हमारे 'अपने' को अपने पास बुला लिया करती है। शायद उनको न्याय नीतिमय जीवन जीते हुए यह दीखने लगा था कि मैं चला जाऊँगा और घासीलाल बे सहारा हो जाएगा मैं उनकी बात को टाल दिया करती थी। जब तब यह भी कहती 'वीरभूमि मेवाड का जाया जन्मा अपनी आन और शान पर मरता मिटता आया है। विपन्नावस्था में भी वह पराजय नहीं स्वीकार करता है। श्रम के कण ही मेवाड के मोती है। पिछला इतिहास बताता है, श्रुति परम्परा से बडे बूढों के मुँह सुनती आई हूं—मेवाड की मिट्टी के रजः कणों में लोट–लौट कर बडा होने वाला मेवाडी हृदय का भोला, बडों का आदर करने वाला एवं अपनी आन–शान को प्राण–प्रण से निभाने वाला होता है। वह किसी के सामने अपेक्षा आकांक्षा के लिए हाथ पसार कर अपनी दीनता नहीं दिखाता। आज इस सत्य की कसौटी का दिन आ गया है इस चिन्तन से धैर्य धर्मशील नारी के हृदय का स्वाभिमान जाग उठा। उसने दूसरों के सहारे जीना दीनता की निशानी समझा। परमुखापेक्षी रहने के बजाय स्वाश्रय से जीवन व्यतीत करना ही श्रेयस्कर माना। अतीत के सलोने अलोने सब स्वप्न विसार, श्रमकर सुख पूर्वक रहने लगी। अपने छोटे–छोटे हाथों से पुत्र घासीलाल भी, मां के काम में हाथ बटाने लगा। अपनी सुकुमारता का त्याग कर अत्यन्त कठिन परिश्रम करने लगा। अपने खेत में पहुंचता। और अपने हाथों से घास भी काटता। गाय और भैसों की रखवाली भी करता और खेतों को पानी भी पिलाता। इस प्रकार श्रमपूर्वक जीवन निर्वाह करने वाले माता एवं पुत्र अत्यन्त सुखी थे। दोनों का एक छोटा–सा संसार था। मां अपने बेटे को बता देना चाहती थी कि स्वार्थ से सराबोर इस संसार का बरताव देख ले। बडा होकर किसी से आस मत करना। अपना किया हीं अपने काम आता है। अपने श्रम से हि तू आगे बढ। अवश्य ही तुझे अपने लक्ष्य में आशातीत सफलता मिलेगी। पौरुष से ही अभिष्ट की सिद्धि होती है। पौरुष से ही चिन्तनशील व्यक्तियों का विकास होता हैं। जो लोग उद्योग न कर केवल भाग्य के भरोसे ही बैठे रहते हैं वे कभी भी अपने साध्य को नहीं पा सकते। आलसी मनुष्य अपने ही शत्रु बनकर अपना अमित नुकशान कर डालते हैं। जीवन की नौका को मझधार में डुबोकर अपना अस्तित्व ही समाप्त कर देते हैं। श्रमशील मनुष्य ही अपने देश व समाज का उन्नयन करने

में समर्थ होता है। उन्नति के पद पर आरोहन करने के इच्छुक, मानशाली धीर पुरुष आपत्ति निवारण करने में समर्थ अपने पुरुषार्थ का आश्रय लेना उचित समझते हैं। शूरवीरों का पुरुषार्थ ही सच्चा सहायक होता है। मां की इस प्रकार की प्रेरणा से बालक घासीलाल सतत परिश्रम करने लगा। मां को कम से कम कष्ट हो इस बात का पूरा ध्यान रखता था। मां भी यही चाहती थी कि मेरा बालक भावी पीढी के लिए एक आदर्श दृष्टान्त बने।

संसार में समाज का निर्माण माता ही करती है। प्रत्येक मनुष्य बहुत कुछ अपनी माता का बनाया हुआ होता है। व्यक्तियों के समूह से समाज बनता है और व्यक्तियों को माता बनाती है। इस तरह माता ही समाज बनाने वाली है। यदि माताएं चाहें तो आदर्श समाज बना सकती है। मातृशक्ति की महिमा अपार है। सन्तान को उदार, श्रमशील, स्वावलम्बी बनाना माता का ही काम है। माता ही पुत्री को आदर्श गृहीणी और जननी तथा पुत्र को सदाचारी एवं यशस्वी बना सकती है। माता की महिमा पिता से भी बडी है। क्योंकि वह संतान को नव मास तक अपने गर्भ में धारण करके उसे अपने रक्त के रस से पोसती है और फिर संसार में पैदा करके जबतक जीती है तबतक पालती है। माता का कोमल क्षोड ही शान्ति का निकेतन है। माता का हृदय बच्चे की पाठशाला है। हमारे चरित नायकजी पर पिता की अपेक्षा माता का ही अधिक प्रभाव पडा था। ये सदैव कहा करते थे–"मेरी मां उदार गम्भीर एवं भव्य प्रकृति की नारी थी। माता का अकृतिम स्नेह मुझे सीमा से अधिक मिला था। मैं उन दिनो माता की छत्र–छाया में बहुत ही आनन्द विभोर रहा करता था।"

मातृ वियोग—

संसार का यह नियम है कि प्रत्येक प्राणी को चाहे राजा हो या रंक, सज्जन हो या दुर्जन सभी को अपने संचित शुभाशुभ कर्म का फल भोगना ही पडता है। बहुत सी बार निर्दोष दिखनेवाले अबोध बालक भी कर्म के शिकार दिख पडते हैं, भले ही वर्तमान में कोई पाप–कर्म उनके दृष्टिगोचर नहीं होते हो किन्तु वे पूर्व संचित अवश्य होते हैं और जिस तरह के शुभाशुभ कर्म मनुष्य के जीवन में संचित होते हैं उसी तरह के संयोग भी सामने आकर उपस्थित हो जाते हैं। उन संयोगों के अनुसार उसका जीवन बनता है। अस्तु! बारह वर्ष की कोमल अवस्था में ही हमारे चरितनायक को सदा के लिए मां की शीतल छाया से वंचितहोना पडा। पति वियोग एवं कठोर श्रम से विमलाबाई का स्वास्थ्य प्रति दिन गिरने लगा। औषधोपचार में किसी प्रकार की कमी नहीं रखी गई किन्तु जिसकी जीवन डोर खंड़ित हो गई, उसे जोडने का सामर्थ्य किसमें हैं? सारे उपचार व्यर्थ गये और एक दिन अपने लाडले पुत्र को छोड अज्ञात पथ की ओर चल दी। एक किशोर वय के बालक पर कुदरत का कितना भीषण वज्रपात! किन्तु संचित कर्मों को यही इष्ट था। शायद कर्मदशा आपको बचपन से ही स्वावलम्बन का पाठ सिखाना चाहती थी इस लिए माता-पिता की आराममय छत्र छाया से आपको वञ्चित कर दिया। समझना चाहिए कि पुरातन पावन पथ में प्रवेश करने का यह प्राकृतिक संकेत था।

माता और पिता का आश्रय हट चुका था। अब उन्हें अपनी योग्यता द्वारा ही आश्रय प्राप्त करना था। बारह वर्ष की अल्पअवस्था में ही उनपर अपने जीवन निर्वाह का भार आ पडा। जो व्यक्ति आगे चलकर एक विशाल समाज का नेता बनने वाला हो उसके लिए प्रकृति यह कैसे सह सकती है कि वह दूसरों के आश्रय पर पले। उसे तो बचपन से ही भयंकर आपत्तियों को हँसते–हँसते सहने का पाठ सीखना पडता है। विपत्ति की संभावना मात्र से साधारण व्यक्ति भयभीत हो जाता है और जब विपत्ति सन्मुख आ जाती है, तो घबरा उठता है। उसकी यह घबराहट स्वयं एक भयानक विपत्ति बन जाती है।

किन्तु महापुरुष विपत्तियों के आने पर उल्लास ही अनुभव करते हैं। क्योंकि विपत्तियों में ही प्रगति का मार्ग प्रशस्त होता है। वे विपत्तियां को अपना शत्रु नहीं मित्र मानते हैं। इस धरती पर सुख के झूले में झूलने वाले के चरण नहीं पूजे जाते। दुनिया आरती उसकी उतारती है जो अनगिन कष्टों को झेल कर अपने साधना बल से एक नयी दिशा, एक नया आलोक विश्व को प्रदान कर सकता है।

प्रगति का मार्ग हास-परिहास का नहीं, बलिदान व उत्सर्ग का मार्ग है। फूलों से नहीं शूलों से भरा हुवा मार्ग है। कातर व कायरपुरुषों का नहीं, धीर व वीर पुरुषों का मार्ग है। इसमें चरण बढाने होते हैं, सब शारिरीक सुखों को बान्ध कर ताक में रखने पडते हैं। "महापुरुष संकटों पर सवार होकर विपत्तियों के बीच, बाणों की बोछार झेलते हुए अपने लक्ष्य की ओर आगे बढते चलते हैं हमारे चरितनायक में महापुरुषों का यह लक्षण भी बाल्यकाल से ही विद्यमान था। माता-पिता का वियोग तो एक प्रौढ और सम्पन्न व्यक्ति भी सहन नहीं कर सकता है तो एक साधन विहीन बालक वियोग जन्य विपत्ति को कैसे सह सकता है। किन्तु धैर्यशील साहसी बालक घासीलाल ने इस विपत्ति को भी हंसते मुख सहन कर लिया।

जीवन में जो शून्यता आ गई थी उसकी पूर्ति होना तो असंभव था। चरितनायक आकस्मिक प्राप्त नये वातावरण में अपने आपको ढालने का प्रयत्न करने लगे। उनके सामने सबसे बडी समस्या थी अपने जीवन निर्वाह की। यद्यपि गांव में काका, काकी रहते थे और उनके आग्रह से वह उनके यहां रहने भी लगे थे किन्तु उन्हें दूसरों के सहारे जीना अच्छा नहीं लगा। उन्हें अपनी मां के वे शब्द सदा याद आते थे-"बेटा ! भाग्य के भरोसे बैठ रहने पर भाग्य सोया रहता है और हिम्मत बांधकर खडे होने पर भाग्य भी उठ खडा होता है। पुरुषार्थ ही सफलता का सर्वोत्तम मार्ग है। पुरुषार्थ भाग्य को फलित ही नहीं करता अपितु नये भाग्य का भी निर्माण करता है। प्रतिकूल भाग्य को अनुकूल बनाने का तो इसमें अद्भुत सामर्थ्य निहित है। "उसने मां के इस स्वर्ण सूक्त को पुरुषार्थ की कसौटी पर कसने का निश्चय किया। सोचा-बनोल जैसे छोटे गांव में एवं काका काकी के सहारे मैं अपने भाग्य का निर्माण नहीं कर सकता। परदेश जा कर ही मैं अपने भाग्य को आजमाऊंगा।" बनोल से नाथद्वारा बडा है। वैष्णवों का सबसे बड़ा तीर्थस्थल भी। वहां अनेक देश विदेश के लोग भी यात्रार्थ आया करते हैं मुझे वहीं जाना चाहिये।

एक दिन अवसर पाकर उसने अपने काका से अपने मन की बात कही। काका ने पहले तो बात को टालने का प्रयत्न किया किन्तु विशेष आग्रह देखा तो उसे नाथ द्वारा जाने की आज्ञा दे दी। राही को राह मिल ही जाती है देर सबेर हो भी जाए यह संभव है किन्तु राह न मिले यह कभी सम्भव नहीं। एक दिन सूर्योदय हुआ। काका काकी को प्रणाम किया और अकेला ही नाथद्वारे के राह पर चल पडा। मार्ग का कष्ट कुछ कम नहीं था। खाने पिने का साधन भी नहीं था। अन्तर्हृदय की आदर्श प्रेरणा ही इस महान यात्री का जीवन सम्बल था। भूखा-प्यासा बालक घासीलाल जैसे तैसे नाथद्वारा पहुच तो गया किन्तु वहां पहुचने के बाद उसके सामने सबसे बडी समस्या थी कहां जाना और कहां ठहरना। उसके लिए सारा गांव अपरिचित था। इधर उधर भटकने एक दिन यह भागचन्दजी सा. धाकड की दूकान पर पहुंचा। भोली सूरत, ग्रामीन भाषा तेजस्वी भाल को देख भागचन्दजी ने नवागन्तुक बालक से पूछताछ की और उसे अपने यहां घर के काम काज के लिए रख लिया। बालक घासीलाल धाकडजी के घर काम करने लगा।

धाकडजी के घर काम करते समय आपके जीवन का मुख्य लक्ष्य था कठिन श्रम और ईमानदारी।

क्योंकि वे यह जानते थे कि मनुष्य की प्रतिष्ठा ईमानदारी पर ही निर्भर है । आज के सामाजिक जीवन में सब से बड़ी आवश्यकता ईमानदारी की लगती है। पर उसमें आज सबसे अधिक बोलबाला बेइमानी का ही हो रहा है । लोग बेइमानी को ही अपनी सफलता का आधार मान बैठे हैं। यह धारणा अधिक दृढ होती जा रही है कि ईमानदार रहकर व्यक्ति सुखी जीवन नहीं जी सकता बेईमानी का विस्तार जितना भयावह है, उससे भी अधिक भयावह ईमानदारी की निष्ठा को गिर जाना है । समाज में अच्छाईयां और बुराईयाँ सदा से रही है । जिस युग में राम था उसी युग में रावण भो था । जिस युग में कृष्ण थे उसी युग में कंस भी था । इस युग में और उस युग में अन्तर यही है कि उस युग में बुराईयां थी, किन्तु बुराईयों को सामाजिक मान्यता नहीं थी । वर्तमान युग में बुराईयां पनप रही है और उसको सामाजिक मान्यता भी दी जा रही है । व्यापारी कहते हैं–मिलावट, झूठा तोलमाप चोर–बाजारी कर चोरी आदि सभी लोग करते हैं और आज के जीवन में यह व्यापार का अंग भी बन गया है इसके बिना हम दो पैसे कमा नहीं सकतें । सरकारी कर्मचारी कहते हैं रिश्वत सभी लेते हैं और विना लिए इस महंगाई में जी भी नहीं सकते हैं । अतः रिश्वत लेना कोई बुरी बात नहीं । इस मान्यता के कारण ही समाज में बुराईयों की मजबूती होती जा रही है पुराने जमाने में बुराईयाँ होती थी । पर समाज उन्हें क्षम्य नहीं मानती थी एक बुराई की ओर सहस्रों अंगुलियां थी । यही कारण था, बुराईयां अच्छाईयों पर हावी नहीं हो पा रही थी । अच्छाई बने रहना सामाजिक जीवन जीने के लिए अच्छा बनना पड़ता था । आज भी बुराईयों के अन्त का कोई मार्ग है तो यही कि समाज में नैतिक निष्ठा बनी रहे । अनैतिकता के प्रति विद्रोह होता रहे । भले और बुरे का भेद समाज समझता रहे । भलाई को वह सन्मान की दृष्टि से देखता रहे और बुराई को निरादर । अप्रमाणिक व्यक्ति कुछ समय के लिए अपने व्यवसाय में सफलता भले ही प्राप्त करले किन्तु अन्त: उसे उसके दुष्परिणाम भुगतने ही पडते हैं । ईमानदार व्यक्ति प्रारम्भ में अवश्य कठिनाईयों का कष्टों का सामना करता है परन्तु अंत तो गत्वा वह अवश्य विजयी होकर संसार में सन्मान का भागी बनता है ।

हमारे चरितनायकजी इसी सिद्धान्त पर चलने लगे । एक आज्ञांकित वफादार सेवक के भान्ति काम करते थे । सभी छोटे बडे काम बडे उत्साह के साथ करते थे । इनकी स्फूर्ति काम करने की लगन देख कर धाकडजी इन पर सदा प्रसन्न रहते थे । श्रीमान धाकडजी की पुत्री तरावली गढ (जसवंत गढ) में ब्याही हुई थी । किसी प्रसंग पर वह अपने पिता के घर आई । कुछ दिन रही । बालक घासीलाल की सरलता काम करने की स्फूर्ति व सौम्यता देखकर वह बड़ी प्रभावित हुई । जब ससुराल जाने का अवसर आया तो उसने पिताजी से कहा–"मैं घासीलाल को अपने साथ ले जाना चाहती हूँ" यह मेरे घर रहेगा । लडका शील और स्वभाव से बडा अच्छा है । श्रीमान भागचन्द्रजी अपनी पुत्री की इस मांग को टाल नहीं सके और उन्होंने उसे लेजाने को इजाजत दे दी । भागचन्द्रजी की पुत्री के साथ हमारे चरितनायकजी तरावलीगढ आ गये (जिसको आज जसवन्त गढ कहते हैं) और उनके घर का काम काज करने लगे । घर का भी काम करते थे साथ ही साथ खेत में जाकर उसकी रखवाली भी करते थे । मधुर व्यवहार के कारण उन्होंने अपने मित्रों की संख्या बढाली । खेत में जब ये पहुचते तो आस पास के बालक भी इन्हें मिलने आते । परस्पर की सुख दुःख की बातें करते । बालसाथियों की बाते बड़ी सहानु भूति पूर्वक सुनते और अपनी बुद्धि एवं अनुभव के अनुसार उसका समाधान भी करते ।"

इस संसार में कोई भी किसी का मित्र नहीं है और न किसी का शत्रु भी हैं । अपना सद्–असद् व्यवहार ही मित्रता और शत्रुता का कारण बनता है । यदि हमारे व्यवहार मधुर हैं, हृदय सरल हैं वाणी

मैं अमृत बरसता हैं तो इस संसार में हमारा कोई भी शत्रु शत्रु नहीं रहेगा सभी हमारे मित्र बन जाएंगे। मित्र बनाने से नहीं बनते, अपने व्यवहारों से बनते हैं यदि हमारा व्यवहार बुरा है हृदय में कुटिलता है वाणी में जहर बरसता है तो इस संसार में हमारे शत्रुओं की कोई कमी नहीं रहेगी। लाख प्रयत्न करने के बाद भी मित्र मिलना हमारे लिए दुष्कर होगा।" मित्र बनाने की सबसे बडी अमोघ औषधि है—तुम जो दूसरों के लिए करो उसे भूल जाओ और जो दूसरों से लो उसे सदा याद रखो। मित्रता की यही जड है। बालक घासीलाल इस बात पर बडे सावधान रहते थे। बिना किसी अपेक्षा के मित्रों की अधिक से अधिक सेवा करना और उनकी हर तरह की सहायता करना अपना कर्तव्य समझते थे।

कर्तव्य परायणता व साहस की परीक्षा

श्रावण और भाद्रपद मास बीत चुका था। किसानो के खेत अनाज से लहलहा उठे थे। ऐसे समय खेतों की रक्षा अनिवार्य होती है। एक बार मालिक ने घासीलाल को बुलाकर कहा आज से तुम्हें खेत की देखभाल करनी होगी। मालिक की आज्ञा पाकर घासीलाल खेत पर पहुँचा। और उसकी रक्षा करने लगा।

कर्तव्यशील व्यक्ति अपने कर्तव्य पर सदा तत्पर रहता है। उसके जीवन का लक्ष्य अपने कर्तव्य को पूर्ण करने का होता है। वह अपने कर्तव्य का पालन करने के लिए सभी प्रकार के कष्टों की परवाह न करता हुआ वीरयोद्धा की भांति आगे बढता ही जाता है। कार्य को पूर्ण करते हुए अपना जीवन ही समर्पित कर देना, यही मार्ग उसके सामने रहता है। वह अपने आत्मबल के आधार पर दूसरों की अपेक्षा नहीं रखता हुआ अपने कार्य को पूरा करता है। वह कभी निराशा का स्वप्न नहीं देखता। उसके जीवन में अपार साहस होता है इसलिए कठिनतम कार्य भी उसके लिए सहज बन जाता है। हमारे चरितनायक को खेती की रक्षा का कार्य सोंपा गया। हाथ में लाठी लेकर रात और दिन बडी सावधानी से वह खेत की रक्षा करने लगे। १४ वर्षीय बालक रात्रि के गहन अंधकार में भी बडी हिम्मत के साथ अकेले खेत में घूमते और निर्भय अकेले ही खेत के मंच पर चढकर सो जाते। कहीं भय का नाम भी इसने नहीं सुना। रात्रि में सुनसान खेत वैसे ही भयावह प्रतीत होता हि है। कृष्णपक्ष की काली रात्रि में उसकी भयावहता तो ओर भी बढ जाती है। चारों ओर सन्नाटा रहता है और बीच बीच में सियारों की बीभत्स आवाजें ओर वृक्षों की झुरमुराहट उस सन्नाटे को ओर भी भयावह: बना देते हैं। ऐसी भयावनी रात्रि में भी हमारे चरितनायक निर्भीक और निश्चल भाव से खेत की रखवाली करते थे। रात्रि के गहन अन्धकार व सुनसान जंगल के वातावरण में तो प्रौढ व्यक्ति का भी कलेजा थर्थरा उठता है। तो बालक का कहना ही क्या ? किन्तु बालक घासीलाल का दिल इसबात से निर्भीत था भय स्वयं उनके पास आने में भयभीत होता था। एक दिन एक ठाकुर ने अपने पशुओं को खेत में चरने के लिए छोड दिये। जब चरितनायक को इस बात का पता लगा तो वे हाथ में लाठी लेकर पशुओं को मालिक का नुकसान न हो जाय इसलिये खेतों से उन्हे भगाने लगे, इस घटना से ठाकुर बडा क्रुध हुआ। वह दौडा हुआ चरितनायक के पास आया। और गाली गलोज करने लगा। बात आगे बढ गई। घासीलाल के दोनों पैर रस्सी से बान्ध दिये और घसीटता हुआ कूए पर लेजाकर उन्हें औंधे मुह कूए में लटका दिया। और वहां से चल दिया। कुछ समय के बाद कुछ बालसाथी उसके खेत पर आये तो उन्हें कूए में किसी के चिल्लाने की आवाज आई। वे तुरत कूए पर पहुंचे तो उन्हें घासीलाल औंधे मुह रस्सी से बन्धे हुए नजर आया। तुरत लड़को ने उन्हें कूए से खीच लिया। कूए से बहार आने के कुछ क्षण के बाद स्वस्थता का अनुभव किया।

घटनाएं छोटी होती है किन्तु कभी कभी जिन्दगी को नया मोड देती है। यह मनुष्य का जीवन

भी छोटी छोटी घटनाओं का योग ही है। कईबार छोटी छोटी घटनाएं अपना स्थाई प्रभाव छोड जाती है। पेड़ से फल गिरते सभी ने देखा था। किन्तु उस छोटी सी घटना ने महान वैज्ञानिक न्यूटन के सामने एक नया सिद्धान्त उपस्थित कर दिया पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण। हमारे चरितनायकजी के जीवन में भी इस घटना का बहुत ही स्थायी प्रभाव पड़ा। वे घर आये और प्रातः काल की घटित घटना को अथ से इति तक सेठ से कही। ठाकुर के इस व्यवहार से सेठ अत्यन्त क्रुद्ध हुए और उन्होंने उसे सजा देने का निश्चय किया ठाकुर का नाम जानकर वे उसे पकड़ने के लिए घर से निकले तो हमारे चरितनायक ने उन्हें रोक दिया और कहा—सेठ साहब! अब उस ठाकुर को पकडकर सजा देने का कोई अच्छा परिणाम नहीं निकलेगा। इस से वैर की परम्परा बढेगी और मेरे कारण आप व्यर्थ की परेशानी में फँस जाएँगे। दूसरी बात यह है कि अब मै यहां नहीं रहना चाहता। मैं अन्य किसी गांव में जाकर अपना जीवन निर्वाह करूँगा। सेठ ने बहुत समझाया और उसे अपने घर पर ही रहने का आग्रह किया। समझाने पर भी चरितनायक को अपने घर रखने में असमर्थ पाया तो उन्होने उन्हें जाने की आज्ञा दे दी। वीर पुरुष जब अपने मन में निश्चय कर लेता है तो असंभव को भी संभव कर दिखाता है। संसार की विघ्न बाधाएँ कितनी ही क्यों न अडी खडी हो उसे अवरुद्ध नहीं कर सकती। सेठ से आज्ञा प्राप्त कर वे एक अज्ञात दिशा की ओर चल दिये। चलते चलते वे रावलियां पहुँचे।

रावलियां गांव अरावलि की छोटी २ पहाडों के बीच बसा हुआ एक छोटा गांव है यहा प्राय: किसानों की बस्ती ज्यादा है। कुछ समय तक एक सेठ के घर रहे वहां भी जब मन नहीं लगा तो वे वहां से चल दिये और वापिस जसवंतगढ (तरावली का गढ) आ गये। वहाँ श्रीमान् देवीचन्दजी सा. बोल्था के घर रहने लगे।

उन दिनों में पूज्य आचार्यम० श्री जवाहरलालजी महाराज सा. तपस्वीजी श्री मोतीलालजी महाराज आदि सन्त उदयपुर का अपना प्रभावशाली चातुर्मास पूर्ण कर विचरते हुए तरपाल पहुँचे। तरपाल जसवंतगढ से नजदीक ही बसा हुआ एक छोटासा गाँव है। पूज्यश्री का आगमन सुन कर आस पास के गाँव वाले सैकड़ों की संख्या में पूज्य श्री के दर्शनार्थ तरपाल पधारे। जसवंत गढ का श्रावक समूह भी पूज्य श्री के दर्शनार्थ तरपाल पहुँचा। इसमें हमारे चरितनायकजी भी थे। सबके साथ ये भी पूज्य श्री का प्रवचन सुनने व्याख्यान मण्डप में पहुँचे। व्याख्यान चल रहा था। उस समय व्याख्यान में सूत्र कृतांग सूत्र की निम्नलिखित गाथा पर विवेचन चल रहा था—

एवं खु नाणिणो सारं, जं न हिंसइ किंचणं। अहिंसा समयं चेव, एयावंतं वियाणिया ॥१॥

पूज्य श्री के मुख से इस गाथा या सरल व्यापक एवं रहस्य पूर्ण अर्थ सुनकर चरितनायक जी के हृदय पर गहरा प्रभाव पडा। ज्ञान प्राप्त करने का एक मात्र साधन अहिंसा है। अहिंसा का पालन करने से अपने आप सब गुणों की प्राप्ति हो जाती है। अहिंसा का अर्थ है किसी भी प्राणी को मन, वचन और काया से कष्ट न देना। संसार में रहते हुए सम्पूर्ण अहिंसा का पालन गृहस्थ के लिए अशक्य है। क्योंकि गृहस्थ जीवन में छोटे बडे ऐसे अनेक कार्य स्वयमेव हो जाते हैं, जिनमें हिंसा अनिवार्य होती हैं इसलिए संपूर्ण अहिंसा का पालन करना हो तो इस संसार को छोडकर अनगारव्रत धारण कर निराकुल भाव से अहिंसा का पालन करना चाहिए। अनगार जीवन में ही व्यक्ति तीन करण तीन योग से अहिंसा का संपूर्ण पालन कर सकता है। यह श्री वीतराग प्रभु की देशना है। भगवान की यह वाणी सुनने का बार बार सुअवसर प्राप्त नहीं हो सकता। अनेक जन्मों की तपश्चर्या के बाद हमे यह मानव जीवन प्राप्त हुआ है। भगवान श्रीमहावीर ने कहा है—

कम्माणं तु पहाणाए आणुपुव्वी कयाइव्वीं । जीवासोहिमणुपत्ता आययन्ति मणुस्सयं ॥

अशुभ कर्मो का भार दूर होता है, आत्मा शुद्ध पवित्र और निर्मल बनता है तब कहीं वह मनुष्य की सर्व श्रेष्ठ गति को प्राप्त करता है महा भारत में भी कहा है—

"गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि नहीं मानुषात् श्रेष्ठवरं हि किञ्चित"

आओ, मैं तुम्हें एक रहस्य की बात बताऊँ ? यह अच्छी तरह मन में दृढ़ करलो कि संसार में मनुष्य से बढ़कर और कोई श्रेष्ठ नहीं है । सन्त तुलसीदासजी की यह चौपाई सर्व जन विश्रुत है—बडे भाग मानुष्य तन पावा, सुर दुर्लभ सब ग्रंथन्हि गावा" बडे भाग्य से ही यह मनुष्य देह प्राप्त हुआ है । जब हमे देव दुर्लभ मनुष्य जन्म मिल ही गया है तो हमें क्षण मात्र का प्रमाद किये बिना अपने जीवन को शुद्ध बनाने के लिए अहिंसा धर्म का पालन करने में लग जाना चाहिए, भगवान ने तो क्षणमात्र का भी प्रमाद न करने की चेतावनी दी है, उत्तराध्यन सूत्र में "समयं गोयम ! मा पमायए" हे गौतम ! क्षणमात्र का भी प्रमाद न कर ।

इस व्याख्यान का बालक घासीलाल पर अद्‌भुत प्रभाव पडा । बैठे बैठे ही मन अनगार व्रत की ओर दौडने लगा । त्यागी वैरागी जैनमुनियों के प्रवचन सुनने का इन्हें सर्व प्रथम यही सुअवसर मिला । उस दिन पूज्य श्री ने मानवजीवन और अहिंसा पर इतना अच्छा प्रभाव डाला कि सारी जैन अजैन परिषद वैराग्य रंग में रंग गई । सैकड़ों अजैन व्यक्तिओं ने जीववध का त्याग किया । जैन लोगों ने भी यथाशक्ति त्याग—प्रत्याख्यान ग्रहण किये । व्याख्यान क्या था ? स्वयं मुनिश्री का वैराग्यमय जीवन ही वाणी का रूप धारण कर सामने आया था । उनका जीवन बोल रहा था हृदय को हिलानेवाले उनके इस अमृतमय पवित्र व्याख्यान को सुनकर सब से अधिक सच्चरित्र, सरलहृदय चरितनायक प्रभावित हुए वह वहीं अपनी सुध बुध भूलकर वैराग्य के प्रवाह में बह गए । व्याख्यान समाप्त हुआ । और सब लोग भोजन मण्डप में पहुँचे । सब के साथ बालक घासीलाल भी भोजन मंडप में पहुंचा उस दिन आगन्तुक सज्जनों के आतिथ्य के लिए विविध मिष्ठान्न भोजन का आयोजन किया गया था । बडे प्रेम और सम्मान के साथ स्थानीय जनता ने दर्शनार्थियों को भोजन कराया । चरितनायकजीने भी भोजन किया । सन्तों के प्रति श्रावकों का पूज्य भाव आतिथ्य सत्कार एवं जैनमुनियों के त्याग भाव को देखकर घासीलाल बडा प्रभावित हुआ । भोजन करने के बाद सब लोग आराम में लगे हुए थे । उस समय अकेले ही ये पूज्यश्री की सेवा में पहुँचे । वन्दन कर वे उनके समीप बैठ गये ।

पूज्यश्री ने आगन्तुक बालक से पूछा—तुम्हारा नाम क्या है ? बालक—मेरा नाम घासीलाल है ।

पूज्यश्री—तुम कहाँ के रहनेवाले हो ? बालक—मेरा जन्मस्थल तो बनोल है किन्तु इस समय जसवन्त गढ में सेठ देवीचन्दजी सा. बोल्या के घर काम करता हूँ ।

पूज्यश्री—तुम्हारे माता पिता अभी क्या करते हैं ? बालक—मैरे माता पिता का स्वर्गवास हो गया । अब मैं अकेला ही हूँ ।

मुनिश्री—व्याख्यान सुना ?

चरितनायक—जी हां, आपका व्याख्यान मुझे बडा प्रिय लगा । आपके व्याख्यान से मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि देव दुर्लभ मानव जीवन जब मुझे मिला है तो मैं आपकी तरह उसे सार्थक क्यों न करूँ । क्योंकि यह जीवन पानी के बुलबुले के समान है । हवा का एक हलका सा झोंका उसे समाप्त कर देता है । फिर भी मनुष्य न जाने किन किन आशाओं से प्रेरित होकर ऊंचे ऊंचे हवाई महल बनाता है । मनुष्य का धन, वैभव और अत्यन्त प्रिय जन सभी यहीं रह जाते हैं और हंस निकल चला जाता है । सूर्य प्रातः उदय होकर अन्धकार—कालिमा का समूलच्छेद कर संसारमें उज्ज्वल प्रकाश का

प्रसार करता है किन्तु सायंकाल का वही सूर्य अपनी प्रकाश–गरिमा को समेट कर अस्ताचल की गोद में अपने को छुपाकर आखों से ओझल हो जाता है। मानव जीवन की भी यही स्थिति है। अतः इस नश्वर मानव देह का आत्मकल्याण के लिए जितना भी उपयोग हो सके कर लेने का विचार रखता हूँ।

मुनिश्री—क्या तुम साधु बनना चाहते हो?

चरितनायक—यदि आपको आपत्ति न हो तो मैं साधु बनने की इच्छा रखता हूँ।

दृढ और स्थायी निश्चय सफलता का मुख्य कारण है। महापुरुष अपने हित–अहित का और संभावनाओं का विचार करके एक बार जो निश्चय कर लेते हैं उससे फिर विचलित नहीं होतें। विघ्न--बाधाएँ उन्हें अपने पथ से डिगा नहीं सकती। आपत्तियां और विपत्तियाँ उनका रास्ता नहीं रोक सकतीं। उनका संकल्प इतना प्रबल होता है कि सफलता उनकी ओर खींची चली आती है। श्री घासीलालजी ने मुनि--व्रत ग्रहण करने का प्रबल संकल्प कर लिया था; फिर संसार की कौन--सी शक्ति थी जो उन्हें विचलित करने में समर्थ होती?

मुनि श्री ने मन ही मन सोचा–किसी भी मनुष्य का असाधारण विकास पूर्वजन्म के संस्कारों के विना नहीं हो सकता। बाल्यावस्था में धर्म के प्रति इस प्रकार की प्रीति उत्पन्न होना निश्चय ही पूर्व जन्म के संस्कारों का परिपाक है। प्रथम उपदेश से ही इस बालक के मन में दीक्षा लेने की जो प्रबल इच्छा उत्पन्न हुई है वह इसके भावी उज्ज्वल जीवन की परिचायिक है। इसकी धर्म–श्रद्धा तात्कालिक भावावेश का परिणाम नहीं किन्तु चिरकाल से संचित संस्कारों का फल है। बालक दीक्षा ग्रहण कर अवश्य ही शासन की प्रभावना करेगा। बालक घासीलाल के दीक्षा विषयक दृढ संकल्प को जानकर उसे वैराग्य की कसौटी पर कसना अधिक उचित समझा। उन्होंने मुनि जीवन की कठिनता को बताते हुवे कहा घासीलाल! दीक्षा लेने का शुभ संकल्प तो अच्छा है किन्तु मुनिजीवन तो नंगि तलवार की धार पर चलने जैसा है। संसार के सभी साधुओं की अपेक्षा जैन साधु का आचरण अत्यन्त कष्टदायक है उसकी तुलना आस–पासमें नहीं मिल सकती। वस्त्र, पात्र आदि उपधि भी अत्यन्त सीमित एवं संयमोपयोगी ही रखता है। अपने वस्त्र पात्रादि वह स्वयं उटाकर चलता है। संग्रह के रूप में किसी गृहस्थ के यहाँ जमा करके नहीं छोड़ता है। सिक्का नोट एवं चेक आदि के रूप में किसी प्रकार की भी धन सम्पति नहीं रख सकता। एक बार का लाया हुआ भोजन अधिक से अधिक तीन प्रहर ही रखने का विधान है, वह भी दिन में ही। रात्रि में तो न भोजन रखा जा सकता है और न खाया ही जा सकता है। और तो क्या, रात्रि में एक पानी का बूँद भी नहीं पी सकता। मार्ग में चलते हुए चार मील से अधिक दूरी तक आहार पानी नहीं ले जा सकता। अपने लिए बनाया हुआ न भोजन ग्रहण करता है और न वस्त्र पात्र, मकान आदि। वह सिर के बालों को हाथ से उखाडता है, लोंच करता है। जहाँ भी जाना होता है नंगे पैरों–पैदल जाता है, किसी भी सवारी का उपयोग नहीं करता। जैनमुनि का जीवन सम्पूर्ण अहिंसक होता है। मन, वाणी एवं शरीर से कामक्रोध, लोभ, मोह तथा भय आदि की दूषित मनोवृतियोंके साथ किसी भी प्राणी को शारीरिक एवं मानसिक आदि किसी प्रकार की पीडा या हानि नहीं पहुँचाना। पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु, वनस्पति तथा हलते चलते सभी जीवों की रक्षा करना उसका प्रथम कर्तव्य होता है। जैन साधु न कच्चा जल पीता है। न अग्नि का स्पर्श करता है। न सचित वनस्पति का ही उपयोग करता है। सदा भूमि पर चलता है नंगे पैरों चलता है और आगे साढे तीन हाथ परिमाण भूमि को देखकर फिर कदम उठाता है। मुख के उष्ण श्वास से भी किसी वायु आदि सूक्ष्म जीव को पीडा न पहुँचे इसके लिए मुख पर मुखवस्त्रिका का अहर्निशप्रयोग करता है खुले मुंह बोलने वाला

जैन साधु नहीं होसका ।

जैन श्रमण सत्यव्रत का संपूर्णरूप से पालन करता है । वह मन, वचन काया से न स्वयं असत्य का आचरण करता है न दूसरे से करवाता है और न कभी असत्य का अनुमोदन ही करता है । इतना ही नहीं किसी तरह का सावद्य वचन बोलना भी असत्य ही है अधिक बोलने में असत्य की आशंका रहती है, अतः जैनमुनि अत्यन्त मितभाषी होता है । जैन साधु के लिए हंसी में भी झूठ बोलना सर्वथा निसिद्ध है । प्राणों पर संकट उपस्थित होने पर भी सत्य का आश्रय नहीं छोड़ा जा सकता । जैन साधु निश्चय कारी भाषा नहीं बोलता । सत्य महाव्रत की वाणी में अविचार, अज्ञान, क्रोध, मान माया, लोभ परिहास आदि किसी भी विकार का अंश नहीं होना चाहिए ।

जैनमुनि त्रयोगसे सभी प्रकार की चोरी का त्यागी होता है वह मन, वचन और कर्म से न स्वयं किसी प्रकार की चोरी करता है, न दूसरों से करवाता है, और न चोरी करने वाले का अनुमोदन ही करता है । और तो क्या, वह दाँत कोतरने के लिए तिनखा भी बिना आज्ञा ग्रहण नहीं कर सकता है । यदि साधु कहीं जंगल में हो, वहां तृण, कंकर,, पत्थर अथवा वृक्ष के नीचे छाया में बैठने और कहीं शौच जाने की आवश्यकता हो तो शास्त्रोक्त विधि के अनुसार उसे शक्रेन्द्र महाराज की ही आज्ञा लेनी होती है।अभिप्राय यह है कि बिना आज्ञा के कोई भी वस्तु ग्रहण नहीं की जा सकती और न उसका क्षणिक उपयोग ही किया जा सकता है । अचौर्य व्रत की रक्षा के लिए साधु को बार-बार आज्ञा ग्रहण करने का अभ्यास रखना चाहिये । गृहस्थ से जो भी चीज ले, आज्ञा से ले । जितने काल के लिये ले. उतनि ही देर रखे, अधिक नहीं । गृहस्थ आज्ञा भी देने को तैयार हो परन्तु वस्तु यदि साधु के ग्रहण करने के योग्य न हो तो न ले क्यों कि वस्तु लेने से देवाधि देव श्रीतीर्थङ्कर भगवान की चोरी होती है । गृहस्थ आज्ञा देनेवाला हो; वस्तु भी शुद्ध हो परन्तु गुरुदेव की आज्ञा न हो तो फिर भी वह वस्तु ग्रहण न करें क्यों कि शास्त्रानुसार यह गुरुअदत्त है अर्थात् गुरु की चोरी है ।

मुनि जीवन का सबसे बड़ा कठोर व्रत हैं ब्रह्मचर्य का पालन करना । ब्रह्मचर्य की साधना के लिए काम वेग को रोकना होता है । यह वेग बड़ा ही भयंकर है । जब आता है तो बड़ी से बड़ी शक्तियाँ भी लाचार हो जाती है । मनुष्य जब वासना के हाथ का खिलौना बनता है तो बड़ी दयनीय स्थिति में पहुँच जाता है । वह अपनेपन का कुछ भीं भान नहीं रखसकता, एक प्रकार से पागल सा हो जाता है ।

ब्रह्मचर्य का क्षेत्र बहुत व्यापक है । ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए सभी इन्द्रियों पर नियंत्रण रखना पड़ता है । वही साधक पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन कर सकता है जो ब्रह्मचर्य के नाश करने वाले उत्तेजक पदार्थों के खाने, कामोद्दीपक दृश्यो को देखने और इस प्रकार की वार्ताओं के सुनने तथा ऐसे गन्दे विचारों को मन में लाने से भी बचता है ब्रह्मचर्य की रक्षा के लिए जैन मुनि एक दिन की जन्मी हुई बच्ची का भी स्पर्श नहीं कर सकता । उसके स्थान पर रात्रि में रहने का अधिकार नहीं है । जिन मकान में स्त्री के चित्र हो उसमें भी नहीं रह सकतो है ।

मुनि का पांचवाँ मुख्य व्रत है अपरिग्रह मुनि सोना, चान्दी, धन धान्य द्विपद, चतुष्पद तथा धातु की बनी हुई कोई वस्तु अपने पास नहीं रखता । समय उपयोगी वस्त्र पात्रादि भी शास्त्रोक्त मर्यादा के प्रतिकूल जैनमुनि अपने पास तथा गृहस्थ के घर या स्थानकमें भी पेटी कबाटोंका संग्रह कुछ भी नहीं रखता । सचित्त अचित्त सभी परिग्रह का त्याग मुनि को करना पड़ता है ।

दोनों समय प्रतिलेखन एवं प्रतिक्रमण करना ४२ दोष टालकर आहार पानी ग्रहण करना यह जैन मुनि का मुख्य आचार है । इस प्रकार संक्षिप्त रूप से जैन मुनियों के आचार का परिचय कराने के

बाद मुनिश्री ने चरितनायक से पूछा—क्या ? तुम इन सर्व आचारों का पालन कर सकते हो ?

श्रीघासीलालजी ने तत्काल उत्तर दिया—मैं तो इससे भी कठिन आचरण करने की इच्छा रखता हूँ। चाहे मुझे उसके लिए कितना ही कष्ट क्यों न उठाना पडे। कर्म रहत अवस्था प्राप्त करना अपने हाथ की बात है। संयम किसी भी प्रकार दुःखप्रद नहीं वरन् सुखदायक है। विवेकपूर्वक संयम का पालन किया जाय तो संयम इस लोक में भी सुखदायक है और परलोक में भी।

संयम को इस लोक और परलोक में आनन्द माननेवाले श्री घासीलालजी को अपने शुभ संकल्प में अत्यन्त दृढ पाया तो मुनिश्री ने उसे कुछ दिन तक अपने पास रखने की अनुमति दे दी।

श्री. घासीलालजी के साथ मुनिश्री की बात चीत हो हो रही थी कि श्रावक समुदाय भी मध्याह्न का प्रवचन सुनने मुनिश्री की सेवा में उपस्थित हो गया। मुनिश्री ने समय होते ही प्रवचन के बीच स्थित श्रावकों से मुनिश्री ने कहा—जसवंतगढ के निवासी श्री देवीचंदजी सा. बोल्याके घर रहनेवाला भाई घासीलाल मेरे पास दीक्षा लेने का विचार कर रहा है।

मुनिश्री की अचानक इस घोषणा से उपस्थित श्रावक समुदाय में सन-सनी फैल गई। जिस किसी ने सुना उसका हृदय भक्ति के आवेस से उसकी ओर आकर्षित होने लगा। व्याख्यान समाप्ति के बाद सब ने घासीलाल को मनाने का बहुत प्रयत्न किया परन्तु इसके वैराग्य रंग के सामने सबको झुकना पडा। प्रारम्भिक कुछ विरोध के बाद इसे दीक्षा देने का निश्चय किया। प्रश्न यह आया कि इसे दीक्षा की आज्ञा कौन प्रदान करें। सब इस बात से आशंकित थे कि इसे दीक्षा देने के बाद इसके कुटुंब का कोई व्यक्ति उपस्थित होकर उपद्रव करेगा तो उसका जवाब कौन देगा ?

अन्त में जसवन्तगढ के श्रावक घासीलाल को दीक्षा देने के लिए राजी हुए। श्रावकों ने जसवंत गढ पधारने की मुनिश्री से प्रार्थना की। श्रावकों के आग्रह पर तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी महाराज पं. श्री जवाहरलालजी महाराज एवं अन्य मुनिगण जसवंत गढ पधारे। साथ में वैरागी घासीलालजी भी थे नरावली गढ (जसवंतगढ) पधारने के बाद मुनिश्री ने घासीलालजी की दीक्षा तिथि निश्चित की। दीक्षा काल भी समीप ही आ पहुँचा जिसकी घासीलाल कुछ समय से प्रखर प्रतीक्षा कर रहा था। उस विक्रम संवत १९५८ मिति माघ शुक्ला तेरस गुरुवार पुष्य-नक्षत्र का शुभ दिन उदय हुआ। उसी दिन और उसी समय मोटेगाव (गोगुन्दा) में मन्दिर का ध्वजा रोहन होनेवाला था। सभी लोग उसी उत्सव में लग गये। बाजे वाले जो दीक्षा में आनेवाले थे वे भी नहीं आये और ध्वजा रोहन महोत्सव में चले गये। परिणाम यह आया कि दीक्षा का जो समय निश्चित किया था वह टल गया। अन्त में दीक्षा की प्रतीक्षा करते करते शाम के चार बज गए। ध्वजा रोहन विधि समाप्त होते ही लोग दीक्षा समारोह में उपस्थित हुए। बाजे वाले भी आ गये। और बडे समारोह के साथ घासीलालजी की दीक्षा सम्पन्न हुई।

प्रथम परीक्षा—

दीक्षा सम्पन्न होते ही नियमानुसार नव दीक्षित के साथ मुनिश्री ने विहार कर दिया। तीन चार मील का विहार करने के बाद जब सूर्यास्त होने आया तो पास ही में एक पहाड की सूनी चौकी में मुनिश्री ने निवास किया। रात्रि के समय कुछ लुटेरे मुनिश्री के निवास स्थान पर आये। उस समय नव दीक्षित घासीलालजी महाराज ने नवीन वस्त्र धारण किये थे। लुटेरों ने सोचा होगा ? ये बनियों के गुरु है। वणिक् धनवान होते हैं तो गुरु के पास भी खूब धन होगा। भेट सौगात में इन्होंने काफी

पैसा इकट्ठा किया होगा ? यही सोचकर बडे उत्साह के साथ मुनियों को लूटने आये थे। उन्हें क्या पता था कि भिक्षा मांगकर अपनी आजीविका चलाने वाले, धन संपत्ति को तृण की तरह तुच्छ समझने वाले, परिग्रह शून्य इन मुनियों के पास रखा ही क्या है। कुछ लकड़ी के पात्र, कुछ वस्त्र और धर्म शास्त्र ही उनके पास थे। फिर सोचा—शास्त्रों के डिब्बों में अवश्य दो चार सौ की नोटें तो होगी उन्होंने मुनिश्री से एक एक डिब्बे खुलवाये। वस्त्रों की पोटलियां खुलवाई किन्तु दुर्भाग्यवश कुछ भी नहीं मिला। अभागे लुटेरों को लूटने के लिए मिले भी तो जैन साधु ही। न जाने किस मुहूर्त में लूटने के लिए ये बेचारे निकले होंगे ? लुटेरों ने सोचा—भले ही इन साधुओ के पास कुछ भी न मिला हो किन्तु इस छोटे साधु के नये वस्त्र तो हैं इन्हें ही ले लें यह सोचकर कुछ लुटेरों ने साधुओं के पास के सभी अच्छे २ कपडे छीन लिए। यहाँ तक को घासीलालजी महाराज के कमर में पहनने का नूतन चोलपट्टा चादर आदि सर्व सामग्री ले लि। उस समय मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज ने लुटेरों को जैन साधु का परिचय देते हुए कहा :—हम जैन मुनि हैं। रुपया पैसा कुछ भी पास में नहीं रखतें। भोजन भी भिक्षा से प्राप्त करते हैं। वस्त्र भी भक्तों से मांगकर पहनते हैं। उपदेश देकर लोगों को अच्छा मार्ग बताते हैं। हमें लूटने से तुम्हें क्या लाभ होगा ? मुनि श्री के समझाने पर एक लुटेरे ने घासीलालजी महाराज का चोलपट्टा वापस कर दिया और बाकी के वस्त्र लेकर वे चले गए। इस अवसर पर नवदीक्षित मुनि श्री घासीलाल-जी ने जो हिम्मत और धैर्य का परिचय दिया वह अपूर्व था। वे किञ्चित भी नहीं घबराये। संयमी जीवन की यह पहली परीक्षा थी। भविष्य किसने देखा है ? कौन जाने इस साधक जीवन में कितने और कैसे कैसे कष्ट झेलने पडेंगे ? ऐसे ही अवसर तो आत्मा को उज्जवल बनाने के लिए आते हैं इसमें घबराने की क्या आवश्यकता है।

दूसरे दिन प्रातः होते ही मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने अपनी मुनि मण्डली के साथ विहार कर दिया। अगले गांव पदराडे पहुंचने पर लोगों ने जब यह घटना सुनी तो उन्हे असह्य वैदना हो गई। उन्होंने पुलिस में रिपोर्ट कर के चोरों को पूरा दण्ड देने का निश्चय किया। मुनिश्री को जब इस बात का पता लगा तो उन्होंने श्रावकों को बुलाकर रिपोर्ट न करने के लिये कहा। उनमें से एक श्रावक ने कहा—चोरों को तो दण्ड देना ही चाहिए। उन्हें दण्ड न दिया गया तो वे आपको तरह अन्य मुनिराजों को भी सता सकते हैं। मुनिश्री तो क्षमा के सागर थे। वे अपराधी को दण्ड देना अपने सिद्धांत के विरुद्ध मानते थे। इस प्रकार पदराडे से हमारे चरितनायक अपने गुरुदेव के साथ मेवाड के विविध नगरों में ग्रामों में विहार करने लगे। मेवाड के क्षेत्रों को पावन करते हुए पूज्य आचार्य श्री की सेवा में मारवाड की और पदार्पन्न हुआ। स्वल्प बुद्धि होने के कारण मुखाग्र करने में अधिक समय लगता था इस विषमता को दूर करने के लिए बाल मुनि श्री घासीलाल जी म० ने आयंबिल वर्द्धमान तप चालू किया आयंबिल तप में विगय का त्याग लुखा भोजन पानी में डालकर खाया जाता है। इस प्रकार का व्रत करना दुष्कर लगता है। बाल मुनि तो आयंबिल तप को और भी दुष्कर रूप से करते थे। सुथार [खाती] जहां लकडी वेरते, वहां से लकडो का बारीक बूरा लाते और उसे पानी में घोलकर पी जाते। नीम के सुखे पत्ते, नीम की सुखी मंजरियां (फूल), राख आदि तुच्छ वस्तुओं को लाते और पानी में घोलकर पीते। इस प्रकार कठोर आयम्बिल तप ज्ञान वृद्धि के निमित्त करते हुए सरस्वती देवी की अनुकृपा प्राप्त की यों भी भोजन के प्रारम्भ में कुछ एक लूखी रोटी सर्वप्रथम पानी में डालकर आयम्बिल की तरह खाने के बाद ही अन्य आहार करना यह सदा का नियम बनालिया था। कठोर तपश्चर्या और निरन्तर अभ्यास को वृत्ति से आपका ज्ञानावरण का ज्यों ज्यों क्षयोपशम होता गया त्यों त्यों बुद्धि तीव्र होने लगी। जिस एक

श्लोक को याद करने में आपके दो–दो दिन बीत जाते थे वहाँ एक बार ध्यान पूर्वक पढ़कर ही आप उसे याद कर लेते थे। आप अपने गुरुजनों के प्रति अति विनम्र थे आपकी बुद्धि की वृद्धि में यह भी एक खास कारण था।

वि. सं. १९५९ का प्रथम चातुर्मास जोधपुर में

दीक्षा लेने के पश्चात मारवाड़ के विविध क्षेत्रों को पावन करते हुए आपने प्रथम चतुर्मास पूज्य गुरुदेव श्री जवाहरलालजी महाराज श्री के साथ व्यतित किया। इस चतुर्मास में तपस्वी मुनि श्री मोती लालजी महराज साहेब भी आप के साथ थे। तपस्वी श्री मोतिलालजी महराज सा. ने इस चतुर्मास के बीच दीर्घ तपस्या की थी। तपस्या के पूर के अवसर पर त्याग प्रत्याख्यान अच्छी मात्रा में हुए। बालक मुनि श्रीघासीलालजी म. ने भी उपवास आयंबिल उनोदरि आदि तप किये।

तपस्या के साथ साथ आप गुरुदेव की सेवा में बैठकर अध्ययन भी करने लगे। सेवाभावी बाल मुनि पर गुरुदेव की पूर्ण कृपा थी इसके अतिरिक्त पूर्व संचित पुण्योंदय के कारण आपके ज्ञानावरणीय कर्मो का ऐसा क्षयोपशम हुआ था कि जिस पाठ को आप सुनते उसे तुरत याद कर लेते मानो उस पाठ को आपने पहले ही पढ रखा हो। गुरूदेव के मुख से जैसा उच्चारण सुनते वैसा ही आप स्पष्ट उच्चारण भी कर लेते थे। अनेक जन्मों के अभ्यास के बाद मनुष्य विद्वान होता है। "बहूनां जन्मनांमते विवेकी जायते पुमान्" इस प्रकार अनेक जन्मों तक निरन्तर विद्याभ्यास करने के पश्चात आपने ऐसी निर्मल बुद्धि प्राप्त की थी। फलस्वरूप आपने चातुर्मास काल में दशवैकालिक सूत्र को कंठस्थ कर लिया। और उत्तराध्ययन सूत्र प्रारंभ किया।

जोधपुर का चातुर्मास समाप्त कर आप पू० गुरुदेव के साथ विहार करते हुए समदडी पधारे। समदडी से विहार कर आप गुरुदेव के साथ बालोतरा पधारे। उन दिनों में तेरापन्थ संप्रदाय के आचार्य डालचन्दजी स्वामो बालोतरा में विद्यमान थे। वादिगजकेसरी पू. जवाहरलालजी महाराज सा० के साथ उनका शास्त्रार्थ हुआ। इस शास्त्रार्थ को सुनने का अवसर आपको भी प्राप्त हुआ। वादिगजकेसरी पू. गुरु देव के अकाट्य तर्क व आगमोचित उत्तर के सामने आ. डालचन्द जी के तर्क निःप्रभ हुए ओर वे शास्त्रार्थ को लम्बा न कर तुरत वहां से विहार कर गये।

बालोतरा से विहार करके आप गुरु देव के साथ पंचपद्रा समदडी गढ सिवाना पाली सोजत ब्यावर आदि क्षेत्रों को पालन करते हुए अजमेर पधारे।

वि. सं. १९६० का द्वितीय चातुर्मास ब्यावर

अजमेर क्षेत्र को पावन कर हमारे चरितनायक जी का चातुर्मास पूज्य गुरुदेव के साथ ब्यावर हुआ आपने इस चतुर्मास की समाप्ति तक 'उत्तराध्ययन' सूत्र भी सम्पूर्ण कण्ठस्थ कर लिया। चातुर्मास समाप्ति के बाद आपने पूज्य गुरुदेव की सेवामें रहकर अनुत्तरोववाई ओर अंतगड सूत्र भी याद कर लिया आप को पढने की बडी लगन थी। रात्रि के समय चन्द्रमा के प्रकाश में घण्टों तक पढा करते थे। अध्ययन के साथ साथ तपस्वो एवं वृद्ध सन्तों की ग्लानि रहित भाव से खूब सेवा करते थे। बालमुनि होने के नाते सब साथी सन्तों की कृपा आप को प्राप्त थी। आप को सन्तो की सेवा में बडा आनन्द आता था ब्यावर का चातुर्मास समाप्त कर आप गुरुदेव के साथ जयतारण पधारे। जयतारण में तेरापन्थ संप्रदाय के साधु फोजमलजी के साथ पू० जवाहरलालजी महाराज का एक मास तक शास्त्रार्थ चला। इस शास्त्रार्थ में फौजमलजी की हार हुई। शास्त्रार्थ को सुनने का आप को भी अच्छा अवसर मिला। शास्त्रार्थ में विजय प्राप्त करके पूज्य जवाहरलालजी म. सा. ने अपनी मुनि मण्डली के साथ विहार कर दिया

कालू केकिन, भंवाल बलुन्दा नागोर आदि अनेक क्षेत्रों को पावन करते हुए आप पू. गुरुदेव के साथ भीनासर पधारे ।

वि. सं. १९६१ का तृतीय चातुर्मास बीकानेर

भीनासर से आप पूज्य गुरुदेव के साथ बीकानेर पधारे । बीकानेर संघ ने पूज्य गुरुदेव से बीकानेर में ही चातुर्मास व्यतीत करने की प्रार्थना की । बीकानेर के संघ की भक्तिवश इस वर्ष का चातुर्मास बीकानेर में ही व्यतीत करने का निश्चय किया । हमारे चरितनायक भी पूज्य गुरुदेव के साथ ही में थे । ये उपस्थित मुनि मण्डल में सब से छोटे थे । । वय में भी छोटे और दीक्षा में भी । फिर भी चरितनायक की भद्रता सरलता विनयभाव एवं सेवावृत्ति देखकर सभी बडे सन्त इनसे बडा प्रेम करते थे । इनकी प्रतिभा और सेवावृत्ति से वे बडे प्रभावित थे ।

व्यक्ति का महत्व इसी में है कि वह जहां भी रहे जिससे भी मिले उनके सहयोगी बन कर रहे। सहयोग का परस्पर आदान व प्रदान प्रगति के लिए दोनों अपेक्षित होते हैं । जो औरों की प्रगति में सहयोगी बनना जानता है । सहयोग देना आभार नहीं कर्तव्य पालन है । कर्तव्य पालन को जगत में आभार मानना बौद्धिक कुंठता व अहं का पोषण है । हमारे चरितनायकजी सहयोग लेने की अपेक्षा सहयोग देना अधिक पसन्द करते थे । उन्होंने अपने गुरुजनों से यही सीखा था निष्काम भाव से सेवा वे सम्प्रदाय के जिस किसी भी मुनि के सम्पर्क में आते अपने विनयशील व्यवहार एवं सेवावृत्ति से उसे मोह लेते थे । इनकी आत्मा प्रारंभ से ही बहुत जाग्रत थी । हमेशा बड़ी सावधानी से रहते की कहीं कोइ अज्ञानभाव से किसी मुनि की आशातना न हो जाय । शरीर में आलस्य बिलकुल नहीं था अत एव गुरुजनों की ओर से आज्ञा मिलने में देर भले हो हो जाय किन्तु इनकी ओर से आज्ञापूर्ति में देर नहीं होती थी । शरीर स्वस्थ हो या अस्वस्थ किसी कार्य के लिए नकार करना ये कभी जानते ही न थे । कठिन से कठिन सेवा का काम भी ये प्रसन्न मुद्रा से करते थे । आहार लाना हो पानी लाना हो पग चंपी करनी हो कुछ भी सेवा का काम हो हमारे चरितनायक एक वीर सिपाही की तरह अपने आपको सदा तैयार रखते थे । चरितनायक की वाणी में अतीव माधुर्य था । गुरुजनो के प्रति आदर एवं सम्मान की भावना उनके प्रत्येक शब्द से स्पष्टतः व्यक्त होती थी । वे नपी तुली भाषा में बोलते और प्रत्येक की पद मर्यादा का ख्याल रखते । इन्होंने बाल कंधों पर वृद्धों जैसा विवेकशील मस्तिष्क पाया था । ये प्रारंभ से ही इतने मेधावी एवं संयमशील थे कि कहीं भी अपन पद सीमा से बाहर नहीं होते थे ।

वि. सं. १९६२ का चातुर्मास उदयपुर

बीकानेर का चातुर्मास समाप्त कर आप पूज्य गुरुदेव के साथ नागोर पधारे । नागोर से अजमेर होते हुए आप आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज के साथ नसीराबाद पधारे ।

नसीराबाद से तपस्वी श्रीमोतीलालजी महाराज तपस्वी श्रीराधालालजी महाराज तपस्वी श्रीपन्नालालजी महाराज, तपस्वी श्री धूलचन्दजी महाराज, तपस्वी श्रीउदयचन्दजी महाराज तपस्वीश्री मयाचन्दजी महाराज पंडित प्रवर गुरुदेव श्री जवाहरलालजी महाराज एवं हमारे चरितनायक बालक मुनि श्रीघासीलालजी महाराज आदि नौ मुनिराज अजमेर, ब्यावर; पाली मारवाड जंकसन (खारची) सादडी आदि मुख्य मुख्य क्षेत्रों को पावन करते हुए उदयपुर पधारे ।

वि. सं. १९६२ का चातुर्मास उदयपुर में किया ।

उदयपुर का चातुर्मास बहुत महत्वपूर्ण रहा कई तपस्वी मुनियों का मिलन था । इन तपस्वी मुनियों ने लम्बी लम्बी तपस्याएँ की । तपस्वी मुनियों की प्रेरणा से स्थानीय श्रावकों ने भी बहुत तपस्याए की। विविध प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान किये ।

इस चतुर्मास में नौ सन्तों में से छ सन्तों ने इस प्रकार की तपस्या की—

१ तपस्वी श्री मोतीलालजी म. ४१ उपवास २ ,, ,, राधालालजी म. ३० ,,
३ ,, ,, पन्नालालजी म. ६१ छाछ के पानी के आधार ४ ,, ,, धूलचन्दजी म. ३५ ,,
५ ,, ,, उदयचन्दजी म. ३१ ,, ६ ,, ,, मायाचन्दजी म. ४१ ,,

इन तपस्वियों की दीर्घ तपस्या का प्रभाव स्थानीय संघ पर अच्छा पड़ा। फलस्वरुप धर्मध्यान त्याग प्रत्याख्यान एवं छोटी बडी तपस्याएँ आशातीत हुई। तपस्या के पूर ते दिन अगता पाला गया और सारे शहरों में जीव हिंसा बन्द रही। बालमुनि श्री घासीलालजी महाराज ने भी इस अवसर पर छोटी बडी तपस्या की तपस्या के साथ साथ आपका अध्ययन भी चल ही रहा था। चातुर्मास काल में हमारे चरितनायकजी ने पण्डित प्रवर गुरुदेव के समीप व्यवहारसूत्र की वांचना ली और उसे कण्ठस्थ भी कर लिया। व्यवहार सूत्र की सम्पूर्ण वांचना के बाद बृहद्कल्पसूत्र भी प्रारंभ किया और उसे भी चातुर्मास की समाप्ति तक अर्थ सहित कण्ठस्थ कर लिया।

इस प्रकार उदयपुर का यह महत्व पूर्ण चातुर्मास अपने गुरुदेव के साथ पूर्णकर गुरुदेव के साथ वहां से विहार कर दिया। अनेक स्थानों में धर्मामृत बरसाते हुए आप गुरुदेव के साथ नाथद्वारा पधारे। नाथद्वारा में आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज का भी मुनि मण्डली के साथ आगमन हुआ सब मुनिवरों ने आचार्य प्रवर के सामने जाकर दर्शन किये और परमानन्द का अनुभव किया।

हमारे चरितनायकजी को पूज्यश्री श्रीलालजीमहाराज जैसे महापुरुष के दर्शन नाथद्वारा में हुए श्रद्धेय पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज स्वभाव के बडे शान्त स्वभावी एवं मृदुप्रकृति के एक महान आचार्य थे। समस्त मुनि मण्डल आचार्य श्री के सुयोग्य शासन में अत्यन्त शान्ति और सौजन्य का अनुभव करता था।

हमारे चरित नायक आचार्य श्री के दर्शनपाकर अत्यन्त ही प्रसन्न हुए। उनकी गम्भीर मुखमुद्रा उनका गम्भीर शास्त्रज्ञान उनकी प्रभावडालनेवालीगम्भीरवाणी चरितनायकजी केलिए अनुपमआकर्षण पैदा करने लगी। चरितनायक जब इस महापुरुष के संपर्क में आये तो सहसा उनकी मधुरकृपा के पात्र बनगये। उनकी भविष्य की और झांकने वाली आखों ने लघुमुनि में विलक्षण प्रकाश जगमगाता पाया चारित्रनायक की विनयभावना विलक्षणप्रतिभा वाकचातुरी और विवेक शीलता को देखकर अत्यंत मुग्ध हो गये। उन्होंने एक दिन पं. मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज से कहा—"तुम बडे भाग्यशाली हो तुम्हें योग्य शिष्य मिला है। देखना अच्छी तरह से इसकी सार संभार रखना और पढा कर योग्य बनाना। यह एक दिन हमारे सम्प्रदाय के भाग्याकाश का उज्ज्वल नक्षत्र बनेगा।"

आचार्य श्री का यह आशीर्वाद; चरित्तनायकजी के लिए महान वरदान बन गया इतना आशिर्वाद ही इनके लिए कम नहीं था। ईन्हें अपनी योग्यताकाअभिमान नहीं हुआ प्रत्युत अधिक विनम्र हो अपनीसादना में जुटगये। गुरु सेवा और शास्त्रों का अध्ययन इनके जीवन के मुख्य अंग बनगये, उस समय नाथद्वारे में शाँतस्वभावि शास्त्रज्ञ पू. पं. रत्नमुनिश्री मन्नालालजी महाराज भी विराजमान थे। बाल मुनि श्रीघासीलालजी मा. वन्दना के लिए उनके पास पहुंचे। भव्य ललाट, गौरवपूर्ण गठिला और सुन्दर शरीर वाले इस बाल मुनि को देखकर बडे प्रभावित हुए। उन्होंने सहज भाव में बालमुनि की ओर दृष्टि डाल कर कहा—घासीलाल। तेरा भविष्य बडा उज्वल है। अपनी योग्यता बुद्धि चातुर्य से तू शासन प्रभावना के अनेक कार्य करेगा। मुनिश्री जवाहरलालजी बडे भाग्यशाली है कि तुझ जैसा सुयोग्य शिष्य रत्नका उन्हें योग मिला है। कुछ समय तक नाथद्वारे में पण्डित प्रवर श्री जवाहरलालजी महाराज आचार्य श्री की सेवा में रहे। उस समय नाथद्वारे में २६ मुनिराज विराजमान थे। हमारे चरितनायक जी को इन विशाल सन्त समुदाय के दर्शन का उनके ज्ञान और अनुभव का अपूर्व लाभ प्राप्त हुआ।

नाथद्वारा पधारते समय कोठारिया गांव में तपस्वी श्री बालचन्दजी महाराज को अशाता वेदनी कर्म के उदय से अचानक लकवा हो गया। कुछ मुनिराजों ने जिनमें हमारे चरितनायकजी भी सम्मिलित थे उन्हें उठाया और नाथद्वारा में ले आये। नाथद्वारा में तपस्वी श्री बालचन्दजी महाराज की हमारे चरितनायकजी ने अपूर्व सेवा की। उस समय इनको सेवावृत्ति को देखकर दूसरा नन्दिषेणमुनि की उपमा से उपमित किया।

नाथद्वारा में कुछ दिनों तक पूज्यश्री तथा अन्य स्थविर सन्तों की सेवा का लाभ प्राप्त करके आपने अपने गुरुदेव के साथ विहार कर दिया। राजनगर, कांकरोली, कुमारिया, मावली, आदि स्थानों को पावन करते हुए आप गुरुदेव के साथ उंठाला पधारे। उंठाला से विहारकर आप पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज की सेवामें पुनः उदयपुर पधारे। उदयपुर में आचार्य श्री की कुछ दिन तक सेवा कर के पंडित प्रवर श्री जवाहरलालजी महाराज सा एवं बडे चान्दमलजी महाराज ठाने २ ने झाडोल की ओर विहार किया। हमारे चरितनायकजी आचार्य श्री की सेवामें ही कुछ दिन तक रहें। और उनसे शास्त्रों का अध्ययन करते रहे। आचार्य श्री ने हमारे चरितनायकजी के साथ नाथद्वारे की ओर विहार किया। नाथद्वारा पहुँचने के बाद पंडित प्रवर श्री जवाहरलालजी महाराज भी झालावाड के क्षेत्रों में शासन की अपूर्व प्रभावना करते हुए नाथद्वारा पधारे। नाथद्वारा में कुछ दिन तक आचार्य श्री की सेवा कर आप गुरुदेव श्री जवाहरलालजी महाराज के साथ गंगापुर पधारे। गंगापुर में गुरुदेव श्री जवाहरलालजी महाराज का तेरह पंथियों के साथ शास्त्रार्थ हुआ। इस शास्त्रार्थ को सुनने का भी अपूर्व अवसर आपको मिला। गुरुदेव ने तेरह पन्थी श्रावकों का अनेक शास्त्रीय प्रमाणों से शंका समाधान किया। फल स्वरुप अनेक श्रावकों ने शुद्ध सम्यक्त्व ग्रहण किया। इस शास्त्रचर्चा में आपको अनेक नई बातें जानने को मिली।

गंगापुर से पोहना, पूर, भीलवाड़ा वेगूं, खदवासा, होते हुए आप गुरुदेव के साथ सिंगोली पधारे सिंगोली मुनिश्री मोतीलालजी महाराज को जन्म भूमि है। महाराज श्री के पदार्पण से यहां के विज्ञ श्रावकों के हर्ष की सीमा न रही। गुरुदेव जैसे अमूल्य निधि को वे चिन्तामणि रत्न के समान समझते थे। इसलिए हाथ में आये हुए इस अमूल्य निधि को विना कुछ आत्मिक लाभ प्राप्त किये हाथ से बाहर नहीं जाने देना चाहिए। ऐसा विचार करके श्रावकों ने मासकल्प तक यहीं विराजने को प्रार्थना की। श्रावकों की श्रद्धा के आधीन होकर महाराज श्री ने मासकल्प यहीं व्यतीत किया। सिंगोलीं से विहार कर वेगूं होते हुए पारसोली पधारे। पारसोली के रावजी ने गुरुदेव का प्रवचन सुन कर जीव हिंसा का त्याग किया। वहां से आप गुरुदेव के साथ चित्तौड़ पधारे। चित्तौड़ से राशमी, अरणिया, खांखला, पोटला, गंगापुर, साहडा, कोशीथल देवरिया, और मोकुन्द होते हुऐ आप अपने गुरुदेव के साथ आमेट पधारे। आमेट से झिलुरा, देवगढ, मदोरिया, निम्बाहडा वोराणा होते हुए रायपुर पधारें। रायपुर में कुछ दिन तक विराजने के बाद गुरुदेव के साथ गंगापुर पधारे।

वि. सं. १९६३ का पांचवां चातुर्मास गंगापुर

वि. सं. १९६३ का पांचवां चातुर्मास गंगापुर में ही अपने गुरुदेव के साथ व्यतीत किया। इस चातुर्मास में महान तपस्वी मुनिश्री मोतीलालजी म. ने ३३ दिन की दीर्घ तपस्या की। मुनिश्री पन्नालालजी महाराज ने भी बड़ी लम्बी–लम्बी तपस्याएँ की चरितनायक श्रीघासीलालजी म. सा. ने भी छुटकर तपस्याएँ की। तपस्या के साथ साथ आपका अध्ययन भी चलता रहा। इस चातुर्मास के बीच आपने अमरकोष सम्पूर्ण रूप से याद कर लिया और साथ ही साथ आचारांग सूत्र का प्रथमश्रुतस्कन्ध भी अर्थसहित कण्ठस्थ कर लिया। बुद्धि की अत्यन्त तीव्रता और स्मरण शक्ति की प्रखरता के कारण आप की अध्ययन

की ओर प्रगति निरन्तर बढ़ने लगी । अध्ययन काल में आपकी मानसिक एकाग्रता, विषय के मर्म को समझने की दिव्य शक्ति, और साथ ही साथ परिश्रम विशेषतया उल्लेखनीय है । आपके विनय के कारण गुरुजन आपपर सदा प्रसन्न रहते थे। "विद्या विनयेन शोभते" इस सूक्त को आपने पूरी तरह हृदयंगम कर लिया था । इन सर्व कारणो से ही आपका ज्ञान निरन्तर विकसित होने लगा ।

ज्ञानाराधना के साथ साथ संयम निर्मलता की ओर भी आपका पर्याप्त ध्यान रहता था । "ज्ञान क्रियाभ्यां मोक्ष मार्गः" का तत्त्व आपने अपने जीवन में उतारने का भरसक प्रयत्न किया । ज्ञान और क्रिया की निर्मल आराधना में ही आपने अपनी सफलता और कृतार्थता मानी इस प्रकार ज्ञान और तप की साधना करते हुए १९६३ का चातुर्मास गुरुदेव के साथ व्यतीत किया । चातुर्मास समाप्ति के बाद गुरुदेव के साथ अन्य क्षेत्रों की ओर विहार कर दिया । लाखोला, साहडा, पोटला, राशमी, कपासन आकोला आदि अनेक क्षेत्रों को पावन करते हुए आप अपने गुरुदेव के साथ सादडी पधारे । उस समय बड़ी सादड़ी में आचार्य महाराज पूज्य श्री १००८ श्री श्रीलालजी महाराज विराजमान थे । आपने उनके दर्शन कर अपूर्व आनन्द का अनुभव किया ।

आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज ने श्री घासीलाल जी महाराज की अध्ययन विषयक प्रगति को देख-कर हार्दिक सन्तोष प्रकट किया और इसी तरह सतत जाग्रत रह कर अध्ययन करने की प्रेरणा दी । कुछ समय तक आचार्य प्रवर की सेवा कर के आप अपने गुरुदेव के साथ विहार कर दिया । वहां से आप कानोड़ पधारे । कानोड से डूंगरा, नकूम, छोटी सादड़ी, निम्बाहेड़ा जावद नीमच मंदसौर, सीतामाऊ, नगरी, जावरा सैलाना खाचरोद होते हुए रतलाम पधारे ।

वि. सं. १९६४ का छठ्ठा चातुर्मास रतलाम में

पूज्य गुरुदेव की निरन्तर सेवा करते हुए हमारे चरितनायकजी का चातुर्मास पूज्य गुरुवर्य के साथ रतलाम हुआ । इस चातुर्मास में बहुत उपकार हुआ । प्रतिदिन हजारों व्यक्ति पंडित मुनिश्री जवाहरलाल-जी महाराज सा. के व्याख्यान का लाभ उठाते थे व्याख्यान में भगवती सूत्र एवं सुत्रकृतांग सूत्र का वांचन होता था ।

रतलाम मालवा प्रान्त का एक केन्द्र स्थान है । यहा के श्रावक शास्त्रज्ञ एवं धर्मज्ञ है । निरन्तर सन्तों की चरणरज से पवित्र होने के कारण यहां के लोगों की धर्म की ओर विशेष रुचि है ; शास्त्रज्ञ श्रावक वृन्द प्रतिदिन दोनों समय पर व्याख्यान में उपस्थित होते थे । और भगवती सूत्र एवं सूत्रकृताङ्ग सूत्र के रहस्य को सुन कर अत्यन्त हर्ष का अनुभव करते थे । हमारे चरितनायक जी ने इस चातुर्मास के बीच भगवती सूत्र एवं सूत्रकृतांग सूत्र की गुरुदेव से वाँचना ली और उसके गूढतम रहस्यों को हृदयंगम किया इस चातुर्मास में तपस्वी सन्तों ने तपश्चर्या का उच्चतम आदर्श उपस्थित किया । सेवा भावी स्थविर मुनिश्री मोतीलालजी महाराज ने ४० उपवास, मुनिश्री राधालालाजी महाराज ने ४० उपवास, मुनिश्री पन्नालालजी महाराज ने ५१ उपवास, एवं मुनिश्री उदयचन्द्रजी महाराज ने ३६ उपवास किये ।

इन महान तपस्वियों के पुण्य प्रताप से रतलाम नगर धर्म ध्यान का केन्द्र बन गया । तपस्या के पूर पर धर्म प्रभावना के अनेक कार्य हुए । हमारे चरितनायक ने भी तपस्वियों की बडी सेवा की । और स्वयं ने भी छोटी बडी अनेक तपस्याएँ की । आप श्री का यहां संवत्सरि के पूर्व १२ वाँ लोच हुआ ।

श्रीसंघ ने जिस उत्साह से महाराज श्री को सेवामें चातुर्मास के लिए विनति की, उसी उत्साह भाव से सेवाभक्ति करके और शास्त्र श्रवण का लाभ लेकर चातुर्मास को सफल बनाया । धर्म की भी बहुत प्रभावना हुई । इस प्रकार यहां का चातुर्मास विशेष सुख शान्ति तथा बहुत उत्साह और हर्षपूर्ण वातावरण में सम्पन्न हुआ । चातुर्मास समाप्ति के बाद आप अपने गुरुदेव के साथ परवतगढ, बदनावर, कोद, विड-

वाल, देसाई, कानून नागादा आदि क्षेत्रों को फरसते हुए धार पधारे। प्रखर वक्ता पं.जवाहरलालजी महाराज का आगमन सुन कर धार की जनता ने सन्तों का भव्य स्वागत किया। प्रतिदिन पंडित मुनिवर्य के विविध विषयों पर प्रभावशाली प्रवचन होने लगे। धार रिसायत के उच्च अधिकारी भी प्रतिदिन मुनिश्रेष्ठ का प्रवचन सुन हर्षित होते थे और मुनि श्री के त्याग वैराग्य की भूरि भूरि प्रशंसा करते। धार से विहार कर मुनि श्री बाजना पधारे। यहां मुनि श्री के उपदेश से हजारों लोगों ने विविध त्याग ग्रहन किये। सैकड़ों भीलों ने मांसाहार का त्याग किया।

बाजना से विहार कर शिवगढ होते हुए रतलाम पधारे। प्रसिद्ध वक्ता पं. जवाहरलालजी म. सा. के प्रवचनों को सुनने का अवसर हमारे चरित नायकजी कभी हाथ से जाने नहीं देते। उनके प्रवचन को सदैव हृदयंगम करते। गुरुदेव के निरन्तर सानिध्य में रहने के कारण आपका ज्ञान कोष बढता ही जाता था। उन्ही दिनों रतलाम में श्री श्वे. स्था. जैन कान्फरन्स का दूसरा अधिवेशन था। भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तों से हजारों गण्य मान्य सज्जन कान्फरन्स में सम्मलित होने आये थे। इस अधिवेशन में वाडीलाल मोतीलाल शाह, मोरवी नरेश एवं राजस्थान मध्यभारत के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थ थे। हमारे चरितनायकजी को भी इस अवसर पर समाज के गण्य-मान्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों से मिलने का और उनसे विचारों का आदान प्रदान करने का अवसर मिला।

रतलाम से विहार कर आप गुरुदेव के साथ सैलाना पधारे। वहां प्रवचन पीयूष से भव्य जनों को लाभान्वित करते हुए पंचेड नामली, शिवगढ, रावटी करवड पेटलावद आदि गांवों को पावन कर थांदला पधारे।

वि. सं. १९ ६५ का सातवां चातुर्मास थांदला में

इस वर्ष का चामुर्मास चरितनायकने पूज्य गुरुदेव के साथ थादला में ही व्यतीत तिया। इस चातुर्मास के बीच आपको गुरुदेव के सानिध्य में विविध बाते जानने को मिली। इस चातुर्मास में तपस्वी मुनि श्री मोतीलालजी म.ने एवं तपस्वी श्री राधालालजी महाराज ने ४२-४२ दिन की लम्बी तपश्चर्या की। तपस्या के अवसर पर बहुत उपकार हुए। कई खंद हुए। बहुत से अजैन भाईयों ने मांस मदिरा शिकार आदि का त्याग किया। मच्छीमारों के १६ घर थे। वे श्रावकोंके सम्पर्क से प्रतिदिन पूज्य गुरुदेव के प्रवचन सुनने आते थे। प्रवचन का प्रभाव उन पर अच्छा पड़ा, फल स्वरुप उन्होने चार मास तक मच्छी मारने का त्याग किया। स्थानीय संघ ने इनके खाने पीने का प्रबन्ध किया। समाज सुधार के कई कार्य हुए।

चातुर्मास की समाप्ति के बाद आप गुरुदेव के साथ रंभापुर पधारे। रंभापुर में पुज्य गुरुदेव श्री जवाहरलालजी महाराज अचानक अशाता वेदनी कर्म के कारण बीमार पड गये। १५० तक दस्तें और कै (वमन) होगई थी। रंभापुर के श्रावकों ने गुरुदेव के जीवन को आशा छोड दी थी। अंत में श्रावकों के सतत प्रयत्न से और सन्तों की सेवा से गुरुदेव ने पुनः स्वास्थ प्राप्त कर लिया। स्वास्थ ठीक होने पर वहाँ से विविध क्षेत्रों को पावन करते हुए आप गुरुदेव के साथ ब्यावर पधारे। ब्यवार में आचार्य श्री श्रीलालजी महराज के दर्शन किये। कुछ दिन तक आचार्य श्री की सेवा में रह कर आगामो चातुर्मास के लिए आप गुरुदेव के साथ जावरा पधारे।

वि. सं. १९ ६५ का सातवां चातुर्मास जावरा में

जावरा मालव प्रान्त में स्थानकवासी जैन समाज एक श्रेष्ठ क्षेत्र माना जाता है। प्रखरवक्ता पंडितरत्न श्री जवाहरलालजी महराज सा. एवं चरितनायकजी श्रीघासीलालजी म. सा. जैसे प्रभावशाली मुनीयों के चातुर्मास से समस्त संघ में धर्म ध्यान और उत्साह का सागर उमड पडा।

जावरा चातुर्मास के समय स्थानांग सूत्र का वांचन हुआ। व्यख्यान के समय महराज श्री की दृष्टि केवल सूत्रों के अर्थों पर ही सीमित नहीं रहती थी। उनके साथ साथ अनेक प्रकार के हेतु दृष्टान्त कहानी' ढाल और उपदेशप्रद सुभाषितों के द्वारा श्रोताओं के हृदय पर सूत्र में वर्णित गंभीर आशय को अमिटरूप से अंकित करते थे, चातुर्मास काल में धर्म–ध्यान, तपश्चर्या, व्रत प्रत्याख्यान आदि बहुत अधिक परिमाण में हुए।

हमारे चरितनायकजी आठ वर्ष से लगातार गुरुदेव के साथ ही विहार व चातुर्मास कर रहे थे। एक दिन के लिए भी आपने उनका साथ नहीं छोडा था। विहार या स्थिररवास प्रत्येक समय गुरुदेव के निकट आपका अध्ययन, स्वाध्याय, तथा वांचन चलता रहता था। चरितनायक श्री घासीलालजी महाराज की धारणा तथा प्रज्ञाशक्ति भी इतनी प्रबल थी कि जहां कहीं जिस शास्त्र का वांचन होता हो उसे आप कण्ठस्थ कर लेते थे। दीक्षा लेने के बाद अभीतक चातुर्मास काल में जित्तने शास्त्रों का वांचन हुआ, उन सब को गुरुदेव से पूरी धारणा कर उनके अर्थ के रहस्यो को जान कर कण्ठस्थ करलिया। केवल एक बार सुनकर आप उस चीज को ग्रहण कर लेते थे। ऐसी ग्रहण शक्ति बहुत कम व्यक्तियों की होती है। आप के गुरुदेव श्री जवाहरलालजी महाराज अपने समय के एक उच्चकोटि के शास्त्रज्ञ एवं प्रखरवक्ता थे। समाज में सर्वाधिक प्रभाव शाली सन्त थे। और नम्रता की प्रतिमूर्ति थे। गुरुदेव से आप अत्यन्त धैर्य तथा नम्रता पूर्वक शास्त्रों का वांचन तथा अध्यापन करते थे। गुरु और शिष्य में नम्रता–मूलक एक वाक्यता थी, ईसलिए शिष्यों को शास्त्रों सीखते समय ऐसा अभास नहीं हुआ कि मैं शास्त्रों को सीख रहा हूँ, वरन् भूले हुए शास्त्रों को गुरु से श्रवण कर अपने पुराने ज्ञान को परिपक्व कर रहा हुँ। ऐसाही मालूम होता था। ग्रहण शक्ति की तीव्रता के कारण आप की संस्कृत भाषा की ओर अभिरुचि खूब बढी। आपने इस चतुर्मास के बीच एक सुयोग्य विद्वान से लघुकौमुदी प्रारंभ को, चातुर्मास के अन्त तक में सम्पूर्ण साधनिका के साथ उसे कण्ठस्थ करलिया। जावरा का चातुर्मास समाप्त कर आप पूज्य गुरुवर्य के साथ रतलाम पधारे, रतलाम में पूज्य आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज आदि सन्तों के दर्शन कर आपको बडा आनन्दानुभव हुआ। वहां से पटलावद राजगढ, तेडगाव, बिडवाल, आदि अनेक क्षत्रों को पावन करते हुए कोद पधारे। कोद से नागदा पधारना हुआ।

उन दिनों कोद तथा आसपास के गाँवों में वैमनस्य चल रहा था। पंडितवर्य श्री जवाहरलालजी महाराज के आगमन से एवं उनके प्रभाव शालो प्रवचन से वैमनस्य दूर होगया आसपास के गाँवों में वर्षो की फूट सदा के लिए मिट गई। इस शुभ अवसर पर कोद निवासी श्रीलालचन्दजी ने अपने विशाल वैभव का त्याग कर वैराग्य पूर्वक पूज्य गुरुवर्य के समीप दिक्षाग्रहण की। कोद से विहार कर आप गुरुदेव के साथ इन्दोर होते हुए देवास पधारे।

वि. सं. १९६७ का नौवाँ चातुर्मास इन्दोर में

देवास आदि क्षेत्रों को पावन करते हुए आप चातुर्मासार्थ गुरुदेव श्री के साथ इन्दौर पधारे। इन्दौर मध्य भारत का एक प्रमुख नगर है और होल्कर स्टेट की राज्यधानी है। जैन समाज का मुख्य केन्द्र है। और धनीकों का निवास स्थल है। पूज्य गुरुदेव श्री के आगमन से संघ में उत्साह का वातावरण छा गया। पवित्र पुरुष अपने चरणकमल द्वारा जिस स्थान को पवित्र करते हैं, वही तीर्थ बन जाता है। उनके पवित्र जीवन से आकर्शित हो कर आस–पास के सब लोग उनके पास मंडराते रहते हैं। इस चातुर्मास काल में तपस्वी श्री मोतीलालजी महाराज ने ३९ दिन का तप किया। इनके तप के प्रभाव से इन्दौर निवासि बडे प्रभावित हुए और उन्होंने अनेक परोपकार के कार्य किये।

वाल, देसाई, कानून नागादा आदि क्षेत्रों को फरसते हुए धार पधारे। प्रखर वक्ता पं. जवाहरलालजी महाराज का आगमन सुन कर धार की जनता ने सन्तों का भव्य स्वागत किया। प्रतिदिन पंडित मुनिवर्य के विविध विषयों पर प्रभावशाली प्रवचन होने लगे। धार रियासत के उच्च अधिकारी भी प्रतिदिन मुनिश्रेष्ठ का प्रवचन सुन हर्षित होते थे और मुनि श्री के त्याग वैराग्य की भूरि भूरि प्रशंसा करते। धार से विहार कर मुनि श्री बाजना पधारे। यहां मुनि श्री के उपदेश से हजारों लोगों ने विविध त्याग ग्रहन किये। सैकड़ों भीलों ने मांसाहार का त्याग किया।

बाजना से विहार कर शिवगढ होते हुए रतलाम पधारे। प्रसिद्ध वक्ता पं. जवाहरलालजी म. सा. के प्रवचनों को सुनने का अवसर हमारे चरितनायकजी कभी हाथ से जाने नहीं देते। उनके प्रवचन को सदैव हृदयंगम करते। गुरुदेव के निरन्तर सानिध्य में रहने के कारण आपका ज्ञान कोष बढता ही जाता था। उन्हीं दिनों रतलाम में श्री श्वे. स्था. जैन कान्फरन्स का दूसरा अधिवेशन था। भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तों से हजारों गण्य मान्य सज्जन कान्फरन्स में सम्मलित होने आये थे। इस अधिवेशन में वाडीलाल मोतीलाल शाह, मोरवी नरेश एवं राजस्थान मध्यभारत के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित थे। हमारे चरितनायकजी को भी इस अवसर पर समाज के गण्य-मान्य प्रतिष्ठित व्यक्तियों से मिलने का और उनसे विचारों का आदान प्रदान करने का अवसर मिला।

रतलाम से विहार कर आप गुरुदेव के साथ सैलाना पधारे। वहां प्रवचन पीयूष से भव्य जनों को लाभान्वित करते हुए पंचेड नामली, शिवगढ, रावटी करवड पेटलावद आदि गांवों को पावन कर थांदला पधारे।

वि. सं. १९ ६५ का सातवां चातुर्मास थांदला में

इस वर्ष का चामुर्मास चरितनायकने पूज्य गुरुदेव के साथ थादला में ही व्यतीत तिया। इस चातुर्मास के बीच आपको गुरुदेव के सानिध्य में विविध बाते जानने को मिली। इस चातुर्मास में तपस्वी मुनि श्री मोतीलालजी म.ने एवं तपस्वी श्री राधालालजी महाराज ने ४२-४२ दिन की लम्बी तपश्चर्या की। तपस्या के अवसर पर बहुत उपकार हुए। कई खंद हुए। बहुत से अजैन भाईयों ने मांस मदिरा शिकार आदि का त्याग किया। मच्छीमारों के १६ घर थे। वे श्रावकोंके सम्पर्क से प्रतिदिन पूज्य गुरुदेव के प्रवचन सुनने आते थे। प्रवचन का प्रभाव उन पर अच्छा पड़ा, फल स्वरुप उन्होने चार मास तक मच्छी मारने का त्याग किया। स्थानीय संघ ने इनके खाने पोने का प्रबन्ध किया। समाज सुधार के कई कार्य हुए।

चातुर्मास की समाप्ति के बाद आप गुरुदेव के साथ रंभापुर पधारे। रंभापुर में पुज्य गुरुदेव श्री जवाहरलालजी महाराज अचानक अशाता वेदनी कर्म के कारण बीमार पड गये। १५० तक दस्तें और कै (वमन) होगई थी। रंभापुर के श्रावकों ने गुरुदेव के जीवन को आशा छोड दी थी। अंत में श्रावकों के सतत प्रयत्न से और सन्तों की सेवा से गुरुदेव ने पुनः स्वास्थ प्राप्त कर लिया। स्वास्थ ठीक होने पर वहाँ से विविध क्षेत्रों को पावन करते हुए आप गुरुदेव के साथ ब्यावर पधारे। ब्यवार में आचार्य श्री श्रीलालजी महराज के दर्शन किये। कुछ दिन तक आचार्य श्री की सेवा में रह कर आगामो चातुर्मास के लिए आप गुरुदेव के साथ जावरा पधारे।

वि. सं. १९ ६५ का सातवां चातुर्मास जावरा में

जावरा मालव प्रान्त में स्थानकवासी जैन समाज एक श्रेष्ठ क्षेत्र माना जाता है। प्रखरवक्ता पंडितरत्न श्री जवाहरलालजी महराज सा. एवं चरितनायकजी श्रीघासीलालजी म. सा. जैसे प्रभावशाली मुनीयों के चातुर्मास से समस्त संघ में धर्म ध्यान और उत्साह का सागर उमड पड़ा।

जावरा चातुर्मास के समय स्थानांग सूत्र का वांचन हुआ। व्यख्यान के समय महराज श्री की दृष्टि केवल सूत्रों के अर्थो पर ही सीमित नहीं रहती थी। उनके साथ साथ अनेक प्रकार के हेतु दृष्टान्त कहानी' ढाल और उपदेशप्रद सुभाषितों के द्वारा श्रोताओं के हृदय पर सूत्र में वर्णित गंभीर आशय को अमिटरूप से अंकित करते थे, चातुर्मास काल में धर्म--ध्यान, तपश्चर्या, व्रत प्रत्याख्यान आदि बहुत अधिक परिमाण में हुए।

हमारे चरितनायकजी आठ वर्ष से लगातार गुरुदेव के साथ ही विहार व चातुर्मास कर रहे थे। एक दिन के लिए भी आपने उनका साथ नहीं छोडा था। विहार या स्थिरवास प्रत्येक समय गुरुदेव के निकट आपका अध्ययन, स्वाध्याय, तथा वांचन चलता रहता था। चरितनायक श्री घासीलालजी महाराज की धारणा तथा प्रज्ञाशक्ति भी इतनी प्रबल थी कि जहां कहीं जिस शास्त्र का वांचन होता हो उसे आप कण्ठस्थ कर लेते थे। दीक्षा लेने के बाद अभीतक चातुर्मास काल में जितने शास्त्रों का वांचन हुआ, उन सब को गुरुदेव से पूरी धारणा कर उनके अर्थ के रहस्यो को जान कर कण्ठस्थ करलिया। केवल एक बार सुनकर आप उस चीज को ग्रहण कर लेते थे। ऐसी ग्रहण शक्ति बहुत कम व्यक्तियों की होती है। आप के गुरुदेव श्री जवाहरलालजी महाराज अपने समय के एक उच्चकोटि के शास्त्रज्ञ एवं प्रखरवक्ता थे। समाज में सर्वाधिक प्रभाव शाली सन्त थे। और नम्रता की प्रतिमूर्ति थे। गुरुदेव से आप अत्यन्त धैर्य तथा नम्रता पूर्वक शास्त्रों का वांचन तथा अध्यापन करते थे। गुरु और शिष्य में नम्रता--मूलक एक वाक्यता थी, ईसलिए शिष्यों को शास्त्रों सीखते समय ऐसा अभास नहीं हुआ कि मैं शास्त्रों को सीख रहा हूँ, वरन् भूले हुए शास्त्रों को गुरु से श्रवण कर अपने पुराने ज्ञान को परिपक्व कर रहा हूँ। ऐसाही मालूम होता था। ग्रहण शक्ति की तीव्रता के कारण आप की संस्कृत भाषा की ओर अभिरुचि खूब बढी। आपने इस चतुर्मास के बीच एक सुयोग्य विद्वान से लघुकौमुदी प्रारंभ को, चातुर्मास के अन्त तक में सम्पूर्ण साधनिका के साथ उसे कण्ठस्थ करलिया। जावरा का चातुर्मास समाप्त कर आप पूज्य गुरुवर्य के साथ रतलाम पधारे, रतलाम में पूज्य आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज आदि सन्तों के दर्शन कर आपको बडा आनन्दानुभव हुआ। वहां से पटलावद राजगढ, तेडगाव, बिडवाल, आदि अनेक क्षत्रों को पावन करते हुए कोद पधारे। कोद से नागदा पधारना हुआ।

उन दिनों कोद तथा आसपास के गाँवों में वैमनस्य चल रहा था। पंडितवर्य श्री जवाहरलालजी महाराज के आगमन से एवं उनके प्रभाव शालो प्रवचन से वैमनस्य दूर होगया आसपास के गाँवों में वर्षो की फूट सदा के लिए मिट गई। इस शुभ अवसर पर कोद निवासी श्रीलालचन्दजी ने अपने विशाल वैभव का त्याग कर वैराग्य पूर्वक पूज्य गुरुवर्य के समीप दिक्षाग्रहण की। कोद से विहार कर आप गुरुदेव के साथ इन्दोर होते हुए देवास पधारे।

वि. सं. १९६७ का नौवाँ चातुर्मास इन्दोर में

देवास आदि क्षेत्रों को पावन करते हुए आप चातुर्मासार्थ गुरुदेव श्री के साथ इन्दौर पधारे। इन्दौर मध्य भारत का एक प्रमुख नगर है और होल्कर स्टेट की राज्यधानी है। जैन समाज का मुख्य केन्द्र है। और धनीकों का निवास स्थल है। पूज्य गुरुदेव श्री के आगमन से संघ में उत्साह का वातावरण छा गया। पवित्र पुरुष अपने चरणकमल द्वारा जिस स्थान को पवित्र करते हैं, वही तीर्थ बन जाता है। उनके पवित्र जीवन से आकर्शित हो कर आस-पास के सब लोग उनके पास मंडराते रहते हैं। इस चातुर्मास काल में तपस्वी श्री मोतीलालजी महाराज ने ३९ दिन का तप किया। इनके तप के प्रभाव से इन्दौर निवासि बडे प्रभावित हुए और उन्होंने अनेक परोपकार के कार्य किये।

इस चातुर्मास काल में हमारे चरितनायक निरन्तर अध्ययन करते रहते थे। अपने आवश्यकीय नैमित्तिक कर्मों को छोडकर आप दिन रात में क्षणमात्र का दुरुउपयोग नहीं करते थे। आलस्य या प्रमाद को कभी अपने पास फटकने नही देते थे। सतत जागृतावस्था में रहते थे। प्रमाद तो ये अपना परम शत्रु समझते थे। इस प्रकार अप्रमत्त वृति के कारण आपने स्वल्प काल में ही कवित्व शक्ति को भी प्राप्त कर लिया। किसी भी विद्या को हासिल करने में एकाग्रता की आवश्यकता होती है। एकाग्रता आप के साथ जुडी हुई थी वह आपमें ओत प्रोत हो गई थी। एकाग्रता पूर्वक अप्रमादी वृत्ति से निरन्तर स्वाध्याय करने के कारण आप शास्त्रों के पारागामी हो गये। छोटीसी अवस्था में इस प्रकार आगमों के वेता होना कोई साधारण बात नही है। इस चातुर्मास काल में आपने सिद्धान्त कौमुदी को साधनिका के साथ सम्पूर्ण याद कर लिया। यह सब निरन्तर साधना और परिश्रम का परिणाम था। परिश्रम के बिना कोई भी कठिन कार्य सिद्ध नहीं हो सकता किसी ने उचित ही कहा है–

आलस्यं यदि न भवेज्जगत्यनर्थः, को न स्यात् वहुधन को बहुश्रुतस्य ॥
आलस्यादियमवनिः ससागरान्ता, सम्पूर्णा नरपशुभिश्च निधनैश्च २५

अनर्थकारी आलस्य इस संसार में यदि नहीं होता तो यहां पे धानाढ्य और प्रखर विद्वान् कोन नहीं होता परन्तु आलस्य के कारण हि समुद्रपर्यन्त यह पृथ्वी पशुतुल्य मनुष्यों और निर्धनों से भरी हुई है।

इस प्रकार अपने गुरुदेव के समीप रहकर थोडे ही समय में आपने चतुर्मुखी ज्ञान प्राप्त कर लिया था। आगमों का निरन्तर स्वाध्याय करने के कारण आप आगमों के प्रकांड वेत्ता हो गये थे। दार्शनिक ज्ञान में भी बहुत प्रगति कर ली थी। आगम तथा दर्शन की तरह आपने ज्योतिष का भी ज्ञान प्राप्त कर लिया था। कवित्त रचना का सामर्थ्य भी निरन्तर अभ्यास से प्राप्त कर लिया था। काव्य कला में तो आपने इतनी शक्ति हासिल करली थी कि उस समय सारे जैन स्थानकवासी समाज में आप के द्वारा रचित स्तवन, सज्झाय सवैया' छंद आदि को धूम थी। श्रावकों तथा साधुओं को आपकी रचनाएँ इतनी अच्छी लगी, कि सब के मुह से आपकि रचनाएं सुनाई देने लगी। पूर्व पराम्परा गत मान्यतानुसार काव्य चना करने में आप सिद्ध हस्त थे। गुरुकी आज्ञा को लक्ष में रखकर साधु मर्यादा के अनुसार उदात्त भाव वाली एवं सर्व साधारण के लिए अत्यन्त उपयोगी मंगल काव्य की रचना करने में आपकी सतत दृष्टि रहती थी। आपने अपने जीवन काल में ऐसी अनेक कविताएँ काव्य छन्द निर्माण किये हैं जिनमें शास्त्रों में वर्णित विषयों का सरल ढंग से समावेश किया है। अधिक क्या लिखे समस्यापुरती इसेआगे बढकर गुप्तसमस्या पुरति भी कविता बद्ध कर सकते थे।

इस प्रकार अध्ययन विषयक शुभ प्रवृत्तियों को आगे बढाते हुए आपने अपने गुरुदेव के सानिध्य में इन्दौर चातुर्मास शान्तिपूर्वक समाप्त किया। अपने विद्यार्थि जीवन में नम्रता, सेवावृत्ति अध्ययन परायणता आदि सद्गुणों का विकाश करते हुए गुरुदेव का पूर्ण स्नेह प्राप्त कर लिया था।

चातुर्मास में आप ने संस्कृतमार्गोपदेशिका, हितोपदेश सिद्धान्तकौमदी, उर्दू, फारसी, अरबी, तथा प्राकृतव्याकरण के अध्ययन की ओर प्रगति की। अध्ययन की प्रगति के साथसाथ अन्य अनुकूलताएँ जो उपलब्ध होती है तो वह प्रगति की चरम सीमा तक पहुँच जाती है। तदनुसार पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज ने अपने शिष्य मुनि श्री घासीलालजी म० को तथा श्री गणेशलालजी महाराज को विशिष्ट विद्वान् बनाने की दृष्टि से महाराष्ट्र की ओर विहार करने का विचार किया। तदनुसार आपने संवत १९६७ का नौवां चातुर्मास समाप्त कर गुरुदेव श्री के साथ दक्षिण प्रान्त की ओर प्रस्थान कर दिया। बडवाहा, सनावद, बोरगांव, आशिर्गढ बुराहनपुर आदि क्षेत्रों को पावन करते हुए आप फैजपुर पधारे।

सन्त समागम—

पंडितवर्य श्रीजवाहरलालजी महाराज के समय में स्थानकवासी समाज की शोभा बढानेवाले जो चारित्र शील, क्रियावादी, विद्वान सन्त थे, उनसे जब कभी आपकी भेट होती तब आपको बहुत प्रसन्नता होती। ये अपने समय का अधिकतर भाग उन्हीं के साथ व्यतीत करते। गुणों का आदर करते। गुणी सन्तों को देखकर इन्हें बहुत आनन्द होता था। "सत्त्वेषु मैत्री गुणिषु प्रमोदम्" को आप ने अपने जीवन में सम्पूर्ण रूप से उतार लिया था। सदैव दूसरों के गुणों का ही दर्शन करते थे। दोषों की ओर प्राय: उनकी दृष्टि नहीं जाती थी। गुणों का ग्रहण करते समय इन्हे कभी सन्तोष नहीं होता। एक कवि ने ठीक ही कहा है—

येषां गुणेष्वसंतोषो, येषां रागः श्रुतं प्रति।
सत्यव्यसनिनो ये च, ते नराः पशवोऽपरे॥

गुण ग्रहण करने के विषय में असंतोष रखते हैं! शास्त्रों का श्रवण या अध्ययन करने में रुचि रखते हैं और सत्यमय जीवन व्यतीत करना ही जिनका व्यसन है, वे ही इस संसार में मनुष्य है अन्य और सब पशु हैं। इन तीनों बातों के आप मूर्तिमान स्वरूप थे।

"दक्षिण की ओर विहार

दक्षिण प्रान्त की ओर विहार करते हुए आप जब गुरुदेव के साथ भुसावल पधारे उस समय धर्मदासजी महाराज कि संप्रदाय के प्रभावशाली सन्त पंडित मुनिश्री चम्पालालजी महाराज सा. से आप की भेट हुई। परस्पर मिलकर बडे प्रसन्न हुए। आप में गम्भीरता, सरलता, शान्तता गुण ग्राहकता, आदि गुण प्रचुर मात्रा में होने के कारण आप श्री उनके शीघ्र ही प्रेमपात्र बन गये। इस प्रकार सन्त जनों से ज्ञान गोष्ठी कर गुरुदेव के साथ आप ने अहमदनगर की ओर विहार कर दिया।

वि. सं. १९६८ का दसवां चातुर्मास अहमदनगरमें

पण्डितवर्य श्री जवाहरलालजी महाराज एवं हमारे चरितनायक पंडित श्री घासीलालजी महाराज आदि सन्त दक्षिण देश में पधारे, उस समय से ही अहमदनगर का श्री संघ आपश्री का चातुर्मास कराने के लिए लालायित था। संघ ने प्रयत्न किया और उनकी भावना फलवती हुई। चातुर्मासार्थ पूज्य गुरुवर्य के साथ आप अहमदनगर पधारे। चातुर्मास आरंभ होने के कुछ दिनों के बाद अहमदनगर में प्लेग फैल गया। अतएव सन्तों को नगर के बाहर एक श्रेष्ठी के बंगले में चातुर्मास पूर्ण करना पडा। यहां से आहार पानी के लिए आपको कभी-कभी डेढ कोस की दूरी तक भी जाना पडता था।

इस चातुर्मास में तपस्वी मुनि श्री मोतीलालजी महाराज ने तथा तपस्वी मुनि श्री राधालालजी महाराज ने ४९-४९ दिन का कठोर तप किया। पूर के अवसर पर असीम उपकार हुआ।

अहमदनगर का चातुर्मास समाप्त कर आपने गुरुदेव के साथ अन्यत्र विहार कर दिया। दक्षिण प्रान्त में विचरते समय आपने मराठी भाषा का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लिया। दक्षिण प्रान्त के प्रसिद्ध सन्त ज्ञानेश्वर, तुकाराम, नामदेव आदि संन्त साहित्य का भी अध्ययन किया। मराठी सन्तों के अनेक उपदेश प्रद अभंग गाथा एवं पद्यों को कण्ठस्थ कर लिये।

वि. सं. १९६९ का ग्यारहवाँ चातुर्मास जुन्नेरमें

जुन्नेर महाराष्ट्र का ऐतिहासिक स्थल है। और छत्रपति महाराजा शिवाजी की जन्मभूमि है। यहां जैन समाज के ५०-६० घर हैं। इस वर्ष का चातुर्मास आपने गुरुदेव के साथ जुन्नेर में ही व्यतीत किया। चातुर्मास काल में मुनि श्री मोतीलालजी महाराज ने ३३ दिन की उग्र तपस्या की। तपस्या के पूर

पर अच्छा अधिकार हुआ। चरितनायकजी ने इस चातुर्मास में संस्कृत भाषा का गहराई के साथ अध्ययन किया। रघुवंश, मेघदूत, भट्टीकाव्य का भी अध्ययन किया।

जुन्नेर का चातुर्मास समाप्त कर आप गुरुवर्य के साथ मंछर पधारे। मंछर से खेड चिंचवड आदि क्षेत्रों को स्पर्श कर महाराष्ट्र का प्रसिद्ध स्थल पूना पधारे पुना महाराष्ट्र का प्रसिद्ध विद्या केन्द्र है? यहां के प्रसिद्ध विद्वानों के साथ आपका मिलन हुआ और विविध विषय के विद्वानों के साथ विचारों का आदान प्रदान हुआ। पूना कुछ दिन बिराजकर आप अपने गुरुदेव के साथ पुनः चिंचवड पधारे। चिंचवड में वक्ताव-रमलजी पोरवाड ने अत्यन्त वैराग्यभाव से पूज्य गुरुदेव के समीप दीक्षा ग्रहण की। चिंचवड से विहार करके आप गुरुदेव के साथ मंछर नारायणगांव, ब्रोरी आदि क्षेत्रों को पावन करते हुए घोडनदी पधारे।

वि. सं. १९७० का बारहवाँ चातुर्मास घोडनदीमें

घोडनदी स्थानवासी समाज का एक मुख्य प्रसिद्ध स्थल है। पंडित रत्न श्री जवाहरलालजी महाराज पंडित श्री घासीलालजी महाराज आदि नौ सन्तों ने यहां चातुर्मास किया। इस चातुर्मास में आपने अपना संस्कृत भाषा का अध्ययन चालू ही रखा। सतत अध्ययन से आपने संस्कृत भाषा पर अच्छा प्रभुत्व जमा लिया। आप संस्कृत भाषा में बडी शीघ्रता से नये श्लोकों की रचना कर लेते थे।

चातुर्मास की समाप्ति के बाद आपने गुरुदेव के साथ जामगांव, अहमदनगर बाम्ब्रोरी, राहुरी सोनाई आदि क्षेत्रों में धर्मप्रचार करते हुए जामगांव पधारे।

वि. सं. १९७१ का तेरहवाँ चातुर्मास जामगांव में

महाराष्ट्र के अनेक क्षेत्रों को पावन करते हुए वि. सं. १९७१ का चातुर्मास आपने गुरुदेव के साथ जामगांव में किया। जामगांव भी एक ऐतिहासिक स्थल है। देशभक्त सेनापति बापट का निवास स्थल है। गांव छोटा होते हुए भी श्रावकों की भक्ति बहुत अच्छी है। हमारे चरितनायक ने इस छोटे से गांव में रह कर अपने अध्ययन को विशाल बनाया। इस चातुर्मास में मुनि श्री मोतीलालजी महाराज ने ३४ दिन की तपस्या की। पूर के दिन अनेक शुभ कार्य हुए। इस चातुर्मास में पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज ने पं. मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज को गणिपद से विभूषित किया। इस प्रकार जामगांव का चातुर्मास पूर्ण कर आपने गुरुदेव के साथ अन्यत्र विहार कर दिया। महाराष्ट्र के अनेक क्षेत्रों को पावन करते हुए चातुर्मासार्थ अहमदनगर पधारे।

वि. सं. १९७२ का चौदहवाँ चातुर्मास अहमदनगर में

इस चातुर्मास में कलियुगी भीम प्रोफेसर राममूर्ति पहलवान ने अपनी कंम्पनी के साथ पं. श्री जवाहर लालजी महाराज का उपदेश सुना। पंडितमुनि श्री के प्रभावपूर्ण उपदेश से राममूर्ति बडे प्रभावित हुए। हमारे चरितनायकजी को भी प्रोफेसर राममूति से बातचीत का अवसर मिला। और उनके जीवन की अनेक महत्वपूर्ण घटना से आप परिचित हुए। अहमदनगर का चातुर्मास समाप्त कर आपने गुरुदेय के साथ अन्तत्र विहार कर दिया। महाराष्ट्र के विविध क्षेत्रों को पावन करते हुए आप गुरुदेव के साथ घोडनदी पधारे। घोडनदी से पुनः अहमदनगर में पधारना हुआ लोकमान्यतिलक ने पंडित प्रवर श्री-जवाहरलालजी महाराज के एवं हमारे चरितनायक पंडित श्री घासीलालजी महाराज आदि मुनिवरों के दर्शन किये! अहमदनगर में शेषकाल विराजकर चातुर्मासार्थ घोडनदी की ओर विहार किया।

वि. सं १९७३ का पंदरहवां चातुर्मास घोडनदी में

महाराष्ट्र के विविध क्षेत्रों को स्पर्शते हुए आप गुरुदेव के साथ चातुर्मासार्थ घोडनदी पधारे। आपका यह संयमी जीवन का १५ वाँ चातुर्मास था। चातुर्मास प्रारंभ होने के कुछ ही दिनों के बाद

घोडनदि और उसके आसपास के क्षेत्रों में प्लेग फेल गया। प्लेग ने इतना भयंकर स्वरूप किया की सैकडों व्यक्ति प्रतिदिन मरने लगे। परिणाम यह आया कि समस्त गांव खाली हो गया। घोडनदी के समीप ही शिरूर नामका छोटा गांव है। घोडनदी के समस्त निवासी रहने के लिए वहां चले गये। महाराज श्री को भी वहां पधारना पडा। कुछ दिन के बाद शिरूर में भी प्लेग फैल गया। किन्तु सन्तों के पुण्य प्रभावसे चातुर्मास निर्विघ्न समाप्त हो गया। चातुर्मास की समाप्ति के बाद आप गणिया-गांव पधारे। गणियागांव से धामोरी, खेड आदि क्षेत्रों में विहार करते हुए घोड नदी पधारे। वहां से हिवडा, सोनई, आदि क्षेत्रों को स्पर्शते हुवे चातुर्मासार्थ मिरी पधारे।

मनका भूतः—

एक बार रात्रि को हमारे चरितनायक श्रीघासीलालजी महाराज एक गांव में एक विशाल मकान में रात्रि के समय मकान के पीछले भाग में सोए हुए थे। सहसा अर्ध्दरात्रि को नीन्द खुल गई। और देखते हैं तो अपने पैरों से कुछ दूर ही एक सफेदसा कुछ दिखाई दिया। मुनि श्री विचार में पड गए। देवी, देवता, भूत आदि की बाते सारे संसार में विविध रूप से कही जाती है। वे विचारने लगे। आज तो लोकोक्ति सत्य होती दिख रही है। उठ कर भागू तो यह उसी समय धर दबायगा। और रात्रि में जोर से आवाज करना मुनि धर्म में निषेध होने से दूर सोए हुए मुनि को बुला भी नही सकता। अब क्या करना यही सोच रहे थे, वहाँ हृदय की निर्भीक वृत्ति ने कहा- डरने की क्या बात है ? देव हो या भूत हो मैने तो उनका कुछ बिगाडा तो नहीं है, फिर सामने जो भि दिख रहा है उसे ही क्यों न पकड लिया जाय। ऐसा सोच कर उठे और पैरों की नीचली बाजू में जो दिख रहा था उसे ही आपने पकड लिया। किन्हीं मुनि ने सायं काल के समय कपडा सूखा रखा था वही हवा के कारण सिकूडता फैलता रहता था वही हाथ में आया और सारा भ्रम दूर हो गया। था तो कुछ नहीं परन्तु भ्रम जन्य वस्तु दिखाई देने पर भी किसकी हिम्मत होती है कि जो उसके पाश चले जाय? इस समान्य घटना से मुनि श्री का रहा हुवा भय भी दूर हो गया, वे अपने आप को ही उपदेश देते हुए कहने लगे— "घबराना तो कायरता है। सहन शीलता रखना यह वीरता है। यह तो बहुत सामान्य घठना हुई किन्तु इस दीर्घ जीवन में अनेक ऐसे घबराने के प्रसंग आयेंगे। अनेक उलझनों से तुझे लोहा लेना पडेगा। उन उलझनो के प्रसंग चक्र में मत फंस जाना। सोचते रहना उलझने तो जीवन में आति ही रहती हैं। ये तो जीवन की कसोटी है। कंचन जब तक अग्नि में प्रविष्ट हो कर कसौटी पर नहीं कसा जाता, तब तक उसका मूल्य कैसे बढ सकता है? साधना पथ में निरन्तर आगे बढने वाले व्यक्ति के सामने अनेकों मानसिक उलझने आएंगी ही। यातनाएँ भी सहनी पडेगी ही। जो चलेगा, उसको गिरने का भी भय अवश्य होगा। जो साधक इससे कतरा जाता है, उसकी साधना विफल हो जाती है। जटिल से जटिल परिस्थिति में जो व्यक्ति घब-राता है भयभीत होता है वह व्यक्ति कभी भयानक समस्या को हल नहीं कर सकता। जो उलझनों को सुलझाता है उसे ही आशातीत सफता मिलती है। मुनि तूं सावधान रह। निर्भीकता से आगे चलता चल, इसी में तेरा महत्त्व है। मुनि श्री ने उस दिन से अपने मन को भय के वातावरण से हटा दिया। परिणाम यह आया कि वे कठिन प्रसंग में भी निर्भीक ही रहें।

इसी वर्ष पूज्य श्री श्रीलालजी म० सा० से मूर्तिपूजक के विद्वान मुनि न्यायतीर्थ न्यायविशारद मुनि श्री न्यायविजयजी ने १०८ प्रश्न पुछे उनसर्व प्रश्नो के पूज्यश्री ने सुन्दर प्रत्युत्तर तो दे दिये परन्तु श्रावकों ने वे प्रश्न पं० मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज ने अपने प्रतिभा सम्पन्न शिष्य श्री घासीलालजी महाराज को उन प्रश्नों के प्रत्युत्तर संस्कृत में लिखकर देने को आज्ञा दी, तदनुसार श्री घासीलालजी महाराज ने उन

प्रश्नो के उत्तर अनेक आगमो के मूल प्रमाणों और टीका के अधार को समक्ष रख कर उन प्रश्नों के उत्तर संस्कृत श्लोकों में तैयार कर भेजे । श्री न्यायविजयजी म० को अपने प्रश्नों के उत्तर संस्कृत श्लोकों में देख कर स्थानकवासी समाज में ऐसे विद्वान मुनि भी है यह जानकर बहुत ही आश्चर्य हुआ । श्री घासीलालजी म० ने संस्कृत अध्यन में इतनी प्रौढता प्राप्त करली थी कि वे संस्कृत विद्वानो से संस्कृत में वार्तालाप करते थे । इतना ही नहीं संस्कृत श्लोकोद्वारा भी वे बातचित करने में दक्ष हो गये थे । इनकी इस विशेषता पर पं० श्री जवाहरलालजी म० तथा अन्य विद्वद्वर्ग अति मुग्ध थे ।

वि. सं. १९७४ का सोलहवां चातुर्मास मिरी में

हिवडा से विहार कर चरितनायकजी अपने गुरुदेव के साथ मिरी गाममें पधारे । सं० १९७४ का चातुर्मास अपने गुरुदेव श्री के साथ में ही व्यतीत किया। चातुर्मास में आपने अपने अध्ययन में अच्छी प्रगती की । संस्कृत, प्राकृत भाषा के साथ साथ आपने उर्दू तथा फारसी भाषा का भी अध्ययन भी अच्छा किया । मराठो भाषा पर भी आपका अच्छा अधिकार हो गया । आप समय समय पर मराठी भाषा में भी प्रवचन देने लगे । आपके प्रवचनों का स्थानीय जनता पर अच्छा प्रभाव पडता था । मिरी के प्रभावशाली चातुर्मास को समाप्त कर आप अपने गुरुदेव के साथ अनेक ग्राम नगरों को पावन करते हुए अहमदनगर पधारे ।

मुम्बई धारा सभा के भूतपूर्व स्पीकर एवं प्रसिद्ध वकिल श्रीकुन्दनमलजीसा. फिरोदिया एवं समाज सेवक मानकचन्दजी सा मुथा ने एक दिन बात चित के सिलसिले में पं० श्री जवाहरलालजी महाराज सा० से कहा—"आपके दोनोंशिष्य पं० मुनि श्री घासीलालजी महाराज एवं मुनि श्री गणेशीलालजी महाराज लम्बे समय से संस्कृत भाषा का अध्ययन कर रहे हैं । यह आनन्द की बात है किन्तु उनका अध्ययन कितना हुआ है और अध्ययन के विषय में नकी प्रगति कैसी हो रही है यह बात हमें और जनता को कैसे मालूम हो ? यद्यपि मुनियों को परीक्षा देने की और प्रमाण पत्र लेने की कोई आवश्यकता नहीं होती और न इस ध्येयसे ही वे अध्ययन कर रहें हैं । तथापि समाज की शक्ति का—धन का दुरुपयोग तो नहीं हो रहा है और अध्ययन कर्ता मुनि अप्रमत्तभाव से अध्ययन करते हैं या नहीं यह जानने के लिए परीक्षा की आवश्यकता रहती है ।

उक्त वकिलों का कथन सुन कर पं० मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज अपने दोनों प्रतिभासंपन्न शिष्यों को बुलाया और वकिलों की बात कह कर उन से पूछा—क्या ? आप लोगों का परीक्षा देने का विचार है ? गुरुदेव के इस वचन का आदर पूर्वक दोनों मुनियों ने स्वीकार किया और परीक्षा देने की स्वीकृति दे दी । अहमदनगर में ही दोनों मुनियों की परीक्षा लेने का निश्चय कर लिया । तदनुसार उस समय के प्रसिद्ध विद्वान डा० गुणे शास्त्री M. A. p. H- D. तथा M. M. अभ्यंकर शास्त्री को परीक्षक के रूप में नियुक्त किये । श्री संघ और अनेक दर्शकों के बीच बडे उत्साह के साथ दोनों मुनियों की परीक्षा ली गई । व्याकरण और साहित्य विषयक प्रश्न पुछे गये व्याकरण के विषय में पं० मुनि श्री घासीलालजी महाराज ने एवं पं० मुनि श्री गणेशीलालजी महाराज ने ८२ ८२ प्रतीशतप्रथम श्रेणी के मार्क प्राप्त किये । साहित्य में पं० मुनि श्री घासीलालजी महाराज ने ७० प्रतिशत एवं पं श्री गणेशोलालजी म० ने ६४ प्रतिशत मार्क प्राप्त कर प्रथम श्रणी में उत्तीर्ण हुए मौखिक परीक्षा में पं० मुनि श्री घासीलालजो महाराज ने सौ प्रतिशत मार्क प्राप्त किये । दोनों मुनियों की इस सफलता पर समाज ने प्रशंसा के फूल बरसायें । मुनि श्री ने वहां से अन्यत्र विहार कर दिया ।

वि. सं. १९७५ का १७वाँ चातुर्मास हिवडा में

इस वर्ष का चातुर्मास आपने पूज्य गुरुदेव के साथ हिवडा में किया । इस चातुर्मास के बीच श्री

भीमराजजी कोठारी और सूरजमलजी साहेब इन दो व्यक्तियोंने पूर्ण वैराग्य भावसे भाद्रपद शुक्ला सप्तमी को दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा महोत्सव बड़ी धूम धामसे हुआ लगभग दो हजार व्यक्ति भागवति दीक्षा महोत्सव में सम्मलित हुए थे।

दुष्काल में सहायता

उन दिनों दक्षिण प्रात में भयंकर दुष्काल पड गया। और साथ ही इन्फलुंजा का भी प्रकोप हो गया। प्रतिदिन अनेक व्यक्ति भूख तथा इन्फलुजा से मरने लगे। उनकी करुण कथा प्रतिदिन मुनिश्री के कानों में पडने लगी। पूज्य श्री जवाहिरलालजी महाराज एवं मुनि श्री पन्नालालजी महाराज को छोड़कर नौ संत बिमार पड़गये जिसमें हमारे चरितनायकजी भी थे। स्वस्थ होते ही ये अन्यसन्तों की सेवा में जुड गये।

हृदय विदारक घटना

हिवडे के पास ही एक छोटे से गांव में एक परिवार रहता था। उसमें दो भाई माता बडे भाई की स्त्री तथा तीन बच्चे थे। भाइयों में अनबन होंने के कारण बडा भाई बच्चों के साथ अलग रहता था और छोटा भाई अपने मां के साथ रहता था। उसके पास खाने को अनाज था। किसी प्रकार की तंगी न थी स्त्री और बच्चों के खर्च के कारण बडे भाई का हाथ सदा तंग रहता था। दुष्काल पडने पर वह भयंकर मुसीबत में पड गया। कुछ दिन तो घर की चीजे वेचकर गुजारा किया मगर अन्त में वे भी समाप्त हो गई। वेचारा चिंता में पड़ गया।

घर में बड़ी मुश्किल से दो चार दिन गुजारे के लिए भी अन्न न था। खाने वाले पांच थे। सभी का पेट प्रतिदिन मांगता था। हारकर वह मजदूरी ढूंणने के लिए गांव छोडकर चला गया। सोचता था कहीं से कुछ मिलने पर वापस चला आउंगा।

घर में बहुत थोडा अनाज बचा था। पति को न लौटा देखकर स्त्री ने स्वयं भोजन करना बन्द कर दिया। उस अनाज से बच्चों का पेट पालने लगी। उन्हें रोटी खिला देती और स्वयं भूखी सो रहती। इस प्रकार तीन दिन बीत गए। पतिदेव फिर भी न लौटे घर में एक भी अनाज का दाना बाकी न रहा। बच्चे फिर खाने को मांगने लगे किन्तु माँ के पास अब कुछ भी न था। अब स्वयं तीन दीन से भूखी थी। उसे अपनी भूख की अपेक्षा बच्चों की भूख अधिक तर सता रही थी। किसी प्रकार दो पहर तक समझा बुझाकर बच्चों को चुप किया। किन्तु भूखे बच्चे कब तक चुप रहते ? वे बिल बिला कर रोटी मांगने लगे मां भी उन्हीं के साथ रोने लगी। किन्तु मां का रुदन बच्चों की भूख न मिटा सकता था। मां का हृदय फटा जा रहा था। किन्तु कोई चारा न था।

देवर और सास से अनबन होने पर भी वह इस आपत्ति के समय वहां जा पहुंची। उस समय देवर घर पर नहीं था। बच्चों की करुण कथा सुनकर सास का हृदय द्रवीत हो गया। उसने एक सेर बाजरी उधार दे दी। बाजरी लेकर वह अपने घर आई और आटा पीसकर रोटी बनाने लगी। इतने में छोटा भाई अपने घर आया। बाजरी देने के अपराध में उसने मां से बहुत कहा सुनी की और वहाँसे दौडा हुआ बडे भाई के घर पहुँचा।

उस समय एक रोटी अंगारे पर थी। एक तवे पर सीक रही थी एक पोई जा रही थी। बाकी आटा कटौती में था। तीनों बच्चे अंगारों पर सिकती हुई रोटी की आशा में बैठे थे। इतने में वह नर पिशाच जैसा आ पहुंचा और भाभी पर बाजरी ठगलाने के इल्जाम लगाकर गालियों की बौछार करने लगा हल्ला सुनकर पडोसी इकट्ठे हो गये। बच्चों पर दया करने के लिये उसे बहुत समझाया किन्तु उसने

एक न सुनी। तवे तथा अंगारों पर पडी हुई रोटीयां तथा सारा आटा उठाकर गालियां देता हुआ वह चला गया।

बच्चे अपनी आशा को टुटते देखकर बिलख बिलख कर रोने लगे। मां का हृदय भी टूट गया। वह भी फूट फूट कर रोने लगी। किन्तु भूख की समस्या फिर भी हल न हुई। माता ने आचानक रोना बन्द कर दिया। वह बंद करना रुदन से भी अधिक भयंकर था। उसने बच्चों से कहा "आओ अपन रोटी लेने चलें।" भोले बालकों को क्या पता था कि उनकी भूख से तंग आकर मां का हृदय क्या करने जा रहा है! वे साथ हो लिये। बच्चों को लेकर वह गांव से बाहर निकली। थोडी दूर पर जंगल में एक कूआ था। बच्चों को एक वृक्ष के नीचे खडा करके वह बोली—तुम यहीं खडे रहना मैं रोटी लेने जाती हूं। यह कह कर वह कुए पर गई और उसमें कूद पडी।

बच्चों ने समझा मां रोटी लेने गई है। थोडी देर तो वे आशा में खडे किन्तु मां रोटी लेकर न लौटी। वे जोर जोर से रोने लगे और कुए में झांक कर मां [मां पुकारने लगे। उन्हें क्या पता था उनकी क्षुधा से तंग आकर माता उन्हें छोडकर किसी दूसरे लोक में पहुंच गई और अब उनका आ क्रन्दन उसके पास न पहुंच सकेगा।

उसी समय बडा भाई घर लौटा। बेचारा मजदूरी खोजने गया था किन्तु वहां भी भाग्य ने पीछा नहीं छोडा। तीन दिन भटकने पर भी कहीं काम न मिला। भूखा मरता घर लौटा तो किवाड खूले पडे थे। घर में कोई नहीं दिखता था। पडोसियों से सारी कथा सुनकर वह भी उसी ओर चल दिया जिधर उसकी पत्नी गई थी। कूए के पास पहुचने पर उसे रोते हुए बालक दिखाई दिये। पिता को देखने ही वें रोटी रोटी चिल्लाते हुए दौडे। बाप ने झूठी सांत्वना देते हुए पूछा—"मैं तुम्हें अभी रोटी देता हूं। बताओ तुम्हारी मां कहां गई है? बालकों ने कुए की तरफ इशारा करते हुए कहा यहां मां रोटी लेने गई है।" उसने कुएं पर जाकर देखा तो अभी बुलबुले उठ रहे थे। कई दिन की भूख के कारण वह पहले ही बहुत घबराया हुआ था। यह दशा देखकर वह विक्षिप्त सा हो उठा। उसने बच्चों से कहा आओ अपनभी रोटी लेने चलें। यह कहकर एक बच्चे को पीठ से बांध लिया। और दो को बगलों में रख लिया। कुए पर चढकर वह भी धम से पानी में कूद पडा। भूख से तंग आकर उसने अपनी तथा बच्चों की जीवन लीला समाप्त लर दी।

यह हृदय विदारक घटना मुनि श्री ने सुनी। दुष्काल की यह भयानकता सुनकर मुनि श्री का हृदय दयार्द्र हो उठा। उन्होंने श्रावकों को दान दया का खूब महत्व समझाया परीणाम स्वरुप बाहर से दर्शनार्थ आये हुए तथा स्थानीय श्रावकों ने गरीबों को भोजन देने के लिए हजारों रुपये जमा किये। गांव के बहुत से व्यक्तियोंने दस दस मन जुवार दी। छोटी छोटी बहुत सी सहायताएं प्राप्त हुई मजदूरी करने वाली एक बहन ने अपनी मजदूरी में से चार आने दिये।

तदनन्तर मुनि श्री के प्रभावशाली उपदेश से एक विशाल भोजनालय प्रारंभ हो गया। गरीबों को मुफ्त भोजन दिया जाने लगा। आस पास के गांवों में इस बात की घोषणा कर दी गई। लगभग दो सो ढाई सो व्यक्तियों को प्रतिदिन दोनों समय भोजन मिलने लगा। उनमें बहुत से व्यक्ति ऐसे भी थे जिन्हें एक हफते तक भोजन भी खाने को न मिला था।

चातुर्मास समाप्त कर मुनि श्री अपने गुरुदेव के साथ हिवंडा से मिरी और मिरी से सोनई पधारे सोनई में अच्छा उपकार हुआ। पूज्य पं० श्री जवाहिरलालजी महाराज ने मालवे की तरफ विहार कर दिया और चरितनायकजी दक्षिण में ही विचरते रहें।

वि. सं. १९७६ का अठारवां चातुर्मास चिंचवडमें

हमारे चरितनायक जी की दीक्षा हुई तव से आप अपने गुरुदेव के साथ ही विहार कर रहे थे। एक दिन के लिए भी आपने उनका साथ नहीं छोडा। संयमी जीवन के सत्रह वर्ष आप ने गुरुचरणों में अत्यन्त निष्ठा पूर्वक व्यतीत किये।

उन दिनों आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज उदयपुर में विराजमान थे। इन्फलुंजा के कारण वे सहसा बिमार पड गये। अपनी अस्वस्थता के कारण उन्हें विशाल संप्रदाय के उत्तराधिकारी की चिन्ता हुई। जव उन्होंने सम्प्रदाय के चरित्रशील विद्वान साधुओं पर दृष्टि डाली तो उन्हें परमतेजस्वी साधुरत्न पं. जवाहर-लालजी महाराज एक सुयोग्य नायक दृष्टिगोचर हुए। उसी समय उन्होंने सम्प्रदाय के मुख्य श्रावको एवं साधुओं से परामर्श किया। और सर्वसम्मति से पं. जवाहरलालजी महाराज को सम्प्रदाय का युवाचार्य बनाने का निश्चय किया। इस निश्चय को सम्प्रदाय के जिस साधु या श्रावक ने सुना उसका हार्दिक अभिनन्दन किया। उस समय पं. जवाहरलालजी महाराज अपनी शिष्य मण्डली के साथ दक्षिण प्रान्त के हिवडा नामक गांव में बिराजमान थे। उस अवसर पर उदयपुर संघ का तार आया पूज्य श्री ने मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज को युवाचार्य पद पर नियुक्त किया है। स्वीकृति लेकर खुश खबरी का तार दीजिए।

तार लेकर हिवडा के मुख्य श्रावक मुनिश्री की सेवा में पहुचे। युवाचार्य पद पर नियत किये जाने का तार सुनकर मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज विचार में पड गये। इतनी बडी सम्प्रदाय का भार उठाने के पूर्व वे अपने सामर्थ्य का विचार करने लगे उन्होंने मन में सोचा में लम्वे अर्से से दक्षिण में हूं। सम्प्रदाय के विशिष्ट क्षेत्रों से बहुत दूर हूं। मुझ से अधिक अनुभव योग्यता शास्त्रीय ज्ञान तथा उम्रवाले साधु इस सम्प्रदाय में विद्यमान हैं। जिस भार को वहन करने में उन्हें असमर्थ माना गया क्या मैं उसे वहन कर सकूंगा ?" इन सब बातों का विचार करने के बाद महाराष्ट्र में विचरने वाले अपने साथी मुनियों से एवं साध्वी समुदाय से एवं श्रावक गण से परामर्श किया सभी ने मुनि श्रीजवाहर लालजी महाराज को अपना भावी आचार्य स्वीकार करने में हार्दिक प्रसन्नता प्रगट की। साथी मुनिवरों की पूर्ण स्वीकृति मिलने पर भी पं. श्रीजवाहरलालजी महाराज ने तार का जवाब शीघ्र देना उचित नहीं माना।

उत्तर में विलम्ब होते देखकर उदयपुर संघ ने पुनः दो तार दिये। किन्तु मुनि श्री ने तत्काल कोई उत्तर नहीं दिया।

जब तारों से काम नहीं चला तो सतारा निवासी सेठ बालमुकुन्दजी तथा चन्दनमलजी मूथा हिवडा आये और मुनि श्री से युवाचार्यपद अंगीकार करने की प्रार्थना करने लगे। उन्होंने कहा—"पूज्य श्री बडे विचारक एवं दूरदर्शी हैं। उन्होंने गहरा सोच विचार करके ही आपके उपर भार डाला है। इस विकट परिस्थिति में प्रतिभाशाली योग्य व्यक्ति के बिना इस गुरुतर भार को कोइ नही उठा सकता, पूज्य श्री ने आपको समर्थ समझा है। अस्वस्थता के समय उन्हें शीघ्र हो चिन्तामुक्त कीजिए और स्वीकृति प्रदान करके पूज्यश्री तथा समस्त सम्प्रदाय को आनन्दित कोजिए।

सेठजी की बाते युक्ति संगत थी किन्तु मुनिश्री सहसा किसी निर्णय पर नहीं पहुँचना चाहते थे। अतएव उन्होंने उत्तर दिया मैं बहुत दिनों से महाराष्ट्र में हूं। उस तरफ की परिस्थितियों से अपरिचित हूँ। परिस्थितियों से परचित हुए बिना पूर्ण स्वीकृत दे देना मेरे लिए उचित नहीं है। हां पूज्य श्री की

आज्ञामुझे शिरोधार्य है मगर मुझे यह देख ना है कि मुझ में वह शक्ति है भी या नहीं ? अपनी शक्ति देख करही इस गुरुत्तर भार को उठाना चाहिए क्यों कि इसका सम्बन्ध सिर्फ मेरे साथ हि नहीं वरन् समस्त श्री संघ के साथ है। मुनि श्री घासीलालजी और मुनि श्रीगणेशलालजी म. का अध्ययन चल रहा है। उसे बिच ही में स्थगित कर देना भी उचित नहीं जान पड़ता। इनका अध्ययन पूरा होने पर मेरा विचार स्वयं पूज्य श्री की सेवा में उपस्थित होने का है। प्रत्यक्ष मिलने पर विशेष विचार करलेंगे

यह उत्तर लेकर दोनों सज्जन चले गये। मुनिश्रीजी हिवड़ा चातुर्मास पूर्णकर के मीरी पधारे। तीन तीन तारों का उत्तर न मिलने पर उदयपुर से श्री गेरीलालजी सा. खिवसरा आदि सज्जनों का डेप्युटेशन मुनिश्री जवाहरलालजी महाराज की सेवामें उपस्थित हुआ। उन्होंने बड़े आग्रह के साथ प्रार्थना की-"आप शोघ्र ही उधर पधार कर पूज्यश्रो के दर्शन कर और युवाचार्य पद को स्वीकार करके हम सब को आनन्दित किजिए।" किन्तु मुनिश्री जी अपने दोनों शिष्यों के अध्ययन को इतना आवश्यक समझते थे कि उसे अधूरा छोड़ कर शीघ्र विहार कर देना उन्हें उचित प्रतीत नहीं हुआ। अतएव उदयपुर का शिष्ट मण्डल भी वापस लौट गया।

अन्त में पं. श्री जवाहरलाल जी म. स. को आचार्य श्री०की आज्ञा शिरोधार्य करनी पड़ी। पूज्य श्री के आदेश को ध्यान में रख कर अध्ययन करने वाले दोनो मुनि पं श्री घासीलालजी महाराज एवं श्री गणेशीलालजी महाराज को तथा अन्य कुछ संन्तों को महाराष्ट्र में ही छोड कर पं. श्री जवाहरलालजी महाराज ने मालवा प्रान्त की ओर विहार कर दिया।

पं. श्री जवाहरलालजी महाराज के मालवा की ओर विहार हो जाने पर हमारे चरितनायकजी पर एक विशिष्ट जिम्मेदारी आपड़ी। केवल एक नहीं किन्तु दो। एक अध्ययन और दूसरा व्याख्यान। जब तक पूज्य गुरुदेव के साथ थे तब एक केवल एक ही लक्ष्य था अध्ययन एवं गुरुसेवा। अब दूसरी जीम्मेदारी आपड़ी। अध्ययन के साथ साथ आप प्रवचन भी देने लगे।

पं. श्री घासीलाल जी म. तथा पं. श्री गणेशीलालजी म०को परस्पर निर्मल गुरुभ्रातृस्नेह अत्यन्त ही गाढ था, पं० श्री गणेशलाल जी म० को अध्ययन श्रमके कारण यदा कदा सिर दर्द हो जाया करता था। वैसी स्थिति में सिर दर्द से जब पं० श्री घासीलालजो म० उनको सिर को संवारते हुए उपचार करते हुए अधित पाठ समझाया करते थे। इनके परस्पर के इस सस्नेह से साथी मुनियों को भी ईर्षा हो जाया करती थी। इनका सस्नेह भाव दूध पानी सा था। पं० श्री गणेशीलालजी म० ने पं०श्री घासीलालजी महाराज का अपने प्रति इस सस्नेह भाव को देख कर एक दिन कहा-"मान्यवर ? जिस घर में एकता होती है वह घर स्वर्ग की उपमा से उपमित होता है। जिस घर में फूट होती है वह घर नरक कहलाता है। लक्ष्मी भी वही दौड़ दौड़ कर जाती है, जहां एकता है, प्रेम है। जिसके हाथ में एकता का अकाट्य शस्त्र होता है, वह हर एक को जितसकता है। एकता मानवता है। फूट दानवता है एकता से समता का प्रादुर्भाव होता है, पारस्परिक प्रेम तथा सदभावना में वृद्धि होती है। एकता में जो बल है वह अलगता में नही। कच्चे धागे परस्पर मिलजुल कर मदोंन्मत्त मतंग को भी मृग के भांति अपने बन्धन में बान्धकर परतंत्रता की कारा में जकड़ सकते हैं, पर अकेले नहीं। एक एक बून्द मिलकर सागर का रूप धारण कर सकती है। रजः कण का समुह प्रचण्ड आतपवाले सहस्रमणि को भी निस्तेज बना सकता है। हमारे बीच की इस आदर्श एकता का सब से बडा शत्रु है अधिकार लिप्सा यह अधिकार ही हमें भविष्य में एक दूसरे से अलग कर सकती है। जीवआत्माओं के लिए संयमी साधना में भी यह बड़ा बाधक तत्त्व है। हम दोनों ही इस समय गुरुदेव के कृपा पात्र शिष्य हैं। और अध्ययन, प्रतिभा

की अपेक्षा से संप्रदाय में हमारा महतोय आदरणीय स्थान है। भविष्य में आचार्य युवाचार्य बनने के भी प्रसंग आ सकते हैं। और ये प्रसंग ही हमारे लिए अनेकता के प्रसंग खडे कर सकते हैं। " अतः हमारे इस पवित्र स्नेह को चिरस्थायी रखने के लिए हम दोनों यह प्रतिज्ञा करें कि हम कभी भी संप्रदाय का आचार्य आदि उच्चपद ग्रहण नहीं करेंगे।" पं. श्री गणेशलालजी म० के उदात्त भाव पूर्ण इस प्रस्ताव को अत्यन्त हर्षावेग से पं. मुनि श्री घासीलालजी महाराज ने स्वीकार कर लिया। दोनो ने एक प्रतिज्ञा पत्र तैयार किया। उस प्रतिज्ञा पत्र पर दोनो मुनियोंने हस्ताक्षर किये। उस प्रतिज्ञा पत्र में संप्रदाय की कोई भी पदवी न लेने की प्रतिज्ञा थी।

कालान्तर में विधि की विडम्बाना कहो या मजबूरी कहो प्रतिज्ञा के प्रस्तावक पं. श्री गणेशलालजी म. अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ नहीं रह सके। उनकी प्रतिज्ञा के प्रति वेवफाई ने ही इन दोनों मुनियों को सदा के लिए अलग अलग कर दिया।

दक्षिण प्रान्त के विविध क्षेत्रो को पावन करते हुए पं. मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज अपनी मुनि मण्डली के साथ रतलाम की ओर विहार किया। इधर आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज ने भी उदयपुर का चातुर्मास समाप्त कर रतलाम की ओर विहार किया। आप फाल्गुन शुक्ला पंचमी के पूर्व ही रतलाम पधारे गये। इधर अत्यन्त शीघ्रता से विहार करते हुए पं. मुनि श्री जवाहरलालजी महराज तपस्वी मुनि श्री मोतीलालजी महाराज आदि मुनिराज फाल्गुन शुक्ला दसमी के दिन रतलाम पधार गये। रतलाम के हजारों स्त्री पुरुषों ने आगत मुनियों का भव्य स्वागत किया। पं. मुनि श्री जवाहरलालजी महराज ने आचार्य श्री के दर्शन कर आनन्द अनुभव किया।

चैत्र शुक्ला नवमी बुधवार सं. १९७५ ता. २६मार्च १९१९ के दिन पं. मुनि श्री जवाहरलालजी महाराज को सर्व सम्मति से आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज ने युवाचार्य नियुक्त कर प्रसन्नता का अनुभव किया। इस उत्सव के अवसर समाज के हजारों प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित हुए थे।

चरितनायक श्री घासीलालजी महाराज को जब अपने गुरुदेव के युवाचार्य बनने के समाचार मिले तो वे अपार हर्ष का अनुभव करने लगे। उन्होंने उसी समय अभिनन्दन पत्र गुरुदेव की सेवामें भेजा। उसी दिन अपने प्रवचन में गुरुदेव की आपने बडी प्रशंसा की और हर्ष व्यक्त किया।

पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज का स्वर्गवास

अजमेर क्षेत्र से विहार कर आचार्यश्री श्रीलालजी महाराज का जेतारण पधारना हुआ। आषाढकृष्णा अमावश्या के दिन व्याख्यान देते समय अकस्मात् आपके नेत्रों की ज्योति बन्द हो गई। सिर में चक्कर आने लगे। आचार्य श्री को स्वस्थ करने के अनेक उपाय किये पर सब असफल हुए। अवस्था सुधरने के बजाय उत्तरोत्तर बिगडती हो गई। अन्तिम समय सन्निकट आ पहुँचा है यह जानकर आचार्य श्री ने संथारा करने की इच्छा व्यक्त की। आचार्य श्री की इच्छा के अनुसार समीपस्थ मुनियों ने आपको संथारा करा दिया। आपने अन्तिम समय को समस्त विधि पूर्णकर चतुर्विध संघ से क्षमा याचना की। क्षमा याचना के पश्चात् आपने समस्त मनो योग को प्रभु चिन्तन में लगा दिया। आपने अपने सत्प्रवृत्तिमय जीवन से सब के हृदय में अक्षुण्ण स्थान प्राप्त कर लिया था। विकराल काल आपकी इस सुकीर्ति को सहन नहीं कर सका और देखते देखते अन्त में आषाढशुक्ला तृतीया के दिन रात्रि के समय ब्राह्ममूहूर्त में आचार्य श्री श्रीलालजी महाराज को हम सबसे छीनकर ले गया। उनके चले जाने से स्थानकवासी समाज का चमकता सितारा अस्त हो गया। आप अपने इस पांच भौतिक पार्थिव देह को छोड़ दिवंगत हो गये। यह दुःसंवाद वायुवेग से चारों ओर फैल गया। जिस किसी से यह खेद कारक समाचार सुना,

वह हृदय थाम कर रह गया । यह दुःखद समाचार जब हमारे चरितनायकजी तक पहुँचा तो उनके हृदय पर तीव्र आघात लगा । क्योंकि पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज की इन पर विशेष कृपा दृष्टि थी । पूज्य श्री के स्वर्गवास के समाचार सुनकर आप स्तब्ध रह गये । पहले तो आपको इस बात पर विश्वास ही नहीं हुआ । फिर इस घटना के आघात से कुछ देरतक चुप रहे । बाद में स्थानीय श्रीसंघ के सामने आपश्री ने भावप्रवण अत्यन्त मार्मिक शब्दों में अपने ये उद्‌गार प्रकट किये

'सन्त विश्व की एक महान् विभूति है । वे गुमराहियों के लिए पथ प्रदर्शक है । विषमता में समता का सुमधुर संगीत सुनाने वाले अमरगायक है । वे परमात्मा के सगुण रूप है, धर्म के सन्देश वाहक है । श्रद्धेय आचार्यश्री श्रीलालजी महाराज अपने युग के सन्तों में एक अनुपम तथा विशिष्ट सन्त रत्न थे । आपका ओजस्वी जीवन एवं महान् वैराग्य तथा प्रतिभाशाली व्यक्तित्व जैन समाज के लिए गौरव का विषय था । ज्ञान और चारित्र का आपके जीवन में पूर्ण सामञ्जस्य था । कथनी और करणी में एकता थी । पूज्यश्री का यह आकस्मिक स्वर्गवास स्थानकवासी समाज के लिए एक बहुत बडी क्षति है, जिसकी निकट भविष्य में पूर्ति होना असंभव है । साथी मुनियों के प्रति समवेदना प्रकट करते हुए चरितनायकजी ने आशा प्रकट की कि हम सब उनके बताए हुए पथ पर चलकर संघ को यशस्वी बनायेंगे ।

चरितनायकजी ने गुरुदेव की सेवा में समवेदना का सन्देश भेजा । और उनकी याद में १७५ श्लोकों की रचना कर गुरुदेव की सेवामें भेजा । उन श्लोकों के कुछ नमुने ये हैं—

श्री सन्दोहलसत् स्वरूप विभया योमोदयन्मेदिनिं । लावंलावमलीलवल्लवमपि क्रोधादिकर्मोद् भवम् ॥
लङ्कानिर्दहनोपमं च मदनं योऽधाक् त्रिदुःखच्छिदे । मुक्तं पादचतुष्टया देचरमैवर्णैरमुं स्तोम्यहम् ॥१॥

जिन्होंने शोभा समूह से देदीप्यमान आकृति की प्रभा द्वारा संसार को प्रसन्न किया क्रोधादि कर्मों के कारणों को एक एक करके काट दिया एवं जिस प्रकार हनुमान ने लङ्का का दहन किया था । ठीक वैसे ही जरा जन्म मरण रूप दुःखों को मिटाने के लिए जिन्होंने काम को नष्ट कर दिया शरीर से मुक्त उन पूज्य श्री श्रीलालजी मुनि की इस पद्य के चारों चरणों के आद्यन्त अक्षरों से वन्दना पूर्वक मैं स्तुति करता हूं । लंका दहन की उपमा लोकोक्ति हैं—

कल्याणमन्दिरनिभात्सुरमंदिरस्थात् । श्रीलालपूज्यकरुणावरुणालयाच्च ॥
कल्याणमन्दिरमवाप्तुमना विनौमि । कल्याणमन्दिरपदान्त समस्यया तम् ॥

कल्याणागर स्वर्गस्थ, करुणानिधि पूज्यश्री श्रीलालजी से अधिक कल्याण प्राप्त करने की इच्छा से ही कल्याणमन्दिरस्तोत्र के पद को अन्तिम समस्या के रूप में लेकर उक्त श्री चरणों की स्तुति करता हूं ।

जन्मान्तरीयदुरितात्तविपत्तिरद्य, सावद्यहृद्यमभिपद्य विपद्यमानः ।
पूज्य ! त्वदीयपदपद्ममहं श्रयाणि । कल्याणमन्दिरमुदारमवद्य मेदि ॥३॥

हे पूज्य ! जन्मान्तर में किये पापों से पीड़ित सम्प्रति भी कुकर्मों को ही ध्येय—ग्राह्य समझ कर अपनाने से उद्विग्न मैं मुनि घासीलाल आप के चरण कमलों का आश्रय लेता हूं । क्योंकि आप के चरण कमल ही सुख निकेतन अत्यन्त उदार एवं पापों के नाशक है ॥

दुःखी स्वदुःखशमनाय सुखी सुखाय, धीमानधियेऽघरदरं सुकृती शमाय ।
यत्ते सुपूज्य ! शुभसद्म तदा स्मराणि । भीताऽभयप्रदमनिन्दितमङ्घ्रियुग्मम् ॥५॥

हे सुपूज्य ! आप के जिन चरणों को दुःखी आत्मा सुख की कामना के लिए, सुखी एकान्त सुख के निमित्त बुद्धिमान प्रज्ञावृद्धि के लिए, तथा धार्मिक जन शांति के लिए आत्मसात् करते थे । उन्हीं चरणों का मैं स्मरण करता हूं—कारण कि संसार भयोद्विग्न मनुष्य को वही प्रशस्त चरण अभयदान दे सकते हैं ।

वीर ! त्वदीयदयया मिलितः सुपूज्यः, कालेन संहृत इतो न जनोऽस्त्यनीशः
तस्यागुकंपनतयाऽऽप्त सुपूज्यवर्यां मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा मुनीन्द्र ! ॥३५॥

हे वीर प्रभो आप की कृपा से प्राप्त हुए पूज्य श्री जी को तो काल उठाकर स्वर्ग में ले गया। किन्तु इससे यह जननायक हीन नहीं हो सका कारण कि उक्त पूज्य श्री एक ऐसे पूज्य प्रतिनिधि को स्व-स्थानापन्न कर गये हैं जिन के कृपा कटाक्ष से ही असंख्य प्राणी बन्धन मुक्त हो रहे हैं।

सम्प्रत्यसाम्प्रतमितो ह्यभवत्सुपूज्य । प्रस्थानमत्रभवतो विबुधा वदन्ति ।
स्वास्वाऽग्रहग्रहगृहीतसुविग्रहे के यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः ॥६६॥

वर्तमान समय में इस लोक से स्वर्ग को सिधारना यह आपने उचित नहीं किया ऐसा ही सभी विचार शील मनुष्य कहते हैं क्योंकि अपने अपने आग्रह (हठ) रुप ग्रह से मचे हुए लडाई झगडों को कोन मिटा सकेगा ? कारण कि आपके समान महानुभाव ही उसका शमन कर सकेते हैं।

वर्षर्तुवारिदनिभेऽम्ब्वमृतं वचस्तद् वर्षत्यरं त्वयि मयूरनिभा जनौघाः ।
हर्षप्रकर्षमविदन् मुदमाप धर्मो धर्मोपदेशसमये सविधानु भावात् ॥

वर्षाऋतु का मेघ जिस प्रकार जल वरसाता है ठीक उसी तरह जब आप वचनामृत की झडी लगा देते थे तब जनता मयूरों के समान अनिर्वचनीय आनन्द को प्राप्त होती थी और अपनी समीपता देखकर धर्म भी फूला नहीं समाता था।

यस्त्वां जहार कुटिलः समयः स नून । मस्मोकमाविरभवत्परमार्थ शत्रुः ॥
यामीं कृति सकललोककृते सपूज्य । व्याजात्त्रिधा धृततनुर्ध्रुवमभ्युपेतः ॥१०६॥

जो कुटिल कालने आपको हर लिया (चुरालिया) सो वह अवश्य ही हमारा परमार्थ शत्रु है कारण कि छल से भूत भविष्य और वर्तमान इन तीनों रूपों से उस काल ने सब के लिए यमराज का कार्य स्वीकार किया है।

इस प्रकार हमारे चरितनायकजी ने पूज्य श्री को याद में १७४ श्लोक रचकर पूज्य आचार्यश्री जवाहरलालजी महाराज की सेवा में भेजकर अपनी हार्दिक श्रद्धाञ्जली भेजी (ये १७४ श्लोक पूज्य श्री श्रीलालजी महाराज के जीवन चरित्र में छपे हुए हैं। पाठक वहां देख लेवें)

उच्चकोटि के वक्ता गुरुदेव के निरन्तर सामीप्य से आपने अपनी वक्तृत्व कला को खूब विकसित किया। आप की वाणी में अद्भूत शक्ति थी। जो कोई भी आपके सम्पर्क में आता वह लोहचुम्बक की तरह आपकी ओर आकर्षित हो जाता। आप के सदुपदेशों की चर्चा सुनकर आस पास के अनेक ग्राम निवासी आपकी सेवा में उपस्थित हुए और आगामी चातुर्मास अपने यहां करने का आग्रह करने लगे उन ग्राम निवासियों में चिंचवड का संघ भी प्रमुख था। उस समय सब लोगों में यह स्पर्धा—की भावना थी कि महाराज साहब हमारे क्षेत्र में पहले चतुर्मास करे। परन्तु उन सबमें चिंचवड, श्रीसंघ ने पंडित मुनि श्री घासीलालजी महाराज का चामुर्मास अपने यहां कराने में सबसे पहले सफलता प्राप्त की।

वि. सं. १९७६ का चातुर्मास व्यतीत करने के लिए आपने चिंचवड की ओर विहार किया, आषाढ सुद एकादशी के दिन आपने चामुर्मासार्थ चिंचवड में प्रवेश किया। यहां पहुचकर आप अपनी मुनि-मण्डली के साथ स्थानक में विराजे। चातुर्मास काल में श्रावक श्राविकाओं का उत्साह दर्शनीय था। प्रतिदिन आपके प्रभावशाली प्रवचन होने लगे। व्याख्यान में आपने सुख विपाक सूत्र का वांचन किया आप ने अच्छी वक्तृत्व शक्ति का विकाश कर लिया था। आपकी वाणी का माधुर्य तथा शास्त्रों का तलस्पर्शी ज्ञान इतना अच्छा था कि व्याख्यान के समय श्रोतृवृन्द बरबस आपकी ओर आकर्षित हो जाता

था। व्याख्यान के समय उनका हृदयकमल विकसित होकर वह ते जो मय सूर्य की किरणों की तरह आ। के उपदेश रूपी ज्ञान के प्रकाश को सर्वात्मभाव से ग्रहण कर अधिकाधिक आनन्द का अनुभव करता था। श्रोतागण आप के अमृतोपम उपदेश को सुनने के लिए भ्रमर की तरह सदैव लालायित रहते थे। किं बहुना,, आपके विराजने से जैन धर्म की प्रभावना खूब बढी। धर्मध्यान और तपश्चर्या आदि विपुलमात्रा में हुए। इस प्रकार आपका यह प्रथम स्वतंत्र चातुर्मास अत्यन्त सफलता पूर्वक एवं सुखशान्ति पूर्वक व्यतीत हुआ।

चिंचवड का चातुर्मास सानन्द पूर्ण करके आपश्री ने सातारा की ओर विहार कर दिया। वहाँ से चारोली को पावन कर आपश्री का पूनो में आगमन हुआ। यहां कुछ दिन स्थिरता कर पूना से सातारा की ओर विहार हुआ। कात्रज सिंघावाडी, कामथडी किंकवी न्हावी आदि क्षेत्रों में धर्म प्रचार करते हुए आप सतारा पधारे।

सतारा क्षेत्र में चरितनायकजी का यह प्रथम ही पधारना हुआ। आपश्री के शुभागमन के पूर्व ही सारे दक्षिण प्रान्त में आप की कीर्ति व्याप्त हो चुकी थी। जहां कहीं भी आपश्री का शुभागमन होता लोग अपने आप को कृतार्थ समझते थे। अनेक जन्मों के पुण्य से ऐसे त्यागी सन्तों का सहवास का सुअवसर जीवन में यह प्रथम बार हुआ था इसलिए आपके व्याख्यान के समय प्रत्येक व्यक्ति रुचि पूर्वक लाभ लेता था। प्रतिदिन व्याख्यान के समय बोधामृत का पान करने से वहां के श्रावक श्राविकाओं की धार्मिक भावना में विशेष वृद्धि हुई।

वि०सं. १९७७ का १९ वाँ चातुर्मास सातारा में

आपके प्रवचन सुनते सुनते वहां के मुख्य श्रावकों के हृदय में यह भावना जाग्रत हुई की ऐसे त्यागी वैरागी और ज्ञानी संत के पास कुछ शास्त्राभ्यास करना चाहिए और ज्ञान की वृद्धि करनी चाहिए। यह सोच कर श्रावकगण हमारे चरितनायकजी की सेवा में उपस्थित हो इस वर्ष का चातुर्मास सातारा में ही व्यतीत करने की प्रार्थना की। श्रावकों का अत्यन्त आग्रह देख मुनिश्री ने स्वीकृति फरमा दी, चातुर्मास की स्वीकृति से नगर निवासियों के हर्ष की सीमा न रही। उन्होंने सोचा अब ऐसे महापुरुषों का चातुर्मास हमको जितनी लम्बी अवधि तक समागम में रहनेवाले है, इससे बढकर हमारे लिए और क्या सुवर्णावसर हो सकता है?

आसपास के क्षेत्रों को पावन कर चरितनायकजी चातुर्मासार्थ सातारा पधार गये। महाराज श्री का आगमन सुन कर सारे नगर का श्री संघ आपके स्वागतार्थ बहुत दुर तक सामने पहुँचा सैकड़ो व्यक्ति जय घोष की ध्वनि से आकाश को गुंजायमान कर रहे थे। ऐसे लोगों के समुह के साथ आपश्री का सातारा में सुभागमन हुआ। महाराज श्री के साथ जूलूस का यह दृश्य दर्शनीय था। सातारा में पदार्पण कर श्रीसंघ के विशाल धर्म-स्थानक में आप विराजमान हुए। चातुर्मास प्रारंभ होने पर प्रतिदिन व्याख्यान मे उत्तरोत्तर श्रोताओं की संख्या बढने लगी धीरे-धीरे लोग इतने अधिक आने लगे की स्थानक खचाखच भर जाता था। व्याख्यान में आप सूत्रकृतांग सूत्र का वांचन करते थे। आपश्री मधुर अमृतोपम उपदेश को सुनकर श्रोतागण पुनः पुनः उसे सुनने के लिए इतने अधिक लालायित रहते थे कि उन्हें कभी तृप्ति नहीं होती थी स्थानीय श्रावक श्राविकाओं के अतिरिक्त दूर दूर से अनेक लोग व्याख्यान सुनने के लिए आते थे। पर्यूषण तथा सांवत्सरिक महापर्व भी विशेष उत्साह के साथ तथा बडि शान्ति पूर्वक सम्पन्न हुआ। यहां आपश्री के समय समय पर जाहिर व्याख्यान भी होते थे। हजारों जैन अजैन भाई आपके प्रवचन सुन कर अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव करते थे। श्री संघ ने धर्म-ध्यान तपस्या तथा

व्याख्यान वाणी का प्रचुर मात्रा में लाभ उठाया। चातुर्मास के समय चारितनायकजी के दर्शनार्थ आने वाले व्यक्तियों का श्री संघ ने तन मन धन से आतिथ्य सत्कार किया। इस प्रकार चातुर्मास काल आनन्द पूर्वक सम्पन्न होने लगा

महात्मा गान्धी से भेट—

महात्मा गान्धीजी असहयोग आन्दोलन के सिलसिले में उन दिनों सातारा आये हुए थे। कार्तिक मास चल रहा था। महात्मा गाँधीजी ने जाहिर प्रवचन दिया। जाहिर प्रवचन के बाद यहां के सुप्रसिद्ध श्रावक जीवनलालजी ने गाँधीजी से कहा—"यहाँ हमारे पूज्य गुरुदेव पधारे हुवे हैं। इस पर गाँधीजी ने महाराज श्री के दर्शन करने की एवं उनसे वार्तालाप करने की इच्छा प्रकट की। तत्काल सेठ जीवनलालजी के साथ महात्माजी महाराज श्री के निवास स्थान पर पधारे। उस समय महाराज श्री टाट का सामान्य आसन बिछा कर जमीन पर ही बैठे हुवे थे और स्वाध्याय में तल्लीन थे गान्धीजी वन्दन कर सामने बैठ गये। महाराज श्री को यह पता भी नही था कि" जो सामने व्यक्ति बैठे हैं वे ही गान्धी जी है। बाहर जनसमुदाय करीब दस हजार खडा था लोगों के कोलाहल और जयध्वनि से चरितनायकजी का ध्यान टूटा। उन्होंने सहसा अपने सामनेबैठे हुए पुरुष को देखकर पूछा आपका नाम ? गान्धजी ने स्मित हास्य के साथ कहा मुझे मोहनलाल गान्धी कहते है। महाराज श्री ने पूछा आपही गान्धी जी हैं ? इस पर गान्धी जी ने स्मित हास्य के साथ कहा "जी" में ही हूँ। गान्धी जी ने महाराज श्री को टाट के आसन पर जमीन पर बैठे हुए देख आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा मुनि जी आपके आसन तो पाट पर ही होना चाहीए ? हम जैसे सामान्य व्यक्ति जमीन पर बैठते हैं तो उचित जान पड़ता है। आप सन्तों का आसन तो उंचा ही होना चाहिए ?

महाराज श्री ने कहा पट्टे पर तो हम व्याख्यान के समय में बैठते हैं। दूसरी बात जबमुनि हो जाने के बाद आसन की उचाई या निचाई का कोइ महत्त्व नहीं। महत्त्व तो मुनि धर्म के पालन को है।

महात्मा गान्धी' मैं जैनमुनि एवं जैन धर्म के सिद्धान्त से परिचित हूँ। मै प्राय: जहां अवसर मीलता है तब जैनमुनियों के समीप जाता रहता हूँ। तो मेरी आप मुनियों के प्रति विशेष श्रद्धा है। किन्तु आप जमाने के अनुकूल श्रावकों को उपदेश नहीं देतें। इन त्रुटियों को आप को निकाल देनी चाहिए। साथ ही आपको राष्ट्रीय असयोग आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिए। समस्त भारत पराधीनता कि बेड़ी में जकड़ा हुआ है। इस समय हम सब का एक मात्र उदेश्य होना चाहिए भारत के अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त करना। आप भी उपदेश सुनने वाले श्रावकों में इस भावना को जाग्रत करें। अंग्रेज हमारे शत्रू हैं। उन्हें हटाना देश वासियों का कर्तव्य है।

महाराज श्री ने कहा आपका और हमारा उदेश्य एक ही है। अन्तर इतना ही है कि आप देश को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त करना चाहते हैं जब कि हम आत्मा को उसके भीतर रहे हुए काम क्रोधादि शत्रुओं से मुक्त कराना चाहते हैं। बाह्य शत्रु हमारा उतना नुकसान नहीं करता जितना आन्तरिक शत्रू करता है। बाह्य शत्रु अधिक सेअधिक हमारा प्राण नष्ट कर सकता है। हमारा सर्वस्व छीन सकता है। किन्तु आन्तरिक शत्रु तो हमारे समस्त आत्मगुणों को छीन लेता है और अनन्त भवों की गुलामी में जकड देता है। जिसके जीवन में मिथ्याचार पापाचार और दुराचार की कारी कजरारी मेघ घटाएँ छाइ रहती है वह व्यक्ति स्वतंत्र होते हुए भी परतंत्र है। उसका जीवन सुखी नहीं बन सकता। जिसे आत्मबोध नहीं होता आत्म विवेक नहीं होता, वह व्यक्ति दूसरे का विकास तो क्या कर सकता है स्वयं अपना भी विकास नहीं कर सकता। अन्धे के सामने कितना भी सुन्दर दर्पण रखा जाय तो क्या

था। व्याख्यान के समय उनका हृदयकमल विकसित होकर वह ते जो मय सूर्य की किरणों की तरह आप के उपदेश रूपी ज्ञान के प्रकाश को सर्वात्मभाव से ग्रहण कर अधिकाधिक आनन्द का अनुभव करता था। श्रोतागण आप के अमृतोपम उपदेश को सुनने के लिए भ्रमर की तरह सदैव लालायित रहते थे। किं बहुना,, आपके विराजने से जैन धर्म की प्रभावना खूब बढी। धर्मध्यान और तपश्चर्या आदि विपुलमात्रा में हुए। इस प्रकार आपका यह प्रथम स्वतंत्र चातुर्मास अत्यन्त सफलता पूर्वक एवं सुखशान्ति पूर्वक व्यतीत हुआ।

चिंचवड का चातुर्मास सानन्द पूर्ण करके आपश्री ने सातारा की ओर विहार कर दिया। वहाँ से चारोली को पावन कर आपश्री का पूना में आगमन हुआ। यहां कुछ दिन स्थिरता कर पूना से सातारा की ओर विहार हुआ। कात्रज सिंघावाडी, कामथडी किंकवी न्हावी आदि क्षेत्रों में धर्म प्रचार करते हुए आप सतारा पधारे।

सतारा क्षेत्र में चरितनायकजी का यह प्रथम ही पधारना हुआ। आपश्री के शुभागमन के पूर्व ही सारे दक्षिण प्रान्त में आप की कीर्ति व्याप्त हो चुकी थी। जहां कहीं भी आपश्री का शुभागमन होता लोग अपने आप को कृतार्थ समझते थे। अनेक जन्मों के पुण्य से ऐसे त्यागी सन्तों का सहवास का सुअवसर जीवन में यह प्रथम बार हुआ था इसलिए आपके व्याख्यान के समय प्रत्येक व्यक्ति रुचि पूर्वक लाभ लेता था। प्रतिदिन व्याख्यान के समय बोधामृत का पान करने से वहां के श्रावक श्राविकाओ की धार्मिक भावना में विशेष वृद्धि हुई।

वि०सं. १९७७ का १९ वाँ चातुर्मास सातारा में

आपके प्रवचन सुनते सुनते वहां के मुख्य श्रावकों के हृदय में यह भावना जागृत हुई की ऐसे त्यागी वैरागी और ज्ञानी संत के पास कुछ शास्त्राभ्यास करना चाहिए और ज्ञान की वृद्धि करनी चाहिए। यह सोच कर श्रावकगण हमारे चरितनायकजी की सेवा में उपस्थित हो इस वर्ष का चातुर्मास सातारा में ही व्यतीत करने की प्रार्थना की। श्रावकों का अत्यन्त आग्रह देख मुनिश्री ने स्वीकृति फरमा दी, चातुर्मास की स्वीकृति से नगर निवासियों के हर्ष की सीमा न रही। उन्होंने सोचा अब ऐसे महापुरुषों का चातुर्मास हमको जितनी लम्बी अवधि तक समागम में रहनेवाले है, इससे बढकर हमारे लिए और क्या सुवर्णावसर हो सकता है?

आसपास के क्षेत्रों को पावन कर चरितनायकजी चातुर्मासार्थ सातारा पधार गये। महाराज श्री का आगमन सुन कर सारे नगर का श्री संघ आपके स्वागतार्थ बहुत दुर तक सामने पहुँचा सैकड़ो व्यक्ति जय घोष की ध्वनि से आकाश को गुंजायमान कर रहे थे। ऐसे लोगों के समुह के साथ आपश्री का सातारा में सुभागमन हुआ। महाराज श्री के साथ जूलुस का यह दृश्य दर्शनीय था। सातारा में पदार्पण कर श्रीसंघ के विशाल धर्म-स्थानक में आप विराजमान हुए। चातुर्मास प्रारंभ होने पर प्रतिदिन व्याख्यान में उत्तरोत्तर श्रोताओं को संख्या बढने लगी धीरे-धीरे लोग इतने अधिक आने लगे की स्थानक खचाखच भर जाता था। व्याखान में आप सूत्रकृतांग सूत्र का वांचन करते थे। आपश्री मधुर अमृतोपम उपदेश को सुनकर श्रोतागण पुनः पुनः उसे सुनने के लिए इतने अधिक लालायित रहते थे कि उन्हें कभी तृप्ति नहीं होती श्री स्थानीय श्रावक श्राविकाओं के अतिरिक्त दूर दूर से अनेक लोग व्याख्यान सुनने के लिए आते थे। पर्युषण तथा सांवत्सरिक महापर्व भी विशेष उत्साह के साथ तथा बडि शान्ति पूर्वक सम्पन्न हुआ। यहां आपश्री के समय समय पर जाहिर व्याख्यान भी होते थे। हजारों जैन अजैन भाई आपके प्रवचन सुन कर अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव करते थे। श्री संघ ने धर्म-ध्यान तपस्या तथा

व्याख्यान वाणी का प्रचुर मात्रा में लाभ उठाया। चातुर्मास के समय चारितनायकजी के दर्शनार्थ आने वाले व्यक्तियों का श्री संघ ने तन मन धन से आतिथ्य सत्कार किया। इस प्रकार चातुर्मास काल आनन्द पूर्वक सम्पन्न होने लगा

महात्मा गान्धी से भेंट—

महात्मा गान्धीजी असहयोग आन्दोलन के सिलसिले में उन दिनो सातारा आये हुए थे। कार्तिक मास चल रहा था। महात्मा गाँधीजी ने जाहिर प्रवचन दिया। जाहिर प्रवचन के बाद यहां के सुप्रसिद्ध श्रावक जीवनलालजी ने गाँधीजी से कहा—"यहाँ हमारे पूज्य गुरुदेव पधारे हुवे हैं। इस पर गाँधीजी ने महाराज श्री के दर्शन करने की एवं उनसे वार्तालाप करने की इच्छा प्रकट की। तत्काल सेठ जीवनलालजी के साथ महात्माजी महाराज श्री के निवास स्थान पर पधारे। उस समय महाराज श्री टाट का सामान्य आसन बिछा कर जमीन पर ही बैठे हुवे थे और स्वाध्याय में तल्लीन थे गान्धीजी वन्दन कर सामने बैठ गये। महाराज श्री को यह पता भी नही था कि" जो सामने व्यक्ति बैठे हैं वे ही गान्धी जी है। बाहर जनसमुदाय करीब दस हजार खडा था लोगों के कोलाहल और जयध्वनि से चरितनायकजी का ध्यान टूटा। उन्होंने सहसा अपने सामनेबैठे हुए पुरुष को देखकर पूछा आपका नाम ? गान्धजी ने स्मित हास्य के साथ कहा मुझे मोहनलाल गान्धी कहते है। महाराज श्री ने पूछा आपही गान्धी जी हैं ? इस पर गान्धी जी ने स्मित हास्य के साथ कहा "जी" में ही हूँ। गान्धी जी ने महाराज श्री को टाट के आसन पर जमीन पर बैठे हुए देख आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा मुनि जी आपके आसन तो पाट पर ही होना चाहीए ! हम जैसे सामान्य व्यक्ति जमीन पर बैठते हैं तो उचित जान पड़ता है। आप सन्तों का आसन तो ऊंचा ही होना चाहिए ?

महाराज श्री ने कहा पट्टे पर तो हम व्याख्यान के समय में बैठते हैं। दूसरी बात जबमुनि हो जाने के बाद आसन की उचाई या निचाई का कोइ महत्त्व नहीं। महत्त्व तो मुनि धर्म के पालन का है।

महात्मा गान्धी' मैं जैनमुनि एवं जैन धर्म के सिद्धान्त से परिचित हूँ। मै प्रायः जहां अवसर मीलता है तब जैनमुनियों के समीप जाता रहता हूँ। तो मेरी आप मुनियों के प्रति विशेष श्रद्धा है। किन्तु आप जमाने के अनुकूल श्रावकों को उपदेश नहीं देतें। इन त्रुटियो को आप को निकाल देनी चाहिए। साथ ही आपको राष्ट्रीय असयोग आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेना चाहिए। समस्त भारत पराधीनता कि बेड़ी में जकड़ा हुआ है। इस समय हम सब का एक मात्र उदेश्य होना चाहिए भारत के अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त करना। आप भी उपदेश सुनने वाले श्रावकों में इस भावना को जागृत करें। अंग्रेज हमारे शत्रू हैं। उन्है हटाना देश वासियों का कर्तव्य है।

महाराज श्री ने कहा आपका और हमारा उदेश्य एक ही है। अन्तर इतना ही हैं कि आप देश को अंग्रेजों की गुलामी से मुक्त करना चाहते हैं जब कि हम आत्मा को उसके भीतर रहे हुए काम क्रोधादि शत्रुओं से मुक्त कराना चाहते हैं। बाह्य शत्रु हमारा उतना नुकसान नहीं करता जितना आन्तरिक शत्रू करता है। बाह्य शत्रु अधिक सेअधिक हमारा प्राण नष्ट कर सकता है। हमारा सर्वस्व छीन सकता है। किन्तु आन्तरिक शत्रु तो हमारे समस्त आत्मगुणों को छीन लेता है और अनन्त भवों की गुलामी में जकड देता है। जिसके जीवन में मिथ्याचार पापाचार और दुराचार की कारी कजरोरी मेघ घटाएँ छाइ रहती है वह व्यक्ति स्वतंत्र होते हुए भी परतंत्र है। उसका जीवन सुखी नहीं बन सकता। जिसे आत्मबोध नहीं होता आत्म विवेक नहीं होता, वह व्यक्ति दूसरे का विकास तो क्या कर सकता है स्वयं अपना भी विकास नहीं कर सकता। अन्धे के सामने कितना भी सुन्दर दर्पण रखा जाय तो क्या

परिणाम होगा ? जिसमें स्वयं देखने की शक्ति नहीं है उसको दर्पण अपने में प्रतिबिम्बित—उसके प्रतिबिम्ब को कैसे दिखला सकता है ? आध्यात्मिक शक्ति विहीन व्यक्ति बाह्य शक्ति के बल से अधिक से अधिक व्यक्ति विवेक शून्य होता जारहा है ।

इस संसार में दो बल मुख्य हैं एक शस्त्र—बल और दूसरा शास्त्र बल । शस्त्र बल सपन्न राष्ट्रों के पास है और शास्त्र बल अपने आप को धर्म का श्रेष्ठ नेता कहलाने वाले धार्मिक आचार्यों के पास है । मैं मानता हूँ कि शस्त्र बल-भयंकर है उसमें महान विनाश की शक्ति रही हुई है, किन्तु शास्त्र बल उससे भी अधिक भयंकर है । जिस व्यक्ति के हृदय में दया नहीं, करुणा नहीं, वह अपने शस्त्र बल से अन्याय अत्याचार कर सकता है । अमुक समय तक किसी राष्ट्र को गुलाम रख सकता है । और जिस व्यक्ति के हृदय में बुद्धि, और विवेक नहीं वह धर्म नेता सुन्दर से सुन्दर शास्त्र का भी दुरुपयोग कर सकता है । जो व्यक्ति दुराचार और पापाचार में संलग्न है, उसका शास्त्र बल भी शस्त्र बल से कहीं अधिक भयंकर है । यदि हम इतिहास के पृष्ठों को उलट कर देखें तो मालूम होगा कि शास्त्रों की लडाई शस्त्रों की लडाई से कम भयंकर नहीं रही हैं । शस्त्र की लडाई तो एक बार समाप्त हो भी जाती है लेकिन शास्त्रों की लडाई तो हजारों-लाखों वर्षों तक चलती है । अंग्रेजों ने भारत को सदियों तक गुलाम रखने के लिए शस्त्र लडाई नहीं किन्तु शास्त्र लडाई सिखाई है । परिणाम स्वरूप हिन्दू मुसलमान सिक्ख ईसाई एवं हिन्दू धर्म के विविध संप्रदाय आज तक शास्त्र लडाई में अपने आप को संलग्न कर भाई भाई के दुष्मन हो गये हैं । आज का विवेकशून्य धर्म नेता शस्त्र के समान शास्त्र का दुरुपयोग कर रहा है । आज हमें लोगो में विवेक जागृत करना हैं, धार्मिक परतन्त्रता की बेडी से मुक्त करना है । आज का राष्ट्रीय धर्म है देश को परतन्त्रता से मुक्त करना, वह तो आप कर ही रहे हैं किन्तु आपकी तरह हम मुनि मर्यादा में रहने वाले न जेल में जा सकते हैं और न कानून का भंग ही कर सकते हैं । मुनि जीवन में रहकर धर्म एवं राष्ट्र की अधिक से अधिक सेवा करने का प्रयत्न कर ही रहे हैं ।"

यह वार्तालाप चल ही रहा था कि एक भाई महाराज श्री के पास आया और बोला—शौकतअलीजी आपके पास आना चाहते हैं ? महात्मा गाँधीजी ने भी कहा-शौकतअली मुसलमान हैं क्या वे आपके धर्म स्थानक में आ सकते हैं ?

महाराज श्री ने कहा—गाँधीजी, शौकत अली तो मुसलमान है किन्तु ढेड, चमार भंगी जैसे अछूत व्यक्ति भी बिना रोक टोक के हमारे धर्म स्थानक में आ सकते हैं और धर्म का आचरण कर सकते हैं। जैन धर्म मानता है कि मनुष्य जाति ऐक है, उसमें किसी प्रकार का जन्ममूलक उच्च नीचता का भेद—भाव नहीं । जैनधर्म का तो यहां तक विधान है कि जो नीच जातिवालों से घृणा करता है वह नीच कुल में पुनः पुनः जन्म लेता है । जैनधर्म पाप से घृणा करना सिखाता है पापी से नहीं। जो पापी से घृणा करता है, वह द्वेष करता है वह स्वयं पापी है । चाण्डालकुलोत्पन्न हरि केशी मुनि ने जैन दीक्षा ग्रहण कर सर्वोच्च पद प्राप्त किया था । भगवान श्रीमहावीर जातिवाद और वर्ण व्यवस्था के कट्टर विरोधी थे । भगवान ने क्रोध, मान, माया और लोभ को चाण्डाल कहा है और उससे अछूत रहने का उपदेश दिया है ।

इस वार्तालाप के बीच शौकत अली भी महाराज श्री सेवामें पहुँच गये । शौकतअली ने भी महाराजश्री के साथ १५ मिनिट तक बातचीत की । वार्तालाप से गान्धीजी और शौकतअली बडे प्रभावित हुए । स्थानक के बाहर हजारों व्यक्ति एकत्रित हो गये गान्धीजी को देखने के लिए स्थानक में घूस आये । अपार भीड देखकर गान्धीजी ने कहा—मेरी इच्छा आप से अधिक वार्तालाप करने की थी, व्याख्यान सुनने

हिज होलीनेस महाराजा शाहु महाराज
कोल्हापुर

की इच्छा थी किन्तु जनता की यह भीड मुझे यहां से उठने के लिए मजबूर कर रही है। आपका मैने बहूमुल्य समय लिया है इसके लिए मै क्षमा चाहता हुँ यह कहकर गांन्धीजी खडे हुए और महाराज श्री को नमस्कार कर चले गये।

सातारा का चातुर्मास बडा महत्त्वपूर्ण रहा। आपश्री का अगाध सिद्धान्त ज्ञा.।, द्रव्य, क्षेत्र काल और भाव को जानने का अद्‌भुत कोशल, चमत्कार पूर्ण वक्तृत्व शैली आदि गुणों के कारण सातारा क्षेत्र पर इतना प्रभाव पडा कि सारा शहर आपके प्रभाव से प्रभावित हुआ। चातुर्मास काल में नगर के अनेक गण्य मान्य सुशिक्षित व्यक्तियों ने आपके प्रवचनपीयूष का पान किया।

चातुर्मास समाप्ति के बाद महाराजश्री ने विहार का निश्चय किया। विहार के दिन प्रातः काल ही सैकडों स्त्री पुरुष स्थानक में एकत्र हो गये। स्थानक संपूर्ण खचाखच भर गया ८ बजे महाराज श्री ने अपनी सन्तमण्डली के साथ विहार किया। भक्ति पूर्ण हृदय से जनता ने दूर तक साथ चल कर विदाई दी प्रत्येक व्यक्ति को महाराज श्री की विदाई खटक रही थी। मांगलिक श्रवण के समय बडा करुण जनक दृश्य था। सब की आंखों से आंसू छल छला आए। संघ की ओर से श्रीमान् फतहलालजी ने त्रुटियों की क्षमा याचना की। महाराज श्री ने विदाई सन्देश दिया और निर्मोही सन्त अनगार आगे की ओर चल दिए, जनता विषाद हृदय से घर जा रही थी और सन्त मण्डली प्रसन्न मुद्रा से आगे बढ रही थी।

कोल्हापुर नरेश को प्रतिबोध :—

हमारे चरितनायक पं. रत्न श्री घासीलालजी महाराज सा. करीब तेरह वर्ष से नासूर की बिमारी से पीडित थे। अनेक देशी अनुभवी वैद्योंसे उपचार के बाद भी पीडा शान्त न हुई। व्याधि के उग्र आक्रमण को आप अपनी पूरी शक्ति एवं शांन्ति से अब तक सहन करते रहे। सातारा चातुर्मास के बीच औषधोपचार भी किये किन्तु औषधि का कोई स्थायी परिणाम नहीं निकला बल्कि इस रोग का आक्रमण पहले से अधिक उग्रता पूर्वक होने लगा। चातुर्मास समाप्त हुआ तो मुनियों ने एवं श्रावकों ने आप से प्रार्थना की कि इस उग्र व्याधि का स्थायी उपाय कर लेना ही उचित है। स्थानीय डाक्टरों का भी यही अभिप्राय रहा की महाराज श्री मिरज अस्पताल पधारे और इस विषय के पूर्ण निश्नात डाक्टरों का इलाज करावें। यह शरीर केवल आपका ही नहीं सामाज का भी है। स्वस्थ शरीर से हीं स्व पर का हित संभव है। श्रमणवर्ग एवं श्रावक समुदाय तथा विशिष्ट चिकित्सकों के अभिप्राय को लक्ष्य में रखकर एवं संयमी जीवन की रक्षार्थ आपने साथी मुनियों के साथ मिरज गांव की ओर विहार कर दिया और आप मिरज पधार गये। वहां के बडे डाक्टरों को बताया गया। डाक्टरों ने रोग का नीदान कर कहा महाराज श्री के शरोर में जो रोग है उसकी जड गहरी है और शल्य चिकित्सा द्वारा ही निकाली जा सकती है अतः हमारी राय है कि शल्य की चिकित्सा शीघ्र करवा लेनी चाहिए। नहीं तो यह रोग भविष्य में अधिक खतरनाक सिद्ध होगा।

महराज श्री ने फरमाया कि "विना शस्त्र क्रिया के प्राकृतिक उपचारों द्वारा या औषधोपचार से यह रोग शान्त हो सकता है तो मैं पहले यह उपाय कर लेना अधिक पसन्द करता हूँ। डाक्टरो ने कहा— आप तेरहवर्ष से विविध प्रकार के उपचार करते आये हैं किन्तु इस का कोई स्थाई परिणाम नहीं निकाला। इसका स्थायी उपाय एक मात्र शस्त्र क्रिया ही है। अतः आपको इस विषय में अधिक विलम्ब नहीं करना चाहिए।" मुनिश्री ने डाक्टरों का अभिप्राय सुना और उसका गहराई के साथ चिन्तन किया। अंत में श्रावकों, व मुनियों की प्रार्थना एवं डाक्टरो के अभिप्राय को लक्ष में रख कर आपरेशन कराने

का निश्चय कर लिया । दूसरे दिन आपरेशन करवाने की इच्छा से आप अपने मुनियों के साथ मिरज अस्पताल में पधारे और वहाँ एक कमरे में ठहरे ।

सेठ फत्तेचन्दजी साहब कोल्हापुर महाराजा के बडे मर्जीदान व्यक्तियों में से एक थे । आप की समाज में प्रतिष्ठा व प्रभाव बडा अच्छा था । उन्होंने महराजश्री के ज्ञान दर्शन एवं उनके उत्कट चारित्र विषयक चर्चा कोल्हापुर महाराजा से की । जैन मुनियों के आदर्श चारित्र एवं जीवन साधना के उच्चतम नियमों को सुनकर वे बडे आश्चर्य चकित हुए । उन्होंने सेठ साहब फत्तेचन्दजी से कहा--"आपके गुरुदेव कहां हैं ? मैं उनका दर्शन करना चाहता हूँ ।

सेठ साहब ने कहा गुरुदेव इस समय अस्पताल में बिराज रहे हैं । वे नासुर की बिमारी से पीडित है । डाक्टरों ने उनका आँपरेशन करने का निश्चय किया है । ठीक अवसर पाकर महाराजा गुरुदेव के दर्शन के लिए अस्पताल आये । जब लोगों को पता लगा कि--कोल्हापुर नरेश जैनमुनियों के दर्शन के लिए आरहे हैं तो हजारों की संख्या में जनता अस्पताल को आर रवाना हुई । अस्पताल के बाहर करीब पांच--छ हजार का समूह एकत्र हुआ था । महाराजा गुरुदेव के समीप पहुँचे उनके प्रभावपूर्ण व्यक्तित्व को देखकर बडे चमत्कृत हुए । वे महाराजश्री के समीप आकर बैठ गये । महाराजा के आगमन के समाचार सुनकर सिव्हील सर्जन एवं अन्य डाक्टर भी महाराज श्री की सेवा में उपस्थित हुए । राज्य के मुख्य मुख्य कर्मचारी भी उपस्थित थे । दृश्य बडा अपूर्व था । महाराज श्री का प्रभावशाली व्यक्तित्व महाराजा को आकर्षित कर रहा था । महाराज श्री के मुखपर मुखवस्त्रिका देखकर महाराजा के मन में कुतुहल उत्पन्न हुआ । महाराजा ने अकडकर प्रश्न किया--

क्यों महाराज ! आप अपने मुह पर यह पट्टी क्यों बांध कर रखते हो ? महाराज श्री ने फरमाया--

राजन् ! यह वीतरागी जैनमुनियों का चिह्न है । जिस प्रकार पुलिस की पहचान उसके पट्टे से होती है उसी प्रकार स्थानकवासी जैन मुनियों की पहचान भी इसी चिह्न से होती है । जब राजमहल पर ध्वज फरकता रहता है तब यह जाना जाता है कि "महाराजा इस समय महल में मौजूद है । जिस प्रकार ध्वज से महाराजा की उपस्थिति का पता लगता है उसी प्रकार मुखवस्त्रिका रुप चिन्ह से जैन मुनियों की पहचान होती है ।

दूसरा कारण यह है कि जैनधर्म अहिंसा प्रधान धर्म है इसमें मन और बचन से भी किसी प्राणी को कष्ट देना महान पापमाना गया है । जैन धर्म की मान्यतानुसार पृथ्वी, पानी, अग्नि हवा ओर वनस्पति वे सब सजीव है । उनकी रक्षा करना प्रत्येक जैनी का कर्तव्य है । जैन मुनि सम्पूर्ण हिंसा के त्यागी होते हैं अतः मुख के गरमश्वास से हवा के जीव न मरजाय इसलिए उन्हें मुख पर वस्त्र बांधना अनिवार्य होता है ।

श्रीमहावीर का यह सिद्धान्त है कि--

सव्वे जीवा वि इच्छंति जीविउं न मरिज्जिउं । तम्हा पाणवहं घोरं निग्गंथा वज्जयंति णं ॥१॥

संसार के सभी प्राणी जीना चाहते हैं मरना योई नहीं चाहते । अतः निर्ग्रन्थ श्रमणों को प्राणी वध का सर्वथा त्याग करना चाहिए । जिस हिंसक व्यापार को तुम अपने लिए पसन्द नही करते हो, उसे दूसरा भी पसन्द नही करता । जिस दयामय व्यवहार को तुम पसन्द करते हो, उसे सभी पसन्द करते हैं । यही जिन शासन के कथनों का सार है जो कि एक तरह से सभी धर्मो का सार है । इसी दृष्टि को ध्यान में रखकर हम मुख पर वस्त्र बान्धकर रखते हैं । साथ ही मुखवस्त्रिका हमें वाणी संयम का भी पाठ सिखाती है । क्योंकि भावों को अभिव्यक्ति देने का सब से प्रभावशाली और व्यापक माध्यम हैं भाषा । भाषा

ही भावों को अमरता प्रदान करती है। व्यक्ति और विश्व के सम्बन्धों की सब से महत्त्वपूर्ण कडी भाषा है। इस दृष्टि से दीर्घप्रज्ञ तीर्थंकर भगवान श्री महावीर स्वामी ने भाषा वाणी विवेक पर सब से अधिक महत्व दिया है। उनके नीति बोध का सब से महत्त्वपूर्ण एक अंग है—वाणी का संयम। प्रकृति से मनुष्य को दो हाथ, दो पांव, दो आंख, दो कान मिले है पर जीभ एक ही क्यों मिली ? इसका कारण यही है कि मनुष्य अपनी दो आंख और दो कान से हरएक चीज को दो बार देखे, सुने पर जीभ से केवल एक ही बार कहे। मनुष्य को हाथ और पाव लम्बे लम्बे मिले हैं पर जीभ छोटी क्यों मिली ? इसका कारण भी यही है कि मनुष्य अपने हाथ पैरों का उपयोग अधिक से अधिक करें पर जीभ का उपयोग बहुत कम करें यानी आवश्यकता होने पर ही बोले। शास्त्रों में वाणी का भी तप माना गया है। कम से कम बोले यह वाणी का तप है। उर्दू का महाकवि जौक कहता है—

कहे एक जब सुनले इन्सान दो ॥ कि हक ने जबा एक ही दी कान दो ॥१॥

जीभ के माधुर्य से संसार वश में होता है।

फितरत को ना पसन्द है सख्ती जबान में। पैदा हुई न इसलिए हड्डी जबान में ॥ [हबीब]

राजन् ! कहने का तात्पर्य यह है कि २४ घंटे मुखवस्त्रिका बान्धने से हमें वाणी संयम की सदैव प्रेरणा मिलती है।

तीसरा कारण यह है कि बाहर को सजीव धूलि, सजीव जलकण हमारे मुख में न पडे। साथ ही स्वास्थ्य रक्षा का भी इसमें दृष्टिकोण रहा है। आज का विज्ञान यह मानता है कि धूल के रजकणों में मानव देह में बिमारी उत्पन्न करनेवाले अनेक जन्तु फैले हुए हैं, वे श्वासोच्छ्वास के जरिये पेट में पहुँच कर अनेक व्याधियाँ उत्पन्न करते हैं। उपस्थित डॉक्टर साहब को लक्ष्य कर महाराज श्री ने कहा—

क्यों डाक्टर साहब ! आप तो इस विषय के बडे विशेषज्ञ हैं। जब आप लोग ऑपरेशन करते हैं तब भी मुख पर कपडा बाँधकर रखते हैं। इसका कारण क्या हो सकता है। डांक्टर साहब ने कहा मुनिजी जो कह रहे हैं वह ठीक ही कह रहे हैं। हम लोग रोग उत्पन्न करने वाले जन्तुओं से बचने के लिए ही ऑपरेशन के समय मुख पर कपडा बांधते हैं।

महाराज श्री ने अपना वक्तव्य जारी रखते हुए आगे कहा—जैन धर्म एक महान वैज्ञानिक धर्म है। आज से ढाई हजार वर्ष के पूर्व जब कि आज की तरह विज्ञान इतना विकसित नहीं था। विज्ञान के ज्ञान को पाने के लिए आज की तरह साधन भी प्राप्त नहीं थे, उस समय इस धर्म के महान प्रवर्तक भगवान श्री महावीर प्रभु ने पृथ्वी, पानी, अग्नि, हवा और वनस्पति में जीव बताकर आज के साधन सम्पन्न वैज्ञानिकों को आश्चर्य में डाल दिया है। जैन धर्म का परमाणुवाद आज के परमाणुवाद से बहुत कुछ अंश में मिलता है। अतः वायु के आश्रित रहने वाली अनेक खराबियों से बचने के लिए हम लोग मुख पर वस्त्र धारण करते हैं।

मुख वस्त्रिका बांधने के चौथे कारण पीछे तो एक महान सभ्यता की दृष्टि रही हुई है। भगवान श्री महावीर ने कहा है—यदि आप समाज में रहना चाहते हो तो सभ्य और शिष्ट बनकर रहो। आपकी ऐसी कोई प्रवृत्ति न हो जिससे सामने वाले को कष्ट हो। हमारे मुख का थूक गन्दा है, नापाक है वह अगर किसी पर गिरता है तो सामनेवाले को बडा कष्ट होता है। आज की सभ्यता कहती है कि छींक खाँसी, उबासी के समय अपने मुख पर रुमाल रखो ताकि सामने वाले पर थूक या श्लेष्म के उडने से वह हमसे घृणा न करने लगे। उसकी घृणा अपमान एवं अपशब्द में बचने के लिए भी मुख पर वस्त्र बांधना आवश्यक है। पाचवां कारण यह भी है कि हम जब धर्म शास्त्र को पवित्र मानते हैं जब हम

खुले मुह उसका वांचन करेंगे तो हमारा थूक उस पर अवश्य गिरेगा। अपवित्र थूक के धर्म शास्त्र पर गिरने से हम उसकी पवित्रता की रक्षा नहीं कर सकते हैं। धर्मशास्त्र की पवित्रता की रक्षा के लिए और उसके अविनय से बचने के लिए हम मुख पर वस्त्र धारण करते हैं।

महाराजा क्या आप स्नान करते हैं ? महाराज श्री ने कहा राजन् ! स्नान का अर्थ है शुद्धि-करण। शुद्धि करण दो प्रकार का है। एक शारीरिक और दूसरा मानसिक। जैनधर्म आध्यात्मिक क्षेत्र में शारीरिक शुद्धि की अपेक्षा मानसिक शुद्धि को विशेष महत्व देता है। केवल जैनधर्म ने ही नहीं किन्तु अन्य धर्म के महर्षियों ने भी मानसिक पवित्रता पर भार दिया है महर्षि अगस्त्य कहते हैं—

ध्यान पूते ज्ञान जले रागद्वेष मलापहे। यः स्नाति मानसे तीर्थे स याति परमां गत्ति ॥

अर्थात् ध्यान के द्वारा पवित्र तथा ज्ञान रूपी जल से भरे हुए, राग—द्वेप रूप मल को दूर करने वाले मानस तीर्थ में जो मनुष्य स्नान करता है वह परमगति मोक्ष को प्राप्त करता है। मनुस्मृति में भी कहा है—

सर्वेषा मेव शौचानामर्थशोचं परं स्मृतम्। योऽर्थे शुचिर्हि स शुचिर्न मृद्वारि शुचिः शुचिः ॥

संसार के समस्त शौचों (शुद्धियों) में अर्थ शौच (न्याय से उपार्जित धन) ही श्रेष्ठ शौच (उत्कृष्ट शुद्धि) है। जो अर्थ शौच से युक्त है वही वस्तुतः शुद्ध है। मिट्टी कौर पानी की शुद्धि वस्तुतः कोई शुद्धि नहीं है।

कहने का तात्पर्य यह है कि शरीर को लाखबार धोने पर भी वह सदा अपवित्र ही रहता है।अतः पानी ढोलकर नहाने में हम धर्म नहों मानते। यदि पानी ढोलकर नहाने में हि व्यक्ति यदि धर्मात्मा हो जाय तो पानी में रहने वाले प्राणी सबसे बडे धर्मात्मा होंगे।

दूसरी बात जैनमुनि आजीवन ब्रह्मचारी होते हैं। ब्रह्मचर्य की साधना के लिए और उसकी पूर्णता के लिए शास्त्रकारो ने कुछ साधन एवं उपाय बताये हैं, इनमें शरीर संस्कार श्रृंगार न करने का भी एक विधान है। शास्त्र में कहा है— ब्रह्मचर्य का पालन करनेवाले साधक को शरीर शृङ्गार एवं स्नानादि का सर्वथा त्याग करना चाहिए। इसी विधान के अनुसार हम जलस्नान नहीं करते हैं।

महाराज श्री ! आप लोग ईश्वर को मानते हैं ? महाराज श्री, हा, हम लोग ईश्वर को मानते हैं।

महाराज, क्या आपका ईश्वर जन्म लेता है ?

पू. महाराज श्री जैन धर्म के अनुसार जो आत्मा राग द्वेष से सर्वथा रहित हो, जन्म मरण से सर्वथा अलग हो, सर्वज्ञ सर्वदर्शी हो, और जो अजर, अमर, सिद्ध, बुद्ध, मुक्त आत्मा है, वह परमात्मा ही ईश्वर है। प्रत्येक आत्मा में परमात्म तत्त्व रहा हुआ है। प्रत्येक आत्मा राग द्वेष को नष्ट करके वीत-राग भाव की उपासना के द्वारा परमात्मा बन सकता है। जैन धर्म आत्मा और परमात्मा में मौलिक भेद नहीं मानता है तात्विक दृष्टि से प्रत्येक जीव में ईश्वर भाव है जो मुक्ति के समय प्रकट होता है। जिस आत्मा ने राग—द्वेष की ग्रन्थी का सर्वथा छेदन कर दिया और जो कर्म के बन्धन से मुक्त हो गया है ऐसा मुक्तात्मा ही ईश्वर है। और वही उपास्य है। मुक्तात्मा के अतिरिक्त और कोई स्वतंत्र ईश्वर शक्ति है यह जैन दर्शन स्वीकार नहीं करता है।

मुक्तजीव—ईश्वर पुनर्जन्मा नहीं है। विश्व का प्रत्येक नियम कार्य कारण रूप में सम्बन्ध है। बिना कारण के कभी कार्य नहीं हो सकता, बीज होगा तभी अंकुर हो सकता है। धागा होगा तभी वस्त्र हो सकता है। आवागमन का व जन्म मरण पाने का कारण कर्म है. और वे मोक्ष अवस्था में रहते नहीं। अतः कोई भी विचारशील सज्जन समझ सकता है कि जो आत्मा कर्म मल से मुक्त होकर मोक्ष पा चुका

है वह परमात्मा बन चुका है वह आत्मा फिर संसार में कैसे आ सकता है ? बीज तभी उत्पन्न हो सकता है, जब तक की वह भुना नहीं है, निर्जीव नहीं हुआ है । जब बीज एक बार भुन गया, तो फिर कभी तीनकाल में भी उत्पन्न नहीं हो सकता । जन्म-मरण रूप अंकुर का बीज कर्म है । उसे तपश्चरण आदि कर्म क्रियाओं से जला दिया तो बस फिर वह सदा काल के लिए अजन्मा हो गया । आचार्य श्रीने एक जगह कहा

दग्धे बीजे यथाऽत्यन्तं प्रादुर्भवति नांकुरः । कर्म-बीजे तथा दग्धे न रोहति भवाङ्कुरः ॥

कहने का तात्पर्य यह है कि जहां जन्म है वहां मरण अवश्यं भावी है । जहां जन्म मरण है वहां ईश्वरत्व कैसे संभव है ? अतः ईश्वर का पुनर्जन्म नही यह मान्यता तर्क संगत प्रतीत होती है ।

महाराजा, जन्म मरण रहित ईश्वर इस विशाल विश्व का निर्माण कैसे कर सकता है ?

महाराज श्री राजन् ! ईश्वर परमात्मा है मगर वह जगत का सृष्टा या नियंता नहीं । वह पूर्ण अवस्था में पहुँचा हुआ होने के कारण वह सृष्टि निर्माण के प्रपञ्च में नहीं पडता ।

महाराजा, यदि परमात्मा विश्व का निर्माण नहीं करता है तो इस संसार का निर्माण या विनाश कौन करता है ?

महाराजश्री राजन् ! जैन दृष्टि के अनुसार यह चराचर विश्व जड और जीव का चेतन और अचेतन का विविध परिणाम मात्र है । ये दो तत्त्व ही समग्र विश्व के मूलाधार हैं । इन दोनों का पारस्परिक प्रभाव ही विश्व का रूप है । ये दोनों तत्त्व अनादि और अनन्त हैं । न कभी इनकी आदि हुई है और न कभी इनका निरन्वय विनाश हो होगा । इसलिए यह विश्व–प्रवाह अनादि अनन्त है । यह पहले भी था, अब भी है और भविष्य में भी रहेगा । ऐसा कोई अतीत कालीन क्षण नहीं था जिसमें विश्व का अस्तित्व न हो और ऐसा कोई भावी क्षण नहीं होगा जिसमें इस विश्व का अस्तित्व न रहेगा । यह सदा से है और सदा हि रहेगा । यद्यपि यह विश्व प्रवाह की अपेक्षा अनादि अनन्त है और शाश्वत है तदपि यह कूटस्थ नित्य नहीं है । इस में प्रतिक्षण विविध परिवर्तन होते रहते हैं । विश्व का कोई भी पदार्थ कभी एकसी अवस्था में नही रह सकता है । उसमें प्रतिपल परिवर्तन होता ही रहता है । इसलिए यह विश्व परिणामी है । जैन दर्शन की सह मान्यता है कि कोई भी पदार्थ निरन्व नष्ट नही होजा और सर्वथा नवीन भी उत्पन्न नहीं होता किन्तु उसका परिणमन होता रहता है अर्थात् उसकी अवस्था में परिवर्तन होता रहता है । जड और चेतन की स्वतंत्र और प्रारस्परिक प्रवृत्ति से संसार का व्यवस्थित संचालन होता रहता है । इसमें ईश्वर के संचालन की या उसके निर्माण की आवश्यकता नहीं प्रतीत होती है । जीव और अजीव के सहयोग से ही इस समस्त संसार का संचालन होता है । गीता में श्री कृष्ण अर्जुन को यही कहते हैं–

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः । न कर्मफलसंयोजं स्वभावस्तु प्रवर्तते ॥ गीता ५–१४ ॥

ईश्वर न संसार के कर्तव्य का रचयिता है, न कर्मों का रचयिता है और न वह कर्म फल के संयोग की ही रचना करता है । यह सब तो प्रकृति का अपना स्वभाव ही वर्तरहा है ।

महाराजा, ग्रहों नक्षत्रों से सुशोभित इस अनन्त विश्व का कोई निर्माता अवश्य होना चाहिए । इस निर्माणकर्ता की आज्ञा से ही नियमित रूप से सूर्य चन्द्र का उदय और अस्त होता है इसकी आज्ञा को मानकर ही वायु निरन्तर बहती रहती है, वर्षा होती है पशु, पक्षी, तरु लता, जीव, जन्तु नव जीवन पाते हैं और समय समय पर शीत, उष्णता आदि ऋतुएं अपना प्रभाव प्रकट करती है । सृष्टि के आंगन में जो नियमबद्धता दृष्टि गोचर होती है, जो व्यवस्था दिखाई देती है और जो वैचित्र्य एवं नवीनता मालूम

होती है वह किसी सर्जन हार के बिना नहीं हो सकती। इसलिए इस विश्व का कोई सृष्टा अवश्य होना चाहिए।"

महराजश्री राजन् ! मै आपसे पूछता हूँ क्या कोई भी पदार्थ विना बनाये अपना अस्तित्व नही रख सकता ? यदि नहीं रख सकता तो फिर ईश्वर का अस्तित्व किस प्रकार है ? उसे किसने बनाया ? यदि ईश्वर को किसी ने नहीं बनाया, फिर भी वह अपने आप ही अनादि अनन्त काल से अपना अस्तित्व रख सकता है, तो इसी प्रकार जगत भी अपने अस्तित्व में किसी उत्पादक की अपेक्षा नहीं रख सकता।

ईश्वर कर्तृत्ववादी ईश्वर को अशरीरी दयालु, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक, नित्य और सम्पूर्ण मानते हैं। यदि ईश्वर को जगत्कर्ता माना जाता है तो उसके उक्त विशेषणों में बाधा उपस्थित होती है, ईश्वर य सृष्टि निर्माण करता है तो उसे शरीर युक्त होना चाहिए। अशरीरी ईश्वर इस मूर्त संसार का निर्माण किस तरह से कर सकता है ? यदि कहा जाय कि ईश्वर समर्थ है इसलिए शरीर को कोई आवश्यकता नहीं, वह अपने ज्ञान चिकीर्षा (करने की इच्छा) और प्रयत्न के द्वारा निर्माण कर सकता है, इसका उतर यही हो सकता है शरीर के बिना चिकीर्षा और प्रयत्न कैसे सम्भव हो सकते हैं। मुक्तात्मा की तरह यदि ईश्वर अशरीरी है तो उसमें प्रयत्न और चिकीर्षा कैसे रह सकते हैं ? जहां इच्छा और प्रयत्न है वहां पूर्णता भी कैसे मानी जा सकती है ? इसलिए ईश्वर को कर्ता मान लेने पर उसे शरीरधारी भी मानना पडेगा। यदि शरीर को धारण करके सृष्टि की रचना करता है तो क्या दृश्य हो कर दुनिया बनाता है या भूत प्रेतों की तरह अदृश्य रह कर दुनिया की रचना करता है। दृश्य शरीर से ईश्वर संसार को बनाता है यह न हमने देखा और न हमारे पूर्वजोने ही। यदि अदृश्य होकर बनाता है तो उसे अदृश्य रहने की क्या आवश्यकता है। अदृश्य रहने में तो उसके सामर्थ्य में ही बाधा आती है। दूसरी बात यह है कि सशरीरी होने पर वह संसारी जीव जैसा सामान्य हो जायगा। वह ईश्वर ही न रहेगा। यदि ईश्वर दयालु है और सर्वशक्तिमान भी है तो उसने इस दुःखमय सृष्टि की रचना क्यों की ? क्यों न उसने एकान्त सुखी और समृद्ध विश्व की रचना की ? सिंह सर्प आदि दुष्ट हिंसक पशुओं से भरे हुए, रोग, शोक, द्रोह, दुर्व्यसन से घिरे हुए, चोरी जारी हत्या आदि अपराधों से व्याप्त दु.ख पूर्ण संसार को बनाने में उसकी करुणा कहा रहती है। यदि आप कहेंगे—यह परमात्मा की लीला है भला यह लीला कैसी है ? बिचारे संसारी जीव रोग, शोक आदि से भयंकर त्रास पाएं अकाल और बाढ कादि के समय नरक जैसा हाहाकार मच जाए, और वह ईश्वर, यह सब अपनी लीला करें ? फिर भी महाकरुणावान कहलाए यह कैसे हो सकता है। यदि परमात्मा दयालु होकर संसार का निर्माण करता है तो वह दिन दुःखी ओर दुराचारी जीवों को क्यों पैदा करता है? आज जिसे दुःखी देखकर हमारा हृदय भी भर आता है, तो उसे बनाते समय और इस दुःखद परिस्थिति में रखते समय यदि ईश्वर को दया नहीं आई तो उसे हम दयालु कैसे कह सकते हैं ?

कोल्हापुर महाराजा—

जीव जैसा कर्म करता है वैसा ही फल पाता है। जो जैसा बोता है वह वैसा ही फल पाता है। प्राणी अपने दु.ख-सुख के लिए स्वयं उत्तरदायी है, कर्मफल अथवा अदृष्ट के कारण जन्म जन्मान्तर जीव भोगायतन–शरीर आदि प्राप्त कर सुख दु.खादि का अनुभव करता है, ईश्वर दयालु है तदपि जीव को अपने अदृष्ट के कारण दुःख भोगने पडते हैं। दूसरी बात यह भी है कि महाभूत आदि से देह का निर्माण होता है परन्तु किस प्रकार के भोग के योग्य देह करना यह अदृष्ट दोनों अचेतन हैं। इसलिए इन्हें सहायता करने के लिए और जीव को इसके कर्मों का फल देने के लिए एक सचेतन सर्वशक्ति-

सृष्टा की आवश्यकता है यह कार्य ईश्वर करता है।

महाराज श्री

ईश्वर में करुणा होने पर भी यदि वह जीवों के दुःखों को दूर नहीं कर सकता है और भोगायतन–देहादि का आधार अदृष्ट पर ही हो तो फिर ईश्वर को बीच में डालने की आवश्यकता हीं क्या है ? क्यों न यही माना जाय कि जीव अपने कर्मो के अनुसार सुख दुःख पाता है। वह जैसा कर्म करता है उसके अनुसार स्वयं उसका फल प्राप्त कर लेता है। यदि कहा जाय कि अचेतन कर्म जीव को फल कैसे दे सकते हैं ? जीव स्वयं अपने अशुभ कर्मो का फल नहीं चाहता है इसलिए फल देनेवाला तो ईश्वर ही मानना चाहिए। इसका उत्तर यह है कि जीव अपनी राग द्वेष रुप परिणति से कर्म पुद्गलों को अपने साथ सम्बध कर लेता है। उन आत्म संबंध रूप कर्म पुद्गलों में ऐसी शक्ति प्रकट हो जाती है कि वे जीव को उसके शुभाशुभ कर्मो का फल दे सकते हैं। जैसे नेगेटिव और पोजेटिव तारों में स्वतंत्र रुप से विद्युत पैदा करने की शक्ति नहीं है परन्तु जब दोनों मिल जाते हैं तो उनसे विद्‍युत् पैदा हो जाती है। इसी तरह स्वतंत्र कर्म पुद्‍गलों में जीव को दुःख देने की शक्ति न होने पर भी जब वे आत्मा से सम्बद्ध हो जाते हैं। तब उनमें ऐसी शक्ति प्रगट हो जाती है। अत जीव के शुभाशुभ कर्म हो उसे सुख दुःख का भोग कराने में समर्थत होता है। इसके लिये ईश्वर को बीच में डालने की आवश्यकता नहीं है। यदि ईश्वर को इस प्रपञ्च में डाला जाता है तो इश्वरत्व में बाधा आती है ईश्वर का सच्चा स्वरुप नहीं रहने पाता है।

ईश्वर कर्तृत्व के विषय में दूसरा प्रश्न यह भी पैदा होता है कि ईश्वर ने यह जगत किसमें से बनाया ? अर्थात् सृष्टि रचना के पहले क्या अवस्था थी ? यदि यह कहा जाय कि सर्व शून्य था। उस शून्य में से ईश्वर के द्वारा इस सृष्टि की रचना की गई। तो यह कथन सर्वथा अयुक्त लगता है क्योंकि शून्य से कोई वस्तु पैदा नहीं हो सकती है। यह सर्व सम्मत तत्त्व है कि सत् असत् कभी नहीं हो सकता है। और असत् कभी सत् नहीं हो सकसा है। कहा भी है–

नासतो जायते भावो ना भावो जायते सतः।

अर्थात् सर्वथा असत् पदार्थ कभी उन्पन्न नहीं होता और सत् का कभी सर्वथा अभाव नहीं होता। जैसे खर विषाण असत् है तो वह कभी उत्पन्न नहीं हो सकता है और जो आत्मा आदि सन् हैं उनका कभी सर्वथा अभाव नहीं हो सकता है, यदि यह विश्व ईश्वर के द्वारा निर्मित होने के पहले सर्वथा असत् रूप था तो ईसकी उत्पत्ति ही नहीं हो सकती है यदि यह पहले भी सत् रूप था तो इसको उत्पन्न करने वाला ईश्वर हैं, यह नहीं कहा जा सकता है। इस तरह यह सृष्टीवाद या ईश्वर कर्तृत्ववाद युक्ति संगत सिद्ध नहीं होता है।

कोल्हापुर नरेश–

यदि परमात्मा हमें सुख–दुःख नही देता तो उसकी भक्ति करने की क्या आवश्यकता है ? जो हमारे काम में नहीं आता उसकी भक्ति करने से हमें क्या लाभ ?

महाराज श्री,

क्या भक्ति का अर्थ रिश्वरतखोरी है ? भक्ति का अर्थ काम कराना ही है ? परमात्मा कों मज़दूर बनाये बिना भक्ति होही नहीं' सकती, ? यह भक्ति क्या है, यह तो एक प्रकार की तिजारत है। इस प्रकार की भक्ति, भक्ति नहीं, ईश्वर को फुसलाना है, घुस देना है और अपने सुख के लिए उसकी चापलूसी करने के बराबर है। सच्चे ईश्वर भक्त की भक्ति किसी भी लोक पर लोक की कामना के

लिए नहीं होती वह तो अहैतु की हुआ करती है। बिना किसी इच्छा के प्रभु की परम निर्मल भक्ति करना ही सच्ची भक्ति है। निष्काम भक्ति ही सर्व श्रेष्ठ भक्ति है मनोविज्ञान शास्त्र का यह नियम है कि जो मनुष्य जैसा सोचता है, मनन करता है, कालान्तर में वह वैसा ही बन जाता है। जिस को जैसी भावना होती है, वह वैसा ही रूप धारण कर लेता है "यादृशी भावना यस्य सिद्धिर्भवति तादृशी जिसकी जैसी भावना होती है वैसी ही उसको सिद्धि मिलती है। इस नियम के अनुसार परमात्मा का चिन्तन मनन, भजन करने से यह आत्मा परमात्मा बन जाता है।

कोल्हापुर नरेश—क्या आप मूर्ति को मानते हैं?

महाराज श्री राजन्! हम मूर्ति को ईश्वर नहीं मानते। कारण मूर्ति जड है, जड कभी ईश्वर नहीं हो सकता और ईश्वर जड नहीं हो सकता। शरीर जैसी जड वस्तु से ममता आसक्ति दूर करने के लिए ऋषि मुनियोंने चार वेद, अठारह पुराण स्मृतियां आदि की रचना की है तो जड मूर्ति के प्रति जो हमारी ममता आसक्ति उत्पन्न होगी उसे हम किस साधन से दूर कर सकते हैं?

महाराज—क्या आप वर्णव्यवस्था में विश्वास रखते हैं?

महाराज श्री—राजन्! जैनधर्म आज की प्रचलित वर्ण व्यवस्था का सदा कट्टर विरोधि है। वह जन्मतः किसी को ब्रह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, और शूद्र नहीं मानता। जैन धर्म जाति की अपेक्षा कर्तव्य को विशेष महत्व देता है। उसका मुख्यसूत्र है—

कंम्मुणा बंभणो होई कम्मुणा होई खत्तिओ वइसो कम्मुणा होई सुद्दो हवइ कम्मुणा॥

अर्थात् जन्म की अपेक्षा से सब के सब मनुष्य हैं। कोई भी व्यक्ति जन्म से ब्रह्मण, क्षत्रिय वैश्य एवं शूद्र होकर नहीं आता। वर्ण व्यवस्था तो मनुष्य के अपने स्वीकृत कर्तव्यों से होती है। अतः जो जैसा करता है, वह वैसा ही हो सकता है। अर्थात् कर्तव्य के बल से ब्राह्मण शूद्र हो सकता है और शूद्र भी ब्राह्मण हो सकता है। भगवान श्री महावीर स्वामी के शासन में चाण्डाल कुलोत्पन्न हरीकेशी नाम के एक महामुनि थे। उनके त्याग एवं तप से प्रभावित हो सार्वभौम राजा एवं क्रियाकाण्डी ब्राह्मण तथा देव गण भी सभक्तिभावसे उनके चरण छूकर अपने को धन्य मानते थे। स्वयं भगवान श्रीमहावीर ने पावापुरी की महती सभा में उनकी प्रशंसा करते हुए कहा था—

सक्खं खु दीसई तवो विसेसो॥ न दीसई जाइ विसेस कोई
सोवागपुत्तं हरिएस साहु,॥ जस्सेरिसा इड्ढि महाणुभागा॥ उत्त० १२, ३७

अर्थात् प्रत्यक्ष में जो कुछ भी महत्त्व दीखाई देता है, वह सर्व गुणों का ही है, जाति का नहीं। जो लोग जाति को महत्त्व देते हैं वे लोग भूल करते है क्योंकि जाति की महत्ता किसी भांति भी सिद्ध नहीं होती। चाण्डाल कुल में पैदा हुआ हरिकेशीमुनी। अपने गुणों के बल से आज किस पद पर पहुँचा है। इसकी महत्ता के सामने बिचारे जन्मतः ब्राह्मण क्या महत्ता रखते हैं? महानुभाव हरिकेसी मुनि में अब चाण्डालपन का क्या शेष है वह तो ब्राह्मणों का भी ब्राह्मण बना हुआ है।

भगवान श्रीमहावीर ने जाति को नहीं कर्तव्य को प्रधानता दी है उनका कहना है कि धर्म किसी की पैतृक सम्पत्ति नहीं है जिस पर अन्यकिसी का अधिकार ही न हो। धर्म सबका है और धर्म के सब हैं। धर्म किसी को जात पात की ओर नहीं देखता। वह देखता है मनुष्य की एक मात्र आन्तरिक सद् भावना एवं भक्ति को जिसके बल पर वह जीवित है। जिस प्रकार सूर्य—प्रकाश और जल—वायु आदि प्राकृतिक पदार्थों पर प्राणिमात्र का अधिकार हैं उसी प्रकार धर्म एवं भगवान की उपासना पर भी सर्व का समान अधिकार है। इसकेलिए उन्हें कोई रोक नहीं सकता।

जैन धर्म का मानव मात्र के लिए यही परम पवित्र उपदेश है कि आजिवन दुराचार रुप पापों का तिरस्कार करो, पापी का नहीं, तुम्हें पाप के प्रति तिस्कार करने का अधिकार है, किन्तु मनुष्य के प्रति नहीं। कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य जाति एक है. उसमें किसी भी प्रकार की जन्म मूलक उच्च नीचता का कोई भेद-भाव नहीं हैं। जो मनुष्य जातिमद करता है वह नीच जाति में पुनः जन्म लेता है।

यह वार्तालाप चल ही रह था कि इतने में महाराजा का निजी फोटु ग्राफर केमरा लेकर महाराज के पास खडा हो गया। कोल्हापुर नरेश महाराज श्री से निवेदन किया। स्वमीजी, हम आप का फोटू खींचना चाहते हैं?

महाराजश्री ने कहा-राजन्! हम मुनि फोटू नहीं खिंचवाते। इस पर आपने एक सेर कहा

एकसे जब दो हुए लुथ पे इकताई नहीं, इसलिए जाना न हमने तस्वीर खिंचवाई नहीं।

महाराजा-आपतो यहाँ से चले जाएंगे किन्तु फोटू से आपकी स्मृति बनी रहेगी।

महाराज श्री ने इस पर एक दृष्टान्त दिया दो मित्र थे। दोनों का एक दूसरे के प्रति अटूट स्नेह था। दोनों सैनिक थे। एक दिन एक मित्र को अपने अधिकारी द्वारा लडाई के मोर्चे पर जाने का हुक्म मिला। विदा होते समय लडाई पर जाने वाले मित्र ने अपनी यादगार में उसे अपना फोटू देना चाहा। मित्र ने फोटू लेने से इन्कार कर दिया इस पर दूसरे मित्र ने कहा दोस्त! मैं तो लडाई के मैदान पर जा रहा हूँ। पता नहीं बच के आऊँगा या नहीं। इस फोटू से कम से कम मेरी याद-गिरि तो रहेगी कि मेरा भी कोई दोस्त था। इस पर दोस्त ने जवाब दिया भाई! मैं तुम्हारी तस्वीर इसलिए लेना पसन्द नहीं करता कि मेरा जो तुम्हारे प्रति स्नेह है वह जड तस्वीर पर उतर आएगा। मैं तुम्हारी जिन्दा तस्वीर अपने पाक दिल में रखना चाहता हूँ। ताकि मेरे दिल में रही हुई तुम्हारी प्यारी तस्वीर को कोई चुरा नहीं सकता कहने का तात्पर्य यह है कि गुरु के प्रति जो तुम्हारी श्रद्धा है वह जड तस्वीर पर उतर आयेगी। हम गुरु के प्रति सच्ची श्रद्धा भक्ति एवं उनके द्वारा प्रदर्शित मार्ग को भूल जातें हैं और उनके जड फोटू पर ही श्रद्धा भक्ति व्यक्त करते हैं। यह मैं उचित नहीं मानता। फोटों को तो एक अज्ञान आत्मा ही महत्व देता है। इस प्रकार कोल्हापुर महाराजा का महाराज श्री के साथ करीब डेढ घन्टे तक वार्तालाप के बाद महाराज श्री के स्वास्थ्य के विषय में पूछताछ की उपस्थित डाक्टर को सम्बोधन कर राजा साहब ने कहा-महाराज श्री का ऑपरेशन बडे ध्यान से किया जाय! उन्हें किसी भी प्रकार का कष्ट न हो इस बात का पूरा ध्यान रक्खें। साथ ही अस्पताल से जितनी भी सुविधा मिल सके उतनी अधिक दी जाय। इस वार्तालाप के बीच महाराज श्री ने कहा हम जैन मुनि हैं। हमारे कुछ नियम भी हैं। डाक्टर साहब ने मेरे आपरेशन का समय शाम को साडे पाँच बजे का रखा है। यह समय हमारे ध्यान धारणा एवं भक्ति का समय है सूर्यास्त बाद न हम जल का स्पर्श करते हैं न उसका सेवन ही करते हैं। रात्रि में भोजन पानी औषध आदि कुछ भी नहीं लेते। रात्रि में हमारे स्थान में कोई स्त्रियाँ भी नहीं आसकती। हम लोग रात्रि में बीजली आदि के प्रकाश का उपयोग भी नहीं करतें। अन्य भी छोटे बडे अनेक नियम हैं जो ५॥ बजे के ऑपरेशन के समय हम उन्हें पाल नहीं सकतें। अतः ऑपरेशन का समय सायंकाल के बदले प्रातःकाल रखा जाय तो अधिक अच्छा रहेगा।,,

इस पर महाराजा साहब ने डाक्टरों से कहा-महाराज श्री की इच्छा एवं उनके नियम के अनुकूल-सर्व वातें होनी चाहिए। ये मेरे गुरु हैं इनको कष्ट वह मेरा कष्ट होगा। अतः गुरु महाराज को बिना कष्ट दिये उनकी इच्छानुसार करो।

इतना कह कर महाराजा खड़े हो गये और जमीन पर सारे शरीर को फैला कर उन्होंने साष्टांग प्रणाम किया। और कहा- " आप मेरे गुरु हैं। प्रणाम कर वे बाहर आये जहां करीब आठ दश हजार की संख्या में जनता महाराजा के स्वागत की प्रतीक्षा कर रही थी। महाराजा को देखते ही कोल्हापुर महाराजा की जय हो। गुरु महाराज पं. श्री घासीलालजी महाराज की जय हो।,, इस प्रकार हजारों व्यक्ति जयघोष की ध्वनि से आकाश को गुन्जायमान करने लगे।

उपस्थित जन समूह को सम्बोधित करते हुए कोल्हापुर महाराजा ने कहा मैं आज तक किसी को गुरु नहीं मानता था और न नमस्कार हि करता था, किन्तु गुरु महाराज श्री घासीलालजी महाराज के व्यक्तित्व से एवं उनके आचार विचार से बडा प्रभावित हुआ हूँ। आध्यात्मीक जीवन के तीन अङ्ग है—अनासक्ति, संयम और त्याग, साधक इन तीन धर्मों की साधना मनसा, वाचा कर्मणा से करता है, उनको मैं अध्यात्मीक पुरुष मानता हूँ। ऐसे ही गुरु समाज और राष्ट्र का कल्याण करतें हैं। गुरु महाराज भी अपने युग के एक ऐसे ही अद्भुत अध्यात्म योगी हैं। इनके दिव्य जीवन का दिव्य संदेश जन जन के जीवन को सुवासित करे यही मेरी अभिलाषा है। हम सब इस अध्यात्म योगी के प्रति श्रद्धाञ्जलि समर्पित कर उनके मार्ग पर चलने का प्रयत्न करेंगे।,, यह कह कर महाराजा अपनी कार में बैठ गये। और जनता का अभिवादन स्वीकार कर वे कोल्हापुर की ओर चल दिये।

कोल्हापुर नरेश की कुलदेवी अम्बिका देवी है। देवी को भी वे मस्तक झुकाकर ही देवी का अभिवादन करते थे। यह इस राज्य घराने की पराम्परा है। कोल्हापुर नरेश को विनय पूर्वक नत्मस्तक दो पचांग झुकाकर महाराजश्री को नमन करते देख एवं महाराजश्री के प्रति प्रशंसा के उद्गार सुनकर जनता आश्चर्य चकित थी। लोगों के मुख से शब्द निकल रहे थे कि महाराज श्री ने राजा साहब पर आश्चर्य जनक जादू कर दिया है

महाराजा की आज्ञा होते ही अंग्रेज डांक्टर वेल जो वहां के असिस्टट सर्जन थे उसने आँपरेशन का समय बदल दिया। दूसरे दिन दिनके दो बजे आँपरेशन करने का तय किया।

ऑपरेशन—कक्ष में प्रारंभिक तैयारी यां करलेने के बाद डॉक्टर ने महाराज श्री को आँपरेशन कक्ष में पधारने की सूचना दी। इधर ऑपरेशन के आध घंटे पूर्व ही महाराज श्री ने अपने साथी मुनि के समक्ष आलोचना की और सागारी संथारा लेकर वे ऑपरेशन कक्ष में पधार गये। आँपरेशन-कक्ष के भीतर एक मुनि एवं एक दो प्रमुख श्रावक के सिवाय अन्य सर्व को बाहर जाने का आदेश मिला! सब बाहर आकर महाराज श्री के सफल ऑपरेशन की कामना करने लगे। ठीक दो बजे ऑपरेशन प्रारंभ हुआ। महाराज श्री स्टेज पर सो गये। डॉक्टर क्लारोफॉर्म सूंघाना प्रारंभ किया। उस समय महाराज श्री श्वास खींच कर प्राणायाम की प्रक्रिया में लग गये। करीब १५ मिनीट तक डॉक्टर महाराज श्री को मूर्च्छा लाने का प्रयोग करते रहे परन्तु महाराज श्री की सचेत अवस्था देखकर डॉक्टर विचार में पड गये कि महाराज श्री को क्लोरोफार्म का असर क्यों नहीं हो रहा है। डॉक्टर ने जब जांच की तो पता लगा कि महाराज श्री ने श्वास लेना बन्द किया है। डॉक्टर ने सूचना की कि आप स्वाभाविक रूप से श्वा-सोच्छवास लें। डाँक्टर के कहने पर महाराज श्री ने प्राणायाम की प्रक्रिया बन्द की और वे स्वाभाविक रूप से श्वास लेने लगे। क्लारोफार्म का असर हुआ और महाराज श्री मूर्छित हो गये। ऑपरेशन के समय सतारा वाले सेठश्री मोतीलालजी साहब उपस्थित थे। ऑपरेशन कक्ष में किसी भी नर्स को महा-राज श्री के शरीर को छूने नहीं दिया गया। मुनि मर्यादा के अनुकूल सभी नियमों का पालन करने को लगाया गया। करीब एक घंटा ऑपरेशन चला, नौ इंच गहरा और दस इंच चोडा इतने भाग पर नस्तर

से ऑपरेशन किया गया। ऑपरेशन बहुत अच्छा सफल हुआ। महाराज श्री को रूम में लाया गया और पाट बिछाकर उन्हें सुला दिया। करीब चार घन्टे के बाद महाराज श्री क्लोरोफार्म की असर से मुक्त हुए। उस समय प्रतिक्रमण का समय भी आचुका था। सचेत होते ही महाराज श्रीने प्रतिक्रमण किया। महाराज श्री को अगाध धैर्य और असीम सहिष्णुता एवं अपने नियमों को चुस्तता पूर्वक पालन करते देख डॉक्टर भी चकित हो गया। धन्य ऐसे सहन शील सन्त जिन्होंने इस रुग्ण अवस्था में भी अपने नियमों को नही छोडा। करीब १५ दिन तक आप अस्पताल में रहें। रात्रि में उनके रूम में कोई भी नर्स नहीं आती थी और न बिजली आदि का प्रकाश ही किया जाता था। महाराज की परिचर्या अधिक तर साथ के मुनि ही करते थे कम से कम गृहस्थ की अनिवार्य सेवा ली जाती थी।

समाज के भाग्योदय से ऑपरेशन के बाद महाराज श्री के स्वास्थ्य में दिनो दिन सुधार होने लगा। आँपरेशन के आठ दिन बाद कोल्हापुर नरेश पुनः स्पेशियल ट्रेन में बैठकर अपने पूरे रसाले के साथ महाराज श्री के दर्शनार्थ अस्पताल पधारे। साथ में दिवान बाला साहेब भी थे। दिगम्बर जैन पण्डित कल्हापाणा नेटवे जो अपने समय का अच्छा विद्वान माना जाता था उन्हें भी साथ में लाये। महाराजा के साथ अन्य जागीरदार राज्य के मुख्य मुख्य अधिकारी एवं प्रतिष्ठित सेठ साहुकार भी थे, महा राजा अस्पताल में जहां महाराज श्री बिराजते थे वहां आये और महाराज श्री को साष्टांग प्रणाम कर उनकी सेवा में बैठ गये। महाराज श्री को बैठने की डॉक्टर साहब की मना थी। अतः महाराज श्री सोते सोते ही कोल्हापुर नरेश के साथ बात चित करने लगे। महाराज श्री ने राजासाहब के समीप बैठे हुए एक प्रभावशालो व्यक्ति को देख कर पूछा–ये साहब कोन हैं?

राजा साहब ने जवाब दिया–ये मेरे दिवान बाला साहेब हैं। और दुसरे व्यक्ति एक महान विद्वान दिगाम्बर जैन पण्डित है। इतने में एक व्यक्ति आया और महाराजा के जूता खोलकर ले गया। उसके विषय में किसी अन्य व्यक्ति को महाराज श्री ने पूछा-यह कौन थे? उत्तर मिला--यह तीन लाख की जागीरवाला जागीरदार है। और इसका कार्य मात्र महाराजा के जूते को सुन्दर एवं सुरक्षित रखना है। राजा साहब के साथ अन्य भी कई विद्वान साथ में थे। महाराजा प्रश्न पूछने की तैयारी कर रहे थे कि इस बीच एक प्रभाव शाली व्यक्ति ने प्रवेश किया। महाराज श्री को पंचाङ्ग नमाकर विधिवत् वन्दना की और विनय पूर्वक वंदन कर के महाराज श्री की सेवा में बैठ गया, राणा के लिबास मे एक प्रभावशील व्यक्ति को देखकर कोल्हापुर नरेश ने पूछा आप कौन हो? और कहां से आये हो?

उत्तर मिला–मेरा नाम केशवलाल है मैं मेवाड हिन्दवाकुल सूरज महाराणा श्री फत्तेसिंहजी का भूतपूर्व प्राइवेट सेक्रेटरी हूँ। महाराज–आपका आगमन कैसे हुआ।

लालाजी केशवलालजी बोले--मैं गुरुदेव के दर्शन के लिए आया हूँ। ये गुरुदेव ही संसार समुद्र को पार करने वाले जहाज हैं।

महाराज ने महाराज श्री की ओर दृष्टि डाल कर पूछा—–आपका आगमन किस प्रदेश से हुआ?

महाराज श्री हम मेवाड प्रदेश से आये हैं।

महाराजा–मेवाड उदयपुर से यहाँ तक पधारने में आपको कितना समय लगा?

महाराज श्री–करीब तीन साल लगे

महाराजा–तासगांव से आपको पधारने में कितना समय लगा? महाराज श्री–तीन दिन लगे।

महाराजा–आपको इतना समय कैसे लगा? महाराज श्री–हम लोग पैदल ही चलते हैं। किसी भी सजीव या निर्जीव वाहन का उपयोग नहीं करते। यहां तक की हम लोग नंगे पैर ही

इतनी कह कर महाराजा खडे हो गये और जमीन पर सारे शरीर को फैला कर उन्होंने साष्टांग प्रणाम किया। और कहा– " आप मेरे गुरु हैं। प्रणाम कर वे बाहर आये जहां करीब आठ दश हजार की संख्या में जनता महाराजा के स्वागत की प्रतीक्षा कर रही थी। महाराजा को देखते ही कोल्हापुर महाराजा की जय हो। गुरु महाराज पं. श्री घासीलालजी महाराज की जय हो।,, इस प्रकार हजारों व्यक्ति जयघोष की ध्वनि से आकाश को गुन्जायमान करने लगे।

उपस्थित जन समूह को सम्बोधित करते हुए कोल्हापुर महाराजा ने कहा मैं आज तक किसी को गुरु नहीं मानता था और न नमस्कार हि करता था, किन्तु गुरु महाराज श्री घासीलालजी महाराज के व्यक्तित्व से एवं उनके आचार विचार से बडा प्रभावित हुआ हूँ। आध्यात्मीक जीवन के तीन अङ्ग है–अनासक्ति, संयम और त्याग, साधक इन तीन धर्मो की साधना मनसा, वाचा कर्मणा से करता है, उनको मैं अध्यात्मीक पुरुष मानता हूँ। ऐसे ही गुरु समाज और राष्ट्र का कल्याण करतें हैं। गुरु महाराज भी अपने युग के एक ऐसे ही अद्भुत अध्यात्म योगी हैं। इनके दिव्य जीवन का दिव्य संदेश जन जन के जीवन को सुवासित करे यही मेरी अभिलाषा है। हम सब इस अध्यात्म योगी के प्रति श्रद्धाञ्जलि समर्पित कर उनके मार्ग पर चलने का प्रयत्न करेंगे।,, यह कह कर महाराजा अपनी कार में बैठ गये। और जनता का अभिवादन स्वीकार कर वे कोल्हापुर की ओर चल दिये।

कोल्हापुर नरेश की कुलदेवी अम्बिका देवी है। देवी को भी वे मस्तक झुकाकर ही देवी का अभिवादन करते थे। यह इस राज्य घराने की परामपरा है। कोल्हापुर नरेश को विनय पूर्वक नतमस्तक दो पचांग झुकाकर महाराजश्री को नमन करते देख एवं महाराजश्री के प्रति प्रशंसा के उद्गार सुनकर जनता आश्चर्य चकित थी। लोगों के मुख से शब्द निकल रहे थे कि महाराज श्री ने राजा साहब पर आश्चर्य जनक जादू कर दिया है

महाराजा की आज्ञा होते ही अंग्रेज डांक्टर वेल जो वहां के असिस्टट सर्जन थे उसने ऑपरेशन का समय बदल दिया। दूसरे दिन दिनके दो बजे ऑपरेशन करने का तय किया।

ऑपरेशन–कक्ष में प्रारंभिक तैयारी यां करलेने के बाद डॉक्टर ने महाराज श्री को ऑपरेशन कक्ष में पधारने की सूचना दी। इधर ऑपरेशन के आध घंटे पूर्व ही महाराज श्री ने अपने साथी मुनि के समक्ष आलोचना की और सागारी संथारा लेकर वे ऑपरेशन कक्ष में पधार गये। ऑपरेशन-कक्ष के भीतर एक मुनि एवं एक दो प्रमुख श्रावक के सिवाय अन्य सर्व को बाहर जाने का आदेश मिला! सब बाहर आकर महाराज श्री के सफल ऑपरेशन की कामना करने लगे। ठीक दो बजे ऑपरेशन प्रारंभ हुआ। महाराज श्री स्टेज पर सो गये। डॉक्टर क्लोरोफॉर्म सूंघाना प्रारंभ किया। उस समय महाराज श्री श्वास खींच कर प्राणायाम की प्रक्रिया में लग गये। करीब १५ मिनीट तक डॉक्टर महाराज श्री को मूर्च्छा लाने का प्रयोग करते रहे परन्तु महाराज श्री की सचेत अवस्था देखकर डॉक्टर विचार में पड गये कि महाराज श्री को क्लोरोफार्म का असर क्यों नहीं हो रहा है। डॉक्टर ने जब जांच की तो पता लगा कि महाराज श्री ने श्वास लेना बन्द किया है। डॉक्टर ने सूचना की कि आप स्वाभाविक रूप से श्वासोच्छवास लें। डॉक्टर के कहने पर महाराज श्री ने प्राणायाम की प्रक्रिया बन्द की और वे स्वाभाविक रूप से श्वास लेने लगे। क्लारोफार्म का असर हुआ और महाराज श्री मूर्छित हो गये। ऑपरेशन के समय सतारा वाले सेठश्री मोतीलालजी साहब उपस्थित थे। ऑपरेशन कक्ष में किसी भी नर्स को महाराज श्री के शरीर को छूने नहीं दिया गया। मुनि मर्यादा के अनुकूल सभी नियमों का पालन करने को लगाया गया। करीब एक घंटा ऑपरेशन चला, नौ इंच गहरा और दस इंच चोडा इतने भाग पर नस्तर

से ऑपरेशन किया गया। ऑपरेशन बहुत अच्छा सफल हुआ। महाराज श्री को रूम में लाया गया और पाट बिछाकर उन्हें सुला दिया। करीब चार घन्टे के बाद महाराज श्री क्लोरोफार्म की असर से मुक्त हुए। उस समय प्रतिक्रमण का समय भी आचुका था। सचेत होते ही महाराज श्रीने प्रतिक्रमण किया। महाराज श्री को अगाध धैर्य और असीम सहिष्णुता एवं अपने नियमों को चुस्तता पूर्वक पालन करते देख डॉक्टर भी चकित हो गया। धन्य ऐसे सहन शील सन्त जिन्होंने इस रुग्ण अवस्था में भी अपने नियमों को नहीं छोडा। करीब १५ दिन तक आप अस्पताल में रहें। रात्रि में उनके रूम में कोई भी नर्स नहीं आती थी और न बिजली आदि का प्रकाश ही किया जाता था। महाराज की परिचर्या अधिक तर साथ के मुनि ही करते थे कम से कम गृहस्थ की अनिवार्य सेवा ली जाती थी।

समाज के भाग्योदय से ओपरेशन के बाद महाराज श्री के स्वास्थ्य में दिनो दिन सुधार होने लगा। ऑपरेशन के आठ दिन बाद कोल्हापुर नरेश पुनः स्पेशियल ट्रेन में बैठकर अपने पूरे रसाले के साथ महाराज श्री के दर्शनार्थ अस्पताल पधारे। साथ में दिवान बाला साहेब भी थे। दिगम्बर जैन पण्डित कल्हापाणा नेटवे जो अपने समय का अच्छा विद्वान माना जाता था उन्हें भी साथ में लाये। महाराजा के साथ अन्य जागीरदार राज्य के मुख्य मुख्य अधिकारी एवं प्रतिष्ठित सेठ साहुकार भी थे, महाराजा अस्पताल में जहां महाराज श्री बिराजते थे वहां आये और महाराज श्री को साष्टांग प्रणाम कर उनकी सेवा में बैठ गये। महाराज श्री को बैठने की डॉक्टर साहब की मना थी। अतः महाराज श्री सोते सोते ही कोल्हापुर नरेश के साथ बात चित करने लगे। महाराज श्री ने राजासाहब के समीप बैठे हुए एक प्रभावशाली व्यक्ति को देख कर पूछा-ये साहब कोन हैं ?

राजा साहब ने जवाब दिया-ये मेरे दिवान बाला साहेब हैं। और दुसरे व्यक्ति एक महान विद्वान दिगाम्बर जैन पण्डित है। इतने में एक व्यक्ति आया और महाराजा के जूता खोलकर ले गया। उसके विषय में किसी अन्य व्यक्ति को महाराज श्री ने पूछा-यह कौन थे ? उत्तर मिला-यह तीन लाख की जागीरवाला जागीरदार है। और इसका कार्य मात्र महाराजा के जूते को सुन्दर एवं सुरक्षित रखना है। राजा साहब के साथ अन्य भी कई विद्वान साथ में थे। महाराजा प्रश्न पूछने की तैयारी कर रहे थे कि इस बीच एक प्रभाव शाली व्यक्ति ने प्रवेश किया। महाराज श्री को पंचाङ्ग नमाकर विधिवत् वन्दना की और विनय पूर्वक वंदन कर के महाराज श्री की सेवा में बैठ गया, राणा के लिबास मे एक प्रभावशील व्यक्ति को देखकर कोल्हापुर नरेश ने पूछा आप कौन हो ? और कहां से आये हो ?

उत्तर मिला-मेरा नाम केशवलाल है मैं मेवाड हिन्दवाकुल सूरज महाराणा श्री फत्तेसिंहजी का भूतपूर्व प्राइवेट सेक्रेटरी हूँ। महाराज-आपका आगमन कैसे हुआ।

लालाजी केशवलालजी बोले-मैं गुरुदेव के दर्शन के लिए आया हूँ। ये गुरुदेव ही संसार समुद्र को पार करने वाले जहाज हैं।

महाराज ने महाराज श्री की ओर दृष्टि डाल कर पूछा—आपका आगमन किस प्रदेश से हुआ ?

महाराज श्री हम मेवाड प्रदेश से आये हैं।

महाराजा-मेवाड उदयपुर से यहाँ तक पधारने में आपको कितना समय लगा ?

महाराज श्री-करीब तीन साल लगे

महाराजा-तासगांव से आपको पधारने में कितना समय लगा ? महाराज श्री-तीन दिन लगे।

महाराजा-आपको इतना समय कैसे लगा ? महाराज श्री-हम लोग पैदल ही चलते हैं। किसी भी सजीव या निर्जीव वाहन का उपयोग नहीं करते। यहां तक की हम लोग नंगे पैर ही

चलते हैं, पैर में जूता, चप्पल, खड़ाउ, कपडे के जूते मोजा या अन्य किसी भी तरह के पादत्राण का प्रयोग नहीं करते।

महाराजा, आप पैदल चलकर अपना बहुत बडा बहुमूल्य समय नष्ट नहीं करते हैं? यदि आप वाहन का उपयोग करें तो अधिक से अधिक धर्म का प्रचार कर सकते हैं। देश विदेश में जाकर अहिंसा धर्म की ज्योति फैला सकते हैं।

महाराजा श्री, जैन धर्म अहिंसा प्रधान धर्म है। इसकी प्रत्येक प्रवृत्ति के पीछे अहिंसा की भावना रही हुई है। इस धर्म में आत्मकल्याण पर अधिक भार दिया गया है। साथ ही धर्म-नेता का जितना ऊँचा आचार न विचार होगा उसका समाज पर भी उतना ही आदर्श होगा। अपने ही बताये हुए मार्ग पर हम ही न चले तो दूसरा हमारा अनुकरण क्या कर सकता है। जैन मुनि के प्रत्येक आचार एवं व्यवहार के पीछे प्राणी मात्र को कष्ट न देने का आदर्श छुपा हुआ रहता है। इसलिए श्रमण संस्कृति में पद यात्रा को अधिक महत्व दिया है। धर्मप्रचार की दृष्टि से तो पैदल भ्रमण अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुवा है। भगवान श्रीमहावीर, महात्मा बुद्ध एवं भारत के अनेक अपरिग्रही महापुरुषों ने भी पैदल भ्रमण करके ही जनता में धर्म जागृति उत्पन्न की और युग-युग से चली आई रुढियों के स्थान पर वास्तविक धर्म की स्थापना की थी। आज की तरह पूर्वकाल में यातायःत के इतने तेज साधन नहीं थे और न इतने प्रचार के बाह्य साधन ही थे। फिर भी उन महान सन्तों ने पद-यात्रा के द्वारा ही इस विशाल विश्व में घूम-घूम कर धर्म का प्रचार व प्रसार किया। जन जीवन को धर्म से ओत प्रोत बनाया था। आज के इस वैज्ञानिक युग में भी पद यात्रा के द्वारा ही जैन श्रमण जन-जीवन को जागृत करने का प्रयत्न करता है, यह उनकी एक विशेषता है। साथ ही जीवन निर्माण में पदयात्रा का अति महत्वपूर्ण स्थान है। पद यात्रा शिक्षा का प्रधान अंग मानी गई है। महान पद यात्री ह्यूएनसिंग ने भारत के विविध प्रान्तों में पद यात्रा कर बौद्ध धर्म और साहित्य का अध्ययन कर अपने देश तक महात्मा बुद्ध का सन्देश पहुँचा कर अपने आपको इतिहास के पृष्ठों में अमर कर दिया। पद यात्रा के अनेक लाभ हैं। यह श्रमणों को परिषह सहन करने की प्रेरणा भी देता है। पैदल भ्रमण करनेवाले श्रमणों को अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ता है। कहीं बडे बडे पहाडों को लांघना होता है तो कहीं प्रकृति की गोद में कल कल करती नदियों को पार करना होता है। कहीं हरे भरे खेत और कहीं बीहड हिंसक पशुओं से युक्त जंगल। कहीं सघन वृक्षावली और कहीं विशाल रुखा रेगिस्तान। इन सब को साधु मर्यादा के अनुसार पार करना होता है। पद यात्रा में कहीं श्रद्धाभक्ति के भार से झुके हुए भद्र ग्रामीन स्वागत के लिए उद्यत मिलते हैं, तो कहीं हमारी वेषभूषा और परिचर्या से अपरिचित ग्रामीन हमे चोर लुटेरा समझ कर पत्थर लाठियों का प्रहार करने के लिए सामने आते हैं। कहीं सिंह व्याघ्र आदि हिंसक प्राणियों का सामना करना पडता है तो कहीं क्रीडा करते हुए भोले मृग-शिशु दृष्टि गोचर होते हैं। यह सब देखने से प्रकृति का ज्ञान होता है। मानव स्वभाव का परिचय प्राप्त करने का एवं उनकी विभिन्न भाषाएं, संस्कृतियां समझने का अवसर मिलता है।

दूसरा चारित्र-रक्षा की दृष्टि से भी एक नियत स्थान पर न टिक कर पैदल भ्रमण करना साधु के लिए आवश्यक है। अधिक समय तक एक स्थान पर टिके रहने से मोह की जागृति एवं वृद्धि होने का भय रहता है। इस लिए एक विचारक ने ठीक ही कहा है—

"बहता पानी निर्मला पडा गन्देला होय त्यों साधुतो रमता भला दाग न लागे कोय"।

पैदल यात्रा से जितना अधिक धर्म प्रचार हो सकता है उतना प्रचार वाहन का प्रयोग करने से

नहीं हो सकता, यदि हम वाहन का प्रयोग करने लग जायें तो हमारे उपदेश से साधारण जनता ग्रामनिवासी वंचित हो जाएगी। हम आप जैसे बडे बडे लोगों में और बडे बडे शहरों में उपदेश देने लग जावेंगे। साथ ही वाहन के प्रयोग से अनेक दोष उत्पन्न होते हैं। धातु मात्र भी अपने पास रखना पाप समझते हैं। सूई जैसी सामन्य चीज भी यदि रात्रि में भूल से हमारे पास रह जाय तो हमें उपवास करना होता है। फिर पैसे जैसी चीजों का उपयोग ही कैसे कर सकते हैं ? वाहन पर आरुढ होने के लिए टिकीट खरीदना होता है। जब हम पैसा नहीं रखते फिर टिकीट कैसे खरीद सकते हैं ? बिना टिकीट की यात्रा करना राज्य की चोरी है। कदाचित् आप जैसे समर्थ भक्त टिकीट का पैसा दे भी दे तो यह सुविधा कुछ समय के लिए ही हो सकती है बाद में पैसा पाने के लिए गृहस्थ की गुलामी मोल लेनी पडेगी। दूसरा सजीव वाहन का प्रयोग करते हैं तो बैल घोडे आदि को कष्ट होता है उनको कष्ट देना आदर्श मुनि का धर्म नहीं है। निर्जीव वाहन के प्रयोग से मार्ग में चलने फिरने वाले अनेक प्राणियों की हिंसा होती है। अतः वाहनव्यवहार हिंसा का ही पोषक है।

पैदल यात्रा स्वतंत्र यात्रा है। जब जो चाहे तब यात्रा कर सकते हैं। हर छोटी-बडी जगह जा सकते हैं। पहाडी रस्ते पार कर सकते हैं। किन्तु वाहन मनुष्य को गुलाम बनाता है। वाहन जहां जा सकता है मनुष्य भी वहीं जाता है। किन्तु पैदल चलनेवाला उपदेशक हर जगह जा सकता है।

महाराजा-जब आप अपने पास पैसा नहीं रख सकते हो तो सिर के बाल एवं दाडी मूछ के बाल कैसे निकालते हैं।

महाराजश्री-हम लोग सिर दाडी एवं मूछ के बाल हाथ से ही खींच कर निकालते हैं। किसी नाई से या उस्तरे आदि से सिर नहीं मुंडवाते। जब केशलुंचन की बात सुनी तो महाराजा को बडा आश्चर्य हुआ और उन्होंने कहा-आज के इस युग में आप जैसे तपस्वी क्रिया परायण सन्त विरले ही होते हैं। आप जैसे सन्त ही भगवान को प्राप्त कर सकते हैं। मेरा एक प्रश्न यह है कि आप रात्रि में दीप क्यों नहीं जलाते ? इसमें क्या दोष है ?

महाराजश्री, राजन् ! दीप के लिए तैल चाहिये और तेल के लिए पैसा चाहिए। सभी जगह दीप की व्यवस्था नहीं हो सकती।

महाराजा-हम आप जैसे सन्तों के लिए राज्य की तरफ से सारे राज्य में मुफ्त में ही दीप की व्यस्था कर देंगे।

महाराजश्री, आप अपने राज्य की सीमा तक ही व्यवस्था करेंगे किन्तु अन्य राज्य में तो हमें परमुखापेक्षी ही बनना पडेगा। साथ ही हम लोग पृथ्वी, पानी, अग्नि, हवा में जीव मानते हैं। अतः अग्नि के जीवों की रक्षा के लिए दीप का प्रयोग नहीं करते। तथा दीप में अनेक जीव पड कर मर जाते हैं। अहिंसाधर्मी मुनि किसी भी जीव को मारना महान पाप समझते हैं, इस प्रकार करीब देढ घंटे तक कोल्हापुर राजा ने महाराजश्री से विविध विषयक चर्चा की। और खूब संतोष व्यक्त किया। अन्त में कोल्हापुर नरेश ने महाराज श्री के शीघ्र स्वस्थ होने की शुभ कामना व्यक्त कर कहा-आप स्वस्थ होते ही कोल्हापुर की ओर विहार करें। कोल्हापुर की जनता चातक की तरह आप के आगमन की प्रतीक्षा कर रही है। आप आने की स्वीकृति देकर हमें अनुग्रहीत करें। महाराजश्री ने मौन भाव से स्वीकृति फरमा दी।

कोल्हापुर महाराजा के जाने के बाद अंग्रेज डॉक्टर वेल साहेब फुरसत के समय महाराज श्री के पास आते और धर्म सम्बन्धी विविध जानकारी प्राप्त करने लगे। जैन धर्म के अहिंसा सत्य अस्तेय व्रत,

अनेकान्तवाद, आत्मा का स्वरूप कर्म सिद्धान्त को सुनकर डॉ० वेल बडे प्रभावित हुए । और एक दिन उन्होंने कहा—मैं भगवान से प्रार्थना करूंगा कि मुझे आगामी जन्म जैन कुल में दे ताकि जैन धर्म का पालन कर अपना कल्याण कर सकूं

महाराजश्री ने कहा—जैन बनने के लिए जैन कुल में जन्म लेना आवश्यक नहीं है । आप चाहे तो इस जन्म में भी जैन बन सकते हैं। जैन धर्म प्रत्येक मानव मात्र को पालने का अधिकारी मानता है । वह जात-पात के भेद भाव को नहीं मानता ।

श्री शाहू महाराज मुनि श्री से वार्तालाप करते तब प्रत्यक्ष में तो 'स्वामिजी' शब्द से सम्बोधित करते और परोक्ष में जिस किसी के सामने मुनिश्री सम्बन्धित बात चलती तो 'गुरु महाराज' शब्द का प्रयोग करते थे । मुनिश्री के प्रति इतना अधिक समादर के भाव देखकर कितनेक गृहस्थो के हृदय में संशय हो जाया करता था कि स्थानकवासी समाज ने जिन मुनि को पढा—लिखा कर समृद्ध किया है । कहीं ऐसा न हो जाय कि कोल्हापुर महाराजा मुनि श्री को कोल्हापुर लेजाकर मठाधीश न बना दें ? यह एक संशय होना भी स्वाभाविक था क्योंकि मुनिश्री से श्रीशाहुमहाराजा जब मिले उसके पहले एक ऐसी घटना घट गई कि एक बार कोल्हापुर महाराजा मद्यपान करके जब दर्शनार्थ मन्दिर गए और जब अंदर जाने लगे तो उस समय आप जिन्हें गुरु महाराज मानते थे वे गुरु बोले कि "अभी आप अन्दर नहीं जा सकतें । श्री शाहू महाराजा ने पूछा कि मैं अन्दर क्यों नहीं जा सकता ? गुरु बोले-आप ने इस समय मद्यपान किया है । मद्यपान की अवस्था में व्यक्ति राम कृष्ण के मन्दिर में नहीं जा सकता । यह शास्त्र विधान है ।

गुरु मुख से यह बात सुनने पर महाराजा बाहर से ही भगवान के दर्शन करके अपने स्थान आ गये । स्थान पर पहूँचते ही अपने सामन्तों से बोले कि—"प्रारम्भ से ही मुझे यह कहा—जाता कि मद्यपान करना सर्वथा शास्त्र निषेध है । मद्यपान करने वाला ईश्वर भक्त नहीं हो सकता । मद्यपान धार्मिक दृष्टि से वर्ज्य है । इस प्रकार मालूम होता तो मैं जीवनभर मद्यपान ही नही करता । ये गुरु तो ऐसा बोलते थे कि यह तो राजाओं का कार्य है । शिकार करना, मांस खाना, दारु पीना क्षत्रिय धर्म है ऐसा कह कर बुराईयों का पोषण करते रहें । आज कहते हैं कि मद्यपान करनेवाला मन्दिर में नहीं जा सकता । यह पहले क्यों नहीं कहा ? अतः असत्य पोषक गुरु बनने के अधिकारी नहीं होतें । जाओ गुरु को यहां बुला लाओ । महाराजा का प्रकोप देखकर उपस्थित सामन्त लोग हकबका गए । यह खबर उन कथित गुरु को मिलते ही वे तत्काल बम्बई चले गये । उनके जाने के बाद वह स्थान खाली पडा था । एतदर्थे कितनेक श्रद्धालु श्रावकों को एह संशय हो गया था कि कोल्हापुर महाराजा मुनिश्री को कोल्हापुर लेजाकर गुरु जगह आसनस्थ न कर दें । शंकाशील व्यक्तियों ने युवाचार्य श्री जवाहरलालजी म० तथा पूज्यश्री श्रीलालजी महाराज तक पत्र द्वारा समाचार भी पहुँचा दिये । पत्र द्वारा समाचार पहुँचने पर युवाचार्य श्री ने लालाजी केशरीमलजी उदयपुर निवासी को सही स्थिति जानने की सलाह दी । उदयपुर से लालाजी तत्काल मिरज पहुँचे और वहां कि वास्तविकता को समझकर वे मुनिश्रीजी की सेवा में ठहर गये । पत्र से युवाचार्य श्री के पास समाचार पहुँचाए कि वहां जो भी समाचार पहुँचे है वे नितान्त निराधार है । संशय जैसी कोई बात नहीं है । सही बात यह है कि कोल्हापुर महाराजा पं० श्री घासीलालजी म० के संयमी जीवन ज्ञान की विशालता और उपदेश की लाक्षणिकता से बहुत ही प्रभावित हुए हैं ।

पं० श्री घासीलालजी महाराज के प्रति कोल्हापुर महाराजा की श्रद्धा गुरु भक्ति देख कर लालजी अति प्रभाविन हुए । और जब मुनि श्री कोल्हापुर पधारे तब वे भी कोल्हापुर की जनता द्वारा किया गया अभूत पूर्व स्वागत का दृश्य अपने स्वयं आखों से देखने का स्वर्ण अवसर प्राप्त कर सके ।

मिरज अस्पताल में ऑपरेशन के बाद पूर्ण स्वास्थ्य के प्राप्त होने पर डॉ० ने आप को विहार करने की रजा प्रदान कर दी। ऑपरेशन में जो भी दोष लगा था उसे गुरु देव के समक्ष आलोचना कर प्रायश्चित ग्रहण किया और शुद्ध हुए।

कोल्हापुर की ओर प्रस्थान

महाराज श्री ने स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर वहां से कोल्हापुर की तरफ विहार किया। मार्ग में कुम्मेज और मेजगांव आये। ये दोनों गांव पास पास ही में बसे हुए हैं। यहां अधिकतर दिगम्बर जैन समाज की बस्ती है। यहां का दिगम्बर समाज दो विभागों में विभक्त है। एक चतुर्थ और दूसरा पंचम। चतुर्थ दिगम्बर समाज प्रायः खेती आदि से अपनी आजीविका चलाता है और पंचम समाज व्यापार से आजीविका चलाता है। महाराज श्री पंचमो की वस्ती में ठहरे। आहार पानी किया महाराज श्री ने वहां के कुछ व्यक्तियों को पूछा—क्या दिगम्बर मुनि भी यहां पधारते रहते हैं" । उत्तर में लोगों ने कहा—दिगम्बर मुनि अभी यहीं है। पहाड पर मन्दिर में बिराजते हैं। वे कल यहां पधारेंगे। सायंकाल के समय महाराज श्री कुंमेज से विहार कर पहाड पर पधारे। सूर्यास्त में करीब आधा घण्टा बाकी होगा। महराज श्री दिगम्बर मुनि जहां विराज रहे थे वहां पधारे और पूजारी की आज्ञा लेकर वहीं ठहर गये। इतने में श्वेताम्बर मन्दिर का पुजारी महाराज श्री के पास आया और बोला महाराज साहेब आप श्वेताम्बर मंदिर में ठहरें। महाराज श्री ने कहा हमें श्वेताम्बरदिगम्बर का कोई आग्रह नहीं। हमें तो केवल रात्रि में ठहरने के लिए स्थान मात्र चाहिए। लेकिन् पूजारी का जब अत्याग्रह देखा तो महाराज श्री श्वेताम्बर मन्दिर में पधारे। श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों मन्दिर करीब में ही थे। रात्रि में प्रतिक्रमण किया। प्रतिक्रमण के बाद आप दिगम्बर जैन मुनि के साथ वार्तालाप करने लगे। वार्तालाप करोब दो घंटे चला। बिचारो का आदान प्रदान हुआ। महाराजश्री के प्रेमपूर्ण वार्तालाप से दिगम्बर मुनि बडे प्रभावित हुए। दिगम्बर मुनि उदगाव कर के उपनाम से प्रसिद्ध थे।

प्रातः महाराज श्री ने विहार किया। मार्ग में बडगाव आया। वहां श्वेताम्बर मूर्ति पूजकों के ही घर थे किन्तु आहार पानी आदि की श्रावकों ने बडी भक्ति की। वहां एक श्राविका थी। बड़ी धर्मनिष्ठ एवं दानी प्रकृति की थी। महाराज श्री से उसने कहा— महाराज साहब! मैं आपके मुख से भगवती सूत्र सुनना चाहती हूं। महाराज श्री ने कहा— बहन! भगवती सूत्र कोई छोटा सूत्र नहीं है। उसको सुनाने में बहुत समय की जरुरत है। इस समय हमलोगों को इतना ठहरने का यह अवसर नहीं है। दूसरे दिन प्रातः होते ही महाराज श्री ने कोल्हापुर की तरफ विहार किया। जब कोल्हापुर पांच कोस दूर था उस समय दिगम्बर जैन भाई करोब ४००–५०० की संख्या में महाराज श्री के सामने आये साथ में क्षुल्लक पायसागरजी भी थे। क्षुल्लक पायसागरजी बडे तपस्वी थे। २४ वर्ष से एकान्तर उपवास करते थे। साथ में दिगम्बर समाज के भुपालअन्नादि अनेक प्रतिष्ठित सज्जन थे। सभी ने महाराज श्री का भाव भीना स्वागत किया। महाराज श्री जब कोल्हापुर शहर के निकट पहुंचे तो हजारों जैन अजैन बन्धुगण स्वागतार्थ गुरु महाराज श्री के सामने आये। महाराज श्री के आगमन से कोल्हापुर की जनता में हर्ष की सीमा न रही। हजारों व्यक्ति जयघोष की ध्वनि से आकाश को गुन्जायमान कर रहे थे। ऐसे हजारों स्त्री पुरुषों के साथ महाराज श्री का कोल्हापुर नगर में प्रवेश हुआ। महाराज श्री के साथ जलूस दृश्य दर्शनीय था। कोल्हापुर मुख्य मुख्य मार्गों से गुजरते हुए आप श्री विशाल जन समूह के साथ वरप्पा जैन के विशाल मकान में विराजमान हुए। पट्ट पर विराजकर आपने आगन्तुक भाई बहनों के समक्ष मानव देह की दुर्लभता और धर्म की आवश्यकता पर मननीय प्रवचन दिया। जिसका कुछ सारांश यह है—

धर्मप्रेमी बन्धुओं, माताओं, एवं बहनो !

संसार की समस्त योनियों में मानव योनि सर्व श्रेष्ठ कहलाती है । ओर दुर्लभ भी, जैन आगम स्थानांग सूत्र में कहा है-"तओ ठाणाइ देवे पीहेज्जा-माणुसं भवं, आरिए खेत्ते जम्मं, सुकुल पच्चायाति । ठानांग ३।३।

अर्थात मनुष्य जीवन, आर्यक्षेत्र में जन्म और श्रेष्ठ कुल की प्राप्ति । संसार में अनन्त काल से भटकती हुई आत्मा जब क्रमिक विकास का मार्ग अपनाती है तो वह अनन्त पुण्य कर्म का उदय होने पर निगोद से निकलकर वनस्पति, पृथ्वी, जल, आदि की योनियों में जन्म लेती है और जब यहां भी अनन्त शुभ कर्म का उदय होता है तो वह द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रीय पंचेन्द्रिय नारक तिर्यंच आदि विभिन्न योनियों को पार करता हुआ क्रमशः उपर उपर उठता हुआ जीव अनन्त पुण्य के बलसे मनुष्य जन्म ही ग्रहण करता है। विश्व में मनुष्य ही सबसे थोडी संख्या में है अतः मनुष्य जन्म ही सब से दुर्लभ भी है महान भी है । महाभारत में व्यास ऋषि भी कहते हैं-"गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं हिं किञ्चित् ।" आओ ! मैं तुम्हें एक रहस्य की बात कहता हूँ । यह अच्छी तरह मन में दृढ करलो कि संसार में मनुष्य से बढकर और कोई नहीं है । महाराष्ट्र के पुनित सन्त तुकाराम कहते हैं कि-

स्वर्गी चे अमर इच्छिताती देवा, मृत्यु लोकीं व्हावा जन्म आम्हा ॥

स्वर्ग के देवता इच्छा करते हैं हे प्रभु ! हमें मृत्युलोक में जन्म चाहिए अर्थात् हमें मनुष्य बनने की चाह है । एक उर्दू शायर भी कहता है-

फरिश्ते से बढकर है इन्सान बनना । मगर इसमें लगती है मेहनत जियादा ॥

मनुष्य के हाथ पैर पाने से कोई मनुष्य नहीं बन जाता । मनुष्य बनता है मनुष्य की आत्मा पाने से और वह आत्मा मीलती है धर्म के आचरण से । यों तो मनुष्य रावण भी था किन्तु हमें रावण नहीं राम बनना है । कंस नहीं कृष्ण बनना है । संगम नहीं महावीर बनना है । मानव जीवन का ध्येय है अजर अमर पद पाना महामानव बनना...... इत्यादि......

मानवदेह की महत्ता पर आपने एक घन्टे तक प्रवचन दिया । आपके प्रवचन का जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा । मांगलिक श्रवण कर लोग अपने अपने स्थान पर चले गये । रात्रि के समय एक भाई महाराज श्री के पास आया और बोला-गुरूजी ! यहां जैन समाज में बडे बडे धनिक लोग हैं और दिल के भी उदार हैं । आप बडे भाग्य शाली और विद्वान हैं । आपके लिए हम चन्दा करना चाहते हैं। अकेला भूपाल अन्ना पांच सौ रुपये चन्दे में देगा। और भी प्रतिष्ठित सज्जन हैं वे भी चन्दा देंगे । आप भी अपने प्रवचन में उपदेश देंगे तो बहुत अच्छी रकम होगी। इस पर महराज श्री ने कहा-भाई हम जैन मुनि है । जैन मुनि अपने पास पैसा रुपया या नोट नहीं रखते । वे अपरिग्रही होते हैं । आप जैसे लोगों के घर से भिक्षा मांगकर खाते हैं तब वह भाई बोला । अगर आप पैसा नहीं लेते तो इतना क्यों पढे हो ! महाराज श्री ने कहा-हमने पढाई तो आपलोगों को समझाने के लिए की है। हमारे लिए तो केवल एक नमुक्कारमन्त्र ही काफी है -हमारा तो उद्देश्य स्व पर कल्याण का होता है । यह सुनकर वह महाराज श्री के त्याग से खूब प्रभावित हुआ । वह लोगों के बीच महाराज श्री के त्याग की खूब प्रशंसा करने लगा । धीरे धीरे महाराज श्री के त्याग एवं विद्वता की चर्चा सारे नगर में फैल गई । प्रतिदिन आपके जाहिर प्रवचन होने लगे । लोक अधिक से अधिक संख्या में महाराज श्री के पास आने लगे । आप श्री के सत् प्रयत्न से कोल्हापुर की जनता में धर्म चेतना का संचार हुआ । जैसे हिमालय के ऊंचे शिखरों से पडता हुआ गंगा का प्रवाह शुष्क मैदान में पहुंचकर वहा की भुमि

को शस्त्र-शामला बनाता है और तमाम प्राणियों को जीवन दान देता है । उसी प्रकार आपके पदार्पण से युग से सोये पडे लोग जाग उठे और अपने जीवन को धर्ममय बनाने का प्रयत्न करने लगे । आपने अनवरत प्रयत्न करके जनता को साधना का मार्ग दिखाया । अनेको व्यक्तियों के जीवन को बदलने का उन्हें ऊपर उठाने का श्रेय आपको ही है ।

स्कूल कॉलेज एवं सार्वजनिक स्थानों पर आपके प्रवचन हुए । कोल्हापुर का शायद ही कोई व्यक्ति होगा जिसने आपके प्रवचन न सुना हो आपके प्रवचनों का जनता पर इतना गहरा असर हुआ कि आप जिस मार्ग से निकलते उस मार्ग पर लोग अंजलि बद्ध हो आपके स्वागत में खडे होते । महाराज श्री अब किसी वर्ग विशेष के गुरु नहीं रहें । राजा और प्रजा के गुरु बन गये । महाराज श्री का प्रभाव बढता जा रहा था । स्थानीय लोगों ने आपश्री का चातुर्मास कराने का निश्चय किया तदनुसार कोल्हापुर जैन अजैन सभी प्रतिष्ठित सज्जन चातुर्मास की विनती लेकर महाराज श्री की सेवा में उपस्थित हुए और चातुर्मास की प्रार्थना करने लगे । महाराज श्री ने उनसे कहा– हमारे भी गुरु हैं । हम लोग उन्हीं की आज्ञा में विचरते हैं, उनकी आज्ञा से ही चातुर्मास आदि करते हैं । वे इस समय मेवाड की राजधानी उदयपुर में विराजमान हैं, यदि उनकी आज्ञा मिल जाय तो हम यहां चातुर्मास कर सकते हैं ।

इस पर कोल्हापुर के सज्जनों ने अपना एक प्रतिनिधि मण्डल पूज्य श्री जवाहरलालजी महारज श्री की सेवा में चातुर्मास की आज्ञा प्राप्त करने के लिए भेजा । प्रतिनिधि मण्डल उदयपूर पहुँचा प्रतिनिधि मण्डल पूज्य श्री की सेवा में पहुँच कर बोला–" हम पण्डित श्री घासीलालजी महाराज का चातुर्मास अपने यहां कराने की भावना से आप की सेवा में उपस्थित हुए हैं । महाराज श्री के पधारने से कोल्हापुर के राजा एवं प्रजाजनों में खूब धार्मिक उत्साह बढा है, पं. मुनि श्री का जनता पर अच्छा प्रभाव पड रहा है । उनके चातुर्मास से कोल्हापुर शहर एवं आस पास के सभी क्षेत्रों में बड़ी मात्रा में धर्मउपकार की सम्भावना है । इस पर पूज्य श्री ने फरमाया–इस समय हम उन्हें कोल्हापूर चातुर्मास की आज्ञा नहीं दे सकतें । क्योंकि अनेक संप्रदाय सम्बन्धी समस्याएं इस समय मेरे सामने हैं । इसलिए उनका मेरे पास आना अनिवार्य है । उनसे मुझे अनेक बातों का परामर्श भी करना है । अतः वे स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर शीघ्र ही मेरे पास आवें ऐसा मेरा आदेश है ।" पूज्यश्री के मुख से यह सुनकर कोल्हापुर का प्रतिनिधि मण्डल निराश हुआ और अत्यन्त दुःखित हृदय से लौट आया ।

महाराज श्री के प्रवचन के समय सारा नगर अपना कारोबार बन्द रखता था । यहाँ स्थाकवासी समाज का एक ही घर था । और मन्दिर मार्गियों के तेरह घर । ये सभी बडी श्रद्धा से महराज श्री का प्रवचन सुनते थे । और निरन्तर सेवा में रहते थे । महाराज श्री के यहाँ चौदह जाहिर प्रवचन हुए । सैकड़ों लोगों ने शराब मांस जूआ आदि दुर्व्यसनों का त्याग किवा । लोगों में जैनधर्म के प्रति श्रद्धा बढी । यहां स्थानकवासी मुनियों के अचार विचार से लोग अनभिज्ञ थे । दिवस सम्बन्धी प्रातः कालीन आज्ञा भी देना नहीं जानते थे । केवल एक बहन जो स्थानकवासी थी वह आज्ञा देती थी । कुछ दिन विराजकर आपने विहार कर दिया । जब स्थानीय दिगम्बर भाईयों को पता लगा कि महाराज श्री ने विहार करदिया है तो वे भाग-भाग कर महाराज श्री के पिछे दौडने लगे गुरुमहाराज विहार करते हैं । महाराज श्री की सेवा में पहुँच गये । और उन्होने महाराज श्री को मार्ग में ही रोक लिये । वह बहन भी जो प्रतिदिन महाराज श्री को प्रातःकालीन आज्ञा देती थी वह भी दौडी हुई आई और चिल्ला-चिल्ला कर कहने लगी महाराज साहब को मेरी यहां से जाने की आज्ञा नहीं है । श्रावक लोग महाराज श्री के सामने उनका रास्ता रोक कर सो गये । अन्त में भगवान को भक्त के सामने झुकना पडा । महाराज श्री को पुनः नगर में लौटना पडा, महाराज श्री के पुनः पदार्पण से नगर निवासियों के हर्ष की सीमा न रही । वे अब

अधिक से अधिक संख्या में महाराजश्री की सेवामें उपस्थित होने लगे। चतुर्थ दिगम्बर समाज के भट्टारक जिनसेन स्वामी भी महाराज श्री के दर्शन के लिए आये, चातुर्मास करने का आग्रह करने लगे। पंचमों के महाधीश लक्ष्मीसेन स्वामी भी महाराज श्री की सेवामें आये, और चातुर्मास की प्रार्थना करने लगे। कोल्हापुर महाराज की तरफ से गोविन्दराम कोल्हे ने भी चातुर्मास के लिए प्रार्थना की किन्तु महाराज श्री का सब को एक ही जवाब मिला,, गुरुदेव की बिना आज्ञा के मैं यहां चातुर्मास नहीं कर सकता''

उन दिनों में अनिवार्य कार्य वश कोल्हापुर नरेश बाहर गांव चले गये थे, जब वापस लौटे तो उन्हे महाराज श्री के कोल्हापुर पधारने की सूचना मिली। किसी प्रसंग वश फतेचन्दजी सा' महाराजा से मिलने गये। महाराजा ने फत्तेसिहजी के सामने महाराज के उत्कृष्ट आचार एवं विद्वत्ता की खूब प्रशंसा की और महाराज श्री को यहीं चातुर्मास करने की अपनी ओर से प्रार्थना की। दूसरे दिन महाराजा चार घोडे की बग्गी में बैठकर महाराज श्री की सेवा में उपस्थित हुए और बोले—अनिवार्य कार्यवश मैं आपकी सेवामें उपस्थित नहीं हो सका अतः मुझे आप क्षमा प्रदान करें। आपने मेरे नगर में रहकर अपने वचनामृत से लोगों को पावन किया इसके लिए हम आपके चिर ऋणी हैं। आप मेरें नगर में रहकर लोगों को अधिक से अधिक सन्मार्ग बताए ऐसी हार्दिक भावना हैं। हम लोग आपकी कुछ भी सेवा नहीं कर सके इसका हमें हार्दिक दुःख है। मैं आपको अपना गुरु मानता हुं अतः आपको राजगुरु शास्त्रचार्य की पदवी से विभूषित करना चाहता हुँ। मुझे आशा ही नही किन्तु पूर्ण विश्वास है कि आप मेरी इस भावना का अनादर नहीं करेंगे। मुनि श्री महाराजा की इस पवित्र भावना का अनादर करना अप्रासंगिक मान कर मौन रहे। कुछ समय तक महाराजा महाराज श्री से विविध विषयक चर्चा करते रहे। बाद में वन्दन कर वे अपने स्थान लौट आये। उसी समय अपने राज्य के प्रतिष्ठित पन्डित बुलाकर उपाधिपत्र तैयार करने का आदेश दिया। जब उपाधिपत्र तैयार हुआ तो महाराजा ने उस पर दस्त-खत किये और पत्र को सम्मान पूर्वक एक प्रतिष्ठित व्यक्ति के साथ महाराज श्री की सेवा में भेट किया। उपाधिपत्र की प्रतिलिपि इस प्रकार है।

नकल ता० १८–१२–१९–२० ई०

श्री

श्रीमन्साहू छत्रपति कोल्हापुर नरेश प्रदत्त प्रशंसा पत्रस्य प्रतिकृति

श्रीमतां श्री १००८ मोतीलालजी महाराजां पूज्य प्रवर श्री १००७ श्री जवाहरलालजी महाराजानां सुशिष्यैः श्री १००८ घासीलालजी महाराजैः समगंसि मया मिरजाभिध ग्रामस्य भैषज्यालये। प्रागेव श्रुतैतद्वृत्तान्तावयं सति साक्षात्कारैऽप्राक्ष्ममूर्तिपूजादि प्रधान जैनतत्वविषयान्। रुग्णासनासीना अपि एते महाराजानः तथा सर्व विषयानुदातारिषुयेन जैनशास्त्रादिचार्यादि प्रधानोपाधिमाधातु मर्हतीति माम-कीनानुभांतिः।

यद्यपि जनताभिः स्युः प्रोत्साहितास्तदा भवेयुर्भारतभाग्यभानूञायकाः साधव इति। मि० मार्ग शु० ८ शनिवासरे संवत् १९७७

हस्ताक्षरसाहू छत्रपति कोल्हापुराधीशस्य अधोविन्यस्तरेखाद्वय स्थले [s. d] साहूछत्रपति खुद

नगर निवासियों के आत्याग्रह पर महाराज श्री पुनः आठ दिन तक कोल्हापुर में बिराजे। जनता ने खूब अच्छा लाभ लिया। चातुर्मास कोल्हापुर में न हो सकने की संभावना पर स्थानीय जनता खेद खिन्न थी। करीब मास कल्प बिराजने के बाद महाराज श्री ने कोल्हापुर से विहार किया। महाराज श्री

को विदाई देने के लिए हजारो की संख्या में जनता एकत्रित हुई। सभी की आँखों में आंसू थे। ऐसे समय में स्थानीय जनसमूह की भावोर्मिया ग्रनुभूति गम्य थी और दुःख भरे मन से श्रद्धेय गुरुदेव को आगे के विहार के लिए विदाई दी। और मोलों तक साथ साथ चले और मांगलिक श्रवण कर अपने अपने निवास पर चले गये।

कोल्हापुर से विहार कर महाराज श्री का एरला पधारना हुआ। एरला कोल्हापुर से करीब तेरह मील पर पड़ता है। एरला में दिगम्बर समाज की ही बस्ती है। श्वेताम्बर समाज का एक भो घर नहीं है, यहां के पटेल पटवारी भी जैन ही हैं। सारे गांव पर जैन समाज का हो विशिष्ट प्रभाव दृष्टिगोचर होता था, यहां पर मुसलमानों के ८४ घर हैं। किन्तु इन में दो दल थे। जिसमें एक दल मस्जिद का निषेध करता था। वर्षो से झगडा चलता था। अनेक मोलवियों ने तथा धर्मगुरुओं ने इस झगडे को समाप्त करने का खूब प्रयत्न किया किन्तु वे सबके सब असफल रहें। इधर महाराज श्री का आगमन हुआ।

कोल्हापुर के धर्मप्रचार एवं महाराजा को प्रभावित करने की ख्याति एरला में भी फैल चुकी थी। फलस्वरुप आपके प्रवचन सार्वजनिक स्थानों में होने लगे। एरला में भी बडी संख्या में आपके व्याख्यानों का लाभ लोग उठाने लगे आपके प्रवचन में हिन्दू और मुसलमान बड़ी संख्या में उपस्थित होते थे। आप की विद्वता पूर्ण वाणी का जैन जैनेतर पर अच्छा प्रभाव पड़ने लगा। दूपहर के समय महाराज श्री के समीप मुसलमानों के दोनों दलों के प्रतिनिधि आये और महाराज श्री से विनती करने लगे कि आप बडे विद्वान साधु हैं। इस्लाम मजहब को भी आप अच्छी तरह से जानते हैं। उर्दू और फारसी भी आपको आता है। इसलिए हमारो आप से प्रार्थना है कि आप हमारे गांव के झगडे को समाप्त करदें। आप जो भी फैसला देंगे वह हम दोनों को कबूल होगा। महाराज श्री ने कहा कि अच्छा है कल व्याख्यान के बीच फैसला करूंगा।

दूसरे दिन व्याख्यान के समय मुसलमानों के दोंनों दलों के लोग उपस्थित हुए। अन्य भी जैन जैनेतर जनता बडी संख्या में उपस्थित हुई। महाराज श्री ने एक जानकार मुसलमान से कहा--आपके पास कुरआनेशरीफ है? उसने कहा जी है? महाराज श्री ने उसे एक आयत पढने को कहा। जब उसने आयत पढी तो महाराज श्री ने उसका अर्थ किया--पूर्व और पश्चिम सब ईश्वर के ही है यानी तुम जिस जिस तरफ मुख करो उस तरफ ईश्वर तुम्हारे सामने हैं वस्तुतः ईश्वर सब जगह है और सभी वस्तु को जानने वाला है (२-११५)

आयत पढने के बाद महाराज श्री ने कहा महम्मद पैगम्बर सहाबने तमाम सच्चे मुसलमान भाईयों से कहा है कि तुम पाक दिल से नमाज पढो। चाहे मस्जिद में नमाज पढो चाहे घर पर पढो। चाहे जंगल में जाकर पढो सब जगह अल्लाह है और सच्चेदिल से नमाज पढ़ने वाले की प्रार्थना को कबूल करता है। नमाज पढने के लिए किसी स्थान विशेष का आग्रह कुरानेशरीफ में नहीं है। प्रार्थना कहीं भी हो सकती है। लडाई और झगडा करने वाला व्यक्ति कभी इश्वर का प्यारा नहीं हो सकता। हमें दुष्मण नहीं किन्तु दोस्त बढ़ाने चाहिए। मुस्लिम ओलिया शेखसादी ने कहा है--

"ब चस्माने दिल मबी जुज दोस्त हरचे बीनो बिदाकि मजहरे ओस्त" यानी अपने दिल की आंखो से जिस किसी को देखो उसे सिवाय अपने दोस्त के और कुछ मत समझो, जानलो कि जो कुछ तुम देख रहे हो सब उसी प्रीतम का जहूर है उसी का रुप है। जिसे नीचे से ऊपर उठना है जिसे जिन्दगी को रहमान तक पहुंचाना है. जिसे जिन्दगी का सच्चा आनन्द और रस प्राप्त करना है, जिसे अपने

भीतर खुदा का दर्शन करना है, उसके लिए दोस्ती के सिवा और कोई चारा नहीं । एक बार सुकरात से उसके किसी दुष्मन ने कहा—अगर मैं तुम से बदला नहीं ले सकूं तो मर जाऊं ! इस पर सुकरात ने कहा—अगर तुझे अपना दोस्त न बनाउ तो मैं मर जाऊ !!

आज दुनियां दोजख हो गइ है । सब कुछ होते हुए भी जिन्दगी भार रुप बनगई है । ईस की वजह यही हैं कि ईर्षा. द्वेष, नफरत, की अंधियारी हमारे चारों ओर छा गई है । हमारा बहुत-सा दुःख केवल दूसरों के प्रति हमारे संशय से पैदा हुआ है; जिसे हम जरासी मुस्कान से अपनाले सकते हैं, उसे सिकुडी हुई भौहों से दूर कहते जा रहें हैं । जिसे हम दो मीठे बोल से जीत सकते हैं, उसे अपनी कठोर वाणी से विरोधी बनाते जा रहें हैं । यदि हम हमदर्दी के साथ दूसरों की जिन्दगी का विचार करें तो वे पानी-पानी हो जाऐंगे । नजर का जादु बडा गहरा होता है । मुहब्बत की एक चितवन वर्षों की दुष्मनावट को दुर कर सब के सब दोस्त बन जाओ । यही अमन सही रास्ता है ।

महाराज श्री के इस व्यक्तव्य का मुसलमानों के दोनो दलों पर अच्छा असर पडा । दोनों दलोंने खडे होकर एक दूसरों से माफी मांगी और दोनों दल सदा के लिए एक दूसरे के दोस्त बन गये । गांव का झगडा जो वर्षो से चला आरहा था वह महाराजश्री के दो शब्द से सदा के लिए मिट गया । मुसलमानों ने महाराज श्री का बडा एहसान माना और जयध्वनि के साथ सभा विसर्जित हो गई ।

दूसरे दिन मस्जिद को न माननेवाला एक मुसलमान भाई जो महाराजश्री के फैसले से अत्यन्त रुष्ट था वह महाराजश्री के पास आया और बोला—"आपने जो फैसला किया वह पक्षपात पूर्ण था । दूसरे दल वालों को राजी रखने के लिए आपने उनके हक में फैसला किया है । मैं मेरी बीबी और दोनों बच्चे आज से आपके साथ रहेंगे और आपके इस अन्याय पूर्ण फैसले का बदला ले के रहेंगें । इस पर महाराज श्री ने कहा—भाई ! इसमें नाराज होने की क्या बात है ? अगर मैंने कुरआने शरीफ की आयत का गलत मायना किया हो तो आप यहाँ के बडे से बडे काजी को अथवा कोल्हापुरके काजीको बुलाकर उसका अर्थ कराओ अगर मेरा मायना गलत निकला तो मैं अपने फैसले को वापस लेने को तैयार हूँ । इस पर वह बोला—कोल्हापुर का काजी तो पाजी है, वह वेचारा कुरआनेशरीफ को क्या जानेगा । इस पर महाराज श्री ने कहा—कोल्हापुर का काजी पाजी हो सकता है किन्तु दुनियां के सभी काजी तो पाजी नहीं हैं । आप जहां से भी काजी को बुलाये कौर मेरे अर्थ को झूठा साबीत करवादें । मैं १५ दिन तक यहां रहने को तैयार हूँ । आप लखनउ से या हैद्राबाद से काजी को बुलावें । अगर वे काजी मेरे अर्थ को गलत साबित कर देंगे तो मैं अपना फैसला वापस ले लूंगा । अगर उन्होंने मेरा मायना सच्चा साबित किया तो तुझे मय बाल बच्चे के साथ मेरी तरह मुह बांधकर साधु बनना पडेगा । बोलो यह शर्त आपको मंजूर है । यह सुनकर वह मुसलमान शान्त हो गया और वहां से चल दिया । ऐरला में कुछ दिन बिराजे । हिन्दु मुसलमान भाईयों ने आपके प्रवचन का अच्छा लाभ लिया । सैकड़ों व्यक्तियों ने दारु मांस एवं जीव हिंसा का त्याग किया । आपने वहां से विहार कर दिया ।

वि. सं. १९७८ का बीसवां चातुर्मास चारोली

चरितनायकजी अनेक ग्राम नगरों को पावन करते हुए चारोली पधारे । चारोली एक छोटा गांव है । करीब जैन समाज के चालीस घर हैं । लोगों में श्रद्धा भी अच्छी है । चातुर्मास का समय नजदीक आगया था । महाराज श्री आगे विहार करनां चाहते थे किन्तु एक मुनि की तबियत अचानक बिगड गई । विहार कर सके ऐसी स्थिति न रही । स्थानीय श्रावकों का भी चातुर्मास के लिए अत्यन्त आग्रह था । महाराजश्री ने भी मुनि की अस्वस्थता और श्रावकों की असीम भक्ति देखकर चातुर्मास मान लिया । चातुर्मास की स्वीकृति से संघ में आनन्द छा गया ।

चातुर्मास–काल में व्याख्यान के समय उपासकदशांगसूत्र का वांचन होता था, सूत्रों का अर्थ आप इस प्रकार सरल और बहुअर्थगामनी भाषा में करते थे कि साधारण श्रोतागण के हृदय में उसके भाव अंकित हो जाते थे, वहां के लोगों की भी यही भावना रहती थी कि हमारे प्रान्त में सन्तों का आगमन विशेष नहीं होता है । बडे भाग्य से विद्वान महाराज श्री पधारे हैं । बार बार फिर हमें यह सुअवसर प्राप्त नहीं होनेवाला है, ऐसा सोचकर वे प्रतिदिन अधिक संख्या में व्याख्यान में उपस्थित होने लगे । व्याख्यान के समय सभी लोग कारोबार बन्द रखते थे । अजैन जनता भी बडी संख्या में महाराज श्री के व्याख्यान का लाभ लेती थी ।

इसी चातुर्मास में एक समय की बात है–किन्हीं श्रावक के घर एक व्यक्ति बहुत ही अधिक बीमार था । उसके घर वाले एक व्यक्ति ने महाराज श्री के पास आकर उसे मांगलिक श्रवण कराने की प्रार्थना की। महाराज श्री श्रावक की प्रार्थना पर मांगलिक सुनाने उस श्रावक के घर चले । मार्ग में कुछ बहने रुदन करती हुई महाराज श्री को सामने मिली । महाराज श्री ने साथवाले श्रावक को आश्वसन करते हुए कहा-श्रावकजी, मैं जिसे मांगलिक सुनाने जारहा हूँ उस भाई का रोग मांगलिक के डर से भयभीत होकर रुदन करता हुआ जा रहा है । वह भाई जल्दि ही अच्छा होगा । महाराज श्री उसके घर पधारे तो वहां का वातावरण गम्भीर था । सबके चेहरे उदास थे । ऐसा लग रहा था कि वह व्यक्ति कुछ ही घंटों का महमान है । महाराज श्री ने आश्वासन देते हुए उसे मांगलिक सुनाया । और सब को ॐ शान्ति का पाठ करने को कहा । मुनि श्री वापीस स्थानक में लौट आये । सायंकाल तक में तो वह व्यक्ति संपूर्ण स्वस्थता का अनुभव करने लगा । प्रभु की कृपा से दो तीन दिन के बाद तो वह संपूर्ण स्वस्थ हो गया । उस श्रावक की महाराज श्री के प्रति असीम श्रद्धा बढी ।

सेवाभावी श्रीलालचन्दजी म० का स्वर्गवासः–

मुनि श्री की शिक्षण समय में अनन्य सहायक सेवा मूर्ति श्री लालचन्दजी महाराज इस चातुर्मास में बहुत ही अस्वस्थ थे । इन्होने महाराज श्री के अध्ययन काल में बडी सेवा की थी । महाराजश्री का भी इनके प्रति बडा स्नेह था । वे स्नेह से इन्हें सदा 'लाला' "लाला" कहकर पुकारते थे ! इनकी अस्वस्थ अवस्था में मुनिश्री ने बडे मनोयोग से सेवा की । ये भी ऋण से उऋण होना चाहते थे ! मुनिश्री की सेवा ने और स्थानीय श्रावकों की अभूत पूर्व भक्ति जन्य सेवा से भी मुनिजी स्वास्थ्य लाभ नहीं प्राप्त कर सके । उत्तरोत्तर प्रकृति बिगडती ही चली गई । एक दिन इन सब के मोह भाव को छोड कर दीर्घ यात्रा के लिए चल पडे । लालचन्दजी महाराज के स्वर्गवास के बाद वहा के श्रावक लोग अंत्येष्टि की तैयारी करने लगे । गांव के किसानों ने श्मशान यात्रा में बाजा, ढोल बजाने से इनकार कर दिया । सारे गाँव के सामने मुट्ठिभर जैन लोग विवश बन गये । कैसे क्या करना, किसी को कुछ भी सूझ नहीं रहा था । मुनि श्री को श्रावकों के हृदय की विवशता जानने में आई तो उसी समय गांव के तलाटी (मुखिया) को बुला कर बातचित की । मुनिश्री से तलाटी अत्यन्त प्रभावित था । तलाटी ने गाँव के जैनों से कहा–तुम बाजे वालों को बुलाओ । और बाजा बजाओ । मैं स्वयं आप के साथ चलूंगा । देखता हूँ तुम्हें कौन रोकता ।

तलाटी का उत्साहवर्धक सहयोग से सभी जैन अत्यन्न प्रसन्न हुए और बडे ही ठाट तथा उमंग से स्व० मुनी श्री की पालखी निकली । तलाटी स्वयं बाजेवालों के साथ स्मशान तक चला । मुनि श्री के पार्थिव शरीर की दाह क्रिया चन्दन काष्ट आदि से की । स्मशान भूमी पर ही शोक सभा का आयोजन किया । जिसमें अनेक वक्ताओं ने भाषण देकर अपनी श्रद्धांजलि व्यक्त की । स्थानक में महाराजश्री ने एवं अन्य सन्तों ने प्रवचन देकर मुनि श्री लालचन्दजी महाराज के गुण गान किये । महराजश्री ने सेवा भावी मुनिश्री लालचन्दजी महाराज के विषय में कहा–

मुनिश्री लालचन्दजी महराज बडे सेहाभावी सन्त थे । इनके जीवन के क्षण क्षण में और मन के अणु अणु में ऋजुता और निष्कपटता थी। ज्ञान और कृति में आचार और विचार में द्वैत नहीं था। जो भी था सहज था स्पष्ट था । एक संस्कृत कवि ने सन्त का परिचय देते हुए कहा है—

"मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्" त० श्री लालचन्दजी म० का जीवन सच्चे महात्मा का जीवन था । जहां न छल था । कपट था, न माया थी, ओर न किसी दुसरे के प्रति दुर्भाव ही था । वे तपस्वी थे पर उनमें न उग्रता थी और न अहंकार था । ऐसे सन्तों के गुणो के उत्कीर्तन से स्वयं का जीवन भी विराट् बनता है । जीवन महान बने । और इस तपस्वी से प्रेरणा लेकर संयम साधना में अग्रसर हों । यही तपस्वो जी को श्रद्धाञ्जलि अर्पन करने का भव्य तरीका है । स्वर्गस्थ आत्मा को शान्ति मिले यही श्रद्धाञ्जलि अर्पित करता हूँ।"

तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने इस चातुर्मास के बीच लम्बी तपश्चर्या की। तपस्या के अवसर पर आस पास के गांवों के जैन संघ बडी संख्या में आते थे और महाराज श्री का एवं तपस्वीजी का दर्शन कर अपने जीवन को पवित्र करते थे। तपस्या की पूर्णाहुति के समय समस्त गांव का कारोबार बन्द रहा। बडी संख्या में लोगों ने यथा शक्ति त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किये । तपस्या के अवसर कोल्हापुर के कई प्रतिष्ठित जैन अजैन श्वेताम्बर दिगम्बर भाई गुरुदेव के दर्शन के लिए चारोली आ रहे थे । उस समय किसी कार्यवश कोल्हापुर के महाराज भी पूना आये थे । कोल्हापुर के लोग पूना में महाराज से मिलने गये । महाराजा ने लोगों से पूछा आपलोगों का यहां कैसे आना हुआ ? उत्तर में श्रावकों ने कहा हमारे गुरु महाराज श्री घासीलालजी महाराज का चातुर्मास चारोली में हैं । उनके दर्शन के लिए हम जा रहे हैं। तब महाराज ने कहा मेरी भी इच्छा गुरुदेव के दर्शन करने की है । श्रावकों के साथ महाराजा भी हो गये । उस दिन वर्षा बडी जोरों की हो रही थी । सर्वत्र पानी और कीचड ही कीचड हो रहा था, मोटर जासके एसी स्थिति न थी । तब महाराजा ने घोडे पर बैठकर जाने का प्रयत्न किया किन्तु घोडा भी आगे नहीं बढ सका । तब महाराजा ने श्रावकों से कहा मैं तो नहीं आसकता किन्तु महाराज श्री को मेरा इतना सन्देश पहुँचा देना कि आपने एसे गांव में क्यों चोमासा किया ? जिससे हमलोगों को आप के दिव्य दर्शन से वंचित होना पडरहा है। श्रावकों ने कहा सन्त बिमार थे इसलिए महाराजश्री को यहीं चोमासा करना पडा। कोल्हापुर नरेश ने कहा चातुर्मास समाप्ति के बाद गुरु महाराज श्री पुनः कोल्हापुर पधारे और वहां की जनता को धर्म का मार्ग बतावें एसी मेरी ओर से आप प्रार्थना करें और मेरा नमस्कार उन तक पहुचा दें । इस प्रकार अत्यन्त दुःख के साथ महाराजा को पुनः पूना लौटना पडा

इस चातुर्मास के बीच अजैन लोगों ने महाराज श्री के उपदेश से सैकडों की संख्या में मद्य मांस जुगार परस्त्रीगमन आदि का त्याग किया । दया पौषध सामायिके उपवास आदि तपस्याए बडी मात्रा में हुई । चातुर्मास सानन्द संपन्न हुआ । चातुर्मास की समाप्ति पर लोगों ने बडी श्रद्धा और दुःख के साथ महाराज श्री को विदाई दी । इस अवसर पर भी त्याग प्रत्याख्यान अच्छे हुए ।

महाराज श्री ने अपनी सन्त मण्डली के साथ अहमदनगर की ओर विहार कर दिया ।

बुधगांव के महाराजासाहब को प्रतिबोध—

महाराजश्री अहमदनगर की ओर पधार रहे थे । रास्ते में बुधगांव नामका गांव आता है । बुध गाँव से कुछ मील पर सूर्यास्त होने से महाराजश्री ने अपनी मुनि मण्डली के साथ एक वृक्ष के नीचे रात्रि निवास किया । प्रतिक्रमण के समय महाराज श्री अपने मुनियों के साथ प्रतिक्रमण कर रहे थे । उस समय बुधगांव के राजा शिकार करने के लिए अपने साथियों के साथ उसी जंगल में घूम रहे थे।

वृक्ष के नीचे मुनियों को गुनगुनाते देख उनके मन में कुतुहल जाग्रत हुआ। सोचा ये लोग कौन हैं ? रात्रि में यहां क्यों ठहरे हैं ? यह सब जानने के लिए वे अपने साथियों के साथ महाराज श्री के पास आये और पूछा आपलोग कौन हैं ? और यहां क्यों ठहरे हो ?

इस पर महाराजश्री ने फरमाया हम लोग जैन साधु हैं। जैन साधु सूर्यास्त के बाद कहीं भी गमन नहीं करते। हम बुधगांव जारहे थे किन्तु यहीं सूर्य अस्त हो गया अतः हमें यहीं ठहरना पडा।

राजा साहब को जैन मुनियों के आचार की यत्किञ्चित झांकी मिल गई। वे इनके त्याग से चमत्कृत हो गये और अधिक वार्तालाप के लिए उन्होंने अनेक प्रश्न एक साथ पूछ डाले।

इस पर महाराज श्री ने कहा—

राजन् ! यह हमारा समय ध्यान संध्या (प्रतिक्रमण) का है। शिष्टाचार के नाते आपने जो कुछ भी प्रारंभ में पूछा उसका उत्तर संक्षिप्त में दे दिया। इस समय हम अधिक वार्तालाप नहीं कर सकतें। यदि आपकी इच्छा हो तो कल बुधगांव में मिले। उस समय मैं आप की हर शंकाओं का समाधान करने का प्रयत्न करुंगा। यह सुनकर राजा ने महाराज श्री को वन्दन किया और कल बुधगांव पधारने का और अपने महल में ठहरने का आग्रह किया।

भयावनी रात्रि थी। जंगली जानवरों की डरावनी आवाजें सुनाई दे रही थी। ऐसी स्थिति में राजा साहब ने महाराज श्री से कहा—स्वामीजी, रात्रि का समय है यहां जंगली जानवरों का बडा उपद्रव रहता है तथा चोरों का भी भय बना रहता है इसलिए आपकी रात्रि सुरक्षित निकलसके इसलिए मैं अपने अंगरक्षक को आपकी सेवामें रखना चाहता हूँ।

महाराजश्री ने फरमाया राजन् ! आप हमारी चिन्ता न करे ! हमारे पास ऐसी कोई चीज नहीं जो चोरों को ललचासके और न हमको इस देह पर ममत्व बुद्धि ही है जिससे जंगली जानवरों का भय लगे। हम लोग दोनों भय से मुक्त हैं। आप हमारी किसी भी प्रकार की चिन्ता न करें। महाराज श्री के इस कथन से राजा बडा प्रभावित हुआ। उसने महाराज श्री को प्रणाम किया और बुधगांव की ओर चला गया। दूसरे दिन प्रातः होते ही महाराज श्री ने अपनी मुनिमण्डली के साथ विहार कर दिया और बुधगांव पहूँच् गये। राजासाहब भी अपने अधिकारियों के साथ महाराज श्री के सामने आये। बडे सत्कार के साथ महाराज श्री को अपने महल में ठहराया। यहां करीब आठ दश दिन महाराज श्री बिराजे। प्रतिदिन प्रवचन होने लगे। बुधगाव के एवं आस पास के सैकडों की संख्या में महाराज श्री के प्रवचन का लाभ उठाने लगे। प्रतिदिन नियमित रूप से बुधगांव राजा, उनका रणवास एवं राज्य के समस्त कर्मचारिगण महाराज श्री के व्याख्यान में उपस्थित होते थे। महाराज श्री ने दस दिन तक धर्म के दशलक्षण का स्वरुप बड़ा सुन्दर समझाया। आपके प्रवचन का सार यह था—"धर्म प्रजा का मूल है। यदि मनुष्य धर्म की उपस्थित में इतना दुष्ट है तो धर्म की अनुपस्थित में उसकी क्या दशा होती ? सम्पूर्ण विश्व मेरा घर है, सम्पूर्ण मानवता मेरा बन्धु है; और भलाई करना ही मेरा परम धर्म है। धर्म स्वयं तिरता है और दुसरों को तारता है। आत्मा में रहे हुए सद्गुणो को प्रकट करनेवाला एक मात्र धर्म ही है। धर्म मनुष्य से देवता बनाने में सहाय भूत होता है। 'धर्म, अपार भवसमुद्र को पार करनेवाली नौका है। उस पर बैठ कर ही हम पार हो सकतें हैं। उसे पकड रखने से नहीं। सूर्य के प्रकाश की तरह धर्म सब के लिए प्रकाशदायी है। सूर्य के प्रकाश पर किसी का स्वामित्व नहीं। किन्तु उपयोग हर कोई कर सकता है। यही बात धर्म के लिए भी सिद्ध है। धर्म जब तक कर्तव्य के साथ और कर्तव्य धर्म के साथ नहीं चलता, तब तक धर्म जीवन की कला नहीं बन सकता, और धर्म शून्य कर्तव्य जीवन का आदर्श

नहीं बन सकता। धर्म के सार भूत तत्त्वों को सुनो, सुनकर उसे धारण करो और जो व्यवहार अपने को प्रतिकूल लगे अनुकूल न लगे वैसा व्यवहार अन्य के प्रति कभी मत करो। यही धर्म का सर्वोत्तम रहस्य है। धर्म वृक्ष की गहरी छाया में बैठने वाले मनुष्यों को कभी भी दु.ख नहीं आता। किन्तु सम्पदा आकर उस के पैर चूमती है। इत्यादि

बुधगांव से आपने विहार किया। मार्ग में एक छोटे से गांव में रात्रि के समय सरकारी चावडी में मुनि मण्डली के साथ बिराजे। वहीं रात को पुलिस इन्स्पेक्टर ने चोरी के अपराध में एक दीन सगर्भा ग्रामीन स्त्री को पकडलाये। वह स्त्री बड़ी जोर जोर से रोरही थी उसके दर्द भरे रोने की आवाज सुन कर मुनि श्री का हृदय द्रवित हो उठा। मुनि श्री ने इन्स्पेक्टर को अपने पास बुलाकर पूछा—" आपने इस सगर्भा स्त्री को क्यों पकडा ? इन्स्पेक्टर ने जवाब दिया चोरी के अपराध में इसे पकडी गई है।

मुनि श्री बोले-जिसके पूरे दिन जा रहे हैं क्या इस अवस्था में यह चोरी कर सकती है ?

इन्स्पेक्टर ने कहा-इसने तो चोरी नहीं की किन्तु इसके पति ने की है। वह चोरी करके भाग गया है अतः इसको पकड लाए।

मुनि श्री ने कहा—यह तो रंडी का दण्ड फकीर पर" वाली बात हुई। चोरी इसका पति कर रहा है और दण्ड उसकी निरपराध पत्नी को। यह कहां का न्याय है। आप न्याय करने जा रहे हैं या न्याय का गला घोटने जा रहे हैं। इस बिचारी के पूरे दिन जा रहे हैं इसके छोटे छोटे बच्चे बिना मां के घर पर बिलख रहे होंगे। आप स्वयं समझदार हैं। अपराध का दण्ड दिया जाय किन्तु न्याय पूर्ण नीति से। आप को ऐसे अवसर पर करुणा और न्याय का सहारा लेना चाहिये। आप इसे इसी समय छोड दें।

इन्स्पेक्टर ने कहा—मैं इसे प्रातः काल होते ही छोड दूंगा।

मुनि श्री ने कहा अच्छे कार्य में विलम्ब करना उचित नहीं। आप पर इस स्त्री के विलाप का किञ्चित भी असर नहीं हो रहा है ? मुनि श्री के इस तेजस्वी वक्तव्य से पुलिस इन्स्पेक्टर बडा प्रभावित हुआ। उसने इस तरुण तपस्वी की बात को उपेक्षित करना उचित नहीं समझा वह तत्काल उठा और आक्रन्द करती हुई स्त्री के पास पहुचा। और बोला बहन ! मैं तुझे महाराज श्री की आज्ञासे मुक्त कर रहा हूँ। तू जा सकती है। वह स्त्री बडी प्रसन्न हुई। और महाराज श्री के पास आकर वन्दना कर बोली। बाबा ! तुम बडे दयालु साधु बाबा हो। तुम आज नहीं होते तो न जाने मेरी क्या हालत होती। आपका यह उपकार कभी नहीं भूलुंगी। आपतो सचमुच भगवान हो। इस प्रकार गुरु महाराज का उपकार मानती हुई वह घर चली गई। इधर रात्रि के समय महाराज श्री ने प्रवचन दिया। ग्रामीन जनता पर महाराज श्री के उपदेश का अच्छा प्रभाव पडा। कईयों ने दारु मांस जुगार, चोरी आदि का त्याग किया। प्रातः महाराज श्री ने अन्यत्र विहार कर दिया।

वि. सं. १९७९ का इकीसवाँ चातुर्मास अहमदनगर में

वर्षों से अहमदनगर निवासी चातुर्मास की बडी तीव्र इच्छा रखते थे। विहार की अनेक कठिनाईयों के कारण इधर सन्तो का पधारना बहुत कम था यदि कहीं से सन्त पधार भी गये तो भी क्षेत्र की विपुलता के कारण इन्हें चातुर्मास का लाभ बहुत कम मिलता था। श्रावकसंघ के अत्याग्रह से महाराज श्री ने यहीं चातुर्मास फरमा दिया। महाराज श्री के चातुर्मास से अहमदनगर के गण्य मान्य श्रेष्ठियों शिक्षित व्यक्तियों एवं सर्वसाधारण जनता ने अच्छा लाभ लिया। व्याख्यान में हजारों की जन संख्या रहती थी। अजैन लोंगो में भी महाराज श्री के चातुर्मास से उत्साह बढ रहा था। वे लोग भी बडी संख्या में महाराज श्री के व्याख्यान में उपस्थित होते थे।

चातुर्मास के बीच घोर तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने ६१ दिन को धोवन पानी के आधार पर तपस्या की। तपस्या की समाप्ति के दिन आस पास के गावों के लोग हजारों की संख्या में उपस्थित हुए। उस दिन स्थानीय श्रावकों ने कतलखाना बन्द रखने का जोरदार प्रयत्न किया। जिनमें पारसी समाज के प्रमुख सेठ दारापजी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। सेठ दारापजी अहमदनगर के प्रतिष्ठित व्यापारी थे। इनका नगर निवासियों पर एवं राजकर्मचारियों पर अच्छा प्रभाव पडता था। इनका व्यापार प्रायः सैनिक छावनियों में था। इनका गोरे सैनिको पर एवं सेनाधिकारियों पर अच्छा प्रभाव पडा था।

तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज की दीर्घ तपस्या से एवं महाराज श्री के विद्वत्ता पूर्ण प्रवचनों से ये बडे प्रभावित थे। श्रीतपस्वीजी के पूर के दिन सेठ दारापजी सैनिक छावनियों में गए और बडे बडे अधिकारियों से मिले। सेठ ने उनसे कहा-"हमारे शहर में एक बडे महान तपस्वी आये हैं, उन्होंने ६१ दिन के उपवास किये हैं। उनका आज समाप्ति का दिन है। उन तपस्वी की खास यह इच्छा है कि आज के दिन समस्त नगर में हिंसा बन्द हो। नगर का कोई भी नागरिक आज के दिन मांसाहार न करें। यह सुनकर सैनिकअधिकारियों को बडा आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहा इस पुण्य भूमि पर आज भो ऐसे आदर्श आदमी है जो इतने दिन तक बिना खाये भी रह सकते हैं, जब वे इतने दिन तक बिना भोजन के रह सकते हैं तो क्या एक दिन बिना मांस के हम जी नहीं सकते ? हम तपस्वीजी की इच्छा के अनुसार समस्त छावनो में मांस न खाने की प्रतिज्ञा का पालन करेंगे। सेनाधिकारी ने उस दिन सैनिकों को भोजन में मांस न देने का आदेश दे दिया।

यहां की छावनी में उस समय करीब दो हजार सैनिक थे। इनके अतिरिक्त भारतीय सैनिक भी बडी संख्या में थे। सभीने स्वेच्छा से उस दिन मांस नहीं खाने का निश्चय किया। सैनिकों एवं सेनाधिकारियों ने तपस्वीजी के दर्शन कर एवं महाराजश्री का प्रवचन सुन बडी प्रसन्नता का अनुभव किया। उस दिन समस्त नगर निवासियों ने अगता पाला। तमाम व्यवसाय बन्द रखा। नगर के समस्त कतलखाने बन्द रहे। स्थानीय श्रावक श्राविकाओं ने बडी संख्या में अठाईयां पौषध, सामुहिक दया और सामायिकें की। शान्ति की प्रार्थना हुई, हजारों अजैन भाईयों ने यावज्जीवतक के लिए हिंसा, दारु, मांस आदि कुव्यसनों का त्याग किया। धर्मध्यान अच्छा हुआ। अनेक दृष्टियों से यह चातुर्मास सफल रहा। चातुर्मास समाप्ति के बाद आप दक्षिण प्रान्त के अन्य ग्राम व नगरों में विहार कर धर्म प्रचार करने लगे।

वि. सं. १९८० का बाईसवाँ चातुर्मास तासगांव में

दक्षिण प्रान्त के विविध क्षेत्रों को पावन करते हुए आपका तासगॉव में पधारना हुवा तासगांवमें आपके पधारने से लोगों में धार्मिक उत्साह बढा। चातुर्मास का आग्रह होने लगा। स्थानीय श्रावकों की विशेष भक्ति को देखकर महाराज श्री ने यहीं चातुर्मास कर दिया। चातुर्मास में श्वेताम्बर दिगम्बर तथा अजैन जनता ने खूब उत्साह से धार्मिक कार्यों में भागलिया। प्रतिदिन व्याख्यान में सैकडों की संख्या उपस्थित रहती थी। महाराज श्री के प्रवचन बडे प्रभावशाली होते थे।

तपस्वीजी श्री छगनलालजी महाराज ने ४६ दिन की उग्र तपश्चर्या की। उस समय तासगाव में सरकस आया हुआ था। तपस्वीजी की तपस्या एवं महाराज श्री के प्रभावशाली प्रवचन की चर्चा सरकस के मालिक सेठ परशरामजी ने सुनी। वे अपने स्टाफ के साथ महाराज श्री के प्रवचन सुनने के लिए आये। प्रथम दिन के प्रवचन से वे अत्यन्त प्रभावित हुए। अब वे प्रतिदिन प्रवचन सुनने आया करते थे। कभी कभी मध्याह्न के समय भी पण्डित महाराज श्री की सेवा में उपस्थित होते और उन से विविध प्रश्न पूछकर उनका समाधान प्राप्त करते।

तपस्या की पूर्णाहुति के दिन समस्त गांव में अगता पलवाने का सुझाव महाराज श्री ने स्थानीय

संघ में रखा। संघ ने गुरुदेव के आदेश को शिरोधार्य कर गांव के समस्त कसाईयों को बुलवा कर एक दिन जीव हिंसा न करने के लिए कहा। कसाईयों ने श्री संघ की बात को अस्वीकार कर दि। तब श्रावकों ने उस दिनका हर्जाना देने का भी प्रस्ताव रखा किन्तु कसाईयों ने संघ की बात नहीं मानी। यह बात जब सरकस के मालिक सेठ परशरामजी को मालूम हुई तो उन्होंने समस्त कसाईयों को एक दिन कसाईखाना बंद रखने के लिए समझाया। तपस्वीजी के तप के प्रभाव से कसाईयों ने बिना हर्जाना लिये ही एक दिन के लिए हिंसा बन्द रखी। उस दिन कसाईयों ने भी बडी संख्या में महाराज श्री का प्रवचन सुना। आसपास के गांव वाले बडी संख्या में महाराज श्री के दर्शन के लिए उपस्थित हुए। श्रावकों ने अठाईयां, दया पौषध उपवास तथा अन्य त्याग प्रत्याख्यान अच्छी संख्या में किये। विश्वशान्ति के लिए प्रार्थना की। तपस्वीजी का तपमहोत्सव बडे आनन्द और उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ।

कसाईखाने बन्द होने से कुछ मुसलमान भाई महाराज श्री से बडे रुष्ट होगये और एक दल बनाकर महाराज श्री की सेवामें उपस्थित होकर धार्मिक वाद विवाद करनेलगे। महाराज श्री ने उन्हें अनेक ढंग से समझाया किन्तु उन्हे तो किसी तरह का झगडा ही करना था। अन्तमें महाराज श्री ने बुद्धि से काम लिया। उस मण्डली में एक मुल्ला जो अपने आपको बडा बुद्धिमान मानता था। वह उस मण्डली का अगुआ बनकर महाराज श्री से विवाद करने लगा। महाराज श्री ने उसे कहा—तुम सरफनो (फारसी व्याकरण) जानते हो। सरफनो का नाम सुनते ही वह घबरा गया। उसने अपने जीवन में यह एक नया ही नाम सुना था। महाराज श्री ने उसे कहा—सरफनो यह फारसी भाषा का व्याकरण है। सरफनों को जाने बिना किसी फारसी शेर का सही मायना नहीं जान सकता। मुल्लासाहब बिना कुछ कहे ही खडे हो गये और चल दिये। उनके साथ अन्य भाई भी एक एक करके खिसक गये। जो दो चार भाई रह गये थे। महाराज श्री ने उनको एक भावात्मक उर्दू का शेर सुनाया और इसपर बडा सुन्दर विवेचन किया। उर्दू शेर का विवेचन सुन कर उपस्थित मुसलमान भाई बडे प्रसन्न हुए। और अपनी की हुई गलती की बार बार माफी मांगने लगे।

चातुर्मास के बीच हिन्दू, मुसलमान बडी संख्या में उपस्थित होकर महाराज श्री का प्रवचन सुनते थे। इस चातुर्मास के बीच अनेक परोपकार के कार्य हुए सैकडों लोगों ने मद्य, मांस जूआ जैसे दुर्व्यसनों का त्याग किया। व्याख्यान में भी लोगों को बडा आनन्द आता था। स्थानीय संघ ने भी अच्छा धर्मध्यान किया और अपने जीवन को धन्य बनाया। इस प्रकार तासगांव का चातुर्मासकाल शान्ति-मय और उत्साहपूर्ण वातावरण में व्यतीत हुआ।

तासगांव का चातुर्मास पूर्ण कर आपश्री ने विहार कर दिया। मुनि मण्डली के साथ दक्षिण प्रान्त में विचर कर धर्मप्रचार करने लगे।

सं १९८१ का तेईसवां चातुर्मास जलगांव में

पूज्य आचार्य प्रवर श्री जवाहरलालजी महाराज ने सेठ श्री लक्ष्मणदासजी श्रीश्रीमाल के अत्याग्रह से एवं स्थानीय संघ की विनती पर जलगांव में ही इस वर्ष का चातुर्मास करने का निश्चय किया। मालवप्रान्त को पावन करते हुए पूज्य आचार्य श्री चातुमासार्थ जलगांव पधार गये। पूज्य अचार्य श्री की आज्ञा से दक्षिण प्रान्त के विविध ग्राम नगरों में धर्मोपदेश देते हुए चरितनायक पं० श्री घासीलालजी महाराज भी चातुमासार्थ जलगांव पधार गये। आचार्य श्री के साथ इस वर्ष १७ मुनियों ने चातुर्मास किया था। ७ साध्वियों का भी यहा चातुर्मास था। कुल २४ ठाने साधुसाध्वियों के बिराजने से जलगांव में धर्मध्यान की बाढ सी आ गई थी। संघ में अपूर्व उत्साह दृष्टिगोचर होता था। इस चातुर्मास में श्री विनोबा भावे,

जमनालालजी बजाज, सेठ पुनमचंदजी रांका, आदि प्रतिष्ठित सज्जनों ने मुनियों के दर्शन कर एवं उनके प्रवचन सुन आनन्दानुभव किया। इस चातुर्मास में तपस्वी मुनियों ने भी अच्छी तपश्चर्या की।

आषाढ की अमावस्या के आसपास आचार्य श्री जवाहरलालजी म. की हथेली में फोडा हो गया। उस फोडे से आचार्य श्री को असह्य पीडा होने लगी। मुनियों ने उसे सामान्य फुन्सी समझ कर चाकू से चीर दिया और उसमें का पीप निकाल दिया। एक दो दिन तक तो आराम मालम हुआ किन्तु तीसरे दिन फोडे ने उग्ररूप धारण किया। वह साधारण फोडा विशाल रूप में सामने आया। फोडा बढता गया। यहां तक की कोहनी तक उसकी सूझन फैल गई। चिकित्सा के लिए स्थानीय डॉक्टर बुलाये गये। उन्होंने फोडे का ऑपरेशन किया। ऑपरेशन से चार-पांच दिनतोठीक लगा किन्तु फोडे ने पुनः अपना उग्र स्वरूप बताना प्रारंभ किया। स्थिति यहा तक बढ गई कि पूज्य आचार्य श्री का जीवन भी खतरे में दिखाई देने लगा। जलगांव के बडे २ सभी डॉक्टरों ने पूज्य श्री के स्वास्थ्य के विषय में निराशा व्यक्त की। एक ज्योतिषी पूज्य श्री की जन्म कुण्डली देखकर बोला- पूज्य श्री के ग्रहयोग यह बता रहे हैं कि पूज्य श्री इस असाध्य बिमारी से बच नहीं सकते। रोग का उपचार तो चल रहा था किन्तु डॉक्टरों एवं ज्योतिषियों के मुख से निराशा जनक उत्तर सुनकर पूज्य आचार्य श्री अधिक घबरागये। उन्हें रोग से भी अधिक मानसिक पीडा का अनुभव होनेलगा। उन्हें ऐसा लगता था कि मैं अब अधिक समय तक जीवित नहीं रहूँगा। वे सब के साथ एसी ही बात कर रहे थे जैसे मृत्यु के समीप पहुँचा हुआ व्यक्ति बात करता है। पं० मुनिश्री घासीलालजी महाराज ने इस अवसर पर बडे धैर्य का परिचय दिया। वे पूज्य श्री की निरन्तर सेवा में रहने लगे। वे पूज्य श्री के पास उन्ही डाक्टर को आने देते जो पूर्ण निष्णात हो। पूज्यश्री की जांच करने को आने वाले डॉक्टर को एकान्त में बुलाकर पहले ही कह देते थे कि बिमारी विषय में पूज्यश्री से एक शब्द भी न कहा जाय। वें यदि पूछे तो उन्हे कह दीजियेगा कि आप शीघ्र ही अच्छे हो जायेंगे। घबराने की जरा भी आवश्यकता नहीं। जो कुछ भी आप कहें उनके मन को किसी भी प्रकार की ठेस नहीं लगनी चाहीए।,,

एक बार पं० मुनिश्री घासीलालजी म० जंगल (शौच) गये हुए थे। पीछे से श्रावक लोग एक डॉक्टर को पूज्य श्री के पास ले आये। डॉक्टर ने पूज्यश्री के रुग्ण हाथ को देखकर कुछ एसी बात कह दी कि जिससे पूज्यश्री के मनोबल पर विपरित असर हुआ। उधर पं० मुनिश्री जब स्थान पर आए तो पत्ता चला कि पूज्यश्री के पास एक डॉक्टर आए हुए हैं। सुनते ही तत्काल पूज्यश्री के पास मुनि श्री पहुंचे। वहाँ पहुँचते ही सारा मांजरा मुनिश्री के ध्यान में आगया, मुनिश्री ने पूज्यश्री के उदास चेहरे की और देखा। और स्वयं का बीमार सा मुह बनाकर के नब्ज दिखाने के लिए अपना हाथ डॉक्टर के सामने कर दिया। डॉक्टर ने नब्ज देखकर मुनिश्री को न्युमोनिया बताया। पूज्यश्री डॉक्टर का निदान सुनकर मुस्करा उठे। जब डॉक्टर वापिस चला गया तो मुनिश्री ने पूज्यश्री से कहा- डॉक्टरों का अभीप्राय कोइ अन्तिम अभिप्राय नहीं होता। डॉक्टर लोग सामान्य बीमारी को भी भयंकर बता देते हैं और भयंकर बिमारि को सामान्य। आप तो विचार शील पुरुष हो। महापुरुष तो संकट के समय धीरज से ही काम लेते हैं।,, पूज्य श्री की उदासीनता बढती गई। पं० मुनि श्री ने मनोवैज्ञानिक ढंग से इस विकट परिस्थिति को सुलझाने का निश्चय किया। इन्होंने सभी मुनिवरों को एकत्र कर उनके सामने एक सुन्दर सुझाव रखा। इन्होंने कहा कि- "मुनिवरो! पूज्यश्री के स्वास्थ्य से हम लोग बडे चिन्तित हैं। इस चिन्ता से मुक्त होने के लिए एक रामबाण उपाय यह है प्रभु प्रार्थना और निरन्तर तपश्चर्या। हमारी पूज्यश्री के प्रति स्वास्थ्य की शुभ कामना से एवं तपश्चर्या से पूज्यश्री का स्वास्थ्य

अवश्य ही सुधर जाएगा । पूज्य श्री के स्वास्थ्य के लिए हमें प्रतिदिन आयंबिल और तेले की तपश्चर्या प्रारंभ कर देनी चाहिये । जो मुनि उम्र से छोटे हैं उनको छोडकर सभी को बारी बारी से तेला और आयंबिल करना होगा । और सामुहिक प्रार्थना भी । मेरा विश्वास है कि इस प्रकार की तपश्चर्या एवं सामुहिक प्रार्थना से पूज्यश्री को इतनी शक्ति प्राप्त होगी कि पूज्यश्री संवत्सरी के दिन अवश्य व्याख्यान देने की शक्ति प्राप्त करेंगे ।

सभी मुनिवरों को पंडित श्री घासीलालजी महाराज का यह उत्तम सुझाव पसन्द आया । सभी ने बारी बारी से तैले की तपश्चर्या और आयंबिल प्रारंभ कर दिये । इधर डॉक्टरोंने भी चिकित्सा प्रारम्भ कर दी । साथ ही पं० मुनि श्री ने डॉक्टरों से यह भी कह दिया कि पूज्यश्री की आपलोग धैर्यपूर्वक चिकित्सा करें किन्तु उनके स्वास्थ्य के विषय में उनके सामने किसी भी प्रकार का वार्तालाप न करें । डॉक्टरों ने भी इस सुझाव को मान लिया ।

एसा वातावरण बना दिया गया कि पूज्यश्री अब मानसिक स्वस्थ्यता का अनुभव करने लगे । परिणाम यह आया कि पूज्य श्री का स्वास्थ्य उत्तरोत्तर सुधरने लगा । जिन्हें बोलने की भी शक्ति नहीं थी वे अब संवत्सरी के शुभअवसरपर दोघंटे तक सुन्दर प्रवचन देते रहे । फिर भी समय भयंकर स्थिति उत्पन्न कर सकता था । अपनी एसी अस्वस्थता देखकर पूज्यश्री को संघ के भावी की चिन्ता होने लगी । किसी योग्य उत्तराधिकारी के हाथ में अपने संम्प्रदाय का उत्तरदायित्व सोंपे बिना यह चिन्ता दुर नहीं हो सकति थी । पूज्य श्री ने अपने संप्रदाय के होनहार और उज्ज्वल चरित्र सम्पन्न सन्तों पर दृष्टि दौडाई । उस समय उनकी दृष्टि आशुकवि साहुछत्रपति कोल्हापुरराज्यगुरु जैनशास्त्राचार्य की पदवी से विभूषित चरित्र परायण विद्वान सन्त चरितनायक श्री घासीलालजी महाराज पर केन्द्रित हुई । उन्होंने अपने संप्रदाय का शासनसूत्र पं० श्री घासीलालजी महाराज को सौंप देने का दृढ निश्चय किया ।

इस संप्रदाय के प्रधान श्रावक जो वहां मौजूद थे उनसे विचार विनिमय किया गया । संप्रदाय के अनेक सन्तों और श्रावकों से भी राय मंगाई गई और उन्होंने पूज्यश्री के विचारों का हृदय से समर्थन किया । पं. मुनि श्री घासीलालजी महाराज को युवाचार्य पद देनेके लिए इस संप्रदाय के श्रावक संघ के मुखियों एवं मुनियों के परामर्श से एक ड्राफ्ट तैयार किया गया । पूज्य श्री ने ड्राफ्ट को अच्छी तरह पढकर उस पर अपनी स्वीकृति फरमादी । इसके बाद पूज्य श्री ने पं. रत्न श्री घासीलालजी महाराज को अपने पास बुलाकर उन्हें संप्रदाय का भार स्वीकार करने के लिए कहा गया । पूज्य श्री की यह एकाएक आज्ञा सुनकर श्री घासीलालजी महाराज बडे विचार में पड गये । उस समय गुरुदेव की शारीरिक स्थिति भी अस्वस्थ थी । अतः उनकी आज्ञा का उल्लंघन का अर्थ है उनके मन को ठेस पहुँचाना । लेकिन संप्रदाय की इतनी बड़ी जिम्मेदारी को अपने पर लेना भी सहज नहीं था । चरितनायकजी ने कुछ विचार कर विनम्र भाव से पूज्य श्री से अर्ज कि की—"हे गुरुदेव ! आपकी आज्ञा का उल्लंघन करने का तो मेरी सहसा हिम्मत नहीं होती । आपने जो मेरे पर संप्रदाय का भार देने का निश्चय किया इसके लिए मै आपकी कृपा दृष्टि का सदा ऋणी हूं । लेकिन मैं अपने आपको इस पदवी के लायक नहीं मानता । मुझ से अधिक अनुभव योग्यता शास्त्रीयज्ञान तथा उम्रवाले अनेक साधु इस संप्रदाय में मौजूद हैं । आप उन्हीं को यह भार सोंप दें । ,, पूज्य श्री के बार बार समझाने पर एवं श्रावकों के अतीव आग्रह होने पर भी मुनि श्री घासीलालजी महाराज ने युवाचार्य बनने से साफ साफ इन्कार कर दिया ।

मानव सत्ता का क्या दास है, अधिकार लिप्सा का गुलाम है, गृहस्थ-जीवन में क्या, साधु जीवन में भी सत्ता-मोह के रोग से छुटकारा नहीं हो पाता है । ऊंचे से ऊंचे साधक भी सत्ता के प्रश्न पर पहुंच कर

लडखडा जाते हैं । जैन धर्म की एक बाद एक होने वाली शाखा प्रशाखाओं के मूल में यही सत्ता-लोलुपता और अधिकार लिप्सा रही है। आचार्य आदि पदवियों के लिए कितना कलह और कितनी विडम्बना होती है यह किसी से छुपा हुआ नहीं हैं । हमारे चरितनायकजी उपाधि को व्याधि ही मानते थे । जिसके जीवन का स्तर वास्तव में ऊंचा उठ जाता है– जो अपनी आत्मा को ही ऊपर उठा लेता है, वह उपाधि लेकर क्या करेगा ? चरितनायकजी का व्यक्तित्व स्वतः इतना उच्चतर था कि वह उपाधि से परे पहुंच चुका था । उपाधियाँ उनके जीवन की उंचाई तक पहुंच भी नहीं सकती थी तो उनकी क्या महत्ता बढा सकती है ?

हमारे चरितनायकजी ने पूज्य श्री के द्वारा दी जानेवाली युवाचार्य की पदवी को लेना स्वीकार नहीं किया । मुनि श्री की इस अस्वीकृति के मूल में शायद एक कारण यह भी था कि यह उपाधि मेरे आध्यात्मिक जीवन में व्याधि उत्पन्न कर सकती है । मुनि श्री ने पदवी अस्वीकार करके साधु समूह के सामने एक सुन्दर आदर्श उपस्थित किया ।

मुनि श्री घासीलालजी महाराज साहब के युवाचार्य बनने से इन्कार होने पर पं. मुनि श्री गणेशीलालजी महाराज को युवाचार्य बन जाने को कहा गया । कुछ आना कानी के बाद पं. मुनि श्री गणेशीलालजी महाराज ने युवाचार्य बनना स्वीकार किया ।

बम्बई के डाक्टर मूलगांव कर ने पूज्य श्री का अच्छा निदान कर उनका ऑपरेशन किया । सुयोग पथ्य से पूज्य श्री का स्वास्थ्य उत्तरोत्तर स्वस्थ होने लगा । और कुछ महिनों के बाद पूज्यश्री पूर्ण स्वस्थ हो जाने पर युवाचार्य पद की अब आवश्यकता न रही । उन्होंने गणेशीलालजी महाराज को अपना उत्तराधिकारी बनानेवाला वह लेख चाक कर दिया और उसकी घोषणा एक परिपत्र द्वारा इस प्रकार कर दी–

ॐ सिद्धम्

मेरी बिमारी की हालत में संवत १९८१ के जलगांव के चौमासे में मैं मुनि घासीलालजी को पूज्य पदवी देता था परन्तु उन्होंने पूज्य पदवी नहीं लेने की प्रतिज्ञा होने से स्वीकार नहीं करी इसलिए गणेशीलालजी को देनी मुकरर की थी । परन्तु मेरी तंदुरस्ती अच्छी हो जाने से वह परिस्थिति नहीं रही । इसलिए वह लेख चॉक कर दिया विधिसर हैं । संवत १९८६ मिति पौष सुद ११ बिकानेर

द: जवाहरलाल का

चातुर्मास काल में पूज्य आचार्य श्री रुग्णावस्था में चरितनायकजी ने बडी लगन के साथ सेवा की । चातुर्मास समाप्त के बाद शारीरिक दुर्बलता के कारण पूज्य श्री जलगांव में ही दोमास तक बिराजित रहे । उसके बाद आप जलगांव से भुसावल आदि आसपास के क्षेत्र में ही विहार करने लगे ।

चातुर्मास के बाद पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज के पास माघ शुक्ला ५ (वसन्त पञ्चमी) के दिन निम्बाहेडा के निवासी समीरमल नामके नौ वर्षीय बालक ने अपनी माता से आज्ञा प्राप्त कर दीक्षा ग्रहण की । पूज्य श्री ने दीक्षा पाठ पढाया और केशलुंचन किया । पश्चात बालमुनि व नवदीक्षित समीर मुनि को पं. मुनि श्री घासीलालजी म० ने उठाकर अपनी गोद में बैठाया ।

१९८२ का २४ वाँ चातुर्मास बेलापुर में–

चरितनायकजी श्री घासीलालजी महाराज आचार्य श्री की आज्ञा प्राप्त कर महाराष्ट्र के विविध क्षेत्रों को पावन करने लगे । मुनि जीवन एक कठिन साधना का जीवन है । निर्दोष संयम पालन करते हुए किसी मुनि का सब जगह विहार कर सकना संभव नहीं हैं, नंगे पैर नंगे सिर, पैदल विहार निर्दोष

आहार पानी का ग्रहण आदि ऐसे नियम हैं, जिन की सब जगह रक्षा होना असंभव है। फिर भी कुछ मुनि ऐसे स्थानों में भी कभी–कभी विचरते हैं और परीषहों को सहन करने में आनन्द मानते हैं। मगर प्रथम तो विद्वान साधुओं की ही अत्यन्त कमी है और इनमें भी अपरिचित क्षेत्रों में विचरने वाले साधु अल्प ही हैं। परिणाम यह है कि बहुत से क्षेत्र ऐसे रह जाते हैं जहां धर्म की चर्चा ही कभी नहीं हो पाती। चरितनायकजी इसी उद्देश्य से महाराष्ट्र के क्षेत्र में विचरने लगे। महाराष्ट्र के छोटे छोटे गांव में आप पधारते और वहाँ के निवासियों को जैन धर्म से प्रभावित करते। आपका व्याख्यान श्रवण कर हजारों व्यक्ति बीडी, सिगारेट, भांग गाँजा, मद्य, मांस, परस्त्री सेवन आदि दुर्व्यसनों का त्याग करते। महाराष्ट्र में विचरण करते समय आगामी चातुर्मास अपने यहाँ कराने के लिए अनेक गांव के संघों की विनंतियाँ आपके पास आने लगी उनमें वेलापुर का संघ भी प्रमुख था। महाराज श्रीने वेलापुर संघ की प्रार्थना स्वीकार की। और चातुर्मासार्थ आप अपनी मुनि मण्डली के साथ वेलापुर पधार गये। समाज में आपके आने से नव्य उत्साह भर गया। इस वर्ष चातुर्मास काल में धर्म ध्यान तपश्चर्या आदि कई शुभ काम हुए। व्याख्यान में लोगों की उपस्थिति अच्छी रहती थी। अनेक जन्मों के पुण्य से ऐसे सन्तों के सहवास का सुअवसर जीवन में यह प्रथमवार हुआ था। इसलिए आप श्री के व्याख्यान का प्रत्येक व्यक्ति रुचि पूर्वक लाभ लेता था। प्रतिदिन व्याख्यान के समय बोधामृत का पान करने से वहां के श्रावक–श्राविकाओं की धार्मिक –भावना में विशेष वृद्धि हुई—

इस चातुर्मास में कोटा संप्रदाय के पं० रत्न श्री प्रेमराजजी महाराज एवं घोर तपस्वी श्री देवीलाल जी महाराज भी यहीं विराजमान थे। पं० मुनि श्री के साथ छह अन्य मुनिराज भी थे। तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने धोवन पानी से ५९ दिन की तपश्चर्या की। तपस्वी श्री देवीलालजी महाराज ने भी लम्बी तपश्चर्या की! तपश्चर्या की पूर्णाहुति के दिन नगर के समस्त कतलखाने बन्द रखे गये थे। तपस्वियें के दर्शनार्थ बाहरसे बडी संख्या में जनता की उपस्थिति हुई। धर्मध्यान आशातीत हुआ। पं० मुनि श्री प्रेमराज जी म० के एवं पं० मुनि श्री घासीलालजी महाराज के व्याख्यान सम्मिलित हि होते थे! दोनों के प्रवचन मराठी भाषा में होते थे। मराठी में व्याख्यान होने से महाराष्ट्रीय जनता बडी संख्या में उपस्थित होती थी।

इस प्रकार वि० सं० १९८२ का सफल चातुर्मास संपूर्ण कर आपने पूज्य आचार्य श्री की सेवामें जलगांव की ओर विहार कर दिया।

इधर जवगांव का दूसरा चातुर्मास व्यतीत कर पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज सा. ने मालवा-प्रान्त की ओर विहार कर दिया। आपको भी मालवा की ओर विहार करने का आदेश मिला। गुरुदेव का आदेश मिलते ही आपने मालवा की ओर विहार कर दिया। मार्ग में ही आपने पूज्य श्री के दर्शन किये। माघ पूर्णिमा के दिन आपने पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज श्री के साथ रतलाम में प्रवेश किया। पूज्य श्री के आगमन के बाद संप्रदाय के मुख्य मुख्य करीब ४५ सन्तों का भी आगमन हुआ। लगभग इतनी ही संख्या में साध्वियां भी उपस्थित हुई। हजारों श्रावक पूज्य श्री तथा मुनिमण्डल के दर्शन करने की अभिलाषा से उपस्थित हो गये थे। रतलाम संघ ने आगन्तुक श्रावकों का भाव भीना स्वागत किया।

जावरा वाले सन्तों के अलग हो जाने पर पूज्यश्री हुक्मीचन्द्रजी महाराज के संप्रदाय में दो आचार्य हो गये थे। दूसरे पक्ष के आचार्य पूज्य श्री मन्नालालजी महाराज थे। दोनों धुरन्धर आचार्यों ने सम्प्रदाय को एकता के सूत्र में बान्धने का विचार किया। तदनुसार पूज्य श्री मन्नालालजी महाराज भी अपनी शिष्य-मण्डली के साथ रतलाम पधार गये थे। दोनों पक्षों की ओर से सांप्रदायिक एकता के

लिए बातचीत प्रारम्भ हो गई। इस अवसर पर बातचीत को अधिक सफल बनाने के उद्देश्य से पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ने मुनि श्री मोडीलालजी महाराज मुनि श्री चान्दमलजी महाराज, मुनिश्री हरख-चन्दजी महाराज चरितनायक श्री घासीलालजी महाराज और मुनि श्री हीरालालजी महाराज को पंच नियुक्त किये। इन पंचों के नेतृत्व में संप्रदाय का शुद्धि करण किया गया। दोनों पूज्यों की बातचीत सफल रही। दोनों आचार्यों ने मिलकर निम्नलिखित एकता की शर्तें निश्चित की।

(१) जो लिफाफे दोनों तरफ से एक दूसरे को देवे दोनों अपनी अपनी धर्म प्रतिज्ञा से यह लिख देवें कि लिफाफों के लेखानुसार दोनों तरफ कोई दोष नहीं है।

(२) आज मिति पीछे दोनों पक्ष वाले गतकाल सम्बन्धी किसी भी साधु का दोष प्रकाशित करेंगे तो वे दोष के भागी होंगे और चतुर्विध संघ के अपराधी ठहरेंगे।

(३) आज पीछे दोनों पूज्य श्री हुकमीचन्दजी महाराज के छठे पाट पर समझे जाएंगे।

(४) भविष्य में दोनों तरफ के सन्त परस्पर प्रेम—वत्सलता बढावे।

५. दोनों तरफ के सन्त परस्पर निन्दा न करें। यदि किसी साधु का किसी को कसूर नजर आवे तो उस धनी को व उस गच्छ के अग्रेसर को सूचित कर देवें। (दस्तखत दोनों पूज्यों के)

प्रेम पूर्ण वातावरण में दोनों पूज्यों का सम्मेलन समाप्त हुआ। दोनों पूज्यों ने एक साथ बैठ कर प्रवचन दिया। प्रथम चेत्र कृष्णा ४ को पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज के साथ चरितनायकजी का जावरा में आगमन हुआ। जावरा के नवाब खान बहादुर साहबजादा शेरअलीखां साहब पूज्य श्रीका व्याख्यान सुनने आये। जावरा में अनेक उपकार के कार्य हुए।

जावरा से आप पूज्य श्री के साथ नगरी पधारे। यहां पूज्य श्री के उपदेश से वर्षों का वैमनस्य मिट गया। वहां गोशाला की भी स्थापना हुई। वहां से आप निम्बोद करजू नन्दावता आदि अनेक ग्राम नगरों को पावन करते हुए मन्दसौर पधारे। मन्दसौर से आपका पूज्य श्री के साथ नीमच आगमन हुआ। यहां ब्यावर का संघ आगामी चातुर्मास की विनती लेकर आया। पूज्य श्री ने चातुर्मास पूर्व ब्यावर पधारने की विनती स्वीकार की। नीमच से आप उदयपुर पधारे। उदयपुर से विविध क्षेत्रों को पावन करते हुए आप पूज्य श्री के साथ ब्यावर पधार गये।

पूज्य श्री ने अपने ज्येष्ठ शिष्य पं० मुनि श्री घासीलालजी महाराज की श्रमसाध्य शिक्षा का लाभ अपनी संप्रदाय के मुनिवरों को मिले इस दृष्टि से। १ श्री चान्दमलजी महाराज (जावरा)। २ श्री मनोहरलालजी म०। ३ सूरजमलजी म० (मन्दसौर वाले)। ४ श्री गबूलालजी म० (छोटे)। ५ श्री चौथमलजी म० (जयपुर वाले)

इन पांच मुनियों को पढने पढाने की आज्ञा दी। ये पांचों मुनिराज पण्डित श्री घासीलालजी महाराज की सेवा में रहकर अध्ययन करने लगे। इनके साथ वयोवृद्ध तपस्वी श्री उत्तमचन्दजी महाराज भी थे। ये लगातार १४ वर्ष से केवल छाछ ही पीते थे। सुदीर्घ तपश्चर्या के कारण इनका शरीर अत्यन्त दुर्बल हो गया था। विहार में बडी कठिनाई का अनुभव करते थे। उदयपुर की ओर विहार करते समय ये पांचों विद्यार्थी मुनिवर तपस्वी श्री उत्तमचन्दजी महाराज को झोली में बैठाकर कन्धे पर उठाकर चलते थे। एक समय मेवाड के खेरोदा गांव से दरोली जाते मार्ग में एक भील दारु के नशे में धूर्त होकर आया। उसके हाथ में बडा पत्थर था। तपस्वी जी महाराज की झोली उठाने वाले सन्तों को तेज गतिसे आगे बढ जाने का आदेश देकर मुनिश्री उस भील को आगे नहीं बढने देने के लिए अवरोध रूप में खडे हो गये। शरीर से हृष्ट पुष्ट तेजस्वी युवक साधु को निर्भयता से अपने सामने खडा देख भील

ठहर गया । उसकी हिम्मत आगे बढने को नहीं हुई । मुनि श्री ने उसे पत्थर फेंकते को सीधे रास्ते पर जाने को कहा मुनि श्री के तेज को वह सह नहीं सका । उल्टे पैर से अपने स्थान पर चला गया । मुनि श्री जी तो स्वभाव से ही निर्भीक थे । डरना तो उन्होंने जाना ही नहीं था । वे समय समय पर एसे प्रसंग पर एक बोडी गार्ड की तरह काम करते थे ।

पूज्यश्री के साथ ही उदयपुर जसवन्तगढ, सादडो मारवाड बगडी होते हुए ब्यावर पधारे ।

वि. सं. १९८३ का २५ वाँ चातुर्मास ब्यावर में—

वि. सं ८३ का चातुर्मास आप पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. के साथ ब्यावर में ही व्यतीत किया । इस चातुर्मास में तपस्वी मुनि श्री सुन्दरलाल जी महाराज ने धोवन पानी के आधार पर ७६ दिन की तपस्या की । तपस्वी मुनि श्री केशरीमलजी महाराज ने ६६ दिन की तपस्या की । दोनों तपस्वीजी की तपश्चर्या की पूर्णाहुति के समय स्थानीय श्रावक श्राविकाओं ने अठाईयां नौ, दस पांच वेले तेले उपवास आदि बडी संख्या में तपश्चर्या की । सैकडों की संख्या में दर्शनार्थी पूज्य श्री एवं सन्तों तपस्वियों के दर्शन के लिए आये । इस अवसर पर जीवदया आदि अनेक परोपकार के कार्य हुए । चरितनायकजी श्री घासीलालजी महाराज के भी समय- समय पर पाण्डित्य पूर्ण प्रवचन होते थे । आप के पाण्डित्व पूर्ण प्रवचन से स्थानीय जनता अत्यन्त प्रभावित हुई ।

भाद्रपद शुक्ला षष्ठी के दिन जेतारण निवासी सुगालचन्दजी मुकाना ने अत्यन्त वैराग्य भाव से भागवती दीक्षा अंगीकार की । एक अगस्त के दिन मौलाना मुहम्मद अली ने सन्तों के दर्शन किये ।

चातुर्मास समाप्त होने पर पूज्य श्री के साथ आपने विहार कर दिया । राजस्थान के विविध क्षेत्रों को पावन करते हुए आप पूज्य श्री के साथ १९८४ का चातुर्मास व्यतीत करने के लिए आप बीकानेर पधारे ।

वि. सं. १९८४ का २६ वाँ चातुर्मास बीकानेर में

कुछ दिन बीकानेर विराज कर आपने पूज्य श्री के साथ १९८४ का चातुर्मास भीनासर में किया । बीकानेर से भीनासर यद्यपि तीन मील ही दूर है तथापि बहुत से जैन अजैन धर्म प्रेमी बन्धु प्रतिदिन उपदेश सुनने के लिए आया करते थे । पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज श्री के प्रवचन के पूर्व प्रतिदिन आपके भी प्रवचन हुआ करते थे । समय समय पर आपको बीकानेरस्थ वृद्ध सन्तों की सेवा करनी पडती थी । इस प्रकार आप पर अनेक जिम्मेदारियाँ आई । प्रातः व्याख्यान, मध्याह्न में शिक्षार्थी साधुओं को पढाना । एवं रुग्ण मुनियों की सेवा करना । इन सब जिम्मेवारियों को निभाते हुए भी आप अपने बचे कुचे समय में साहित्य निर्माण का कार्य भी दत्तचित्त से करते ही रहते थे । एक क्षण का भी प्रमाद आप के लिए असह्य हो जाता था । वे प्रमाद को अपने प्रगति का शत्रु मानते थे ।

पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज का आप पर असीम प्रेम था । आपके साहित्य निर्माण के कार्य से वे बडे प्रभावित थे । कई बार पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज आपके लिए फरमाते थे. यह मेरा दाहिना हाथ है । मेरे संप्रदाय का चमकता हुआ अनमोल रत्न है । इससे मुझे बडी-बडी आशा हैं ।"

आगमों पर टीका लिखने की प्रेरणा और प्रारम्भः—

पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज का एक साधु प्रतिदिन सेठियाजी की लायब्रेरी से छुपछुप कर टीकावाले आगम ग्रन्थ लाला कर पढ़ता था । एक दिन उसने पूज्य गुरुदेव श्री जवाहरलालजी महाराज से कहा-

हे "गुरुदेव ! हम जिन सूत्रों से अपने संप्रदाय के मूल सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हैं उन सब आगमों पर मूर्तिपूजक आचार्यो की ही टीका है । मूर्तिपूजक आचार्यो ने सर्वत्र "चेइयं" शब्दका अर्थ "प्रतिमा" ही किया है । तथा टीकाकार आचार्यो ने भी अनेक ऐसी बाते लिखी है जो जैन तत्व और

स्थानक वासी परम्परा के मूल सिद्धान्तों के साथ जरा भी मेल नहीं खाती। तथा टीकाग्रन्थों में भी अनेक ऐसी बाते हैं जो जैनाचार से विरोध रखती है। आज हमारा स्था. साधु समाज एवं श्रावक वर्ग इतना बडा है किन्तु उसके मूल भूत सिद्धान्त के प्रतिपादक एक भी टीका ग्रन्थ अपने में उपलब्ध नहीं हैं। हमें मूर्तिपूजकों की टीका का ही बार बार आश्रय लेना पडता है। परिणाम स्वरूप स्थानकवासी जैन परम्परा के प्रतिपादन में अनेक बाधा भी उपस्थित हो जाती है। यह हमारे लिए कम लज्जाजनक नहीं हैं। प्रायः अन्य समाज के विद्वान मुनि स्थानकवासियों को ज्ञान शून्य ही समझते हैं। हमें उनके सामने बार बार लज्जित होना पडता है। आगमों में जहां कहीं भी प्रतिमा या चैत्यशब्द आता है उसका मूर्ति सूचक ही अर्थ किया है, इतना बडा स्थानकवासी समाज जो सदा से मूर्तिपूजा का विरोधी रहा है उसका आधार अगर श्वेताम्बराचार्यों द्वारा निर्मित टीका ग्रन्थों पर ही आश्रित है तो वह अपने गौरव को सुरक्षित नहीं रखसकता।

श्वेताम्बराचार्यों ने विश्व साहित्य की समृद्धि में असाधारण योग प्रदान किया है। साहित्य के प्रत्येक क्षेत्र में जैनाचार्यों ने अपनी अनुपम प्रतिभा का परिचय दिया है। जब हम जैन साहित्य की विस्तीर्णता, समुद्धता और भव्यता की ओर दृष्टिपात करते हैं तो उसके निर्माता समर्थ आचार्यों की प्रकाण्ड विद्वता और अथाक परिश्रम का ध्यान आता है और उनके प्रति श्रद्धा से हृदय भर जाता है। इन जैनाचार्यों द्वारा निर्मीपत साहित्य विश्व साहित्य की बहुमूल्य निधि है। प्राकृत संस्कृतादिभाषा में लिखा गया इस कोटि का साहित्य जैनधर्म ने ही प्रस्तुत किया है। भगवान श्रीमहावीर ने प्रचलित लोक भापा का आदर कर प्राकृत (अर्द्धमागधी) में उपदेश प्रदान किया। बाद में जैनचार्यों ने प्रांतीय भाषाओं को भी साहित्य का रूप प्रदान किया। तामिल और कन्नड साहित्य तो जैनाचार्यों के ग्रन्थों से ही समृद्ध हुआ है। राहुल सांकृत्यायन के शब्दों में कहा जाय तो "अपभ्रंश साहित्य की रचना और सुरक्षा में जैनों ने सबसे अधिक काम किया है।" जैनाचार्यों ने जैसे प्राकृत और अपभ्रंश में साहित्य की रचना की वैसे ही विद्वद्योग्य संस्कृत भाषा में भी उन्होंने प्रकाण्ड पाण्डित्यपूर्ण ग्रन्थों की रचना की है। निष्पक्ष दृष्टि से विचार किया जाय तो यह मेरी दृढ धारणा है कि उपलब्ध संस्कृत साहित्य में से जैन साहित्य को अलग कर दिया जाय तो संस्कृत साहित्य नितान्त फीका हो जाता है।

इस दिशा में स्थानकवासियों की प्रगति नहीं वत् ही है। कम से कम मूल आगमों पर आधुनिक शैली में विद्वतापूर्ण एवं संशोधित पद्धति से टीकाओं की नितांत आवश्यकता है।"

उसने अपने ये विचार पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के समक्ष रखे। पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज अपने शिष्य के ये विचार सुनकर कुछ विचार में पडगये। उस समय पं. श्री घासीलालजी महाराज पूज्य श्री की सेवा में ही उपस्थित थे। गुरुदेव को विचारमग्न देखकर पं. मुनिश्री ने गुरुदेव से सनम्र निवेदन किया आप इतने विचार मग्न क्यों हैं? इस पर पूज्यश्री ने फरमाया– यह जो कह रहा है वह सत्य है। हमें हर बात पर मूर्तिपूजकों के टीका ग्रन्थों पर ही आश्रित रहना पडता है। यह हमारे लिए लज्जा जनक है, किन्तु क्या किया जा सकता है। इस पर पं. मुनिश्री घासीलालजी महाराज ने फरमाया– अगर आपकी आज्ञा हो तो मैं यह काम कर सकता हूँ। स्थानकवासी जैन समाज की इस बहुत बडी कमी को दूर करने के लिए मैं अपना सारा जीवन इसी में समर्पण कर दूंगा। केवल मुझे आपके आशिर्वाद की ही आवश्यकता है।

पूज्यश्री ने कहा- अन्धा आंखे ही मांगता है। अगर तुम यह काम कर सकते हो तो फिर समाज को और चाहिए ही क्या? यह काम अगर तुम कर सकते हो तो केवल मेरा या मेरे संप्रदाय का ही नाम उज्ज्वल नहीं होगा बल्कि सम्पूर्ण जैनसमाज का मस्तक गौरव से ऊँचा होगा।,, आगमों पर टीका

लिखना सरल काम नहीं है। इसमें बहुत बड़ी शक्ति बुद्धि और संस्कृतभाषा का असाधारण ज्ञान की आवश्यकता रहती है। इस पर पं. श्री घासीलालजी म० ने कहा—आपका कथन सत्य है। प्रथम मैं दशवैकालिक सूत्र के प्रथम अध्ययन पर टीका लिखकर आपकी सेवा में प्रस्तुत करूंगा। उसे आप देखें। देखने पर आपको अगर मेरी शक्ति पर विश्वास हो तो मुझे आगे कार्य करने की आज्ञा प्रदान करें।,, इस पर पूज्य श्री ने फरमाया—"अच्छा, करो।"

पूज्य श्री का आदेश मिलने पर पं. श्री घासीलालजी महाराज ने दशवैकालिक सूत्र के प्रथम अध्ययन की टीका बनाई और उसे पूज्य श्री की सेवा में पेश की। पूज्य श्री उसे देखकर प्रसन्नता से खिल उठे। उन्होंने कहा—घासीलाल ! तुम मेरी संप्रदाक में एक होनहार सन्त हो। तुम जैसे प्रतिभा संपन्न मुनियों से ही मेरी संप्रदाय का नाम सदा रोशन हो रहा है। तुम्हारी विद्वतापूर्ण टीका को देखकर मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि तुम इस गुरुत्तर कार्य को सुन्दर रूप से पूर्ण कर सकते हो। जाओ ! तुम अपना कार्य प्रारम्भ कर दो। तुम्हारे इस शुभ कार्य में मेरा केवल शुभाशिर्वाद ही नहीं रहेगा बल्कि सक्रिय सहयोग भी रहेगा।

गुरुदेव का शुभाशिर्वाद प्राप्त कर चरितनायक श्री घासीलालजी महाराज ने दशवैकालिक सूत्र के प्रथम अध्ययन पर टीका लिखना प्रारम्भ कर दिया।

पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज सा. ने दूसरे दिन व्याख्यान के बीच आगमों पर स्थानकवासी मान्यता के अनुरूप टीका ग्रन्थों की आवश्यकता पर अधिक भार दिया और समस्थ स्थानकवासी समाज को इस शुभकार्य में आर्थिक सहयोग की अपील की। पूज्य श्री के आह्वान को समाज ने बडे उत्साह के साथ स्वीकार किया और एक ही दिन में आगमोद्धार के लिए तीन लाख रुपये एकत्र कर लिये गये। "समाज हितकारिणी,, नाम की एक विशाल संस्था कायम की।

पं. मुनि श्री घासीलालजी महाराज ने भी बडे उत्साह के साथ कार्य आरंभ कर दिया। महाराज श्री के कार्य में पूरा सहयोग देने के लिए पाँच विद्वानों को नियुक्त किये। इस चातुर्मास काल में आप ने "दशवैकालिक सूत्र पर एवं आवश्य सूत्र पर विद्वता पूर्ण टीका लिख डाली। इसके अतिरिक्त शिवकोष नानार्थोदयसागरकोष, श्रीलालनाममालाकोष, वृत्तबोध, जैनागमतत्त्वदीपिका, तत्त्वप्रदीप, उपदेशशतक, सुभाषित आदि ग्रन्थों की रचना की।

पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज अपने होनहार प्रतिभा सम्पन्न विद्वद्रत्न पं. श्री घासीलालजी म० सा० की इतनी शिघ्रता से ग्रन्थ रचना करने की शक्ति से बडे चमत्कृत हुए। स्वयं भी पंडित मुनि-वर द्वारा रचित ग्रन्थों का अवलोकन करते थे और उपयुक्त सुझाव भी समय-समय पर देकर महाराजश्री का उत्साह बढ़ाते थे। पूज्य श्री जवाहरलालजी म. का पं. घासीलालजी म. पर बडा भारी स्नेह था। वे इनकी हर समये प्रशंसा करते थकते नहीं थे। किन्तु इस प्रशंसा एवं प्रगति को इनके कुछ साथी ईर्षा की दृष्टि से देखने लगे। वे चाहते थे कि यह प्रगति यहीं रुक जाय तो अपना भावी उज्ज्वल रहेगा। वे हर प्रकार से घासीलालजी म. सा. के कार्य में विघ्नडालने में ही आनन्द का अनुभव करने लगे। पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज सा. के उटपटांग बातों से वे उनके कान भरने लगे। पं. मुनि श्री घासीलालजी महाराज इन सब बातों की परवाह किये बिना अपना कार्य किये ही जाते थे। इनमें विरोध सहन करने की अपूर्व शक्ति थी। वे इन विघ्न बाधाओं की जरा भी परवाह नहीं करते। साहस के साथ आगम सम्पादन का कार्य करते ही जाते थे। अन्त में ईर्षा की विजय हो गई। विघ्न संतोषियों को सफलता मिल गई। आगम कार्य कुछ समय के लिए स्थगित हो गया। पूज्य जवाहरलालजी महाराज

साहब भी अपने शिष्यों की इस हरकत से हृदय में बडे दुःखी हुए किन्तु वे भी लाचार थे ।

इस चातुर्मास काल में वाडीलाल मोतीलाल शाह की अध्यक्षता में अखिल भारतीय श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कान्फरन्स एवं भारत जैन महामण्डल का अधिवेशन हुआ । इस अधिवेशन के प्रसंग पर आनेवाले अनेक प्रतिष्ठित सज्जनों से मिलने एवं उनसे विचार विमर्श करने का अवसर आपको मिला । सर मनुभाई मेहता एवं पं. मदनमोहन मालवीयाजी से वार्तालाप का अवसर आपको प्राप्त हुआ

पूज्यश्री जवाहरलालजी म० सा. का यह चातुर्मास अत्यन्त प्रभाव पूर्ण था । इस चातुर्मास काल में निम्नलिखित तपस्त्रियोंने कठोर तपश्चर्या कर शासन की महान प्रभावना की ।

(१) तपस्वी श्री सुन्दरलालजी म० ६० दिन । (२) केसरीमलजी म० ९५ दिन । (३) बालचन्दजी म० २५ दिन (४) महासतिजी श्री गुणसुन्दरजी म० ४० दिन । (५) श्री चम्पाजी म० ने ३६ दिन ।

इनके अतिरिक्त मास खमण १५, ११-८ आदि बहुत सी तपस्याएँ हुई । तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज की तपस्या का पुर भाद्रपद शुक्ला १४ को था और तपस्वी श्री केसरीमलजी महाराज की तपस्या का पुर आश्विन शुक्ला १३ रविवार को था । इन महान· तपस्वियों के दर्शन के लिए हजारों का जन समुदाय उमड पड़ा । अनेक त्याग प्रत्याख्यान हुए । इस प्रकार यह चातुर्मास अनेक दृष्टियों से सफल रहा । चातुर्मास समाप्ति के बाद पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज ने मार्गशीर्ष शुक्ला तृतीया के दिन पं. मुनि श्री घासीलालजी महाराज आदि २९ सन्तों के साथ सद्धर्म का प्रचार करने के हेतु थली प्रान्त की ओर विहार कर दिया । पूज्य श्री के साथ थली प्रान्त के विविध परिषहों को सहन करते हुए आप चातुर्मासार्थ बीकानेर पधारे । और वि. सं. १९८६ का चातुर्मास आपने यहीं व्यतीत किया । इस चातुर्मास काल में वृद्धमुनियों की सेवा करने के साथ साथ साहित्य निर्माण का कार्य भी किया ।

चातुर्मास समाप्ति के बाद पूज्य आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज बिकानेर पधारे । मुनिश्री घासीलालजी महाराज की इच्छा पुनः महाराष्ट्र की ओर जाने की हुई । पूज्यश्री से आज्ञा प्राप्त कर के तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज को साथ में लेकर विहार भी कर दिया । देशनोक गांव में पहुचने पर चरितनायक मुनि श्री को जब ज्ञात हुआ कि पूज्य श्री सुजानगढ पधार रहे हैं । सुजानगढ तेरह पन्थियों का गढ माना जाता था । और उस समय का युग सांप्रदायिक संघर्ष का युग था । पूज्यश्री तेरहपन्थियों के साथ शास्त्रार्थ करने में बडे कुशल थे । जब इन्होंने सुना कि कुछ लोग पूज्यश्री के साथ शास्त्रार्थ करने की योजना बना रहे हैं ऐसी अवस्था में चरितनायकजी को अपनी उपस्थिति अनिवार्य लगी । गुरु भक्ति से प्रेरित होकर आपने भी सुजानगढ की ओर विहार कर दिया । सुजानगढ में पुनः गुरु शिष्य का मिलन हुआ । उस दिन सभो मुनिराजों ने तेला किया निर्विघ्नरूप से कुछ समय सुजानगढ में विराजकर आपने पूज्यश्री की आज्ञा से तपस्वी श्री छगनलालजी महाराज तपस्वी श्री सुन्दरलालजी म० मुनि श्री समीरमलजी महाराज को साथ ले आपने मारवाड की ओर विहार किया । कुचेरा, मेडता होते हुए आप भंवाल पधारे । वहां श्री चान्दमलजी झामड तथा श्री मगनलालजी कोटेचा ने चतुर्मास यहिं विराजने का अत्याग्रह किया । सेठ विजयराजजी मूथा सेठ गंगारामजी की विनती से आप बाल्न्दा पधारे । वहां भी चातुर्मास का अत्याग्रह हुआ । बाल्न्दासे कालु केकीन होते हुए मेढास पधारे । मेढास ठाकुरसाहेब नित्य मुनि श्री के व्याख्यान का लाभ लेते थे । व्याख्यान श्रवण कर ठाकुरसाहब ने बहुत से नियम लिए । मेढास से पिसांगन होते हुए पुष्कर के मार्ग में जंगल में वृक्ष के नीचे रात्रिवास विराजे । प्रतिक्रमण के बाद श्री समीरमुनि को संगीत का अध्ययन मुनि श्री नित्य की तरह कराने लगे । संगीत की स्वरलहरी से जंगल का चारों ओर का भाग गूंज उठा । कुछ दूरी पर एक झोपड़ी थी । समीप में ही कुछ किसान एक

लिखना सरल काम नहीं है। इसमें बहुत बड़ी शक्ति बुद्धि और संस्कृतभाषा का असाधारण ज्ञान की आवश्यकता रहती है। इस पर पं. श्री घासीलालजी म० ने कहा—आपका कथन सत्य है। प्रथम मैं दशवैकालिक सूत्र के प्रथम अध्ययन पर टीका लिखकर आपकी सेवा में प्रस्तुत करूंगा। उसे आप देखें। देखने पर आपको अगर मेरी शक्ति पर विश्वास हो तो मुझे आगे कार्य करने की आज्ञा प्रदान करें। ,, इस पर पूज्य श्री ने फरमाया—"अच्छा, करो।"

पूज्य श्री का आदेश मिलने पर पं. श्री घासीलालजी महाराज ने दशवैकालिक सूत्र के प्रथम अध्ययन की टीका बनाई और उसे पूज्य श्री की सेवा में पेश की। पूज्य श्री उसे देखकर प्रसन्नता से खिल उठे। उन्होंने कहा—घासीलाल ! तुम मेरी संप्रदाक में एक होनहार सन्त हो। तुम जैसे प्रतिभा संपन्न मुनियों से ही मेरी संप्रदाय का नाम सदा रोशन हो रहा है। तुम्हारी विद्वतापूर्ण टीका को देखकर मुझे पूर्ण विश्वास हो गया कि तुम इस गुरुत्तर कार्य को सुन्दर रूप से पूर्ण कर सकते हो। जाओ ! तुम अपना कार्य प्रारम्भ कर दो। तुम्हारे इस शुभ कार्य में मेरा केवल शुभाशिर्वाद ही नहीं रहेगा बल्कि सक्रिय सहयोग भी रहेगा।

गुरुदेव का शुभाशिर्वाद प्राप्त कर चरितनायक श्री घासीलालजी महाराज ने दशवैकालिक सूत्र के प्रथम अध्ययन पर टीका लिखना प्रारम्भ कर दिया।

पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज सा. ने दूसरे दिन व्याख्यान के बीच आगमों पर स्थानकवासी मान्यता के अनुरूप टीका ग्रन्थों की आवश्यकता पर अधिक भार दिया और समस्थ स्थानकवासी समाज को इस शुभकार्य में आर्थिक सहयोग की अपील की। पूज्य श्री के आह्वान को समाज ने बडे उत्साह के साथ स्वीकार किया और एक ही दिन में आगमोद्धार के लिए तीन लाख रुपये एकत्र कर लिये गये। "समाज हितकारिणी,, नाम की एक विशाल संस्था कायम की।

पं. मुनि श्री घासीलालजी महाराज ने भी बडे उत्साह के साथ कार्य आरंभ कर दिया। महाराज श्री के कार्य में पूरा सहयोग देने के लिए पाँच विद्वानों को नियुक्त किये। इस चातुर्मास काल में आप ने "दशवैकालिक सूत्र पर एवं आवश्य सूत्र पर विद्वता पूर्ण टीका लिख डाली। इसके अतिरिक्त शिवकोष नानार्थोदयसागरकोष, श्रीलालनाममालाकोष, वृत्तबोध, जैनागमतत्त्वदीपिका, तत्त्वप्रदीप, उपदेशशतक, सुभाषित आदि ग्रन्थों की रचना की।

पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज अपने होनहार प्रतिभा सम्पन्न विद्वद्रत्न पं. श्री घासीलालजी म० सा० की इतनी शिघ्रता से ग्रन्थ रचना करने की शक्ति से बडे चमत्कृत हुए। स्वयं भी पंडित मुनिवर द्वारा रचित ग्रन्थों का अवलोकन करते थे और उपयुक्त सुझाव भी समय-समय पर देकर महाराजश्री का उत्साह बढ़ाते थे। पूज्य श्री जवाहरलालजी म. का पं. घासीलालजी म. पर बडा भारी स्नेह था। वे इनकी हर समये प्रशंसा करते थकते नहीं थे। किन्तु इस प्रशंसा एवं प्रगति को इनके कुछ साथी इर्षा की दृष्टि से देखने लगे। वे चाहते थे कि यह प्रगति यहीं रुक जाय तो अपना भावी उज्ज्वल रहेगा। वे हर प्रकार से घासीलालजी म. सा. के कार्य में विघ्नडालने में ही आनन्द का अनुभव करने लगे। पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज सा. के उटपटांग बातों से वे उनके कान भरने लगे। पं. मुनि श्री घासीलालजी महाराज इन सब बातों की परवाह किये बिना अपना कार्य किये ही जाते थे। इनमें विरोध सहन करने की अपूर्व शक्ति थी। वे इन विघ्न बाधाओं की जरा भी परवाह नहीं करते। साहस के साथ आगम सम्पादन का कार्य करते ही जाते थे। अन्त में ईर्षा की विजय हो गई। विघ्न संतोषियों को सफलता मिल गई। आगम कार्य कुछ समय के लिए स्थगित हो गया। पूज्य जवाहरलालजी महाराज

साहब भी अपने शिष्यों की इस हरकत से हृदय में बडे दुःखी हुए किन्तु वे भी लाचार थे।

इस चातुर्मास काल में वाडीलाल मोतीलाल शाह की अध्यक्षता में अखिल भारतीय श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन कान्फरन्स एवं भारत जैन महामण्डल का अधिवेशन हुआ। इस अधिवेशन के प्रसंग पर आनेवाले अनेक प्रतिष्ठित सज्जनों से मिलने एवं उनसे विचार विमर्ष करने का अवसर आपको मिला। सर मनुभाई मेहता एवं पं. मदनमोहन मालवीयाजी से वार्तालाप का अवसर आपको प्राप्त हुआ

पूज्यश्री जवाहरलालजी म० सा. का यह चातुर्मास अत्यन्त प्रभाव पूर्ण था। इस चातुर्मास काल में निम्नलिखित तपस्वियोंने कठोर तपश्चर्या कर शासन की महान प्रभावना की।

(१) तपस्वी श्री सुन्दरलालजी म० ६० दिन। (२) केसरीमलजी म० ९५ दिन। (३) बालचन्दजी म० २५ दिन (४) महासतिजी श्री गुणसुन्दरजी म० ४० दिन। (५) श्री चम्पाजी म० ने ३६ दिन।

इनके अतिरिक्त मास खमण १५, ११-८ आदि बहुत सी तपस्याऐं हुई। तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज की तपस्या का पुर भाद्रपद शुक्ला १४ को था और तपस्वी श्री केसरीमलजी महाराज की तपस्या का पुर आश्विन शुक्ला १३ रविवार को था। इन महान· तपस्वियों के दर्शन के लिए हजारों का जन समुदाय उमड पड़ा। अनेक त्याग प्रत्याख्यान हुए। इस प्रकार यह चातुर्मास अनेक दृष्टियों से सफल रहा। चातुर्मास समाप्ति के बाद पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज ने मार्गशीर्ष शुक्ला तृतीया के दिन पं. मुनि श्री घासीलालजी महाराज आदि २९ सन्तों के साथ सद्धर्म का प्रचार करने के हेतु थली प्रान्त की ओर विहार कर दिया। पूज्य श्री के साथ थली प्रान्त के विविध परिषहों को सहन करते हुए आप चातुर्मासार्थ बीकानेर पधारे। और वि. सं. १९८६ का चातुर्मास आपने यहीं व्यतीत किया। इस चातुर्मास काल में वृद्धमुनियों की सेवा करने के साथ साथ साहित्य निर्माण का कार्य भी किया।

चातुर्मास समाप्ति के बाद पूज्य आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज बिकानेर पधारे। मुनिश्री घासीलालजी महाराज की इच्छा पुनः महाराष्ट्र की ओर जाने की हुई। पूज्यश्री से आज्ञा प्राप्त कर के तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज को साथ में लेकर बिहार भी कर दिया। देशनोक गांव में पहुचने पर चरितनायक मुनि श्री को जब ज्ञात हुआ कि पूज्य श्री सुजानगढ पधार रहे हैं। सुजानगढ तेरह पन्थियों का गढ माना जाता था। और उस समय का युग सांप्रदायिक संघर्ष का युग था। पूज्यश्री तेरहपन्थियों के साथ शास्त्रार्थ करने में बडे कुशल थे। जब इन्होंने सुना कि कुछ लोग पूज्यश्री के साथ शास्त्रार्थ करने की योजना बना रहे हैं ऐसी अवस्था में चरितनायकजी को अपनी उपस्थिति अनिवार्य लगी। गुरु भक्ति से प्रेरित होकर आपने भी सुजानगढ की ओर विहार कर दिया। सुजानगढ में पुनः गुरु शिष्य का मिलन हुआ। उस दिन सभी मुनिराजों ने तेला किया निर्विघ्नरूप से कुछ समय सुजानगढ में विराजकर आपने पूज्यश्री की आज्ञा से तपस्वी श्री छगनलालजी महाराज तपस्वी श्री सुन्दरलालजी म० मुनि श्री समीरमलजी महाराज को साथ ले आपने मारवाड की ओर विहार किया। कुचेरा, मेडता होते हुए आप भंवाल पधारे। वहां श्री चान्दमलजी झामड तथा श्री मगनलालजी कोटेचा ने चतुर्मास यहिं बिराजने का अत्याग्रह किया। सेठ विजयराजजी मूथा सेठ गंगारामजी की विनती से आप बालून्दा पधारे। वहां भी चातुर्मास का अत्याग्रह हुआ। बालून्दासे कालु केकीन होते हुए मेढास पधारे। मेढास ठाकुरसाहेब नित्य मुनि श्री के व्याख्यान का लाभ लेते थे। व्याख्यान श्रवण कर ठाकुरसाहब ने बहुत से नियम लिए। मेढास से पिसांगन होते हुए पुष्कर के मार्ग में जंगल में वृक्ष के नीचे रात्रिवास बिराजे। प्रतिक्रमण के बाद श्री समीरमुनि को संगीत का अध्ययन मुनि श्री नित्य की तरह कराने लगे। संगीत की स्वरलहरी से जंगल का चारों ओर का भाग गूंज उठा। कुछ दूरी पर एक झोपड़ी थी। समीप में ही कुछ किसान एक

कुँए पर बैठे बातें कर रहे थे । किसानों के कानों पर वह संगीत स्वर पहुँचा । किसानों ने विचारा अपने खेत में कोई अतिथि रुके हुए है, वहां न पानी हैं और न भोजन । अपने खेत के अतिथि भूखे प्यासे रहे यह अपने लिए शोभास्पद नहीं है । इस लिए चलें वहां भोजन पानी लेकर जावें । वह युग कितना पवित्र और अतिथि के प्रति आदर रखने वाला था । वर्तमान में पास पडोस का अतिथि भूखा प्यासा मर भी जाय तो भी परवाह नहीं । चिन्ता नहीं । और वे पुरातनी किसान । अपने खेत के दूरस्थ अतिथि को भोजन पानी देने रवाना हुए । शब्दवेधी बाण छोडनेवाले पृथ्वीराज की तरह वे किसान भी संगीत की ध्वनि जिधर से आ रही थी उसी दिशा की ओर बढते हुए महाराज श्री के पास पहुंच ही गये । दूर से आवाज दी यहाँ कौन ठहरे हुये हैं । तपस्वी सुन्दरलालजी महाराज बोले भाई, हम लोग जैन साधु हैं ।

जैन साधु हैं, यह जानते ही वे बिलकुल पास में आये और कहा महाराज आप यहां क्यों ठहरे हैं यहां न गांव है न बस्ती । मुनि श्री ने कहा सूर्यास्त हो जाने से हम यहीं ठहर गए । उन्होंने फिर कहा ऐसी अन्धेरी सुनसान रात्रि में आपको डर नहीं लगता । महाराज श्री ने कहा हम डर जैसी कोई वस्तु अपने पास नहीं रखतें इसलिए हमें किसी का डर नहीं लगता ।

किसान बोले महाराज, आप भूखे-प्यासे होगे ? हम आपके गायन की आवाज सुन कर भोजन पानी लाए हैं । मुनि श्री ने कहा-हम जैन मुनि रात में कुछ भी खाते पीते नहीं । तुम्हारी भक्ति प्रशंसनीय है । किसान बोले—आप हमारे खेत में भूखे प्यासे सोजाओगे तो हमें पाप लगेगा । आपको तो थोड़ा भी लेना पडेगा, हमारा आग्रह है मान जाओं । मुनि श्री ने कहा तुम वहां से श्रद्धा भावना से आये हो तो तुम्हें अपनी पवित्र भावना का लाभ मिल गया, हम रात को खाते पीते ही नहीं । तुम आये होतो सत्संग का लाभ ले लो । मुनि श्रीने तपस्वी श्रीसुन्दरलालजी महाराज को उपदेश देने की आज्ञा दी । तपस्वीजी ने उन्हें कथा सुनाई । कथा सुनकर प्रसन्नचित्त से वे अपने स्थान पर गए । प्रातः आपने विहार कर दिया । आप पुष्करजी पधारे । वहां कुछ दिन विराज कर अजमेर पधारे । वहां सेठ गाढमलजी लोढा की कोठी में बिराजे । व्याख्यान के लिए प्रतिदिन शहर में पधारते ।

उस अवसर पर ब्यावर से सेठ श्रीचन्दजी अब्बाणी आदि ४-५ गृहस्थ ब्यावर पधारने की विनती करने आये । श्रावकों को विनती मानकर आप ब्यावर पधारे । ब्यावर संघ ने बडी श्रद्धा और भव्य स्वागत के साथ नगर प्रवेश कराया ।

उदयपुर संघ चातुर्मास की विनती लेकर ब्यावर आया । ब्यावर संघ ने भी महाराज श्री को चातुर्मास की विनंती की । किन्तु उदयपुर संघ का आत्याग्रह होने पर एवं आचार्यश्री की आज्ञा मिलने पर आपने आगामी चातुर्मास उदयपुर करने की विनती मान ली

ब्यावर से विहार कर छोटे बडे क्षेत्रों को पावन करते हुए आप भिलवाडा पधारे । वहां नथमलजी नागोरी की बगीची में बिराजना हुआ । व्याख्यान के लिए दर रोज गांव में पधारते थे । वहां से गंगापुर वाले श्री राजमलजी दीपुलालजी शंका की विनती पर आप गंगापुर पधारे । प्रतिदिन आप के बाजार में व्याख्यान होनेलगे । व्याख्यान का जनता पर बड़ा अच्छा प्रभाव पडा । गंगापुर से पोटला, जितास, रेलमगरा होते हुए मावली पधारे । श्री फौजमलजी कोठारी के आग्रह से तीन व्याख्यान दे कर आप खेमली पधारे । यहां ५०-५० व्यक्ति उदयपुर से आपके दर्शनार्थ पधारे । वहां से आप गुडली होते हुए उदयपुर पधारे । गुडली से उदयपुर तक पधारते हुए मार्ग में उदयपुर के श्रावक श्राविकाओं का तांता लगा रहा था ।

वि. सं. १९८७-८८ का चातुर्मास उदयपुर में

तीन वर्ष तक बीकानेर और थली प्रांत के क्षेत्रों को पावन करने के बाद आपने पूज्यश्री के आदेश

से मेवाड प्रान्त की ओर विहार किया । विहार काल में आपश्री ने जहां कहीं चरण रखें वहां के प्रायः सभी नर–नारियें आपके सदुपदेशों से लाभान्वित होकर दुःख–दर्दो में सदैव शान्ति का अनुभव करनें लगे । अपने ओजस्वी और तेजस्वी भाषणों के बल पर मेवाड प्रान्त में अनेक स्थानों पर अहिंसा धर्म का प्रचार कर आपने जैन संस्कृति का महान प्रसार किया । मेवाड प्रान्त के अधिकांश स्थानों में जीव हिंसा बन्द करवा कर आप ने जैन संस्कृति की महान सेवा की !

इस प्रकार मेवाड प्रान्त के विविध क्षेत्रों को पावन करते हुए आप चातुर्मासार्थ उदयपुर पधारे । आपके आगमन से उदयपुर के नगर निवासियों को तो इतनी प्रसन्नता हुई कि उसे शब्द बद्ध नहीं किया जासकता । अत्यन्त प्रसन्नता से उनके रोम–रोम विकसित हो गये । उदयपुर के श्रीसंघ ने आपके शुभा-गमन से उत्साह पूर्वक हर्ष मनाया । इसे एक प्रकार से महाराजश्री का वरदान ही समझना चाहिये कि मेवाड प्रान्त के क्षेत्रों का आपश्री के द्वारा चरण स्पर्श करने के बाद लोगों में अधिक से अधिक धर्म भावना जागृत हुई । चातुर्मास काल में आपके प्रभावशाली व्याख्यान होने लगे । व्याख्यान के समय जैन धर्मी श्रावक श्राविकाओं के अतिरिक्त इतर जनता बडी संख्या में उपस्थित्त होती थी, विशालधर्म स्थानक होते हुए भी व्याख्यान के समय जनता को बैठने के लिए स्थानाभाव प्रतीत होने लगा । आपके साथ तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज जैसे तपस्वीरत्न थे । फलस्वरूप लोगों के हृदय में तपस्या की अभि-रुचि बढने लगी । तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने निमानुसार लंबी तपश्चर्या प्रारम्भ कर दी ।

आपके प्रवचन में प्रतिदिन राज्यकर्मचारी सैकडों की संख्या में उपस्थित होते थे । उनमें महाराणा भूपालसिंहजी साहब के प्रियपात्र दिवान सा. श्री तेजसिंहजी सा. प्रमुख थे। आपने महाराजश्री के उपदेश से सम्यक्त्व ग्रहण की । एक दिन की घटना है कि महाराणा भूपालसिंहजी के दिवान एवं धर्म निष्ठ श्रावक श्री बलवन्तसिंहजी कोठारी नगर सेठजी श्री नन्दलालजी बाफणा श्रीमान् सेठ श्री फोजमलजी सा. जुहारमलजी बोर दिया । तथा अन्य कुछ प्रमुख श्रावक महाराज श्री की सेवामें बैठे हुए थे । विविध विषयों की चर्चा के साथ साथ आगम ग्रन्थों की भी चर्चा निकली । महाराज श्री ने आगम ग्रन्थों की महत्ता को समझाते हुए आगम ग्रन्थों की आधुनिक शैलो से सम्पादन एवं उनकी नूतन टीका की आवश्यकता बताई । कोठारी जी बडे विचक्षण और वस्तुतत्त्व को समझने वाले महान बुद्धिमान दिवान थे, महाराजश्री के विवेचन का इन पर बडा गहरा असर पडा । वे अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा में बोल उठे–"गुरुदेव ! आप आगमों पर टीका रचने का कार्य पुनः प्रारम्भ कर दें । इससे समाज का बडा भारी उपकार होगा । शुभकार्य में मैं एक हजार रुपया देता हूँ । श्रीमान् जुहारमलजी सा. बोरदियाजी भी समीप में ही बैठे थे उनका भी उत्साह बढा और उन्होंने भी एक हजार रुपया देने की घोषणा की । पास में अन्य सज्जन भी उपस्थित थे उन्होंने भो यथाशक्ति इरु शुभ कार्य में धनराशि प्रदान की । इन महानुभावों की सत्प्रेरणा से महाराज श्री का उत्साह बढ गया और आपने आगामों पर टीका लिखने का कार्य प्रारम्भ कर दिया । अनवरत परिश्रम करके चातुर्मास के बीच आपने उपासकदशांग सूत्र पर गृहस्थ धर्म संजीवनि–नामक टीका की रचना की । इसके अतिरिक्त तत्त्व प्रदीप गृहस्थ धर्म कल्पतरु ऐवं लक्ष्मीधर चरित्र प्राकृत भाषा में तैयार किया । हिन्दी कविता भाषा सहित अर्थ छाया भी साथमें दिगइ है

तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज नें ६४ दिन की सुदीर्घ तपस्या की । इस तपस्या की पूर्णाहुति के दिन सम्पूर्ण मेवाड राज्य में अगता रखा गया । उस दिन समस्त राज्य में जीवहिंसा बन्द रही । हजारों मूक–प्राणियों को अभयदान मिला । श्रावकों ने विविध प्रकार के त्याग–प्रत्याख्यान किये और अन्य धार्मिक कार्य किये । कई कसाई भाईयां ने हिंसा–वृत्ति का त्याग कर जीवन सुधारा । जीवन के लिए तपस्या

एक अमोघ शक्ति है । जैन धर्म में तप की महिमा का विशद वर्णन मिलता है और वह धर्म का प्रधान अंग माना गया है । हमारे चरितनायकजी ने उस दिन तपस्या के विषय में अत्यन्त मार्मिक और प्रभाव पूर्ण उपदेश दिया । उनके निम्न लिखित वाक्य आज भी अन्तः करण में बीजली का संचार कर देते हैं ।—

"सम्यक् दर्शन सम्यग् ज्ञान और सम्यक् चारित्र को मोक्ष का मार्ग बताया गया है । प्रश्न यह रहा कि इस त्रिविध मार्ग (रत्नत्रय) से आत्मा का भावी कर्म बन्ध को रोक सकता है किन्तु उसके संचित कर्मों से मुक्ति किस प्रकार मिल सकेगी ? संचित कर्म से मुक्ति के दो ही मार्ग हो सकते हैं या तो उसे भोग लिया जाये या किसी अन्य प्रकार से उसका नाश किया जाये । तात्पर्य वह है कि नवीन कर्म बन्ध को रोकना तो 'संवर' के द्वारा हो सकता है किन्तु संचित का क्षय चारित्र से कैसे होगा ? इस प्रश्न के जवाब में कहा—संचित का क्षय निर्जरा से होता है और निर्जरा का मार्ग केवल 'तपस्या' है । 'तप' एक प्रकार का साधन है जिससे संसारी जीव अपने संचित कर्मों का नाश करके आत्मा की शुद्ध बुद्ध अवस्था प्राप्त कर सकता है । 'तप' एक प्रकार की अग्नि है । जैसे मलीन सुवर्ण अग्नि में तप कर उज्ज्वल होता है, वैसे ही तप रूप अग्नि से पूर्व संचित कर्म नष्ट होकर जीवन शुद्ध, बुद्ध एवं पवित्र हो जाता है । भगवान ने यही कहा है—

चरित्तेण निगिण्हाइ तवेण परिसुज्झइ"

अर्थात् चारित्र से नये कर्मों का निग्रह होता है और तप से संचित कर्म क्षय हो कर आत्मा शुद्ध होती है । कहा भी है—

जहा महातलागस्स, सन्निरुद्धे जलागमे । उस्सिंचणाए तवणाए कमेण सोसणा भवे ॥१॥
एवं तु संजयस्सवि पावकम्म निरासवे । भव कोडी संचियं कम्म तवसा निज्जरिज्जइ ॥२॥

जैसे किसी बडे जलाशय में जल का आय-मार्ग रोक दिया जाने पर पहले का संचित पानी कुछ सूर्य के ताप से और कुछ सिंचाई आदि में लगाकर क्रमशः सूख जाता है । वैसे ही संयम, शील पुरुष के पापकर्म का आश्रव रुक जाने पर करोडों भवों का भी संचित कर्म तप से क्षीण हो जाता है ।

तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने लम्बी तपश्चर्या कर मुनिसमाज में एक ऊंचा त्याग का आदर्श स्थापित किया है । एसे सन्त के चरण जिस धूली पर पडते हैं वह धूल भी पवित्र हो जाती है। हम तपस्वीजी जैसी लम्बी तपश्चर्या नहीं कर सकते किन्तु यथा शक्ति जितना त्याग हो सकता है उतना तो करना चाहिए । महाराज श्री के प्रवचन का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा । लोगों ने बडी मात्रा में त्यागप्रत्याख्यान ग्रहण किये । समस्त नगर का उस दिन का वातावरण धर्ममय बन गया था । सामायिक, दया, पौषद तो बडी संख्या में हुए । तपस्वी जी की तपश्चर्या की पूर्णाहुति के दिन गरीब लोगों को चार-चार लड्डू और पुरियों की प्रभावना दी गई । जेल के कैदियों को मिष्ठान्न भोजन दिया गया । अनेक दान पुण्य के कार्य भी उस दिन हुए । उदयपुर के कत्लखाने दो दिन बंद रहें ।

इस चातुर्मास काल में पं० श्री कन्हैयालालजी महाराज को वैराग्य प्राप्त हुआ । आपका संक्षिप्त परिचय पाठकों की जानकारी के लिए दे रहा हूँ ।

पं मुनि श्री कन्हैलालजी महाराज का जीवन परिचय

जन्मस्थान व वंश परिचय

राजस्थान की वीर भूमी मेवाड के अन्तर्गत गुडली नामका एक गांव है । यह उदयपुर से १० मील पर है । चारो ओर से छोटी छोटी पहाडियों से घिरा हुआ रमणीय स्थान है। बडा धर्म प्रिय क्षेत्र है ।

यहां ओसवाल जातीय बाघरेचा गोत्रीय श्री अमरचन्दजी नामक एक धर्मनिष्ठ सद्‌गृहस्थ रहते थे। उनकी पत्नी का नाम श्रीमती गम्भीर बाई था।

पति पत्नी दोनों ही धार्मिक आचार विचार के जानकार शान्तस्वाभावी थे; प्रतिदिन सामायिक प्रतिक्रमण करना, साधु सन्तों के प्रवचनों का लाभ लेना, रात्री भोजन के त्याग, आठ वनस्पति के सिवाय सर्व त्याग, कंदमूल का त्याग और नीति पूर्वक धन उपार्जन करना इन दोनों का दैनिक क्रम था। इस प्रकार धार्मिक जीवन व्यतीत करते इनके मगनलालजी छगनलालजी नामके दो पुत्र हुए। इसके पश्चात् वि०सं० १९७६ आसोज सुदी चौदस को एक पुत्र काजन्म हुआ। इसकी तेजस्वीता, मनोहर वदन शरीर की चपलता, सहन शीलता इत्यादि लक्षण स्वाभाविक रीति से ऐसी सूचना देते थे। कि यह बालक भविष्य में उच्च कोटिका सन्त बनेगा। बालक का नाम कन्हैयालाल रखा गया। माता पिता के परम वात्सल्य से इस बालक का लालन पालन होने लगा। कुछ काल के बाद श्रीमती गम्भीरबाई ने एक पुत्री को जन्म दिया उसका नाम चौथीबेन रखा गया। इसके बाद पुनः एक पुत्र ने जन्म लिया जिसका नाम खूबीलाल रखा गया। बादएक पुत्री भी जन्मी किन्तु जी न सकी! उस पुत्री के साथ माता का स्वर्गवास भी हो गया।

इन अनमोल रत्न को पाकर दम्पतो निहाल हो गये। चार पुत्र एवं एक पुत्री को पाकर उनके हर्ष की सीमा न रही। बाल सुलभ चेष्टाओं से एवं अपनी सुकुमार सुन्दर मुखाकृतियों से ये अपने माता पिता को आनन्दित करने लगे। माता-पिता के प्रेम के साथ साथ बालकों को सुन्दर सुन्दर संस्कार भी प्राप्त होने लगे। बचपन में प्राप्त होने वाले संस्कारों का जीवन के निर्माण में बहुत बडा हाथ होता हैं। बालक के द्वारा ग्रहण किए हुए संस्कारों के अनुसार उसका भावी जीवन बनता है। कन्हैयालालजी बालक थे तब अपनी माता-पिता के साथ स्थानक में साधु साध्वियांजी के व्याख्यानों को सुनने जाया करते थे। बालक कन्हैयालाल अपनी धर्म परायणा एवं मुमुक्षु माता एवं पिता के पास धार्मिक एवं व्यवहारिक शिक्षा प्राप्त करते करते नौ वर्ष के हो गये!

उसी समय आपके जीवन को दूसरी दिशा की ओर मोडने वाली एक घटना हुई। विक्रम सं, १९८७ के साल में पंडित प्रवर षोडशभाषाविशारद प्रखरवक्ता हमारे चरितनायक श्री घासीलालजी महाराज अपने शिष्य परिवार के साथ मेवाड की मुख्य राजधानी उदयपुर में चातुर्मास बिराज रहे थे।

वे जन-मानस को अच्छी तरह जानते थे इनके व्याख्यान बडे प्रभावशाली एवं रोचक होते थे। छोटे से लगाकर बडे तक सब उनके व्याख्यान को रुचिपूर्वक सुनते थे। उनके व्याख्यान से किसी को भी अरुचि नहीं होती थी। महाराज श्री के प्रवचन उदयपुर में होने लगे। बडी संख्या में उदयपुर की जनता महाराज श्री का प्रवचन सुनने लगी। बालक कन्हैयालाल भी अपने पिता के साथ महाराजश्री का व्याख्यान सुनने लगे। महाराजश्री का बालकों पर बडा स्नेह था जब उनके पास कोई बालक आता तो उसे आप बडे स्नेह से अपने पास बैठाते, नवकार मंत्र सीखाते एवं छोटी-छोटी धार्मिक कहानियों से उन्हें धार्मिक ज्ञान देते। दूसरे बालकों के साथ कन्हैयालाल भी महाराज श्री की सेवा में बैठते और उनकी बातें बडे ध्यान पूवक सुनते।! शान्त दान्त और परमक्रान्त मुनिश्री का उपदेश सुनते-सुनते बालक कन्हैयालाल के मन में भक्ति की लहर दौड गई। मुनियों की भव्यता, दयालुता और तप का तेज भव्य आत्माओं को आकर्षित कर ही लेते हैं। कुछ दिन तक कन्हैयालाल महाराजश्री का उपदेश श्रवण करता रहा और उनके चरणारविन्दो में अपनी श्रद्धा भक्ति के पुष्प चढाता रहा। महाराजश्री के सानिध्य से एवं वैराग्य पूर्ण उपदेश से इनके हृदय में संसार के प्रति उदासीनता और संयम की प्रति अभिरुचि पैदा हो गई। आपने एक दिन अवसर पाकर पिता के समक्ष दीक्षा ग्रहण करने के विचार प्रगट किये।

शिशु–मानस के इन विचारों से बुद्धिमान सोच सकते हैं कि भविष्य में अभ्युदय करने वाले महान् आत्माओं के अध्यवसाय भी उच्च कोटि के और प्रशस्त होते हैं। इस शिशु के अध्यवसाय भी अनित्य सुख को छोडकर शाश्वत सुख प्राप्ति की ओर दोडे और संयम ग्रहण करने के लिए उत्सुक हो उठे। संयम की ओर आपकी ऐसी उत्कट प्रवृत्ति देख आपके मध्यम भ्राता छगनलालजी भी आपके साथ संयम अंगीकार करने के लिए कटिबद्ध हो गये।

पूर्व संचित शुभकर्मों के कारण आपश्री में जन्मजात वैराग्य भावना थी। फलस्वरूप गुरुदेव के प्रथम दर्शन से ही आप वैराग्य के रंग में पूर्ण रंग गये। पूरे दश वर्ष होने के पूर्व ही तलवार की धार पर चलने के समान कठिन संयम मार्ग को स्वयं की प्रेरणा से धारण करने के लिए तैयार हो गये। इसके लिए किसी को विशेष उद्बोधन करने की आवश्यकता नहीं हुई। आपके इस वैराग्य पद से आपके पिता चौंक उठे। अत्यन्त छोटी उमर के पुत्र होने से पिता की ममता इन्हीं पर अधिक थी। इधर छगनलालजी एवं केन्हैयालालजो दोनों जब वैराग्य पथ के पथिक बनने लगे तो पिता पुत्र के स्नेह वश विचलित हो गये। उन्होंने दोनों को कह दिया। कि हम तुम्हें दीक्षा की आज्ञा नहीं देंगे। महाराज श्री चातुर्मास विराज कर उदयपुर से विहार करने लगे तो वैरागी कन्हैयालालजी भी महाराजश्री के साथ चलने तैयार हो गया। महाराजश्री ने विहार किया तो कन्हैयालाल भी कपडों की थेली लेकर महाराजश्री के साथ हो गया। पिता ने रोकने का खूब प्रयत्न किया किन्तु उस समय उन्हें सफलता नहीं मिली।

ग्रामानुग्राम विचरण करते हुए आप महाराज श्री के साथ रहने लगे। वि. सं, १९८७ का चातुर्मास महाराजश्री ने उदयपुर में ही व्यतीत किया।

श्री मान् अमरचन्दजी सा. बागरेचा आनन्द पूर्वक गृहस्थी का धंधा चलाये जा रहे थे। उन्हें किसी प्रकार की चिन्ता नहीं थी। मात्र ऐक ही चिन्ता थी कि उनका प्रिय पुत्र मुनि बनने की धुन में था। इसलिए वे प्रयत्नशील थे कि वह मुनि न बनने पाए। उन्हें सफलता पाने की पूरी पूरी आशा थी और इसी आशा के भरोसे कन्हैयालाल को वापस घर लाने के प्रयत्न प्रारम्भ कर दिये। वे एक दिन उदयपुर आये ओर कन्हैयालालजी को समझाने लगे। बहुत लम्बी पिता–पुत्र में बात चीत चली। काफी कडा संघर्ष हुआ किन्तु कन्हैयालाल दबने वाला बालक नहीं था। उन्होंने पिता की दलीलों का सप्रमाण उत्तर दिया!

समझाने और प्रेमभाव से जब कन्हैयालाल घर आने को तैयार नहीं हुआ तो अब कन्हैयालाल के साथ कठोर वर्ताव होने लगा। असफल मनुष्य जब क्रुध होता है तब वह दण्ड देने पर उतर आता है। अमरचन्दजी साहब और दूसरे सहयोगियों ने मिल कर उन्हें उठाया और, घोडे पर बान्धकर जबरदस्ती घर ले आये। यहां उन्हें मारा पीटा और भूखा रखा। कोठे में बन्द रखकर ताला जड दिया जाता। एक के बाद एक नयी से नई यातनाओं का सिल सिला शुरु हो गया। कभी तो इन्हें झाड से बान्ध दिया जाता था। एक दिन अवसर देखकर ये घर से भाग निकले। मध्य रात्रि का समय था। चारों ओर गहन अन्धकार था। सुनसान जंगल। आस पास मनुष्य की छाया तक नहीं। सब ओर भय का साम्राज्य अज्ञात पशु पक्षियों के अवाज से भय उत्पन्न होता था। वर्षा की ऋतु थी। काले बादल आकाश में गर्ज रहे थे ओर बीच बीच में बिजलियां चमक रही थी। परन्तु देखिए यह वैरागी बालक गुरुदेव के दर्शन करने की उत्कृष्ट भावना से निर्भय और निष्कम्प अपने मार्ग पर बढा चला जा रहा है। पूर्ण त्याग की उच्च भूमिका पर आरुढ़ होने के लिए। इन्हें कबीर की यह वाणी मार्ग प्रदर्शन कर रही थी—

लम्बा मारग, दूरधन्, विकट पंथ बहुमार। कहत कबीर कस पाईये, दुर्लभ गुरु दीदार

ये जानते थे कि गुरु दर्शन, संसार की सबसे बडी दुर्लभ वस्तु है । दुर्लभ वस्तु की प्राप्ति के लिए कष्ट सहने ही होते हैं । जो कष्टों से घबराकर वापस लौट गयां, वह लौट गया, उसका भोग्य लौट गया । प्रभु मार्ग शूरवीरों के लिए है कायरों के लिए नहीं ।

प्रभु नो मारग छै शूरानो । नहीं कायर नो काम जोने ॥

भोला भाला मनुष्य समझता है कि संसार के भौतिक पदार्थों में ही सुख है । यदि इन्हीं वस्तुओं में सुख होता तो प्रभु महावीर जैसे महापुरुष क्यों कठोर त्याग का दुर्गम पथ अपनाते ? वे क्या सुख भोगना नहीं जानते थे ? उन्हें संसार की दृष्टि से सब कुछ प्राप्त था । फिर भी सब छोड कर भाग निकले । आध्यात्मिक सुख के समक्ष उन्हें सांसारिक सुख विष स्वरूप मालूम दिया । वैरागी साहसीक बालक कन्हैयालाल भी उन्हीं के पथ पर चलेजा रहा है । प्रकृति का उपद्रव अपनी पूरी ताकत के साथ प्रतिरोध उत्पन्न कर रहा था । परन्तु विघ्नों को कुचल कर आगे बढ़ना ही वीरत्व की मौलिक परिभाषा है । वीर पुरुष जब अपने मन में कोई निश्चय कर लेता है तो फिर असम्भव को भी सम्भव कर दिखाता है । अन्त में विविध मार्ग की कठिनाइयों को सहते हुए आप गुरु देव की सेवा में पहुँच ही गये । और गुरु चरणों में वन्दन कर दीक्षा देने के लिए निवेदन किया । महाराज श्री ने उत्तर में कहा—माता पिता की आज्ञा लाये हो ?

बालक ने कहा आज्ञा तो नहीं मिली किन्तु मैं तो घर से भाग कर आप की सेवा में आया हूँ । महाराज श्री ने कहा—जब तक मात पीता की आज्ञा नहीं मिलेगी तब तक दीक्षा नहीं हो सकती । बालक ने कहा—आज्ञा मिले या न मिले । अब मैं वापस लौटकर नहीं जाऊंगा गुरुदेव ! दीक्षा दीजिए । मन आकुल हो गया है । अब मैं अधिक समय प्रतीक्षा नहीं कर सकता । महाराजश्री ने दृढता के साथ कहा—यह नहीं हो सकता । शास्त्र का नियम है हम उसका उल्लंघन नहीं कर सकतें । कुछ भी हो, पहले आज्ञा प्राप्त करो फिर दीक्षा की बात होगी । तुम इस समय मेरे पास रहकर अध्ययन कर सकते हो ? बालक वहीं रहगया । उदयपुर के प्रतिष्ठित श्रावकों ने पत्र द्वारा कन्हैयालालजी के उदयपुर आने की सूचना उनके पिता को कर दी । अमरचन्दजी पत्र पाते ही उदयपुर दोड आये । उन्हें प्रसन्नता थी की चलो कन्हैयालाल ठिकाने पर तो पहुँचगया अन्यथा वे इस चिन्ता में थे कि न मालूम कहाँभटकता होगा । भूख प्यास और सर्दी गर्मी की क्या क्या कठिनाइयां भोग रहा होगा ?

दीक्षा की बात चली । पिता पूत्र लम्बी लम्बी चर्चा करते रहें । श्रीमान् दिवान सा. श्री बलवन्तसिंहजी सा० कोठारी एवं नगर सेठ श्री नन्दलालजी बाफना मोतीलालजी हिंगड फोजमलजी जवाहिरलालजी बोरदिया नंदलालजी महेता आदि ने एवं महाराजश्री ने अमरचन्दजी साहब को समझाना शुरु किया । उदयपुर के ये श्रावक बडे चतुर थे । अनेक युक्तियों प्रयुक्तियों से वे अमरचन्दजी को समझाने में सफल हुए अन्त में उन्होंने स्नेह भरे शब्दों में दीक्षा की आज्ञा प्रदान कर दी । अब क्या था उदयपुर के जैन संघ में एवं वैरागी कन्हैयालाल के हृदय में हर्ष की लहर दौड गई ! उल्लास का पार न रहा । धूम धाम से दीक्षा महोत्सव करने की योजना बनने लगी, श्रीमान् बलवन्तसिंहजी एवं श्री नन्दलालजी सा. बाफना नगर सेठ ने उदयपुर में ही दीक्षा दिलवाने का प्रयत्न प्रारंभ कर दिये । किन्तु अच्छे काम में हजार विघ्न-बाधाएं आती हैं । तदनुसार वैरागी कन्हैयालालजी बालक होने के नाते इनकी दीक्षा में भी अनेक विघ्न बाधाओं की संभावना थी । उस समय उदयपुर के प्राइमिनिस्टर श्रीसुखदेव प्रसादजी थे । वे बालदीक्षा के कट्टर विरोधी थे । अतः उदयपुर का संघ इस बात को अच्छी तरह जानता था कि श्री सुखदेवप्रसादजी बालक कन्हैयालालजी की दीक्षा में आवश्य बाधक सिद्ध हो सकते हैं । अतः उदयपुर के संघने इस दीक्षा

को अपने यहां करने में विघ्न का अनुभव किया। चातुर्मास समाप्ति के बाद आपने सादडी (मारवाड़) की ओर विहार कर दिया। गोगुंदा तरपाल आदि क्षेत्रों को पावन करते हुए आप जसवन्त गढ पधारे। अनेक गांवों का संघ महाराज श्री के दर्शन के लिए जसवन्तगढ आया और बालक कन्हैयालालजी की दीक्षा के लिए आग्रह करने लगे। उस समय सादडी का श्री संघ भी उपस्थित हुआ। सादडी संघ ने महाराज श्री से निवेदन किया की वैरागी कन्हैयालालजी की दीक्षा हमारे यहां हो ऐसी प्रार्थना हैं। महाराज श्री ने श्रावक के अनुरोध को स्वीकार कर पं मनोहरलालजी महाराज एवं तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज को श्री कन्हैयालालजीं को दीक्षा देने के लिए सादडी की ओर विहार करने की आज्ञा दे दी। महाराज श्री की स्वीकृति मिलते सब लोग बडे उत्साह से दीक्षा महोत्सव की तैयारी में जुट गये। महाराज श्री की आज्ञा प्राप्त कर वैरागी कन्हैयालालजी को साथ में लेकर मुनिद्वय ने सादडी की ओर विहार कर दिया।

पं० मुनि श्री मनोहरलालजी एवं तपस्वी रत्न श्री सुन्दरलालजी महाराज सादडी पधारे तो श्री संघ ने उनका भव्य स्वागत किया। दीक्षा की जोरदार तैयारियां प्रारंभ कर दी। सर्वत्र पत्र पत्रिकाओं द्वारा सूचना दे दी गई। इस दीक्षा के महामहोत्सव का समस्त खर्च की जिम्मेवारी श्रीमान् सरदारमलजी मूथा अनोपचन्दजी पुनमिया, ताराचन्दजी, सागरमलजी, जवारमलजी, जवानमलजी आदि श्रावकों ने ले ली। वैशाख शुक्ला तृतीया सं० १९८८, के शुभ दिन का उदय हुआ। सादडी में बडे उत्साह पूर्वक दीक्षा महोत्सव मनाया गया। इस मंगलकार्य में सम्मलिन होकर अपने को कृतार्थ करने के लिए उदयपुर गोगुन्दा आदि आस पास के ग्रामों के करीब पांच छ हजार का विशाल जन समुदाय एकत्रित हुआ। वैरागी कन्हैयालालजी के पिताजी भाई आदि समस्त परिवार उपस्थित हुआ। किन्तु पं० मुनि श्री घासीलालजी महाराज की अनुपस्थिति उन्हें खटकी। उन्होंने तपस्वी महाराज से पूछा—पं० श्री घासीलालजी महाराज दीक्षा पर क्यों नहीं पधारे ?

तपस्वीजी ने कहा—महाराज श्री किसी को भी अपने हाथ से दीक्षा नहीं देते किन्तु उनकी संपूर्ण आज्ञा से ही यह दीक्षा हो रही है। इस पर कन्हैयालालजी के पिता ने कहा जब तक महाराज श्री जी दीक्षा में न पधारे तब तक मैं दीक्षा की आज्ञा नहीं दूंगा। स्थानीय संघ ने एवं तपस्वीजी म० ने उन्हें खूब समझाया। अन्त में यह निर्णय हुआ की यदि पं० मुनि श्री घासीलालजी महाराज कन्हैयालाल को अपना शिष्य स्वीकार करने को तैयार हो तो मै आज्ञा दे सकता हूँ। अन्त में यह बात स्वीकार की गई। पिताजी एवं भाइयों की आज्ञा मिलने पर वैरागी कन्हैयालालजी बडे विशाल जन समुदाय के ही साथ दीक्षा स्थान पर पहुंचे। पं. श्री मनोहरलालजी महाराज ने दीक्षा का पाठ सुनाया। और शिखाका लोच किया। श्री कन्हैयालालजी दीक्षित होगये। कन्हैयालालजी को महाराजश्री की नेश्राय का शिष्य घोषित किया गया। दीक्षा लेने के समय मुनिश्रीकन्हैयालालजी की अवस्था केवल ग्यारह वर्ष की थी। सादडी दीक्षा समारोह पूर्ण कर पं० मुनि श्री मनोहरलालजी महाराज ने तपस्वीजीम. मुनी श्री कन्हैयालालजी महाराज को साथ लेकर जसवंतगढ की ओर विहार करदिया। जसवंतगढ महाराज श्री की सेवा में पधारगये। नवदीक्षित कन्हैयालालजी महाराज को देखकर महाराज श्री खूब प्रसन्न हुए। यह स्थल पं० श्री घासीलालजी महाराज का दीक्षा स्थल था। यहीं पर सात दिन के बाद पं० मुनि श्री घासीलालजी महाराज ने अपने बाल शिष्य कन्हैयालालजी म. को बडी दीक्षा दी। इसशुभ अवसर पर काफी जन समूह एकत्रित हुआ।

दीक्षा धारण करने के पूर्व ही आपने सामायिक प्रतिक्रमण २५ बोल का थोकडा नवतत्त्व भक्ताभर पुच्छिसुणं, नमिरायजी, दशवैकालिक सूत्र के चार अध्ययन, एवं साधु प्रतिक्रमण याद कर लिया था। अब आपने

गुरुदेव की सेवा में रहकर नियमित अभ्यास प्रारंभ कर दिया। बुद्धि प्रतिभा परिश्रम और गुरुदेव की कृपा के कारण आपने शीघ्र ही अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। महाराज श्री जैसे समर्थ विद्वान गुरु हो और ऐसे ही प्रतिभा सम्पन्न शिष्य हो तो उस अध्ययन की बात ही क्या। आपने गुरुदेव के साथ रहकर शास्त्रों का गम्भीर अध्ययन कर लिया। संस्कृत प्राकृत हिन्दी उर्दू मराठी गुजराती आदि विविध भाषाओं का एवं उन भाषाओं में लिखे ग्रन्थों का खूब मनन पूर्वक अध्ययन किया। ज्ञान अराधना के साथ साथ आपने तप एवं चारित्र की खूब आराधना की। आप एक विनीत शिष्य की तरह ज्ञानाभ्यास के लिए एवं गुरुकी सेवा के लिए अहर्निश उत्सुक रहते थे। प्रतिदिन आप बडे मनोयोग से गुरुदेव की सेवा शुश्रुषा करते थे! आप का दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात् प्रथम चातुर्मास १९८८ का उदयपुर १९८९ का गोगुन्दा में गुरुदेव के साथ हुआ। इसके बाद क्रमशः सेमल (१९९०) कुचेरा (१९९१) कराची (१९९२-९३) बालोतरा (१९९४) नाई १९९५ यहां गुरुदेव की की आज्ञा से आपने स्वतंत्र चातुर्मास किया। चतुर्मासकाल में आपकी विद्वत्ता तर्क शक्ति एवं उच्च चारित्र से जनता परिचित हुई। प्रतिदिन सैकडों व्यक्ति आपके तात्विक एवं सुन्दर प्रवचनो का लाभ लेने लगी। उस वर्ष नाई में खूब धर्म ध्यान हुआ। आप की दीक्षा काल का यह प्रथम स्वतंत्र चातुर्मास बडा भव्य रहा। तपश्चर्या खूब हुई।

सफलता पूर्वक नाई का चातुर्मास पूर्णकर आप गुरुदेव की सेवा में जा पहुँचे। महाराज श्री ने आपके भव्य चातुर्मास की भूरि-भूरि प्रशंशा की। इसके बाद ११९६ का चातुर्मास आपने अपने पूज्य गुरुदेव के साथ ही व्यतीत किया। फिर क्रमशः १९९६ का देवगढ, १९९७ का रतलाम, १९९८ का लींबड़ी चातुर्मास आपने गुरुदेव के साथ ही व्यतीत किया। १९९९ का चातुर्मास आपने गुरुदेव की आज्ञा से गोगुंदा में स्वतंत्र रूप से किया। यहां भी चातुर्मास काल में बड़ा धर्मोद्योत हुआ। विविध प्रकार की तपश्चर्या हुई। आपने अपने प्रभावशाली प्रवचनों से गोगुंदा की जनता को खूब प्रभावित किया। इसके बाद आप ने निम्नलिखित चातुर्मास गुरुदेव की ही सेवा में व्यतीत कर जैनधर्म की प्रभावना बढाने में पूर्ण सहयोग दिया।

(२००० का चातुर्मास जसवंत गढ,	२००१ का चातुर्मास दामनगर
२००२ का ,, जोरावर नगर	२००३ का मोरबी
२००४ ,, ,, राजकोट	२००५ का राणपुर चूडा स्वतंत्र
२७०६ :, ,, वीरमगाव स्वतंत्र	२००७ का ,, जेतपुर
२००८ ,, ,, धोराजी	२००९ का ,, उपलेटा
२०१० :, :, मांगरोल	२०११ ,, जामजोधपुर
२०१२ ,, ,, राणपुर चूडा	२०१३ ,, वीरमगांव
२०१४ ,, ,, बम्बई मलाड (स्वतंत्र)	

२०१५-१६-१७-१८ तक अहमदाबाद अपने गुरुदेव की इस दीर्घ सेवा के बाद कुछ ऐसे महत्त्व के कारण व गुरुदेव की आज्ञा प्राप्त हुई जिससे आपको कुछ समय के लिए महाराष्ट्र और विहार करना पडा।

अहमदाबाद से आपने नंदूरबार संघ के अत्यंत आग्रह से इधर महाराष्ट्र की ओर विहार किया। महाराष्ट्र में मारवाड से आकर अनेक जैन भाई अपना व्यवसाय करते हैं। उनकी अपने धर्म के प्रति अच्छी श्रद्धा है। कितनेक प्रदेश में सन्त सतियों का विहार बहुतहि अल्प मात्रा में होने के कारण उनकी धार्मिक श्रद्धा लुप्त होती जा रही थी। बहुत व्यक्ति जैन होते हुए भी वैष्णव धर्म की क्रिया करने में

रुचि रखने लगे थे। वे अपने धर्म के रहे-सहे थोडे ज्ञान से भी विमुख होते जा रहे थे। प. रत्न महाराजश्री कन्हैयालालजी म० ने इधर पधार कर जैन जनता में धर्म के नवीन प्राण फूंके। उन्हें धर्म का प्रतिबोध दिया। लोगों की विचलित श्रद्धा को दृढ बनाया। लोगों को मुखवास्त्रिका बन्धवा कर उन्हें स्थानक वासी धर्म से परिचित किया। महाराष्ट्र प्रान्त में विचरते हुए आपने वि-सं-२०१९ का चातुर्मास नंदरबार में किया। यह चातुर्मास नंदरबार के इतिहास में एक अभूतपूर्व था। यहां आप श्री के उपदेश से खूब धर्मोद्योत हुआ। चातुर्मास समाप्ति के बाद आपश्री ने महाराष्ट्र में ही विहार किया। अनेक ग्राम व नगर को पावन करते हुए आप मध्यप्रदेश पधारे। यहाँ खेतिया नामक ग्राम में वि-सं-२०२० का चातुमास किया। इसके बाद वि-सं-२०२१ को आप फीर खानदेश पधारे और अमलनेर चातुर्मास किया। यह चातुर्मास भी उपकार की दृष्टि से अभूतपूर्व रहा। बडी बडी तपस्याए हुई। अहिंसा के अनेक कार्य हुए। अमलनेर की जनता आज भी आपको बडी श्रद्धा से स्मरण करती है। चातुर्मास की समाप्ति के बाद आपने महाराष्ट्र को ही अपना विहार क्षेत्र चुना। महाराष्ट्र के विशाल प्रांगन में अपने पुण्य प्रवचन से छोटे बडे क्षेत्रों को पावन करने लगे। विहार काल में अनेक धार्मिक कार्य हुए। आप जिस किसी क्षेत्रों में विचरे वहां अपने उत्कृष्ट ज्ञान चारित्र से लोगों को खूब प्रभावित किया।

महाराष्ट्र में लासलगांव एक प्राचीन एवं व्यापार का मुख्य क्षेत्र है। करीब यहां ओसवालों के १०० घर है। यहां की जनता की धार्मिक भावना अत्यन्त सराहनीय है। शिक्षा के अच्छे प्रेमी है। यहाँ महावीर जैन विद्यालय चलता है। जिसमें प्राथमिक शिक्षण मन्दिर महावीर हाँयस्कूल, एवं वसतीगृह बोर्डिंग आदि विविध विभाग है। जब आप महाराष्ट्र में विचर रहे थे तब आपके प्रभाव से आकर्शित होकर श्री संघ अनेक बार विनंति को आये, अत्यन्त आग्र के बाद धुलिया शहर में लासलगांव के चतुर्मास की विनंति मंजूर हुई। अनेक गाँवों को पावन करते हुये चातुर्मास के लिए विहार करते हुए लासलगांव शहेर में पधारे। आपके आगमन से स्थानीय जनता का खूब धार्मिक उत्साह बढा। आपके प्रतिदिन धार्मिक राष्ट्रीय सामाजिक प्रवचन होते थे। प्रवचन में केवल जैन समाज ही नहीं किन्तु अजैन समाज भी बडी संख्या में उपस्थित होती थी। लासलगांव में आपश्री ने इस बार-प्रथमहि आगमन किया था। अतएव वहां की जनता आपकी मधुर अमृतमय वाणी को सुनने के लिए लालायित थी। व्याख्यान के समय वे लोग अपना समस्त कारोबार बन्द रखते थे।

ता० ६- ७- ६५ को गांव के बाहर अशोक आइल मील में पदार्पण हुआ। इसी दिन आपका जाहिर प्रवचन हुआ जिसमें लासलगांव की हजारों जैन अजैन जनता ने भाग लिया। ता० ८- ७- ६५ को प्रातः मुनिजी ने गांवमेंप्रवेश किया। और उस दिन शहेर में सर्व प्राणिमात्र के हितार्थ विश्वशांति के जाप हुये। नगर की सभी स्कूल और हाइस्कूल के हजारों विद्यार्थियों ने एवं नगर की जनता ने शान्ति धून के साथ प्रभात फेरी की। सर्व धर्मीय सामुदायिक ईश प्रार्थना और जाहिर प्रवचन आदि आदि सार्वजनिक कार्यक्रम ने चातुर्मास अराधना का सुन्दर शिलारोपण किया। मुनिजी की प्रेरणा से उस दिन नगर के समस्त कारोबार दुकानें आफिसें, स्कूल, गिरणिया मीले, होटल, सिनेमागृह और यहां तक की ताँगे और बैलगाड़ियां आदि सभी प्रकार के व्यवसाय एवं सावद्य प्रवृत्तियां संपूर्ण रूप से बन्द कर जनता ने अहिंसा दिन मनाया। उस दिन का कार्यक्रम इतना भव्य था कि आज भी जनता उस दिन को नहीं भूलती। इतना ही नहीं पानी की बून्द बून्द के लिए तरस ने वाले उस प्रदेश पर मेघ राज ने अपार कृपा की। उस दिन इतनी वर्षा हुई कि सारा प्रदेश जलमय हो गया। मुनि श्री की ॐ शान्ति की प्रार्थना का प्रत्यक्ष चमत्कार जनता को मिल गया। फलस्वरूप लासलगांव की जनता महाराज श्री की परम भक्त बन गई।

महाराज श्री के चातुर्मास काल में प्रभावशाली प्रवचन होने लगे । जैन अजैन जनता बिना किसी भेद आपका प्रवचन न सुनने लगी । आपके बिराजने से एवं प्रेरणा से तपश्चर्या भी अभूतपूर्व हुई । भाव से अजैन बन्धुओं ने भी एक उपवास से लगा कर नौ दिन तक की महान तपश्चर्या की– २ अक्टूबर १९६५ तक की तपश्चर्या का विवरण इस प्रकार है–

उपवास,	बेले,	तेले,	चार,	पांच,	अठाईयां,	नौ	दस	ग्यारह	बारह
१६००	५४	१३७	२	५	३५	२६	१	३	२

पन्द्रह,	एकवीस,	एकतीस	आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत,	सजोडे शीलव्रत प्रतिज्ञा,	दशमांव्रत
१	१	१	२२	१३	२२५

आयंबिल- ४००, । इतना ही नहीं महाराज श्री के उपदेश से स्थान स्थान की ग्राम-पचायतों ने म्यु-निसिपल कार्पोरेशनों ने नदी तालाब, आदि के मार्यादित स्थानों पर सदा के लिए तथा पर्व तिथि आदि विशिष्ट दिनों में जीवहिंसा नहीं होने देने सम्बन्धी प्रस्ताव पास करके उनकी प्रतिलिपियाँ मुनिश्री की सेवा में अर्पण की । ये कार्य अन्य के लिए भी प्रेरणादायी हो इस दृष्टि से उनकी प्रतिलिपियां पाठकों की सेवा में उपस्थित करता हूँ । ये प्रतिलिपियां इस प्रकार है—

ग्रामपंचायत । वरला प्रदेश दिनांक १७- जनवरी १९६४

हम वरला निवासी प्रजाजन को पूज्य आचार्य महाराज श्री घासीलालजी महाराज के सुशिष्य पंडित रत्न पूज्य महाराज श्री कन्हैयालालजी महाराज द्वारा धार्मिक और आध्यात्मिक प्रवचन श्रवण करने का सुअवसर मिला । उस उपदेश में हमारे जीवन में आदर्शता, सत्यता, प्रामाणिकता, निर्मलता आकर राज्य के और धर्म के वफादार रहे इन विषयों पर वक्तव्य व व्याख्यान सुनने का सुअवसर मिला । उसकी खुशी में महाराज श्री के फरमान से हमारी नदी "तोरी" में खारिया के रास्ते से लगाकर तार के नाले तक इस पवित्र नदी व भूमि में कोई भी व्यक्ति मच्छी आदि की कोई भी जीव हिंसा नहीं कर सकेगा ऐसी प्रतिज्ञा हम सभी लोग समज पूर्वक स्वेच्छा से भगवान और धर्म की साक्षी से करते हैं । यह प्रतिज्ञा, वंश-वारस तक निभाई जायेगी । इसमें हमारे कुटुम्ब, हमारे गांव और हमारे परिवार का भला और रक्षण भरा हुआ है । इसी दृष्टि से प्रतिज्ञा कर यह लेख महाराज श्री को अर्पण करते हैं ।'
१७–१–६४ सही सरपंच ग्रामपंचायत वरला [म. प्र.

ॐ

ग्रामपंचायत कमेटी शिवरे दिवर ता. पारोळा, जि जलगांव दिनांक २६ एप्रील १९६४ हम शिवरे निवासी आम प्रजाजन को पूज्य आचार्यमहाराज श्री घासीलालजी महाराज के सुशिष्य पण्डित रत्न पूज्य महाराज श्री कन्हैयालालजी महाराज द्वारा धार्मिक और अध्यात्मिक प्रवचन श्रवण करने का सुअवसर मिला । उस उपदेश में हमारे जीवन में आदर्शता, सत्यता, प्रामाणिकता, निर्मलता आवे व राज्य के और धर्म के वफादार रहें इन विषयों पर वक्तव्य व व्याख्यान सुनने का सुअवसर मिला । उसकी खुशी में महाराज श्री के फरमान से हमारी नदी कन्हरी में बेडगांव रास्ते पाससे तो सादलखेडे रास्ते तक दो फर्लांग पर इस पवित्र नदी व भूमि में कोई भी व्यक्ति मच्छी आदि की कोई भी जीवहिंसा नही कर सकेगा । ऐसी प्रतिज्ञा हम सभी लोग समझ पूर्वक स्वेच्छा से भगवान और धर्म की साक्षी से करते हैं । यह प्रतिज्ञा, वंश-वारस तक निभाई जायेगी । इसमें हमारे कुटुम्ब हमारे गांव हमारे परिवार का भला और रक्षण भरा हुआ है । इसी दृष्टि से प्रतिज्ञा कर के यह लेख महाराज श्री को अर्पण करते हैं ।

सही सरपञ्च, ग्रामपञ्चायत कमेटी शिवरे दिवर. तारीख २८–४–६४

ॐ

ग्रुप ग्राम पंचायत कार्यालय भडगांव येता—भडगांव तमाम लोकांस कळविण्यांत येते की

गट ग्रमापंचायत भडगांव कमेटीने ता०७=५—६४ रोजी विषय नं ६अन्वये ठराव करुन आपले गांवाचे अरोग्य रक्षणासाठी शुद्ध पाण्या व पुरवठा व्हावा ह्मणूनच आज पासून गट ग्रामपंचायत सरपंच साहेब भाडगांव हैआपल्या सर्व जनते समोर निवेदन करीत आहेत. ते येणें प्रमाणेः—

(१) पारोळा जुना रोड फरशी पासून ते हिन्दु स्मशानभूमी पर्यन्त कोणी ही गिरणा नद्याचे पात्रांत मच्छीमारी व कोणत्याही प्रकारची जीवहत्या करु नये व केल्यास त्यावर कायदेशीर इलाज करणेत येइल. कळावे. ग्र. से. भाडगांव गट ग्रामपंचायत भाडगांव आपला विस्वासू सरपंच गुप ग्रामपंचायत भाडगांव

माननीय परमपूज्य गुरुजी श्री. कन्हैयालालजी महाराज याना आदर पूर्वक सदरचा ठराव अर्पण करीत आहेंत. त्याचा स्वीकार व्हावा; ही आदरांजली अरपण होवो आपले भाडगांव शान्ती कार्यवाह मंडळी

ॐ श्री

कमेटी सोवरखेडे ता. पारोळा दिनांक २५ एप्रिल १९६४

सर्वेऽतु सुखीनः सन्तु, सर्वें सन्तु निरामयाः। सर्वे भद्राणि पश्यन्तु, मा कश्चित दुःखमाप्नुयात् ॥

हम सावरखेडे निवासी आम प्रजाजन को पूज्य आचार्य महाराज श्री घासीलालजी महाराज म. के सुशिष्य पंडित रत्न पूज्य महाराज श्री कन्हैयालालजी द्वारा धार्मिक और आध्यात्मिक प्रवचन श्रवण करने का सुअवसर मिला। उस उपदेश में हमारे जीवन में आदर्शता सत्यता प्रामाणिकता निर्मलता आवे व राज्य के और धर्म के वफादार रहें इन विषयों पर वक्तव्य व व्याख्यान सुनने का सुअवसर मिला। उसकी खुशी में महाराज श्री के फरमानेसे हमारी नदी कनहेरी में महादेव के पास से तो हिम्मत श्रवण सर्वे नम्बर तक १ फलाँग भर इस पवित्र भूमि में कोई भी व्यक्ति मच्छी आदि की कोई भी जीव हिंसा नहीं कर सकेगा। ऐसी प्रतिज्ञा हम सभी लोग समझपूर्वक स्वेच्छा से भगवान और धर्म की साक्षी से करते हैं। यह प्रतिज्ञा वंश वारस तक निभाई जायेगी। इसमें हमारे परिवार का भला और रक्षण भरा हुवा है। इसी दृष्टि से प्रतिज्ञा करके यह लेख महाराज श्री को अर्पण करते हैं।

सहीः—रामदास गणपत सरपंच ग्रामपंचायत कमेटी सावरखेडे तारीख २५—४—६४

श्री

ग्रुप ग्रामपंचाएत वेले आखातवाडे ता. चोपडे जि. जलगांव दिनांक १० मार्च १९६६

हम वेले निवासी आम प्रजाजन को पूज्य आचार्य महाराज श्री घासीलालजी महाराज के सुशिष्य पंडित रत्न पूज्य महराज श्री कन्हैयालालजो महाराज द्वारा धार्मिक और आध्यात्मिक प्रवचन श्रवण करने का सुअवसर मिला। इस उपदेश में हमारे जीवन में आदर्शता, सत्यता, प्रमाणिकता, निर्मलता आवे व राज्य के और धर्म के वफादार रहकर कैसे अन्तर स्वरुप प्रगट करें इन विषयों पर वक्तव्य व व्याख्यान सुनने का अवसर मिला। उसकी खुशी में महाराज श्री के फरमान से हमारी नदी रत्नावति में अकुलखेडे के रास्ते से लगाकर सर्वे नंबर ९६ के दक्षिण वाजू १ फर्लांग भर इस पवित्र भूमि में कोई भी व्यकित मच्छी व कोई भी जीवहिंसा नहीं कर सकेगा। एसी प्रतिज्ञा हम सभी लोग समझ पूर्वक स्वेच्छा से भगवान और धर्म की साक्षी से करते हैं। यह प्रतिज्ञा वंश वारस तक निभाई जायेगी। इसमें हमारा कुटुम्ब, हमारा गांव और हमारा परिवार का भला और रक्षण भरा हुआ है। इस दृष्टि से प्रतिज्ञा कर के यह लेख महाराजश्री को अर्पण करते हैं।

सहीः— ÷ × × सही सीताराम सखाराम पा० न्याय पचायत सभासद सरपंच वेले

वेले आखातवाडे ग्रुप ग्राम पंचायत कमेटी वेले आंखातवाडे

श्री

ग्रुप ग्रामपञ्चायत नगांव बु ॥ खुर्द ता० अमळनेर । (जि. जलगांव) तमाम लोकांस कळविण्यांत येते की. ग्रुप ग्रामपञ्चायत कमेटी ने ता० २१- ११- ६४ रोजी विषय नं ४ अन्वये ठराव केला आणि त्याप्रमाणे । आपले गांवचे आरोग्य रक्षणासाठी शुद्ध पाण्याचा पुरवठा व्हावा महणूनच आज पासून ग्रुप ग्रामपञ्चायत सरपञ्च साहेब नवांग बु. ॥ खुर्द आपल्या सर्वजनते समोरह निवेदन करीत आहेत ते येणे प्रमाणे

नगांव बु ॥ मसणवरीपासून ते नगांव खुर्द धोबी घाटपर्यंत कोणीही चिखल नदीचे पात्रात् मच्छीमारो व कोणतीही जीवहानी करु नये. केल्यास त्याचेवर कायदेशर ईलाज करणेत येईल. कळावे.

आपला विश्वासू सरपञ्च । ग्रुप ग्रामपञ्चायत कमेटी । नगांव बु ॥ खुर्द ता० अमळनेर जि० जलगांव

माननीय परम पूज्य गुरुजी श्री कन्हैयालालजी मुनियाँना आदरपूर्वक सदरचा ठहराव अर्पण करीत आहोत त्याचा स्वीकार व्हावा ही आदरांजली अर्पण होवो.

आयले नगांव बु ॥ खुर्द शांती कार्यवाह मण्डल

ग्राम पञ्चायत बरखेडी जिल्हा जलगांव.

यांवकहूनः—

तमाम लोकांस कडविण्यांत येते की, तारीख २४- ५- ६४ चे समेतील विषय नंबर ११ अ अन्वये पञ्चायतीने असा ठराव करण्यांचे योजिले आहे की, सुशील पण्डित रत्न महाराज श्री. कन्हैयालालजी महाराज द्वारा धार्मिक आणि आध्यात्मिक प्रवचन, श्रवण करण्यांचा सुप्रसंग सर्वांना आला त्यां सुप्रसंगाच्या आनन्दा प्रित्यर्थ हजर असलेले ग्रामस्थ व पञ्चाती चे समासदयांनी खाली प्रमाणे प्रतिज्ञा केली ती येणे प्रमाणेंः—

बहुला नदीचे पात्रातील महादेवाच्या मंदीरापासून ते हिंदु व मुस्लिम यांचे स्मशान भूमी चे दरम्यान असलेले धोबी धाटाच्या खडका यावेतो कोणीही नदीचे पात्रात् मच्छी मारी करु नये व कोणत्याही जीवाची हिंसा करु नये तसेच आठवडे बाजारातील जैनस्थानका समोर असलेस्या जागेत वोंग्रीलाची दुकाने लावू नये असे सर्वांना सुचीत करण्यांत येत आहे .

तरी सदर नियमाचे पालन आम्ही करु असे मुनि महाराजयांचे समोर प्रतिज्ञो करीत आहेत.

सहीः—गुलाबचन्द मगनीराम पांडे सरपञ्च ग्रामपञ्चायत बरखेडी

श्री

ग्रामपञ्चायत मांजरोद ता शिरपूर जि धुले. ता० १- २- ६५

श्री पूज्य कन्हैयालालजी महाराज यांचे सेवेसी

सरपञ्च ग्राम पञ्चायत समासद मांजरोद व गांवकरी तर्फे यांचे कडून आपल्या ईच्छेप्रमाणे मांजरोद येथील अमच्या गांवच्या दक्षिण बाजूस तापी नदी असून महादेवाचे देवळ खडकावर आहे तापी नदीवर आमच्या हद्दीतील कोणासही मासे धरण्याची सक्त मनाई आहे तसे कृत्य आम्ही करु देणार नाहों वरील सूचनेचा आम्ही नदी काठावर बोर्ड लावु सदरचे निवेदन आम्ही सर्वगांव तरफे सादर करीत आहो गांवात कुडल्याही प्रकारचा जाती भेद अगर धर्म भेद नाही तसेसु नव बौद्धांना पाणी भरण्यास मोकळोक आहे .

सरपञ्च ग्राम पञ्चायत मांजरोद ता शिरपूर

ग्राम पंचायत कार्यालय जामनेर, जि जळगांव

ग्राम पंचायत जामनेर, नि. जलगांव यांजकडून

श्री. पूज्य कन्हैयालालजी महाराज. यांचे सेवैशी.

आपण सुचविल्याप्रमाणे आमचे जामनेर येथील कांग नदीचे पात्रांत कोणत्याही प्रकारे मच्छीमारी व प्राणीमात्रची हत्या करुं नये, याबदल पंचायतीनें दिलेल्या आश्वासना प्रमाणे पालन करण्याची जबाबदारी ता–१९–६–६४ रोजीचे समेत ठराव नं, ९ नें एकमतानें मंजूर केलेली आहे सदरचा ठराव आम्ही आपले चरणी सादर करीत आहोंत ही विनंती

–: ठराव .–आपले जामनेर शहरचे वस्तीतून वाहत असलेले कांग नदीचे पात्रांत बोदवड सडके जवळील पुला पासून् ते भूसावळ सडकेपर्यंतचे भागांत कोणीही इसमानें माच्छीमारी तसेंच कोणत्याहि प्रकारच्या जीव जीवाणूची हत्था करुं नये व नदी चे पात्रांतील पाणी घाण होईल असे कोणतेही कृत्य करुं नये केल्यास त्याचेवर कायदेशीर इलाज करण्यांत यावा. दोन्ही हदीवर एकेक बोर्ड लावण्यांत यावा,

सूचकः— श्री त्र्यंबक गणपत महाजन अनुमोदक श्री नथू दगडू सुरळकर ठराव सर्वानुमतानें मंजूर

वरील प्रमाणे ठरावाद्वारें आमचे पंचायतीनें गांवकण्यांचे वती नें पालन करण्याचे ठरविले आहे, तरी सदरचे ठरावाचा स्वीकार व्हावा ही विनंती कळावे,

आपला विश्वासू सरपंच ग्रामपंचायत, जामनेर,

श्री

११–११–६४

अमळनेर बरो म्युनिसिपालीटी

अध्यक्ष,
बरो म्युनिसिपाली अमळनेर
यांजकडून

श्री, रा रा,
पूज्यनीय कन्हैयालालजी महाराज
मुक्काम– अमलनेर
यांचे कडेस :—

अमळनेर बरो म्युनिसिपालीटी चे बॉम्बे म्युनिसिपल बरोज एक्ट १९२५ चे कलम ६१ (क्यू) खालील बायर्लाज सरकार ठराव जनरल डिपार्टमेन्ट नं एसू ९१ (४३ ता, ४ जुै १०३५ नें मंजूर झाले आहेत, त्या बॉयलोज प्रमाणें अमळनेर येथील बोरी नदी चे पात्र मासे धरण्याचे बाबत मनाईकरणारी नोटीस खालील प्रमाणें म्युनिसिपालटी कडून काढणेंत आली असून ती जाहीर करणेंत आली आहे,

"अलमनेर म्युनिसिपल हदीत नोटीस" किल्ला रास्ता ते रेलवेपुलापर्यंत् "या दरम्यान चे पात्रांत कोणीही मासे धरुं नये, या नोटीसचा भंग करणा–यावर कायदेशीर इलाज केला जाईल," कळावे,

अध्यक्ष, बरो म्युनिसिपालीटी अमळनेर दि, ११–११–१९६४

ग्रुप ग्रामपंचायत कार्यालय व विविध कार्यकारी सोसाइटी हातेड खुर्द ता, चोपडे जि. जलगांव

ता, २५–१२–१९६४

श्री कन्हैयालालजी महाराज यांचे सेवेंसीः—

सरपंच, ग्रुप ग्रामपंचायत हातेड व चेअरमेन विविध कार्यकारी सोसायटी हातेड खुर्द, ता, चोपडे, जि, जलगांव आजकडूनः—

आपल्या इच्छेप्रमाणें हातेड येथील ग्रामस्था तर्फे आमच्या गांवच्या पूर्व बाजूला जे नाला वाहतो त्या

नाल्यावर मासे धरणेंसाठी आमच्या हद्दी पर्यंत कोणासही मनाई राहील, व तसे कृत्य आम्ही कोणासही करुं देणार नाहीत, सदरचे निवेदन आम्ही सर्व गांवतर्फे सादर करीत अहोंत, गावांत कुठल्याही प्रकारचा जाती भेद अगर धर्म भेद नाहीं तसेंच नवबोद्धांना सार्वजनिक ठिकाणी पाणी वगैरे भरण्याची मोकळीक आहे

गांवांत खाटीक असून सर्व धर्मीय जन एकादशी श्रावणमास, हनुमानजयंती व सोमवार असे दिवस पूर्वीपासून पाळले जात आहेत, दरवर्षी अषाढो एकादशो पासून धार्मिक पोथी पुराण एक महिना पर्यन्त चालू असते, दर वर्षी चैत्र रामनवमोच्या दिवशी हरीनाम सप्ताह ७ दिवसांचा असतो, व नियमाप्रमाणें ज्ञानेश्वरी, गीता, भागवत पाठान्तर केले जातात, दरवर्षी अषाढी एकादशीस नियमित नगर प्रदक्षिणा केली जाते, दर एकादशी पूर्वीच्या संस्कृतीप्रमाणें दिंडी फिरत असते, चेअरमन सरपंच

हातेड खुर्द विविध कार्य सह सोसा. लि. ता, चोंपडे, जि जळगांव ग्रुपग्रामपंचायत कमेटी हातेड खु ||

ग्रामपंचायत कमेटी चुंचाळे ता, चोपडे जि, जळगांव मौजे:—चुंचाळे ता, चोपडे येथील ग्रुपग्रामपंचायतीच्या ता—२६-१२-६४ च्या सभेतील आयत्या वेळच्या ठरावाची नकल

हजर सभासद १ श्री मायाराम कौतिक बावोसकर, सरपंच सही मोडी २ श्री सीताराम लक्ष्मण चौधरी, सभासद सही मोडी ३ श्री सदाशिव माधव चौधरी, उपसरपञ्च, सही मोडी ४ श्री पांडुरंग नारायण चौधरी, सभासद, सही मोडी ५ श्री खुशाल दाजी पाटील सभासद सही मोडी ६ श्री विश्वनाथ घोंडू पाटील सभासद, सही मोडी,

—:ठराव:—१ आपल्या गांवी ता, १३-१२-६४ रोजी सर्व धर्मिय ॐ शांतिमंत्राची प्रार्थना घेण्यांत आली त्या दिवशीं सर्व गांवचे दैनंदिन व्यवहार बंद ठेवण्यांत आले असून यापुढें एकादशी, महाशिवरात्री व आठवडयातील शुक्रवार व मंगलवार फेरी करुन गांवात कोणत्याही प्रकारची जीवहत्या करण्यांत येवू नये व त्या बाबत गॉवॉत जीव हत्या होणार नाहीं याची दखल पंचायतनें यांपुढें घेण्यांत यावी,

सूचक:—सिताराम लक्ष्मण चौधरी अनुमोदक:—सदाशिव माधव चौधरी ठराव सर्वानुमतानें मंजूर

आपल्या गांवालगतच्या नाल्यांत आपल्या गावाच्या मुलकी हद्दी पर्यंत मासे मारण्यांस बंदी घालण्यात यावी या नियमाचे पालन पञ्चायतीनें करावे

सूचक:—पोडूरंग नारायण चौधरी अनु०:—सिताराम लक्ष्मण चौधरी ठराव सर्वानुमते मंजूर सरपञ्च

ग्रामपञ्चायत कमेटी चुचाळे, चोपडे जि, जलगांव ग्रामपञ्चायत कमेटी दहिवद ता, अमळनेर जि, जळगांव मौजे दहिवद ता, अमळनेर जिल्हा जळगांव येथील ग्रोमपञ्चायतीयच्या तारीख २८—११-६४ च्या सभेतील ठरावाची कनकल

हजर सभासद

१ श्री उमराव अंबु पाटील सरपञ्च सही मोडी में २ श्री दौलत कौतिक माळी उपसरपंच सही मोडी में ३ श्री धोंडु भिका पाटील सभासद सही मोडी में ४ श्रीमती मंजुळाबाई भ्र दयाराम सभासद सही मोडो में ५ श्री भिवसन त्र्यंबक पाटील सभासद सही मोडी ६ श्री हिंमतराव जगतराव पाटील सभासद सही मोडी में

—ठराव— "आपले गांवचे पूर्व बाजूस नाला वाहतो पावसाळयांत व इतर ऋतूमध्ये सुद्धा सदर नाल्यासपाणी असते तरी सदर नाल्यात मासे धरणें व त्याची विक्री करणें अथवा भक्षण करणे हे सयुक्तिक नाहीं तरी सदर नाल्यातील पाण्यात श्री शंकरकुंभार यांचे शेतीपासून उत्तरेस नारली विहीरीपर्यंतचे जागेत कोणीहो इसमास मासे धरण्याची परवानगी देण्यांत येउं नये व या बाबतींत गांवी योग्य ती प्रसिद्धी व्हावी"

सूचक:—दौलत कौतिक माळी अनुमोदक:—भिवसन त्र्यंबक पाटोल ठराव सर्वानुमते मंजूर

"आपले गांवी आषाढी एकादशी, कार्तिक एकादशी व महाशिवरात्री या तोनही दिवशी कोणाचे ही घरी मांस भक्षण होत नाही, तरी या पुढे सुध्धां वरील तीनही दिवशी कोणत्याही इस्माचे घरी मांस भक्षण केले जाणार नाही, याचो आपण सर्वांनी दक्षता घ्यावी"

सूचक घोंडू भीका पाटील अनुमोदक हिमतराव जगतराव पाटील ठराव सर्वानुमते मंजूर सही ××× सरपञ्च ग्रामपञ्चायत, दहिवेंद, ता अमळनेर जि, जळगांव

ग्रामपंचायत कमेटी मुकटी ता. धुळे जि. धुळें तारीख २६-५-१९६५

ग्रामपंचायत सभासद:—१) म. पोपटराव गोविंद राव पाटील (सरपंच) २) श्री बाबुराव बळीराम पाटील (उपसरपञ्च) ३) श्री भिकचन्द गुलाबचन्द जैन (सभासद) ४) श्री गरबड वंजी पाटील ५) श्री माना तुलसीराम पाटील ६ श्री माणिक दगा देवरे ७ श्री रामदास रघुनाथ कुलकर्णी ८ श्रीमती भागाबाई भ्र. परशराम पाटील ९ श्री पुंडलिक धर्मा साळुंके १० श्री भाऊराव वामनराव पाटील ११ श्री आत्माराम तापीराम पाटील १२ श्रीमती चापाबाई भ्र. उरपा लोहार १३ श्री पुण्डलीक झिपरु पाटील १४ श्री त्र्यंबक गंगाराम पाटील १५ श्री माधवराव महारु पाटील

श्री पूज्य कन्हैया लालजी महाराज यां चेसेवेसी,

आपल्या इच्छेप्रमाणे मुकटी येथील ग्रामस्था तर्फे आमच्चा गांवाच्या पश्चिम बाजूला जी कन्हेरी नदी दक्षिण-उत्तर वाहते त्या नदीवर मासे धरण्या साठी आमच्या हद्दीपर्यंत कोणासही बंदी राहिल, व तसे कृत्य कोणासही करु देणार नाहींत सदरचे निवेदन आम्ही सर्व गांवातर्फे सादर करीत आहोत, गांवात कोणत्याही प्रकारचा जातिभेद अगर धर्म भेद नाहीं

तसेच नव बौध्धांना सार्वजनिक ठिकाणी पाणी वगैरे भरण्याची मोकळिक आहे, तसेच कन्हेरी नदीचे पाण्यांत कोणीही मासे धरु नये म्हणून गांवचे हद्दीत ठिकठिकाणी ही बोर्ड लावण्यात आलेले आहेत, गांवात खाटीक असून सर्व धर्मीय सन, एकादशी, श्रावणमास, हनुमानजयन्ती, रामनवमी, गणेश चतुर्थी, गोकुळअष्टमी, असे उत्सव मानले जातात त्या दिवशी कोण्यत्याही प्रकारची जीव हत्या करीत नाहीत व वरील प्रमाणे शुभ धार्मिक विधि केले जातात

आपले नम्र ग्रामस्थ मंडली मुकटी ता धुळें सरपञ्च ग्रामपञ्चायत मुकटी ता, धुळे
ता. १-१- १९६५

ग्रुप ग्रामपञ्चायत कमेटी गणपूर, विविध कार्यकारी सेवा सहकारी सोसायटी ता. चोपडे

श्री पूज्य कन्हैयालालजी महाराज—यांचे सेवेसी

सरपञ्च, ग्रुप ग्रामपञ्चायत गणपुर ता, चोपडे जि जलगांव याजकडून:—

आपल्या इच्छेप्रमाणे गणपूर येथील ग्रामस्थातर्फे आमच्या गांवाच्या उतरेस अनेर नदी असून तिच्या कांठावर महादेवचे देऊळ आहे, अनेर नदीवर आमच्या हद्दीतील पात्रांत कोणासही मासे धरणेंसाठी मनाई आहें काठावर महादेवाचे देऊल आहें अनेर नदीवर आमच्या हद्दीतील पात्रांत कोणासही मासे धरणेंसाठी मनाई राहील व तसे कृत्य आम्ही कोणासही करुं देणार नाहीं व वरील सूचनेचे आम्ही कांठावर बोर्ड लावून ठेवू, सदरचे निवेदन आम्ही सर्व गांवातर्फे सादर करीत आहेत, गांवांत कोठल्याही प्रकारचा जाति भेद अगर धर्म भेद नाहीं, तसेंच नवबौध्धांना सार्वजनिक ठिकाणी पाणी वगैरे मोकळीक आहे,

गावांत खाटीक असून सर्व धर्मीय सन एकादशी, श्रावणमास, हनुमानजयन्ती, गणेशचतुर्थी, रामनवमी, गोकुळअष्टमी असे दिवस पूर्वीपासून पाळले जात आहेत, दरवर्षी आषाढी एकादशी पासून धार्मिक पोथी पुराण चार महिनें पर्यन्त चालू असते, दरवर्षी रामनवमीच्या दिवशीं हरीनाम सप्ताह ७ दिवसांचा

असतो या नियमाप्रमाणें ज्ञानेश्वरी, गीता, भागवत पाठांतर केले जातात व त्याच प्रमाणें एकादशी व गोकुलअष्टमो हा सोहळा मोठ्या आनन्दानें साजरा केला जातो,

दरवर्षी अषाढी एकादशीस नियमित नगर प्रदक्षिणा केली जाते, दर एकादशीस दशमोच्या दिवशी पूर्वीच्या संस्कृतिप्रमाणें दिंडी फिरत असते,

चेअरमन सरपञ्च

गणपूर वि, का, से, स, सोसायटीलि ता चोपडे जि जलगांव ग्रुपग्रामपञ्चायत कमेटी गणपूर ता चोपडे जि जलगांव

श्री

ता- ६- १- ६५

ग्रामपञ्चायत कार्यालय, विविध कार्यकारी सोसायटी हिसाळें ता शिरपूर जि धुळे

श्री, पूज्य कन्हैयालालजी महाराज यांचे सेवेसीः—

सरपञ्च ग्रामपञ्चायत हिसाळें चेअरमेन विविध कार्यकारी सोसायटी हीसाळे ता शिरपूर जि धुळे यांचे कडून आपल्या इच्छेप्रमाणें हिसाळे येथिल ग्रामस्थातर्फे आमच्या गांवात खाटीक मांस व जिवहिंसा खाली लिहीलेल्या दिवशी प्रमाणें बन्द करण्यांत आले. दिवस चैत्र शु ९, दरमहा दोन्ही एकादशी, चैत्र शु. १३, चैत्र शुदि १५, दर महिन्यातील चतुर्थी व त्रयोदशी पाळावी, वैशाख संपूर्ण महीना बन्ध श्रावण महीना संपूर्णबंध, भाद्रपद शु. ५ रुषी पञ्चमी बन्ध, भाद्रपद शुध्ध १४, आश्वीन शुद्ध अष्टमी, नवनी, दशमी हे तीन दिवस बन्ध, भाद्रपद शुद्ध १ बन्ध, कार्तीक शुध्ध १४ बन्ध, मार्गेशिर्ष शुद्ध ५ बन्ध, फाल्गुण वार तुकाराम महा० बीज वरील लिहिलेल्या नियमित दिवशी जिवहिंसा बन्ध केली आहे जर कोणी जिव हिंसा केली तर पंच कमेटी व ग्रामस्थ मंडली व सोसायटी कमेटी यांचे कडून हि सूचना देण्यांत येत आहे,

दरवर्षी चेत्र शुध्ध २ च्या दिवशी श्री रामदेवजी महाराज यांचा भण्डारा करतात, आषाढी एका॰ दशीच्या दिवशी पालखीं व दिंडी फिरते श्रावण वद्य गोकुल अष्टमी च्या दिवशी भजन व कृष्ण जन्म नियमित उत्सव करतात,

सरपन्च

ग्रामपञ्चायत हिसाळें ता शिरपूर जि धुळे

श्री

तारीख ११—१—६६

ग्रामपंचायत कार्यालय, व विविध कार्यकारी सोसायटी घोडगांव, ता चोपडे जि जळगांव

महाराज श्री कन्हैयालालजी—यांचे सेवेसी

सरपंच ग्राम पंचायत घोडगांव व चेअरमेन विविध कार्यकारी सहकारी सोसायटी घोडगांव ता. चोपडे जि. जळगांव यांजकडूनः—

आपल्या इच्छेप्रमाणे घोडगांव येथील ग्रामस्थातर्फे आमच्या गांवाच्या उत्तरेस अनेर नदी असून तिच्या काठावर महादेव चे देऊळ आहे, अनेर नदीवर आमच्या हद्दीतिल पात्रांत कोणासही मासे धरणे साठी मनाई राहील, व तसे कृत्य आम्ही कोणासही करु देणार नाहींच वरील सूचनेचे आम्ही कांठावर बोर्ड लाऊन ठेवू, सदरचे निवेदन आम्ही सर्व गांवातर्फे सादर करीत आहोंत, गांवांत कोठल्याही प्रकारचा जातिभेद अगर धर्म भेद नाहीं, तसेंच नवबौध्यांना सार्वजनिक ठिकाणी पाणी वगैरे भरण्याची मोकळीक आहे.

गांवांत खाटीक असून सर्व धर्मीय सण एकादशी, श्रावणमास, हनुमान जयंती, गणेशचतुर्थी, रामनवमी

गोकुलअष्टमी असे दिवस पूर्वीपासून पाळले जात आहेत दरवर्षी आषाढी एकादशीपासून धार्मिक पोथी पुराण चार महिने पर्यंत चालू असते, दरवर्षी रामनवमीच्या दिवशी हरीनाम सप्ताह ७ दिवसांचा असतो या नियमाप्रमाणे आषाढी एकादशी व गोकुलअष्टमी हा सोहला मोठया आनंदानें साजरा केला जातो,

दरवर्षी आषाढी एकादशीस नियमीत नगर प्रदक्षिणा केलीजाते दर एकादशीस दशमीच्या दिवशी पूर्वीच्या संस्कृतिप्रमाणे दिंडी फिरत असते,

चेअरमन

वि, का, से० स, सोसायटी लि, घोडगांव ता, चापडे जि, जळगांव, सरपंच ग्रामपंचायत कमेटी घोडगांव

श्री

तारीख १५–१–६५

ग्रामपञ्चायत कमेटी तोंदे ता, शिरपूर जि, धुळे श्री, पूज्य कन्हैयालालजी महाराज–यांचे सेवेसी

सरपञ्च ग्रामपञ्चायत तोंदे व चेअरमेन विविध कार्यकारी सेवा सहकारी सोसायटी लि, तोंदे ता, शिरपूर जि, धूळे

आपल्या इच्छेप्रमाणें तोंदे येथील ग्रामस्थातर्फे आमच्या गांवाच्या पूर्वी बाजूला जी अनेर नदी वाहते त्या नदीवर मासे धरणेसाठीं आमच्या हद्दीपर्यंत कोणासही बंदी राहील व तसे कृत्य कोणासही करु देणार नाहींत सदरचे निवेदन आम्ही सर्व गांवांतर्फे सादर करीत आहोंत, गांवांत कोठल्याही प्रकारचा जातीभेद अगर धर्मभेद नाहीं, तसेच नवबौध्धांना सार्वजनिक ठिकाणी पाणी वगैरे भरण्याची मोकळीक आहें, तसेच अनेर नदीचे पात्रांत कोणीही मासे धरु नये, म्हणून गांवचे हद्दीत ठीकठिकाणी बोर्ड लावण्यांत आले आहेत, गांवांत खाटीक असून सर्व धर्मीय सन, एकादशी, श्रावणमास, हनुमान जयंती व सोमवार असे दिवस पूर्वीपासून पाळले जात आहेत.

दरवर्षी आमचे येथे हनुमान जयंती, रामनवमी, गणेशचतुर्थी, गोकुलअष्टमी आणी रामदेवजी भंडारा असे उत्सव मानले जातात व चैत शुद्ध द्वितीयेला भंडारा निमित्त सर्व लोकांस अन्नदान दिलें जाते, वरील प्रमाणे शुभ धार्मीक विधी केले जातात,

आपले नम्र सरपञ्च

ग्रामपंचायत मौजे तोंदे चेअरमन तोंदे वि, का, से स- सोसायटी लि- ग्रामपंचायत मौजे तोंदे

श्री

जा. क. ८–७–१९६५

ग्रामपञ्चायत पिपळगांव ता, निफाड (नासिक)

ग्रामपञ्चायत सभासदः–१) रघुनाथ सहदेव सोनवणे, २] पोपट यशवंत घोडे. ३) चन्द्रकान्त शेख आठाव, ४) किशन लक्ष्मण घोडे, ५) पार्वता महादु जगताव, ६) मुक्ताबाई शेख अमीर, शंकर टकाजी पवार,

श्री, पूज्य कन्हैयालालजी महाराज यांचे सेवेसीः–

सरपञ्च ग्रामपञ्चायत पिपळगाव ता. निफाड जि. नासिक आपले इच्छेप्रमाणे पिंपळगांव ग्रामस्थातर्फे आमच्या गांवच्या लगत शीवनदी आहे त्यावर मासे धरणे साठीं आपल्या हद्दीपर्यंत कोणासही बंदी राहील, व तसे कृत्य कोणासही करु देणार नाहीं, सदरचे निवेदन आम्ही सर्व गावातर्फे सादर करीत आहोत, गांवात कोठल्याही प्रकारचे जातिभेद अगर धर्मभेद नाहीं

तसेच नवबौध्धांना सार्वजनिक ठिकाणी पाणी भरण्यास मोकळीक आहे; तसेच शिव नदीच्या पात्रांत कोणीही मासे धरु नये म्हणून गांवचे हद्दीत बोर्ड लावण्यांत आलेले आहे, गांवात खाटीक नाही, सर्व

धर्मीय सण एकादशी, श्रावणमास- हनुमानजयंती, रामनवमी' गोकुलअष्टमी गणेशचतुर्थी असे उत्सव मानले जातील, वरील प्रमाणे शुभ धार्मिक विधी केले जाईल,

आपले नम्र ग्रामस्थ मंडळ
(सही–रघुनाथ सहदेव सोनवणे) सरपञ्च
ग्रामपञ्चायत पिपळगांव ता, निफाड, जि, नासिक (सर्व मेंबराच्या सह्या व आंगठयाच्या निशाणी

श्री

ता- १२- १- ६५

ग्राम पन्चायत कमेटी वेळोदे, ता, चोपडे जि जळगांव श्री पूज्य कन्हैयालालजी महाराज—यांचे सेवेसी,

सरपञ्च, ग्रामपञ्चायत वेळोदे व चेअरमन विविध कार्यकारी सहकारी सोसायटी वेळोदे ता चोपडे जि, जलगांव

आपल्यां इच्छेप्रमाणें वेळोदे येथिल ग्रामस्थातर्फे आमच्या गांवाच्या पश्चिम बाजूला जी अनेर नदी वाहते त्या नदीवर मासे धरणेंसाठी आमच्या हद्दीपर्यंत कोणासही बन्दी राहिल व तसे कृत्य कोंणासही करु देणार नाहीं सदरचे निवेदन आम्ही सर्व गांवातर्फे सादर करीत आहोंत, गांवात कोठल्याही प्रकारचा जाति भेद अगर धर्म भेद नाहीं

तसेंच नवबौध्धांना सार्वजनिक ठिकाणी पाणी वगैरे भरण्याची मोकळीक आहे तसेच अनेर नदीचे पाण्यांत कोणीही मासे धरु नये, म्हणून गांवचे हद्दीत ठिकठिकाणी बोर्ड लावण्यांत आलेले आहेत, गांवात खाटीक असून सर्वधर्मीय सण, एकादशी, श्रावणमास, हनुमानजयन्ती, व सोमवार असे दिवस पूर्वी पासून पाळले जात आहेत, दरवर्षी आषाढी एकादशी पासून धार्मिक पोंथी पूराण १ महिन्यापर्यंत चालू असते, दरवर्षी चैत्र रामनवमीच्या दिवशी हरीनाम ९ दिवसांचा असतो व नियमाप्रमाणें ज्ञानेश्वरी गीता, भागवत पाठांतर केले जातात ,

दरवर्षी आषाढी एकादशीस नियमित नगर प्रदक्षिणा केली जाते, दर एकादशीस दशमीच्या दिवशी पूर्वीच्या संस्कृति प्रमाणे गांवात दिंडी फिरत असते

चेअरमन
वि, का, से, स, सोसायटी लि, वेळोदे ता चोपडे जि जलगांव

सरपञ्च
ग्राम पन्चायत कमेठी वेळोदे

श्री

ग्रामपंचायत कार्यालय, लासलगांव, जि नासिक, ता १- ७. १९६५

परम पूज्य मननीय कन्हैयालालजी महाराज, यांचे सेवेसी स, न, वि, वि,

महाराज ! आपणा बरोबर झालेल्या चर्चेवरुन आम्ही खाली प्रमाणें आश्वासन देत आहोंत,

१. बाजार हद्दीत जैन स्थानका नजीक उत्तर बाजूस असलेला बोंबील बाजार तेथून हलवून दुसरीं कडे बसविण्याची व्यवस्था करु

२. कुत्र्यांची हत्या होवू देणार नाही,

३. शिव नदीत लासलगांव जवळील पात्रांत मच्छीमारी करु देणार नाहीं कळावे ।

आपला नम्र
सही:– वी, टी, पाटींल सरपञ्च ग्रामपञ्चायत लासलगांव

११- ७- ६५

लासलगांव के स्थानक में विराजकर चातुर्मास काल में पं. मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराज ने अपने मृदुस्वाभाव, न उपदेश तथा पवित्रजीवन द्वारा वहां के निवासियों को किस प्रकार संतुष्ट एवं प्रभावित किया, लोगों की धार्मिक श्रद्धा को दृढतर बनाने में उनका सांनिध्य किस प्रकार उपयोगी रहा इन सब का विवरण हम दे चुके हैं।

दिन के बाद दिन आते रहते हैं और चातुर्मास के चार मास ऐसे बीत गये मानो कल चतुर्मास प्रारम्भ हुआ था। यह अनुभव हो नहीं हुआ कि चारमास का समय कब और कैसे बीत गया। चातुर्मास काल समाप्त हुआ और विहार का दिवस आया मार्गशिर्षकृष्णाप्रतिपदा इस दिन जिधर भी देखो उधर अपार मानव मेदनी हि मानव मेदनी दृष्टि गोचर होती थी। किन्तु सब के मुख पर उदासीनता झलक रही थी। विदाइ का दृश्य बडा हो भावपूर्ण था। सबके हृदय महाराजश्री की विदाइ से दुखी थे। महाराजश्री तो निर्मोही थे। उन्होंने तो झट कमर बान्धी और अन्य ग्राम के लिए चल पडे। उनके पीछे जयघोष करती हुइ हजारों की जनता थी। ग्राम के बाहर महाराज श्री ने मांगलिक सुनाया। सब अपने २ घर की ओर लौटे। महाराज श्री ने अन्यत्र विहार कर दिया। महाराष्ट्र प्रान्त को अपने पूनीत चरण कमलों से पावन करते हुए क्रमशः २०२३ को होलनान्था २०२४ को शाहदा, २०२५ में पाचोरा एवं २०२६ में दोंडाईचा नामके क्षेत्रों में चतुर्मास किये।

इधर परमपूज्य आचार्य प्रवर श्री घासीलालजी महाराज सा. वृद्धावस्था के कारण अत्यधिक अस्वस्थ रहने लगे। सेवामें रहने वाले तपस्वीजी श्रो मदनलालजी महाराज भो अस्वस्थ रहने लगे। इधर आचार्य श्री की भी यही इच्छा थी कि पंडित मुनि श्री कन्हैयालालजी म. यथा शीघ्र सेवा में आजय तो अच्छा। इसके लिये सरसपूर संघ ने विनंति रुप तार-और पत्र भी महाराजश्री को दिये। कुछ श्रावक भी महाराज श्री की सेवा में पहुँचे और प्ररिस्थिति समझाई। श्रीमान् सेठ पोपटलाल मावजी महेता जामजोधपुर वाले तथा श्रीमान् मूलचन्दजी सा० वरडिया जो महाराज श्री के अनन्य उपासक हैं। उनके भी समाचार महाराज के पास पहुँचे। परिस्थिति की गम्भीरता पूर्वक विचार कर आपने तुरत गुरुदेव की सेवा में पहुंचने के लिए महाराष्ट्र से अहमदाबाद की ओर विहार किया। उग्र विहार कर आप १४दिन में ही अहमदाबाद गुरुदेव की सेवा में पहुंच गये। आपके आगमन से गुरुदेव को एवं स्थानीय जनता को वडी प्रसन्नता हुई।

आप गुरुदेव की सेवा में रहें और उनकी अन्तिम क्षण तक बडे मनो योग से सेवा करते रहे। आपके आगमन से शास्त्रप्रकाशन के कार्य में पुनः जीवन आगया। आज गुरुदेव नहीं किन्तु उनके अधूरे कार्य को पूरा करने में जो आप प्रयत्न शील है उसका विवरण पूज्य श्री के जीवन के अगले प्रकरण में पढें।

पूज्य श्री का वि० सं. १९८७ का उदयपुर का चातुर्मास बडी सफलता के साथ समाप्त हुआ। चतुर्मास समाप्ति का विहार जब हुआ तब का दृश्य बडा दर्शनीय था। आपको विदाई देने के लिए हजारों का जन समूह एकत्र हुआ। आपने उदयपुर से विहार कर दिया, बडा बजार, घंटा घर, जगदीश चौक, गुलाबबाग, होते हुए आप श्री जगन्नाथसिंहजी महता के बगीची में पधारे। यहां हजारों व्यक्तियों ने जयघोष के साथ आपका मांगलिक श्रवण किया।

दूसरे दिन वहां से विहार कर आयड कोठारीजी की बगीची में पधारे वहां उदयपुर संघ ने साधर्मि वात्सल्य के रूप में सामूहिक भोजन का आयोजन किया। हजारों लोगों ने इस में भाग लिया। महाराज श्री का प्रवचन भो हुआ। उदयपुर श्रीसंघ ने मुनि श्री को उपासकदशाङ्गसूत्र की अधूरी संस्कृत -टीका

को पूर्ण अरने की विनंती की । श्रावकों की विनती मानकर आप कुछ दिन नगीची में ही विराजे और टीका लिखते रहे । कुछ दिन विराजकर आपने वहां से भोमट प्रान्त की ओर विहार किया । विहार करते हुए आप मादडा और ओगणा पधारे, मादडा ठाकुर साहब रतनसिंहजी, ओगना रावजी श्री कुवेर-सिंहजी परावली के टाकुर साहेब श्री तखतसिंहजी ने आपका उपदेश सुना । और अहिंसा के पट्टे लिख दिये । गरमी का मौसम होने से उदयपुर जैनज्ञान पाठ शाला के विद्यार्थियों को लेकर परमतत्वज्ञ श्रीमान् रतनलालजी मेहता महाराज श्री के दर्शनार्थ आये । दर्शन व्याख्यान का श्रवण, आरावली पहाडों की प्राकृतिक सुन्दरता का रमणीय दृश्य, तथा छोटे छोटे गांवों के जैनोद्वारा प्रेम भरा आतिथ्यसत्कार को पाकर ज्ञानपाठशाला के विद्यार्थी बडे प्रशन्न हुए । महाराज श्री ने भोमटसे जसवन्तगढ की ओर विहार किया तो श्री ज्ञान पाठशाला के छात्र एवं शिक्षक श्री रतनाललजी मेहता महाराज श्री के साथ हो गये । मार्ग में सूर्य अस्त होने से डाकू हिरला डायला के निवास स्थान के नजदीक ही जंगल में एक वृक्ष के नीचे आपने निवास किया ।

जिस जंगल में दिन के समय प्राकृतिक सुन्दरता के कारण विद्यार्थी प्रसन्नता का अनुभव कर रहे थे वे ही विद्यार्थी रात्रि के समय और डाकूओं के निवास के समीप निवास करते हुए भय का अनुभव करने लगे । विद्यार्थीयों को भय भीत देखकर महाराज ने उन्हे भयमुक्त किया और अपने पास ही में उन्हे सुलाया । महाराज श्री ने रात्रि में बच्चों की ओर पूरा ध्यान दिया । बच्चे भी महाराज श्री के आश्वासन से निर्भिक रूप से सोगये । प्रातः हुआ और महाराज श्री जसवन्त गढ की ओर विहार कर दिया ।

१९८८ का चातुर्मास पुनः उदयपुरमें

दीर्घ तपस्या एवं वृद्धावस्था के कारन तपस्वो श्री सुन्दरलालजी महाराज मार्ग में ही अस्वस्थ हो गये । विहार करना उनके लिये अशक्यसा हो गया, तपस्वोजी श्री सुन्दरलालजी महाराज की चिकित्सा के लिए आपको पुनः उदयपुर पधारना पडा । तपस्वीजी ने स्वास्थ्य लाभ तो प्राप्त किया किन्तु शरीर इतना दुर्बल हो गया था कि आप अन्यत्र विहार नहीं करसके । अतः पूज्य आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज की आज्ञा से एवं श्रावकों की प्रार्थना पर आपने इस वर्ष का चातुर्मास उदयपुर में ही करने का विचार किया । चतुर्मास का समय आने पर आप चतुर्मासार्थ पंचायती नोहरे में ठहरे, पञ्चायती नोंहरे में आपके प्रभावशाली प्रवचन होने लगे । व्याख्यान में राजसभा के मेम्बर, चीफ सेक्रेटरी रामगोपालजी, देवस्थान हाकिम श्री जगन्नाथसिंहजी मेहता, श्री भीमसिंहजी मेहता श्री कन्हैयालालजी चोवीसा, आदि राजकीय अधिकारी गाव के प्रतिष्ठित नागरिक आदि बडी संख्या में प्रवचन के लिए आने लगे । शारीरिक दुर्बलता होते हुए भी तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने तपश्चर्या प्रारंभ कर दी । तपश्चर्या के समाचार महाराणा साहेबश्री भूपालसिंहजी तक श्री चोविसाजी पहुंचाया करते थे । तपस्या की पूर्णाहुति के दिन समस्त मेवाड राज्य में अगता पाला गया । उस दिन आपका जाहिर प्रवचन हुआ इस प्रवचन में कालेज तथा स्कूलों के विद्यार्थी राज्यकर्मचारी राजवंशीय एवं इतर सज्जन बडी संख्या में उपस्थित हो कर रूचि पूर्वक व्याख्यान का श्रवण किया । सैकडों व्यक्तियों ने त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किया । इस चातुर्मास में महाराणा भूपालसिंहजी ने आपके कई बार दर्शन किये और प्रवचन सुने । आपके उपदेशों से बहुत से लोगों ने पुरानी अदावतें छोडी, बीडी सिगरेट शराव, मांस आदि हानिकार पदार्थों के सेवन का त्याग किया । और अनेक प्रकार के अत्याचारों का त्याग किया । इस प्रकार पं. श्री के उदात्त चरित्र तथा तेजस्वी व्यक्तित्व और प्रभावशाली वक्तृत्व से इस नगर में असीम उपकार हुआ ।

आपके चातुर्मास में बहुत चहल पहल रही । महाराज श्री के दर्शन करने प्रतिदिन बाहर के गांवों

से अनेक लोग आने लगे । धर्म–ध्यान व्रत प्रत्याख्यान आदि की नवीन परम्परा प्रारंभ हुई । प्रतिदिन व्याख्यान के समय महाराज श्री का उपदेश सुनकर लोग अन्तरमुख होकर विचार करने लगे । संवत्सरी के दिन तो इतने लोग इकट्ठे हुए कि कहीं नहीं मा सकता । फिर भी महापर्व अत्यन्त शान्तिपूर्वक और बडे उत्साह से मनाया गया

महाराणा श्री भूपालसिंहजी सा. ने मुनि श्री का उपदेश को समोर बाग के महल में श्रवण करने की भावना प्रगट की । तदनुसार मुनिश्री समोर बाग के महल में पधारे । करीब एक घन्टा उपदेश श्रवण करने के बाद महाराणा साहेबने आपको विविध धार्मिक प्रश्न किये । महाराजश्री ने उनका सुन्दर जवाब दिया । आपके प्रश्नों के जवाब और उपदेश सुन महाराणाजी बडे प्रसन्न हुए । गतवर्ष की अपेक्षा उदयपुर का यह भव्य चातुर्मास अविस्मरणी रहेगा । चातुर्मास समाप्ति के बाद आपने विहार कर दिया । हजारों स्त्री पुरुषों ने दूर तक विहार में साथ चलकर अपनी श्रद्धा का परिचय दिया ।

विहार कर आप आयड (गंगुभे) राजकीय स्मशान स्थान पर कोठारीजो की वाडी में गत वर्ष की तरह इस वर्ष भी वहीं विराजे । गंगुभेका स्थान ऐतितासिक स्थान है । महाराणा प्रताप के पुत्र राणा श्री अमरसिंहजी से लेकर अभी तक जितने भी राणा हुए उन सब की यहो अन्त्येष्ठी क्रिया की गई थी । मेवाड रक्षक दानवीर भामशाह की छत्री भी यहीं पर बनी हुई है । राणा परिवार सामन्त परिवार आदि राजकीय पुरुषों की अन्त्येष्ठी के स्थान पर विविध स्मारक बने हुए हैं । महाराजश्री इसी स्थान के समीप कोठारीजी की वाडी में बिराजकर उपासकदशांगसूत्र की अधूरी टीका को पूर्ण की और वहां से विहार करके वेदला पधारे ।

वेदलांगांव के बाहर कुण्ड की धर्मशाला में मुनिश्रीजी विराजे हुए थे । पं' मुनिश्री समीरमलजी महाराज एवं पं. श्री कन्हैयालालजी महाराज दोनों जंगल गये । वहां एक खटीक भेड–बकरों को चरा रहा था । सभी जानवर मृत्यु के घाट जाने के लिए थे । दोनों मुनियों ने पं. श्री घासीलालजी महाराज के पास जाकर निवेदन किया । उस समय मेवाड के दिवान श्री बलवन्तसिंहजी सा. कोठारी दर्शनार्थ आये हुवे थे । मुनिश्री ने उन जानवरों को अभयदान देने का संकेत किया । दीवानजी ने अपने कामदार को आज्ञा दे कर उन८०जानवरों को छुडाकर अमरशाला में भेज दिये ।

गर्मी के दिनों में पं. मुनिश्री जी घासीलालजी महाराज सेरा प्रान्त में विचरने के लिए अपनी मुनि मण्डली के साथ पधारे । गोगुन्दा के सुप्रसिद्ध श्री छगनलालजी सेठ मुनिश्री को प्रथम गृहस्थ अवस्था से ही जानते थे । दीक्षा के बाद भी मुनिश्री में उनकी प्रगाढ श्रद्धा थी । सं०१९८९ का चातुर्मास गोगुन्दा हो ऐसा वे मुनिश्री से बहुत समय से आग्रह करते रहें । उन्हीं की प्रेरणा से गोगुन्दा श्री संघ कईबार बहुत बडी संख्या में स्थान स्थान पर विनंती करने को जाते रहे । अन्त में गोगुन्दा से लगभग ५०–६० व्यक्ति जब नान्दिसमा ग्राम जाकर अत्याग्रह किया तो मुनिश्री ने चातुर्मास की स्वीकृति पूज्यश्री जवाहरलालजी महराज की आज्ञा प्राप्त हो जाने पर देदी ।

श्री छगनलालजी सेठ को अपनी इच्छा पूर्ति से बडी प्रसन्नता हुई । वे वहां से घर जा कर फिर एक देवालय पर गए । वहां शहद की (मधु) मखियां किसी के द्वारा छोडे जाने पर सेठ छगनलालजी पर टूट पडी । उनके काटे लग जाने से वे दो तीन दिन में हि अपनी मधुर भावना को लेकर सदा के लिए चल बसे, उनके पुत्र परसरामजी सेठ जो पश्चिम रेल्वे में T.T.E है पूज्य श्री अी सेवा का लाभ अन्तिम अवस्था तक खूब लेते रहें ।

१९–८९ का चातुर्मास गोगुन्दा में

हिज होलिनेस हिन्दवाकुल सूर्य महाराणा सा.
श्री भूपालसिंहजी साहेब. उदयपुर

चातुर्मास का समय समीप आने पर मेवाड के अनेक क्षेत्रों को पावन करते हुए मुनिश्री सन्तमण्डली के साथ चातुर्मासार्थ गोगुन्दा पधारे । मेवाड के इतिहास में गोगुन्दा की अपनी स्वतंत्र जगह है । बहुतसी ऐतिहासिक घटनाएँ इस नगर में घटी है । यहां के शासक झालासरदार रहे हैं और राज उनकी उपाधि थी । महाराजश्री के समय बालकुमार राजश्री भेरुसिंहजी राजा राज करते थे । शाहजादा खुरम भी यहां रहा था । जैन साहित्य के १७वीं शताब्दी के ग्रन्थों में इस नगर का नामोल्लेख मिलता है । यह मेवाड के प्राचीन प्रधान स्थानकवासी संप्रदाय का केन्द्र भी रहा है । पहाड पर बसा हुआ होने से यह प्राकृतिक जलवायु की सुषमा से समृद्ध है । गर्मी के मौसम में यह स्थान बडा सुहावना लगता है। और गृष्म ऋतु कि रात्रि में भी कपडा ओडना पडता है ।

सन्त प्रवर के चातुर्मासार्थ आगमन से सारा नगर प्रसन्न था । जैन अजैन जनता ने बडी श्रद्धा और भक्ति से आपका भव्य स्वागत किया । उस दिन सारे नगर में जिवहिंसा बन्द रखी गई थी । गोगुन्दा (मोटेगांव) के सरकारी कर्मचारी भी बडी संख्या में उपस्थित हुए । आपके प्रतिदिन व्याख्यान होने लगे। बडी संख्या में लोग महाराज श्री की मधुर उपदेशमयी वाणी को श्रवण कर अपने को धन्य मानने लगे। चातुर्मास के बीच तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने तपस्या प्रारम्भ कर दी । तपस्वीजी को तपस्या पर अनेक श्रावक श्राविकाओं ने यथाशक्ति त्याग, प्रत्याख्यान, दया, पौषध, उपवासादि तपस्याएं प्रारम्भ कर दी । उस अवसर पर समाजभूषण सेठ दुर्लभजीभाई जौहरी और केशुलालजी ताकडिया भी दर्शनार्थ आये । तपस्वीजी के दर्शन कर बडे प्रसन्न हुए । तपस्वीजी की गंभीर एवं शान्त मुखमुद्रा को देखकर बोल पडे—"हमने अपने जीवन में अनेक तपस्वियों के दर्शन किये किन्तु तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महराज जैसी शान्ति कहीं भी दृष्टिगोचर नहीं हुई । तपस्वीजी एक महान् सन्त है समाज के भूषण हैं । प्रायः तपस्वी लोगों की क्रोध के साथ मैत्री रहती है । बात-बात पर क्रोध करना उनका स्वभावसा बन जाता है किन्तु हमने देखा तपस्वीजी के पास क्रोध आने से भी डरता है । यहां प्रत्येक बात का बडी शान्ति के साथ उत्तर मिलता है । मुख पर ग्लानि का नाम निशान भी नहीं है । श्रीमहावीर प्रभु के चउदह हजार सन्तों में 'धन्ना मुनि' को तप और त्याग से ही विशिष्ट स्थान प्राप्त था । वैसे हि हमारे आज के मुनि समाज में तपस्वीजी भी अपना गौरवपूर्ण स्थान रखते हैं ।" इस प्रकार जौहरीजी ने अपने प्रवचन में तपस्वीजी की भूरि-भूरि प्रशंसा की । स्थानीय श्रावक संघ के धार्मिक उत्साह को देख दोनों सज्जन बडे प्रभावित हुए । और श्रावक संघ की बड़ी प्रशंसा करने लगे ।

तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने धोवन पानीके आधार से ८३ दिन की सुदीर्घ कठोर तपस्या की । तपस्या काल में आप सदा जाग्रत रहते थे । जरा-जरासी बात में भी अपने संयम का ध्यान रखते थे । विवेक से जहां चलते, विवेक से उठते, विवेक से बैठते, किं बहुना, अपना हर काम विवेक से करते थे । जहां तक हो सके आप कम से कम मुनियों से सेवा करवाते थे । प्रायः स्वाध्याय ध्यान में निमग्न रहना आपका कार्य बन गया था ।

तपस्या की समाप्ति के दिन स्थानीय श्रावकसंघ ने सर्वत्र इस दिन को सफल बनाने की सूचना पत्र पत्रिकाओं द्वारा बाहर भेजी । करीब दो हजार गांवों ने गुरुदेव द्वारा भेजे गये सन्देश का श्रद्धापूर्वक स्वीकार किया ! सर्वत्र अगते फलवाये गये । उस दिन अपने अपने गांववालों ने यथाशक्ति त्याग प्रत्याख्यान किये । तपस्याएं की । सर्वत्र हजारों मूक प्राणियों को अभयदान मिला । दो हजार गांववालों ने तपस्वीजी के पूरके दिन निम्न पांच बातों का पालन किया—

(१) जीवहिंसा न करना। (२) मद्य, मांस शराब का सेवन नहीं करना। (३) सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य रखना। (४) उभयकाल प्रभु प्रार्थना करना और दीन अनाथों की सहायता करना। (५) उस रोज गौ, भैस आदि के बच्चों को अन्तराय नहीं देना अर्थात् गौ भैस बकरी के बच्चों को उस दिन अपने मां का पूरा दूध पीने देना। उन्हें दूहना नहीं।

तपस्या के पूर के दिन अधिक वात यह हुई की हजारों लोगो ने तपस्वीजी के दर्शन किये और उस दिन से सदा के लिए दारु, मांस एवं जीवहिंसा और रात्रि भोजन, परस्त्री सेवन, कन्या विक्रय, हरी लीलोत्री आदि का त्याग किया। पूर के दो दिन पहिले से ही दूर-दूर के सज्जनगण पधारने लगे। उपाश्रय के बाहर मैदान में व्याख्यान मण्डप सजाया गया था। पूर के दिन सभामंण्डप में पं. रत्न श्री घासीलालजी महाराज 'तप की महत्ता' पर १॥ घन्टे तक प्रभावशाली प्रवचन दिया। श्रोतागण बडे प्रसन्न हुए। सब ने कहा कि ऐसा आनन्द हमारे जीवन में यहां कभी नहीं हुआ।

पूर के दिन उदयपुर, वड़ी सादड़ी, कानोड, जावरा, जोधपुर, ब्यावर, आदि कई शहरों के लगभग ५००० हजार व्यक्ति सम्मिलित हुए थे। उस दिन स्थानकवासी भाईयों की दुकाने तो बन्द रही थी, परन्तु मन्दिरमार्गी, तेरहपन्थी भाईयों ने भी अपना सब कारोबार बन्द रखा था। सैकड़ों जीवों को मृत्यु के मुख से मुक्त किये। गरीबों को मीठाई तथा वस्त्रादि दिये गये।

तपश्चर्या का प्रभाव—

उन दिनों उदयपुर में भयंकर हैजा चल रहा था। उदयपुर वाले तपश्चर्या के पूर पर गोगून्दा आवे तो गोगून्दा में भी हैजा फैल जाने का भय हुआ। जागीरदार की तरफ से कामदारजीने आकर सारी बात कही और बोले कि हम उदयपुरवालों को यहां की कुशलता के लिए आने की रोक लगाना चाहते हैं। मुनि श्री ने कहा "आप रावजी सा० तथा माजी सा० को कहदें कि उदयपुर वालों से यहां कुछ भी बिगाड नहीं होगा निश्चिन्त रहें। मुनि श्री से इस प्रकार समाधान पाकर किसी को कुछ भय नहीं हुआ। अन्य गांव के हजारों व्यक्ति आये ही थे साथ ही साथ उदयपुर से भी मोटरें भर २ कर आने लगी। हेजे के असरवाले व्यक्ति मार्ग में तथा मोटरस्टेण्ड पर वमन करते हुए आए। गांव में प्रवेश के वाद किन्हीं को भी वमन नहीं हुआ। मुनिश्री के तथा तपस्वीजी महराज के दर्शन के बाद हेजे के बिमारों को बिमारी थी यह भी महसूस नहीं हुआ। तपस्या की पूर्णाहुति के दिन यानी चतुर्दशी के दिन ब्रह्मपुरी का विशाल चौक सभा से पूरा भर गया। व्याख्यान में मुनि श्री ने उदयपुर वालों से कहा कि" धर्म का बहुत बडा प्रभाव है। जब शान्तिनाथ भगवान गर्भ में थे तब सर्वत्र हैजा महामारी फैली थी। हजारों व्यक्ति प्रतिदिन महामारी के विकराल काल में समाजाते थे। उस समय वामादेवी माता ने गर्भस्थ बालक का स्मरण कर सर्व दिशाओं में जल छीटा तो महामारी चली गई और सर्वत्र शान्ति फैल गई। आज उस घटना को हुए करोड़ों वर्ष बीत गये हैं किन्तु श्रीशान्तिनाथ भगवान का शान्त प्रभाव आज भी अक्षुण्ण रूप से चल रहा है। आज भी श्रद्धा से शान्तिनाथ भगवान का स्मरण किया जाय तो महामारी जैसी बिमारियां अवश्य शान्त हो सकती है। तुम लोग जब उदयपुर जाओ तब तुमसे वहां अगर कोई पुछे कि गोगून्दा से क्या लाए हो तो यही कहना कि हम आनन्द लाए हैं। इस प्रकार सभी लोग एक स्वर से वहां जाकर कहोगे तो धर्म प्रभाव से वहां भी शान्ति हो जाएगी।"

पारणे के वाद जब उदयपुर वाले गए और मुनि श्री के कहे अनुसार उन दर्शनार्थियों ने 'आनन्द लाए' शब्द का प्रयोग किया तो उदयपुर में से हेजे का प्रचण्ड प्रकोप हट गया। तभी से उदयपुर वालों की पं. श्री घासीलालजी महाराज तथा तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज में पूर्ण श्रद्धा बढी।

तपश्चर्या की समाप्ति पर पानरवा राणा श्रीमोहब्बतसिंहजी ने अपने बारह सौ गांवों में, महरपुररावजी श्री तेजसिंहजी ने अपने ९०० गावों में गोगून्दा के रावजी, ने ९९० ओगना के रावजी ने अपने ९०० सौ गांवों में उस दिन जीवहिंसा बन्द रखकर अगते पलवाये। उस अवसर पर उदयपुर से श्रीजीवनसिंहजी महता, चीफमिनिस्टर श्री तेजसिंहजीमेहता, रेल्वे मेनेजर श्री चन्द्रसिंहजी मेहता तथा अन्य राजकर्मचारी गोगून्दा आये थे।

देव भी अहिंसक बना

भाद्रपद शुक्ला छठ के दिन की घटना है। प्रातःकाल कुछ कुछ अन्धेरा था उस समय एक आदमी एक बकरे की गर्दन पकडकर उसे मारने को ले जा रहा था। बकरे की चिल्लाहट तपस्वीजी के कान पर पडी। उस समय वन्दना करते हुए सेठ साहब श्री देवीलालजी मास्टर से मुनि श्री ने फरमाया कि इस गरीब मुक प्राणी को बचाना चाहिए। तपस्वीजी की आज्ञा मिलते ही देवीलालजी उस आदमी के पास पहुँचे। और उससे पूछा कि यह बकरा कहां लेजा रहे हो। तो उसने जबाब दिया– यह बकरा रावले के मां साहब का है। यह कह कर वह बकरे को लेकर रावले में चला गया। मास्टर साहब रावले में पहुँचे। और मां साहब से निवेदन किया कि तपस्वीजी इस बकरे को अभयदान दिलवाना चाहते हैं आप उनकी इच्छानुसार इसे अमरिया करदें। मां साहब ने कहा यह बकरा देवता के बलि–दान का है। पहले से ही राज कि तरफ से चढता आया है। इस लिए मैं लाचार हूँ। आखिर बकरे को भैरुजी मण्डोराजी के मन्दिर में मारने के लिए ले गये। मारने की तैयारी थी कि इतने में भैरुजी से भाव में मास्टर साहब ने सिर्फ इतनी ही अर्ज की कि तपस्वीजी महाराज की यह इच्छा है कि बकरा अमर होना चाहिए। तपस्वीजी की तपश्चर्या से भैरुजी प्रभावित तो थे ही। तुरत भैरुजी ने अपने भक्तों से कहा–"इसके कान में कडी डालकर इसे अमर कर दो। हम तपस्वीजी की आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकते। उनकी आज्ञा के उल्लंघन का परिणाम अच्छा नहीं निकल सकता। तपस्वी लोग तो बडे होते है। उनके त्याग के सामने हमारी शक्ति कुछ भी काम नहीं करती।

इतनी बात. भैरुजी के कहने पर बकरा अमर हो गया। भैरुजी की आज्ञा से बकरे के कान में कड़ी डाल दी गई। किन्तु इससे लोगों को सन्तोष नहीं हुआ। उन्होंने दुबारा भाव के समय भैरुजी से प्रार्थना की कि आपके बलिदान के लिए दूसरा बकरा लाया जाय!

तुरत भैरुजी ने भाव में आकर कहा तुम लोग मेरी छलना क्यों करते हो? हमनें बकरा अपने मन से नहीं छोडा किन्तु तपस्वीजी की आज्ञा से छोडा है। हम लोग देव हैं और देव तपस्वीलोगों की सेवा करते हैं। तपस्वीजो की आज्ञानुसार आज से कोई भी बकरा मेरे स्थान पर नहीं मरेगा। अगर कोई भूल से भो मेरे स्थान पर किसी भी जीव का वध करेगा तो वह मेरे कोप का भागी बनेगा। और मेरे कोप का क्या परिणाम होगा यह आप लोग जानते ही हो।

भैरुजी की इस आज्ञा का उपस्थित भक्तों पर अच्छा असर पडा। सबने उस दिन से देवी देवता के नाम बलि न देने की प्रतिज्ञा ग्रहण की।

तपस्या का प्रताप और प्रभाव अकथनीय होता है। तप के प्रभाव से मानव पूर्व संचित कर्मों को क्षय करता ही है। किन्तु इहलौकिक अनेक सिद्धियां भी उससे प्राप्त हो जाती है। तपस्या की शास्त्रों में बडी महिमा बताई है। शूलपाणि जैसा हिंसक देव, चण्डकौशिक जैसा भयंकर क्रोधी एवं अर्जुनमाली जैसा हत्यारा भी दीर्घ तपस्वी भगवानश्री महावीर स्वामी के प्रताप से अहिंसक बन जाता है। यह तो रही इतिहास की बातें। वर्तमान काल में भी तपस्वी श्री सुन्दरलालजो महाराज के महान तप के प्रभाव से भैरुजी

भी अहिंसक बन जाते हैं। प्रतिवर्ष भैरुजी जो अनेक बकरों के खून से अपनी प्यास बुझाता था। वह भैरुजी अब से अहिंसक बन जाता है और अपने भक्तों को भी अहिंसक बनने की प्रेरणा देता है।

इस घटना का गोगून्दावासियों पर बडा प्रभाव पडा। अनेकों ने सदा के लिए जीववध का त्याग कर दिया। रावले में मां साहब ने भी हिंस करने और कराने का त्याग कर दिया।

मोटेगांव का यह चातुर्मास बडा सफल रहा। मोटेगांव में तीन मोटे (बडे) कार्य हुए। १-मोटागांव २ मोटी तपस्या पर मोटा उपकार-करीब दो हजार गांवों में अगते पलवाये गये (३) मोटो चमत्कार खुद भैरुजी तपस्वीराज के आधीन होकर अपने लिए बलिदान में आये हुए बकरे को अभयदान देना। भाद्र शुक्ला दशमी के दिन उदयपुर निवासी अंबालालजी बाफणा के सुपुत्र केशवलालजी की दीक्षा हुइ, बडे वैराग्य भाव से दीक्षा लेने चाहते थे परन्तु उनको पिताजी की आज्ञा नहीं मिली, बाफनाजी उदयपुर की महाराणी साहेबा के कामदार के छोटे भाई थे, वे दीक्षा देना नहीं चाहते थे। इन्हें परम वैराग्य से दीक्षा लेना था आज्ञाबगर महाराज श्री दीक्षा नहीं दे सकते। और उनको दीक्षा लेना है, इसलिए उन्होंने स्वमेव दीक्षा ग्रहण की। और महान तपस्वी बन गये अभी भी उदयपुर के आस पास ही बिचरते हैं।

महाराज श्री के इस चातुर्मास में परोपकार के अच्छे अच्छे कार्य हुए। अनेकों ने जीवहिंसा, मद्य, मांस, वैश्यागमन, जूआ आदि दुर व्यसनों का त्याग किया। तपश्चर्या भी खूब हुई। यहां के संघ ने आगत बन्धुओं की एवं गुरुदेव को जो सेवा की वह सदैव प्रशंसा ने शब्दों में अंकितु रहेगी।

ज्यों ज्यों चातुर्मास समाप्ति का समय निकट आता था त्यों त्यों आस पास के क्षेत्रों के संघ अपने अपने क्षेत्रों में पधारने की विनतियां लेकर महाराज श्री के समीप आने लगे। चामुर्मास समाप्त हुआ। महाराज श्री ने अपनी मुनि मण्डली के साथ गोगुन्दा से विहार कर दिया। हजारों स्त्री पुरुषों ने अत्यन्त दुःख के साथ आप को विदा दो। विदाई के समय सब की आंखो में आंसू थे। श्रावक गण तो यही चाहते थे कि महाराज श्री यहीं बिराजे और अपनी अमृतमय वाणी का लाभ हमें सदा मिलता रहे। किन्तु संयम मार्ग की उज्जवलता तो ग्राम नगरों में बिचरने में ही रही हुई है। संयम की रक्षा के लिय विचरना अनिवार्य है।

महाराज श्री के विहार समय झालावाड का संघ भी उपस्थित था। झालवाड श्री संघ चाहता था कि महाराज श्री हमारे प्रान्तको पावन करो तदनुसार महाराजश्री ने सन्त मण्डली के साथ झालावाड की ओर विहार कर दिया। भिन्न भिन्न स्थानों में उपकार करते हुए आप छाली ग्राम पधारे।

वहां के ठाकुर साहब एवं उनके काका साहेब नाथूसिंह महाराज श्री के दर्शन के लिए आये। रावले में ही महाराज श्री का व्याख्यान रखा गया। व्याख्यान में ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य, और शुद्र आदि सभी जाति के व्यक्ति उपस्थित हुए। महाराज श्री के व्याख्यान का उपस्थित जन पर अच्छा प्रभाव पडा। ठाकुर साहब ने महाराज श्री के उपदेश से जीव हिंसा और शराब पीने का त्याग किया।

वहां से क्रमशः विहार करते हुए आप देवास पधारे। देवास के ठाकुर साहब श्रीमान् महर सिंहजी परिवार सहित आपके व्याख्यान में पधारे। व्याख्यान से प्रभावित होकर ठाकुर साहब ने छोटी शिकार का त्याग किया। यहां झालावाड के निवासी भाई मंगलचन्दजी महता ने महाराज श्री के समीप दीक्षा ग्रहण की। देवास संघ ने दीक्षा का सारा खर्च कर अच्छो सेवा का परिचय दिया। दीक्षा के अवसर पर झालावाड, वाकल आदि आसपास के गांवों के लोग बडी संख्या में उपस्थित हुए। उस समय का दृश्य बड़ा मन मोहक एवं वैराग्योत्पादक था। मुनि श्री ने बडे समारोह के साथ भाई

मंगलचन्दजी को दीक्षा प्रदान की। इस अवसर पर झालावाड और वाकल संघ ने दीक्षा उत्सव को सफल बनाने में बडा सहयोग दिया। मोदीजी मगनलालजी; लोढाजी पन्नालालजी, फूलचन्दजी आदि प्रमुख श्रावकोंने महाराज श्री की बडी भक्ति की।

वहां से आप गोराणा पधारे। यहां आपका जाहिर व्याख्यान हुआ। आपके व्याख्यान की प्रसिद्धि तो पहिले ही हो चुकी थी इसलिए साधारण सूचना से ही सारा गांव आपके प्रवचन में उपस्थित हुआ। आपके प्रभावपूर्ण प्रवचन से गांव के अधिकारी गण बडे प्रभावित हुए और जीव हिंसा का त्याग किया। वहां से आप झाडोल होते हुए वाघपुरा पधारे। वाघपुरा में सेठ श्री कोठारीजी ने एवं श्रीसंघ ने अच्छा लाभ लिया। वहां से आप वाकल होते हुए ओगणा में पधारे। यहां के श्रीसंघ ने बाजार के बीच आपके प्रवचन का प्रबन्ध किया। प्रतिदिन करीब दो हजार तीन हजार व्यक्ति व्यख्यान में उपस्थित होते थे। यहां के रावजी साहब श्रीमान् उदयसिंहजी एवं उनके भ्राता जसवन्तसिंहजी एवं कर्मचारि गण प्रतिदिन आपके व्याख्यान में उपस्थित होते थे और आपके प्रभावशाली प्रवचन का लाभ लेते थे। इस शुभ अवसर पर पानरवे के ठाकुरसाहब श्रीमान मोहब्बतसिंहजी सा. का भी पधारना हुआ। आपने भी प्रवचन सुना। इन ठाकुर सहिबों का धर्म प्रेम बडा सराहनीय रहा।

महाराजश्री ने ठाकुरसाहबों से कहा–"मानव जन्म की सफलता के लिए आपको परोपकार के कार्य करने चाहिए" इस पर ठाकुरों ने कहा–सन्तों का जीवन तो परोपकार के लिए ही होता हैं। संत की वाणी भी दूसरे की भलाई के लिए ही होती है। हमारा सौभाग्य है कि आप जैसे महान विद्वान सन्तों को एवं तपस्वी श्री सुन्दरलालजी म. जैसे तपोरत्न का यहां आगमन हुआ है। अतः आपकी आज्ञा का पालन करना हमारा कर्तव्य है। अतः आप हमारे योग्य जो भी आदेश देंगे उसकी राज्ज में अवश्य तामिल होगी।'

व्याख्यान समाप्ति के बाद राणाजो श्री मोहब्बतसिंहजी तथा सोनानिवेस ओगने रावजी श्रीउदयसिंहजी साहब ने कोठारीजी श्री छगनलालजी सा. को बुलाकर राज्य के भीतर जोवहिंसा न करने के पट्टे लिखावा कर महाराज श्री के चरणों में भेट किये। इसके बाद ही राणाजी ने भोजन किया। पट्टों का सारांश इस प्रकार है–

"अष्टमी, चतुर्दशी, एकादशी और अमावस्या इन तिथियों में राजस्थान के अन्दर किसी तरह की शिकार व जीव हिंसा नहीं की जावेगी। तथा समस्त वैशाख मास में हमारे राज्य की सीमा में किसी भी प्रकार का जीव वध नहीं होगा। अर्थात् प्रत्येक मास की चार तिथियों के हिसाब से ग्यारह मास की ८८ अठासी तिथियों में और कुवर साहब श्री तखतसिंहजी ने शेर चित्ता आदि पांच हिंसक जीवों के शिवाय सब तरह के शिकार का त्याग किया। कुंवर छगनसिंहजी ने भी छोटी शिकार का त्याग किया।

उस अवसर पर स्थानीय श्रावक श्राविकाओं ने भी यथाशक्ति अच्छे त्याग प्रत्याख्यान किये। ठाकुर मुहब्बतसिंहजी ने जो पट्टा लिख कर महाराज श्री को भेट किया उसकी नकल इस प्रकार है—

श्री रामजी

दः राणाजी मोहबतसिंहजी

श्री महाराज श्री १००८ श्री तपस्वी महाराज व १००८ श्रीघासीलालजी महाराज व श्री मनोहर लालजी महाराज व श्री समेरमलजी म० व श्री कन्हैयालालजी म० व श्री केशुलालजी महाराज श्री मंगल-चन्दजी म० व सब साधु का विराजना मु० ओगना में होने पर राणाजी साहब श्री मोहब्बतसिंगजी पान-रवा मुकाम से यहां पधारना ओगने में होने पर महाराजश्री का व्याख्यान सुनवा के लिए पधारे सो धरम

की बात का उपदेश महाराज ने फरमाया, उसी वखत श्री १०८ तपस्वीजी महाराज के नाम का दशहरे के रोज लागत में से एक बकरा अमर किया जावेगा। और आठम इगारस, चौदस और अमावस इन तिथि के रोज कोई तरह की शीकार व राजस्थान में जीव हिंसा नहीं की जावेगी। श्राद्ध के महिने में जीव हिंसा नहीं की जावेगी, और राणाजी साहब का फरमाना हुआ कि सब ही साधु बडा गुणवान हैं कठा-तक बखाण करवा। या बात वखान सुनवासु मालूम हुआ। सं. १९८९ का मागसर सुदी ४

द: कोठारी छगनलालजी का सब राणा का हुकुम से यह पट्टा लिखा। वैशाख मास पूरा कुल बारह महिने के ११८ एक सौ अठारह दिन में किसी भी प्रकार की राज्यभर में हिंसा नहीं होगी। यह नियम हमारे वंश परम्परागत चलेगा। और तपस्वी श्री श्री सुन्दरलालजी महाराज की याद में प्रतिवर्ष दशहरे के दिन एक एक बकरे को अमरिया कर दिया जायगा। उदयसिंहजी साहब ने भी इसी प्रकार का पट्टा लिखकर महाराज श्री को दे दिया।

ईस अवसर पर अनेक राजपूतों ने जीव हिंसा, मांस सेवन एवं मद्यपान का त्याग किया।

वहां से विहार कर आप मादडे पधारे। यहां के ठाकुर साहब श्रीमान् रत्नसिंहजी साहेब बडे विचक्षण नीति निपुण और धर्म भावनासेयुक्त शासक है। आपने महाराज श्री का सपरिवार प्रवचन सुना। आपके पुत्र एवं राज्य के उत्तराधिकारी कुँवर साहब श्री तखतसिंहजी एवं छोटे कुंवर साहब श्री छगनसिंहजी ने भी महाराजश्री के प्रवचन सुने। प्रवचन का आप लोगों पर अच्छा प्रभाव पडा। आपने महाराजश्री के उपदेश से जीव दया के पट्टे लिख दिये। जिसका सारांश इस प्रकार है–

"मेरी राज्य की सीमां में एकादशी, अष्टमी, चतुर्दशी अमावस्या इन तिथियों में किसी भी प्रकार की जीवहिंसा व शिकार नहीं होगी। तपस्वीजी सुन्दरलालजी महाराज की याद में प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमरिया किया जायेगा। और यह नियम हमारी वंश परम्परागत चलेगा। कुंवर साहब श्रीतखतसिंहजी ने शेर चित्ता आदि पांच हिंसक जीवों के शिवाय सब तरह की शिकार का त्याग लिया। कुंवर छगनसिंहजी ने भी छोटी शिकार का त्याग किया।

वहां से विहार कर आप छोटी परावली पधारे। जनता ने आपका भव्यस्वागत किया। प्रवचन हुआ। प्रवचन में परावली के ठाकुर साहब श्री गोविंदसिंहजी भी उपस्थित हुए। प्रवचन सुनकर आपने निम्न प्रतिज्ञाएं ग्रहण की।

"अष्टमी, चतुर्दशी, एकादशी, अमावस्या, पूर्णिमा के दिन एवं भाद्रपद शुक्ला पंचमी के दिन मेरे समस्त राज्य की सीमा में जीवहिंसा एवं सब तरह की शिकार बंद रहेगी। तथा इन दिनों शराब पीने की भी मनाई की गई। तथा प्रति वर्ष तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी म० के नाम पर एक एक बकरा अमर किया जावेगा। खुद ठाकुर साहब ने किसी भी जीव पर गोली चलाने का एवं तलवार से उन पर वार न करने का प्रण लिया। और समस्त प्रकार को शिकार का त्याग किया।

वहां से आप बडी परावली पधारे। यहां आपका रावले में प्रवचन हुआ। प्रवचन सुनकर माजी साहब गुलाबकुवरजी ने एवं जीजाजी साहब केशरसिंहजी कुंवरजी ने इस प्रकार की प्रतिज्ञा कर जीव दया का पट्टा लिखकर महाराज श्री को भेट किया। पट्टे का सार इस प्रकार है।

प्रतिवर्ष दशहरे पर एक एक बकरा अमरिया किया जावेगा। वैशाख महिने में एक बकरा अमर करूंगा। मेरे खुद के वास्ते दारु मांस एवं जीववध का त्याग। दशहरे के लागत में से एक एक भैंसा हरसाल आंककर अमर करूंगा, भादवा सुदी पांचम के दिन मेरे राज्य की सीमा में जीवहिंसा और सब तरह की शिकार बन्द रहेगी। महिने में पांच तिथि में मेरे समस्त राज्य में जीवहिंसा और शराब बन्दी

रहेगी। वैशाख, श्रावण और भाद्रपद मास में मेरे समस्त राज्य में जीवहिंसा कतई बन्द रहेगी। और शिकार भी नहीं की जावेगी। ये नियम मेरे वंश परम्परा गत चलेंगे

इस के बाद ठाकुर साहब के जीजाजी ने इस प्रकार की प्रतिज्ञा ग्रहण की।

आजीवन मांस और मदिरा का त्याग श्रावणमास में हरिलिलोत्री का सर्वथा त्याग रहेगा। तपस्वीजी के नाम प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमर किया जायगा। वैशाख मास की दोनों ग्यारस के दिन उपवास रखूंगा। ये नियम मेरे वंश परम्परागत चलेंगे। उपर लिखे मुजब हुकुम समस्त राज्य में जारी करदियेजायगा और आज से ही इसकी तामील होगी। दः माँ साहब गुलाबकुवर दः सौभाग्यवती केशरकुंवर का

परावली से महाराज श्री ने सेनवाडे की तरफ विहार किया। सेनवाडे में पहूँचने के बाद महाराज श्री के रावले में ही प्रवचन हुए। सेनवाडे के ठाकुर साहब श्रीमान् मदनसिंहजी ने एवं उनके समस्त परिवार ने महाराज श्री का प्रवचन सुना। गांव के अन्य सरदारों ने भी महाराज श्री का प्रवचन सुना। प्रवचन सुनकर ठाकुर साहब ने तथा गावों के सरदारों ने निम्नलिखित प्रतिज्ञा की—

आसोज महिने में नवरात्रि के समय जो देवी के नाम बकरे चढ़ाये जाते हैं उनमें से एक एक बकरे को अमर कर दिया जावेगा। वैशाख मास में समस्त गांव में हिंसा बन्द रहेगी और ठिकाने में भी हिंसा नहीं होगी। वैशाख मास में मांस एवं शराब पीने का त्याग। ठाकुर साहब खुद अपने हाथ से किसी जीव को नहीं मारेंगे। कुंवर साहब रामसिंहजी ने पांचों तिथियों में जीवहत्या मांस व दारु सेवन का त्याग किया। इस प्रकार नियम लेकर स्थानीय ठाकुर साहब ने महाराजश्री को जीव दया के पट्टे भेट किये।

इसके अतिरिक्त अन्य राजपूत सरदारों ने भी झटके से (अपने हाथ से) किसी को मारना एवं जीवहिंसा मांस सेवन व दारुपीने का सर्वथा त्याग किया। ठकुरानियों ने भी पांच तिथियों में मांस, शराब एवं लिलोत्री का त्याग किया। यहाँ श्रावकों के दो चार ही घर है। शेष घर प्रायः राजपूतों के ही है। महाराजश्री के उपदेश से अन्य भी बहुत से उपकार के कार्य हुए।

सेनवाडे से विहार कर महाराजश्री देवड़ाके खेडे पधारे। यहां भी महाराजश्री का प्रवचन हुआ प्रवचन बडा प्रभावशाली रहा। प्रवचन से प्रभावित हो ठाकुर साहब व अन्य राजसरदारों ने निम्नलिखित प्रतिज्ञा कर महाराज श्री को जीव दया के पट्टे भेट किये। पट्टे के सारांश ये थे—

भैरुजी के नाम जो प्रतिवर्ष बकरा चढाया जाता है उसे अब से तपस्वीजी के नाम अमरिया कर दिया जावेगा। आज से समस्त गांव में जीवहिंसा कतई बन्द रहेगी। मौत होने पर ओगाले में जाति ठराव से सर्वथा जीव हिंसा बन्द की जाती है। अर्थात् नुकते में बहन बेटी जमा होती है तब जाति के लिए ओगाला मिटाने को बकरे मारे जाते हैं इस अवसर पर अनेक बकरों का संहार होता है। जिसकी जैसी हैसियत होती है वह उतना ही बकरा मारता है। इस जाति ठराव के अनुसार आज से यह प्रथा बन्द कर दी जाती है।

दस्तखत समस्त गाँव के सरदार

इस नियम से हजारों बकरों को प्रतिवर्ष अभयदान मिला।

इस विहार काल में रुपाहेली के ठाकुर सा. श्रीमान चतुरसिंहजी ने निंबाहेडा के ठाकुर साहब माधो सिंहजी लोडारिया के ठाकुर साहब श्री बालूसिंहजी ने, सिंगावल के ठाकुर साहब श्री रेवतसिंहजी ने तथा विहार बीच आने वाले अनेक ग्रामो के जागिरदारों ने माफीदारों ने जमीनदारों ने सरदार राजपूतों ने म. श्री का प्रवचन सुना और प्रवचन से प्रभावित हो उन्होंने अपने हस्ताक्षरों से जीव दया के पट्टे लिख कर महाराजश्री को भेट किये। आपके विहार काल में सैकडों जीवों को अभयदान मिला। झालवाड प्रान्त के

हजारों राजपूत सरदारों ने जीवहिंसा एवं शराब पीने का त्याग किया ।

इस प्रकार मेवाड क्षेत्र के विविध ग्रामों में आप प्रवचन पीयूष का पान कराते हुए देलवाडे पधारे। देलवाडे में महाराज श्री के व्याख्यान बाजार में होते थे । व्यख्यान में रावजी सा. राजकर्मचारी गण हिन्दू एवं मुसलमान जनता बडी संख्या में उपस्थित होकर प्रवचन का लाभ उठाती थी । वहां के नगर सेठ श्री नाथुलालजी सा. सेवरिया, श्रीलालजी साहेब खेतपालिया आदि श्रावक समूह ने भी महाराज श्री की अच्छी सेवा की और जैन शासन की प्रभावना बढाने में अच्छा सहयोग दिया ।

इस प्रकार देलवाडे में कुछ दिन विराज कर आपने अपने मुनिवृन्द के साथ नाथद्वारे की ओर विहार किया । मार्ग में उंठाले के नायब हाकिम सा. श्री मनोहरसिंहजी मेहता महाराजश्री के दर्शनार्थ आये । साथ में देवरिया के नगर सेठ श्री कजोडीमलजी सा. कासमा के सुपुत्र मांगीलालजी कासमा को भी साथ में लाये । उस दिन महाराजश्री का जाहिर प्रवचन हो रहा था प्रवचन का विषय था "न वैराग्यात्परो बन्धु र्नसंसारात् परोरिपुः न वैराग्य से बढकर अपना कोई बन्धु नहीं और सांसरिक विषयों से बढकर अपना कोई शत्रु नहीं" इस विषय पर प्रवचन में उस रोज आपने इतना अच्छा प्रकाश डाला कि सारी परिषद् अत्यंत वैराग्य के रंग में रंग गई । लोग अपना स्वत्व भूलकर आत्म विभोर हो उठे । किसी को अपना कुछ ध्यान न रहा । व्यख्यान क्या था ? स्वयं मुनिश्री का वैराग्यमय जीवन ही वाणी का रूप धारण कर सामने आया था । उनका जीवन बोल रहा था । हृदय को हिलाने वाले उनके इस अमृतमय पवित्र व्योख्यान को सुनकर सब से अधिक सच्चरित्र युवक मांगीलालजी प्रभावित हुए । वैराग्य के प्रवाह में बह गये । आपने महाराजश्री की सेवा में रहने का एवं प्रव्रज्या ग्रहण करने का निश्चय किया । सन्तों के वैराग्यपूर्ण जीवन को देखकर आपकी मोह निद्रा भी सहसा भंग हो गई । हृदय में अलौकिक प्रकाश हुआ । भोग की और आकर्षित करनेवाली युवावस्था में ही उन्हें संसार की अनित्यता का प्रत्यक्ष अनुभव होने लगा । इन्होंने मन हो मन में दीक्षा लेने का दृढ विचार कर लिया ।

भोजनोपरान्त जब नायब हाकिम सा. अपने गांव की ओर लौटने लगे तब श्री मांगीलालजी को भी वापस अपने साथ आने को कहा तो मांगलालजी ने कहा हाकिम साहेब मैं अब आपके साथ घर जाना नहीं चाहता । महाराजश्री के प्रवचन से मेरी अन्तर आत्मा जाग्रत हो गई है । मैं महाराज श्री के समीप दीक्षा ग्रहण कर आत्मकल्याण करूगा । संसार के प्रति मेरी अब किंचित मात्र भी आशक्ति नहीं रही । युवक मांगीलालजी के इस वैराग्यपूर्ण विचारों को सुना तो हाकिम सा. विचार में डूब गये और कुछ क्षण विचार करने के बाद हाकिम साहब ने कहा मांगीलाल इस समय तो तुं मेरे साथ चल । घर जा कर अपने सर्वपरिवार वालों से विचार विमर्श कर ले फिर इस मार्ग की ओर बढ । मांगीलालजी ने कहा' इस समय तो मैं महाराज श्री की सेवा में ही रहूंगा । घर जाने का फिर सोचूंगा । हाकिम साहब के बहुत कुछ समझाने के बाद भी जब मांगीलालजी आने को तैयार नहीं हुये तो हाकिम सा. महाराज श्री की मांगलिक श्रवण कर चले गये । महारज श्री के साथ साथ पैदल विहार करते हुए मांगीलालजी नाथद्वारा आये ।

नाथद्वारे में जब महाराज श्री पधारे तो स्थानीय जनता ने आपका भव्य स्वागत किया । नाथद्वारा वैष्णवों का तीर्थस्थल है । यहां प्रतिदिन हजारों की संख्या में वैष्णवजन श्रीनाथजी के दर्शनार्थ आते रहते हैं । महाराजश्री के आगमन से यह जैनों के लिए भी एक भव्य धाम बन गया । आस पास के गांव वाले सैकडों की संख्या में महाराज श्री के दर्शनार्थ आने लगे । व्याख्यान बाजार के बीच होने लगा । व्यख्यान सुनने के लिए नाथद्वारे के हाकिम साहब राज्य के कर्मचारी गण वकिल डॉक्टर मन्दिर

के भण्डारी परमभक्त श्री नाथुलालजी सा. एवं वैष्णव समाज के अग्रनी हिन्दू एवं मुसलमान भाई प्रतिदिन सैकड़ों की संख्या में आने लगे। प्रवचन का स्थानीय जनता पर अच्छा प्रभाव पडा। फलस्वरूप व्याख्यान में जनता की उपस्थिति उत्तरोत्तर बढने लगी। उस समय पूज्यश्री अमरसिंहजी महाराज सा० की सम्प्रदाय के वयोवृद्ध विदुषी साध्वी श्री धुलकुँवरजी, तथा शस्त्रज्ञा महासतीजी श्री शीलकुंवरजी आदि महासतीजी महाराज भी विराज रही थी। भगवान महावीर के शासन के स्तंभ चार तीर्थ का यह सम्मेलन जनता की धार्मिक भावना में खूब वृद्धि कर रहा था। सामायिक पौषध उपवास दया एवं तपश्चर्या तो इस प्रकार हो रही थी मानो चातुर्मास ही चल रहा हो।

महासतीजी की सेवामें वैराग्यवती बहन सुन्दरबाई थी। यह त्याग वैराग्य की साक्षात् मूर्ति थी। यह गोगुन्दा निवासी हरकावत परिवार की महिला थी। और इन्हें दीक्षा की आज्ञा मिल गई थी। इधर मांगीलालजी ने भी अपने परिवार वालों से दीक्षा की आज्ञा प्राप्त करने के लिए प्रयत्न प्रारंभ कर दिये थे। हमारे चरितनायकजी के भव्यप्रभाव के कारण एवं युवक मांगीलालजी के उत्कट वैराग्य के सामने नत मस्तक होकर उनके अभिभावकों ने श्री मांगीलालजी को भी दीक्षा की आज्ञा प्रदान कर दी। माघ शुक्ला दसमी का दिन दीक्षा प्रदान का मुहूर्त्त निकाला गया। स्थानीय संघ ने आमंत्रण पत्रिका द्वारा सर्वत्र इसकी सूचना भेज दी। धीरे धीरे दीक्षा काल भी समीप आ पहुँचा। जिसकी कुछ समय से प्रतीक्षा की जारही थी। विक्रम संवत १९९० माघशुक्ला दसमी बुधवार का दिन शुभ उदय हुआ। उस दिन नाथदारा शहर में दूर दूर प्रदेशों से अनेक साधर्मिक बन्धु इस अपूर्व अवसर को देखने के लिए एकत्रित हुए। नाथद्वारे के चतुर्विध संघ के समक्ष बडे समारोह के साथ उत्कट वैरागी मांगीलालजी की एवं श्रीमती वैराग्यवती सुन्दरबाई की महाराजश्री के पवित्र मुख से दीक्षा सूत्र के उच्चारण पूर्वक दीक्षा सम्पन्न हुई। दीक्षा के समय जो मानव समूह एकत्र हुआ था वह अत्यन्त दर्शनीय था, भव्य था और नाथद्वारे के सेवाभावी श्रावकों के भक्ति का परिचायक था। इस प्रकार नगर में एक ही दिन दो महान् आत्माओं ने दीक्षा ली। दीक्षा ग्रहण करने के पश्चात मुनि मांगीलालजी ने ज्ञान भ्यास का सामान्य परिश्रम किया। थोडे समय में ही आपने ज्ञान और सुदीर्घ तपश्चर्या से आप अपने गुरुदेव के प्रेमपात्र शिष्य बन गये। शेषकाल नाथद्वारे में विराज कर हमारे चरितनायकजी ने अपने मुनिवृन्द के साथ खमनोर की ओर विहार किया।

वीरभूमि हल्दी घाटी के नाम से शायद ही कोई वीरपूजक भारतवासी अपरिचित होगा। महाराणा प्रताप के साथ हल्दीघाटी का जो सम्बन्ध रहा है उसे लिखने की आवश्यकता नहीं है। इसी घाटी की सुरम्य तलहटी में यह नगर बसा हुआ है। शताब्दियों से यह खमनोर गुलाब के पुष्प उत्पादन का केन्द्र रहा है। मुगलकाल से ही यहां का गुलाब बाग विख्यात रहा हैं। आज भी गुलाबजल, गुलाबइत्र और गुलकन्द के लिए अती विख्यात स्थान है। जैन इतिहास की दृष्टि से भी इसका स्थान कोई कम महत्वपूर्ण नहीं है। आचार्य सावंतरामजी म. ने यहां कई वर्षावास व्यतीत कर जैन संस्कृति को पल्लवित पुष्पित किया था। खमणौर में प्रतिलिपित जैन साहित्य प्रचुर परिमाण में अन्यत्र उपलब्ध है। इस इतिहास प्रसिद्ध नगर में महाराजश्री के पदार्पण से जनता की धार्मिक भावना प्रबल हो उठी। सामायिक प्रतिक्रमण दया पौषध उपवास बेले तेले आदि की तपश्चर्या खूब होने लगी। आस पास के ग्राम निवासी भी बडी संख्या में महाजश्री के दर्शनार्थ आने लगे। महाराज श्री के भव्य व्याख्यान से प्रभावित हो सैकडों व्यक्ति प्रतिदिन प्रवचन सुनने के लिए आते थे। यहां कुछ दिन विराज कर आपने सेमल की ओर विहार कर दिया।

सेमल के श्रावकों ने आपका भव्य स्वागत किया । प्रतिदिन आपके प्रवचन होने लगे । महाराज श्री कि भव्य व्याख्यान शैली से प्रभावित हो श्रावकों ने होली चातुर्मास तक सेमल में ही बिराजने की विनंती की । महाराज श्री ने श्रावकों की उत्कृष्ट भावना देख कर फाल्गुनी पूर्णिमा तक सेमल में रहने की विनंती मानली । आपके प्रभाव पूर्ण उपदेश से कईयों ने मद्य, मांस एवं जीवहिंसा परस्त्री गमन आदि दूर्व्यसनों का त्याग किया ।

दया पौषध सामायिके उपवास आदि धर्म ध्यान अच्छी मात्रा में हुवे । आसपासके लोग भी बड़ी संख्या में महाराजश्री के दर्शनार्थ आये, बडा उपकार हुआ । होलीका भव्य चातुर्मास समाप्त कर आप का अपनी मुनि मण्डली के साथ विहार हुवा । रास्ते में जिसप्रकार सूर्य की सब पर समान दृष्टि रहती है उसी प्रकार छोटे बडे सब क्षेत्रों को पावन करते हुए आप जैन शासन की प्रभावना करने लगे । आपनें अपने विहार काल में सैकड़ों व्यक्तियों को सन्मार्ग की ओर प्रवृत्त किया ।

संघ संगठन

व्यक्ति से बढकर आज संघ का महत्व है । संघ के महत्वके सामने व्यक्ति का महत्त्व अकिंचन सा प्रतीत होता है । संघ में समस्त व्यक्तियों की शक्तियां गर्भित है । संघ की उन्नति के लिए यदि किसी व्यक्ति की उपेक्षा की जाय तब भी वह संघश्रेय के लिए श्रेयस्कर ही है । जो संघ को उपेक्षित कर व्यक्ति को महत्व देता है वह संघ का नेता संघ को अन्धकार में ही डालता है । संघ की अवनति ही करता है ।

आज प्रत्येक व्यक्ति में यह भावना जाग्रत होनी चाहिए कि वह समाज का एक आवश्यक अंग है । एक बडे कारखाने का संचालन उसके आश्रित रहे हुए बहुत से छोटे छोटे पुर्जो से ही होता है । यदि एक भी पुर्जे में कोई खराबी आजाती है तो वह मशीन कभी चल नहीं सकती । ठीक इसी रुप में संघ भी एक महान यंत्र है । जिस में चतुर्विध संघ रूप अलग-अलग आवश्यक पुर्जे सन्निहित हैं । यदि एक भी साधु साध्वी, श्रावक, श्राविका रूप पुर्जा विचलित अवस्था में हो जाएगा तो संघ रूप कारखाना अबाध गति से चल नहीं सकता । इसी दृष्टि कोन को समक्ष रख कर उन दिनों अजमेर साधु सम्मेलन की जोरदार तैयारियां चल रही थी । समाज के नेताओं के प्रबल प्रयत्न से ता० ५ एप्रील १९३३ में चैत्र कृष्णा दशमी के दिन अजमेर में साधु सम्मेलन करने का निश्चय हुआ । अजमेर साधु सम्मेलन के पूर्व सभी सम्प्रदाय के मुनिगण अपने अपने संप्रदाय का संघठन कर लेना चाहते थे । तदनुसार पूज्य आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज भी अपने संप्रदाय को संगठित करने के लिए प्रयत्न शील हो गये । उन्होंने अपने सभी मुख्य-मुख्य मुनिगणों से इस विषयक परामर्श किया । संप्रदाय के सम्मेलन के लिए ब्यावर स्थान योग्य समझा गया । सभी मुनिराजों को ब्यावर पहुँचने के लिए संदेश भेज दिये गये । उस समय पूज्य आचार्य श्रीजवाहरवालजी महाराज जयतारण बिराज रहे थे । हमारे चरित नायक पंडित प्रवर उस समय मेवाड प्रान्तान्तर्गत सेमल क्षेत्र के आस पास विचर रहे थे । पूज्य श्री नें अपनी मुनिमण्डली के साथ ब्यावर की ओर प्रस्थान कर दिया । पूज्य श्री का सन्देश पाते ही पं. प्रवर श्री घासीलालजी महाराज भी ब्यावर की ओर प्रस्थान करने की तैयारियाँ करनें लगे, जब आपने सेमल से विहार किया तो आपको श्रावकों से समाचार मिले कि पं. श्री गब्बूलालजी महाराज एवं श्री मोहनलालजी म० पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज का सन्देश लेकर आपकी सेवा में आरहे हैं । सन्देश मिलने पर महाराजश्री सेमल के आस पास ही रहे । पं. गब्बूलालजी महाराज शीघ्र ही महाराजश्री की सेवा में पधार गये । उन्होंने पूज्य श्रीजवाहरलालजी महाराज का निमन्त्रण पत्र पं. मुनि श्रीघासीलालजी महाराज को दिया । निमन्त्रण पत्र की प्रतिलिपि इस प्रकार थी ।

संवत १९८९ फागन सुद ९ आदित्यवार ग्राम बावरा

"श्री" घासीलालजी को साता बांच कर नीचे लिखि सूचना ध्यान में लें।

१–चरु में जो ठहराव हुआ है वह ज्यों का त्यों कायम रहा है उसमें फेरदार नहीं हो सकता।

२–सम्मेलन में जाने के लिए मैने मोडीलालजी चान्दमलजी, हर्षचन्दजी, घासीलालजी, (चरित्रनायक) पन्नालालजी, इन पांच सन्तो को नियत किये थे परन्तु सन्तों ने उपरोक्त बात नहीं स्वीकार की और सम्मेलन में संप्रदाय कि तरफ से जाने के लिए मुझे हो नियत किया है। मैं सम्मेलन में जो कुछ करूंगा वह सारे संप्रदाय के सांधुओं को वे उजर मंजूर रहेगा उसे पालन करने के लिए सारे सन्तों ने दस्तखत किये हैं।

३–उग्रसिंहजी मास्टर ने आकर जो कुछ मुझे सुनाया है मैं उसमें बाध्य नही हो सकता। क्योंकि मैं गुरु हूँ और तुम शिष्य हो।

४ उपर की सारी हकीकत प्रेम पूर्वक अच्छी तरह से हृदयमें लेकर तुम मेरे पास जल्दी आओ। मनोहरलालजी और तपस्वी सुन्दरलालजी का भी होना अति आवश्यक है। अत. सारे सन्तों को साथ में लेकर अवश्य आओ। मनोहरलालजी और तपस्वी सुन्दरलालजी की तो खास तोर पर आवश्यकता है। सो ध्यान में रहें और उन्हें अवश्य लेते आवें। यहां से गब्बूलालजी और मोहनलालजी को इसलिए भेजा है कि वे वहां पर तुम्हें अच्छी तरह से यहां को परिस्थिति को समजावे ताकि कोई वैमनस्य नहीं पैदा होने पावे। ओम् शान्ति। द० जवाहरलाल

मुनिराजों के द्वारा प्राप्त पूज्य श्री के निमंत्रण पत्र पर अपनी स्पष्ट सम्मति प्रकट करते हुए महाराज श्री ने कहा–मैं पूज्य आचार्य श्री के निमंत्रण पत्र का हार्दिक सुभेच्छा के साथ आदर करता हूँ। उन्होंने मुझे योग्य समय में ही याद किया है, यह मेरा सौभाग्य है। किन्तु इतने दूर तक मेरे आने से कोई सुसंगत परिणाम नहीं आ सकता। जब तक आचार्य श्री जी तटस्थ और निस्पक्ष भाव से नही बरतेंगे तबतक सम्प्रदाय का संगठन असंभव है। हमने यह पहले हि स्पष्ट कर दिया है कि तब तक आचार्य श्री जी अपनी संप्रदायके दोषीसाधु को दण्ड देकर उन्हें शुद्ध नहीं कर लेते तब तक हमारे और आपके बीच का मतभेद मिट नहीं सकता। आचार्य श्री जी जानते हुवे भी एक ऐसे मुनि को युवाचार्य पद पर अधिष्ठित करना चाहते हैं जो अपने चतुर्थ महाव्रत से पूर्णतः च्युत हो चुका है। उन्हें संप्रदाय का नेता बनाने का अर्थ है संप्रदाय को शाथिलाचार की गहरी खाई में ढकेल देना। हम ऐसे साधु का नेतृत्व कभी स्वीकार नहीं कर सकते जिसका मूलव्रत ही नहीं रहा। संप्रदाय का आचार्य वही हो सकता है जो ज्ञान दर्शन एवं चारित्र से सम्पन्न हो। पूज्य आचार्य श्री को हमने बार बार एतद् विषयक सूचना की थी किन्तु उनको शीथिलाचार पोषक एक व्यक्ति के प्रति पक्षपात पूर्ण नीति के कारण हमारी यह संप्रदाय दो विभागो में विभक्त होने के मार्ग पर खडी है।

यदि आचार्यश्री जी हार्दिक भाव से संगठन करना चाहें तो उन्हें एक आदर्श साधुमार्ग के अनुकूल न्याय मार्ग को अपनाना चाहिए। यदि वे दोषी को दण्ड देकर उन्हें शुद्ध करने को तैयार हैं तो मैं उनकी हरतरह की आज्ञा को शिरोधार्य करने के लिए सदैव तैयार हूँ।

दूसरी बात निमन्त्रण पत्र में खास कर के मुनिमनोहरलालजी की एवं तपस्वी श्री सुन्दर लालजी को आने का लिखा है अतः वे पूज्य श्री की सेवा में जासकते हैं।

महाराज श्री का यह स्पष्ट उत्तर पाकर पं. श्री गब्बूलालजी महाराज ने एवं मोहनलालजी महाराज ने विहार कर दिया। साथ में श्री मनोहरलालजी महाराज, तपस्वी मुनि श्री सुन्दरलालजी महाराज

एवं मंगलचन्दजी महाराज ने पूज्य श्री की आज्ञानुसार ब्यावर की ओर विहार कर दिया । कुछ दिनों में ब्यावर में पूज्य हुक्मीचन्दजी महाराज की सम्प्रदाय के करीब ४५ सन्त एकत्र हो गये । पूज्य आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज का भी आगमन हो गया । ब्यावर में आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज ने अपने सम्प्रदाय के प्रमुख मुनियों के साथ साधु सम्मेलन के सम्बन्ध में विचार विमर्ष किया और संप्रदाय के संघठन को मजबूत बनाने के लिए संप्रदाय की समाचारी को परिष्कृत किया । साथ २ साधु सम्मेलन में जाने के लिए अपने सम्प्रदाय के पांच प्रमुख मुनिराजों का एक प्रतिनिधि मण्डल बनाया । उन प्रतिनिधि मुनियों की नामावली इस प्रकार है ।

(१) पं. मुनि श्री मोडीलालजी महाराज (२) पं. मुनि श्री चान्दमलजी महाराज (३) पं. मुनि श्री हर्षचन्दजी महाराज (४) पं: मुनि श्री घासीलालजी महाराज (५) पं मुनि श्री पन्नालालजी महाराज

प्रतिनिधि चुनने के बाद प्रमुख मुनिराजों ने आचार्य श्री के बिना सम्मेलन में संम्मिलित होना उचित नहीं समझा । उन्होने आचार्य श्री से प्रार्थना की "आप हमारे नायक हैं । आप अनुभवी एवं समर्थ व्यक्ति हैं । आप अपनी दिव्य प्रतिभा से सम्मेलन को उचित मार्ग पर ले जा सकते हैं । आपका वहां पधारना अनिवार्य है । और संप्रदाय के समस्त साधु साध्वियों का आप पर पूर्ण विश्वास है । मुनिराजों के इस आग्रह पर आचार्य श्री ने कहा कि "यदि आप सब लोगों का यही आग्रह है तो मैं स्वयं संघ का प्रतिनिधि बन कर सम्मेलन में जाउंगा और वहां जो कुछ भी निर्णय मैं करूंगा उसे आपलोगों को स्वीकार करना होगा ।" इस पर उपस्थित सभी मुनिराजों ने आचार्य श्री के निर्णय को मान्य करने वाले पत्र पर हस्ताक्षर कर वह पत्र पूज्य श्री को दे दिया ।

उस पत्र की प्रतिलिपि इस प्रकार थी

श्रीमान् निज पर शास्त्र सिद्धान्त तत्त्वरत्नाकर, विद्वन्मुकुट चिन्तामणि भव्यजनमानसराजहंस, भक्तगण कमलविकासन प्रभाकर, वाणीसुधासुधाकर, गाम्भीर्य–धैर्य माधुर्य, औदार्य शान्ति दया दाक्षिण्यादि सद्गुणगण परिपूर्ण, रमणीयविशाल भवन ऐक्येच्छुक शिरोमणि, ज्ञानादिरत्नमय संरक्षक, सिरताज जैनाचार्य पूज्यपाद श्री १००८ श्री श्री जवाहरलालजी महाराज के चरणकमलों में सर्वसंभोगी मुनिमण्डल की यह सविनय प्रार्थना है कि आप जिन शासन के उत्थान के लिए जैनसाधुसम्मेलन अजमेर में पधार कर जो कार्य करेंगे वह हमें सर्वथा मान्य होगा । संवत १९८९ माघ शुक्ला ९ शनिवार [सभी उपस्थित मुनियों के हस्ताक्षर]

ब्यावर से आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज ने अजमेर साधुसम्मेलन की ओर विहार कर दिया । अजमेर साधुसम्मेलन ता० ५ एप्रिल १९३३ मिति चैत्र शुक्ला दसमी के दिन आचार्य श्री सम्मेलन की कार्य वाही में सम्मिलित हो गये । सम्मेलन में साधु एवं श्रावकसंघ को एकत्रित करने के अनेक प्रस्ताव पास हुए ।

अजमेर साधु सम्मेलन के अवसर पर ही आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज ने पंडित प्रवरश्री घासीलालजी महाराज से बिना विचारे ही गणेशीलालजी महाराज को [जो अचने मूलव्रत के खण्डन के कारण अपनी संप्रदाय में एक चर्चास्पद व्यक्ति बने हुए थे ।] युवाचार्य बनाने का निर्णय कर लिया । जब पंडित प्रवर श्री घासीलालजी महाराज को इस बात का पता चला तो उन्होंने कडा विरोध किया । श्री-घासीलालजी महाराज के विरोध की उपेक्षा कर जावदगांव में फाल्गुण शुक्ला ३ सं. १९९० को श्री गणेशीलालजी महाराज को युवाचार्य पदवी से विभूषित कर दिया । इस बात को लेकर दोनों गुरु शिष्य का संघर्ष बढने का मुख्य कारण यही था । एक दिन सेमलगांव के ओसवाल समाज की जनरल मिटिंग हुई जिसमें समाज में इकट्ठे हुए रुपयों को एक दूसरे को रखने का आग्रह कर रहे थे परन्तु कोई भी पंचायती

रूपयों को रखने को तैयार नहीं थे। इसी बात को लेकर परस्पर बडा विवाद चल रहा था, तब पं. मुनिश्री घांसीलालजी महाराजने उनको सुझाव दिया कि किन्हीं योग्यसाधु साध्वी का चातुर्मासु करालो तो इस विवाद का प्रश्न ही नही रहेगा "न बांस होगा न बांसुरी बजेगी" मुनिश्री की बात सुनते ही गांव के सभी पंच बोले कि हमारे इस छोटेसे पहाडी क्षेत्र में कौन चातुर्मास करेगा। हम किसे जाकर विनंती करें आपही हमारे यहां चातुर्मास बिराजों, हमारी विनती को स्वीकार करो! संघ ने चातुर्मास का अत्याग्रह किया। महाराजश्रोने फरमाया—चातुर्मास के लिए अभी काफी समय है। चातुर्मास काल जब नजदीक रहेगा और हमारा विचरना भी आसपास के क्षेत्र में रहेगा उस समय विचार किया जायगा। आप अपनी भावना यथावत् रखें। महाराजश्री के इस कथन से सभी को किञ्चित् आशा बन्ध गई कि निरन्तर प्रयत्न करते रहने से हमारी आशा अवश्य पूरी होगी। इस प्रकार सेमल शेष काल तक बिराजे। आपके बिराजने से बडा उपकार हुआ

पं. मुनि श्री घासीलालजी महाराज सा, ने सेमल से विहार कर मचीन्द पधारे। मचीन्द के पास ही तीन मील दूरी पर एक बहुत बडा पहाड है। जिसके अन्तराल में महाराणा प्रताप के समय के पहले बहुत बडा सुन्दर शहर बसा हुआ था। जो मुसलिम आक्रमण के समय उजाड दिया गया था। यहां महाराणा प्रताप एकान्तवास में रहे थे। अन्नाभाव में पहाड के शिखर पर स्थित उम्बर के फल खाकर दिन काटते थे। यहां मुनिश्री पधारे और "जिनवर जिनवर जिनवर जिनवर, जिनवर ध्यान लगावे" इस प्रकार की प्रभाती स्तुति बनाई। इसी पहाड की कन्धरा में महाराणा प्रताप की महारानी ने पुत्र को जन्म दिया था तब एक चट्टान पर कुंकुम केशर का साथिया किया। वह अभीतक भी ज्यों का त्यों वहां अंकित है! वहीं पानी का झरना तथा प्राकृतिक गुलाब के पौधे जानेवालों के मन को प्रमुदित करतें हुए भूतकालीन इतिहास की साक्षी देते हैं।

चातुर्मास के पहले मुनिश्रीजी तथा तपस्वीजी महाराज के उपदेश के प्रभाव से खमनोर, सलोदा, वाटी, कदमाल, आदि गांवों के देवों तथा भैरुजी के मन्दिर पर कहीं पाडा तो कहीं बकरा प्रतिवर्ष नवरात्रि पर मरनेवाले प्राणियों में से अमर करके छोड देने की स्वीकृति एवं पट्टे भी प्राप्त किये थे।

खमनोर के पास मानजी महाराज की खेडी नामका गांव है। जहां मेवाड के प्रसिद्ध महान सन्त परम प्रभाविक आचार्य म. मानमलजी म. विहार करते हुवे उस गांव के मार्ग से अन्यत्र पधार रहे थे। रास्तेमें वर्षा आजाने से भैरु के मन्दिर में वर्षा से बचने को ठहर गये। गांववालों को जैन साधुओं के प्रति बडी घृणा थी, उनको बरसते पानी में मन्दिर से बाहर जाने की आज्ञा दी। मानजी स्वामी ने गांव वालों को शिक्षा देना उचित समझा ताकि भविष्य में वे जैन साधु के प्रति उचित व्यवहार करना सीखे। तपस्वी मानजीस्वामो ने भेरुजी को कहा—भरुजी चलो। हम और तुम दोनों यहां से चले। क्योकि ये लोग हमें यहां ठहरने नहीं देतें। इतना कहते ही भैरुजी की मूर्ति मानजी महाराज के साथ चलने लगी। भैरुजो की मूर्ति को चलते देख लोग बडे आश्चर्य चकित हुए। उन्होंने सोचा सन्त बडे चमत्कारी हैं, इन्हें नाराज करने का परिणाम अच्छा नहीं निकलेगा। चमत्कार को नमस्कार की उक्ति के अनुसार लोग मुनिजी के चरणों में गिरे और बोले! महाराज साहब हम से बडी भूल हो गई हैं। मांफ करिये। भविष्यमें हम कभी भी जैनमुनिको परेशान नहीं करेंगे। मुनिजी नें कहा—तुम लोग प्रतिवर्ष भैरुजी के नाम पर बकरों का बलिदान करते हो। आज से यह प्रतिज्ञा करो कि हम भैरुजी कें नाम पर एक भी जीव नहीं मारेंगे तो हम यहां रहेंगे वरना हम और भैरुजी यहां से चल देते हैं। लोगोंने कहा अगर भैरुजी बलि नहीं चाहते हैं तो हम जीवहिंसा नहीं करेंगे। महाराजश्री के सामने एवं भैरुजी की मूर्ति को छूकर प्रतिज्ञा की

कि हम लोग अब किसी भी जीव को देव के नाम पर नहीं मारेंगे । मानजी स्वामी वहीं ठहर गये और लोगों को उपदेश देकर धार्मिक प्रभावना की । बहुत वर्षों तक बलिदान बन्द रहा और बादमें लोग फिर बलिदान करने लगे । इधर महाराजश्री भी तपस्वी सुन्दरलालजी महाराज के साथ खमनोर पधारे और महाराजश्री ने भैरुजी के नाम बलि न करने का गांव वालों को समझाया । महाराजश्री के उपदेश का प्रभाव गांववालों पर अच्छा पडा । तथा स्थानीय कास्तकारों ने भी उपदेश सुना । परिणाम स्वरूप भैरुजी के नाम होनेवाली हिंसा सदा के लिए बन्द हो गई । मुनिश्री ने अन्यत्र विहार कर दिया ।

मेवाड के आस पास के क्षेत्र में विचरते समय सेमल संघ चातुर्मास के लिए कईबार विनंती करने के लिए आया । श्रावकों के अत्याग्रह को देख करके मुनिश्री ने विनती स्वीकार की और सं. १९९० का चातुर्मास आपने सेमल में व्यतीत किया ।

तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने देलवाडा रहते हुए ही तपश्चर्या प्रारंभ कर दी थी, सोलवें उपवास में आपने देलवाडा से तीन कोस के लिए विहार किया । अठारवें उपवास के समय आपने मुनिश्री के साथ सेमल चातुर्मासार्थ गाममें प्रवेश किया । सेमल गांव में केवल उस समय साधारण-घरों की वस्ती थी ।

वि० स. १९९० का ३२ वाँ चातुर्मास सेमल में–

मेवाड़ के अनेक क्षेत्रों को पावन करते हुए हमारे चरितनायकजी श्री घासीलालजी महाराज चातुर्मासार्थ सेमल पधारे । पं मुनि श्री मनोहरलालजी म. घोरतपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज, विद्याप्रेमी श्री सुमेरमलजी महाराज व्याख्यान प्रेमी श्री कन्हैयालालजी महाराज छोटे तपस्वी श्री केशुलालजी महाराज लघु मुनिश्री मंगलचन्द्रजी महाराज, एवं नव दीक्षित श्री मांगीलालजी महाराज आदि ठाना सात आपकी सेवा में थे ।

इस चातुर्मास में दीर्घतपस्वीजी सुन्दरलालजी महाराज ने चोरासी दिन की लम्बी तपश्चर्या की । छोटे तपस्वीजी श्री केशुलालजी महाराज जो कि उदयपुर वाले दरबार के जेब खजानची जो अम्बालालजी के बडे पुत्र और जिन्होंने गत वर्ष में ही गोगुन्दे में बडे वैराग्यभाव से दीक्षा ग्रहण की थी । उन्होंने ३१ दिन को तपश्चर्या की लघु तपस्वीजी श्री मांगीलालजी महाराज ने तेला, पचोला; अठाई तेला, सत्रह की तपस्या की तीनों तपस्याओं का पूर भादवासुदी १४ चतुर्दशी रविवार के दिन हुआ

तपस्या की पूर्णाहुति के दिन करीब छ सात हजार की जनता तपस्वीयों के दर्शन के लिए ऊपस्थित हुई । इस अवसर पर सैंकडों भील, राजपुत, जाट आदि आस पास के लोग एकत्रित हुए और तपस्वीयों के दर्शन किये । दर्शनार्थ आनेंवाले सज्जनों ने हजारों तरह के त्याग ग्रहण किये, सैंकडों ने जीवहिंसा एवं शराब पीने का त्याग किया । सैकड़ों बकरों को अमरिया कर दिया गया । अनेकों ने प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमरिया करने का प्रणलिया । आनेवालो ने प्रायः सभी जनोंने कुछ न कुछ तो त्याग ग्रहण किया ही । इसके अतिरिक्त महाराज श्री के उपदेश से कन्या विक्रय, वर विक्रय, मद्य-मांससेवन तथा परस्त्रीगमन आदि अनेक पापो का श्रोताओं ने त्याग किया । कई सज्जनों ने ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार किया । इस अवसर पर अनेक संस्थाओं को सहायता मिली

महाराज श्री पतित-पावन हैं, आप की वाणी में उग्र संयम का तेज अन्तर्निहित रहता था कि श्रोता प्रभावित हुए विना नहीं रहते थे । सेलम के श्रोतावर्ग में जहा राज्य के उच्च से ऊच्च अधिकारी और प्रतिष्ठित से प्रतिष्ठित नागरिजन थे । वहां जूआरी शराबी एवं दुराचारी व्यक्ति भी व्याख्यान में ऊप स्थित होकर महराज श्री के प्रवचन का लाभ लेते थे । और प्रवचन से प्रभावित होकर त्याग मार्ग की और प्रवृत्त होते थे । सेमल एक तपो भूमि है, इस क्षेत्र में अनेक तपस्वीयों ने तपस्या कर इसे पावन

किया है, तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने भी इस क्षेत्र को अपने महान तपोमयजीवन से पावन किया है। यहां के निवासी बड़े भाग्य शाली थे कि जिन्हें ऐसे सन्तों के चातुर्मास का सुअवसर मिला है। इस पुनित प्रसंग को सफल बनाने के लिए स्थानीय श्रीसंघने तन मन धन से सेवा की और अपनी धार्मीक भावना का परिचय दिया।

९० दिनकी तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज की महान तपस्या की पूर्णाहुति की सूचना सर्वत्र पत्र पत्रिकाओं द्वारा भेजी गई। जिसमें उसदिन सर्वत्र जीवहिंसा की बन्दी एवं सब प्रकार के सावद्य व्यापार न करने का जनता को अनुरोध किया गया।

पत्रिका के मिलने पर महाराष्ट्र, मेवाड़, राजस्थान, मध्यप्रदेश के सैकड़ो गांवों में उस दिन अगता रखा गया। उपवास आयंबिल एकासना शीलव्रत, रात्रिभोजन आदि विविध त्याग प्रत्याख्यान रखे गये। अनेक ठाकुरों जागीरदारों एवं ठिकानदारों ने उस दिन यथा शक्ति बकरों को अम्मरिया कर दिया। जीवहिंसा बन्द रखी इसकी सूचना उन्होंने पत्र द्वारा महाराज श्री को दी। जुड़ा भोमड़ मेवाड़ के राणा राजवीरसिंहजी ने हिंसा न करने की प्रतिज्ञा पत्र महराज श्री की सेवामें भेजा। समस्त बड़ावा के चारणों ने भी महाराज श्री के उपदेश से देवी देवता के नाम होनेवाली हिंसा बन्द कर प्रतिज्ञा पत्र महराज श्री को मेट किया। इन दोनों प्रतिज्ञा पत्र की प्रति लिपि इस प्रकार है।

श्री एकलिंगजो श्रीरामजी — नं. ४१

बाईस संप्रदाय के पण्डित प्रवर श्री घासीलालजी महाराज का विराजना इ गुजिस्ता में वाकल पट्टे जूड़ा में हुआ मगर उस वक्त हम जूडे में मौजूद न होकर अहमदाबाद की तरफ थे जिससे उनके दर्शन न कर सके, अब इसवक्त हमारे अहलकार सोहनलालजी के जबानी मालूम हुआं कि उन्हीं मुनिराजों का बिराजना इस वक्त सेमल जिलाखमणोर में हैं और उन महात्माओं के साथ जो तपस्वीराज थे। उन्होंने इस साल भो ९० दिन की घोर तपस्या कि लिहाजा हप नीचे मुजिब प्रतिज्ञाएं कर यह पट्टा मुनिराजों की सेवा में मेट करते हैं कि-

(१) दशहरेपर एक बकरा तपस्वीराज के नामका अमरिया किया जावेगा।

(२) एकादशी चतुर्दशी आमावस्या पूर्णिमा इन तिथियों के रोज किसी प्रकार की शिकार व राजस्थान में जीवहिंसा न होगी। (३) वैशाख में किसी प्रकार की शिकार नहीं की जावेगी। फकत असोजसुदी १ सं. १९९० ता० २०-९-३३ ईसवी

शिक्का—स्वस्थान जुडा मेवाड। द: दरवार राजवोरसींह

श्री एकलिंगजी — श्री रामजी,

सिद्ध श्री महाराज साहेब श्री १००८ श्री घासीलाजी महाराज आदि ठाना ८ श्री गाम सेमल में बिराजमान होने पर ठाना, चार से पीपड पधारना हुआ सो किरपा कर वहां से बराकुवा होते हुए पधारना हुआ सो ठिकाना में समस्त चारण जागीरदार ठिकाना का समस्त गांव के तपस्वीराज का दर्शन कर सोगन कर उपदेश सुनाया सो सुनकर अभयदान का पट्टा नीचे लीखकर महाराज श्री की सेवा में मेट कर रहे हैं।

(१) अव्वल श्री माताजी खोडारजी के (२) श्री माता जो करणीजी के। (३) श्री माताजी चामुंडाजी के। (४) माताजी खेडादेवीजी के। (५) श्री माताजी भमरासाजी के। (६) श्री माताजी भैरुजी (७) श्री माताजो मामाहेबीजी के (८) श्रो खेतपालजी माताजी के। (९) श्री माताजी राडाजी के (१०) श्री माताजी कालकाजी के भोविन्डाके (११) श्री माताजी अम्बावजी के। (१२) श्री माताजी रागही-

णजी के । (१३) श्री माताजी फुलारजी के । (१४) श्री माताजी देवलजी के ढानी में ।
उपर माफिक १४ ठिकानों में जीवहिंसा होती है सो आज दिन से तपस्वीराज के व श्री एकलिंगजी श्री सुरज नारायण श्रीकरणीजी के साख से धरम का उपदेस सुन के सोगन कर जीवहिंसा बिलकुल बन्द किया सो माताजी के नाम से कोई ठिकाणे जीवहिंसा नहींकरांगा या करवावांगा नहीं बोलमा वाला लावेगा तो अमरिया कर छोडदिया जावेगा । सब देवताके मीठीपरसादी चढाई जावेगी । ये पट्टा लिखकर महाराज श्री की सेवा में भेट कर रहे हैं । समस्तगांववाला वंसपरम्परागत ये नियम पाले जावेंगे ।

संवत १९८९ ओ चैत्र वद बुधवार

दः मुणीलाल राजावत मेघदानजी व समस्त गांववाला के वास्ते लिख दिया । दः समस्त बदावा चारणों का ।

सेमल गांव के बीचोबीच एक माताजी का मन्दिर हैं । यहां प्रविवर्ष नवरात्रि के दिनों में बकरे एवं पाडो की हिंसा होती है । इस वर्ष भी प्रतिवर्ष की तरह बलि चढाने के लिए बकरे और पाडे लाये गये थे । मुनि श्री को भी इस बात का पता लग गया था कि यहां नवरात्रि में बलि होतीं है । राजपूत भी यह जानते थे कि महाराजश्री अवश्य ही बलिदान रुकवाएंगे । अतः इन लोगों ने बलि चढाने का कार्यक्रम रात्रि में रखा । रात्रि के समय बडी संख्या में लोग बलि देने के लिए पशुओं को देवी के सामने उपस्थित किया । महाराज श्री को जब यह मालूम हुआ तो वहां के सेठ श्री केशुलालजी राजावत तथा श्री तोलारामजी राका को बुलाकर कहा तुम अभी माताजी के स्थान में जावो और पशुओं को बलि से बचाने का प्रयत्न करो । इस पर दोनों श्रावकों ने कहा—महाराज साहब यह काम बडा असाध्य है । क्योकि बलि चढाते समय राजपूत इतने आवेश में आते हैं कि "यदि हम उनके काम में किसी प्रकार का विघ्न उपस्थित करेंगे तो वे पशु के स्थान में हमारी भी बलि चढा देंगे । " महाराज श्री ने कहा मर्द होकर इतने क्यों घबराते हो। तुम लोग डरो मत । भगवान श्री शान्तिनाथ का नाम लेकर जाओ वे लोग तुम्हारा बाल भी बांका नहीं करेंगे । " तुम वहां जाकर जब पूजारी को भाव आवे तब इतना कहना कि देवी ! तपस्वीजी का आदेश है कि तमाम जीवों को अमरिया कर दिया जाय । किसी प्रकार का भय मत रखना ।

महाराजश्री द्वारा इस प्रकार का साहस बढाने पर उन्हे धीरज आया । महाराज श्री से मांगलिक सुनकर वे वहां पहुँचे । उन्होंने वहां देखा कि हाथ में लठ्ठ लिए हुए कुछ लोग हिंसा का विरोध करने वालों का सामना करने के लिए खडे हुए थे । वे भयभीत तो थे परन्तु हत उत्साह नहीं हुए । वे वहीं टिके हुए रहे । अर्धरात्रि के समय भोपे को भाव हुआ तो वे दोनों आगे बढे । वहां उपस्थित लोगों ने कहा—पहले हमको पूछ लेने दो । वे दोनों ठिठुर गए । परन्तु सहसा देवीवेष्ठितभोपा भाव में बोल उठा । तुम आये सो मैं जान गया । तपस्वीजी. महाराज ने तुमको बलिदान छुडाने को भेजा है । जाओ इन जानवरों को ले जाओ और अमर कर देवो । भाव द्वारा भोपे के इस प्रकार कहे जाने पर सर्वलोग देखते ही रह गये और वे दोनों वहां बन्धे हुए पाडे बकरे को लेकर प्रसन्नता के साथ मुनि श्री के पास आए । गांव में जैनों की अल्प संख्या होने से सभी लोग "अब क्या होगा" इसी विचार में जाग रहे थे । जब वे दोनों जानवरों को लेकर निरापद आ गए तो सभी का हृदय प्रफुल्लित हो उठा । सभी लोग मुनि श्री के दिव्य प्रभाव से प्रभावित हुए ।

सेमल चातुर्मास में खमनोर के ठाकुर साहब यदा कदा महाराजश्री का व्याख्यान सुनने आया करते थे । उदयपुर से श्री जीवनसिंहजी महता, मिनिस्टर श्री तेजसिंहजी महता, माल हाकिम डॉ० श्री मोहनसिंहजी

सिंहजी मेहता, सतारा के सेठ श्री मोतीलालजी मूथा, बम्बई के सेठ श्री अमृतलालजी रायचन्दजी जौहरी आदि अनेक शहरों के प्रतिष्ठित सज्जनों ने महाराज श्री के दर्शन किये। सेमल संघ ने इनका अच्छा आतिथ्य किया। सेमल एक ऐतिहासिक स्थल है। इस गांव के समीप में ही एक कुण्ड और गुफा है। इस कुण्ड में बार ही मास पानी झरता रहता है। वहां दिन में दुपहर को मन्दिर की पूजा प्रक्षालन झालर, घंटारव आदि की स्वयं अदृश्य आवाज सुनाई देती है।

एक पहाडी पर पत्थर की चट्टान ऊंची जाकर पृथ्वी पर छत की तरह फैली हुई है। उस पत्थर की छत में से एक-एक बूंद पानी का गिरता है। वहां कोई जलाशय नहीं है। ये दोनों स्थान दर्शक के लिए आश्चर्य कारी है।

सेमल से चार मील दूर राणा प्रताप के चेटक घोडे की छत्री है और पास ही में हल्दिघाटी का ऐतिहासिक स्थान है। यहां प्राकृतिक पानी के झरने बहुत हैं। इसी झरना के पानी से बहुत सी कृषि होती है। प्राकृतिक सौंदर्य से ओत प्रोत यह स्थान अत्यन्त चित्ताकर्षक है। चारों ओर पहाड होने से वर्षा काल का समय बडा आनन्द प्रद लगता है। सर्वत्र हरियाली मन को भी हरा भरा बना देती है।

चातुर्मास धार्मीक प्रभावना के साथ सम्पन्न हुआ। सेमल के चातुर्मास का प्रभाव समस्त जैन संघ पर पडा। चतुर्विध संघ के गगनांगण में संयम तप, त्याग एवं विद्वत्ता की किरणों से प्रकाशन पं. श्री घासीलालजी महाराज का यश सर्वत्र फैलने लगा। अब आप केवल जैन समाज के ही नहीं अपितु भारत की महान विभूति बन गये। प्रखर तत्त्ववेत्ता, कुशल उपदेशक, प्रकाण्ड पण्डित. षोडषभाषा विशारद, महानत्यागी और कठोर संयमी जीवन के कारण उस समय के मुनिराजों में आपका परम आदरणीय स्थान बन गया था। साधारण जन से लेकर तत्कालीन राजा महाराजा, राणा, महाराणा, ठाकुर एवं राज मान्य अधिकारी वर्ग आपके प्रवचन से अत्यन्त प्रभावित थे। आपकी प्रसिद्धि अपनी चरमसीमा पर थी। आपके प्रवचन केवल जैन समाज तक ही सीमित नहीं थे बल्कि सभी जाति वर्ग एवं धर्मवालों के लिए उपयोगी होते थे। आप अपनी संप्रदाय में भी उच्चस्थान रखते थे।

संप्रदाय का त्याग—

उस-समय आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज का चातुर्मास उदयपुर में ही था। श्री गणेशीलालजी महाराज को युवाचार्य बनाने के बाद दोनों गुरु शिष्य का संघर्ष अपनी चरमसीमा पर था। कुछ श्रावक वर्ग भी इस संघर्ष की ज्वाला को जलती रखने का प्रयत्न करने लगे। आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज से पं. श्री घासीलालजी महाराज का संप्रदाय के दोषित साधुओं की शुद्धि करण विषयक लम्बा पत्र व्यवहार एवं श्रावकों के जरिये विचारों का आदान प्रदान होता रहा। दोनों में मतभेद की खाई चौडी होती गई। पंडित प्रवर श्री घासीलालजी महाराज ने पूज्य आचार्य श्री जवाहरलाल जी महाराज को स्पष्ट शब्दों में कह दिया कि जब तक मूलव्रत के दोषी साधु को प्रायश्चित देकर शुद्ध न करलेंगे तब तक मैं आपकी आज्ञा में चलने के लिए बाध्य नही हूँ। शास्त्रकार की यह आज्ञा है कि शिथिलाचारी एवं दोषी साधु के साथ संभोग रखनेवाला साधु भी दोषी हो होता है। मैं धर्म, शास्त्र एवं भगवान महावीर के शासन की वफादरी को अधिक महत्व देता हूं। यदि हमारे आदर्श नेता संघ के नायक भी अपने बनाये हुए नियमों के वफादार नहीं रहेंगे तो वे अपने शिष्यों के समक्ष क्या आदर्श उपस्थित कर सकेंगे ?

पं. प्रवर श्री घासीलालजी महाराज की इस स्पष्टोक्ति का असर आचार्य प्रवर श्री जवाहरलालजी महाराज पर उलटा ही पड़ा। उन्होंने बिना कुछ लम्बा विचार किये तत्काल पं प्रवर श्री घासीलालजी महा-

राज को एवं उनके साथ रहनेवाले अन्य साधुओंको संघ से बहिष्कृत करने का कार्तिक कृष्णा १ बुधवार ता. ४ अक्टूबर १९३३ को उदयपुर में श्री संघ के सामने घोषणा पत्र जारी किया। जिसकी प्रतिलिपि इस प्रकार थी–

घोषणा पत्रः-—

मेरे शिष्य घासीलालजी तरावलीगढ वाले [जिन का चातुर्मास इस वर्ष सेमल ग्राम में हैं] ने कई वर्षों से संप्रदाय तथा मेरी आज्ञा के विरुद्ध अनेक प्रकार के कार्य आरंभ कर दिये थे। तथापि मैं उन्हें निभाता ही रहा। लेकिन दो वर्ष से तो वे चातुर्मास भी मेरी आज्ञा के विना करने लगे हैं और बिना आज्ञा ही दीक्षा जैसे बडे बडे विरुद्ध कार्य भी उन्होंने कर डाले हैं। फिर भी मैंने उनको समझा बुझा-कर प्रायश्चित विधि से शुद्ध करने के लिहाज से सम्भोग से पृथक नहीं किया। मैंने ब्राबरा गांव (मारवाड से छोटे गुब्बूलालजो तथा मोहनलालजी इन दोनों सन्तों को लेखित पत्र देकर मेवाड में भेजा और घासी-लालजी को साधु सम्मेलन के समय अजमेर आने के लिए सूचना दी। परन्तु घासीलालजी ने मेरी आज्ञा का उल्लंघन किया और वे अजमेर नहीं आये। केवल मनोहरलालजो व तपस्वी सुन्दरलालजी, जिनको मैंने कुछ ही समय घासीलालजी के पास रहने की आज्ञा दी थी।

वो नव दीक्षित मंगलचंदजी को साथ लेकर साधु सम्मेलन के मौके पर अजमेर में मुझ से मिले। इन दोनों सन्तों ने उस पत्र पर हस्ताक्षर भी किए जिस पत्र में संप्रदाय के सन्तों ने मुझे यह लिखकर दिया था कि अजमेर साधु सम्मेलन में आप जो कुछ करेंगे वह हम सब को स्वीकार होगा।

अजमेर में पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज की दोनों संप्रदायों को एक करने के विषय में पंच (सन्तों) ने भविष्य विषयक जो फैसला दिया था, उस फैसले को स्वीकार करना या नहीं इस विषय में मैंने मुझ सहित उपस्थित ४२ सन्तों से पृथक् पृथक् राय ली तो सब ने यही सम्मति दी कि फैसला स्वीकार कर लेना चाहिये। उस समय मनोहरलालजी एवं तपस्वी सुन्दरलालजी ने भी सब सन्तों के समान फैसला स्वीकार कर लेने की ही राय दी थी। तब मैंने पंचों का दिया हुआ भविष्य विषयक फैसला स्वीकार कर लिया और पूज्य श्री मन्नालालजी महाराज के साथ ही फैसले की स्वीकृति के हस्ताक्षर किये तथा परस्पर सम्भोग किया पश्चात मेवाड के भूतपूर्व दीवान श्री कोठारीजी सा० बलवन्तसिंहजी के द्वारा मेवाड में मुझ से मिलने का वायदा करके मनोहरलालजी और सुन्दरलालजी विहार कर गये लेकिन् मैं जब मेवाड में पहुंचा तो सुन्दरलालजी मेरे पास नहीं आये। वे देलवाडा ही रह गये। घासीलालजी, मनोहरलालजी, तथा कनैयालालजी, मुझ से मावली गांव में मिले।

मावली में उदयपुर के नगर सेठ नन्दलालजी और मेवाड के भूतपूर्व दिवान कोठारी बलवन्तसिंहजी सरीखे समाज-हितैषी श्रावकों ने और मैंने घासीलालजी तथा मनोहरलालजी को संप्रदाय के नियमानुसार वर्ताव करने के लिये बहुत समझाया। परन्तु उन्होंने सम्मेलन के प्रस्ताव तथा कोन्फरन्स द्वारा स्वीकृत पंचों के फैसले को भी मानने से इन्कार कर दिया। कई वार पूछने पर भी उन्होंने मेरे सामने ऐसी कोई बात नहीं रखी जो विचारणीय हो। वलिक मैंने उनके सामने कइ ऐसी बातें रखी जो न्यायानुसार उन्हें अवश्य स्वीकार कर लेनी चाहिए थी। परन्तु उन्होंने एक भी बात स्वीकार नहीं की। तब मेरा विचार उसी समय उन्हें संप्रदाय एवं मेरी आज्ञा से बाहर घोषित करने का था। परन्तु कोठारीजी तथा नगर सेठ साहब की प्राथना से मैंने वह विचार कुछ दिन के लिए स्थगित रखा। आखिर घासीलालजी मुझ से चोमासे की आज्ञा मांगे विना ही मावली से चले गये।

मैं उदयपुर आया। उदयपुर से सूरजमलजी तथा मोतीलालजो (मलकापुर वाले) इन दोनों सन्तो

को पत्र देकर सेमल भेजा और घासीलालजी को कहलवाया कि सम्मेलन के निमानुसार एक स्थान पर पांच सन्तों से अधिक चातुर्मास न करें। आठ सन्तों में से तपस्वी सुन्दरलालजी समीरमलजी और किसी तीसरे सन्त को मेरे पास भेज दें। लेकिन् उन्होंने मेरी आज्ञा की अवहेलना की और सन्तों को ऐसा उत्तर दिया, जिससे वे निराश होकर मेरे पास लौट आये। मैंने यह भी सूचना कराई थी कि सम्मेलन के नियमानुसार धोवन पानी की तपस्या अनशन के नाम से प्रसिद्ध न की जावे। परन्तु उन्होंने इस नियम को भी तोड दिया और धोवन पानी की तपस्या भी प्रसिद्ध कर दी। तपस्या महोत्सव मनाने में उपदेश द्वारा भी रुकावट नहीं डाली। इसी प्रकार पक्खी के आठ चौमासी के बारह और संवत्सरी के २० लोगस्स के ध्यान विषय में साधु सम्मेलन के ठहराव का पालन नही किया। इससे मुझे यह प्रतीत हुआ कि घासी-लालजी ने मावली में पंचों का फैसला और साधु सम्मेलन के ठहरावों को नहीं पालने का जो कहा उसे कार्यरूप में भी परिणत कर दिया। इतना होने पर भी रतलामके सेठ वर्धमानजी पीतल्या आदि की प्रार्थना से मैंने उनकों आज बाहर करने की घोषणा कुछ समय के लिए और स्थगित रखी।

पश्चात् सेमल से सन्देश आने पर उदयपुर के श्रावक मेघराजजी खिंवसरा, पन्नालालजी धर्मावत और मोतीलालजी हींगड सेमल गये। उन्होंने घासीलालजी को समझाने का बहुत प्रयत्न किया, किन्तु घासी लालजी ने अपने विचार नही बदले। तत्पश्चात् रायसाहब सेठ मोतीलालजी मुथा सतारावाले, तथा जौहरी अमृतलाल भाई बम्बई वाले भी उदयपुर आये और उन्हें समझाने सेमल गये। परन्तु उनके समझाने पर भी वे नहीं समझे और कहा—हमने कमेटी के नाम से कान्फरन्स के प्रेसिडेन्ट के पास ऐक चिट्ठी भिजवा दी है। उन्होंने अमृतलाल भाई और मोतीलालजी को उक्त चिट्ठी की नकल भी दी, जिसमें लिखा था कि हमने आयन्दा के लिऐ पूज्य श्री की आज्ञा मंगवाना भी बन्द कर दिया है, इत्यादि। वह नकल लेकर और निराश होकर मोतीलालजी और अमृतलालजी भाई उदयपुर में मुझ से मिले और नकल मुझ को दिखाई। उस नकल को देखकर मुझे खेद हुआ और मेरा कर्तव्य हो पडा कि अब मैं अविलम्ब उनके लिए 'संप्रदाय तथा आज्ञा बाहर' की घोषणा कर दूं। लेकिन उसी समय प्रेसिडेन्ट हेमचन्द भाई मय डेप्युटेशन के उदयपुर आये। मैने घासीलालजी सम्बन्धी सारी हकीकत उन्हें सुनाई। कोन्फरन्स के प्रसीडेंट जंनरल सक्रेटरी सेठ मोतीलालजी तथा अमृतलाल भाई ने घासीलालजी के पत्र की नकल भी अपने हस्ताक्षरों के साथ प्रेसीडेन्ट साहब को दी। इस पर प्रेसीडेन्ट साहब ने भी मुझे यह सम्मति दी कि आप सम्मेलन के ठहराव के अनुसार उनके साथ वर्ताव कर सकते हैं। लेकिन रात को उदयपुर के कुछ भाईयों की प्रार्थना पर प्रेसीडेन्ट साहब ने मुझ से कहा कि मैं अपनी तरफ से एक चिट्ठी सेमल देता हूँ। और घासीलालजी महाराज को समझाने की कोशीश करता हूँ। अतएव आप आश्विन शुक्ला पूर्णिमा तक उनको आज्ञा बाहर करने की घोषणा न करें।

मैंने प्रेसीडेन्ट साहब की ईस प्रार्थना को मान देकर उनकी बात स्वीकार करली। प्रसीडेन्ट साहेब ने एक पत्र सेमल भेजा, वह घासीलालजी को मिल गया। उनके बाद उदयपुर के श्रावक थावरचन्दजी बाफना तथा रणजीतलालजी हींगड ने सेमल जाकर घासीलालजी को समझाने की पूरी कोशीश की। परन्तु उनका प्रयत्न भी निष्फल हुआ। इन दोनों के लौट आने पर उदयपुर से मदनसिंहजी कावडिया जोरावरसिंहजी भादव्या और मोहनलालजी तलेसरा सेमल गये। किन्तु घासीलालजी को समझाने में वे तीनों भी सफल न हुए। अर्थात् घासीलालजी ने किसी की कोई बात नहीं मानी।

कोन्फरन्स के प्रेसीडेन्ट साहब की दी हुई अवधि (आश्विन शु० १५) समाप्त हो चुकी। लेकिन घासीलालजी ने मेरी आज्ञा और संप्रदाय में रहने सम्बन्धी कोई बात स्वीकार नही की। इसलिए

निरुपाय होकर उदयपुर के श्रीसंघ की सम्मति प्राप्त करने के पश्चात् मैं श्रीसंघ के सामने यह घोषणा करता हूं कि—

(१) आज से घासीलालजी मेरी आज्ञा और संप्रदाय के बाहर हैं। इसलिए पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज की संप्रदाय के समस्त सन्त इनसे सम्भोग आदि कोई भी व्यवहार न करें। इस संप्रदाय के साथ सम्बन्ध रखनेवाले सन्त सतियाँ भी घासीलालजी से वन्दन–सत्कार आदि परिचयन करें।

(२) घासीलालजी के पास रहे हुए मनोहरलालजी सुन्दरलालजी, समीरमलजी आदि भी शीघ्र मेरे पास चले आवें। उनके पास रहने की मेरी आज्ञा नहीं है। मेरी आज्ञाको न मानकर उन्हीं के पास रहनेवाले मेरी आज्ञा के बाहर समझे जावेंगे।

(३) चतुर्विध श्रीसंघ का भी यह कर्तव्य है कि जैन प्रकाश ता० ७–५–३३ के पृष्ठ ४५८ में प्रकाशित ठहराव नं. ४ साधु सम्मेलन द्वारा निर्णीत नियमों के उपयोगी सार की कलम नं० २५ के अनुसार इनके साथ वर्ताव करेंगे।

पुनश्च–यदि घासीलालजी अपने आजपर्यंत के कृत्यों की प्रायश्चित विधि से शुद्धि तथा संप्रदाय में शामिल होना चाहें तो नियमपूर्वक संप्रदाय में शामिल करने को मैं हर समय तैयार हूं ?
उदयपुर मेवाड ता० ४–१०–१९३३ कार्तिक कृष्णा १, सं० १९९०

पूज्य श्री जवाहिरलालजी म० की घोषणा के अनुसार कोन्फरन्स के प्रेसीडेन्ट की ओर से नीचे लिखी सूचना प्रकाशित हुई।

आवश्यक सूचना–पूज्य श्री जवाहिरलालजी म० साहेब ने अपने शिष्य घासीलालजी महाराज को अपनी संप्रदाय और आज्ञा के विरुद्ध कार्यकरने के कारण अपनी आज्ञा के बिना जहाँ चाहे चातुर्मास करने से, अपनी आज्ञा के बिना दीक्षा देने से श्री साधु सम्मेलन के नियम जैसे–धोवन पानी की तपस्या को अनशन के नाम से प्रसिद्ध न करना पक्खी, चौमासी, और संवत्सरी के दिन ठहराई हुइ लोगस्स की संख्या, पाँच साधु से अधिक एक ही जगह चातुर्मास न करना–आदि के भंग करने से श्री साधु सम्मेलन के प्रस्ताव नं. ४ के अनुसार (देखो जैन प्रकाश ता० ७–५–३३ पृ. ४५८) हुक्मीचन्दजी महाराज साहेब की संप्रदाय और आज्ञा के बाहर आसोजवदी (मारवाडी कार्तीक वदी १) से कर दिया है। ऐसी खबर श्री साधुमार्गी जैन पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी महाराज के संप्रदाय के हितेच्छु श्रावकमण्डल रतलाम कि जिसके प्रेसिडेन्ट श्री वर्द्धमानजी पितलियाजी साहेब है। उनकी तरफ से तथा उदयपुर श्रीसंघ की तरफ से लिखकर भेजा गया है। जिसके उपर से यह खबर हिन्द के स्थानकवासी जैन के श्री चतुर्विध–संघ को दी जाती है, जिससे कि साधु सम्मेलन कान्फरन्स के धारा धोरण के अनुसार व्यवहार किया जा सके।

हेमचन्द रामजी भाई मेहता प्रमुख श्री श्वे० स्था० जैन कान्फरेन्स

पूज्य जवाहरलालजी महाराज सा. की एवं कोन्फरन्स के द्वारा उपरोक्त घोषणा को पढ़कर पं. श्री घासीलालजी म. सा. को एवं उनके साथि-मुनियों के मन में पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज की इस पक्षपात पूर्ण अविचारी कदम से अत्यन्त दुःख हुआ। सदोषी साधुओं को तो दण्ड देना दूर रहा किन्तु उनके दोषों का बचाव कर उनका पक्षपात करना तो दोषी को प्रोत्साहन देने के बराबर हि है। पं. श्री घासीलालजी म. सा. एवं उनके साथि मुनियों नें तथा श्रावकों ने पूज्य जवाहरलालजी महाराज की इस पक्षपात पूर्ण नीति का उत्तर देना उचित समझा। उस समय कोन्फरन्स ने एवं पूज्य श्री ने जो घोषणा की उसके उत्तर की प्रतिलिपि पाठकों के समक्ष उपस्थित है। वह इस प्रकार है।

पूज्यश्री की घोषणा का प्रत्युत्तर

श्रीमान पूज्यश्री १००८ श्री जवाहिरलालजी महाराज के शिष्य घासीलालजी महाराज तथा मुनि मनोहरलालजी महाराज तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने आपकी सेवामें अर्जकराने के लिए मुझको (मनोहरसिंह) फरमाया उस माफिक आपकी सेवामें अर्ज है कि–

अजमेर में श्री जैन कोन्फरन्स से जो प्रस्ताव पास हुए वो हमको मंजूर है सिर्फ व्यक्तिगत फैसला जो हुआ है उसमें हमको शंका होने से यह प्रस्ताव हम को मंजूर नहीं।

इस व्यक्तिगत फैसले के बारे में हमने 'श्रीमान् श्री श्री' १००८ श्री श्री पूज्यवर गुरुवर श्री जवाहिरलालजी महाराज की सेवामें अर्ज कि कि इस फैसले में हमको गणेशीलालजी के लिए मूलदोष का समाधान करना है, व चेलों की कलम के बारे में भी कई सन्तों को उजर है। इसलिये आप इस फैसले की तामिल में किसी बात की जल्दी नहीं करें और धीरप से कुछ सन्त मुख्य मुख्य इधर के कुछ सन्त मुख्य मुख्य पूज्यश्री मन्नालालजी महाराज की तरफ के चुने जाकर उनकी राय से काम किया जाय तो इसमें सन्तों में व समाज में हर तरह की शान्ति रहेगी। मगर पूज्यवर गुरूदेव ने इस तरफ कोई विचार ही नहीं फरमाया। इस फैसले की तामील जल्दि होने में धर्म में हानी पहुँचने व समाज व साधुओं में अशान्ति फैलने के कारण दूसरे मर्तबा पूज्यवर को सेवामें अर्ज कराई के आप आचार्य और हमारे गुरु हैं। साधुओं और संघ में हर प्रकार की शान्ति रहे ऐसा विचार आप फरमावे तो अच्छा होगा। उस पर हो गुरुवर की तरफ से कोई ठीक विचार की सूचना नहीं मिलने से हमको बहुत खेद हुआ और लाचार होकर पूज्यवर की सेवामें इस खयाल से आज्ञा नहीं मंगवाने का विचार प्रकट किया कि इस पर भी पूज्यवर कुछ विचार फरमालेंगे मगर इसका नतीजा यह हुवा के पूज्यवर का विचार फरमाना तो दूर रहा मगर एकदम से आज्ञा बाहिर की घोषणा फरमा दी खेर,

अब आपकी सेवामें अर्ज है कि हमारो नीचे लिखी अर्ज पर ध्यान फरमाकर आप इस व्यक्तिगत फैसले पर दुबारा बतोर नजरसानी गौर फरमा कर इन्साफ बक्षावे. ताकि सब तरह से शान्ति बनी रहे

(१) गणेशीलालजो को युवाचार्य की जो पदवी देते हैं पर वो मूल दोष से दूषित हैं, यह बात वक्त फैसला आपके सामने जाहिर आनी जरूरी थी मगर जाहिर नहीं हुई हमने सुना है इस वक्त आपका बिराजना किसनगढ है। इसलिए हमलोग आपकी सेवामें हाजिर होते हैं। हाजिर होने पर सब बात आपकी सेवामें अरज की जावेगी सो जबतक हमलोग आपके पास हाजिर न हो जावे तबतक आप कही पधारने की कृपा नहीं करावें। मूल दोष की जो बात आपके सामने हमलोग जाहिर करें उस पर आप विचार करे कि गणेशीलालजी को युवाचार्य बना व पूज्य पछेवडी जो फागन सुद १५ पहले ओढ़ाने की राय कायम हुई है वो ठीक है या किस तरह आपको अच्छी तरह मालुम हो जावेगी

(२) साथ ही विनयपूर्वक यह भी अर्ज है कि गुरूवर पूज्य श्री श्री १००८ श्री श्री जवाहिरलालजी महाराज पूज्य पछेवडी ओढाने की बहुत ही जल्दि फरमा रहे हैं और हमलोग यह चाहते कि जब तक आप ईस मूल दोष का निर्णय न करलें तबतक पूज्य पछेवडी नहीं ओढाने बाबत कान्फरन्स में ईतला फरमा देवे ताकि वहाँ से अखबार में ईसकी सूचना निकल जावे जिससे पूज्यवर अपनी ताकीद आगे नहीं बढा सके ईसपर भी आप जल्दी से गोर फरमा लेवे।

(३) कॉन्फरन्स का कायदा अभी तक हमारें पास नहीं आया है। क्योंकि ईस साल हम लोगों का चौमासा ऐसे ग्राम में हुवा था कि हरएक बात की सूचना वक्त पर नहीं मिल सकती थी। हमको सुननेमें आया है कि कॉन्फरस की कलम नं. १४ में यह बात रखी गई है कि आचार्य जिस साधु को आज्ञा

बाहिर करे–मंत्री व मुख्य साधु की राय लेकर फिर आज्ञा बाहिर करे मगर पूज्यवर ने न तो मंत्री की राय ली न किसी मुख्य साधओं की राय ली और जिस कारण से हमलोगों ने आज्ञा मंगवानी बन्द की वो कारण भी नहीं पूछा गया और एक दम आज्ञा बाहिर की घोषणा जाहिर कर दी सो कॉन्फरन्स का कायदा की कलम नं. २५ का उल्लंघन हमारी तरफसे हुआ या कलम न. १४ का उल्लंघन पूज्यवर की तरफ से हुआ ईसका आपही विचार फ़रमालेवें और आपके गौर फरमाने पर आज्ञा बाहिर की जो घोषणा हुई है वो ठीक पाई जावे जब तो हमलोग उसकी तामील कर ही रहे हैं और अगर ठीक नहीं पाई जाय तो ईसकी भी कृपाकर कोन्फरन्स मे इतला बक्षा वापस उठवाने की कृपा फरमावें। वगर खास वजह से इसतरह एकदम घोषणा होनेमें कितनी कठिनाईयों से सामना करना पड रहा है उसका पारावार परमात्मा ही जाने।

४ आइन्दा जो चेले बनाये जावें वो युवाचार्यजी की नेश्राय ही में बनाये जावे ईसमें हमको यह शंका हे कि ऐसा प्रस्ताव आजदिन तक इस संप्रदाय में बल्के दूसरी संप्रदाय में भी होना नहीं सुना गया है तो सिर्फ इस संप्रदाय के वास्ते ही खासकर यह प्रस्ताव क्योंकर पास फरमाया गया, अगर किसी खास वजह से यह प्रस्ताव ईस संप्रदाय के लिये ठीक समझा गया हे तो साथ ही खास कारण भी प्रकट होना चाहिये था। कि ईस वजह से यह प्रस्ताव रखना जरूरी समझ कर रखा गया है। अगर कोई खास कारण इसके लिये अबतक तैयार नहीं है तो जबतक दूसरी संप्रदाय में यह प्रस्ताव पास न हो जाय तब तक इस संप्रदाय में भी इस प्रस्ताव की तामिल नहीं होना चाहिये। सो इसके लिये भी आप गोर फरमा प्रस्ताव की तामील मुल्तवी फरमाने की कारवाई फरमावे।

उपर लिखी अरज पर आप न्यायाधीश ठीक तरह से गोर फरमा व्यक्तिगत फैसले को वापस आपके इजलास में ले बतोर नजरसानी इन्साफ बक्षावें।

व्यक्तिगत फैसला आप अपने सामने बतौर नजर सानी लेने में यह ख्याल फरमावेंगे के कॉन्फरन्स का कायदा निकले हुए को इतना अरसा हुवा अबतक क्योंकर खामोश रहे सो इसके लिए यह अरज है कि अव्वल तो कोन्फरन्स हुवे से जो कायदा पास होकर जारी हुवा उसमें कोइ ऐसी मयाद नही रखी गइ है कि इतनी मयाद में ही हरएक शक्स अरजदार हो सकेगा। बाद खतम मयाद ऊसका कोइ ऊजर समायत नहीं होगा। दोयम हमको यह आशा थी कि पूज्यवर हमारी विनय पूर्वक अर्ज पर ध्यान फरमा खुद ही यह बात अपने हाथ में लेकर शान्ति का काम फरमा देवेंगे। मगर वो बात भी हम लोगों के ऊम्मेद से बाहर रही व चौमासे की वजह से यह इतनी देर हुइ है वरना और कोइ वजह नहीं है इसलिये बतौर नजरसानी व्यक्तिगत फैसले को अपने इजलास में ले इन्साफ फरमाने की कृपा फरमावें

इसकी सूचना श्रीमान् शतावधानीजी महाराज पूज्य श्रीअमोलकऋषिजीमहाराज, पूज्य श्रीमणिलालजी महाराज साहब के पास भी नजर की गइ है सो आप जिस जगह शामिल होना मुनासिब समजें उसकी सूचना हरएक को बक्षा दी जावे। संवत १९९० मिगसर शुक्ला १२

पं. प्रवर श्री घासीलालजी महाराज के ईस उत्तर का कोई प्रत्युत्तर आचार्य श्री जवाहरलालजी की ओर से नहीं मिला। दोनों गुरु शिष्यों को एक करने का कुछ श्रावकों ने समय समय पर प्रयत्न भी किया किन्तु उनका संतोष जनक समाधान न हो सका। दोनों के बीच का तनाव उग्र होता गया। अन्ततः दोनों गुरु शिष्य सदा के लिए अलग हो गये।

सेमल का चातुर्मास बडे प्रभाव के साथ समाप्त हुआ। और आपने अन्यत्र विहार कर दिया

मारवाड की ओर विहार और जैन दिवाकर जी म. का मिलन

वि० सं १९९० का सेमल का चातुर्मास पूर्ण कर महाराज श्री अपनी शिष्य मण्डलीके साथ मेवाडके छोटे बडे सभी क्षेत्रों को पावन करते हुये अजमेर की ओर पधार रहे थे। मार्ग में राजाजी के करेडे पधारना हुवा! वहां जैन दिवाकर·प्रसिद्ध वक्ता पं. मुनिश्री चौथमलजी महाराज: अपने शिष्य समुदाय के साथ पधारे। पं. मुनिश्री तथा जैन दिवाकरजी म० दोनों दो दिन तक साथ में बिराजे। साथ ही में व्याख्यान हुआ। परस्पर सौजन्य व्यवहार-स्नेह खूब अच्छा रहा। वहां से विहार कर छोटे बडे गांवों को फरस्ते आसीन-पडासोली होते हुए दाणियाके रामपुरे पधारे।

तपस्वी मदनलालजी म. का सम्यक्त्व ग्रहण

रामपुरा पधारने से स्थानीय संघ पूज्य श्री की सेवा में रत हो·गया। यहां आसकरणजी बाफना बडे ही धार्मिक प्रकृति के सज्जन रहते थे। खेती और दुकानदारी से अपनी न्याय पूर्ण आजीविका चलाते थे। इनकी धर्मपत्नी का नाम था श्रीमती भूरी बाई। यह अत्यन्त सेवानिष्ठ और धार्मिक वृत्ति की सन्नारी थी। गांव में इन्हें अच्छी प्रतिष्ठा प्राप्त थी। श्रीमान् आसकरणजी साहब के तीन पुत्र हुए। जिनमें सब से बडे पुत्र फत्तेलालजी द्वितीय पुत्र मांगीलालजी और तृतीय पुत्र मिश्रीलालजी।

श्रीमान् आसकरजी बाफना अपनी युवावस्था में ही काल कवलित होगये। पिताजी के स्वर्गवास से साराभार बडे पुत्र श्री फत्तेलालजी पर आ पड़ा। श्रीमान् फतेलालजी साहब बडी योग्यता और न्याय पूर्ण ढंग से अपने समस्त परिवार का भरण पोषण करने लगे।

पूज्य श्री के पदार्पण से यह सारा परिवार पूज्य श्री के परिचय में आया। आसकरणजी साहब के दूसरे नंबर के पुत्र श्रीमांगीलालजी पूज्य श्री के दर्शन के लिये आये और पूज्य श्री की प्रभावपूर्ण वाणी को सुनकर उनसे गुरु आम्नाय ग्रहण करली। श्रीमांगीलालजी ने सन्तों से नमुक्कार मन्त्र सीख लिया और कुछ प्रारंभिक नियम भी ग्रहण कर लिये। साथ साथ हृदय रूप मन्दिर में पूज्य गुरुदेव की तस्वीर लगादी और श्रद्धा से उनका ध्यान करने लगे।

पूज्य श्री ने अपनी शिष्य मण्डली के साथ दूसरे दिन अजमेर की ओर विहार कर दिया। मसूदा नसीराबाद,छावनी होकर किशनगढ मदनगंज पधारे। यहाँ पंजाब केशरी पूज्य श्री काशीरामजी महाराज उपाध्याय श्री पं. श्री आत्मारामजी महाराज पं मदनलालजी म. कविश्री अमरचंदजी म. आदि सन्तों का मिलन हुआ। हमारे चरितनायकजी की विद्वता और पाण्डित्य पूर्ण प्रवचन शैली से बडे प्रभावित हुए। बडे सौहार्द पूर्ण वातावरण में विचारों का आदान प्रदान हुआ। कुछ दिन किशनगढ बिराजकर आपने अपनी मुनिमण्डली के साथ अजमेर की ओर विहार किया। अजमेर पधारने पर स्थानीय संघ ने आपका भव्य स्वागत किया। अजमेर श्रीसंघ के अत्याग्रह से यहां मासकल्प तक बिराजे। स्थान स्थान पर आपके जाहिर प्रवचन हुवे। हजारों लोगों ने प्रवचनों का लाभ उठाया। यहां जब आप बिराजित थे तब विहार प्रान्त में महाप्रलयकारी भूकम्प हुआ था। लाखों लोग बे घरबार हो गये थे। इस भूकम्प का असर ठेठ अजमेर तक हुआ था। अजमेर जैसे विशाल नगर में भूकम्प के कारण केवल एक मकान क्षतिग्रस्त हो गया। सारा शहर सही सलामत था। इसे लोगों ने महाराज श्री के चारित्र का प्रभाव माना।

पुष्कर, गोविन्दगढ मेढास केकिन, भंवाल, मेडता आदि गांवों को पावन करते हुए आप वैशाख मास में कुचेरा पधारे। तब वहां फसल बुआई हो वैसी वर्षा हो गई मुनिश्री के पधारने से ऐसी वर्षा वैशाखमास में हो जाने से जैन अजैन लोगों में मुनिश्री के प्रति असीम श्रद्धा बढी। अक्षयतृतीया के दिन महाराज श्री का जाहिर व्याख्यान हुआ। गांव के सैकड़ों लोगों ने आपका प्रवचन सुनकर अपने को

धन्य माना । स्थानीय श्रावकों ने कुचेरा में चातुर्मास करने की प्रार्थना की । श्रावकों की तीव्र भावना देखकर आपने चातुर्मास की स्वीकृति कुचेरा में करने की दे दी ।

कुचेरा से आप विहार कर पार्श्वनाथ फलौदी पधारे । वहां से आप विहारकर बलुंदा आये । बलुंदा के प्रसिद्ध दानवीर सेठ छगनमलजी मूथा (बेंगलोर निवासी) ने आपकी बडी सेवा की । इनके आग्रह से आप कुछ दिन बलुन्दा में बिराजे और श्रावकों को प्रवचन पीयूष का पान कराते रहें । बलुन्दा से विहार करते हुए आप मारवाड के आस पास के क्षेत्रों को पावन कर चातुर्मासार्थ कुचेरा पधारे ।

वि. सं. १९९१ का चातुर्मास कुचेरा

सेमल का चातुर्मास पूर्ण करके आपने अपने मुनिवृन्द के साथ मारवाड की ओर विहार कर दिया । विहार के समय मध्यवर्ती छोटे बडे स्थानों में आपका अहिंसा धर्म का प्रचार बराबर चलता रहा । सर्वत्र आपके जाहिर प्रवचन होने लगे । अनेक जागिरदारों ने ठाकुरों ने राजपूतों ने आपके प्रवचन से प्रभावित हो जीवहिंसा, शिकार, मद्यपान, जुआ, परस्त्रीगमन आदि दुर्व्यसनों का त्याग किया ।

मारवाड प्रान्त में विहार करते समय कुचेरा का संघ कई बार महाराज श्री की सेवा में उपस्थित हुआ और अपने यहां चातुर्मास करने को विनती की । कुचेरा संघकी तीव्र भक्ति–भाव को देखकर महाराज श्री ने कुचेरा क्षेत्र में चातुर्मास करने की स्वीकृति फरमा दी चातुर्मास की स्वीकृति से संघ को बडा आनन्द हुआ ।

इस प्रकार आप मारवाड के विभिन्न क्षेत्रों को पावन करते हुए आप पण्डित श्री मनोहरलालजी महाराज, महान तपस्वी योगनिष्ठ मुनि श्री सुन्दरलालजी महाराज शास्त्राभ्यासी मुनिश्री समीरमलजी महाराज प्रिय व्याख्यानी पं. श्री कन्हैयालालजी महाराज, तपस्वी मुनिश्री केशुलालजी महाराज, वैयावृत्ति मुनिश्री मंगलचन्दजी महाराज, लघु तपस्वी मुनिश्री मांगीलालजी महाराज आदिठाणा के साथ कुचेरा में चातुर्मासार्थ प्रवेश किया । प्रखर विद्वान पण्डित प्रवर मुनि श्री के चातुर्मास से स्थानीय संघ में जो उत्साह दृष्टि गोचर होता था वह अभूत पूर्व था ।

यहां के संघ के अग्रणी श्रीयुत सेठ मोहनमलजी सा. सेठ मोतीचन्दजी, कालूरामजी, मेरुबगसजी, श्री जवरचन्दजी, मिलापचन्दजी, मनोहरलालजी बोहरा, अमोलकचन्दजी, इन्द्रचद्रजी, गेलडा बचनमलजी, अमोलकचन्दजी, जँवरीलालजी हस्तीमलजी सुराणा, जसवन्तमलजी, हेमचन्दजी, हंसराजजी, केसरीमलजी, भण्डारी, तेजमलजी, रामलालजी नेमिचन्दजी, बादरमलजी, गुलाबचन्दजी, नहार, बगतावरमलजी, मोतीलालजी, हीरालालजी, जवरीलालजी, इन्द्रचंदजी जवरचंदजी केशरीमलजी हेमराजजी वेताला आदिसर्व श्रीसंघ का अभूत पूर्व उत्साह चातुर्मास की रोनक में अभिवृद्धि करने लगा ।

महान तपस्वी श्री सुन्दरलालजी, महाराज, लघुतपस्वी श्री केशुलालजी एवं तपस्वी श्री मांगीलालजी महाराज जैसे तपस्वी रत्नत्रय की उपस्थिति में तो कुचेरा नगर तपो भूमि बन गया था । इन तपस्वीमुनियों ने अपनी सुदीर्घ तपस्या प्रारम्भ करदी ।

जैन धर्म में तपस्या को बहुत बडा महत्त्व दिया है । तपस्या मानव जीवन को शुद्ध करने का अत्यन्त उपयोगी साधन है । तपस्या से काम क्रोध, मान, एवं इंद्रियों के विषय का सर्वथा शमन होता है । साबुन आदि से जैसे कपडे का मेल छूट जाता है और कपडा शुद्ध एवं शुभ्र बनता है वैसे ही तपस्या से आत्मा को कर्मरूपी मेल साफ हो जाता । आत्माशुद्ध एवं शुक्ल ध्यानमय बन जाता है । इहलौकिक एवं पारलौकिक अनेक सिद्धियां तपसे ही प्राप्त होती है । चक्रवर्ती जब छ खंड पर विजय प्राप्त करने के लिए जाते हैं

तब वे समय–समय पर तप का ही सहारा लेते हैं। तप से तो मानव प्रभावित होता ही है किन्तु देवगण भी तपस्वीजनों के सानिध्य में रहने के लिए बडे लालायित रहते हैं। तपस्वियों के प्रभाव से हिंसक देव भी अहिंसक बन जाते हैं। शास्त्रों में हरिकेशी मुनि जैसे तपस्वी की सेवा करने वाले देव की घटना प्रसिद्ध ही है। किन्तु कुचेरा में इन महान तपस्वियों के महात्म्य से हजारों मूक पशुओं की प्रतिवर्ष बलि लेने वाला भैरुजी भी अहिंसक बन जाता है। भैरुजी के अहिंसक बनने की घटना इस प्रकार है—

कुचेरा में भैरूजी का एक प्रसिद्ध स्थान है। यहा प्रतिवर्ष हजारों आदिवासी एवं धर्मान्ध राजपूत प्रजा द्वारा हजारों बकरे, मूर्गे, पाडे आदि पशुओं की अपनी मानता के अनुसार भैरुजी के नाम पर बलि चढ़ाई जाती थी। महाराज श्री को जब इस बात का पता चला तो उनका हृदय इस नृशंस बलि से कांप उठा। उन्होंने निश्चय किया कि इस महान भयंकर हिंसा को किसी प्रकार बन्द कराई जाय। इस घोर हिंसा को बन्ध कराने के लिए अनेको महंतों सन्तों ने प्रयत्न किये थे, किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली। जिसका कारण यह था कि यहाँ का भोपा बडा क्रूर एवं हिंसा प्रिय था। और साथ ही बडा जड़ बुद्धि भी। उसे समझाना बडा कठिन था। प्रायः ऐसे स्थानों के पंडे पूजारी एवं भोपे प्रबल क्रूर प्रकृति के हि होते हैं। पाखण्ड और आडम्बर से भोली प्रजा को बहकाकर उनसे मन माना काम करवाते हैं। अपने स्वार्थ के खातोर देवताओं के नाम पर अनेकों निरापराध प्राणियों की बलि देते रहते हैं। ऐसे पापी एवं क्रूर व्यक्ति को समझाना सरल नहीं थां। किन्तु महाराज श्री तो कृत निश्चयी थे। एक बार अवसर पाकर एक श्रावक के जरीए भोपे को अपने यहां बुलाया। भोपा आया और बडे अकड के साथ महाराज श्री के पास बैठ गया।

महारज श्री ने भोपे से कहा–भोपाजी! दुनियां में सुख कितने प्रकार के हैं? भोपे ने कहा–सन्तान का सुख, धन का सुख, अच्छी पत्नी का सुख, आरोग्य का सुख, आदि सुख तो जगत में अनेक प्रकार के हैं। महाराज श्री! क्या आपके कोई सन्तान है! भोपा–नहीं।

महाराज श्री क्या आपके मन में कभी सन्तान के लिए इच्छा उत्पन्न नहीं होती?

भोपा, कौन दुनियां में ऐसा व्यक्ति होगा जिस के दिल में सन्तान की लालसा न हो। मैं तो भगवान से सन्तान के लिए प्रतिदिन प्रार्थना करता हूँ। किन्तु यह हमारे बस की बात नहीं भगवान की जब मर्जी होगी तभी संसार में ये सब सुख मिलते हैं।

महाराज श्री, भोपाजी, कोई बबूल का पेड लगाकर आम की इच्छा करता है तो उसे आम मिल सकता है? भोपा–यह कैसे हो सकता? जो जैसा बोता है उसे वैसा हि मिलता है।

महाराज श्री, ठीक इसी तरह संसार के सुख भी पुण्योंपार्जन से ही मिलते हैं। सुख, दुःख सन्तान ये सब अपने-अपने शुभाशुभ कर्म से ही प्राप्त होते हैं। वेदव्यासजी भी यही कहते हैं–

शुभेन कर्मणा सौख्यं, दुःखं पापेन कर्मणा। कृतं फलति सर्वत्र नाकृतं भुज्यते क्वचित ॥

शुभ कर्म करने से सुख और पाप कर्म करने से दुःख मिलता है। अपना किया हुआ कर्म सर्वत्र ही फल देता है। बिनाकिये हुए कर्म का फल कहीं नहीं भोगा जाता है। इस नियम के अनुसार दुःख देने वाले को दुःख मिलता है और सुख देने वाले को सुख। तुम जो प्रतिवर्ष भैरुजी के नाम हजारों मूक पशुओं की घोर हत्या करवाते हो, यह काम अच्छा नहीं करते हो। हिंसा करने वाला व्यक्ति मरकर दुर्गति में जाता है। इस जन्म में भी उसे सुख नहीं मिलता और परजन्म में भी नहीं। आज जिन निरअपराध मूक पशुओं को तुम मारते हो वे दुसरे जन्म में तुम्हें भी मारने वाले बनेंगे। हिंसा से वैर बढता हैं और वैर की परम्परा कभी समाप्त नहीं होती। तुम यदि सुखी बनना चाहते हो तो इन महान तपस्वीजी का आशिर्वाद लो। हमारे साथ इस समय तीन तपस्वीजी हैं। वे स्व पर कल्याण की भावना से इस समय उपवास

धन्य माना । स्थानीय श्रावकों ने कुचेरा में चातुर्मास करने की प्रार्थना की । श्रावकों की तीव्र भावना देखकर आपने चातुर्मास की स्वीकृति कुचेरा में करने की दें दी ।

कुचेरा से आप विहार कर पार्श्वनाथ फलौदी पधारे । वहां से आप विहारकर बलुंदा आये । बलुंदा के प्रसिद्ध दानवीर सेठ छगनमलजी मूथा (बेंगलोर निवासी) ने आपकी बडी सेवा की । इनके आग्रह से आप कुछ दिन बलुन्दा में बिराजे और श्रावकों को प्रवचन पीयूष का पान कराते रहें । बलुन्दा से विहार करते हुए आप मारवाड के आस पास के क्षेत्रों को पावन कर चातुर्मासार्थ कुचेरा पधारे ।

वि. सं. १९९१ का चातुर्मास कुचेरा

सेमल का चातुर्मास पूर्ण करके आपने अपने मुनिवृन्द के साथ मारवाड की ओर विहार कर दिया । विहार के समय मध्यवर्ती छोटे बडे स्थानों में आपका अहिंसा धर्म का प्रचार बराबर चलता रहा । सर्वत्र आपके जाहिर प्रवचन होने लगे । अनेक जागिरदारों ने ठाकुरों ने राजपूतों ने आपके प्रवचन से प्रभावित हो जीवहिंसा, शिकार, मद्यपान, जूआ, परस्त्रीगमन आदि दुर्व्यसनों का त्याग किया ।

मारवाड प्रान्त में विहार करते समय कुचेरा का संघ कई बार महाराज श्री की सेवा में उपस्थित हुआ और अपने यहां चातुर्मास करने की विनती की । कुचेरा संघकी तीव्र भक्ति–भाव को देखकर महाराज श्री ने कुचेरा क्षेत्र में चातुर्मास करने की स्वीकृति फरमा दी चातुर्मास की स्वीकृति से संघ को बडा आनन्द हुआ ।

इस प्रकार आप मारवाड के विभिन्न क्षेत्रों को पावन करते हुए आप पण्डित श्री मनोहरलालजी महाराज, महान तपस्वी योगनिष्ठ मुनि श्री सुन्दरलालजी महाराज शास्त्राभ्यासी मुनिश्री समीरमलजी महाराज प्रिय व्याख्यानी पं. श्री कन्हैयालालजी महाराज, तपस्वी मुनिश्री केशुलालजी महाराज, वैयावृत्ति मुनिश्री मंगलचन्दजी महाराज, लघु तपस्वी मुनिश्री मांगीलालजी महाराज आदिठाणा के साथ कुचेरा में चातुर्मासार्थ प्रवेश किया । प्रखर विद्वान पण्डित प्रवर मुनि श्री के चातुर्मास से स्थानीय संघ में जो उत्साह दृष्टि गोचर होता था वह अभूत पूर्व था ।

यहां के संघ के अग्रणी श्रीयुत सेठ मोहनमलजी सा. सेठ मोतीचन्दजी, कालूरामजी, भेरुबगसजी, श्री जवरचन्दजी, मिलापचन्दजी, मनोहरलालजी बोहरा, अमोलकचन्दजी, इन्द्रचदजी, गेलडा वचनमलजी, अमोलकचन्दजी, जँवरीलालजी हस्तीमलजी सुराणा, जसवन्तमलजी, हेमचन्दजी, हंसराजजी, केसरीमलजी, भण्डारी, तेजमलजी, रामलालजी नेमिचन्दजी, बादरमलजी, गुलाबचन्दजी, नहार, बगतावरमलजी, मोतीलालजी, हीरालालजी, जवरीलालजी, इन्द्रचंदजी जवरचंदजी केशरीमलजी हेमराजजी बेताला आदिसर्व श्रीसंघ का अभूत पूर्व उत्साह चातुर्मास को रौनक में अभिवृद्धि करने लगा ।

महान तपस्वी श्री सुन्दरलालजी, महाराज, लघुतपस्वी श्री केशुलालजी एवं तपस्वी श्री मांगीलालजी महाराज जैसे तपस्वी रत्नत्रय की उपस्थिति में तो कुचेरा नगर तपो भूमि बन गया था । इन तपस्वीमुनियों ने अपनी सुदीर्घ तपस्या प्रारम्भ करदी ।

जैन धर्म में तपस्या को बहुत बडा महत्त्व दिया है । तपस्या मानव जीवन को शुद्ध करने का अत्यन्त उपयोगी साधन है । तपस्या से काम क्रोध, मान, एवं इंद्रियों के विषय का सर्वथा शमन होता है । साबुन आदि से जैसे कपडे का मेल छूट जाता है और कपडा शुद्ध एवं शुभ्र बनता है वैसे ही तपस्या से आत्मा को कर्मरूपी मेल साफ हो जाता । आत्माशुद्ध एवं शुक्ल ध्यानमय बन जाता है । इहलौकिक एवं पारलौकिक अनेक सिद्धियां तपसे ही प्राप्त होती है । चक्रवर्ती जब छ खंड पर विजय प्राप्त करने के लिए जाते हैं

तब वे समय–समय पर तप का ही सहारा लेते हैं । तप से तो मानव प्रभावित होता ही है किन्तु देवगण भी तपस्वोजनों के सानिध्य में रहने के लिए बडे लालायित रहते हैं ; तपस्वियों के प्रभाव से हिंसक देव भी अहिंसक बन जाते हैं । शास्त्रों में हरिकेशी मुनि जैसे तपस्वी की सेवा करने वाले देव की घटना प्रसिद्ध ही है । किन्तु कुचेरा में इन महान तपस्वियों के महात्म्य से हजारों मूक पशुओं की प्रतिवर्ष बलि लेने वाला भैरुजी भी अहिंसक बन जाता है । भैरुजी के अहिंसक बनने की घटना इस प्रकार है—

कुचेरा में भैरूजी का एक प्रसिद्ध स्थान है। यहा प्रतिवर्ष हजारों आदिवासी एवं धर्मान्ध राजपूत प्रजा द्वारा हजारों बकरे, मूर्गे, पाडे आदि पशुओं की अपनी मानता के अनुसार भैरुजी के नाम पर बलि चढाई जाती थी। महाराज श्री को जब इस बात का पता चला तो उनका हृदय इस नृशंस बलि से कांप उठा । उन्होंने निश्चय किया कि इस महान भयंकर हिंसा को किसी प्रकार बन्द कराई जाय । इस घोर हिंसा को बन्ध कराने के लिए अनेको महंतों सन्तों ने प्रयत्न किये थे, किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिली । जिसका कारण यह था कि यहाँ का भोपा बडा क्रूर एवं हिंसा प्रिय था । और साथ ही बडा जड़ बुद्धि भी । उसे समझाना बडा कठिन था । प्रायः ऐसे स्थानों के पंडे पूजारी एवं भोपे प्रबल क्रूर प्रकृति के हि होते हैं । पाखण्ड और आडम्बर से भोली प्रजा को बहकाकर उनसे मन माना काम करवाते हैं। अपने स्वार्थ के खातीर देवताओं के नाम पर अनेकों निरापराध प्राणियों की बलि देते रहते हैं। ऐसे पापी एवं क्रूर व्यक्ति को समझाना सरल नहीं था । किन्तु महाराज श्री तो कृत निश्चयी थे । एक बार अवसर पाकर एक श्रावक के जरीए भोपे को अपने यहां बुलाया । भोपा आया और बडे अकड़ के साथ महाराज श्री के पास बैठ गया ।

महारज श्री ने भोपे से कहा–भोपाजी ! दुनियां में सुख कितने प्रकार के हैं ? भोपे ने कहा– सन्तान का सुख, धन का सुख, अच्छी पत्नी का सुख, आरोग्य का सुख, आदि सुख तो जगत में अनेक प्रकार के हैं । महाराज श्री ! क्या आपके कोई सन्तान है ! भोपा–नहीं ।

महाराज श्री क्या आपके मन में कभी सन्तान के लिए इच्छा उत्पन्न नहीं होती ?

भोपा, कौन दुनियां में ऐसा व्यक्ति होगा जिस के दिल में सन्तान की लालसा न हो । मैं तो भगवान से सन्तान के लिए प्रतिदिन प्रार्थना करता हूँ । किन्तु यह हमारे बस की बात नहीं भगवान की जब मर्जी होगी तभी संसार में ये सब सुख मिलते हैं ।

महाराज श्री, भोपाजी, कोई बबूल का पेड लगाकर आम की इच्छा करता है तो उसे आम मिल सकता है ? भोपा–यह कैसे हो सकता ? जो जैसा बोता है उसे वैसा हि मिलता है ।

महाराज श्री, ठीक इसी तरह संसार के सुख भी पुण्योपार्जन से ही मिलते हैं । सुख, दुःख सन्तान ये सब अपने-अपने शुभाशुभ कर्म से ही प्राप्त होते हैं । वेदव्यासजी भी यही कहते हैं–

शुभेन कर्मणा सौख्यं, दुःखं पापेन कर्मणा । कृतं फलति सर्वत्र नाकृतं भुज्यते क्वचित ॥

शुभ कर्म करने से सुख और पाप कर्म करने से दुःख मिलता है । अपना किया हुआ कर्म सर्वत्र ही फल देता है । बिनाकिये हुए कर्म का फल कहीं नहीं भोगा जाता है । इस नियम के अनुसार दुःख देने वाले को दुःख मिलता है और सुख देने वाले को सुख । तुम जो प्रतिवर्ष भैरुजी के नाम हजारों मूक पशुओं की घोर हत्या करवाते हो, यह काम अच्छा नहीं करते हो । हिंसा करने वाला व्यक्ति मरकर दुर्गति में जाता है । इस जन्म में भी उसे सुख नहीं मिलता और परजन्म में भी नहीं । आज जिन निरअपराध मूक पशुओं को तुम मारते हो वे दुसरे जन्म में तुम्हें भी मारने वाले बनेंगे । हिंसा से वैर बढता हैं और वैर की परम्परा कभी समाप्त नहीं होतो । तुम यदि सुखी बनना चाहते हो तो इन महान तपस्वीजी का आशिर्वाद लो । हमारे साथ इस समय तीन तपस्वीजी हैं । वे स्व पर कल्याण की भावना से इस समय उपवास

कर रहे हैं। उनकी यह इच्छा है कि कुचेरा में देवी देवता के नाम से होने वाली हिंसा सदा के लिए बन्द हो। और यह कार्य तुम्हारी सहायता के बिना नहीं हो सकता। तुम अगर हिंसा बन्द करदोगे तो उन मूक पशुओं के आशिर्वाद से तुम्हारा जीवन सुखी बनेगा। इस प्रकार महाराज श्री ने भोपे को बहुत प्रकार से समझाया किन्तु क्रूर भोपा तनीकमात्र भी नहीं समझा। उस समय तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज भी महाराज श्री के पास में ही बैठे थे। तपस्वीजी ने भोपे की दृढता देख कर सोचा—लातों का देवता बातों से कभी नहीं मानेगा" इसे कुछ शाब्दिक चमत्कार जरूर बताना होगा। यह सोच सहसा वे क्रुध हो आंखे लालकर सिंह गर्जना करते हुए बोल उठे—" देख रे भोपे ! अगर तू मेरी बात टाल कर हिंसा बन्द नहीं करेगा तो याद रख इसका परिणाम तेरे लिए कभी अच्छा नहीं होगा। अगर तू मेरी बात मानकर हिंसा बन्द करेगा तो सुखी होगा। वरना हिंसा का दुष्परिणाम भुगतने के लिए तैयार रह।"

तपस्वीजी की इस सिंहगर्जना से भोपा घबरा गया। उसने सोचा—सचमुच ही तपस्वीजी क्रुध होकर हमें जलोकर भस्म कर देंगे। भोपा शान्त हो गया और विचार में डूब गया। तपस्वीजी ने पुनः गर्जना करते हुए कहा —क्या सोच रहा है ? जीवहिंसा बन्द करना चाहता है या नहीं। मैं तुझे अब ज्यादा समय नहीं देना चाहता ? तपस्वीजी के इस वाक्य का प्रभाव इतना जबरदस्त पडा की भोपा भयभित हो गया। अत्यन्त नम्र हो वह बोला—तपस्वीजी म० ! आप शान्त होइये। आपकी आज्ञानुसार आज से भैरुजी के स्थान पर एक भी जीव की हत्या नहीं होगी। भैरुजी कीं पूजा सात्विक पदार्थों से ही होगी। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि एक भी प्राणी भैरुजी के नाम नहीं चढेगा। इस प्रकार विश्वास दिला कर भोपा चला गया

यात्रा का समय आ गया। यह यात्रा विजयादशमी के दिन भैरुजी के स्थान पर भरती है। सभी जाती के लोग हजारों की संख्या में अपनी अपनी मानता लेकर भैरुजी की सेवा में उपस्थित होते हैं। हमेशा की तरह सैकड़ों व्यक्ति बलि चढाने के लिए भैंसे, बकरे, मुर्गे आदि अनेक प्राणि लाये। ढोल और नगारों की आवाज और पशूओं की चीत्कार से वातावरण बडा भयानक दृष्टि गोचर हो रहा था। बलि चढानेवाले पशुओं को सिन्धूर आदि से सजाया गया था। वधिकों के हाथ में तेज धारवाली नंगी तलवारे चमक रही थी। भक्त गण भैरुजी की आज्ञा की प्रतीक्षा करने लगे। इधर भोपे ने भी माथा धूनना शुरु किया। हूं हूं हूं करता हुआ जोर जोर से उछलने लगा। १५—२० मिनीट तक खूब उछल कूद कर अन्त में जोरों से बोला—देखो रे भक्तो ! मैं यहां का भैरुजी बोल रहा हूं। मैं तपस्वीजी की तपस्या से प्रसन्न होकर उनका सेवक बन गया हूँ। उनका मुझे हुकुम मिला है आज से मेरे स्थान पर एक भी पशु की बलि नहीं होगी। जो मेरे नाम पर किसी भी पशु की बलि करेगा तो मैं उसकी बलि करूंगा" यह कह कर भोपा फिर जोरों जोरों से हूँ हूँ करता हुआ माथा धूनने लगा। और उछल कर जमीन पर गिर पडा। कुछ क्षण अचेत रह कर बोला—देखो रे भक्तो ! आज से सदा केलिये जीव हिंसा बन्द होगी। मैं आज से किसी भी प्राणियों की बलि नहीं लूंगा। अगर किसी ने भी मेरे नाम पर जीव वध किया तो मै उसे नष्ट कर दूंगा। इस प्रकार बोल भोपा फिर से माथा धूनने लगा। अब की बार तो भोपा इतना जोरों से उछला की वह नीचे गिर पडा। जोरों की चोट आई और माथे से खून निकलने लगा। अब लोगों को विश्वास हो गया कि भोपा जो कुछ भी कह रहा है वह सच कह रहा है। भोपा अपने मन से नहीं बोल रहा है किन्तु स्वयं भोपे के शरीर में भैरुजी आकर बोल रहें हैं। हम तो भैरुजी को प्रसन्न करने के लिए ही तो पशु मार कर बलि चढा रहे हैं। जब भैरुजी स्वयं हिंसा नहीं चाहते हैं तो प्राणियों को भैरुजी की

इच्छा के विरुद्ध मारना अच्छा नहीं है । यदि मारेंगे तो भैरुजी नाराज हो जाएंगे और वे हमारा विनाश कर देंगे ।" भक्तों ने भोपे से पूछा—हमें भैरुजी को प्रसन्न करने के लिए क्या करना होगा ? भोपे ने चट से उत्तर दिया—आज से घी और गुड से बनी हुई मीठी वस्तुओं की प्रसादी चढाओ । तुम लोग भक्ति वश जिन पशुओं को मारने के लिये यहां लाये हो उनको कुडकी पहनाकर मेरे नाम अमर कर दो । हिंसा न करने की आज्ञा का एक शिला लेख कोतरवाकर मेरे स्थान पर गाड दो । उपस्थित भक्तों ने यह बात स्वीकार कर ली । सभी ने पशुओं को कडी पहनाकर उन्हे अमरिया करदिया । भैरुजी को मांस के स्थान पर चूरमें की मोठी प्रसादो चढाई । उसीदिन पत्थर पर हिंसा निषेध की आज्ञा कोतरवा कर बलि के स्थान पर पत्थर गाड दिया । हिंसा सदा के लिए बन्द हो गई । प्रतिवर्ष हजारों प्राणियों को अभयदान मिला । भोपा अब महाराज श्री का पूरा भक्त हो गया । वह प्रतिदिन व्याख्यान श्रवण करता । व्याख्यान का असर उस भोपे पर इतना अच्छा पडा कि वह सदा के लिए अहिंसक एवं शाकाहारी बन गया ।

जोधपुर के हिंसा प्रिय कुछ अधिकारियों को महाराज श्री की हिंसा निरोध की यह कार्य वाही पसन्द नहीं आई । वे पुनः भैरुजी के स्थान पर हिंसा प्रारंभ करना चाहते थे । वे कुचेरा आऐ और भोपे को डराने धमकाने लगे । हिंसा निरोध के पत्थर को जब उखाड कर फेकने लगे तो भोपा बडा क्रुद्ध हुआ और बोला यह शिला लेख अब मेरे प्राण के साथ ही हटेगा । यह शिलालेख तो भैरुजी की आज्ञा का लेख है । उसे हटाने की किसी में भी ताकत नहीं है । इधर कुचेरा की जनता भी भैरुजी के स्थान पर एकत्र हो गई और अधिकारियों को चेतावनी के स्वर में बोली—यदि आप लोगों नें हिंसा को पुन, चालू किया तो इसका परिणाम आप लोगों के लिए अच्छा नहीं होगा ? जनता की इस चेतावनी का परिणाम अच्छा निकला और अधिकारी अपना छोटा मुह लेकर वापस चले गये ।

भोपे के एवं भरुजी के अहिंसक बन जाने से स्थानीय जनता की श्रद्धा महराज श्री के प्रति असीम बढ गई । तपस्वीजी को कीर्ति में चार चान्द लग गये । कुचेरा की जैन अजैन जनता तपस्वीजी म. के आशिर्वाद प्राप्त करने के लिए बडी संख्या में आने लगी । हजारों व्यक्तिओं ने हिंसा, मद्य, मांस सेवन परस्त्री गमन एवं जूआ आदि दुर्व्यसनों का त्याग किया । ज्यो ज्यों तपस्या का पूर समीप आता गया त्यों त्यों स्थानीय जनता में धार्मिक उत्साह भी बढने लगा । उपवास वेले तेले चोले पचोले अठाइयां दया पौषध एवं सामायिकों की बाढ सी आगई । तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराजने ९१ दिन की दीर्घ तपस्या की । तपस्या के पूर की सूचना की पत्रिकाओं सर्वत्र भेजी गई । पत्रिकाओं में यह सूचित किया गया था । कि तपस्वी जो के तपस्या की पूर्णाहुति के दिन सर्वत्र देवी देवताओं के स्थान पर होने वाली हिंसा बन्द की जाय । उस दिन आरंभ समारंभ की सर्व प्रवृत्ति बन्द कर सारा दिन धर्म ध्यान में हि व्यतीत किया जाय । विश्व शान्ति के लिए "ओम शान्ति" का जाप एवं प्रार्थना को जाय । अगता पाला जाय । उस दिन उपवास आयंबिल एकासना आदि यथा शक्ति तप किया जाय ।"

इस प्रकार के सूचना पत्र को मारवाड, मेवाड, मालवा, माहाराष्ट्र, आदि प्रान्तों के गावों में भेजा गया । सैकडों गावों ने इस सूचना को श्रद्धा से पालन किया । आमंत्रण पत्रिका पाकर निबंडी के ठाकुर साहब श्री जेतसिंहजी, नोखा के ठकुर साहब श्री फतेसिंहजो, मुंधियाड के ठाकुर साहब श्री देवीसिंहजी, गोठन के ठाकुर साहब श्री भोजराजसिंहजी, बुटाटो के ठाकुर साहब श्री सरदारसिंहजी, आदि ठाकुर अपने अपने रसाले के साथ महाराज श्री के दर्शनार्थ कुचेरा अये और जीव दया के पट्टे लिख कर पूज्य महाराज श्री को भेट किये ।

मेवाड के सैंकडों ठाकुरों ने उस दिन सैंकडों बकरों व पाडों को अमरिया किया। और पांच तिथियों में जीव हिंसा, मांस एवं शराब के त्याग कर एवं जीव दया के पट्टे लिख कर महाराज श्री की सेवा में भेट किये। तपस्या की पूर्णाहुति के दिन करीब ५००० मनुष्य तपस्वीजी के दर्शनार्थ आये। उपाश्रय के बाहर मैदान में व्याख्यान मण्डप सजाया गया। पूर के दिन व्याख्याता मुनिराजों के प्रवचन हुए। पंडित प्रवर श्री घासीलालजी म० ने तपस्या की महिमा पर प्रभावशाली प्रवचन दिया। उस दिन गांवके समस्त बाजार बन्द रहे। हजारों जीवो को अभयदान दिया गया। कुचेरा के संघ ने आगत सज्जनों की तन मन से अच्छी सेवा की। गांव के गरीबों को भोजन में मिष्ठान्न दिया गया। शुभकामना एवं धर्म ध्यान की प्रवृत्ति के सैकडों तार एवं पत्र आये। जिनका उल्लेख स्थानाभाव के कारण नहीं हो सका। जिन ठाकुरों ने जीव दया के पट्टे भेट किये उनके कुछ नमूने ये हैं—

श्री

श्रीमान बुताटी ठाकुर साहब श्री ५ श्री सीरदारसिंघजी साहब कुचेरा ग्राम में श्रीमान मुनि महाराजाओं के दर्शनार्थ पधारे व्याख्यान सुन मुनिश्री घोर तपस्वी श्री सुन्दरलालजी म० के दर्शन कर निम्न लिखित सोगनकर पट्टो लिख दिया। १ कोला की शाक नहीं आरोगना जावजीव तक

२ हीरण की शिकार नहीं करना और ३ न उसका मांस खाना ४ कोई जानवर की घात अपने हाथ से नहीं करना याने तलवार बन्दुक से किसी को नहीं मारना।

५ साल में एक बकरा अमरिया कर सालोसाल याने हरसाल छोड देना, तपस्वीराज के नाम से—

उपर माफिक पांचों कसम अपनी खुशी से लिख भेट की है--

१९९१ का भाद्रपद सुदी १३ शुक्रवार द: सिरदारसिंघरा है (समस्त सरदारों के दस्तखत है)

श्री

सिद्ध श्री अलाय में जैन धर्म के सुप्रसिद्ध पं. रत्न श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज और तपस्वीराज श्री १००८ श्री सुन्दरलालजी म. आदि ठाना ५ से पधारना हुआ और महाराज श्री ने अपूर्व धर्मोपदेश सुनाया जिससे हम सब में धर्म की जागृति बहुत अच्छी हुई और जिस वक्त महाराज श्री का यहां से विहार हुआ उस वक्त शुद्ध प्रेमसे जो शर्तें मन्जूर करके महाराज श्री के नाम से पट्टा लिख कर भेट देने का इकरार किया था और चन्दरोज के बाद ही हमारे सौभाग्य से पं. श्री १००८ श्री मनोहरलालजी महाराज श्री मंगलचंदजी महाराज श्री मांगीलालजी महाराज आदि ठा. ४ से पधारे और मीती चैत्रकृष्णा अष्टमी गूरुवार के दिन बडे उत्साह के साथ नव दीक्षित मुनि श्री विजयचन्दजी म० की बडी दीक्षा हुई। इस सुअवसर पर यह पट्टा लिखकर महाराज श्री के कर कमलों में भेटकरता हूँ।

१—अष्टमी एकादशी, पूर्णमासी और अमावस के दिन कतई शिकार नहीं किया जायगा।

२—दशहरे के दिन शिकार नहीं की जायगी। ३—छमंछरो अर्थात् ऋषिपंचमी के दिन अगता रखा जायगा। ४ तपस्वीराज के नाम से सालाना एक बकरा अमरिया किया जायगा। ५ भादव मास में जीवहिंसा नहीं की जायेगी। ६ जन्मअष्टमी, पार्श्वनाथजयन्ति (पौष सुद १०) महावीरजयन्ती (चेत सुद १३) और पजूषणों में ८ आठ रोज अगता रखा जायगा, और शान्तिनाथ जयन्ती (जेठ वद १३) को भी अगता रखा जायगा।

७—और जिस रोज यहां पर पं. रत्न श्री घासीलालजी महाराज पं० श्री मनोहरलालजी म० सा० का पधारना होगा तब आने जाने के दोनों रोज का अगता रखा जायगा।

ये उपर लीखी शर्तें मेरा वन्श कायम रहेगा तब तक पाली जायगी। संवत १९९२ का चेत्र

वद ११ अग्यारस   दः ठाकुर तेजसीह ठि. श्री अलाय (मालाज)

इस अवसर पर ठाकुर साहब ने पांच जीवों को अभयदान देकर अपनी धार्मिक श्रद्धा का परिचय दिया ।

श्री

श्रीमान महाराज श्री १००८ श्री घासीलालजी म० सा० ठा० ८ से कुचेरा में विरामान थे । श्रीमान ठाकुर साहेब सीवदानसिंघजी साहेब रूपातल ठिकाणो से दर्शनाथ पधारे । तपस्वीजी श्री १००७ श्री सुन्दरलालजी म० साहेब के तपस्या दिन ९१ के पुर की खुशो में नीचे मुजब त्याग करता हूं ।

१ एक बकरा सालोसाल तपस्वीजी के नामसू अमर करता रहूंगा । २ उनाले चोमासे सीयाले अर्थात् बारो महीना की तीथी ११ "अमावस को रात को नहीं जीमूंगा और लीलोत्री भी नही खाउंगा ३ और कोई प्रकार की हिंसा नहीं करूंगा । ४ दारु मांस जाव जीव तक भक्षण नहीं करूंगा ५ कोला को साग हरो तथा सूको साग नहीं खाउंगा । ६ हमारे समक्ष आवेगा वैसा परोपकार करुंगा ।

मीति सं. १९९१ आसोज वदी १३ शनीवार ठाकर सा० के हुक्म से लीखा

दः बालचन्द भरूठ परद्दोद निवासी दः सीवदानसिंघ

श्री

श्रीमान श्री महाराज श्री १००८ श्री घासीलालजी म० मनोहरलालजी म० ठाना ८ से कुचेरा में बिराजमान हैं । श्रीमान ठाकुर साहेब बलवन्तसहिंजी साहब अडवड ठिकाणा सु पधार कर तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी म० सहाब का दर्शन कर इन मुजबरो त्याग कर्यो ।

१ सावन तथा कार्तीकी १०, ११, १२, १३, १४ और १५, भादवासुदी ४, ५ को मांस नहीं खाऊंगा और जीव हिंसा नहीं कराला । २ दरसाल एक एक बकरा अमरिया करूंगा । ३ घर की बकरी को कसाई ने नहीं दूंगा ।   संवत १९९१रा आसो सुद ४ दः बलवंतसीह अडवड

श्री

श्रीमान महाराज श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज मनोहरलालजी महाराज ठा. ८ से कुचेरा में बिराजमान थे श्रीमान ठाकुर साहेब भोजराजसिंघजो साहब गोटनग ठिकाने से दर्शनार्थ पधारे तपस्वीजी श्री १००७ श्री सुन्दरलालजी म० साहब के तपस्या के दिन ९१ के पुर के खुशी में नीचे मुजब त्याग करता हूं ।

१ मेरे हाथ से किसी गरीब जीव की जाण बुझकर हिंसा नहीं करुंगा । गोली से कीसी को नहीं मारूंगा और कभी न गोली से शीकार करूंगा । न गोली की सीकार करवाकर खाऊंगा

२ साल में एक बकरा तथा एक घेटा अमर कर दूंगा ३ इग्यारस तथा अमावस को मांस नहीं खाऊंगा ४ कोलो तथा भींडी बारक जावोजीव तक नहीं खाउंगा ।

लि. १९९२ का मीति आसोज वद १४ को लिखा ।   दः भाटी भोजराजसींग ठाकुर

श्री

श्रीमान् महाराज श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज साहेब ठा० ८ से कुचेरामें बिराजमान थे । श्रीमान ठाकर साहब श्री तेजसिंहजी सा. ठिकाना नीबडी से दर्शनार्थ पधारे । तपस्वीजी १००७ श्री सुन्दरलालजी महाराज म सा. के तपस्या के दिन ९१ का पूर की खुशी में नीचे माफक त्याग किया सो नीचे दरज है—

१ हीरण की शीकार मैं आजन्म तक के लिये त्याग करता हूँ । २ अग्यारस " अमावस १५-

पूनम ये तीन दिन के लिए मैं किसी जानवर के उपर गोलीमार कर सीकार नहीं करूगा । ३ भिंडी और तोरू आजन्मतक खाने के वास्ते त्याग करता हूँ ।

१९९१ मी० भादवासुदी १५ दः बक्सुलालदरडा का है ठाकर साहब के हुकुम सु दः जैतसिंह ठाकुर

श्री

श्रीमान महाराज श्री १००८ श्री घासीलालजी म० सा० ठा० ८ से कुचेरा में चातुर्मास विराजमान थे। श्रीमान ठाकुर साहब श्री श्री फत्तेसिंहजी साहेब ठिकाना नोखा से दरशण के वास्ते पधारे। तपस्वीजी महाराज श्री सुन्दरलालजी म० साहेब के तपस्या दिन ९१ का पूर हुआ, उसको खुशी में नीचे माफिक त्याग फरमाये उसकी यादी १—होरण की शिकार नहीं करना । मांस नहीं अरोगणा। आजन्म तक मने त्याग है ।

२–११, १४–१५, " और अमावस इन पाँच तिथियों में मैं शिकार करना आजन्म के लिए त्याग करता हूं । ३—हरसाल १ एक बकरा अमरकरदेउंगा । १९९१ मिती भादवासुदी १५

दः बक्सुलाल रा छे ठाकुर साहब श्री फत्तेसिंहजी रा हुकुमसु

श्री

श्रीमान महाराज श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज ठा० ८ से कुचेरा में चातुर्मास विराजे थे। देवीसिंहजी ठिकाना मुडियाद से दरशन करने को आया । तपस्वीराज श्री १००८ श्री सुन्दरलालजी म० सा० के तपस्या दिन ९१ का पूर हुआ । उसकी खुशी में नीचे माफिक त्याग किया ।

१ कोले का शाक नहीं खाना । २ आलू नहीं खाना । ३ जहां तक हो सकेगा वहां तक फालतू जीवहिंसा कदापी न करूँगा, नहीं करावूंगा । ४ हरसाल खाजरू १ एक अमर कर दूंगा ।

मिति भादसुदी १५ संमत १९९१ दः देवीसींह

इस प्रकार के अनेक पट्टे लिखकर पं० रत्न श्री घासीलालजी महाराज श्री की सेवामें भेंट किये । इसके अतिरिक्त स्थानीय व्यक्तियों ने भी बड़ी संख्या में बीडी, सिगारेट दारु मांस परस्त्रीगमन शिकार जीवहिंसा जैसे अनेक दुर्व्यसनों का त्याग किया ।

यहां पर्युषण पर्व बडे समारोह के साथ मनाया गया । मारवाड, मालवा, गुजरात, महाराष्ट्र उड़ीसा, बंगाल आदि प्रान्तों के अनेक श्रावक और श्राविकाने महापर्व पयुर्षण के दिनों में महाराजश्री के दर्शनकर अपने को धन्य माना । स्थानीय श्रावकोंने भी आगन्तुक सज्जनों की अपूर्व सेवा की ।

श्री रणवीर तेजाजी के वंशज श्रीमान् राधाकिसनजी साहेब उस समय गांव के चौधरी थे एवं श्रीमान् बलदेवराजजी जोधपुर सिटी पुलिस सुपरिडेन्ट ने, चातुर्मास काल में महाराज श्री की बडी भक्ति की । आपके पूर्वजों ने जोधपुर सरकार की बडी इमानदारी से सेवा बजाई थी, जिससे सरकार ने आपको मिरधा पदवी से विभूषित किया था । और जागीर में ग्राम भी प्रदान किया गया था । जैसे आपके पूर्वजों ने सरकार की सेवा बजाई वैसे आपने भी उस समय सरकार की सेवा बजाई थी । इतने बडे उच्च ओहदे पर रहते हुए भी आपमें महान धार्मिक श्रद्धा विशेष रूपमें थी । संन्तजनों के आप बडे अनुरागी थे । वैसे ही आपके लघुभ्राता मास्टर साहब श्री रामचन्द्रजी ने शिक्षा विभाग की अच्छी सेवा की । आप विद्वान होते हुए भी स्वभाव के बडे विनम्र सन्त भक्त एवं परमार्थी थे । इस प्रकार कुचेरा के संघ ने चातुर्मास काल में तन मन और धन से महाराज श्री की सेवाकर जैन शासन की बडी प्रभावना की ।

एक लम्बे अर्से से नागोर की धर्मप्रिय जनता महाराज श्री के दर्शन और उपदेश श्रवण के लिए अत्यंत उत्कंठित थी । चातुर्मास के समय नागोर से श्रीमान् लक्ष्मीमलजी, परसनमलजी, भभूतमलजी, हीरालालजी वकीलजी, वेताला राजवैद्य श्रीमान् मानकचन्दजी, आदी प्रमुख सज्जनों का एक शिष्टमण्डल महाराजश्री की

सेवामें उपस्थित हुआ। और नागोर पधारने की प्रार्थना करने लगा। श्रावकों के भक्ति भाव पूर्ण आग्रह को टालना मुनिश्री के लिए कठिन हो गया।

महाराजश्री ने द्रव्य क्षेत्र काल भाव के अनुसार चातुर्मास समाप्ति के बाद नागोर फरसने का भाव प्रदर्शित किया।

कुचेरा का चिरस्मरणीय चातुर्मास पूर्ण हुआ। और महाराजश्री ने मार्ग शीर्ष कृष्णा प्रतिपदा को अपने आठ मुनिराजों के साथ नागोर की ओर विहार कर दिया। कुचेरा के विशाल जन समूह ने अश्रुभिने नयनों से आप को दूर तक पहुचाकर विदा किये। मांगलिक श्रवण कर सेकडों व्यक्तियों ने यथा शक्ति त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किये।

विहार करते हुए आप नागोर पधारे। नागोर के विशाल पंचायती नोहरे में आप अपनी सन्त मण्डली के साथ विराजे। आपके प्रतिदिन व्याख्यान होने लगे। व्याख्यान प्रभावशाली होने से परिषदा दिन प्रति दिन बढ़ने लगी। धर्मध्याय खूब होने लगा। जैन जैनेनतर एवं राज कर्मचारीगण बडी संख्या में आप के व्याख्यान श्रवण करने लगे। यहां का संघ उत्तम सन्तों का अनुरागी और उदार विचारवाला होने से महाराज श्री की अच्छी सेवा की। जिस समय महाराज श्री आठ ठाने से बीकानेर विराज रहे थे उस समय मोगामण्डी (पंजाब) के डॉक्टर मथुराप्रसादजीको बीकानेर के सेठ हजारीमलजी साहब ने अपने आंखों की चिकित्सा कराने के लिए बुलाया था। उस समय श्रावकों के आग्रह से डॉक्टर साहब भी महाराज श्री के दर्शन के लिए पधारे। डॉक्टर ने सभी मुनिराजों के आंखों को देखा। महाराज श्री ने डॉक्टर साहब को कहा—आप बडे पुण्यवान है। दुनियां में ओर भी कई डॉक्टर है किन्तु आपको सहज ही में सन्तों की सेवा का अवसर मिला है। सन्तों की निस्वार्थ बुद्धि से सेवा करने का फल कुछ ओर ही होता है। निस्वार्थ सेवासे आपके हाथों में यश ही प्राप्त होगा! महाराजश्री की वाणी का डॉक्टर साहब पर अच्छा असर पडा। उस समय डॉक्टर साहब तो चले गये किन्तु महाराज श्री की उपदेशप्रद वाणी को नहीं भूले। कुछ वर्ष के बाद मारवाड में प्रसंग वश डॉक्टर साहब को कार्यवश जोधपुर शहर आना पडा। जोधपुर के श्रावकों को इस बात का पता लगा तो उन्होंने महाराज श्री घासी-लालजी म० का परिचय दिया। पूज्य महाराजश्री का स्मरण होते ही डॉक्टर साहब ने श्रद्धासे नमस्कार किया और श्रावकों से कहा—कहिए मैं महाराजश्री की क्या सेवा कर सकता हूं। श्रावकों ने कहा—महाराजश्री के साथ तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी म० नामके सन्त है उनके आंखो का इलाज करना है। यदि आप नागोर महाराजश्री की सेवा में पधारे तो अत्युत्तम होगा। डॉक्टर साहब ने कहा—मैं ता० २६ को नागोर आ रहा हूं। उस समय महाराजश्री के दर्शन करूंगा। इधर नागोर में कुछ दिन बिराजकर महाराजश्रीने नोखामण्डी की तरफ विहार कर दिया था। डाक्टर साहब के नागोर आने की सूचना श्रावकों के द्वारा मिलने पर वापीस महाराजश्री सन्तों के साथ नागोर पधार गये। डॉक्टर साहब महाराजश्री के पास आये और तपस्वीजीश्री सुन्दरलालजी महाराज की आंखों को देखा। आंख देखकर डाक्टर ने तत्काल ऑपरेशन की आवश्यकता बताई। महाराजश्री ने भी उचित अवसर देखकर ऑपरेशन की आज्ञा प्रदान कर दी।

नागोर के श्रावकों ने डॉक्टर को फीस के रूप में देने के लिए एक हजार रुपया एकत्र कर लिया था। ऑपरेशन के समय महाराज श्री ने सहज ही में डॉक्टर साहब से कहा—डॉक्टर साहब! आप जितनी फीस कम लेगे उतना हि दोष हमें कम लगेगा। डॉक्टर साहेब ने कहा—आदर्णीय गुरुदेव मैं आपका डॉक्टर हूं। और शिष्य भी हूं। आपकी सेवा करना तो मेरा परम कर्तव्य है। मैं आप से फीस कैसे ले सकता हूं। मुझे जो यह सेवा का अवसर मिला है यह मेरे लिए सौभाग्य का विषय है। केवल आप

मुनिवर के लिए ही नहीं किन्तु इस समय जो भी मुझ से आंख का ऑपरेशन करावेगा उनसे भी एक पैसा भी नहीं लूंगा ।

डॉक्टर साहेबने तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज का बडी सफलता के साथ ऑपरेशन किया । उस अवसर पर कुछ सतियों ने एवं अनेक गरीब स्त्री पुरुषों ने ऑपरेशन करवाया । डॉक्टर सा० ने किसी से एक पैसा भी नहीं लिया और बडे निस्वार्थ भाव से उसने सेवा की । सब ने डाक्टर का अच्छा सम्मान किया । कुछ दिन नागोर में ही स्थिरवास रह कर आपने अपनी सन्त मण्डली के साथ अन्यत्र विहार कर दिया । मार्ग मे पधारते हुए आपकी वाणी से महान उपकार हुवा ।

श्री

सिद्ध श्री गांव डॉबरा में श्री जैनधर्म के सुप्रसिद्ध वक्ता पण्डितरत्न आशुकवि श्री श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज मनोहरव्याख्यानी श्री १००७ श्री मनोहरलालजी महाराज घोरतपस्वी श्री १००७ श्री सुन्दरलालजी महाराज आदि ठाना ९ से सं, १९९२ का मिति वैशाख वदी १ सुकरवार ने पधारिया । दुपहर में महाराज श्री का अपूर्व उपदेश हुआ । जिससे हमलोगों में बडी भारी जागृति हुई । महाराज श्री के उपदेश से हम लोगों ने नीचे लिखे मुजब प्रतिज्ञा करी —

१ इग्यारस अमावसकी बंदूक किसी जानवर पर नहीं चलावेंगे । २ श्राद्ध पक्षमें मदिरा मांस भक्षण तथा शिकार नहीं की जायगी । ३ ऋसी पञ्चमी इग्यारस अमावस तथा श्राद्ध पक्ष में मांस मदिरा काम में नहीं ली जायेगी तथा किसी जानवर पर गोली नहीं चलाई जायगी जावजीव तक के वास्ते

द: दलसीध द: मालमसींध

श्री

सिद्ध श्री गांव धनायरी में जैन धर्म के प्रसिद्ध पंडितरत्नमुनि श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज मनोहर व्याख्यानी मुनि श्री १००७ श्री मनोहरलालजी महाराज घोरतपस्वी श्री १००८ श्री सुन्दरलालजी महाराज आदि ठाणे ९ से संवत १९९२ मिति चेत सुदी १४ बुधवार को पधारे । श्रावकों के बडे आग्रह से महाराज साब ने पखी का प्रतिक्रमण किया और दुपहर में तथा रात को आदर्श वाणी से धर्मो पदेश दिया उस उपदेश से धर्म में अपूर्व जागृति हुई । महाराज श्री के उपदेश से मैंने निचे लिखे मुजब प्रतिज्ञा की—

१ वैशाख मास में शिकारव मांस मदिरा का त्याग । २ ऋषि पंचमी को भी इनका त्याग । ३ एकादशी को भी त्याग ४ श्राद्ध पक्ष में भी त्याग ५ प्रतिसाल बच्चे की शालगीर में प्रतिवर्ष तपस्वीराज के नाम पर एक बकरो अमरिया करूंगा

द: हरीसीमरा

श्री

सिद्ध श्री गांव जेतियास में जैन धर्म के सुप्रसिद्ध वक्ता पंडितरत्न आशुकवि मुनि श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज मनोहर व्याख्यानी पंडित मुनि श्री १००७ श्री मनोहरलाल जी महाराज घोर तपस्वी जी श्री १००७ सुन्दरलालजी महाराज आदि ठाना ९ से संवत १९९२ मिति वैशाखवदि १ शुकरवार ने अठे पधारिया । महाराजसाब का धर्मोपदेश हुवा । जिनसु अठे धर्म में अपूर्व जागृति हुई । और महाराज साबके उपदेशसु में नीचे लिखिया मुजब प्रतिज्ञा करी है—

१—हर एकादशी व अमावस के रोज शिकार नहीं करणी । २—एकादशी के रोज शराब तथा मांस काम में नहीं लिया जायेगा । ३—श्राद्ध पक्ष में भी ये चीजें काम में नहीं ली जायगी । ४—जन्माष्टमी तथा ऋसी पंचमी का भी त्याग है । ५—सालो साल तपस्वीजी महाराज के नाम पर १ बकरा अमरिया किया जायेगा । ६—तपसीजी महाराज इण गाम में जब कभी पधारेंगे तो आने जाने के दो दिन

अगता पाला जायगा ।

एकादशी अमावस्या तथा श्राद्ध पक्ष में शिकार व मांस मदिरा का मैं त्याग करता हूँ ।

दस्तखत सोनरसींग ठाकर करीयो ये उपर लिखी तीन सोगन टाकर साहब के काकाजी डूंगरसिंगजी भी पालेगा दः सेलाणी ठाकर साब डूगरसिंहजी के अंगूठारी छे ।

श्री

सिध श्री गांव वासणी डाबरारी सीव में गाडणारी में जैन धर्म के प्रसिद्ध वक्ता पंडितरत्न आशुकवि श्री श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज मनोहर व्याख्यानी मुनीश्री १००७ श्री मनोहरलालजी म० घोर तपस्वी श्री १००७ श्री सुन्दरलालजी महाराज आदि ठाना ९ से संवत १९९२ रा मिती वेशाखवदी १ शुक्रवार ने सामको पधारिया । महाराज श्री का रातको धर्मोपदेश हुवा जिनसु हमारे अठे धर्म की जागृति हुई । महाराज श्री के अपूर्व उपदेश से अठे हमलोग नाचे मुजब प्रतिज्ञा करी

१ हमारे हाथ सु कभी जींव हिंसा नहीं करूंगा

(२) अगियारस अमावस पूनम और जन्माष्टमी ऋसीपांचम श्राद्धपक्ष इन दिनों में जीवहिंसा व मांस दारु काम में नहीं लिया जासी आ अगुठारी सेलाणी ऊमरदानजी री छे । दः मूलचंद व्यास

(१) इग्यारस अमावस को हल नहीं जोतांगा ? भैरुजी के पहले हिंसा होती थी सो अब आज सु बन्द है । मीठी परसादी कर दी जासी । (४) एक एक अमरिया नीचे लिखे नामवाले महानुभाव करेंगे— १जावरदानजी २अमेदानजी ३ जोरदानजी ४ वंशीलालजी देशनोक वाला ५ रेवतदानजी ५ मुरारदानजी । तथा बाया ने भी लीलोती में गाजर आदि के सोगन किये है ।

पटारा दसखत पंडित मूलचंद व्यांसरा छे. गांव वाला रे सामने उणारे केणे सु लिखियो छे ।

नागोर से विहार कर आप अलाय पधारे । अलाय नागोर से १० १२ मील पडता है । आपके पधारने से जनता में धर्म ध्यान की अच्छी वृद्धि हुई । जनता पर आपके व्याख्यानों का अच्छा प्रभाव पडा । यहां के ठाकुर तेजसिंहजी तो आपके उपदेश से खूब प्रभावित हुए । मुनि श्री के प्रति ठाकुर साहब की बडी श्रद्धा भक्ति थो । आपके उपदेशों से प्रभावित होकर जीव दया के पट्टे लिखकर महाराज श्री की सेवा में भेट किये । उस पट्टे का सांर यह था-

(१) अष्टमी, एकादशी, पूर्णिमा और अमावस्या के दिन हमारी हद में किसी भी प्राणी की शिकार नहीं की जावेगी । (२) संवत्सरी के दिन अगता पाला जायगा । (३) तपस्वीजी के नाम से प्रति वर्ष एक एक बकरा अमरिया किया जायेगा । (४) श्राद्ध के दिनों में मांस का सेवन एवं शिकार नहीं करेंगे

(५) कृष्ण जन्माष्टमी श्रीपार्श्वनाथ जयन्ती (पोष सुदी १०) श्री महावीर जयन्ती (चैत्र शुक्ला त्रयोदशी, तथा पर्यूषणों के आठ दिन अगता पाला जायगा । (६) महाराज श्री जब कभी यहां पधारेंगे उस दिन एवं वापस विहार करेंगे उस दिन अगता रखा जायगा ।

(७) दसहरे के दिन सर्वथा जीव हिंसा बन्द रहेगो । उस दिन जीवों के स्थान पर देवी देवता को मीठी प्रसादी चढाई जावेगी । ये सब नियम मेरी वंश परम्परागत पाले जावेंगे ।

उस दिन महाराज श्री ने एक नव दीक्षित मुनि को बडो दीक्षा दी । दीक्षा के अवसर पर अच्छा धर्मध्यान एवं तपस्या हुई थी । बाहर के दर्शनार्थियों की अच्छी उपस्थिति रही । बडो दीक्षा के अवसर पर ठाकुरसाहब ने पांच बकरों को अभयदान दिया । उस अवसर पर ठाकुर सा० तेजसिंह जी के दादा ठाकुर सुलतानसिंहजी ने इस प्रकार ने नियम ग्रहण किये ।

(१) अपने हाथ से किसी प्राणी को नहीं मारूंगा। (२) आजीवन मांस नहीं खाऊंगा। (३) आजीवन शराब नहीं पीऊंगा। (४) रात्री भोजन नही करूंगा। (५) आजीवन ब्रह्मचर्यव्रत पालूंगा। (६) तपस्वीजी के नाम पर प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमर करूंगा। (७) मूला केला एवं वेंगन को आजीवन खाने का त्याग। इस प्रकार महाराज श्री अजाय बिराजने से बडा धर्मोपकार हुआ। मास्टर सा० श्री छुमरलालजी, श्रीमान् लालचन्दजी, सुमनराजजी आदि ने धर्मदलाली खूब अच्छी की और जैन शासन की प्रभावना बढाने में आपने पूर्ण सहयोग दिया। स्थानीय श्रावकों ने भी अच्छी मात्रा में त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किये। कुछ दिन अलाय बिराजकर महाराजश्री का विहार नागौर की तरफ हुआ। मध्यवर्ती क्षेत्र को पावन करते हुए आप अपने मुनिवृन्द के साथ नागौर पधारे। और यहां पंचायती नोहरे में ठहरे।

महाराजश्री के कुचेरा के आदर्श चातुर्मास का सारे राजस्थान प्रान्त पर बहुत अधिक प्रभाव पडा। पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज से पृथक् होने पर आपको अनेक विध कठिनाईयों का सामना करना पड रहा था। कुछ आलोचक व्यक्ति समय समय पर आपकी निरर्थक आलोचना कर अपनी उद्दण्डता का परिचय दे रहे थे। महाराजश्री के आगाध सिद्धान्त ज्ञान, द्रव्य, क्षेत्र काल भाव को परखने का अद्भुत कौशल, चमत्कार पूर्ण वक्तृत्व शैली, एवं उच्चकोटि के तपस्वी सन्तों के पूर्ण सहयोग के कारण आपका प्रभाव इतना अधिक पड रहा था कि विरोधियों की समस्त हरकते धीरे धीरे अस्ताचल की ओर जाने लगी। जो निन्दक थे वे भी आपके प्रशंसक बन गये। जिस समय आप नागौर बिराज रहे थे उस समय जोधपुर, जयपुर, ब्यावर उदयपुर एवं आस के नगरों के लोग आगामी चातुर्मास की विनतियों लेकर आपकी सेवा में उपस्थित हुए। नागौर संघने भी आगामी चातुर्मास की प्रार्थना की

इसी अवसर पर कराची संघ की ओर से श्रीयुत् सेठ कानजीभाई छुंझाभाई आगामी चातुर्मास के लिए कराची की ओर पधारने की प्रार्थना करने आये। साथ में समस्त श्री संघ के हस्ताक्षरों से युक्त एक विनंती पत्र भी भाव वाहक लाये थे। कराची पधारने कि विनती की। कराची संघ की विनती पर महाराजश्री ने कहा कि– इस समय तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज के आखों की कारी हुई है। और कराची शहर बहुत दूर है। इसलिए सन्तों की सलाह के बिना क्या कहा जाय। किन्तु कानजीभाई तो कराची श्री संघ का जोसिला विनती पत्र होने से डट कर बैठ गये। और कहने लगे कि आप तो मुनिराज हो और मुनि परिषह जीतने में शूर-वीर होते हैं। आप तो परोपकारी हो अतः हमारे श्री संघ की विनती स्वीकार करनी ही पडेगी। यदि आप मेरे अकेले की विनती स्वीकार नहीं करेंगे तो मैं तार देकर कराचीवालों जो हवाई जहाज से बुलाउगा फिर तो आपको विनती माननी ही पडेगी। हमारा कराची संघ जिन वाणी रूप अमृत का बडा पिपासु है। और सिन्ध में जैन धर्म का प्रचार कराने तथा भोले प्राणियों को दारु, मांस हिंसा आदि दुष्कर्मों से बचाने के लिए अत्यन्त उत्कण्ठित है। आपके सहयोग के बिना हमारा यह गुरुतर कार्य सफल नहीं हो सकता। आपके पधारने से सिंध देश में जैनधर्म का प्रचार होगा और जिन शासन की प्रभावना बढेगी। जैन-धर्मोपदेष्टा पण्डित मुनिश्री फूलचन्द्रजी महाराज ने हमारे क्षेत्र में जिस धर्म वृक्ष को बोया है उसे सिंचित कर पल्लवित पुष्पित और फलान्वित करना आपका कार्य है।

उस समय चातुर्मास की विनती के लिए अजमेर, जयपुर, अलवर, दिल्ली तथा स्वयं नागौर का संघ उपस्थित था। किन्तु महाराजश्री ने कराची संघ की तीव्र भावना और महान् उपकार को ध्यान में रखकर कराची संघ की विनती स्वीकार करली। उस अवसर पर पं मूलचन्दजी व्यास को बाडमेर तक महाराजश्री की सेवा में रहना यह निश्चित कर कराची चले गये। कुचेरा से नागौर तक के विहार में अनेक

महानुभावों ने पट्टे लिखकर महाराजश्री को भेट किये थे।

क़राची की ओर प्रस्थान

वि सं १९९२ मिति चैत्र शुक्ला अष्टमी गुरुवार ता ११-४-१९३५ को नागौर (मारवाड) से महाराजश्री का शुभ विहार हुआ। प्रथम दिन नागौर के बाहिर प्रतापसागर तालाव के उपर श्रीरामचन्द्रजी की बगीची में बिराजे। यहां पर नागौर श्रीसंघ ने एक अनोखा उत्साह प्रकट किया। श्रीसंघ के अधिक आग्रह से मुनिश्री दूसरे दिन भी वहीं विराजे। दूसरे दिन प्रवचन का कार्यक्रम रखा गया। प्रवचन में नागौर शहर का विशाल जन समुदाय मुनिश्री के प्रवचन में उपस्थित हुआ। मंगलाचरण के बाद मुनिश्री ने धर्म का स्वरूप समझाते हुए कहा-"धर्म प्रजा का मूल है। आत्मामें रहे हुए सद्गुणों को प्रकट करने वाला एक मात्र धर्म ही है। धर्म मनुष्य से देवता बनाने में सहायभूत होता है। धर्म भव समुद्र को पार करनेवाली महान नौका है। उस पर बैठ कर ही हम पार हो सकते हैं। उन्हें पकड रखने से नहीं। सूर्य के प्रकाश की तरह धर्म सब के लिए प्रकाशदायी है। सूर्य के प्रचण्ड प्रकाश पर किसी का स्वामित्व नहीं, किन्तु उपयोग हर कोई कर सकता है। यही बात धर्म के लिए भी लागु होती है। धर्म जब तक कर्तव्य के साथ और कर्तव्य धर्म के साथ नहीं चलता, तब तक धर्म जीवन की कला नहीं बन सकता, और वह कर्तव्य जीवन का आदर्श नहीं हो सकता। शास्त्र में कहा है-

जरामरणवेगेणं बुज्झमाणाणपाणिणं धम्मो दीवो पइट्ठाय, गईसरणमुत्तमं ॥१॥

अर्थात् जरा और मरण के महाप्रवाह में डूबते प्राणियों के लिए धर्म ही द्वीप है, प्रतिष्ठाका आधार है, उत्तम गति लेता हैं, और उत्तम शरण है।

धर्म के विषय पर मुनिश्री ने करीब एक घंटे तक प्रवचन फरमाया। प्रवचन का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा। लोगों ने अपनी शक्ति के अनुसार अनेक प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किये।

तीसरे दिन प्रातः होते ही मुनिश्री ने शुभ चैत्र शुक्ला १० शनिवार के दिन अपने नौ मुनिराजों के साथ विहार कर दिया। नागौर संघ ने गुरुदेव को बडे व्यथित हृदय से विदा दी।

चैत्र शुक्ला १० शनिवार १३ अप्रेल १९३५ के दिन मुनिश्री अपनी शिष्य मण्डली के साथ गाडितो को कुमारी पहुंचे। यहां १०-१२ घर हिन्दुओं के थे। गाडीत में मुसलमानों की ही अधिक वस्ती थी यहां करीबन एक हजार मुसलमानों के घर थे। प्रायः समस्त गांव यवनमय ही था फिर भी हिन्दुओं का एवं जैनों का ग्रामवासियों पर इतना अच्छा प्रभाव था कि यहां पर पर्युषणों के आठों हि दिनों सम्पूर्ण हिंसा बंद रहती थी। और आठो हि दिन अगते पाले जाते थे। यहां श्रीयुत माणकचन्दजी मुनावत बडे श्रद्धाशील व्यक्ति थे। उन्होंने मुनिजनों की अच्छी सेवा की।

मुनिश्रीने शामको करीब पांच बजें यहां से विहार कर दिया। और कुमारी पधारे। वासण से कुमारी २ मील पर है। यहां भी गाडीत मुसलमानों की ही अधिक वसती थी। रात को एक मन्दिर में ठहरें। यहां हवालदार साहब श्रीमान् रामनाथजी लोढा जोधपुर के पुष्करणा ब्राह्मण थे। आप बडे सभ्य सुशील एवं गायन वादन विद्यामें निपुण थे। रात को उपदेश श्रवण किया और बडी भक्ति की। चैत्र शुक्ला एकादशी १४ अप्रेल को प्रातः कुमारी गांव से महाराजश्री ने विहार कर दिया और ६ मील पर स्थित सिनोद नामक गांव में पधारे।

यहा पर अधिकतर जाटों किसानों की ही बसती थी। बडा तालाब भी है। यहां श्रीमान् बन्शीधरजी व्यास पुष्करणा ब्राह्मण हवाल दार थे। आप बडे भक्त और सुज्ञ थे। मुनिश्रीजी जब यहां से विहार करने लगे तब बडे आग्रह से उनको रोक लिया। रात्रि में महाराजश्री का 'रात्रिभोजन' पर प्रवचन

हुआ। आपने रात्रिभोजन के दूषणों का वर्णन करते हुए फरमाया—रात्रि का भोजन, अन्धों का भोजन है। केवल जैन धर्म ही नहीं संसार के सभी धर्म रात्रिभोजन का निषेध करते हैं। महाभारत के शान पर्व में कहा है—

उलूक काक मार्जार-गृद्धशम्बर शूकराः अहि वृश्चिक गोधाश्च, जायंते रात्रिभोजनात् ॥१५॥
रात्रि भोजन करने से जीव उल्लू कौवे बिल्ली गिद्ध, सांभर, सर्प बिच्छू आदि योनियों में जन्म लेते हैं। मार्कण्डपुराण में तो यहां तक कहा है कि—

नोदकमपि पातव्यं, रात्रावत्र युधिष्ठर ! तपस्विनां विशेषेण, गृहीणां च विवेकिनाम् ॥

हे युधिष्ठर ! विशेष कर के तपस्वीयों को तथा विवेकियों को रात्रि में जल—भी नहीं पीना चाहिए तो फिर रात्रि भोजन के लिए तो कहना हि क्या ? आज के युग के प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ महात्मा गान्धी भी रात्रि भोजन को अच्छा नहीं समझते थे। करीब ४० वर्ष से जीवन पर्यन्त रात्रि भोजन के त्याग के के व्रत को गान्धीजी बडी दृढता से पालन करते रहे। यूरोप में गये तब भी उन्होंने रात्रि—भोजन नहीं किया। धर्म शास्त्र और वैद्यक शास्त्र की गहराई में न जाकर यदि हम साधारण तौर पर होने वाली रात्रि भोजन की हानियों को देखे तब भी वह बडा हानि प्रद ठहरता है। भोजन में कीडी (चिउंटी) खाने में आ जाय तो बुद्धि का नाश होता है, जूं खाई जाय मो जलोदर नामक भयंकर रोग हो जाता है। मक्खी चली जॉय तो वमन हो जाता है, छिपकली चली जाय तो भयंकर कोढ हो जाता है। शाक आदि में मिलकर बिच्छू पेट में चला जाय तो तालू को भेद डालतो है। बाल गले में चिपक जाय तो स्वर भंग हो जाता है। इत्यादि अनेक दोष रात्रि भोचन में प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होते हैं।

संसार में छोटे छोटे बहुत से सूक्ष्म जीव जन्तु होते हैं जो दिन में सूर्य के प्रकाश में तो दृष्टि में आ सकते हैं परन्तु रात्रि में तो वे बिलकुल हि दिखाई नहीं देतें। रात्रि में मनुष्य की आंखे निस्तेज होती हैं। वे सूक्ष्म जीवों को बराबर देख नहीं पाती। अतएव वे सूक्ष्म जीव भोजन में गिर कर जब जब दांतों के तले पिस जाते हैं और अन्दर पेट में पहुंच जाते हैं तो बडा ही अनर्थ करते हैं। रात्रि भोजन के समय जहरीले जीव जन्तु के पेट में पहुंचनें से अनेकों की मृत्यु के उदाहरण मौजूद है। धर्म की दृष्टि से एवं स्वास्थ्य की दृष्टि से रात्रि भोजन हानि प्रद ही सिद्ध हुआ है। पेट की खराबियां प्रायः रात्रि भोंजन से ही होती है। अतः प्रत्येक मानव मात्र का कर्तव्य है कि वह रात्रि भोजन का सर्वथा त्याग करें। न रात्रि में भोजन बनावे और न खावें।

इस प्रवचन का असर व्यासजी पर पडा और आपने सदा के लिए रात्रि भोंजन का त्याग कर दिया। गांव वालों ने भी हिंसा न कर ने की प्रतिज्ञा की और पट्टा लिखकर महाराज श्री की सेवा में भेट किया। यहां श्रीमान् जगन्नाथजी दाहिमा ब्राह्मण स्कूल में शिक्षक थे। इन्होने भी महाराज श्री की बडी सेवा की। प्रातः होते ही १५ एप्रील को महाराजश्री ने अपनी मुनि मण्डली के साथ विहार कर दिया। आठ मील का विहार कर आप जोरावपुर पधारे। आहार पानी करके करीब चार बजे पुनः विहार कर दिया। कुछ सन्त तो दिन ही में खींवसर गांव में पहुंच गये थे। तपस्वीजो श्री सुन्दर-लालजी महाराज के धीरे धीरे चलनेके कारण महाराजश्रीजी एवं श्रीं समीरमलजी महाराज ठाने तीन गाम से एक मील दूर जंगल में एक वृक्ष के नीचे ही तालाब के किनारे रात्रि निवास किया।

चैत्र शुक्ला १३ ता, १६ अप्रेल को प्रातः विहार कर महाराज श्री जी खींवसर पधारे। यहां लघु तपस्वीजी श्री मांगीलालजी महाराज के तेले का पारणा हुआ। मध्याह्न के समय महाराज श्री का सार्वजनिक प्रवचन हुआ। यहां श्रावकों के करीब१५—१६ घर हैं। धार्मिक लगन अच्छी है। महाराज श्री

के प्रवचन से प्रभावित होकर स्थानीय लोगोंने बडी मात्रा में त्याग प्रत्याख्यान किये। शाम को करीब ४॥ बजे महाराज श्री ने अपने मुनिवरों के साथ विहार किया। गांव का जन समूह दूर तक आपको पहुंचाने गया। मांगलिगक श्रवणकर वापस लौटा। यहां से करीब ४ मील पर जंगल में जाटों की ढाणी के समीप एक वृक्ष के नीचे रात बिताई।

१७ अप्रेल को प्रातः विहार हुआ। रास्ते में बडे बडे काले जहरीले नाग मिले। उन्होंने किसी भी प्रकार की क्षति नहीं पहुंचाई। मार्ग के किनारे खडे सर्पराज को इस मुद्रा में दृष्टिगोचर होते थे मानों अहिंसा के पूजारी सन्तों का अत्यन्त प्रेम भाव से स्वागत कर रहें हों।

कुछ सन्त आगे निकल गये। और चलते हुवे रास्तेमें आगे जाकर मार्ग भूल गये। बहुत देर तक खेतों में एवं उज्जड भूमि में चक्कर लगाते रहे साथ में नागौर वाले पं० श्री मूलचन्दजी व्यास भी थे। दिन को गरमी अधीक थी। प्यास अधिक चले जाने से गर्मी का प्रकोप बढ गया। सूर्य की प्रचण्ड किरणे मस्तिष्क को तप्त कर रहने के कारण मुनिवरों का गला सूख गया। बडी कठिनाई के बाद मार्ग मिला। करीब एक डेढ बजे मुनिगण धणायरी (बडी) गांव में पहूंचे। यहां श्रावकों के ८-९- घर थे। श्रीयुत् चुन्नीलालजी सेठियां बडे भक्त और मुखिया थे। आपने बडी अच्छी धर्म दलाली की महाराज श्री को अत्यन्त आग्रह कर रोक लिया। पक्खी प्रतिक्रमण यहीं किया। रात्रि में महाराज श्री के प्रवचन की सूचना सारे गांव वालों को दी गई। ग्राम की विशाल जन । ने महाराज श्री का प्रवचन सुना। अनेक लोगों ने जीव हिंसा शिकार, दारु, मांस आदि दुर्व्यसनों का त्याग किया। यहां ठाकुर साहेब श्रीमान् हरिसिंहजी साहब ने भी महाराज श्री का प्रवचन सुना और जीव हिंसा न करने का पट्टा लिखकर महाराज श्री को भेट किया।

१८ अठारह अप्रेल को प्रातः महाराज श्री विहार कर नान्दिया पधारे। नान्दियां धनायरी से ६ मील है। यहां श्रावकों के ५-७ घर है। दुपहर में व्याख्यान हुआ। यहां के ठाकुर सॉहब इन्द्रसिंह जी के भंवर साहब पद्मसिंहजी ने निरपराध प्राणियों पर गोली चलाने का त्याग किया। अन्य लोगों ने भी यथा शक्ति त्याग प्रत्याख्यान किये। यहां से सायंकाल को महाराज श्री ने विहार कर दिया। नान्दियां से विहार कर दो मील पर जेतियास पधारे। यहां रात को मन्दिर में ठहरे। ठाकुर साहब गुमानसिंहजी ने रावले में जो मन्दिर के पास ही था व्याख्यान कराया महाराजश्री ने अपने व्याख्यान में जीव-दया का महत्व समझाया। प्रवचन से प्रभावित हो ठाकुर साहब ने महाराज श्री को जीव दया का पट्टा लिखकर भेट किया। ग्रामीन जनता ने भी तरह तरह के त्याग किये।

१८ अप्रेल को विहार कर महाराज श्री ७ मील पर स्थित डावरा गांव में पधारे। यहां श्रावकों के ७-८ घर थे। अमोलकचन्दजी सा० देशलहरा यहां के मुख्य श्रावक थे। धार्मिक श्रद्धा भी आपकी बहुत अच्छी थी। आपने महाराज श्री के आगमन की सूचना समस्त गांव वालों को दी। दुपहर में सार्वजनिक व्याख्यान हुआ। सैकडों की संख्या में लोग उपस्थित हुए। महाराज श्री ने अहिंसा पर प्रवचन दिया। प्रवचन सुनकर स्थानीय सरदारों ने अहिंसा के पट्टे लिख दिये और जीव हिंसा न करते की प्रतीज्ञा की।

सायंकाल को डावरा से महाराज श्री ने अपनी सन्तमण्डली के साथ विहार कर दिया। श्रीमान अमोलकचन्दजी सा. देश लहरा भी महाराजश्री के विहार में साथ में थे। दो मील पर चारणों की वासणी में पधारे। यहीं रात्रि निवास किया। प्रवचन हुआ। उपदेश सुनकर बारोट भाई बहनों ने दारु, मांस शिकार नहीं करने एवं जीव दया का पट्टा लिख दिया। यहां चारणों के सरदार श्रीमान उमरदानजी साहब बडे श्रद्धालु व्यक्ति थे। इन्होंने महाराज श्री की बडी भक्ति की।

प्रातः २० अप्रैल को विहार कर महाराज श्री जुड पधारे। वोसणी से जुड ७ मील है। उमरदानजी साहब बारोट यहां तक पहुँचाने आये। यहां श्रावकों के ४–५ घर थे। सेठ हुकुमीचन्दजी सा. अत्यन्त श्रद्धालु एवं श्रावकों में अगवानी थे। महाराज श्री सन्त मंडलो सहित रावले में विराजे। सायंकाल के समय विहार कर दो मोल पर उम्मेदनगर पधारे। यहाँ रावले के तिवारों में रात्रि विश्राम किया।

प्रातः लधुतपस्वोजी श्री मांगीलालजी महाराज के यहां तेले का पारणा हुआ। पारने के पश्चात् महाराज श्री ने २१ अप्रैल को विहार कर दिया। तीन मोल का विहार कर आप मथाणियां पधारे। मथानियां संघ महाराज श्री का स्वागत करने के लिए एक मील सामने आया। बडे समारोह के साथ सन्तों को गाम में ले आये।

दूसरे रोज २२ अप्रैल को व्याख्यान हुआ। यहां का श्री संघ बड़ा धर्मानुरागी था। गुरुदेव की अच्छो सेवा की और अपनी धर्म श्रद्धा का परिचय दिया। यहा श्रीमान जोरावरमलजी सा० अत्यन्त श्रद्धालु व्यक्ति थे। इन्होंने महाराज की अच्छी सेवा की। शाम को विहार हुआ। स्थानीय श्रावक श्राविकाएं दूर तक महाराज श्री को पहुंचाने आये। रात को जंगल के भीतर सूनी झोपडी में विश्राम किया।

२३ अप्रैल को प्रातःकाल यहां तिवरी से तपस्वी बखतावरमलजी लूंकड छह उपवासों का पारणा करके ऊंट सवारी से मथाणियें महाराजश्री के दर्शन को आये। वहाँ से विहार सुनकर मथानियां वाले मोहनलालजी के साथ जंगल में पहुचे जहां कि महाराज श्री विराजे थे। दिन सम्बन्धी आज्ञा में बेला (छठम) की प्रतिज्ञा ली। तिवरी पधारने के लिए महाराज श्री से बडे आग्रहपूर्वक विनती की। किन्तु महाराजश्रीको कराची शीघ्र पहुँचने की भावना से उनकी विनती को मुनिश्री ने अस्वीकृत कर दिया।

मुनिश्री ने २३ अप्रैल को प्रातः अपने मुनिजनों के साथ 'इन्द्रोंको' नामक गांव की ओर विहार कर दिया। ८ मील का लम्बा विहार कर आप इन्द्रोंको पधारे। यहां श्रावकों के ४–५ घर है। श्रीयुत राणीदानजी संचेती ने अपने सुपुत्र मिश्रीमल के जन्म दिन पौष सुदी दसम के रोज महाराज श्री के आगमन की खुशी में प्रतिवर्ष एक बकरा अमर करने की और उस दिन ब्रह्मचर्य व्रत पालने की प्रतिज्ञा ग्रहण की। श्रीमान् जेठमलजो साहब ने भी महाराज श्री के प्रति अपनी विशेष श्रद्धा का परिचय दिया। दो मील का विहार कर महाराजश्रो बेरु पधारे। यहां रात्रि में एक मन्दिर में विश्राम किया। मन्दिर के महन्त जानकीदासजी बडे योग्य व्यक्ति थे। रात को महाराज श्री का प्रवचन हुआ। यहां के ठाकुर साहब श्रीमान् शेरसिंहजो ने सपरिवार महाराज श्री का प्रवचन सुना। उपदेश से बडे हि प्रभावित हो ठाकुर साहब की भूआ श्रीमती इन्द्रकुंवरोबाई ने तथा ठकुरानी सा० श्रीमती मोहनकुंवरो बाई ने तथा अन्य परिवार के सदस्यों ने जीव हिंसा मांस, मदिरा एवं रात्रि भोजन हरी लीलोती का त्याग किया। एकादशी, अमावस्या आदि खास-खास तिथि में उपरोक्त व्रत रखने की प्रतिज्ञा ग्रहण की। ठाकुर साहब ने भी जीवदया का पट्टा लिख कर दिया। अन्य भी अनेक परोपकार के कार्य हुए।

२४ अप्रैल को प्रातः ५ मील का विहार कर महाराज श्री केरु पधारे। यहाँ पर श्रावकों के ८ १० घर हैं। दुपहर को जैन मन्दिर में महाराज श्री का प्रवचन हुआ। रावले से मां साहब श्रीमती महताबबाईजी ने एक रोज़ रहने को अर्ज कराई। एक बकरा प्रति वर्ष अमर करने का प्रण लिया। सायंकाल में विहार हुआ। मार्ग में दो कोस के करीब चलने पर पहाड की तलहटी में एक वृक्ष के नीचे रात्रि निवास किया। प्रातः २५ अप्रेल को केरू से ६ मील लम्बा विहार कर बंमोर पधारे। यहाँ श्रावकों के तीन घर है। तीनों बडे भक्ति एवं सेवाभावी है। जैन अजैन जनता ने बडी संख्या में महाराज श्री का प्रवचन सुना। महाराज श्री के प्रवचन से प्रभावित हो यहाँ के तीनों श्रावकों ने प्रतिवर्ष एक-एक बकरा

अमर करने की प्रतिज्ञा ग्रहण की। गणेशकुंभार ने सांप विच्छू न मारने का प्रण लिया। जागीदार के छोटे भाई ! [1]मदनलालजी दरजी पोशाकवालों ने एकादशी अमावस्या पूर्णिमा जन्माष्टमी ऋषिपञ्चमी, श्राद्ध पक्ष के दिन शिकार करने का एवं इन दिनों में दारु, मांस के सेवन का त्याग कर दिया। और प्रति वर्ष एक-एक बकरा अमर करने का नियम ग्रहण किया। सायंकाल में महाराज श्री ने अपनी मुनिमण्डली के साथ विहार कर भाटोलाई गाँव के बाहर कुछ दूरी पर एक सघन वृक्ष के नीचे विश्राम किया। कृष्ण पक्ष की अन्धेरी रात्रि थी। बियावान जंगल बडा भयानक लगता था। बनैले हिंसक जानवर की बीच बीच में भयानक आवाजें भी सुनाई देती थी। रात्रि के बारह बजे के बाद जब की महाराज श्री ध्यान मुद्रा में बैठे हुए आत्म चिन्तन कर रहे थे एक हिंसक प्राणी आकर सोए हुए सन्तों को सूंघने लगा। और फिर ध्यानस्थ महाराजश्री की ओर क्रूर निगाह से देखने लगा। परस्पर आंखे टकराई। एक ओर तो आँखों में हिंसा का क्रूर भाव झांक रहा था तो दूसरी ओर प्रशम भाव। अन्त में हिंसक पशु ने गुरुदेव की महानता व तेजस्विता को परखा। क्रूरता समता में बदल गई। अभय अद्वेष के साधकों के समक्ष उस वन्य पशु को नत मस्तक होना पडा। महाराज श्री की प्रशम रस धारा से उसकी क्रूरता का कल्मष धुल गया। उसने वन की ओर मुख मोड लिया। हिंस्र पशु के जाने के बाद महाराजश्री ने सन्तों को जगाया और सावधान रहने का संकेत किया। शान्ति से रात बीती। प्रातः हुआ और धर्म देशना से जन जन को पावन करने के लिए महाराज श्री ने अपनी सन्त मण्डली के साथ विहार कर दिया। २६ अप्रैल को आगोलाई पहुचे।

यहां श्रावकों के १५-१७ घर है। मुनिराजों के प्रति अत्यन्त श्रद्धावान है। दुपहर में महाराज श्री का यतिवर्य श्री तखतमलजी एवं उनके शिष्य श्री हजारीमलजी के उपाश्रय में सार्वजनिक प्रवचन हुआ। प्रवचन सुनने के लिए बडी संख्या मे लोग एकत्रित हुए। महाराज श्री ने दया धर्म का उपदेश दिया। आपने अपना प्रवचन कबीर के इस दोहे से प्रारंम्भ किया—

"जहां दया तहाँ धर्म है जहां लोभ तहां पाप। जहाँ क्रोध तहां काल हैं जहां क्षमा तहां आप ॥"

इस दोहे की विशद व्याख्या करने के बाद आपने फरमाया—"दया सबसे बडा धर्म है। दया दो तरफी कृपा है। इसकी कृपा दाता पर भी होती है और पात्र पर भी। दया वह भाषा है जिसे बहरे भी सुन सकते हैं और गूंगे भी समझ सकते हैं। हम सबी ईश्वर से दया की प्रार्थना करते हैं और वही प्रार्थना हमें दूसरों पर दया करना भी सिखाती हैं। दयालु हृदय प्रसन्नता का फव्वारा है जो कि अपने पास की प्रत्येक वस्तु को मुस्कानों में भरकर ताजा बना देती है। सभी धर्मवालों ने दया के महत्व को एक स्वर से स्वीकार किया है।" महाराज श्री के इस सार पूर्ण प्रवचन का जनता पर अच्छा असर पडा। फल स्वरूप लोगों ने महाराजश्री से निम्न प्रतिज्ञाएं ग्रहण की—

सरूपचन्दजी गुलेच्छा, छोगालालजी पन्नालालजी गोगड एवं सागरमलजी गोगड ने पांच पांच बकरे प्रतिवर्ष एवं गणेशमलजी सोनी ने आजीवन प्रतिवर्ष एक एक गणेशमलजी चोपडा ने सात बकरे अमर करने की प्रतिज्ञा ग्रहण की। शेरगढ के श्रीमान् उदयसिंहजी राजपूत ने महाराजश्री से सम्यक्त्व ग्रहण किया। एवं यावज्जीवन जीवहिंसा का परित्याग किया। श्रीमान् देवराजजी व्यास नाथावत जोधपुर के यहां जागीदार हैं। आपने महाराज श्री के उपदेश से गांव की सीमा में शिकार करने की मनाई फरमादी

सायंकाल के समय महाराजश्रीने यहां से विहार कर दिया। मार्ग में सूर्य के अस्त होने पर एक

---

१ वे दरबार के यहां पोषाक बनाने का काम किया करते थे इससे जागीरी इनाम में मिली थी अतः पोषाक वाले जागीरदार कहलाने लगे।

वृक्ष के नीचे विश्राम किया। यहीं रात्रि व्यतीत की। प्रातः हुआ और आगे की ओर प्रयाण कर दिया आगोलाई से बारह मील का रास्ता पार करके २७ अप्रैल को आप मण्डली पधारे।

यहां श्रावकों के ४–५ घर थे। श्रीमान् आसारामजी ओसवाल यहाँ के मुख्य श्रावक है। इन्हों ने महाराज श्री के उपदेश से प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमर करने की प्रतिज्ञा ली। दुपहर में व्याख्यान हुआ। यहां पल्लिवाल ब्राह्मणों के कई घर हैं। इन सब ने महाराज श्री का प्रवचन सुना। कई लोगों ने एकादशी के दिन हल न चलाने की प्रतिज्ञा ली। श्रीमान् हरजी पल्लीवाल ने प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमर करने की प्रतिज्ञा ग्रहण की। श्रीमती चुन्नीबाई पल्लीवाल ने एकादशी अमावस्या को हरी लीलोती नहीं खाने का प्रण किया। इस प्रकार वीतराग वाणी के माध्यम से मानव जीवन के महत्व, कर्तव्यों एवं विशेषता का अपने प्रभावशाली प्रवचनों से मानवों को पावन करते हुए आगे बिहार कर दिया।

२८ अप्रैल ओ आपने थोब की ओर बिहार कर दिया। आठ मील का विहार कर आप थोब पधारे। यहां श्रावकों के २० घर हैं जिनमें ७–८ घर तेरह पन्थियों के भी थे। यहां दोनों संप्रदाय के लोगों में अच्छा स्नेह भाव था! साधु सन्तों के अनुरागी एवं आहार पानी आदि से सन्तों को प्रतिलाभित करने में विशेष श्रद्धा शील थे।

मध्याह्न में महाराज श्री का प्रवचन हुआ प्रवचन में सभी सम्प्रदाय के लोग एवं अजैन जनता बडी संख्या में उपस्थित हुई। महाराज श्री ने मानव जीवन की दुर्लभता बताते हुए अपने प्रवचन में फरमाया—

नरेषु चक्री त्रिदशेषु वज्री मृगेषु सिंहः प्रशमो व्रतेषु।
मतो महीभृत्सु सुवर्णशैलो भवेषु मानुष्यभवः प्रधानम् ॥१॥

जिस प्रकार मानव लोक में चक्रवर्ती, स्वर्गलोक में इन्द्र, पशुओं में सिंह व्रतों में प्रशम भाव और पर्वतों में स्वर्ण गिरि प्रधान है—श्रेष्ठ है उसी प्रकार संसार के सब जन्मों में मनुष्य जन्म सर्व श्रेष्ठ है। महाभारत में व्यासजी भी इसी बात को पुष्ट करते हुए कहते हैं "गुह्यं ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि नहि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित्" आओ ? मै तुम्हें एक रहस्य की बात बताउं ? यह अच्छो तरह मन में दृढ करलो कि संसार में मनुष्य से बढकर और कोई श्रेष्ठ नहीं है। उर्दू के एक महान शायर भी इसी बात को दुहराते हैं—

"फरिस्ते से बढकर है इन्सान बनना। मगर इसमें पडती है मेहनत जियादा ॥"

मानव सारे संसार का श्रेष्ठतम प्राणी है। किन्तु जरा सोचिए यह श्रेष्ठता किस बात की है! मनुष्य के पास ऐसा क्या तत्त्व है क्या विशेषता है कि जिसके बल पर वह देवता से भी श्रेष्ठ बन गया है। देवता भी जिनके चरणों का स्पर्श कर अपने को धन्य मानते हैं। रूप, आकृति, बल सन्तान ये सब तो मनुष्य से भी अधिक अन्य प्राणियों में पाया जाता है। किन्तु मनुष्य के पास एक सबसे बडी शक्ति है आत्मा से परमात्मा बनना। परमात्मा बनने के लिए आत्मिक गुणों का विकाश करना अनिवार्य है। एक विचारक ने ठीक ही कहा—

An honest man is the noblest work of God अर्थात् इमानदार मनुष्य ईश्वर को सर्वोत्तम कृति है।

मनुष्य होकर भी जो दूसरों का उपकार करना नहीं जानते उसके जीवन को धिक्कार है। उससे धन्य तो पशु ही है जिनका चमडा तक दूसरों के काम में आता है।

मानव का दानव बनाना उसकी हार है मानव का महा मानव होना उसका चमत्कार है और

मनुष्य का मानव होना उसकी जीत है। इस प्रकार महाराज साहेबने ओजस्वी वाणी में मानव जीवन की महत्ता पर करीब देढ घण्टा प्रवचन दिया। प्रवचन का उपस्थित जनता पर अच्छा असर पड़ा। फल स्वरुप व्याख्यान समाप्ति के बाद निम्न प्रतिज्ञाएँ की—

श्रीमान् भैरजी किसनाजी गाम डंडाली (बाडमेर) वाले बराती श्रीमान् नेमीचन्दजी प्रतापमलजी लूंकड सा हीराचन्दजी बाफना, हस्तीमलजी चोपडा इन सब सज्जनो ने प्रति वर्ष एक एक बकरा अमर करनेकी प्रतिज्ञा ली। श्रीमान् कपूरचन्दजी मूथा हस्तीमलजी श्रीश्रीमाल जसोल (बालोतरा) निवासी इन दोनों ने एक एक बकरा प्रतिवर्ष अमरिया करने की प्रतिज्ञा ग्रहण की। श्रीमान्जी शिवलालजी देवाणी डंडाली (बाडमेर) वालों ने पांच बकरे श्रीमान् गणेशजी ढिलरिया ने एक बकरा श्रीमान् सुखलालजी ने सोनाजीरा सेरगढ वालों ने दो बकरे अमर करने का प्रण ग्रहण किया।

ठिकाना थोव माजी सा. श्रीमती फूलकुंवर बाई ने प्रतिवर्ष एक एक बकरा तथा बडे ठकुरानी जी सा. श्रीमती हुक्मकुंवरबाई ने एकादशी अमावस्या को एक एक बकरा अमर करने के साथ साथ इन दिनों में दारु मांस लीलोत्री के सेवन का त्याग ग्रहण किया। ठिकाना थोब छोटा रावला के माजीसाहब ने एकादशी चतुर्दशी पूर्णिमा, अमावस्या जन्माष्टमी ऋषिपंचमी इन दिनों में रात्रि भोजन नहीं करने की एवं आजीवन दारु मांस सेवन का त्याग कर दिया। और प्रतिवर्ष एक बकरा अमर करने का प्रण ग्रहण किया।

कोठडी ठिकाना बाईजीराज श्रीमती अखंड सौभाग्यवती हरिकुंवरी बाईजी ने अष्टमी चतुर्दशी एकादशी पूर्णिमा अमावस्या ऋषिपंचमी को दारु, मांस का त्याग किया और एक बकरा अमर करने की प्रतिज्ञा ली। इसके अतिरिक्त रामाकुम्हार ने आजीवन दारु मांस के सेवन का एवं बिच्छू सर्प आदि प्राणियों को न मारने की प्रतिज्ञा ली। रजपूत सरदारों की पत्नियों पुत्रियों व अन्य स्त्रियों ने जूं लिख सर्प बिच्छू आदि छोटे बडे जीवों को न मारने की प्रतिज्ञा ली। अन्य भी अनेक उपकार के कार्य हुए। सायंकाल में प्रतिक्रमण के बाद आठ संतोने तेले के प्रत्याख्यान किये।

२९ अप्रैल को महाराज श्री ने प्रातः होते ही अपनी सन्त मण्डली के साथ नवाई गांव की ओर विहार कर दिया। नवाई गांव थोब से ३ मील पर है। यहां श्रावकों के घर नहीं हैं फिर भी महाराज श्री के प्रखर व्यक्तित्व के असर से यह गांव भी वंचित नही रह सका। महाराज श्री ने जीव दया का उपदेश दिया। फलस्वरूप ठिकाना नवाइ के माजी साहब श्रीमती अमानकुंवरबाई ने एक-एक बकरा प्रतिवर्ष अमर करने का प्रण लिया। तथा एकादशी को हरी लीलोत्री नहीं खाने की एवं आजीवन मूले का त्याग किया। चारण सरदार श्रीमान् जोधदानजी कुशलगढ (डिडवाना) निवासी यहां के ठिकाने में कामदार थे। उन्होंने एकादशी, अमावस्या, पूर्णिमा, जन्माष्टमी, वैशाखमास, श्राद्धपक्ष में दारु, मांस तथा शिकार का त्याग किया और बन सके वहां तक किसी भी प्राणी पर गोली नहीं चलाने का अभिवचन दिया। यहां गांव बाहर तालाव उपर वृक्ष के नीचे महाराज श्री ने रात्रि निवास किया।

प्रातः ३० अप्रैल को छ मील का विहार कर आप पंचपद्रा पधारे। यहां जैन स्थानकवासियों के करीबन ४० घर हैं एवं १०० घर तेरह पन्थियों के एवं बीस घर वीरपन्थियों के हैं। यहां रहने के लिए श्रावकों ने अत्यन्त आग्रह किया किन्तु आगे कराची शीघ्र पहुँचने की इच्छा से शाम को पांच बजे विहार कर दिया। तीन मील पर एक रामदेवजी के चबुतरे के पास वृक्ष के नीचे रात्रि निवास किया। रास्ते में चलते गांव दिवानदी का एक हरिजन भाई मिला। महाराज श्री ने उसे उपदेश दिया। उपदेश से प्रभावित हो कर उसने दारु, मांस का आजीवन के लिए त्याग कर दिया। रात में दो राहगीर आये उनमें एक तो कडलू के ठाकुर श्रीमान् बालसिंहजी साहेब थे उन्होंने महाराजश्री के उपदेश से

एकादशी, अमावस्या, श्रावण भाद्रपद वैशाख मास में जीव हिंसा मांस मदिरा एवं शिकार का त्याग कर दिया। दूसरे थे श्रीमान् धूलसिंहजी पुरोहित भाउंडा जागीरदार। इन्होंने भी महाराजश्री से लिलोती आदि का त्याग किया। और साथ ही यह भी प्रण किया कि हम अपने गांव के किसी भी व्यक्ति का शोषण नही करेंगे और साथ ही जितना उपकार हो सकेगा उतना करेंगे! महाराज श्री जहां भी जाते और जिससे भी मिलते आपका एक मात्र लक्ष्य था लोगों को सदाचारी नैतिक व अहिंसा प्रेमी बनाना। इसके लिऐ आप निरन्तर प्रयत्न शील रहते थे। इस प्रकार धर्मप्रचार करते हुए आपका बालोतरा आगमन हुआ। यहां जैन समाज के करीब ४०० घर हैं। श्रावकों में परस्पर संघठन भी अच्छा है। जब महाराजश्री का आगमन सुना तो बालोतरा का विशाल जैन समाज स्वागत के लिए तीन मील आगे पहुंचा। स्वागत में करीब ४००–५०० व्यक्ति थे। उस समय स्थानीय संघ का उत्साह दर्शनीय था। मंगलगान और जय ध्वनि के साथ महाराजश्री ने बालोतरा में प्रवेश किया। महाराजश्री के शहर में प्रवेश होते ही सैकडों अजैन जनता ने भी महाराज श्री का स्वागत किया। शहर के मुख्य बाजारों से होते हुए महाराजश्री ने स्थानक में प्रवेश किया। उस दिन आठ सन्तों को तेले की तपश्चर्या थी। मांगलिक प्रवचन सुनकर जनता विसर्जित हो गई। दूसरे दिन २ मई को सर्व मुनिराजों ने तेले का पारणा किया। तपस्वी मुनि श्री सुन्दरलालजी महाराज ने प्रातः काल व्याख्यान फरमाया।

तीसरे दिन ३ मई को महाराज श्री के सार्वजनिक प्रवचन का आयोजन किया गया समस्त गांव वालों को इसकी सूचना पेंपलेट द्वारा दी गई। जूनाकोट में महाराज श्री का प्रवचन सुनने के लिए हजारों की संख्या में जनता एकत्रित हुई। महाराज श्री के प्रवचन का विषय था "धर्म और समाज सुधार" महाराजश्री ने अपने प्रवचन में विशाल जनसमूह को सम्बोधित करते हुए जो फरमाया उसका सार यह था समाज नाम की कोई अलग चीज नहीं है। व्यक्ति और परिवार मिलकर ही समाज कहलाते हैं। अतएव समाज सुधार का अर्थ है-व्यक्तियों का और परिवारों का सुधार करना। पहले व्यक्ति को सुधारना और फिर परिवार को सुधारना और जब अलग–अलग व्यक्ति तथा परिवार सुधर जाते हैं तो फिर समाज स्वयं सुधर जायेगा। हम लोग समाज सुधारने की बात करतें हैं यह तो प्रशस्त भावना है। किन्तु समाज का सुधार कैसे किया जा सकता है? उपर से या जड से? उपर से वृक्ष पर पानी छिडकने से वृक्ष हरा भरा नहीं रहता किन्तु उस के जड में पानी डालने से वृक्ष हरा भरा रहता है। इसी तरह समाज की जड व्यक्ति है। उसे सुधारने से ही समाज सुधर सकता है।

समाज सुधार की चार भूमिकाएं हैं–

(१) पहली भूमिका है–परिस्थिति-परिवर्तन! यह काम सरकार द्वारा हो सकता है। (२) दूसरी भूमिका है–हृदय परिवर्तन। यह कार्य सन्तों द्वारा हो सकता है। (३) तीसरी भूमिका है विचार परिवर्तन यह सद्विचारों व सत्साहित्य एवं साहित्यकारों द्वारा हो सकता है। (४) चौथी भूमिका सेवाकार्य। यह समाज द्वारा हो सकता है। अच्छा समाज शरीर जैसा है। समाज में दुःखी हिस्सा है उसकी ओर सब को ध्यान देना उचित है सबसे अधिक सुखी समाज वह है जिसमें प्रत्येक व्यक्ति परस्पर हार्दिक सम्मान की भावना रखता है। तुम समाज के साथ ही उपर उठ सकते हो और समाज के साथ ही तुम्हें नीचे गिरना होगा; यह तो नितान्त असम्भव है कि कोई व्यक्ति अपूर्ण समाज में पूर्ण बन सके? क्या हाथ अपने आपको शरीर से पृथक रख कर बलशाली बना सकता है? कदापि नहीं।

धर्म के आचरण से व्यक्ति धार्मिक बनता है और धार्मिक व्यक्तियों के समूह से ही धार्मिक और स्वस्थ समाज का निर्माण होता है। मेरा विश्वास है कि बिना धर्म का जीवन बिना सिद्धान्त का जीवन

होता है और बिना सिद्धान्त का जीवन वैसा ही होता है जैसा कि बिना पतवार का जहाज। जिस तरह बिना पतवार का जहाज मारा मारा फिरेगा, उसी तरह धर्महीन मनुष्य भी संसार सागर में इधर से उधर मारा मारा फिरेगा और अपने अभीष्ट स्थान तक नहीं पहुँचेगा।

महाराज श्री का यह सारगर्भित प्रवचन सुनकर पं० परशुरामजी आदि विद्वद्मण्डली एवं अग्रवाल भाई आदि अनेक जैन अजैन जनता बड़ी प्रभावित हुई। प्रवचन के बाद खड़े हो कर महाराज श्री से स्थानीय जनता ने आग्रह किया कि "आपके दो चार सार्वजनिक प्रवचन यहां हो जाय तो बड़ा उपकार होगा और अनेक व्यक्ति दारु, मांस जीवहिंसा का त्याग करेंगे।" महाराज श्री ने फरमाया—लोगों को सन्मार्ग बताना तो हमारा दैनिक कार्य ही है किन्तु चातुर्मास का समय अत्यन्त समीप आता जा रहा है और कराची चातुर्मास के कुछ दिन पहले वहां पहुंचना भी अनिवार्य है। कराची का मार्ग भी सुगम नहीं है। मध्यान के समय रेल्वे असिस्टेन्ड मास्टर साहब श्री गुमानसिंहजी साहब ने एवं डॉक्टर साहब श्री विजयराजजी ने जो कि जोधपुर के निवासी पुष्करणा ब्राह्मण थे। महाराज श्री के साथ डेढ घण्टे तक विविध विषय पर तात्विक चर्चाएं की और खूब सन्तोष का अनुभव किया। और यथाशक्ति त्याग लिये। यहां स्टेशन के समीप रमजान नामका मोमी (गूजर) मुसलमान रहता था उसने महाराज श्री का प्रवचन सुनकर जीवहिंसा और मांसाहार का त्याग किया। उसके घरवालों ने भी यही प्रतिज्ञा की। अन्य भी अनेक व्यक्तियों ने यथाशक्ति महाराज श्री से त्याग ग्रहण किये। स्थानीय श्री संघ का अत्यन्त आग्रह होने पर भी महाराज श्री ने अपने मुनियों के साथ ३ मई को सायंकाल में विहार कर दिया। बालोतरा का विशाल जनसमूह दूर तक महाराज श्री को पहुँचाने गया और मांगलिक श्रवणकर लौट आया। महाराज श्री करीब तीन मील का विहार कर एक वृक्ष के नीचे रात्रि निवास किया। बालोतरा निवासी चार पाँच व्यक्ति भी महाराज श्री की सेवा में रात में वृक्ष के नीचे ही रहे। प्रातः होते ही महाराज श्री ने ४ मई को विहार कर दिया और दश मील का लम्बा विहार कर तिलवाडा पहुँचे। बालोतरा के कुछ व्यक्ति भी यहां तक महाराज श्री की सेवा में रहे। यहां चैत्र मास में चैत्री मेला भरता है। हजारों बैल आदि पशु बेचनेकेलिएआते हैं। हजारों रुपयों के पशुओं का लेन देन का व्यवहार होता है। पन्द्रह दिन तक सरकारी झन्डा रोपा रहता है। सरकार की ओर से यात्रियो की समुचित व्यवस्था रहती है। और उनकी सुरक्षा का प्रबन्ध भी बहुत अच्छा रहता है। इसी गांव के समीप एक बडी सुन्दर नदी भी है। मेला विशाल नदी के प्रांगन में भरता है। जब मेला लगता है तब अपने अपने गांव वाले छोटे छोटे खड्डे (कुइयां) खोदते हैं। उनमें कुछ नजदीक ही पानी आजाता है। यहां चमत्कार यह सुना है कि जिस गांव के लोग जो खड्डा खोदते हैं उसमें उन उन गांव के पानी का स्वाद उसमें होगा। जिस गांव का कडवा या मीठा या फीका पानी हो वेसा ही स्वाद उनकी कुइयों में भी आता है। यह मेला चैत्रवदि ग्यारस से चैत्र शुक्ला ग्यारस तक लगता है। इस मेले के अवसर पर हमें मालानी प्रदेश की संस्कृति वेश भूषा एवं भाषा के दर्शन होते हैं।

तिलवाडा मालानी प्रदेश के अंतर्गत आता है। तिलवाडा से खोखरे पार तक का प्रदेश ब्रिटीश साम्राज्य के आधीन था। बाद में यह जोधपुर के कब्जे में आ गया। जोधपुर के राजा वीरमदे और मल्लीनाथ ये दोनों सगे भाई थे। मल्लीनाथ बडा धार्मिक पुरुष था। इनका दूसरा नाम मालानी था। इन्हींके नाम से यह प्रदेश प्रसिद्ध हुआ। इस प्रांत में षष्ठी विभक्ति का प्रत्यय 'अणी' होता है। यहां बहुत व्यक्ति के नाम के पीछे भी 'अणी' का प्रयोग होता है। जैसे लालचन्द का पिता अगर खेताजी है तो यहां लालचन्द खेताणी के नाम से पुकारा जाता है। मालाणी बडा वीर पुरुष था। इसने अनेक स्थल

पर युद्ध कर विजय प्राप्त की थी। अन्त में इनका जीवन धार्मिक बन गया था। ये संन्यासी बन गये थे और संन्यास अवस्था में ही इन्होंने तिलवाडा में समाधि ग्रहण की। उनके समाधि के स्थान पर विशाल मन्दिर बनाया गया। इनकी पुण्य स्मृति में हजारों मालाणी अपनी श्रद्धा व्यक्त करने के लिए यहां प्रति वर्ष एकत्र होते हैं। यहां के लोग प्रायः गरीब होते हैं। गोल छत्री के आकार का घास और मिट्टी के मकान बनाते हैं। ये दस-दस पांच-पांच के झुंपडों में रहते हैं। जिसे यहां ढानी कहा जाता है। यहां के ठाकुरों का एक कवि ने हुबहु वर्णन किया है—

ठाकोर मनके ठाठले मनमें ही राखे ठाठ। घर में चादर एक है ओढ़नवाले आठ।

ठाकुरों की अन्दर की पोल और उपर के ठाठ का अच्छा चित्र खींचा है। इस प्रदेश में ५५० गांव है। कहा जाता है इनमें केवल एक ही गांव खालसा है बाकी के सब जागीरदार है इनमें २१६ गांव ऐसे है जिनमें कहीं कहीं जैनों की वस्ती अवश्य मिलती है। लेकिन् ये नाम मात्र के जैन हैं। प्रायः जंगली लोगों की तरह ही अपना जीवन व्यतीत करते हैं। संस्कार विहीन और शिक्षा रहित हैं। ये इनके रहन सहन और व्यवहार से कोई भी यह नहीं जान सकता है कि ये भी वणिक हो सकते हैं। यहां ओसवालों के बारह घर हैं। जिसमें सात घर स्थानकवासियों के और पाँच घर तेरह पन्थियों के हैं। मगर आपस में प्रेम अच्छा था। गुलाबचन्दजी साहब एवं चन्दनमलजी भणसाली यहां के मुखिया थे। इन्होंने महाराज श्री का उपदेश सुनकर प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमर करने का प्रण लिया। और भी अनेक श्रावक श्राविकाओं ने विविध त्याग प्रत्याख्यान किये। यहां से महाराज श्री ने शामको विहार किया चमना नामका कुम्भार ने सोढा की ढाणियों तक महाराज श्री के साथ साथ में आया इसने महाराज के उपदेश से जीवहिंसा का त्याग किया।

दूसरे दिन ता० ५ मई को गोल नामक स्टेशन पर महाराज श्री ठहरे। बडे स्टेशनमास्टर साहब घनश्यामदासजी जोधपुर के श्रीमाली ब्राह्मण थे और छोटे बाबूजी मनसुखरामजी काठियावाड के ब्राह्मण थे बडे सुज्ञ और भक्त थे। महाराज श्री यहां रेल्वे क्वाटर में ठहरे। यहां पर पुरोहित, सरदार तथा ब्राह्मणों आदि की १०-१२ ढाणियां थी गौचरी पानी का अच्छा सुभीता मिला। यहां सब लोग इंजन का गर्म पानी ही पीते थे। क्यों कि मीठा पानी यहां से आठ मील दूर पर मिलता है।

६ मई को विहार कर महाराज श्री ७ मील पर भीमरलाई नामक स्टेशन पर पधारे। यहां रास्ते में भोमलो नामक एक जाट कत्ल के लिए एक बकरा लेकर जा रहा था। उसे महाराज श्री ने उपदेश दिया जिससे उसने बकरे को तपस्वीराज के चरणों में भेट रख दिया और तपस्वीराज ने बकरे को अमरिया करने का उपदेश दिया उसने सहर्ष स्वीकार किया। यह जाट गुमनाजी की ढाणी के पास का रहनेवाला था। महराजश्री फिर स्टेशन पर पधारे। आस पास आध-आध तथा एक-एक मील पर बहुत सी ढाणियाँ हैं। यहाँ सन्तों के लिये आहार की पर्याप्त प्राप्ति हो गई। इधर प्रायः सब स्टेशनों पर व आस पास की ढाणियों में इंजन का ही गरम-पानी काम में लिया जाता था। धोने धाने में खारा पानी काम में लाते। यहां तक की भोजन करके चलु करना हाथ धोना भी खारा पानी से करते। सिर्फ पोने ही के काम में मीठा पानी लिया जाता। शाम को विहार हुआ। रात को जंगल में ढाणियों के पास वृक्ष के नीचे रहे। आईदानजी और अचेलोजी जाट रात को आये।

महाराजश्री के पास धर्मोपदेश सुना और दोनों ने साप बिच्छू आदि किसी भी प्राणियों को जानबूझ कर मारने के प्रत्याख्यान किये तथा प्रति वर्ष एक एक बकरा अमर करने की प्रतिज्ञा ग्रहण की। इन्होंने तेरह पन्थ के विषय में प्रश्न कर समाधान प्राप्त किया।

प्रात ता ७ मई को महाराजश्री ने मुनिमण्डल के साथ ७ सात मील पर वारालु पधारे । यहां स्टेशन पर जैनों के करीब बीस घर थे । प्राय: तेरहपन्थी अधिक थे । बडे बाबूजी श्रीमान् श्यामलालजी कायस्थ ब्राह्मण थे । और छोटे स्टेशन मास्टर जोधपुर के पुष्करणे ब्राह्मण जिनका नाम बन्सीधरजी बोहरा था और कष्टम थानेदार गंगादासजी कायस्थ इन सबने महाराज श्री की बडी अच्छी सेवा की । महाराजश्री को ठह राने के लिए अपना निजी क्वार्टर खोल दिया । दुपहर में स्टेशन हाल में व्याख्यान हुआ । श्रीमान् माहेश्वरी केवलरामजी इटावरी ने एकादशी को रात्रि भोजन का त्याग लिया । तथा अनेक भाईयों ने भी उपदेश श्रवण कर यथा शक्ति त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किये । शाम को महाराज श्री ने विहार कर दिया श्रीमान् दीपचन्दजी सालेचा ओसवाल प्रेमचन्दजी गुणधर चोपडा तथा मिश्रीमलजी लुंकड आदि अनेक भाई दूर तक महाराज श्री को पहुंचाने के लिए आये । रात को जंगल में वृक्ष के निचे रहे । करीब डेढ बजे के बाद तीन चोर आये वस्त्रादि चुराने के लिए वृक्षों की ओटमें छुप छुप तीन बार चोरी का प्रयत्न किया मगर सब सन्तों को सजाग देखकर वे लोग अपने काम में सफल न हो सके । स्वयं सेवको के पास भी चोरों ने चोरी का प्रयत्न किया लेकिन सन्तों के व धर्म के प्रभाव से चार चोरी किये विना ही चुपचाप वापिस चल दिये । लेकिन एक चोर महाराजश्री को मोका पाकर लूटने की नियत से साथ साथ में हो गया । दूसरे दिन ता० ८ मई को विहार कर सात मील पर वाणियाँ सिंधाधोरा पधारे । यहाँ एक जमाने में डाकू लोग खूब लूट फाट करते थे । यहाँ एक कुमारी बारात को मार डाली थी जिसमें एक प्रतिष्ठित बनियाँ भी काम में आ गया था । ईससे इसका नाम 'वाणियासिंधाधोरा' पड गया । उस बनिये की चिता स्थल पर चबूतरा बना हुआ है । यहां इसके नाम पर मेला भी लगता है । यह स्टेशन बडे बडे रेतीले टिम्बों के बीच वसा हुआ है । यहाँ के स्टेशन मास्टर रामनाथजी जोधावत पुष्करणे ब्राह्मण होते हुए भी आपने अच्छी श्रद्धा का परिचय दिया । आपके माताजी ने भी अच्छी सेवा की । स्टेशन मास्टरने महाराज श्री के वैराग्यमय उपदेश से एकादशी के दिन निराहार उपवास करने का प्रण किया । तथा इनकी मां साहब मोंघीबाई ने अमावस्या को लीलोती का एवं कन्दमूल कोला आदि खाने का त्याग किया । जमादार चौधरी नानगाजी लक्ष्मणाजी खेताजी उदाजी ने सांप बिच्छु आदि प्राणियों को मारने का त्याग किया । तथा एकादशी अमावस्या को हल जोतने का त्याग किया । स्टेशन के महत्तर पूसा ने दारु मांस एवं जीव हिंसा का त्याग किया ।

प्रातः ता० ९ मई को छ मील विहार कर महाराजश्री कवास पधारे । यहां स्टेशन पर बाइस संप्र दाय के श्रावकों के १० घर थे इनमें कुछ तेरह पन्थियां के भी घर थे श्रीमान् मिश्रीलालजी साहब के मकान में ठहरे । आप धर्म के पूरे लाग वाले हैं । यहां पर बाडमेर से सात आठ श्रावक महाराज श्री के दर्शन के लिये आये जिनमें श्रीमान् गणेशमलजी किसनाजी वर्ष में पाँच पांच बकरा अमर करने का प्रण लिया । जागीदार श्रीमान् चमनसिंहजी वास ढुंढावालों ने दारु मांस का त्याग किया तथा शिकार करने का त्याग किया । और प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमर करने की प्रतिज्ञा ग्रहण की । तेली चान्दों अनदाणी स्टेशन कवासवाले ने अपने हाथ से मांस लाने व खाने का तथा जीवघात करने और खेत में ओधा (घास फूस इकठा कर आग लगाने का त्याग किया । तथा पूर्णिमा के रोज घानी पीलने का सौगन्न किया । माली भूरों रुघनाथाणी ने एकादशी अमावस्या को हल खेडने का सौगन्न किया । केशरीमलजी परता वानी प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमर करने का प्रण लिया । श्रीमान सेठ मिश्रीमलजी अमेदानी ने प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमर करने का तथा प्रतिमाश पद्रह सामायिक करने का प्रण लिया समेरा टिलानी बोहरे ने नवकारवाली फेरने का प्रण लिया । रुपा मेघवाल ने दारु मांस का तथा किसी प्रकार की जीवहिंसा नहीं

करने का त्याग किया। १० मई के प्रातः सात मील पर उतरलाई महाराज श्री मुनि मण्डल के साथ पधारे। यहां के स्टेशन मास्टर मेघराजजी शाकद्वीप ब्राह्मण और करणीदानजी पुष्करणा ब्राह्मण है। तथा हवाइ जहाज के स्टेशन मास्टर लोकेशरायजी महाराज श्री के व्याख्यान से बडे प्रभावित हुए। यहां बाडमेर के बहुत श्रावक दर्शन के लिये आये। रात्री में महाराज श्री की सेवा में ही रहे। व्याख्यान श्रवण कर अनेकों ने त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किये। रावली ढाणी के जागीदार बाडमेर के ठाकुर साहब जेठमलसिंहजी ने ताजिन्दगी शिकार तथा तलवार से जीवहिंसा का त्याग किया और वैशाख श्रावण तथा भाद्रपद इन महीनों में एकादशी अमावस्या और पूर्णिमा प्रत्येक मास की इन चार तिथियों में दारु मांस काम में न लेने का प्रण किया। आपके कुंवर साहब नाथूसिंहजीने एकादशी अमावस्या तथा पूर्णिमा ईन चार तिथियों में शिकार दारु मांसका परित्याग किया। आप की ठुकरानी साहब ने एकादशी अमावस्या तथा पूर्णिमा की लिलोती का त्याग किया। आपके प्रधान गिरधारीसिंहजी ने तलवार से जीव हिंसा का सर्वथा परित्याग किया। आपके काका साहब अमरसिंहजी ने श्रावण भाद्रव मास में एकादशी अमावस्या पूर्णिमां प्रत्येक मास को इन चार तिथियों में दारु मांस का परित्याग किया। और शिकार का त्याग किया। और प्रतिवर्ष एक बकरा अमर करने का प्रण लिया। ठाकुर साहब सगतसिंहजी ने एवं उनकी ठकुरानी ने उपरोक्त तिथियों में दारु मांस तथा लिलोती का परित्याग किया।

ता० १२ मई को विहार कर महाराजश्री सात मील पर बाडमेर पधारे। यहां की जनताने आपका अच्छा स्वागत किया। यहां करांची से तार आया जिसमें डॉ न्यालचन्द रामजीभाई के आने की खबर मिली। डॉक्टर साहब १२ मई को आये। तपस्वीजी महाराज की आँखे जाञ्चकर चस्मे का प्रबन्ध कर दिया। दिन में महाराज श्री का जाहीर व्याख्यान रखा गया।

बाडमेर यह मलाणी प्रांत का मुख्य नगर है। यह जोधपुर लाइन का बडा स्टेशन है। यहां से जेसलमेर ११० माईल पडता है। कहा जाता है कि पुराने बाडमेर का नाश होने पर वि, स. १८०१ में रावत रताजीने पुनः नया बाडमेर बसाया था। यहां की आवक के हिस्सेदार तीन सो जागीरदार है इन जागीदारों में पांच जागीरदार रावत की उपाधिवाले हैं। वि, सं. १८८९ में अंग्रेजों ने ईस नगर को लूटा था। और यहां के जागीरदारों को पकड कर राजकोट ले गये और वहां उन्हें नजर कैद रखे गये थे कच्छ भूज के दरबार ने ईनको मुक्त करवाया था १८९२ में यह प्रदेश जोधपुर के शासन में मिल गया यहां जैनों की करीब ४०० घर की बस्ती है। ये प्रायः ओसवाल हैं और मूर्तिपूजक संम्प्रदाय के अनुआई है। दस बारह घर स्थानवासियों के भी हैं। महाराज श्री के पधारने पर सभी लोगोंने महाराज श्री की अच्छी भक्ति की। यहां आप के तीन जाहिर प्रवचन हुए। सैकडो की संख्या में व्याख्यान श्रवण के लिए लोग उपस्थित हुए। वहां के हाकीम मगरूपचन्दजी भण्डारी तथा स्टेशन मास्टर मनमोहनचन्दजी भण्डारो हेड कोन्स्टेबल बहादुरमलजी सरकारी डॉक्टर संपतलालजी पोद्दारमानचन्दजी रीडर पोलिस सुपरिटेण्ड मानमलजी ये सब जैन ओसवाल है ईन सबने महाराज श्री का व्याख्यान श्रवण किया और अपनी अच्छी भक्ति का परिचय दिया।

जोधपुर लाईन के कन्ट्रोलर हरगोविंददास भाई जो राव साहैब के नाम से सुप्रसिद्ध हैं। ईनका हेड क्वाटर मिरपुर खाश में है ईनका रहन सहन अत्यन्त साधा और स्वभाव से अत्यन्त सरल है। साधु सन्तों के प्रति आपकी असिम भक्ति है। आपने जब महाराज श्री का शुभ आगमन इस तरफ का सुना तो आपने हर स्टेशन मास्टर को तार से महाराज श्री के पधारने की सूचना दी। साथ ही इंजिन का गरम पानी और ठहरने के लिए स्टेशन पर स्थान का इन्तजाम करवाया तथा महाराजश्री के पधारने की

प्रत्येक दिन की सूचना अगले स्टेशन मास्टर को करवा देते थे ।

यहां आपके तीन दिन के व्याख्यान से बडा उपकार हुआ । सैंकडों व्यक्तियोंने त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किये । तथा यहां के आदिवासियां ने दारु मांस शिकार जीवहिंसा का त्याग किया । यहां के श्रीसंघ ने आप को रोकने का खूब प्रयत्न किया किन्तु आपको आगे पधारने की जल्दी होने से आप ने ग्राम को यहां से विहार कर दिया । चार मील पर आटीमाली नामक स्टेशन पर आप पधारे । यहां के स्टेशन मास्टर मूलचन्दजी पुष्करणा ब्राह्मण हैं । आपने अपना निजी क्वार्टर सन्तों को ठहरने के लिये दिया । रात में आप मुनिमण्डल के साथ यहीं विराजे । रात में स्टेशन मास्टरों ने एवं रेलकर्मचारियो ने आपका उपदेश श्रवण किया ।

दूसरे दिन प्रातः ता० १३ मई को विहार कर जसाइ पधारे । यहाँ ओसवालो के १५-२० घर हैं । आपने यहाँ उपदेश दिया । यहाँ के तीनो स्टेशन मास्टरोने आपका उपदेश सुन और यथा शक्ति त्याग प्रत्याख्यान किये । रामामहत्तर ने आपश्री का उपदेश सुन दारु मांस तथा जीवहिंसा का सर्वथा त्याग किया । पंडित मूलचन्दजी की यहाँ तबियत अचानक बिगड गई जिससे आपको वापिस नागौर जाना पडा ।

दूसरे दिन ता० १४ मई को विहार कर आप सातमील पर खडोन नामक गाव में पधारे । यहाँ के स्टेशन मास्टर धनराजजी गोड ब्राह्मण हैं । बडे सेवा भावी सज्जन हैं । इन्होने महाराजश्री के उपदेश से पांच तिथि ब्रह्मचर्य एवं लिलोती नहीं खाने का प्रण लिया । पेठवान वांकाजी प्रधान सजोडे दारुमांस जीव हिंसा का त्याग किया । गांगला निवासी मारु नामके और रत्ना नामके सिन्धी मुसलमानों ने भी दारुमांस एवं जीव हिंसा का त्याग किया । तथा झूठी साक्षी न देने का भी प्रण लिया ।

दूसरे दिन महाराजश्री ता० १५ मई को विहार कर भाचभर नामक स्टेशन पर पधारे । यहां इन्स्पेक्टर ओडिट एकाउन्ट जोधपुर निवासी अग्रवाल लखपतसिंहजी ने महराजश्री के उपदेश से पांच तिथियां ब्रह्मचर्य व्रत पालने का नियम लिया । यहाँ के स्टेशनमास्टर ने भी रात्री भोजन का त्याग किया । तीन दन यहां बिराजकर ।

ता० १६-१७-१८-१९-मई

प्रातः होते ही आपने अपनी मुनि मण्डली के साथ भामचर से विहार कर दिया । ८ मील का विहार कर आप रामसर पधारे । यहां स्टेशनमास्टर श्रीमान् चन्दुलालजी अग्रवाल दिगम्बर जैन थे आपने गुरुदेव का बडा भावभीना स्वागत किया और आपको स्टेशन के ही एक कार्टर्स में उतरने के लिए स्थान दिया । रात्रि के समय आपका प्रवचन हुआ । स्टेशन पर रहने वाले सभी कर्मचारी आपके प्रवचन में उपस्थित हुए । महाराजश्री ने उपस्थित स्त्री पुरुषों के समक्ष मानवधर्म पर प्रभावशाली प्रवचन दिया । आपके प्रवचनों का उपस्थित सज्जनों पर अच्छा प्रभाव पडा । व्याख्यान समाप्ति के बाद अनेकोंने विविध त्याय प्रत्याख्यान ग्रहण किये । मास्टर साहब की पत्नी केशरकुँवरबाई ने पांच तिथियों में हरि लिलौत्री का त्याग किया और ब्रह्मचर्य पालन का नियम लिया । दोनों पति पत्नि जैनधर्म के प्रति असीम श्रद्धालु थे । महाराज श्री की इन दोनों ने बडी भारी सेवा की । इन्होने अपने बालकों में भी अच्छे धार्मिक संस्कार डाले । उस समय रामसर में ग्यारह ओसवालों के घर थे । इन घरों के समस्त कुटुम्बियों ने महाराजश्री से सम्यक्त्व ग्रहण किया । आतिशबाजी, वैश्यानृत्य आदि समाज की कुरुढियों का त्याग किया श्रीमान् पोखरदासजी गुलाबचन्दजी पारख ने पंचमी, अष्टमी, एकादशी, चतुर्दशी, अमावस्या के दिन चोविहार हरि लिलोती का त्याग एवं शीलव्रत पालने का नियम ग्रहण किया । रामसर के ठा० साहब खेमसिंहजी, कुंवर साहब कर्णसिंहजी, ठाकुर साहब अमरसिंहजी, ठा० धीरसिंहजी, ठा० तख्तसिंहजी, ने ठा० परिदानसिंहजी राजपूत डूंगरसिंहजी,

करने का त्याग किया। १०-मई के प्रातः सात मील पर उतरलाई महाराज श्री मुनि मण्डल के साथ पधारे। यहां के स्टेशन मास्टर मेघराजजी शाकद्वीप ब्राह्मण और करणीदानजी पुष्करणा ब्राह्मण है। तथा हवाइ जहाज के स्टेशन मास्टर लोकेशरायजी महाराज श्री के व्याख्यान से बडे प्रभावित हुए। यहां बाडमेर के बहुत श्रावक दर्शन के लिये आये। रात्री में महाराज श्री की सेवा में ही रहे। व्याख्यान श्रवण कर अनेको ने त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किये। रावली ढाणी के जागीदार बाड़मेर के ठाकुर साहब जेठमलसिंहजी ने ताजिन्दगी शिकार तथा तलवार से जीवहिंसा का त्याग किया ओर वैशाख श्रावण तथा भाद्रपद इन महीनों में एकादशी अमावस्या और पूर्णिमा प्रत्येक मास की इन चार तिथियों में दारु मास काम में न लेने का प्रण किया। आपके कुंवर साहब नाथूसिंहजीने एकादशी अमावस्या तथा पूर्णिमा ईन चार तिथियों में शिकार दारु मांसका परित्याग किया। आप की ठुकरानी साहब ने एकादशी अमावस्या तथा पूर्णिमा की लिलोती का त्याग किया। आपके प्रधान गिरधारीसिंहजी ने तलवार से जीव हिंसा का सर्वथा परित्याग किया। आपके काका साहब अमरसिंहजी ने श्रावण भाद्रव मास में एकादशी अमावस्या पूर्णिमां प्रत्येक मास को इन चार तिथियों में दारु मांस का परित्याग किया। ओर शिकार का त्याग किया। और प्रतिवर्ष एक बकरा अमर करने का प्रण लिया। ठाकुर साहब सगतसिंहजी ने एवं उनकी ठकुरानी ने उपरोक्त तिथियों में दारु मांस तथा लिलोती का परित्याग किया।

ता० १२ मई को विहार कर महाराजश्री सात मील पर बाडमेर पधारे। यहां की जनताने आपका अच्छा स्वागत किया। यहां करांची से तार आया जिसमें डॉ न्यालचन्द रामजीभाई के आने की खबर मिली। डॉक्टर साहब १२ मई को आये। तपस्वीजी महाराज की आँखे जाञ्चकर चस्मे का प्रबन्ध कर दिया। दिन में महाराज श्री का जाहीर व्याख्यान रखा गया।

बाडमेर यह मलाणी प्रांत का मुख्य नगर है। यह जोधपुर लाइन का बडा स्टेशन है। यहा से जेसलमेर ११० माईल पडता है। कहा जाता है कि पुराने बाडमेर का नाश होने पर वि, स. १८०१ में रावत रताजीने पुनः नया बाडमेर बसाया था। यहां की आवक के हिस्सेदार तीन सो जागीरदार है इन जागीदारों में पांच जागीरदार रावत की उपाधिवाले हैं। वि, सं. १८८९ में अंग्रेजों ने ईस नगर को लूटा था। और यहां के जागीरदारों को पकड कर राजकोट ले गये और वहां उन्हें नजर कैद रखे गये थे कच्छ भूज के दरबार ने ईनको मुक्त करवाया था १८९२ में यह प्रदेश जोधपुर के शासन में मिल गया यहां जैनों की करीब ४०० घर की बस्ती है। ये प्रायः ओसवाल हैं और मूर्तिपूजक संम्प्रदाय के अनुआई है। दस बारह घर स्थानवासियों के भी हैं। महाराज श्री के पधारने पर सभी लोगोंने महाराज श्री की अच्छी भक्ति की। यहां आप के तीन जाहिर प्रवचन हुए। सैकडो की संख्या में व्याख्यान श्रवण के लिए लोग उपस्थित हुए। वहां के हाकीम मगरूपचन्दजी भण्डारी तथा स्टेशन मास्टर मन मोहनचन्दजी भण्डारी हेड कोन्स्टेबल बहादुरमलजी सरकारी डॉक्टर संपतलालजी पोदारमानचन्दजी रीडर पोलिस सुपरिटेण्ड मानमलजी ये सब जैन ओसवाल है ईन सबने महाराज श्री का व्याख्यान श्रवण किया और अपनी अच्छी भक्ति का परिचय दिया।

जोधपुर लाईन के कन्ट्रोलर हरगोविंददास भाई जो राव साहेब के नाम से सुप्रसिद्ध हैं। ईनका हेड क्वाटर मिरपुर खाश में है ईनका रहन सहन अत्यन्त साधा और स्वभाव से अत्यन्त सरल है। साधु सन्तों के प्रति आपकी असिम भक्ति है। आपने जब महाराज श्री का शुभ आगमन इस तरफ का सुना तो आपने हर स्टेशन मास्टर को तार से महाराज श्री के पधारने की सूचना दी। साथ ही इंजिन का गरम पानी और ठहरने के लिए स्टेशन पर स्थान का इन्तजाम करवाया तथा महाराजश्री के पधारने की

प्रत्येक दिन की सूचना अगले स्टेशन मास्टर को करवा देते थे।

यहां आपके तीन दिन के व्याख्यान से बडा उपकार हुआ। सैंकडों व्यक्तियोंने त्याग प्रत्यख्यान ग्रहण किये। तथा यहां के आदिवासियों ने दारु मांस शिकार जीवहिंसा का त्याग किया। यहां के श्रीसंघ ने आप को रोकने का खूब प्रयत्न किया किन्तु आपको आगे पधारने की जल्दी होने से आप ने शाम को यहां से विहार कर दिया। चार मील पर आटीमाली नामक स्टेशन पर आप पधारे। यहां के स्टेशन मास्टर मूलचन्दजी पुष्करणा ब्राह्मण हैं। आपने अपना निजी क्वार्टर सन्तों को ठहरने के लिये दिया। रात में आप मुनिमण्डल के साथ यहीं विराजे। रात में स्टेशन मास्टरों ने एवं रेलकर्मचारियों ने आपका उपदेश श्रवण किया।

दूसरे दिन प्रातः ता० १३ मई को विहार कर जसाइ पधारे। यहाँ ओसवालो के १५-२० घर हैं। आपने यहाँ उपदेश दिया। यहाँ के तीनों स्टेशन मास्टरोंने आपका उपदेश सुन और यथा शक्ति त्याग प्रत्याख्यान किये। रामामहत्तर ने आपश्री का उपदेश सुन दारु मांस तथा जीवहिंसा का सर्वथा त्याग किया। पंडित मूलचन्दजी की यहाँ तबियत अचानक बिगड गई जिससे आपको वापिस नागौर जाना पडा।

दूसरे दिन ता० १४ मई को विहार कर आप सातमील पर खडोन नामक गाव में पधारे। यहाँ के स्टेशन मास्टर धनराजजी गोड ब्राह्मण हैं। बडे सेवा भावी सज्जन हैं। इन्होने महाराजश्री के उपदेश से पांच तिथि ब्रह्मचर्य एवं लिलोती नहीं खाने का प्रण लिया। पेठवान वांकोजी प्रधान सजोडे दारुमांस जीव हिंसा का त्याग किया। गांगला निवासी मारु नामके और रतना नामके सिन्धी मुसलमानों ने भी दारुमांस एवं जीव हिंसा का त्याग किया। तथा झूठी साक्षी न देने का भी प्रण लिया।

दूसरे दिन महाराजश्री ता० १५ मई को विहार कर भाचमर नामक स्टेशन पर पधारे। यहां इन्स्पेक्टर ओडिट एकाउन्ट जोधपुर निवासी अग्रवाल लखपतसिंहजी ने महराजश्री के उपदेश से पांच तिथियों ब्रह्मचर्य व्रत पालने का नियम लिया। यहाँ के स्टेशनमास्टर ने भी रात्री भोजन का त्याग किया। तीन दन यहां बिराजकर।

ता० १६-१७-१८-१९-मई

प्रातः होते ही आपने अपनी मुनि मण्डली के साथ भामचर से विहार कर दिया। ८ मील का विहार कर आप रामसर पधारे। यहां स्टेशनमास्टर श्रीमान् चन्दुलालजी अग्रवाल दिगम्बर जैन थे आपने गुरुदेव का बडा भावभीना स्वागत किया और आपको स्टेशन के ही एक कार्टर्स में उतरने के लिए स्थान दिया। रात्रि के समय आपका प्रवचन हुआ। स्टेशन पर रहने वाले सभी कर्मचारी आपके प्रवचन में उपस्थित हुए। महाराजश्री ने उपस्थित स्त्री पुरुषों के समक्ष मानवधर्म पर प्रभावशाली प्रवचन दिया। आपके प्रवचनों का उपस्थित सज्जनों पर अच्छा प्रभाव पडा। व्याख्यान समाप्ति के बाद अनेकोंने विविध त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किये। मास्टर साहब की पत्नी केशरकुँवरबाई ने पांच तिथियों में हरि लिलौत्री का त्याग किया और ब्रह्मचर्य पालन का नियम लिया। दोनों पति पत्नि जैनधर्म के प्रति असीम श्रद्धालु थे। महाराज श्री की इन दोनों ने बडी भारी सेवा की। इन्होने अपने बालकों में भी अच्छे धार्मिक संस्कार डाले। उस समय रामसर में ग्यारह ओसवालों के घर थे। इन घरों के समस्त कुटुम्बियों ने महाराजश्री से सम्यक्त्व ग्रहण किया। आतिशबाजी, वैश्यानृत्य आदि समाज की कुरुढियों का त्याग किया श्रीमान् पोखरदासजी गुलाबचन्दजी पारख ने पंचमी, अष्टमी, एकादशी, चतुर्दशी, अमावस्या के दिन चोविहार हरि लिलोती का त्याग एवं शीलव्रत पालने का नियम ग्रहण किया। रामसर के ठा० साहब खेमसिंहजी, कुंवर साहब कर्णसिंहजी, ठाकुर साहब अमरसिंहजी, ठा० धीरसिंहजी, ठा० तख्तसिंहजी, ने ठा० परिदानसिंहजी राजपूत डूंगरसिंहजी,

आदि अनेकों राजपूतों ने एकादशी, अमावस्या आदि तिथियों में शिकार करने की प्रतिज्ञा की। बंदनोसोढा (जाति विशेष) तथा ठा० छत्तरसिंहजी ने एकादशी, अमावस्या, पूर्णिमा जन्माष्टमी, ऋषिपंचमी को दारु तथा माँस सेवन का त्याग किया। रामसर के समीप छोटे खारची नामक गांव के निवासी सिन्धी मुसलमान तथा पांदीकोपाहर ग्राम निवासी जांगली नाम के भीलों ने महाराजश्री के उपदेश से सदा के लिये दारु, मांस एवं जीव हिंसा का त्याग किया। ट्राफिक इन्स्पेक्टर अतोमुहम्द जालन्धर निवासी ने आपका व्याख्यान सुना और महाराजश्री के त्याग मय प्रवचन से प्रभावित होकर बोला–"मैं आपका उपदेश सुनकर आज से शराब की तोबा करता हूं। और मेरे हाथ से किसी भी प्राणी को मारने याने जान लेने की और महीने में पंद्रह रोज गोस्त खाने की तोबा करता हूँ। मेरे अच्छे नसीब हैं सो आप जैसे बडे ओलियों का दीदार हुआ।" आप करीब तीन चार दिन रामसर में हो बिराजे बडा भारी उपकार हुआ। स्थानीय जनता ने आपका उपदेश बडी रूचि के साथ सुना। अनेकों ने जीवहिंसा, दारू, मांस परस्त्रीगमन शिकार आदि दुर्व्यसनो का त्याग किया। आपने जब विहार किया। तो सैकडों रामसर निवासी दूरतक पहुँचाने आये। विहारकर आप गागरिया पधारे। रामसर से गागरिया ६ मील होता है।

२० मई को आप मध्यान्ह के समय गागरिपधारे

यहां से लेकर कराची के पास करीब मलीर तक सर्पो का एवं विषैले जानवरों का बडा उपद्रव रहा। सैकडों सर्पराज नागराज इधर उधर बडी शान के साथ डोलते रहते थे कभी आपस में लडते नजर आते थे तो कभी अपनी विशाल फण फैलाकर बडी मस्ती में झुमते नजर आते थे। महाराजश्री को मार्ग में इस प्रकार के सैकड़ों सर्प राज नजर आते थे। मानो सडक के दोनो ओर खडे होकर महाराजश्री का स्वागत हि कर रहे हों।

गागरिया में अहार पानी करने के पश्चात् आपका प्रवचन हुआ। आपके प्रवचनकी सूचना समस्त गांव वालों को करादी गई थी। सूचना मिलते ही सैकडों स्त्री पुरुष महाराज श्री के व्याख्यान में उपस्थित हुए। व्याख्यान सुनकर बडे प्रसन्न हुए। आपके उपदेश से प्रभावित हो श्री धन्नारामजी पी. डब्लु और इन्सपेक्टर श्री प्रतापजी ने एकादशी अमावस्या, पूर्णिमा इन चार तिथियों में रात्रिभोजन तथा कुशील सेवन का त्याग किया। जोधपुर निवासी बाबू राधालालजी ने उक्त चार तिथियों में कुशील सेवन का एवं रात्रिभोजन का त्याग किया। डिगाना निवासी स्टेशन मास्टर प्यारेलालजी कायस्थ एवं तार बाबू जगदम्बालालजी ने भी प्रवचन सुना और त्याग प्रत्याख्यान ग्रहण किये। श्रीमान् बिरदीचन्दजी ने आपसे सम्यक्त्व ग्रहण की। और भी अनेक उपकार हुए आपश्रीने यहां से सायंकाल के समय विहार कर दिया। करीब तीन मील पर बारहमासियों की ढाणी थी वहां रात्रि में आपने विश्राम किया। यहां भी आपका प्रवचन हुआ। सुखीया और मिठु आदि भीलो ने आपके उपदेश से दारु, मांस एवं शिकार का त्याग किया। और चोरी न करने की प्रतिज्ञा की।

२१ मई को प्रात होते ही आपने अपनी मुनिमण्डली के साथ गगरारोड की ओर विहार किया। नौ मील का लम्बा विहार कर आप गगरा रोड पधारे। यहां स्टेशन पर ही एक क्वार्टर्स में बिराजे। स्टेशन मास्टर उदेचन्द्रजी कायस्त तार मास्टर उमरावचन्दजी कायस्थ एवं राव साहेब पंडित हरगोन्दि दासजी के भतीजे शांति लालजी तार मास्टर ने आपकी बडी सेवा की। आपने कराची सेआये हुए श्रीयुत् कानजीभाई, डॉ. निहालचन्दभाई, छगनलालभाइ भाईलालभाई आदि बहुतसे सज्जनों की भोजनादि से बडी सेवाकी। मुनिराजों की भी बडी सेवा की। यहाँ आपका प्रवचन रखा गया। प्रवचन में स्टेशन के कर्मचारी बडी संख्यामें उपस्थित हुए। अनेको ने यथाशक्ति त्याग–प्रत्याख्यान ग्रहण किये यहां बडा रेगि-

स्तानहै। पानी बहुत ठंडा और कडुआ है। पेट भर पानी पीलेने से पशुओं की आते भी गलजाती है और थोडे रोज में मर भी जाते हैं। व्याकरण कारों की की हुई "मरु" शब्द की वित्पत्ति यहां ठीक हि सार्थक हो तीहै। जल के अभाव में मर भी जाते हैं। ("मरु" म्रियन्ते जला भावेन प्राणिनो यत्र सः मरुः)

यहां से नगरपारकर करी १२० मील पर है। नगरपारकर से पालनपुर ४० मील दूर है। इस मार्ग से कराची आसानी से जाया जा सकता है। सायंकालके समय आपने विहार कर दिया। ४ मील का विहार कर आप तामलोर पधारे।

२२ मई को आपश्री का जाहिर प्रवचन हुआ। प्रवचन में तामलोर के ठाकुर साहब श्री वैरीलाल जी अपने समस्त परिवार के साथ प्रवचन में उपस्थित हुए। ठाकुर पँवार नाथुसिंहजी व उनकी ठकुरानियाँ भी उपस्थित हुई। इनके अतिरिक्त हिन्दू और मुसलमान भाई भी बडी संख्या में उपस्थित हुए। महाराज श्री ने मानव जीवन की सार्थकता पर प्रवचन दिया। आप अपने प्रवचन में जीवहिंसा, शिकार, मद्य सेवन, परस्त्रीगमन, जूआं जैसे दुर्व्यसनों के दुष्परिणाम समझाए। प्रवचन का जनता पर बहुत अच्छा प्रभाव पडा। ठाकुर वैरीलालजी ने सदा के लिए दारु मांस जीवहिंसा का त्याग कर दिया। साथ प्रतिवर्ष एक जीव को अमरिया करने का भी प्रण किया। ठाकुर पंवार नाथुसिंहजी ने व ठकुरानीजी सा. ने दारु, मांस, जीवहिंसा का सदा के लिए त्याग किया। एकादशी, अमावस्या, पूर्णिमा आदि तिथियों में हरी लिलोत्री एवं कुशील सेवन का त्याग किया। साथ ही प्रतिवर्ष एक बकरा अमर करने का प्रण लिया।

मास्टर मोहम्मदहुसेनखाँ ने महाराजश्री के उपदेश से सदा के लिए परस्त्री का त्याग किया और प्रति वर्ष एक बकरे को मृत्यु के मुख से बचाने का प्रण किया। पेठवान आइदानजी, कस्टम अधिकारी चन्दीराम जी ने, महतर नेनजी आदि ने दारु मांस एवं जीव हिंसा का त्याग किया। इस प्रकार सैकडों व्यक्तियों ने महाराज के प्रवचन से प्रभावित हो यथाशक्ति त्याग ग्रहण किये। यहाँ आप ने एक दिन बिराजकर आगे के गांव के लिए विहार कर दिया।

२३ मई को प्रातः तामलोर से विहार कर आप सात ७ माईल पर स्थित लीलमा गांव में पधारे। तामलोर के स्टेशन मास्टर ने महाराजश्री के पधारने की सूचना लीलमा के स्टेशन मास्टर को दे दी थी। तदनुसार बडे स्वागत के साथ स्टेशन मास्टर ने अपने रेल्वे के निजी कार्टर्स में आपको उतारे। आहार पानी के पश्चात् आपका प्रवचन रखा गया प्रवचन में बढी संख्या में जनता आई। आपने अहिंसा धर्म का महत्त्व समझाया। जनता आपके प्रवचन से बडी प्रभावित हुई अनेक हिन्दू एवं मुसलमान भाईयों ने दारु, मांस जीववध परस्त्रीगमन आदि दुर्व्यसनों का त्याग किया। यहां के महेश्वरी भाई मूलचन्दजी कर्मचन्दजी आदि ने अच्छी सेवा की और यथा शक्ति त्याग ग्रहण किया। स्टेशन मास्टर रिलीफ बाबू तथा स्टेशन के अन्य ब्राह्मण कर्मचारियों ने रात्रि भोजन एवं अमुक तिथियों में लीलोत्री खाने का एवं कुशील सेवन का त्याग किया। सायंकाल के समय आप अपनी मुनिमण्डली के साथ दो मील का विहार कर ढाणी में पधारे। रात्रि निवास आपने वहीं किया। रात्रि में भी ढाणी निवासियों को उपदेश दिया। आपके उपदेश से प्रभावित हो सरदार दौलतसिंहजी ने प्रतिवर्ष दो जीवों को अभयदान देने का प्रण लिया। सरदारसगतसिंहजी ने भी प्रतिवर्ष एक एक जीव को अमर करने का प्रण लिया। तथा पांच तिथियों में दारु, मांस एव जीववध न करने का व्रत ग्रहण किया, रात्रि बडे आनन्द के साथ व्यतीत कर प्रातः होते ही आपने अपनी मुनिमण्डली के साथ विहार कर दिया।

२४ मई को आप ७ सात मील का विहा कर जैसिंधर पधारे। यहां स्टेशन पर ही आप बिराजे। आहार पानी ग्रहण करने के बाद आपका प्रवचन हुआ। आपके प्रवचन से प्रभावित होकर बाबू

भंवरलालजी आसिस्टेन्ड स्टेशन मास्टर एवं रामनाथजी स्टेशन मास्टर ने पांच तिथि में रात्रि भोजन का त्याग किया। तथा एकादशी के दिन जैन पद्धति से उपवास करने का प्रण किया। इसके अतिरिक्त पांच तिथियों में ब्रह्मचर्य व्रत पालने का नियम ग्रहण किया। बाबू विरधारामजी चौधरी पी डब्ल्यू रेल्वे लाइन के इन्सपेक्टर ने एवं अन्य कर्मचारियों ने भी महाराजश्री से यथा शक्ति व्रत ग्रहण किये।

२५ मई को प्रातः ही आपने अपनी मुनिमण्डली के साथ जैसिन्धर से विहार कर दिया। पांच मील लम्बा विहार कर आप मुनाबा पधारे यहां स्टेशन पर ही आपका विराजना हुआ। मध्यान्ह में आपने जाहिर प्रवचन दिया। प्रवचन में अनेक भाई बहन उपस्थित हुए। आपने अहिंसा धर्म की महत्ता पर प्रभावशाली प्रवचन दिया। आपके प्रवचन से अनेक सज्जन प्रभावित हुए और आपके विद्वता भरे प्रवचनों की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। प्रवचन से प्रभावित होकर स्टेशन मास्टर हीराचन्दजी कायस्थ ने दारु, मांस एवं जीवहिंसा का सदा के लिए त्याग किया। तथा जहां तक हो सके रात्रि भोजन करने का भी प्रण लिया। इनके अतिरिक्त अनेक व्यक्तियों ने विविध प्रकार के दुर्व्यसनों के सेवन का त्याग किया। सायंकाल के समय आपने वहां से विहार कर दिया और दो मील पर ढाणी में आप ठहर गये। यहां भी आपने उपदेश दिया। ढाणी के निवासियों ने आपके उपदेश से हिंसा का त्याग किया। और दारु मांस सेवन न करने का प्रण ग्रहण किया।

२६ मई को आप विहार कर खोखरेपार पहुँचे। यहाँ मारवाड प्रान्त की सीमा समाप्त हो जाती है और सिन्धदेश की सीमा प्रारम्भ होती है। सीमा स्थल होने से यहां के स्टेशन मास्टर एवं पुलिस कर्मचारियों की संख्या अच्छी है। रात्रि में आपका जाहिर प्रवचन रखा गया। सभी स्टेशन मास्टर पुलिस एवं पुलिस अधिकारी नाकेदार तथा अन्य छोटे बडे सभी राज्य कर्मचारी आपके प्रवचन में उपस्थित हुए। प्रवचन में आपने मानवदेह की दुर्लभता पर व्याख्यान दिया लोग बडे प्रभावित हुए। आपके प्रवचन से सिन्धि भाईयों ने बडी संख्या में मांस मदिरा का त्याग किया। स्टेशन मास्टरों ने रात्रि के ग्यारह बजे तक धर्म के विविध तत्वों पर प्रश्नोत्तरी की। महाराजश्री की समाधान करने की सरल पद्धति से बडे प्रभावित हुएं। उन्होंने पांच तिथियों में रात्रि भोजन न करने का एवं शीलव्रत पालने का नियम लिया। राजपूत ठाकुरों ने जीवहिंसा, शिकार करने का जूआ मांस मदिरा एव वेश्यागमन का त्याग किया। अन्य कर्मचारियों ने भी त्याग कर अपनी धर्म भावना का परिचय दिया। मुसलमान भाई बशीरमुहम्मदखान साहेब ने एवं अन्य मुसलमानभाईयों ने दारु मांस सेवन का त्याग किया। रात्रि का यह सत्संग बडा हि आकर्षक एवं प्रभावशाली रहा। प्रातः होते ही महाराजश्री ने बिटाला की और विहार कर दिया २७ मई को आप ३ मील का विहार कर बिटाला गांव में पधारे। यहां १५-२० घर राजपूतों के थे। आपने यहीं आहार पानी ग्रहण किया। मध्यान्ह के समय १५-२० घरों के सभी राजपूत भाई महाराज श्री की सेवा में उपस्थित हुए। प्रवचन हुआ। प्रवचन से प्रभावित होकर ठाकुर साहब वीरसिंहजी ने जीवहिंसा का सदा के लिए त्याग कर दिया। और वैशाख भाद्रपद के महिनों में सर्वथा दारू मांस का त्याग किया एवं अन्य महिनों की पांचों तिथियों में मांस मदिरा का त्याग किया। मल्ला नाम का एक मेवाड का भील वहीं रहता था। उसने सैकडों डाके डाले थे। अनेकों के खुन कर डाले थे। महाराज श्री के प्रवचन का उस पर बडा अच्छा प्रभाव पडा। उसने डाका न डालने का प्रण किया। एवं पांच तिथियों में जीवहिंसा शराब एवं मांस सेवन का त्याग किया। और धीरे धीरे शराब मांस को सदा के लिए छोडने का नियम ग्रहण किया। चार बजे के बाद आपने विहार कर दिया चार मील का विहार कर आप वासरवा स्टेशन पधारे। रात्रि में आपने यहीं निवास किया। यहां भी आप का प्रवचन हुआ।

नसीराबाद निवासी बाबु घीसूलालजी ने महाराज श्री की बहुत अच्छी सेवा की । रात्रि में तीन चार घंटे तक महाराज श्री से धार्मिक चर्चा करते रहे ।

२८ मई को आपने प्रातः विहार कर दिया । सात मील का विहार कर जालुजोचानरी पधारे । यह गांव तो सर्पों का एक निवास स्थल है । सर्पों के डर के मारे मास्टर लोग वेचारे दिन में हि भोजन करके खाट पर चढ जाते थे नागदेवों की इस गांव पर बडी कृपा थी सर्वत्र इनका ही एक छत्र राज्य था । रात्रि में रेल्वे कर्म चारियों को जब रेल गाडी को यहां से निकालनी पडती थी तब बडी सावधानी रखनी पडती थी । गर्मी के दिनों में गर्मी के कारण सैकडों सर्प रेल की पटडियों पर आ जाते थे और रेल के चक्कों के नीचे आ आ कर कट जाते थे । जहां तहां कटे हुए सर्पों के शवही शव ही पटडियों पर नजर आते थे वर्षा के समय तो उनके बिलों में पानी भर जाने से हजारों की संख्या में सर्वत्र सर्प दृष्टिगोचर होते हैं । यहां के निवासी प्रायः खाट पर ही रहते हैं । मुनिराजों के लिए तो यहां बडी समस्या उत्पन्न हुई । खाट का तो मुनिराज कभी भी उपयोग नहीं कर सकते थे और न रात्रि में दीपक के प्रकाश का ही । स्टेशन मास्टरों ने सर्प के बचाव के लिए सन्तों को खाट ला ला कर महाराजश्री के सामने रखवा दिये और कहा रात्रि में आप खटिया पर ही रहें वरना सर्पों के आप ग्रासबन जायेंगे । मुनिराजों ने कहा हमलोग जैन मुनि शरीर की अपेक्षा अपने आचार धर्म को अधिक महत्त्व देते हैं । हम तो सभी प्राणियों के साथ मैत्री रखते हैं किसी को मन से भी शत्रु नहीं मानते । सर्प भी हमारे मित्र ही है । हम इन मित्रो के साथ ही रात्रि व्यतीत करेंगे । हम लोग खटिया का उपयोग कभी नहीं करतें । महाराज श्री के इस त्याग व इस धैर्य से सभी को बडा आश्चर्य हुआ । रात्रि में प्रतिक्रमण के बाद स्टेशन मास्टर एवं अन्य कर्मचारी गण महाराज श्री की सेवामें उपस्थित हुए । प्रवचन हुआ । महाराज श्री ने अहिंसा पर प्रवचन दिया । प्रवचन बडा हि सुन्दर रहा । स्टेशन मास्टर आसापूरीजी ने एकादशी अमावस्या पूर्णिमा आदि तिथियों में रात्रि भोजन का त्याग एवं शील पालने का नियम ग्रहण किया एवं प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमर करने का प्रण किया । अनेक व्यक्तियों ने दारू माँस जीवहिंसा का त्याग किया । कमालखाँ मरखानी मुसलमान ने सदा के लिए जीवहिसा दारु मांस शिकार का त्यागकर जैनधर्म स्वीकार किया । यहां के स्टेशन मास्टर ने आगे के स्टेशन मास्टर को तार से सुचना दी कि यहां से बडे चमत्कारी त्यागी सन्त महात्मा आ रहें हैं । उनकी सेवा में किसी प्रकार की खामी न रहनी पाए ।

महाराज श्री ने सर्पों के बीच ही रात्रि गुजारी । जब रात्रि में सन्त सो गये तो सर्प भी मुनिराजों की रक्षा करते हुए इधर उधर फिरने लगे । सच ही किसी नितिकारने कहा है "धर्मो रक्षति रक्षितः" । जो धर्म की रक्षा करता है उसकी धर्म भी रक्षा करता है । रात्रि का काल बडी शान्ति के साथ व्यतीत हुआ । किसी प्रकार का कष्ट नहीं हुआ ।

प्रातः होते ही स्टेशन मास्टर महाराजश्री के पास पहुँचे । सर्पों की नगरी में सन्तों को सुरक्षित देख उन्हे बडा आश्चर्य हुआ । ये लोग महाराज श्री के तप त्याग की भूरी भूरी प्रशंसा करने लगे । महाराज श्री ने प्रातः काल यहां से विहार कर दिया । सात मील लम्बा विहार कर आप परचेजिवेरी पधारे । यहाँ के स्टेशन मास्टर एवं अन्य रेल्वे कर्मचारी गण पहले से ही उत्सुकता के साथ महाराज श्री के पधारने की प्रतीक्षा कर रहे थे । महाराज श्री के पधारते हो जय ध्वनि के साथ सबने स्वागत किया । स्टेशन पर ही एक क्वार्टर्स में महाराज श्री को उतारे । आहार पानी के बाद महाराज श्री का प्रवचन हुआ । प्रवचन में स्टेशन के सभी कर्मचारीयों ने हिस्सा लिया । प्रवचन के पश्चात् महाराज श्री के उपदेस से टिकीट बाबु ज्वालाप्रसादजी कायस्थ ने दारू मांस का सदा के लिये त्याग किया एवं एकादसी अमावस्या आदि पांच तिथि

यों में ब्रह्मचर्य व्रत रखने का प्रण लिया। तथा प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमरिया करने का व्रत लिया। सोढा सरदार जोधसिंहजी सेरसिंहजी बिंदराजजी तखतसिंहजी खुसालसिंहजी आदि अनेक ठाकोर सरदारों ने प्रत्येक महिने की पांच तिथियों में दारु मांस के सेवन का त्याग किया। एवं श्रावण भाद्रपदमास में सम्पूर्ण जीवहिंसा दारू मांस का त्याग कर दिया। अन्य कुछ रजपूत सरदारों ने खरगोश तीतर हिरण मारने का त्याग किया। सिंध देश की सिमा पर स्थित राणाजी की हवेली निवासी कुंवरसिंहजी राठोड ने सदा के लिए जीवहिंसा का परित्याग कर अहिंसा वादी बने। अन्य भी अनेक व्यक्तियों ने विविध त्याग ग्रहण कर अपनी त्याग भावना का परिचय दिया। जालुजोचानरों कि तरह यहां भी सर्पो का उपद्रव रहा। यहां से करीब दौसौ मील के लम्बे मार्ग में सर्प ही सर्प दृष्टि गोचर होते हैं। सन्तों के तप त्याग के प्रभाव से किसी को भी सर्प ने मुनिराजों को कष्ट नहीं दिया। हमारे चरितनायकजी सर्वत्र अहिंसा धर्म की महिमा का प्रचार करते हुए निरन्तर आगे बढ रहे थे। परचेजिवेरी से आप २९ मई को विहार कर नवाछोर पधारे।

यहां भी आपका प्रवचन हुआ। प्रवचन से प्रभावित हो नूरखा नामक मुसलमान ने सदा के लिए जीवहिंसा और मांस सेवन का त्याग किया। और सदा के लिए प्रति वर्ष एक–एक बकरा अमर करने का प्रण लिया। पेठवान वाएतु निवासी रुगाजी ने भी दारू, मांस का सदा के लिए त्याग किया।

यहां से ३१ मई को विहार कर आप ९ मील पर स्थित हसिसर नामक गांव में पधारे। स्टेशन मास्टर ने आप का स्वागत किया। और उतर ने के लिए आपको अपनी जगह दी। आहार पानी के बाद आपका जाहिर प्रवचन रखा गया। आस पास के सेकडों व्यक्ति आपके प्रवचन में उपस्थित हुए। आप ने मानव धर्म पर प्रवचन दिया। आपके प्रवचन से प्रभावित होकर स्टेशन मास्टर सामर निवासी भवानी शंकरजी दाहिमा ब्राह्मणने एवं असिस्टेन्ड मास्टर विशनलालजी कायस्थ ने अष्टमी एकादशी चतुर्दशी अमावस्या एवं पूर्णिमा को पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत का नियम लिया और लीलोती न खाने की प्रतिज्ञा की। इसके अतिरिक्त व्याख्यान में उपस्थित अनेक व्यक्तियों ने दारु मांस जीवहिंसा जुआ, परस्त्रीगमन आदि दुर्व्यसनों का त्याग किया। कुछ सिन्धी मुसलमानों ने भी जीवहिंसा व शराब पीने का एवं मांस खाने का नियम लिया। रात्रि निवास के बाद आपने प्रातः विहार कर दिया और मुनि मंडलि के साथ ७ सात मील का विहार कर आप धोरानारा पधारे। यहां भी अनेकों व्यक्तियों ने दारु मांस आदि दुर्व्यसनों का त्याग किया। अनेकों ने पांच तिथि में रात्रि भोजन न करनें की प्रतिज्ञा की। स्टेशन मास्टर अलिहेदरखा सैयद नें महाराज श्री के उपदेश से साल में ६ महिने तक गोस्त खाने का त्याग किया और बकरे की कुर्बानी न करने की प्रतिज्ञा की।

आसिस्टेंड मास्टर पोकरमलजी दरजी, टिकीट बाबू रूपरामजी तारबाबू मुकुन्दवल्भजी, गोविन्दलालजी कायस्थ आदि ने ग्यारस चतुर्दशी, अमावस्या पूनम को ब्रह्मचर्य व्रत रखने का प्रण किया। चोकीदार रामसिंह राजपूत ने भी जीवहिंसा, मांस सेवन एवं शराब पीने का सर्वथा परित्याग किया। तथा अन्य कुछ व्यक्तियों ने भी त्याग ग्रहण कर महाराजश्री के प्रति अपनी भक्ति व्यक्त की। यहां से आप ६ मील का विहार कर हिरल पधारे। यहां के स्टेशन मास्टर रतनलालजी ने एवं उनकी पत्नी ने पांचों तिथियों में ब्रह्मचर्य पालने का नियम लिया। तथा हरी वनस्पति तथा रात्रि भोजन का भी त्याग किया। निसार मोहम्मद नामक एक मुसलमान ने एवं उसकी पत्नी ने महिने में १५ दिन मांस खाने का त्याग किया। और अपने हाथ से जीव नहि मारने का प्रण किया।

यहा से ता० २ जून को विहार कर आप अपनी मुनिमण्डली के साथ पीथोरी पधारे। यहां स्टेशन पर आप ठहरे। यहां के स्टेशन मास्टर अब्दुलसीखांजी मुहम्मदअसरफ आप के महान उपदेश से बडे प्रभावित हुए। मांस खाने का एवं जीवहिंसा करने की प्रतिज्ञा ग्रहण की। अन्य भी तार बाबू तेजरामजी, श्री-

लालजी कायस्थ आदि ने भी महाराजश्री से पांच तिथियों में शीलव्रत रखने का प्रण किया । महाराजश्री जहाँ भी पधारते अपने प्रभावशाली प्रवचन से श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर देते हि थे । आपके प्रवचन से पत्थर दिल भी मोम बन जाता था ।

३ जून को आपने यहां से प्रातः विहार कर दिया । आपने नौ मील का विहार किया और आप सादीपल्ली नामक स्टेशन पर पधारे । यहां आपका प्रवचन हुआ । स्टेशनमास्टर रघुनाथजी, बाबू भगवानदासजी आदि ने पांच तिथियों में शीलव्रत पालने का नियम लिया । कुछ राजपूतों ने एवं मुसलमान भाईयों ने जीवहिंसा, शराब एवं मांस न खाने का प्रण किया । नाई और जाटों ने भी आपके प्रवचन से प्रभावित हो जीव हिंसा का त्याग किया ।

यहां से आपने ४ जून को प्रातः विहार किया और ७ सात मील का विहार कर आप जमराव जक्शन पधारे । स्टेशन पर ही आप बिराजे । व्याख्यान में सैकडों की संख्या में जनता उपस्थित हुई । "मित्ति मे सव्व भूएषु" इस विषय पर प्रवचन देते हुए फरमाया । दूसरों के लिए अपने सुख को बलिदान करने की प्रेरणा आपको जिस अनुभूति से प्राप्त होती है उसे करुणा कही जाती है । दूसरों के सुख में सुखी होना मैत्री है तो दूसरे के दुःख में दुखी होना करुणा है । मैं आप से एक बात पूछ लूं-"आप दूसरे के दुःख से दुखी होते हैं या दूसरे के सुख से दुखी होते हैं । दूसरे के दुःख में यदि आपको पीडा हो रही है तो समझलो आपके हृदय में मानवता का दीपक जगमगा रहा है । पर आज उलटी गंगा बह रही है । आज का मानव दूसरे के सुख से दुखी हो रहा है । दूसरे के आनन्द और उत्कर्ष को देख कर यदि हृदय में चूमन होती है तो याद रखीए हृदय में शैतानियत बोल रही है । आज सर्वत्र यह वृत्ति काम कर रही है। जब हृदय दूसरों को कष्ट में देखकर स्वयं पीडा का अनुभव करने लगे तब समझना होगा हममें मानवता आई है, क्योंकि दुसरों का दुःख अपना दुख तभी बन सकता है जब कि हृदय में विशालता हो । विचारों में पवित्रतांहो । पवित्र हृदय के व्यक्ति की विचार धारा कितनी उदात होती है । एक पंक्ति में कवि बोलता है-

"दयामय ऐसी मति हो जाय । टैक ॥
अपने सब दुःखों को सहलु, किन्तु पर दुःख देखान जाय ॥ दयामय ० "

यह सन्त हृदय के स्वर हैं । वे कहते हैं-प्रभो ! एसा हृदय हो कि अपना दुःख तो मैं हंसते हंसते सहसकूं पर दूसरों का दर्द सह न सकूं । हृदय की यह विशालता ही जीवन का आदर्श है ।" करुणा, उपदेश नहीं आचरण चाहती है । करुणा के दो बून्द सूखे जीवन में हरियाली की बहार ला सकती हैं । करुणा, मैत्री जीवन का आनन्द का झरना हैं । निर्दय हृदय सूकी रेत है जहां स्नेह और सहानुभूति की सरलता और तरलता का अभाव है । जीवन का माधुर्य सहृदयता में रहता है । जिस दिन प्राणी के हृदय से दया और स्नेह की सरीता सूख जायेगी उस दिन संसार नरक हो जायगा । क्रूरता जीवन का कलंक है तो करुण जीवन का माधुर्य हैं । पहिले में विद्वेष की आग है तो दूसरे में शान्ति को स्वर है । एक में जोवन का अंधकार है तो दूसरे में आत्मा का प्रकाश है । दया व करुणा ही धर्म का मूल है । सन्त तुलसीदासजी ने भी कहा है-

दया धर्म का मूल है पाप-मूल अभिमान । तुलसी दया न छोडिए, जब लगि घट में प्राण ॥

इस प्रकार आपने करीब डेढ घंटे तक विश्व मैत्री करुणा और दया पर प्रवचन दिया । प्रवचन का प्रभाव जनता पर स्पष्ट लक्षित हो रहा था । प्रवचन समाप्त होते ही श्रीमान् अग्रवाल लखीरामजी ने एवं उनके छोटे भाई हजारीमलजी ने महिने की पांच तिथियों में रात्रि भोजन एवं हरिलीलोत्री का त्याग किया । तथा इन दोनों भाईयों ने शीलव्रत पालने का नियम लिया । टिकीट बाबू राजपूत सरदार फतेसिंहजी ने

महाराजश्री के प्रवचन से प्रभावित होकर जीवहिंसा दारु, मांस सेवन का त्याग किया । रामदला नामक भंगी ने भी दारु, मांस का एवं जीववध का त्याग किया । अन्य भी अनेक सज्जनों ने यथा शक्ति त्याग ग्रहण किये । एक दिन यहां बिराजकर आपने ५ जून को विहार कर दिया । ५ मील पर मीरपुर खास पधारे । आपके आने की सूचनां स्थानोय लोगों को पहले से ही मिल गई थी । कुछ लोगों ने सामने जाकर महाराजश्री का स्वागत किया । स्टेशनमास्टर भी महाराजश्री के सामने आये । महाराजश्री को स्टेशन के एक मकान में उतारे गये । आहार पानी ग्रहण करने के बाद मध्यान्ह के समय आपके प्रवचन हुए यहां भी सब स्थानों की भांति जैन, अजैन मजदूर कास्तकार स्टेशन के समस्त कर्मचारी गण बहुत बडी संख्या में उपस्थित हुए । यहां भी व्याख्यान का बडा आनन्द आया । लोगों ने आपश्री के व्याख्यान की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की अनेक लोगों ने जीवहिंसा, शराब एवं मांस का त्याग किया । चार दिन तक आप यहों बिराजें । मध्यान्ह के समय एवं रात्रि में आपके प्रवचन हुए । प्रवचन में हिन्दू और मुसलमान बडी संख्या में उपस्थित होते थे । प्रभावशाली प्रवचनों से सारे ग्राम में महाराजश्री की बडी प्रशंसा और जयध्वनि होने लगी । चार दिन के पश्चात् जब आपने बिहार किया तो बडी संख्या में हिन्दू मुसलमान आपको विदा करने के लिए आये और मांगलिक श्रवण के समय अनेक व्यक्तियों ने यथा शक्ति त्याग–प्रत्यख्यान ग्रहण किये । कराची का श्री संघ भी उपस्थित हुआ था । कराची संघने यहां स्वाम्विवात्सल्य किया जिससे श्रावकों में खूब स्नेह वृद्धि हुई । महाराजश्री ने यहां से रतनाबाद की ओर बिहार किया । ७ सात मिल का विहार कर आप रतनाबाद पधारे । रात्रि में आपका प्रवचन हुआ । सदां के भान्ति यहां भी स्टेशनमास्टर श्री रङ्गराजसिंहजी ने दारु, मांस एवं जीवहिंसा का त्याग किया । बाबू शंकरलालजी ने प्रत्येक महिने की पांच तिथियों में लीलोत्री, कुशील सेवन एवं रात्रि भोजन का त्याग किया । एवं प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमरिया करने का प्रण लिया ।

दूसरे दिन ९ जून को आपने विहार किया और आप अपनी मुनिमण्डली के साथ बुगलाई स्टेशन पधारे । यहां भी आपका प्रवचन हुआ । स्टेशन मास्टर मानमलजी वायेती ने प्रत्येक महीने की पांच तिथियों में हरी न खाने की एवं शीयलव्रत पालने की प्रतिज्ञा की । असिस्टेन्ड स्टेशन मास्टर शंकरलालजी ने भी इसी प्रकार का त्याग ग्रहण किया ।

शाम को यहां से विहार कर दिया । आपने पांच मील का विहार किया । आप कमारोशरीफ पधारे । यहां भी अच्छा उपकार हुआ । सायंकाल के समय यहां से आपके विहार कर दिया । चार मील का विहार कर आप टंडोअलीआर पधारे । यहां भी प्रवचन हुआ । प्रवचन से प्रभावित हो स्टेशन मास्टरों ने रेल्वे कर्मचारियों ने तथा ग्राम निवासियों ने विविध त्याग–प्रत्याख्यान ग्रहण किये । जीव हिंसा, दारु, मांस का त्याग किया । वैष्णव धर्म का पालन करने वाले कुछ व्यक्तियों ने पांच तिथियों में ब्रह्मचर्यव्रत पालने का नियम ग्रहण किया । यहां से आपने विहार किया और ११ जून को केसानोनसर पुर रोड पधारे । यहां भी बड़ा उपकार हुआ । स्टेशन मास्टर देवराजजी ने एवं मुरलीधरजी ने एवं बालकिसन जी ने अष्टमी, एकादशी, अमावश्या एवं पूर्णिमा के दिन ब्रह्मचर्य पालने का एवं लीलोती तथा रात्रि भोजन का त्याग ग्रहण किया । तथा प्रतिवर्ष एक-एक बकरा अमरिया करने का प्रण लिया । अन्य भी प्रवचन में उपस्थित हिन्दू मुसलमान भाईयों ने दारु, मांस एवं जीव हिंसा का त्याग किया ।

वहां से १२ जून को ४॥ मील का विहार कर टन्डोजाम शहर पधारे । यहां भी आपका प्रवचन हुआ । हिन्दू मुसलमान वडी संख्या में उपस्थित हुए । अनेकों ने दारु, मांस एवं जीवहिंसा का त्याग किया । कुछ व्यक्तियां ने पांच तिथि में रात्रि भोजन व ब्रह्मचर्य का पालन एवं लीलोत्री खाने का

त्याग ग्रहण किया। सायंकाल के समय आपने विहार कर दिया और आप राहुरी स्टेशन पधारे। यहां पर हैदराबाद सिंध का श्रीसंघ महाराजश्री के दर्शन के लिए आया। रात्रि के समय आपका प्रवचन हुआ। प्रवचन में स्टेशन के सभी कर्मचारी बडी संख्या में उपस्थित हुए। स्टेशन मास्टरों ने एवं रेल्वे के कुछ अन्य कर्मचारियों ने रात्रि भोजन का त्याग किया एवं दारु, मांस तथा जीववध का त्याग किया। वहां से विहार कर आप भीराणी के स्टेशन पधारे। यहां आधा घन्टा विराजे। भीराणी के स्टेशन मास्टर कानसिंहजी ने दारु, मांस, शराब एवं जीव हिंसा का त्याग किया। यहां प्रथम से ही हैदराबाद का श्रीसंघ उपस्थित था। भव्य स्वागत के साथ महाराज श्री को हैदराबाद की ओर विहार कराया। जब हैदराबाद समीप आया तो सैकडों स्त्री पुरुष स्वागत के लिए नगर से बाहर आये और आपके शुभागमन पर बडा हर्ष प्रकट किया। इस प्रकार भगवान वीर की जय ध्वनि के साथ आपका नगर में पदार्पण हुआ। और नगर के एक भव्य भवन में प्रवेश किया। सैकडों नगर निवासियों से सारा हाल खचाखच भर गया। हमारे चरितनायकजी अपनी मुनि मण्डली के साथ पाटे पर विराजे। जैसे निर्मल चन्द्रमा तारा मण्डल के बीच सुशोभित लगता है वैसे ही हमारे चरितनायमजी अपनी मुनि मण्डली के साथ परम सुशोभित हो रहे थे। चरितनायकजी ने मांगलिक स्तवन के बाद भाषण प्रारंभ किया। आपके भाषण का सार यह था—

जीवन क्या है। मनुष्य की श्वास धारण क्रिया जीवन कहलाती है। पर केवल श्वास क्रिया मात्र ही जीवन नहीं है अन्यथा श्वास तो धमनी भी लेती है। परन्तु जिसके जीवन में कुछ जिन्दा दिली है वही तो जीवित है। एक को जिन्दा दिली अपने तक सीमित रहती है। दूसरा कुछ आगे बढता है देह की दीवारों से उपर उठकर जिसने दूसरे के जीवन में आत्मीयता का पसार किया है वह जीवन अगरबत्ती के जैसा सुगंधमय जीवन है जो स्वयं जलकर आसपास के वातावरण को सुवासित करती है। एक वहजिन्दगी है जो दूसरों के लिए अपने हितों का बलिदान करती है। वृक्ष एकेन्द्रिय कहलाता है। ग्रीष्म ऋतु के भयंकर ताप को वह स्वयं सह लेता है किन्तु अपने शरण में आने वाले को वह परमशान्ति और शीतलता प्रदान करता है। नीम की छाया में जो व्यक्ति अधिक रहता है उसका शरीर स्वस्थ हो जाता है गुलाब के पास कोई पहुंचता है तो उसका हृदय प्रसन्नता से भर उठता है। मानव तूं पंचेन्द्रिय है तेरे पास आनेवाला मानव प्रसन्नता से भर उठता है या चिन्ताओं की रेखाएँ लेकर लौटता है? यदि आपके पास से कोई पीडा सन्ताप चिन्ता द्वेष लेकर लौटता है तो समझना होगा कि अभीतक हमने उस एकेन्द्रिय जितना भी जीवन विकास नहीं किया है। एकेन्द्रिय के जीवन विकास का एक रहस्य और भी है उनकी देह दूसरे प्राणियों के उपयोग में आता है वह उतना ही लोकप्रिय होता है। सच पूछा जाय तो छोटे छोटे प्राणियों का ही जीवन हमारे लिए विशेष उपयोगी होता है। स्थानांग सूत्र में कहा गया है कि मनुष्य पर षट्कायिक जीवों का अनन्त उपकार है। पवन को लीजिये। कितना उपकार है हम पर उसका। उसके अभाव में हम एक दिन क्या एक घन्टा भी नहीं जी सकतें। क्या इस उपकार को आपने प्रत्युपकार के रूप में लौटाने का भी कभी सोचा है? इसी प्रकार पृथ्वीकायभी है, पानी पेय है। अग्नि मानव का प्रमुख सहायक है। वनस्पति मानव का आहार है इन सब का कितना उपकार है हम पर। ये हमारे बिना भी जी सकते हैं। किन्तु हम उनके बिना एक क्षण भी जी नहीं सकतें। हम सचमुच इन सब के ऋणी हैं। ऋणदाता भले ही न माने पर ईमानदार साहुकार का क्या कर्तव्य है? और सोचिए यदि सारी सृष्टि में एक भी मानव न हो तो पवन को क्या चिन्ता होगी? पानी का क्या बनेगा बिगडेगा? पर यदि हवा और पानी न हुए तो मानव मात्र क्या होगा? यह भी कभी

आपने जरा सोचा है ? हा यह निश्चित है कि हम इनके ऋण से कभी मुक्त नहीं हो सकतें। हा इतना तो कर सकते हैं इनका कम से कम उपयोग या दुरुपयोग को रोक सकते हैं अधिक से अधिक इनकी रक्षा कर सकते हैं। जिस प्रकार हवा पानी, अग्नि और वनस्पति हमारे उपयोगी है वैसे पशु भी मानव के लिये अत्यन्त उपयोगी है। पशु के चर्म से हम अपने पेरों की रक्षा करते हैं। उनके एक एक अंग मानव के लिए उपयोगी बनते हैं। यहां तक कि उनका टट्टीपैशाब भी मानव के लिए उपयोगी है पशु तो मात्र आपसे एक सहानुभूति की ही अपेक्षा रखते हैं। और उन पर दया लाये और प्राणियों की अधिक-से अधिक रक्षा करें। इस प्रकार आपने प्राणि रक्षा व जीव दया की आवश्यकता पर एक घंटा प्रवचन दिया। प्रवचन का जनता पर गहरा प्रभाव पडा।

सिन्ध देश के सुप्रसिद्ध सन्त और अहिंसा धर्म के अद्वितीय प्रचारक सन्त वासवाणी भी आपके प्रवचन में उपस्थित थे। व्याख्यान समाप्ति के बाद उन्होंने कहा—पं०मुनिश्री घासीलालजी म० के भाषण की तारीफ करने के लिए मेरे पास अल्फाज नहीं हैं उस मुकाम को बडा खुशकिस्मत समझना चाहिए जहाँ ऐसे गुणीजनों की तशरीफ आवरी हो। धन्य है ऐसे महान महात्मा को जो अपनी बेशकीमती जिन्दगी को तोकते रुहानी और मजहबी तरक्की में गुजारते हैं। इन्हीं की जिन्दगी कामयाब समझना चाहिए। इत्यादि......आपने करीब आधे घंटे तक प्रवचन दिया। प्रवचन के बाद स्थानीय श्रावकों ने थाली कटोरी तथा मेवों मिष्ठान्न की प्रभावना की। इस अवसरपर कराची का श्रीसंघ भी उपस्थित था। हैदराबाद श्रीसंघ ने उनका अच्छा स्वागत किया। संघ में वात्सल्य भाव अपूर्व था। महाराज श्री यहां आठ दिन विराजे। प्रतिदिन आपके जाहिर प्रवचन होते थे। स्कूल कॉलेजों एवं बाजार के बीच आपके प्रवचन हुए। सैकडों व्यक्तियों ने आपके प्रवचन से प्रभावित हो, शराब, मांस, जूआ एवं वैश्यागमन तथा जीव हिंसा का त्याग किया।

ता० १७-६-३५ के दिन बाजार के बीच एक विशाल पाण्डाल में आपका प्रवचन हुआ। हजारों स्त्री पुरूष आपके प्रवचन में उपस्थित हुए। व्याख्यान के बीच अहिंसा धर्म के प्रचारक सन्त वासवानीजी ने महाराज श्री को प्रशंसा करते हुए कहा—भारतभूमि सन्तों महन्तों मुनियों और महात्माओं एवं ऋषियों की तपो भूमि रही है। इसे मर्यादापुरुषोंत्तमराम महान कर्मयोगो श्रीकृष्ण, महान आत्मसाधक तथा आत्मवेत्ता श्रमण भगवान श्रीमहावीर स्वामी और महात्मा गौतम बुद्ध जैसे महान-रत्नों की अध्यात्म-क्रीडास्थली तथा आत्म-साधना भूमि होने का असाधारण गौरव प्राप्त है, इसे हम योगभूमि कहने में भी संकोच का अनुभव नहीं करेंगे। इसके कण कण में आज भी सन्त साधना का साक्षात्कार करने कराने की क्षमता है। यदि कोई इसे जाने पहचाने और माने तो ! इतिहास इस बात का साक्षि है कि एक साधारण से साधारण गृहस्थ के द्वार से लेकर बडे–बडे सम्राटों के राज–प्रासादों ने सन्तो की चरण धूलि से अपने आपको सौभाग्यशाली माना है। फलतः हमारी संस्कृति और सभ्यता पर उनकी अमिट छाप का पडना सहज स्वाभाविक है। आज हैदराबाद भी ऐसे ही सन्तों की चरण धूलि से पावन हो रहा है। पंडित प्रवर श्री घासीलालजी महाराज अनेक कष्ट सहन कर हमारे शहर में पधारे हैं। ये सन्त एक उच्च कोटि के महान योगी तपोधन एवं आत्मनिष्ठ है। संसार में सन्तों की आध्यात्मिक पूंजी ही मनुष्य को सुख दे सकती है। मुनिराज आत्मयोगी और परमज्ञानी है। इनके वैराग्य मय आध्यात्मिक जीवन को व इनकी चर्या को देखा तो मेरा मन श्रद्धावनत हो गया, इनके जीवन से मुझे यह अनुभव हुआ कि ये तन और मन दोनों से सन्त हैं। इनकी पावन वाणी से निश्चित ही संसार का कल्याण होगा ...... इत्यादि

इसके बाद अनेक विदुषी बहनो ने खडे होकर महाराज श्री को धन्यवाद दिया और कहा हमने

अपने जीवन काल में अनेक साधुओं के दर्शन किये किन्तु ऐसे महान त्यागी साधुओं को देखने का हमें यह प्रथम ही सुअवसर मिला है। इन सन्तों के आदर्श जीवन को देख कर हमें विश्वास हो गया है कि भारतवर्ष में भी महान सन्त अपनी पवित्र चरन रजसे भुमि को पावन कर रहे हैं । हमें ऐसे महान सन्तों की वाणी को सुनकर उसे जीवन में उतारने का अवश्य प्रयत्न करना होगा। तभी हमारा जीवन सफल होगा। इसके बाद आपका प्रवचन सोसाइटी के बीचमें हुआ । दिवान प्रल्हादरायजी ने आपका प्रवचन सुना । प्रवचन सुनकर बडे प्रसन्न हुए । आपकी लडकियां इन्द्रा व चन्द्रा ने उपदेश सुनकर यह प्रण किया कि हम विवाह के बाद भो जीवन में कभी दारू मांस सेवन नहीं करेंगी । और अन्य को भी छुडानेका प्रयत्न करेंगी । भोले नाम के सिन्धी भाई ने भी दारु मांस का त्याग किया । भाग्या नामके महतर ने पांच तिथियों में मांस खाने का त्याग किया जीवहिंसा एवं दारू का सदा के लिए त्याग किया । इस प्रकार आपके प्रवचन से सैकडों हैदराबादी हिन्दु मुसलमान सिन्धियों एवं सिक्खों ने दारू मांस एवं जीव हिंसा का त्याग किया ।

महाराजश्री का आषाढ वदी ५ ता० १४ जून को प्रातः विहार हुआ। हैद्राबादके सैकडों की संख्या में जैन अजैन स्त्री पुरूष कोटडीबंदर तक पहुँचाने आये । कोटडी हैदराबाद से चार मील पर पडता है । मार्ग में इंजीनीयर साहब गौरीशंकरजी को दर्शन देने के लिए आप उनके बंगले पर पधारे । आपकी महाराज श्री के प्रति बडी भक्ति रही १७०० रू० मासिक वेतन पाते हुए भी आपका रहन सहन बडा साधा सीधा था । आपकी-धर्म पत्नी भी बडी धर्म शीला थी । आपने महाराज श्री के समीप पांचों तिथि ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने का एवं रात्रि भोजन का त्याग किया ।

२१ जून को महाराज श्री कोटडी में ही बिराजे । यहां सेठ ठाकरसी भाई रामजो भाई की कोठी में आपका प्रवचन हुआ। । प्रवचन में सैंकडों व्यक्ति उपस्थित हुए । कईयों ने आप के प्रवचन से प्रभावित होकर दारू, मांस, परस्त्रीसेवन जीवहिंसा आदि दुर्व्यसनों का त्याग किया । अन्य भी विविध प्रकारके त्याग प्रत्याख्यान हुए। दुसरे दिन २२ जुन को आप भोलारी पधारे । यहां स्टेशन पर ही आप बिराजे । अहार पानी ग्रहण करनेके पश्चात् आप का प्रवचन हुआ, स्टेशन मास्टर आसकरणजी मास्टर व्रजलालजी मास्टर मोहनलालजी ने प्रवचन से प्रभावित होकर यथा शक्ति त्याग ग्रहण किये । अहमदजी नामक सिन्धी मुसलमान ने दारू, मांस जीव वध का सदा के लिए त्याग कर दिया । ओंगर के जमादार आचार नामक सिन्धो मुसलमान ने दारू मांस जीवहिंसा का सर्वदा के लिए त्याग कर दिया । इस प्रकार यहां अनेक उपकार के कार्य हुए ।

२३ जून को विहार कर आप मेटींग पधारे । आपका यह विहार तेरह मिल का हुआ । यहां भी आप स्टेशन पर ही बिराजे । स्टेशनमास्टर चेलारामजी दिवान ने एवं उनकी मातुश्री केवलबाई ने आपका प्रवचन सुना । मेटींग निवासी भी बडी संख्या में प्रवचन सुनने के लिये आये । प्रवचन सुनकर बडे प्रभावित हुए । प्रवचन समाप्ति के बाद अनेकों ने विविध प्रकार के त्याग प्रत्याख्यान किये मास्टर वासोमल सिन्धी एवं मास्टर अबदुल-रहमान लालुमल दोपनदास आदि सिन्धी मुसलमानों ने दारु मांस, एवं जीवहिंसा का त्याग किया ।

यहां से ता० २४ जून को विहार कर आप जम्पीर पधारे । आपका इस बार १२ मील का लम्बा विहार हुआ । सांप और बिच्छुओं का उपद्रव तो चलता हि रहा । यहां भी सर्वत्र सांप और बिच्छु ही दिखाई देते थे । यहां सांप की अपेक्षा बिच्छुओं का उपद्रव बहुत अधिक रहा । लेकिन देव गुरु और धर्म की कृपा से किसी भी मुनि को कष्ट नही हुआ । सारे गांव में सर्प ही सर्प दिखाई देते थे । किन्तु सन्तों का तप प्रभाव ही ऐसा था जिससे हिंसक प्राणी भी अहिसंक वृत्ति वाले बन जाते हैं । यहां पर स्टेशन पर ही बिराजे । आहार पानी के बाद आपका प्रवचन हुआ । प्रवचन में रेलवे क्वाटर्स के

सभी कर्मचारी गण अपने परिवार के साथ बडी संख्यामें उपस्थित हुए । महाराज श्री के प्रवचन से प्रभावित हो स्टेशन मास्टर श्री होतचन्दजी भोजराजजी एवं उनके परिवार वालों ने पांच तिथियों में लीलोत्री रात्रि भोजन एवं कुशील सेवन का त्याग किया । मास्टर जेठानन्द दिवान ने लोरी क्लर्क समुला ने चार महिने तक अखण्ड ब्रह्मचर्य का व्रत लिया । संन्यासी, उत्तमगिरिजी मंगलगिरीजी ने आप से अनेक धार्मिक परम्परा के विषय में प्रश्न किये । और संपूर्ण समाधान पूर्वक जवाब मिलनेसे बडे प्रभावित हुए । रावल कालीदास विसराज आदि अनेक भाईयों ने दारु, मांस एवं जीववध का त्याग किया । सायंकाल के समय चार बजे आपने अपनी मुनिमण्डली के साथ विहार कर दिया । छ मील का विहार कर आपने सूर्यास्त के समय एक पुल के नीचे ही रात्रि निवास किया । रात्रि के बारह बजे का समय था । सभी मुनिराज नीरव रात्रि में प्रगाढ निद्रा में थे । आप भी अपने ध्यान समाप्त कर शय्या पर सो ही रहे थे कि एक गोहिरे ने आप के निलाड पर फूंक मारी । जहरीलो फूंक का असर हुआ । आंखे सूज गई और सिर चकराने लगा । आपने इस अवस्था में भी रात्रिको किसी मुनि को नहीं जगाया । सोचा ये सभी मुनिराज मार्ग के श्रम से थके हुए हैं उन्हें जगाकर कष्ट देना उचित नहीं । आप बैठ गये और नवकार मंत्र का स्मरण करने लगे । कुछ क्षण के बाद तो जहर का असर कम हो गया । एक घंटे के बाद पूर्ववत स्थिति हो गई । यतो धर्मस्ततो जयः इस वाक्य की सार्थकता यहीं दृष्टिगोचर हुई । मुनिश्रीजी सो गये । रात्रि बडी शान्ति के साथ व्यतीत हुई । सूर्योदय के बाद आपने विहार कर दिया । दस मील का लम्बा विहार कर आप ता० २५ जून को बदीराबाद पाधारे । स्टेशन पर विराजे । आहार पानी ग्रहण करने के बाद आपका प्रवचन हुआ । प्रवचन में रेलवे के सभी कर्मचारी गण उपस्थित हुए । प्रवचन के पश्चात् मास्टर तेजभानदासजी आरोडा एवं भाई शिवदयालजी रिलीफबाबू ठाकुरसिंहजी आदि ने पांचो तिथियों में शीलव्रत पालने का नियम लिया । तथा लीलोत्री एवं रात्रि भोजन का त्याग किया । साथ ही साथ प्रतिवर्ष एक एक बकरा अमरिया करने का भी प्रण लिया । मोहम्मद इब्राहीम सालीमोहम्मद, जानमोहम्मद, मीठे महोम्मद करीमदाद परिदाद आदि मुसलमान भाईयों ने महिने में पांच दिन के सिवाय मांस खाने का त्याग किया । कुछ सिन्धी भाई एवं मुसलमान भाई ने यावज्जीवन के लिए मांस मदिरा एवं जीव हिंसा का त्याग किया । और भी अन्य त्याग प्रत्याख्यान हुए ।

सायं काल चार बजे के समय महाराजश्री ने विहार कर दिया । और सरोडा नामक स्टेशन पर ठहरे । यह स्टेशन सूना था । तीन चार भाई जो कि मुसलमान थे ये ही स्टेशन का संरक्षण कर रहे थे । महाराजश्री के उपदेश से इन्होंने सर्वथा मांस, मदिरा का त्याग कर दिया ।

प्रातः होते ही महाराजश्री ने विहार कर दिया । ५ मील का लंबा विहार कर आप जुंगशाही पधारे । यहां स्टेशन पर ही आप विराजे । स्टेशन मास्टर रामविलासजी ने आपका उपदेश सुना । राजा इन्डस्ट्रीज के मालिक जेठालालभाई ने बडी भक्ति की यहां कराची का श्रीसंघ महाराजश्री के दर्शन के लिए आया । जेठालाल मावजीभाई ने संघ की अच्छी सेवा की । मध्यान्ह के समय महाराजश्री का प्रवचन हुआ । प्रवचन में कारखाने के सभी मजदूर भी आये । गांव के अन्य अजैन भाई भी बडी संख्या में उपस्थित हुए । मानव जीवन की दुर्लभता पर आपका प्रवचन हुआ । प्रवचन का उपस्थित जनता पर अच्छा प्रभाव पडा, व्याख्यान के बाद अनेक मुसलमान भाईयों ने तथा सिन्धियों ने एवं कारखाने के मजदूरों ने दारु, मांस, एवं जीवहिंसा का त्याग किया तथा अन्य भी छोटे बडे प्रत्याख्यान किये यहां सांप एवं बिच्छु अधिक पाये जाते हैं । यहां के लोग देखते ही सांप बिच्छूओं को मार डालते । महाराजश्री के उपदेश से सेकडों व्यक्तियों ने सांप बिच्छू आदि प्राणियों को मारने का त्याग किया । यहां दो दिन महाराजश्री

बिराजे। बडा उपकार हुआ। सैकडों व्यक्ति अहिंसक बन गये। २६, २७ जून तक विराज कर आपने ता० २८जून को प्रातः होते ही विहार कर दिया। ८ मील का विहार कर आप रण पेठानी का पूल पधारे। अहार पानी लेने के वाद आपका प्रवचन हुआ। कुछ मुसलमान एवं सिन्धि भाईयों ने आपके उपदेश से दारु, मांस एवं जीवहिंसा का त्याग किया। सायंकाल के समय आपने विहार कर दिया। रात्रि के समय दावेची नामक गांव में ठहरे। रात्रि के समय आपका प्रवचन हुआ। सैकडों व्यक्तियों ने प्रवचन से प्रभावित होकर दारु मांस एवं जीवहिंसा का त्याग किया। कुछ व्यक्तियों ने पांच तिथियों में लिलोत्री एवं रात्रि भोजन का त्याग किया। शीलव्रत लिया। यहां से भी सायंकालको आपने विहार कर दिया और गगरगोठ पधारे। यहीं आपने रात्रि निवास किया।

२९ जून को प्रातः ही आठ मील का लम्बा विहार कर पीपली स्टेशन के समीप पुल पर पधारे। यहां भो आपका प्रवचन हुआ। करीब बोस पच्चीस सिन्धी मुसलमान भाईयों ने दारु, मांस एवं जीव हिंसा का त्याग किया। सायं काल के समय आपने अपनी मुनि मण्डली के साथ विहार कर दिया। चार मील का विहार कर लांदीका फाटक पधारे। यहीं रात में बिराजे। चोकीदार अलाऊदीन नामक मुसलमान ने दारु, मांस एवं जीवहिंसा का त्याग किया। कराचो के भाई श्रीमणिलाल बावीसी डोसो खीमचन्द भाई आदि श्रावकगण महाराजश्री के दर्शन के लिए फाटक पर पधारे। इधर उधर महाराज श्री की रात्रि में खोज को। बडी खोज के बाद एक वृक्ष के नीचे ज्ञान ध्यान रत मुनिराजों को देखा। करीब रात के दो बजे महाराजश्री के दर्शन किये। प्रातः होते ही महाराजश्री ने विहार कर दिया। सात मील का विहार कर आप मलीर पधारे। मलीर से सैकडों हजारों लोग दूर तक आपका स्वागत करने के लिये आये। बडे जयध्वनि के साथ आपने मलीर में प्रवेश किया। जब आप स्थानक तक पहुँचे तो करीब चार पांच हजार व्यक्ति एकत्र हो गये थे कराचो से भी बडी संख्या में लोग उपस्थित हुए। सारा मलीर ही कराची मय बन गया था। मध्वान्ह के समय आपका जाहिर प्रवचन हुआ। महाराजश्री के पधारने के पूर्व ही मलीर संघ ने हजारों पेंपलेटों द्वारा जनता को सूचना करवा दी "जैन मुनिमहाराज श्री घासीलालजी महाराज नो क्वेटा दिन माटे जाहिर सन्देश" इस हेडिंग के हजारों विज्ञप्ति पत्र मलीर में बांटे गये। फलस्वरूप व्याख्यान में सैकडों की संख्या में राजकर्मचारी, वकील, वेरिस्टर, रेल्वे कारखाने के अधिकारी एवं मजदूर मिलटरी विभाग के अधिकारी सैनिक, सेनापति, इंजिनियर, हवाई जहाज के अफसर दिवान आदि बडी संख्या में उपस्थित हुए। करीब चार पांच हजार जन समूह व्याख्यान में उपस्थित हुआ।

आपने अपना प्रवचन प्रारम्भ करते हुए कहा—जैन धर्म का ही नहिं किन्तु संसार के समस्त धर्मो का एक ही रहस्य—"परोपकार" स्वयं व्यासऋषि भी अठारह पुराण की रचना करने के बाद उनके रहस्यों को संक्षिप्त में बताते हुए कहते हैं—

अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्। परोपकाराय पुन्याय पापाय परपीडनम्॥

इस संसार में प्रत्येक व्यक्ति बडा बनने की लालसा रखता है। परन्तु बडप्पन का मापदण्ड है परोपकार। परोपकार विहीन कोई व्यक्ति कभी बडा नहीं बन सकता। चाहे वह कितना ही धनवान्, बलवान या बुद्धिमान क्यों न हो। दूसरों की सहायता, सेवा, सहिष्णुता और भलाई ये सद्गुण ही बडप्पन के नींव है। वैभव कोई छोटे बडे की आधार—शिला नहीं है। एक धनवान भी यदि अपना हि पेट भरता है और पेटी भरने के लिये जघन्य कृत्य करता है तो वह बडा आदमी नहीं किन्तु जघन्य आदमी है। ऐसे धनवान का जोवन निरर्थक है। पृथ्वी के लिए वह भाररूप है। दुसरा व्यक्ति निर्धन है किन्तु वह सेवाभावी है। परोपकार में निरत है वह दुनियां की नजरों में भले ही छोटा हो किन्तु वह है महान।

परोपकार विहीन व्यक्ति चाहे कहीं भी उत्पन्न हो जाये, चाहे किसी उच्च आसन पर या उच्च अधिकार पर आसीन हो जाये, वह वास्तव में बड़ा नहीं है। पर्वत के शिखर पर बैठने मात्र से ही कौवा कभी हंस नहीं बन सकता। और जमीन पर चलने मात्र से ही हंस कभी कौवा नहीं बन सकता। बडप्पन का मूल्यांकन किसी जाति, वर्ण या वर्ग से नहीं आंका जा सकता है। वह आंका जाता है परोपकार कि वृत्ति से।

सज्जनों! तुम अपने जीवन को परोपकार मय बनाओ। अपना पेट भरने के बजाय पर का पेट भरो। अपना घर भरने के बजाय किसी गरीब की झुंपडी भरदो, अनाज से गोदाम भरने के बजाय किसी भूखे के पेट में एक मुट्ठी अनाज भरो। यही बडे बनने का सही तरीका है।

सन्त तुलसीदासजी कहते हैं—

पर उपकारी पुरुष जग भाई, जिमि नवहिं सुसंपति पाई।

जिस शरीर से धर्म न हुआ, तप न हुआ परोपकार न हुआ उस शरीर को धिक्कार है ऐसे शरीर को तो पशु पक्षी भी नहीं छूते। वेद व्यासजी कहते हैं —

जीवितं सफलं तस्य यः परार्थोद्यतः सदा।

अर्थात् उसका जीवन सफल माना जाता है जो परोपकार में प्रवृत्त रहता है

इस प्रकार परोपकार के विषय पर अपना वक्तव्य रखते हुए आपने आगे कहा— इस समय क्वेटा की स्थिति अत्यन्त चिन्ता जनक है। सेकडों हजारों प्राणी भूख से पीडित होकर मृत्यु के मुख में जा रहे हैं। ऐसे अवसर पर किया गया दान बडा मूल्यवान होता है। एक राजस्थानी कवि ने ठीक ही कहा है—

अवसर खैबो, पहिरबौ, अवसर देवो दान। अवसर चुका आदमी, से आदम किण ग्यान॥

अवसर पर दिये गये दान की श्रेष्ठता सभी धर्मों में एक स्वर में गाई है। दान दुर्गति का नाश करता है। मनुष्य हृदय को विशाल और विराट बनाता है। सोई हुई मानवता को जाग्रत करता है। दान से पराया भी अपना हो जाता है। कुरान में लिखा है—

प्रार्थना (नमाज) ईश्वर की तरफ आधे रास्ते तक ले जाती है, उपवास (रोजा) हमको उनके महल के द्वार तक पहुँचा देता है और खैरात—दान से हम अन्दर प्रवेश करते हैं। एक अंग्रेजी में कहावत है—

Charity begins at home but should not be ended there.

अर्थात् दान घर से प्रारंभ होता है लेकिन् वहीं उसको समाप्त नहीं होने देना चाहिए। बाईबल में भी कहा है—

"Your left hand should not know, what your right hand gives".

तुम्हारा दाया हाथ जो देता हो उसे बाया हाथ न जानने पाये।

इस प्रकार आपने अनेक धर्मशास्त्रों के उदाहरण दे कर दान और परोपकार पर करीब डेढ घंटा तक प्रवचक दिया। प्रवचन का जनता पर बडा अच्छा प्रभाव पडा। आपके प्रवचन से प्रभावित होकर अनेक हिन्दू मुसलमान फारशी यहूदी खीस्ती आदि लोगों ने आपके प्रवचन की भूरि भूरि प्रशंसा की। अनेकों ने मांस मदिरा एवं जीववध का त्याग किया। और भी अन्य लोगों ने त्याग ग्रहण किये और बंगले में क्वेटा के दुखी जनों के लिए फंड इकठा हुआ। भूतपूर्व मजिस्ट्रेट श्री दिवान केवलराम गोवर्धनदास के बंगलेमें महाराजश्री का विराजना हुआ। स्वयं दिवान साहब और अनेक कराची के नागरिकों के साथ महाराजश्री के दर्शन के लिए आये। आपका उपदेश सुनकर बडे प्रसन्न हुए। फलस्वरूप आपने एकादशी अमावस्या पूर्णिमा को रात्रि भोजन एवं लिलोत्री का त्याग किया। आप के सुपुत्र मोहनलालजी ने सदा के लिए मांसाहार को छोड दिया। आप क्रोडपति होते हुए भी सरल निरभिमानी एवं धर्म के

प्रति विशेष रुचिवाले हैं । आपने महाराजश्री की बडी भक्ति की शय्यद नूरशाह वे वतन मलीर आसू हिन्दूंगाव अफगानो स्थान के निवासी हैं। कहा जाता है कि ये पठानों के गुरु हैं और इनके सवा लाख मुरीद अनुयायी हैं । आपने जब महाराजश्री की प्रशंसा सुनी तो आप अपने कुछ अनुयायियों के साथ महाराजश्री के पास आये । धर्मचर्चा की । आप ने महाराजश्री का प्रवचन सुन कर सदा के लिए मांस का त्याग कर दिया । आप महाराजश्री के त्याग से बडे प्रभावित हुए, और कहा आप जैसे सन्त यदि अफगानिस्तान में होते तो बडा उपकार होता । हमारी प्रार्थना है कि आप अफगानीस्तान पधारें । हम आपको किसी प्रकार का कष्ट न होने देंगे । महाराजश्री ने जैन मुनियों का आचार विचार समझाते हुए कहा वहां तक आने की असमर्थता प्रगट की । सय्यद नुरशाह के अनुयाई दाउदबलोच आसूवलीदिलजी अयूबनुरमुहम्मद आदि मुसलमान पठानों ने दारु मांस एवं जीववध का त्याग किया । मलीर में महाराजश्री का चार दिन तक बिराजना हुआ । चारो दिन आप के स्थान पर मेला सा लगता था । सैकडों व्यक्ति प्रतिदिन आपके संपर्क में आते और जीवहिंसा एवं मांसाहार का त्याग करते । मलीर संघ ने एक दिन गरीबो को मीठे चावलों का भोजन दिया ; लड्डु और गाठियों का बडी मात्रा में गरीबों में वितरण किया आषाढ शुक्ला ३ बुधवार ता० ३ जुलाई को आपने मलीर से विहार कर दिया । सैकडों व्यक्ति दूर तक आपको पहुँचाने आये । रात्रि के समय आपने एक वृक्ष के नीचे ही निवास किया ।

दुसरे दिन ४ जुलाई को डीगरोड पधारे । यहां भी खूब धर्मध्यान हुआ । सायं काल के समय आपने विहार कर दिया । कराची कैंट (सदर) के समीप एक बंगले में आपके निवास किया । कराची से सैकडों भाई आपके दर्शनार्थ आये । रात्रि में आपका प्रवचन हुआ । प्रातः होते ही आप कराचीनगर की ओर प्रस्थान कर दिया । प्रातः काल होने तक तो कराची के हजारों भावुक नागरिक आपके स्वागत के लिए बंगले पर पधार गये थे । मंगलगान के साथ आप चलने लगे । विहार का दृश्य बडा अद्भूत था । कराची के स्वयं सेवक गण दोनों तरफ सैनिक की तरह बाअदब से रंगी बिरंगी झडियां लेकर चल रहे थे । लाल पर्दे पर सुवर्ण अक्षरों से लिखे गये सुभाषित अक्षर सब के लिए आकर्षक बन रहे थे । बीच बीच में जयघोष के शब्द से आकाश गूंज रहा था । कराची नगर में प्रवेश किया तो हजारों का जन समूह स्वागत जुलूस में सम्मिलित हो गया । नगर के हर चोराहे पर लोगों के झुण्ड इस दृश्य को देख रहे थे । महाराजश्री ने अपनी सन्त मण्डली के साथ विशाल जनसमूह को अभिवादन स्वीकार करते हुए नगर के मुख्य मुख्य बाजार से होकर करीब दस बजे के समय उपाश्रय में प्रवेश किया । उपाश्रय के बाहर जनता को बेठने के लिये एक विशाल पण्डाल बनाया गया था । जनता से सारा पण्डाल खचोखच भर गया । महाराजश्री अपनी सन्त मण्डली के साथ पाट पर बिराज गये । मधुर कण्ठ के साथ आपने सिद्ध भगवानकी स्तुति प्रारंभ की तो अन्य सन्तों ने एवं भाविक जनता ने भी साथ दिया । मंगलगान के बाद प्रार्थना के महत्व को समझाते हुए आपने कहा प्रार्थना आत्मा का संगीत है । आत्मा को परमात्मा का प्रकाश देने वाली प्रार्थना है । प्रार्थना का हमारे जीवन में वही स्थान है जो मछली के लिये पानी का । मछली का जीवन ही पानी हैं । जिस प्रकार शरीर के लिए भोजन आवश्यक है उसी तरह आत्मा के लिए प्रार्थना आवश्यक है । यदि एक दिन भोजन न मिले तो गुलाब की तरह हंसता हुआ चेहरा भी मुर्झा जायगा । भोजन शरीर की खुराक है तो प्रार्थना आत्मा की खुराक है । विश्व के प्रत्येक धर्म में प्रार्थना को बहुत अधिक महत्व दिया है । यद्यपि धर्म के दूसरे सिद्धान्तों में धर्म के बीच मतभेद की गहरी खाई है फिर भी प्रभु प्रार्थना के सम्बन्ध में प्रायः सभी धर्मों का एक स्वर रहा है । हिन्दु धर्म के एक सन्त कहते हैं "राम से अधिक राम कर नामां" अर्थात् राम से भी अधिक राम के नाम में शक्ति

है। हिन्दु और मुसलमानों में धार्मिक मतभेद पाये जाते हैं किन्तु प्रभुप्रार्थना के सम्बन्ध में उनका मतैक्य मिलेगा। उनकी नमाज क्या है? वह भी एक प्रकार की प्रार्थना ही है। यद्यपि उनकी भाषा अरबी है। उस पर मुसलिम संस्कृति का प्रभाव है फिर भी शब्द और शैली को हटा कर उनके अन्तस्थल में आप प्रवेश करेंगे तो वहां भी आपको ईश्वर के प्रति उमडता अनुराग ही दिखाई देगा।

ईसाई धर्म में तो प्रेयर– प्रार्थना का बहुत अधिक महत्व दिया गया है। रविवार के दिन प्रायः ईसाई गिरजाघर में जाकर शान्त मुद्रा में प्रार्थना करते हैं। जैन दर्शन यद्यपि आत्मा में ही परमात्मा की सत्ता स्वीकार करके चला है। ईश्वर का सृष्टिकर्तृत्व तो उसे स्वीकार भी नहीं है फिर भी वह कर्ता नहीं किन्तु प्रेरक के रूप में जैन दर्शन ने ईश्वर की उपासना की है। और इसीलिए चतुर्विंशतिस्तव– स्तुति के रूप में अरिहंत और सिद्ध भगवान की प्रार्थना का विधान करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रार्थना के महत्व को सभी धर्म एक स्वर से स्वीकार करते हैं। प्रार्थना के शब्द यद्यपि छोटे होते हैं किन्तु उसकी शक्ति महान होती है। बड का बीज यद्यपि छोटा होता है किन्तु उसी छोटे से बीज पर मिट्टी पड जाती है और उसे पानी का सिंचन मिलता है तो नन्हा सा बीज एक विशाल वटवृक्ष बन जाता है। यदि प्रभु नामका बीज अपने हृदय की भूमि में बोया जाता है और उस पर निरहंकारिता की मिट्टी डालकर प्रेम के पानी से सिंचन किया जाय तो एक दिन विराट ईश्वरीयता अवश्य फूट निकलेगी आपके मन में कण कण में ईश्वरत्व का शान्त तेजमय शुभ प्रकाश फैल जायगा। आप स्वयं आत्मा में एक ज्योति का दर्शन करेंगे। आप स्वयं ईश्वर बन जाएंगे। प्रभु का नाम अशान्त मन के लिए प्रशान्त सागर के लिए नौका है। संसार के अथाह सागर में दुःख और अशान्ति की आग में जब आपकी आत्मा डूब रही होगी तब आप प्रभु नाम की नौका पर आरूढ हो जाएं। वह छोटी सी नौका आपको इच्छित सुख और शान्ति के तट पर अवश्य पहुँचा देगी। इस प्रकार प्रार्थना के महत्व व उसकी आवश्यकता पर महाराज श्री ने करीब एक घंटे तक प्रवचन दिया। प्रवचन का उपस्थित जनता पर बडा अच्छा प्रभाव पडा। अजैन जनता आप के धर्म निरपेक्ष प्रवचन से बडी प्रसन्नता का अनुभव करने लगी।

पण्डितरत्न श्री घासीलालजी महाराज के प्रवचन के पश्चात् संघ के प्रमुख ने खडे होकर संघ की ओर से महाराज श्री का स्वागत किया तथा उनकी प्रभावक प्रवचन शैली और समाज को जगाने की भावना की सराहना की।

प्रत्युत्तर देते हुए महाराज श्री ने कहा–भगवान श्री महावीर स्वामी के आदेशानुसार उपदेश देना और जनता की धार्मिक भावना में वृद्धि करना हमारा मुख्य ध्येय है। अहिंसा धर्म के महान प्रचारक भगवान श्रीमहावीर स्वामी के उपदेश पर चलने से हमारी और राष्ट्र की उन्नति होगी यह निस्संशय है। महाराज श्री के पदार्पण से कराची की धर्मामृत–पिपासु जनता को इतना हर्ष हुआ कि जिसका प्रकटीकरण शब्दों में नहीं हो सकता उनकी चिरकालीन लालसा पूरी हुई। सर्वत्र आनन्द छा गया।

महाराज श्री की प्रकृष्ट प्रतिभा तथा अमृतवाणी से यहां की जनता परिचित होने लगी। धीरे धीरे व्याख्यान में हजारों की संख्या में श्रोताओं का जमघट होने लगा। बाहर से भी दर्शनार्थी श्रावकों का ताता लग गया। कराची का श्री संघ भी बडे उत्साह के साथ आगन्तुक श्रावकों का स्वागत करने लगा। दिन रात धर्म का ठाट लगा रहता। सभी प्रकार की जनता आपके उपदेशों को सुनकर कृतार्थ होती थी। दोनों समय आपके व्याख्यान होने लगे व्याख्यान में सुख विपाक एवं उपासक दशांग सूत्र का अत्यन्त सरल भाषा में स्पष्टीकरण किया जाता था।

प्रातः आठ बजे पं. मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराज अपनी ओजस्वो भाषा में व्याख्यान फरमाते थे। नवयुवकों को धर्म की ओर प्रवृत्त करने में उनको बडी लगन थी। साढे आठ बजते ही पं. महाराज श्री व्याख्यान मण्डप में पधारते। उस समय वहां के वातावरण में सहसा स्फूर्ति समा हो जाती थी। प्रति दिन प्रारंभ में आप प्रार्थना करते उसके पश्चात् उपाशक दसांग सूत्र फरमाते थे। भगवान श्रीमहावीर स्वामी के दश श्रावकों में आनन्द श्रावक भी एक श्रावक था। उनका चरित्र उदात्त, तेजस्वो एवं आदर्श था। जब आनन्द श्रावक का वर्णन करते तब श्रोतागण बडे सावधान हो कर सुनते। आनन्द श्रावक के वर्णन का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा। इसके बाद भावनाधिकार पर वासुदेव श्री कृष्ण की चौपाई फरमाते थे। श्री कृष्ण वासुदेव की कथा भी अत्यन्त भाव-पूर्ण हृदय को हिला देने वाले और मर्मस्पर्शी शब्दों से आप सुनाते थे। महाराज श्री के व्याख्यानों में धर्म और व्यवहार का अपूर्व सामंजस्य दृष्टिगोचर होता था। फलस्वरूप बहुसंख्यक अजैन, प्रतिष्ठित सज्जन वकिल, डॉक्टर, ऑफिसर प्रोफेसर इंजिनीयर दिवान, सिन्धी, खिस्ती, फारसी, ब्रह्मसमाजी, आर्यसमाजी तथा अन्य शिक्षितवर्ग व्याख्यानों में उपस्थित होने लगे।

प्रत्येक रविवार को आपका जाहिर प्रवचन होता था। जैन मन्दिर के विशाल प्रांगन में ब्रह्म समाज के नव विधान भवन में, आर्य समाज के सुशीला भवन में, थियोसोफीकलसोसाईटी, खलकदीना होल, आदि बडे बडे स्थानों में आपके जाहिर प्रवचन होने लगे। आपके जाहिर प्रवचन से हजारों व्यक्ति, जैन धर्म के सिद्धान्त से परिचित एवं प्रभावित हुए। पंडित महाराजश्रीके साथ उस समय अन्य आठ मुनिराजभी थे। उनके नाम ये थे—श्रीमनोहरलालजी महाराज, तपस्वी श्रीसुन्दरलालजी महाराज पं. श्री समीरमलजी महाराज प्रियवक्ता पं. श्रीकन्हैयालालजी महाराज लघु तपस्वी श्रीकेशुलालजी महाराज, श्री मंगलचन्दजी महाराज लघु, तपस्वी श्रीमांगीलालजी महाराज नव दीक्षित श्रीविजयचन्दजी महाराज आदि ठाना आपकी सेवा में थे। उनमें तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज एवं तपस्वी श्रीकेशुलालजी महाराज तपस्वीश्री मांगीलालजी महाराज जैसे महान तपस्वी सन्त भी आपके साथ थे। तपस्वी मुनियों ने चातुर्मास के बीच अपनी लम्बी तपश्चर्या प्रारंभ कर दी। तपस्वियों की तपस्या का स्थानीय जनता पर बड़ा अच्छा प्रभाव पडा। प्रतिदिन तपस्वी मुनिराजों के दर्शन के लिये हजारों जैन अजैन लोग आने लगे। जिन में फारसी, यहुदी मुसलमान, खिस्ती, सिन्धी आदि जन प्रमुख थे। श्रद्धा से तपस्वी मुनि के चरणों में भेट रखने के लिए कोई मिठाई कोई छाता तो कोई नारियल लाता तो कोई पुष्प एवं पुष्प की माला लाता तो कोई रुपया नोट लाता था। महाराज श्री उन्हें जब जैन मुनियों का आचार सुनाते तो वे लोग बडे आश्चर्य चकित होजाते थे और तपस्वि के त्याग से प्रभावित हो कर वे उनके सदा के लिए परम भक्त बन जाते थे। अजैन लोग मुनिराजों को भगवान का अवतार मानने लगे। प्रतिदिन हजारों व्यक्ति शराब, मांस, एवं जीववध का तपस्वीजी के पास आकर उनके पास त्याग करते। सेंकड़ों भावुक सिन्धिभाईयों ने जैन धर्म स्वीकार कर लिया बलूचिस्तान, अफगानिस्तान, के सैकडों मुसलमानों ने महाराज श्री के प्रवचन से प्रभावित होकर दारु, मांस एवं जीववध का त्याग किया। प्रायः समो सिन्ध देश में जैन धर्म की महिमा फैल गई।

पर्यूषण पर्व में धर्माराधन

संसार के हर पर्व आमोद-प्रमोद के प्रसंग लेकर आता है। पर्युषण पर्व भी आमोद प्रमोद के ही पर्व है अन्यान्य पर्वो में जहां आमोद प्रमोद के साधन भौतिक पदार्थ बनते हैं वहां पर्युषणपर्व आन्तरिक और शाश्वत आनन्द का स्त्रोत बहाता है बाहर के पर्व व्यक्ति के लिए क्षणिक आमोद प्रमोद

के कारण बनते है जबकि आध्यात्मिक पर्व व्यक्ति को बाहर से भीतर की ओर मोडता है । एक विलक्षण प्रकाश देता है, जिससे व्यक्ति स्वयं को देख सके। जिसको आत्म दर्शन का स्वाद आ जाता है, वह बाह्य जगत में नहीं भटकता। सिनेमा का आनन्द वह लेता है जिसके पास गृह आनन्द नहीं है, घर में आनन्द वह लेता है जिसके पास योगानन्द व आत्मानन्द नहीं है। आत्मानन्दको पा लेने के बाद संसार के समस्त आनन्द नगण्य और फीके लगते हैं। जो व्यक्ति आनन्दको पा लेता हैं वह कभी बाह्य आनन्द की खोज में नहीं भटकता पं. मुनि श्री के प्रति दिन के धर्मोपदेश से पर्युषण महापर्व में आशातीत धर्म ध्यान हुआ। पर्युषणों के दिनों में व्याख्यान में इतनी अधिक भीड होने लगी कि व्याख्यान पंडाल में जनता को खडे रहने की भी जगह नहीं रहती थी। फलस्वरूप एक ही समय में तीन मुनिराजों को तीन स्थानों पर अलग अलग व्याख्यान देने पडे फिर भी सैकडों नर नारीगण स्थानाभाव के कारण व्याख्यान का लाभ से वंचित रह जाते थे। वे दर्शन करके ही सन्तोष का अनुभव करने लगे।

प्रतिदिन अन्तगढ सूत्र वांचन होने लगा। मध्यान्ह के समय भी महाराज श्री के प्रवचन होते थे। श्रावक श्राविकाओं में भी तपस्या अच्छी हुई, बेले तेले से लगाकर नौ दश तपस्याओंके कई थोक हुए। छोटी छोटी अनेक बालाओं ने भी बडी हिम्मत और उत्साह के साथ तपस्या की। भाईयों ने पचरंगी तपस्या भी की। इस प्रकार पर्युषण पर्व के दिन बडे आनन्द और उत्साह के साथ सम्पन्न हुए।

लघु तपस्वी श्री मांगीलालजी महाराज का पारणा

तपस्वी जी ने इकसठ दिन की सुदीर्घ तपस्या की। तपस्या की समाप्ति के दिन सर्वत्र नगर में उत्साह नजर आता था। भाद्रपद शुक्ला एकादशी ता० ९–९–१९३५ के दिन तपस्वी जी ने सुखरुप पारना किया। पारने के दिन करीब ३०० व्यक्तियों ने भी विविध प्रकार की तपस्या का पारणा किया। नगर के हजारों अनाथ अपंग एवं दुखी जनों को मीठा भोजन दिया। नगर के समस्त कसाई खाने उस दिन बन्द रखे गये थे। फलस्वरूप हजारों पशुओं को अभयदान मिला। तपस्या की पूर्णाहुति के दिन समस्त जैनों ने अपना कारोबार बन्द रखा। उस दिन हजारों सामायिके हुई। श्रावकों की तरफ से विविध प्रकार की प्रभावनाएँ हुई। महाराज श्री का जाहिर प्रवचन भी हुआ। महाराज ने तप की महत्ता पर अपना ओजस्वी प्रवचन दिया। फलस्वरूप अनेकों ने व्रत प्रत्याख्यान लिये। सैकडों सिन्धी भाईयों ने मांसाहार का त्याग किया। कुछ व्यक्तियों ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत लिया। इस प्रकार श्री लघु तपस्वीजी का पारना अत्यन्त उत्साह एवं धर्म प्रवृत्ति के साथ पूर्ण हुआ। इधर महान तपस्वी श्रीसुन्दरलालजी महाराज की तपश्चर्या तो चल हो रही थी। इस तपश्चर्या का जनता पर व्यापक प्रभाव पडा। तपश्चर्या की ज्यों ज्यों प्रसिद्धि बढती गई त्यों त्यों जनता भी बडी संख्या में तपस्वीजी के दर्शनार्थ आने लगी। यूरोपियन मिलटरीऑफिसरगोरे एवं भारतीय सैनिक सुशिक्षित नागरिक नगर के प्रतिष्ठित सज्जन राज्यकर्मचारी गण प्रतिदिन सैकडों की संख्या में तपस्वीजी के दर्शनार्थ आते और उनके त्याग से प्रभावित हो कुछ न कुछ जीवनोपयोगी त्याग ग्रहण करते।

अफगानीस्तान के राजदूत मूसाखांजी दर्शन के लिए आये। महान तपस्वीजी की दीर्घ तपश्चर्या और जैन साधुओ के अचार को देख कर बडे प्रभावित हुए। महाराजश्री का व्याख्यान भी सुना। व्याख्यान सुनकर बडे प्रसन्न हुए। व्याख्यान श्रवण के बाद मूसाखान ने बडे अदब से कहा–स्वामीजी! हमारा बादशाह फकीरों से बडा प्रेम करता है। उनकी हर तरह से इज्जत करता है आप जैसे त्यागी महात्मा की हमारे देश के लिए बडी जरूरत है। यदि आप अफगानिस्तान पधारेंगे तो आपको किसी प्रकार की भी तकलीफ नहीं होने देंगे। इस पर महाराज श्री ने कहा–हम लोग जैन साधु हैं। हम हमेशा

पैदल ही चलते हैं। पैरों में जूता कभी नहीं पहनतें और न कच्चा पानी का ही इस्तेमाल करतें। पास में पैसा भी नहीं रखतें। औरत मात्र को नहीं छूतें। हमारे खाने पीने के भी बडे कडे नियम हैं। इन सब नियमों के कारण हम अफगानीस्तान जैसे मुल्क में पहुँच नहीं सकतें।" महाराजश्री के मुख से जैन साधु का आचार सुना तो वे अचंभे में पड गये। और कहा—आप जैसे कठोर व्रत का पालन करने वाले फकीरों को मैं पहली वार ही देख रहा हूँ।" अफगानिस्तान के बादशाह के चाचा मुरादअली ने आप श्री का प्रवचन सुना। प्रवचन से आप बडे प्रसन्न हुवे व्याख्यान समाप्ति के बाद मुरादेअलि ने महाराजश्री से कहा—" आज से मैं किसी भी जानवर को नहीं मारूंगा। कभी गोस्त नहीं खाउंगा। और न शराब ही पीउंगा। आपकी नसीहत को सदा याद रखूंगा। इस प्रकार अनेक प्रभावशाली व्यक्ति आपके प्रवचन में आने लगे और उपदेश सुनने लगे।

ता० ११–७–३५ से प्रारम्भ की हुई महान तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज की तपश्चर्या चल ही रही थी। यह तपश्चर्या कब तक चलेगी यह अनिश्चित था। श्रावक गण चाहते थे कि तपश्चर्या की पूर्णाहुति का दिन यदि निश्चित हो जाय तो इस शुभ अवसर पर अधिक से अधिक परोपकार के कार्य किये जाय। इसी भावना से कराची श्री संघ के आगेवान श्रावक एकत्र हुए और महाराजश्री के पास आकर प्रार्थना करने लगे कि तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज की तपश्चर्या को पूर्णाहुति का दिन यदि निश्चित हो जाय तो अत्युतम होगा। इस अवसर पर विशिष्ट उपकार को सम्भावना है। पत्र पत्रिकाओं द्वारा भारत के कोने कोने में तपस्वीजी के तपश्चर्या की पूर्णाहुति की सूचना कर देंगे ताकि सभी लोग इस पुण्य अवसर का लाभ लेंगे और आरंभ समारंभ का त्याग करेंगे तो अधिक उपकार होगा। इस पर महाराज श्री ने कहा—तपस्या तो कर्मों की निर्जरा के लिए की जाती है, आडम्बर के लिए नहीं। दूसरी बात तपश्चर्या की पूर्णाहुति की सूचना पत्र पत्रिकाओं द्वारा करेंगे तो बाहर के सज्जन बडी सख्या में आएँगे इससे आप पर खर्च का बोझ अधिक पडेगा। मैं नहीं चाहता कि आप लोग किसी प्रकार के आर्थिक संकट में पडे। इस पर श्रावकों ने कहा हमारे पूर्व पुण्योंदय से ही हमें इस सुअवसर की प्राप्ति हुई है। उसी दिन हम कराचीके समस्त कसाई खाने बन्ध रखवाना चाहते हैं। मेहता जमशेदजी कराची में एक प्रसिद्ध एवं प्रभावशाली व्यक्ति है, सन्तों के परम भक्त भी है धर्म के अच्छे अनुरागी है उनका कहना सारा शहर मानता है। उन्होंने आपके दर्शन करके कहा था कि जब तपस्या का पूर होगा ? तब पांच सात दिन पहले हमें सुचना मिल जाय तो उस दिन समस्त नगर में विश्व शान्ति की प्रार्थना का आयोजन होगा। एवं उस दिन समस्त नगर में शराब बन्दी, हिंसा एवं मांस सेवन का त्याग की प्रवृत्ति का विशिष्ट प्रकार से प्रचार करेंगे। श्री संघ ने पुनः प्राथना की कि इस काम का हमारे ऊपर किसी प्रकार का भार नहीं होगा। और न हम अर्थ के लिए किसी पर दबाव हि डालेंगे न हम किसी को इस काम के लिए लाचार ही करेंगे और न लाचार ही होंगे। महान तपस्या की प्रसिद्धि से कितना उपकार हो रहा है और होगा यह तो आप जान ही रहे हैं। प्रतिदिन हजारों की संख्या में सिन्धीभाई बहने दर्शनार्थ आते हैं और दारु, मांस, व जीवहिंसा आदि का अत्यन्त श्रद्धाके साथ त्याग कर जाते हैं।

श्री संघ के अत्याग्रह वश महाराजश्री ने तपस्या के पारतो का दिन खोल दिया। आसोज सुद ११ मंगलवार ता० ८–१०–१९३५ के दिन तपस्या की पूर्णाहुति का दिन निश्चित हुआ। तपस्या का दिन खुलने से स्थानीय संघ में जो हर्ष हुआ उसका वर्णन शब्दों में नहीं हो सकता। संघ ने हर्षावेग में महाराजश्री की एवं तपस्वी जी की जय जय कार को। कराची श्री संघ ने तपमहोत्सव की कुंकुम पत्रिकाएँ छपवा दी और समस्त ग्राम नगरों में भेज दी! आमंत्रण पत्रिका का सार भाग इस प्रकार था—

के कारण बनते है जबकि आध्यात्मिक पर्व व्यक्ति को बाहर से भीतर की ओर मोडता है । एक विलक्षण प्रकाश देता है, जिससे व्यक्ति स्वयं को देख सके । जिसको आत्म दर्शन का स्वाद आ जाता है, वह बाह्य जगत में नहीं भटकता । सिनेमा का आनन्द वह लेता है जिसके पास गृह आनन्द नहीं है, घर में आनन्द वह लेता है जिसके पास योगानन्द व आत्मानन्द नहीं है । आत्मानन्दको पा लेने के बाद संसार के समस्त आनन्द नगण्य और फीके लगते हैं । जो व्यक्ति आनन्दको पा लेता हैं वह कभी बाह्य आनन्द की खोज में नहीं भटकता पं. मुनि श्री के प्रति दिन के धर्मोपदेश से पर्युषण महापर्व में आशातीत धर्म ध्यान हुआ । पर्युपणों के दिनों में व्याख्यान में इतनी अधिक भीड होने लगी कि व्याख्यान पंडाल में जनता को खडे रहने की भी जगह नहीं रहती थी । फलस्वरूप एक ही समय में तीन मुनिराजों को तीन स्थानों पर अलग अलग व्याख्यान देने पडे फिर भी सैकडों नर नारीगण स्थानाभाव के कारण व्याख्यान का लाभ से वंचित रह जाते थे । वे दर्शन करके ही सन्तोष का अनुभव करने लगे ।

प्रतिदिन अन्तगढ सूत्र वांचन होने लगा । मध्यान्ह के समय भी महाराज श्री के प्रवचन होते थे । श्रावक श्राविकाओं में भी तपस्या अच्छी हुई, वेले तेले से लगाकर नौ दश तपस्याओंके कई थोक हुए । छोटी छोटी अनेक बालाओं ने भी बडी हिम्मत और उत्साह के साथ तपस्या की । भाईयों ने पचरंगी तपस्या भी की । इस प्रकार पर्युषण पर्व के दिन बडे आनन्द और उत्साह के साथ सम्पन्न हुए ।

लघु तपस्वी श्री मांगीलालजी महाराज का पारणा

तपस्वी जी ने इकसठ दिन की सुदीर्घ तपस्या की । तपस्या की समाप्ति के दिन सर्वत्र नगर में उत्साह नजर आता था । भाद्रपद शुक्ला एकादशी ता० ९-९-१९३५ के दिन तपस्वी जी ने सुखरुप पारना किया । पारने के दिन करीब ३०० व्यक्तियों ने भी विविध प्रकार को तपस्या का पारणा किया । नगर के हजारों अनाथ अपंग एवं दुखी जनों को मीठा भोजन दिया । नगर के समस्त कसाई खाने उस दिन वन्द रखे गये थे । फलस्वरूप हजारों पशुओं को अभयदान मिला । तपस्या की पूर्णाहुति के दिन समस्त जैनों ने अपना कारोबार बन्द रखा । उस दिन हजारों सामायिके हुई । श्रावकों की तरफ से विविध प्रकार की प्रभावनाएँ हुई । महाराज श्री का जाहिर प्रवचन भी हुआ । महाराज ने तप की महत्ता पर अपना ओजस्वी प्रवचन दिया । फलस्वरूप अनेकों ने व्रत प्रत्याख्यान लिये । सैकडों सिन्धी भाईयों ने मांसाहार का त्याग किया । कुछ व्यक्तियों ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत लिया । इस प्रकार श्री लघु तपस्वीजी का पारना अत्यन्त उत्साह एवं धर्म प्रवृत्ति के साथ पूर्ण हुआ । इधर महान तपस्वी श्रीसुन्दरलालजी महाराज की तपश्चर्या तो चल ही रही थी । इस तपश्चर्या का जनता पर व्यापक प्रभाव पडा । तपश्चर्या की ज्यों ज्यों प्रसिद्धि बढती गई त्यों त्यों जनता भी बडी संख्या में तपस्वीजी के दर्शनार्थ आने लगी । यूरोपियन मिलटरीऑफिसरगोरे एवं भारतीय सैनिक सुशिक्षित नागरिक नगर के प्रतिष्ठित सज्जन राज्यकर्मचारी गण प्रतिदिन सैकडों की संख्या में तपस्वीजी के दर्शनार्थ आते और उनके त्याग से प्रभावित हो कुछ न कुछ जीवनोपयोगी त्याग ग्रहण करते ।

अफगानीस्तान के राजदूत मूसाखांजी दर्शन के लिए आये । महान तपस्वीजी की दीर्घ तपश्चर्या और जैन साधुओ के अचार को देख कर बडे प्रभावित हुए । महाराजश्री का व्याख्यान भी सुना । व्याख्यान सुनकर बडे प्रसन्न हुए । व्याख्यान श्रवण के बाद मूसाखान ने बडे अदब से कहा—स्वामीजी ! हमारा बादशाह फकीरों से बडा प्रेम करता है । उनकी हर तरह से इज्जत करता है आप जैसे त्यागी महात्मा की हमारे देश के लिए बडी जरूरत है । यदि आप अफगानिस्तान पधारेंगे तो आपको किसी प्रकार की भी तकलीफ नहीं होने देंगे । इस पर महाराज श्री ने कहा—हम लोग जैन साधु हैं । हम हमेशा

पैदल ही चलते हैं। पैरों में जूता कभी नहीं पहनते और न कच्चा पानी का ही इस्तेमाल करते। पास में पैसा भी नहीं रखते। औरत मात्र को नहीं छूते। हमारे खाने पीने के भी बड़े कड़े नियम हैं। इन सब नियमों के कारण हम अफगानीस्तान जैसे मुल्क में पहुँच नहीं सकते।" महाराजश्री के मुख से जैन साधु का आचार सुना तो वे अचंभे में पड गये। और कहा—आप जैसे कठोर व्रत का पालन करने वाले फकीरों को मैं पहली बार ही देख रहा हूँ।" अफगानिस्तान के बादशाह के चाचा मुरादअली ने आप श्री का प्रवचन सुना। प्रवचन से आप बडे प्रसन्न हुवे व्याख्यान समाप्ति के बाद मुरादेअलि ने महाराजश्री से कहा—" आज से में किसी भी जानवर को नहीं मारूंगा। कभी गोस्त नहीं खाउंगा। और न शराब ही पीउंगा। आपकी नसीहत को सदा याद रखूंगा। इस प्रकार अनेक प्रभावशाली व्यक्ति आपके प्रवचन में आने लगे और उपदेश सुनने लगे।

ता० ११-७-३५ से प्रारम्भ की हुई महान तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज की तपश्चर्या चल ही रही थी। यह तपश्चर्या कब तक चलेगी यह अनिश्चित था। श्रावक गण चाहते थे कि तपश्चर्या की पूर्णाहुति का दिन यदि निश्चित हो जाय तो इस शुभ अवसर पर अधिक से अधिक परोपकार के कार्य किये जाय। इसी भावना से कराची श्री संघ के आगेवान श्रावक एकत्र हुए और महाराजश्री के पास आकर प्रार्थना करने लगे कि तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज की तपश्चर्या को पूर्णाहुति का दिन यदि निश्चित हो जाय तो अत्युतम होगा। इस अवसर पर विशिष्ट उपकार को सम्भावना है। पत्र पत्रिकाओं द्वारा भारत के कोने कोने में तपस्वीजी के तपश्चर्या की पूर्णाहुति की सूचना कर देंगे ताकि सभी लोग इस पुण्य अवसर का लाभ लेंगे और आरंभ समारंभ का त्याग करेंगे तो अधिक उपकार होगा। इस पर महाराज श्री ने कहा–तपस्या तो कर्मों की निर्जरा के लिए की जाती है, आडम्बर के लिए नहीं। दूसरी बात तपश्चर्या की पूर्णाहुति की सूचना पत्र पत्रिकाओं द्वारा करेंगे तो बाहर के सज्जन बडी सख्या में आएँगे इससे आप पर खर्च का बोझ अधिक पडेगा। मैं नहीं चाहता कि आप लोग किसी प्रकार के आर्थिक संकट में पडे। इस पर श्रावकों ने कहा हमारे पूर्व पुण्योंदय से ही हमें इस सुअवसर की प्राप्ति हुई है। उसी दिन हम कराचीके समस्त कसाई खाने बन्ध रखवाना चाहते हैं। मेहता जमशेदजी कराची में एक प्रसिद्ध एवं प्रभावशाली व्यक्ति है, सन्तों के परम भक्त भी है धर्म के अच्छे अनुरागी है उनका कहना सारा शहर मानता है। उन्होंने आपके दर्शन करके कहा था कि जब तपस्या का पूर होगा? तब पांच सात दिन पहले हमें सुचना मिल जाय तो उस दिन समस्त नगर में विश्व शान्ति की प्रार्थना का आयोजन होगा। एवं उस दिन समस्त नगर में शराब बन्दी, हिंसा एवं मांस सेवन का त्याग की प्रवृत्ति का विशिष्ट प्रकार से प्रचार करेंगे। श्री संघ ने पुनः प्रार्थना की कि इस काम का हमारे ऊपर किसी प्रकार का भार नहीं होगा। और न हम अर्थ के लिए किसी पर दबाव हि डालेंगे न हम किसी को इस काम के लिए लाचार ही करेंगे और न लाचार ही होंगे। महान तपस्या की प्रसिद्धि से कितना उपकार हो रहा है और होगा यह तो आप जान ही रहे हैं। प्रतिदिन हजारों की संख्या में सिन्धीभाई बहने दर्शनार्थ आते हैं और दारु, मांस, व जीवहिंसा आदि का अत्यन्त श्रद्धाके साथ त्याग कर जाते हैं।

श्री संघ के अत्याग्रह वश महाराजश्री ने तपस्या के पारतो का दिन खोल दिया। आसोज सुद ११ मंगलवार ता० ८-१०-१९३५ के दिन तपस्या की पूर्णाहुति का दिन निश्चित हुआ। तपस्या का दिन खुलने से स्थानीय संघ में जो हर्ष हुआ उसका वर्णन शब्दों में नहीं हो सकता। संघ ने हर्षावेग में महाराजश्री की एवं तपस्वी जी की जय जय कार की। कराची श्री संघ ने तपमहोत्सव की कुंकुम पत्रिकाएँ छपवा दी और समस्त ग्राम नगरो में भेज दी। आमंत्रण पत्रिका का सार भाग इस प्रकार था—

हमारे अहोभाग्य से पूज्य श्री हुकमीचन्दजी महाराज की संप्रदाय के पण्डित प्रवर साहुछत्रपति कोल्हापुर राज्य गुरु श्री जैन शास्त्राचार्य पद भूषित पं. श्री घासीलालजी महाराज साहित्यप्रेमी मनोहरलालजी महाराज योगनिष्ठघोर तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज शास्त्राभ्यासी मुनिश्री समीरमलजी महाराज, प्रिय व्याख्यानी श्री कन्हैलालज़ी म० तपस्वीश्री केशवलालजी महाराज, श्री मंगलचन्दजी महाराज लघु तपस्वीश्री मांगीलालजी म· नवदीक्षित श्री विजयचन्दजी म० आदि ठाना ९ का चातुर्मास है। पंडित प्रवर श्रीघासीलालजी महाराज के ओजस्वी व्यख्यान में नित्य जैन अजैन जनता खूब ही उत्कंठित भाव से आ-आकर लाभ ले रही है। धर्म ध्यान का ठाट लग रहा है।

आज हमें लिखते हुए अत्यन्त हर्ष होता है की तपस्वी श्रीसुन्दरलालजी महाराज ने अषाड सुदी १० गुरुवार ता० ११-७-३५ से उपवासों की तपश्चर्या प्रारंभ की थी जिसका पूर मिति आश्विनशुक्ला ११ मंगलवार ता० ८ १० ३५ को होगा। एतदर्थ आपश्री संघ की सेवामें निवेदन है कि आप इस महान् कल्याण कारी प्रसङ्ग पर सकुटुम्ब पधार कर हमें सेवा करने का लाभ दें। इस प्रसंग पर बाहर से अनेक राज्याधिकारियों के पधारने की संभावना है। इस शुभ अवसर को सफल बनाने के लिए तपस्वीजी ने इस प्रकार आदेश फरमाया है कि संसार की, देश की, राज्य की व अपनी अपनी शान्ति के लिए ता० ८ १० ३५ के दिन अगता (पाखी) रक्खा जावे। अगते के दिन निम्न नियमों का पालन करें (१) कम से कम एक घंटे तक सामूहिक प्रार्थना एवं भजन कीर्तन करें। (२) मदिरापान मांसभक्षण शिकार व जीवहिंसा न करें। (३) ब्रह्मचर्य का पालन करें (४) सावद्य (हिंसात्मक) व्यापार बन्द रख कर धर्मध्यान करें। (५) बछडे आदि को दुध की अन्तराय न दें अर्थात् उस दिन दुधालू जानवर को न दुह कर बछडों को दुध पीने दिया जाय तपस्वीजी के आदेशानुसार श्रीमान् ठाकुर साहब रावजी साहब दीवान साहब, मामलतदारसाहब महालकारीसाहब जागीरदारसाहब सुप्रिटेन्डसाहब तहसीलदारसाहब आदि तमाम राज्यकर्मचारीगण राज्य की, देश की, व अपनी अपनी शान्ति के लिए अपनी अपनी रियासत तालुका, तथा जिले में उपरोक्त फरमान के अनुसार अगता रखने की कृपा करे तथा ॐ शान्ति प्रार्थना करें एवं करावें। तपस्वीजी की आज्ञा का पालन कर अपनी तरफ से यथा शक्ति हरएक व्यक्ति जीवों को जरूर अभयदान देवें और गरीबों को मदद करें। उस दिन कम से कम एक जीव को तो अवश्य अभयदान दें अमरिया करें। साथ इस अवसर पर आपने अपने यहां जो भी शुभ कार्य किये हों उसकी सूचना हमें देकर कृतार्थ करें।

निवेदक---समस्त स्थानकवासी जैन संघ कराची

इस प्रकार की सूचना मिलते ही हजारों ग्राम नगर निवासियों ने तपस्वीजी के पुर के दिन विश्व-शान्ति के लिए सामुहिक प्रार्थना की। पाखी रख कर उस दिन समस्त सावद्य प्रवृत्ति का त्याग रखा गया अनेक रियासतों के ठाकुरों जागीदारों राजा और माहाराओं ने तपस्वीजी की यादगार में अपने समस्त राज्य में अगता रख कर उस दिन जीवहिंसा बन्द रखी। शिकार, मांसाहार, जुआ परस्त्रीगमन आदि दुर्व्यसनों का त्याग रखा। हजारों व्यक्तियों ने उस दिन जीवों को अभयदान दिया। सामायिक प्रतिक्रमण उपवास आयंबिल आदि धार्मिक कार्यों से उस दिन को सफल किया। इस अवसर पर उदयपुर के महाराणा श्री भूपालसिंहजी ने अपने समस्त राज्य में अगता रखने का आदेश जारी कर जीवहिंसा बन्द रखी। मेवाड के सोलह ठिकानों के राजा साहब जागीरदारों एवं ठिकानदारों ने उस दिन अपनी समस्त रियासत में जीवहिंसा बन्द रखी। जिन जिन प्रान्तों में महाराजश्री ने विहार किया था और जिन जिन ग्रामों में विचरते थे उन सब ने उस दिन महाराजश्री के आदेश से खूब धर्म ध्यान किया। इस शुभ अवसर पर जिन जिन ठिकानदारों ने ग्रामों में अगता रखा उसकी पत्र द्वारा सूचना कराची संघ को कर दी। स्थानाभाव के कारण उन सर्व पत्रों की प्रतिलिपि

नहीं दे सकतें । कुछ आवश्यक पत्र ये हैं–

श्री एकलिंगजी   श्री रामजी

श्री श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन उपाश्रय कराची (सिंध) शुभस्थान बुडा

आपकी प्रार्थना पत्रीका प्राप्त हुई. ब मुजीब उसके हमारे स्टेट में आसोज शुक्ला ११ को अगता पलाने के लिए मुतालकोन के तमाम हुक्म नामे जारी कर दीये गये हैं और यहां भी संपूर्ण अगता पलाया जावेगा । तमाम मुनिराजों को विधिवत् हमारी वन्दना अर्ज करा देवें । पत्र हमेशा लिखा करें । ता. ५–१०–१९३५ इस्वीसं दः रावतजी. सवाईसिंहजी रावतजी साहब ठिकाना बुडा (भोमट) मेवाड

धीरे धीरे तपस्या की पूर्णाहुति का काल भी समीप आपहुंचा । जिस दिन की संघमें बहुत समय से प्रखर प्रतीक्षा की जा रही थी । वह वि० सं. १९९२ आसोज सुद ११ मंगल वार ता० ८–१०–३५ का शुभ दिवस उदय हुआ । उस दिन कराची शहर में दूर–दूर के प्रदेशों से अनेक सार्धमिक बन्धु इस अपूर्व अवसर को देखने के लिए एकत्रित हुए । महाराज श्री के निवास स्थान के समोप ही ५००० हजार व्यक्ति आराम से बैठ सके इतना बडा पाण्डाल बनाया गया । आसौज शुक्ला ११ के प्रातः सूर्योदय होते ही नगर के आबाल-वृद्ध नर नारीगण बडे समुह में पाण्डाल की ओर बढ चले । प्रातः कालीन मंगल गीतों से दिशाएं मुखरीत हो रही थी । प्राकृतिक सुषमा में एक नवोन्मेप दृष्टिगोचर हो रहा था । महाराजश्री के आगमन के पूर्व ही हजारों व्यक्ति पाण्डाल में यथा स्थान बैठ चुके थे । प्रबन्ध व्यवस्था इतनी सुन्दर थी की दुर बैठा प्रत्येक श्रोता महाराजश्री का व्याख्यान अच्छी तरह से सुन सकता था । तपस्वी जी श्री सुन्दरलालजी महाराज एवं पण्डित प्रवरश्री घासीलालजी महाराज अपने निवास स्थान से सन्तमण्डली एवं अन्य श्रावक श्राविकाओं से परिवेष्टित होकर करीब आठ बजे समारोह के स्थान पर पधारे । उपस्थित जन समूह ने खडे होकर आदर पूर्वक प्रणाम की मुद्रा में सन्तों का स्वागत किया। इस समय उपस्थित करीब १० १२ हजार मानव मेदनी होगी। एसा प्रतीत होता था कि मानो समस्त कराची नगर आज इसी एक ही स्थान पर आकर केन्द्रित हो गया हो । पाट के मध्य स्थान पर पं. श्री घासोलालजी महाराज एवं तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज बिराज गये । आस पास अन्य मुनि समुदाय पाट पर बिराजमान थे । नगर के प्रतिष्ठत नागरिक बेठे थे और उनके पीछे जन साधारण का अपार समूह उपस्थित था । यह दृश्य ऐसा प्रतीत होता था मानो श्री तीर्थंकर भगवान का समोवशरण ही हो । महाराज श्री ने मंगलाचरण प्रारंभ किया । मंगला चरण की समाप्ति के बाद पं. प्रवर ने सुमधुर एवं गम्भीर वाणी में प्रवचन प्रारंभ करते हुए कहा—

भारत भूमि सदा काल से तपोभूमि रही है । यह विशेषता अन्य किसी राष्ट्र में नहीं हैं । भारतवर्ष एक धर्म प्रधान देश है । यहा विविध धर्म और संप्रदाय विद्यमान हैं। इन सभी धर्म और संप्रदाय में तप की आवश्यकता पर महान बल दिया है । जिसके द्वारा आत्मा के सभी विकार नष्ट हो जाए और उसका स्वरूप निखर जाए वह तप कहलाता है । तप जीवनोत्थान का प्रशस्त पथ है । तप की उत्कृष्ट आराधना से व्यक्ति तीर्थंकर पद भी प्राप्त करता है। श्री गौतम स्वामी ने एक बार भगवान श्री महावीर स्वामी से प्रश्न किया–तवेणं भंते जीवे किं जणयइ ? तवेणं वोदाणं जणयइ ॥ उत्त० २९।२७ ।

तप धर्मके प्रभाव से अनेक भवों के संचित निकाचित पाप–कर्मों का नाश होता है । आत्मा निष्कर्म बन कर अजर–अमर परम पद व सदा के लिए अक्षय अनंत सुख प्राप्त करता है । तप के प्रभाव से इप्सितवस्तु की प्राप्ति स्वयमेव हो जाती है तप के प्रभाव से धन्नाजी, दृढप्रहारी, हरिकेशी मुनि, ढंढणमुनि, अर्जुनमाली मुनि आदि प्रमुख मुनीश्वरों ने सकल कर्मों का क्षय करके सिद्ध पद प्राप्त कर लियां था । शास्त्रकार तो यहां तक कहते है कि–

किं वहुणा भणिएणं जं कस्सवि कहवि कच्छविसुहाइं दिसंति भवण मज्झे तत्थ तवो कारणं चेव ॥

ˊअर्थात् बहुत कहने से क्या प्रयोजन जिस किसी को कहीं भी किसी भी प्रकार का सुख संसार में दिष्ट गोचर होता है उन सबों में तपस्या ही प्रमुख कारण है।

सारांश यह है कि तप की महिमा अजेय है अपरिमित है लेकिन् जो तपस्या राग-द्वेष और ऐहिक-कामनाओं को छोडकर आचरित की जाए वही कार्य साधिका मानो जाती है। वासना-महासागर में डूबा देती है मननशील मानव भी आज तप के प्रभाव से अपनी कालिमा को धोकर शुद्ध और पवित्र बन जाता है। इसिलिए कहा है-"संजमेण तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ"

हे साधक ! तूं संयम और तप से अपने आपको पवित्र करता चल साधना के महा पथ पर।

मानव जीवन में तप का विशिष्ट स्थान है। संयम और नियम के बिना मानव विकाश संभव नहीं। त्याग-तपश्चर्या आध्यात्मिक व आत्मिक सुख की एक महान सीढी है। इसकी शक्ति सागर के शान्त प्रवाहों में बैरियों के वैमनस्य लय हो जाते हैं और विरोधक शक्तियों के प्रचण्ड बल भी धीरे-धीरे शान्त पड जाते हैं। तप का महत्व व गौरव उसके पीछे रहे हुए किसी उदात्त हेतु एवं भावों की परम विशुद्धि पर अवलम्बित है तथा आध्यात्मिक सुख प्राप्ति ही इसका प्रमुख ध्येय होना चाहिए। इसी से मानव निर्भय पुरुष व सिद्ध मुक्त हो सकेगा। आत्मा के कल्याणार्थ तप की साधना अन्तस्तत्व के चिन्तन, मन के मन्थन व चित्तवृत्तियों के ग्रन्थन से ही सम्भव है। तथा एसी साधना से ही अनन्त-अनन्त काल से सिद्ध' मुक्त, होते आए हैं व भविष्य में भो होवेंगे। जैन दर्शन दृष्टि को महत्व देता है। विशुद्ध दृष्टि के अभाव में तप-जप-स्वाध्याय संपूर्ण लाभ प्रद नहीं होता।

जैन धर्म में ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय मोहनीय और अन्तराय कर्मों को घातिया कर्म कहा है। तपस्या के प्रभाव से घाति कर्म का नाश होता है व आत्माओं को अनन्त चतुष्टय का प्रादुर्भाव होता है। तप के द्वारा ही एसी आत्माए अर्हत बन जाती है। अतः वास्तविक शाश्वत परम सुख की प्राप्ति के हेतु मुमुक्षु और साधक आत्माओं को अपना जीवन तप मय बनाना होगा। जैसे सोना अग्नि से शुद्ध होता है। वैसे ही तपस्या से आत्मा शुद्ध होती है। और शुद्ध आत्मा ही अजर अमर अक्षय पद को प्राप्त करती है। इस प्रकार करीब एक घंटे तक महाराज श्री ने तप की महत्ता पर प्रवचन दिया। उस अवसर पर पं. मुनि श्री समीरमलजी म० तथा पं. मुनिश्री कन्हैयालालजी महाराज ने भी तप की आवश्यकता पर पाण्डिय पूर्ण प्रवचन किया। यह अभूत पूर्व समारोह सब के लिए पुण्य स्मरण बन गया। तपस्या के पूर के तीन चार दिन पहले से ही कसाई खाने में मारे जाने वाले सैकडों पशुओं को अभय दान देना प्रारंभ किया गया था। दशहरे के अवसर पर मारे जाने वाले बकरे घेटे आदि को भी अभयदान दिया गया। उस दिन कराची के हजारों अन्धे लूले लंगडे गरीब, कुष्टरोगी, भिक्षुक एवं पागल खाने में रहने वाले पागलों को मिष्टान्न का भोजन दिया गया। इस अवसर पर पांजरापोल के पशुओं को घास-चारा देने के लिए ३०००) रुपया एकत्र किये गये।

कराची में अपूर्व उपकार तो हुआ ही मगर बाहर गांव वालों ने भी इस पुनीत अवसर पर अनेक पुण्यकाम किये। हैदराबाद श्रीसंघ ने कोटडी ठाकरसी भाई के मारफत तपस्या की पूर्णाहुति के दिन हैदराबाद सिन्ध के गिदु बन्दर की मच्छिओं का मारना बन्द कराया उस दिन बन्दर के दोनों किनारे एवं आस पास पहरेदार बिठा दिये गये थे ताकि कोई व्यक्ति मच्छी न मार सके। यहां करीब वीस मील की हद में इतनी मछलियां होती है कि यहां के ठेकेदार को एक वर्ष के अस्सी हजार रुपये सरकार को देने पड़ते

थे। उसी दिन गिदुबन्दर के पागल खाने के तीन सौ पागलों को हलवा पुरी का भोजन दिया। और जीव दया का चन्दा करके बेमोत मारे जाने वाले सैकडों कुत्तों को गले में पट्टा बन्धवा कर उन्हें मृत्यु के मुख से बचाया। इसी अवसर मेवाड के सोनानिवेस मेरपुर के रावजी साहेब श्री १०५ श्री शिवसिंहजी साहब ने अपनी समस्त रियासत में जीवहिंसा बन्द रखी। मादडा खमनोर एवं उसके आस पास के ग्रामों में तथा गुजरात, काठियावाड, मेवाड़ महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, एवं राजस्थान के अनेक ग्राम निवासियों ने उस दिन अगता पालकर आरंभ समारंभ की प्रवृत्ति को बन्द रखी। तथा अलवर रोत्तक आदि अनेक शहरों व ग्रामों में नाना प्रकार का धर्मध्यान व उपकार के कार्य हुए। उस दिन कराची के समस्त कशाई खाने बन्द रखे गये थे। हजारों सिन्धो एवं मुसलमान भाईयों ने तपस्वीजी की तपस्या से प्रभावित हो जीवहिंसा शराब एवं मांस का सेवन तथा अन्य प्रकार के दुर्व्यसनों का त्याग किया। सेकडों व्यक्तियों ने उपवास से लेकर १५-२० दिन की तपस्या की। अजैन भाईयों ने भी पूर्णाहुति के दिन उपवास करके तपस्वीजी के प्रति अपनी भावपूर्णश्रद्धांजलि दी। उस दिन कराची के भूतपूर्व मेयर, एवं वर्तमान मेयर, चीफ ऑफिसर गवर्मेन्ट ऑफिसर, कान्सलर, प्रतिष्ठित व्यापारी, वकील, नगर के प्रतिष्ठित सज्जन शिक्षाशास्त्री तथा अन्य अनेक गणमान्य सज्जनों ने तपस्वीजी म० के दर्शन कर यथा शक्ति त्याग ग्रहण कर अपनी असीम श्रद्धा का परिचय दिया। इस अवसर पर सिन्ध मारवाड, मेवाड अलवर, देहली, मुंबई, गुजरात महाराष्ट्र से हजारों व्यक्ति तपस्वीजी के दर्शनार्थ आये। स्थानीय श्रीसंघ ने उनका अभूतपूर्व स्वागत किया। आगन्तुक सज्जनों को किसी प्रकार का जरा भी कष्ट अनुभव न होने दिया। दूसरे दिन ता० ९-१०-३६ को तपस्वीजी म० ने पारणा किया। उनके साथ हजारों स्त्री पुरुषों ने भी उपवास आदि तपश्चर्या का पारणा किया। तपस्वीजी म० का पारना सुख शांन्ति पूर्वक हुआ।

प्रार्थना दिवस—

तपस्वीराज की आज्ञानुसार आसोज सुदी ९ रविवार के दिन प्रार्थना दिन मनाया गया। प्रार्थना दिवस के कार्यक्रम की सुचना सर्वत्र पत्र पत्रिकाओं द्वारा की गई। प्रार्थनां दिवस की विज्ञप्ति में सर्व को यह सुचित किया गया था कि प्रार्थना दिवस के दिन समस्त प्रकार की जीवहिंसा बन्द रखी जाये। एवं उस दिन मांस एवं शराब का त्याग रख कर सभी सज्जन विश्वशान्ति के लिए सामूहिक प्रार्थना करें विज्ञप्ति पत्र सर्वत्र कराची नगर में बांटे गये। बाहर गामों वालों को भी पत्रिका भेजी गई। सर्वत्र उसका स्वागत हुआ। सर्वने सामूहिक प्रार्थना की।

आकर्षक जुलूस (सरघस)

प्रार्थना के रोज एक बडा चित्त आकर्षित करने वाला जुलूस (सरघस) निकला जिसमें जैन, जैनेतर, हिन्दू, सिन्धी, मुसलमान, पारसी आदि सर्व कौम व धर्म के मनुष्य सम्मिलित हो कर सर्व के सर्व तपस्वीराज व महान जैन धर्म के प्रति अपूर्व भाव प्रकट करते थे और स्त्री पुरुष बाल बच्चे आदि सर्व लोग मुनिराजों के गुणानुवाद गर्भित भजन ललकारते हुए चलते थे। जैन बेन्ड व अन्य बेन्ड (बाजा) अपनी गम्भीर और सुरीली आवाज से गूजता हुआ तपस्या व दया का सन्देश नागरिकों के कानों में पहुंचता था। इस जूलुस को देखने के लिए ठोर-ठौर पर स्त्री पुरुषों की बडो भारी भीड उमड रही थी. स्थान स्थान पर बहुत लोग जमा होते जाते थे। यह जुलूस ठीक व्यवस्थित रीति से चलता था। इस में तपस्वीराज की तपस्या का सूचक, दारु मांस, हिंसा निषेधक वाक्यगर्भित पडदे तथा लेख जगह जगह पर इधर-उधर दृष्टिगोचर हो रहे थे, यह जुलूस रणछोडलाइन, नानकवाडा, जोडियाबाजार आदि शहर के मुख्य मुख्य रास्ते व बाजारों में धूमता हुआ बन्दररोड होकर साम को करीब पांच बजे म्युनिस्पल के

"खलकदीना होल' नामक विशाल भवन में पहुँचकर सभा के रुप में एकत्रित हुआ। यहां शहर के सारे मुख्य मुख्य नेतागण आदि करीब छह (६०००) हजार जनता की उपस्थिति हुई थी।

प्रार्थना सभा

यह (खलकदीना होल) विशाल भवन था स्त्री पुरुषों से ठसाठस भर गया, स्थानाभाव के कारण बहुत से लोगों को पैरों पर खडा रहना पडा। इस प्रार्थना (सम्मेलन) में हरएक मजहब के आदमी नजर आते थे। तदन्तर पण्डित रत्न पूज्य मुनिश्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज, मनोहर व्याख्यानी पण्डित मुनि श्री मनोहरलालजी महाराज, विद्यार्थी मुनि श्रीसुमेरमलजी म० श्री पं. रत्नमुनि श्रीकन्हैयालालजी म० तपस्वी मुनि श्रीकेशवलालजी म० लघुतपस्वी मुनि श्री मांगीलालजी म० लघुमुनि श्री विजयचन्दजी म० आदि ठाणा सात अपने विराजने के स्थान से यहां पधारे। बाद श्रीयुत जमशेदजी एन. आर. महेता ने खडे होकर हाथ जोड सभा से अपील की कि आज का दिन शान्ति का दिन है इसलिए हम सब लोगों को शान्त होकर बैठना चाहिए, आप लोग शांति रखेंगे तब ही कार्य सुचारु रुपसे हो सकेगा। बाद सभा में एकदम शांति का सामराज्य छागया अर्थात् सब सभा एकचित्त होकर सुनने लगी। फिर चार बालिकाओं ने भगवान श्री महावीर स्वामी का स्तुतिगर्भित मंगल गायन गाया। फिर सब मुनिराजों ने मिलकर प्रभुस्तुति की और पण्डितरत्न पूज्य मुनि श्री घासीलालजी महाराज साहब ने भगवान श्री महावीर स्वामी का सन्देश तथा तपस्या का महात्म्य समझाते हुए प्रसंगोचित प्रभावशाली उपदेश सुनाया जिसका सारांश यहां दियाजाता है—

प्रार्थना प्रवचन-जो किसी इन्द्रिय द्वारा ग्रहण नहीं हो सकता कान से सुना जाता नहीं, आंख से देखा जाता नहीं, नाक से सुन्घा जाता नहीं, जिह्वा से चक्खा जाता नहीं और शरीर से छूआ जाता नहीं एसे निरंजन निराकार ज्योतिस्वरूप विश्ववल्लभ शुद्ध स्वरूप परमात्मा को मेरा नमस्कार हो।

हम परमात्मा से भिन्न नहीं हैं—

परमात्मा की प्रार्थना किसलिए और किस तरह करनी चाहिए? तथा हमें क्या करने से परमात्मा का साक्षात्कार होता है? इत्यादि हकीकत तो बहुत विस्तार वाली हो जाती है परन्तु संक्षेप में इतना कहना प्रर्याप्त है कि परमात्मा की भक्ति करनेवाला खुद परमात्मा बन जाता है, जैसे कृमि (लट) का एक ध्यान भौंरे की आवाज में रहने के कारण वह (कृमि) भी एक रोज भौंरा बन जाता है, उसी प्रकार परमात्मा का ध्यान भजन करने वाला पुरुष भी एक दिन सिद्धस्वरुप बन जाता है, अतः हम परमात्मा से भिन्न नहीं है, अर्थात् हममें और परमात्मा के स्वरुप में कोई भिन्नता नहीं है, क्योंकि जो गुण और शक्ति परमात्मा में है वह अपने में भी मौजूद है, ज्योतिस्वपरू परमात्मा में प्रकाशमान् है वह हमारे में भी विद्यमान है, परन्तु परमात्मा शुद्ध है और अपनी आत्मा माया तथा प्रपंच रुपी कीचड में फँसी हुई है। जिससे आत्मा का शुद्ध स्वरूप ढका हुआ है। इसलिए हम को चाहिए की परमात्मा का ध्यान व भजन करके आत्मा की शुद्धि करें। यह आत्मा कर्मरूपी फन्दे में फँसा हुआ है। इसी से आत्मा को दुःख होता है और यह दुःख परमात्मा की प्रार्थना से हट सकता है। अंतः हमे परमात्मा की प्रार्थना करनी चाहिए।

तपस्वीराज का आदेश

आज प्रभु प्रार्थना करने के लिए योगनिष्ट तपस्वी महात्मा मुनि श्री सुन्दरलालजी महाराज का फरमान है और वे खुद तीन महिने से प्रार्थना में बिराजे हुए हैं और दो रोज बाद आप (९०) उपवासों का पारणा करने वाले हैं इसलिए आप लोगों के कुटुम्ब परिवार की व करांची व देश एवं राज्य की शान्ति के लिए आज सर्व को प्रार्थना करनी चाहिये" यह तपस्वी महात्मा का फरमान है।

आत्मशुद्धि कैसे की जावे?

जिस प्रकार हंस अपनी चंचू मे क्षीर, नीर को जुदा कर देता है उसी प्रकार परमात्मा के ध्यान द्वारा जीव कर्मों से अलग हो जाता है। लोहे के गोले को जब आग में खूब तपाया जाता है तब वह गोला अग्निमय बन जाता है । अग्निपिंड जैसा दिखने लगता है मगर है वह अग्नि और गोला अलग-अलग चीज है. एक नहीं है । उसी प्रकार आत्मा भी कर्मों के पडदो में रहा हुआ है । ये परदे इश्वर प्रार्थना से दूर हो जाते हैं, तब आत्मा का साक्षात्कार होता है । इसलिए आज हम सर्व को प्रार्थना करनी चाहिए कि—"हे प्रभो ? तूं हम को दुखों से मुक्त कर' । अन्तः करण से जो प्रार्थना की जाती है उसमें एक अद्‌भूत शक्ति रहा करती है जिससे आधि व्याधि और उपाधि मिटकर आत्मा में एक अलौकिक शान्ति और निज गुण प्रगट होते हैं। प्रार्थना पर महत्व बताते हुवे फरमाया कि संवत १९०९ के शाल की बात है कि नबाबशाह जिला में नदी का पूर आने से लोक चिन्तातुर हो गये थे। तब कई लोगों ने नदी का दर्शन किया कईयों ने स्नान पूजन आचमन किया परन्तु नदी स्वयं तो अपने आवेश में बढती ही चली गई यहाँ तक की पूल टूटने का समय नजदीक दीखने लगा तब इंजिनियर मी० हेरीसन ने छह हजार मनुष्यों को बांध (पाल) बांधने के काम में लगा दिये कि बन्धा लग जाने से पुल नहीं टूटेगा। जल के वेग के सामने कोई क्या कर सकता—वह पूर तो बढतां ही चला और एक पीछे एक पुल के बन्ध टूटने लगे मी० हेरीसन हताश हो कर कहने लगा कि अब इस में मेरी शक्ति काम नहीं करती। उस वक्त वहां के हे० क्लेक्टर जो कि मुसलिम थे, उन्होंने आकर मी० हेरीसन को कहा कि खुदा बडा है—आला है, वह ताकतवान है इसलिए सब मिलकर खुदा की प्रार्थना करो वह सर्व अच्छा करेगा । इस पर छह हजार मनुष्यों ने खुदा की प्रार्थना करनी शुरु की । प्रार्थना शुरु होते ही विशाल नदी ने अपनी माया समेट नी शुरु की, चौवीस घन्टे के अन्दर पूर कहां का कहां ही चला गया जिसका कोई पता नहीं रहा। सर्वलोग मुक्त कण्ठ से कहने लगे कि यह प्रताप प्रार्थनां का है, प्रार्थना में एक विशिष्ट चमत्कार रहा हुआ है । कौयर कहता है कि प्रार्थना करने से शैतान कांपते हैं। मी० जेम्स एक जगह लिखता है कि प्रार्थनारुपी चिराग से आफतरुपी अंधकार दूर होता है। इस प्रार्थना में आज हिन्दू मुस्लिम पारसी क्रिश्चन आदि सर्व सामिल हैं। इस प्रकार महाराज श्री ने सारगर्भित उपदेश फरमाया। तत्पश्चात श्रीयुत जमशेद एन. आर. महेता, म्युनिस्पल कोरपोरेशन लॉर्डमेयर काजी खुदाबक्ष, श्रीयुत लोकामल चेलाराम शेठ श्रीमान् मणिलाल भाई पारेख आदि महाशय ने मुनिराजों के त्याग वैराग्य तथा तपस्या की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते हुए प्रसंगोचित भाषण दिया और शान्त तथा एक चित्त से स्थिर हो कर सात (७) मिनीट तक प्रार्थना में लगे रहने का निवेदन किया गया ।

प्रभुप्रार्थना और विश्व शान्ति का अभूतपूर्व दर्शन

आचार्य श्री की पूर्वोक्त प्रकार सूचना मिलने पर (७) मिनीट तक अखिल सभा ने नीचे दृष्टि झुकाकर एक चित्त से ध्यान (काउस) किया, यह दृश्य तो एक अलौकिक और अद्‌भुत "न भुतो न भविष्यति" जैसा ही हुआ । उस वक्त मूर्तिमती (साक्षात्) शान्ति का अभूतपूर्व दर्शन होने लगा, सर्व सभा में एकदम शान्ति छा गई । तदनन्तर महाराज श्री ने ॐ शान्तिः ३ तीन वार उच्चारण करके ध्यान (काउसगा खोला (पारा) फिर श्री शान्तिनाथ भगवान का स्तवन बोलने बाद वीर जयध्वनि के साथ सभा विसर्जित हुई। और सर्व जनता में जैन धर्म की व तपस्या की अपूर्व महिमा फैली । उस रोज सैकडो लोगों का दारु, मांस व जीवहिंसा का छोडना तथा लाखों निरपराधी मूक (अनबोल) प्राणियों को अभयदान मिलना यह एक अपूर्व उपकार हुआ है । विशेष खुशखबरी यह है कि एशिया, आफ्रीका, अमेरिका, आस्ट्रेलिया और यूरोप ये पांच खंड संसार में आधुनिक दृष्टि से वडे माने जाते हैं। वहां एसोसिएटेड प्रेस और रुटर तार कम्पनी

ने अपनी खुशी से तपस्या तथा जैन धर्म सम्बन्धी खबर दो कालम भर के दी, जिसमें ता० ६-१०-३५ को दारू मांस जीवहिंसा निषेधक सन्देश पहुँचाया जिस से अखिल संसार में जैन धर्म व तपस्या की महिमा फैल गई। यह खबर दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, त्रिमासिक, हिन्दी, गुजराती इंग्लिश आदि संसार की अनेक भाषाओं के पेपर वालों ने लेख लिखकर तपस्या का सन्देश प्रायः अखिल भुमण्डल में पहुँचाया जिससे लाखों नहीं करोडों मनुष्यों पर आदर्श तपस्या की महिमा का तथा जैन धर्म का अलौकिक प्रभाव पडा। यहां प्रायः सभी लोग जैन धर्म के अनुरागी बने। सन्तों के त्यागमय जीवन देख कर वे लोग इन्हें ईश्वर की विभुति मानने लगे। इस प्रकार कराची का यह चातुर्मास कराची नगर के लिए ऐतिहासिक बन गया। सुदीर्घ तपश्चर्या के बाद वृद्ध अवस्था के कारण तपस्वीजी का स्वास्थ्य बिगड गया। प्रतिदिन निर्बलता बढने लगी। कराची संघ ने बडे मनोयोग से तपस्वीजी की चिकित्सा करवाई। चातुर्मास समाप्त हो गया। किन्तु तपस्वीजी का शरीर ठीक न होने से महाराजश्री को वहीं बिराजना पडा।

१९९३ का चातुर्मास पुनः कराची में—

चातुर्मास समाप्ति पर कराची संघ ने तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज की शरीर की अस्वस्थता देखकर महाराजश्री से प्रार्थना की कि आप तपस्वीजी के स्वास्थ्य के लिए इस वर्ष भी यहीं बिराजे। संघ की प्रार्थना पर एवं तपस्वीजी के शरीर की अवस्था को देखकर महाराजश्री ने कराची श्रीसंघ की बात मान ली। कराची में दीर्घ समय तक बिराजने से कराची नगरपति श्री जमशेदनसरवानजी महेता मुनिश्री के दर्शनार्थ अवारने अवार आते रहते थे। उनसे अच्छा परिचय हो गया। कराची के म्यु० मेयर श्रीकाजीखुदाबक्षजी तथा सिन्ध के सेठ लोकामल चेलाराम, सी. आई. डो. इन्स्पेक्टर श्रीमिनोचेर आदि भी दर्शनार्थ आये इनसे भी महाराजश्री का गाढ परिचय हो गया। चातुर्मास का समय भी समीप में आया तबतक महाराज श्री कराची के आस पास ही विचर रहे थे। महाराजश्री की कराची से विहार करने की बड़ी इच्छा थी। महाराजश्री तपस्वीजी के स्वास्थ्य के ठीक होने की राह भी देख रहे थे। कराची का श्रीसंघ महाराजश्री की सेवामें पहुँचा। उसमें स्थानीय मूर्तिपूजकसमाज एवं हिन्दु धर्म के अनेक आगेवान सज्जन भी महराजश्री के पास आये और प्रार्थना करने लगे की इस वर्ष का चातुर्मास आपका यहीं होना चाहिए क्योंकि तपस्वीजी महाराज का स्वास्थ अभी विहार के योग्य नहीं हुआ। तथा आपके आगामी चातुर्मास से गत चातुर्मास की अपेक्षा अधिक उपकार होगा। हजारों सिन्धी भाई बहन मांस शराब जीवहिंसा जैसे दुष्कृत्यों का त्याग करेंगे। इस चातुर्मास की विनती मात्र जैन समाज ही नहीं कर रहा है किन्तु कराची नगर की समस्त जनता की ओर से परमभक्त मेयर श्री जनाब काजीखुदाबक्षजी भी पत्र द्वारा प्रार्थना कर रहे हैं। उनके पत्र का हिन्दी तर्जुमा की नकल इस प्रकार है।

कराची के मेयर साहब के ता. ३०-४ १९३९ पत्र का हिन्दी अनुवाद :—

मुझे यह कहने में बड़ी खुशी है कि गुरुजी श्रीघासीलालजी म. का कराची शहर में पधारना और निवास करना सिर्फ जैन समाज के लिए ही नहीं बल्कि कराची के रहने वाले जैनेतर लोगों के लिए भी खुशी और गौरव का कारण है। जैन समाज का बड़ा भाग्य है कि उक्त गुरुजी महाराज जैसे पवित्र महात्मा उनमें मौजूद हैं और मुझे यकीन है कि इस शहर में कुछ अर्से के लिए और ठहरें तो जैन समाज के नैतिक उद्धार में बडीभारी मदद मिलेगी और मुझे यह भी यकीन है कि उन महान गुरुजी महाराज के जीवन की पवित्रता का असर दूसरी कौमो पर भी बहुत अच्छा पडेगा। दः काजी खुदाबक्ष ३० अप्रिल १९३६ मेयर-कराची नगरपालिका

इस प्रकार हिन्दूमहासभा के अध्यक्ष डॉ० जी. टी० हिंगोरानी एफ. आर. सी. एस. ने एवं जनरल

सेक्रेटरी मिस्टर चौधरी ने समस्त हिन्दू महासभा कराची के ओर से इस वर्ष कराची में चातुर्मास करने की पत्र द्वारा प्रार्थना की है । उस पत्र का हिन्दी अनुवाद-

पूज्य श्री जैनमुनि महाराज श्रीघासीलालजी महाराज तथा मनोहरलालजी म० और तपस्वी श्री सुन्दरलालजी म० आदि महात्मा पुरूषों से हम सविनय अर्ज करते हैं कि आप यहाँ एक साल और विराजें और अहिंसा के सिद्धान्त का प्रचार करें । जिसको कि हिन्दू धर्म में उचित स्थान मिला हुआ है और जिसके प्रचार की हमारे कराची शहर को खास तोर से जरूरत है । हम मानते हैं कि आपके अहिंसा प्रचार से बडा अच्छा असर हुआ है तथा बहुत से लोग अपने आपको सुधार रहे हैं और अहिंसा के सिद्धान्त पर चलने की कोशिस कर रहे हैं । हम फिर जैन और हिन्दू सर्व आपसे प्रार्थना करते हैं कि एक साल और यहां विराजें और अपने पवित्र उपदेशों से हमें लाभ प्राप्त कराएँ आपके डॉ० जी० टी० हिंगोरानी डी० डी० चौधरी

श्री संघ का आत्याग्रह कराची नगर की जनता की उत्कृष्ट भावना तथा तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज की अस्वस्थता को देखकर महाराजश्री ने आगामी चातुर्मास कराची में ही करने की स्वीकृति फरमा दी । चातुर्मास की स्वीकृति से कराची की जनता में जो हर्ष हुआ उसे शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता । चातुर्मास काल अभी दूर था । शेष काल में भी चातुर्मास की तरह धार्मिक कार्य होने लगे । शेषकाल में महाराजश्री संस्कृत टीका के साथ जीवाभिगमसूत्र का वांचन करते थे । इसके बाद श्री नेमिनाथ भगवान का चरित्र विषद व्याख्या पूर्वक समझाते थे । आप प्रथम से ही महान् कुशलवक्ता थे । उसके साथ वाणी का माधुर्य तथा शास्त्रों का तलस्पर्शी ज्ञान इतना अच्छा था कि व्याख्यान के समय श्रोतृवृन्द बरबस आपकी ओर आकर्षित्त हो जाता था । शेषकाल में सामायिक, पौषध, उपवास आयंबिल, वेले तेले आदि की तपस्या खूब होने लगी । आषाढशुक्ला त्रयोदशी से तपस्वी मुनिराजों ने प्रतिवर्ष की तरह तपश्चर्या प्रारंभ करदी । चातुर्मास प्रारंभ हो गया । महाराजश्री व्याख्यान में प्रथम सुखविपाक, फरमाते थे । पर्युषण पर्व के समय अंतकृद्दशांग सूत्र तथा शेष समय उपासकदशांग एवं रुक्मणी मंगल बडी गम्भीर वाणी में फरमाते थे । प्रथम चातुर्मास के बाद तुरत ही द्वितीय चातुर्मास होने से लोगों की धर्मभावना में विशेष वृद्धि हुई । घोरतपस्वीश्री मांगीलालजी महाराज एवं तपस्वीरत्न श्री सुन्दरलालजी म० की तपश्चर्या चल हि रही थी । इस अवसर पर तपस्वियों के दर्शन के लिए नगर की जनता का ताता लग गया । धोवन का पानी के आधार हि से इतने लम्वे दिनों की तपश्चर्या कराची की जनता के लिए बडा आश्चर्य का कारण था । कई डॉक्टरों को एवं नर्सो को विश्वास ही नहीं हो रहा था कि इतने लम्वे समय तक मनुष्य अन्न के बिना भी रह सकता है । वे लोग एक बार संगठित हो कर तपस्वियों के शरीर की जांच करने आये । शरीर की पूर्ण जांच करने के बाद डॉक्टर तपस्वियों के चरण में नसमस्तक होकर बोले--गुरुजी ! क्षमा करें । आप सचमुच ही एक महान आत्मा हो । इतने लम्वे समय तक भूखा रहना साधारण व्यक्ति का काम नहीं है । विशिष्ट शक्तिशाली आत्मा ही ऐसा अति दुष्कर तप कर सकती है । जैन साधुओं की इस विशिष्ट साधना से बडे प्रभावित हुए । अनेक सिन्धिभाई भाव विह्वल हो कर आखों में आंसु बहाते हुए तपस्वी के गुण गान करते थे । अनेकों ने इस महान् अवसर पर शराब पीना और मांस खाना सदा के लिए छोड दिया । खान बहादुर मेयर अरदेसर भाभा ने प्रतिमाह की पहली तारीख को मांस व मच्छी शराब पीने का त्याग किया । जन्मदिवस के अवसर पर एक जीव को अभयदान देने का वचन दिया और उसदिन सभी प्रकार का मांस व शराब का त्याग किया । मिकेनीकल इंजिनीयर हरमन लिमिटेड के जेकब साहब ने सदा के लिए मांस व शराब का त्याग कर दिया । डॉ० शराफ बिलीमोरिया हेल्थओफीसर सा० ने प्रतिमास एक दिन दारु मांस व जीवहिंसा का त्याग किया । जन्म तिथि के दिन एक जीव को अभयदान देने का वचन दिया ।

लुहाने गोविन्दरामजी ने दारु मांस, व जीवहिंसा का सदा के लिए त्याग किया । चंबा स्टेट के निवासी नानकपंथी वैद्याचार्य संन्यासीजी ने जैन शास्त्राचार्य पूज्य श्री के एवं तपस्वीजी के दर्शन कर अत्यन्त प्रसन्नता प्रगट की । आपने प्रतिमाह पांच दिन तक हरिखाने की प्रतिज्ञा की । नेपाल सरदार महेश्वरसिंहब्रह्मा फासिस्ट कंट्राक्टर आपने उपदेश सुनकर बडी प्रसन्नता प्रगट की । आध्यात्मिक विषय पर देढ घंटे तक चर्चा करते रहें । महाराजश्री के गहन तत्व ज्ञान से ये बडे प्रभावित हुए । आपने एकादशी को निर्जला उपवास करने का नियम लिया । कमलनेन व सुजानमल ने सर्वथा दारु मांस का त्याग किया । सेठ दिनशाजी पेस्तनजी दस्तुर फारसी मेनेजर सिंध प्रोविशियलबेंक तथा इनके पुत्र नोरजने दर महिने की पहली तारीख को दारू मांस एवं शराब का त्याग किया, इलेक्टरिक इंजिनीयर होरमजी भिखाजी खरास ने सदा के लिए दारु मांस का त्याग कर दिया । मुनिसिपल कोन्सलर डॉ० ताराचन्द लालवाणी ने महाराजश्री का उपदेश सुनकर अनेक नियम ग्रहण किये । यहां तक की पहली तारीख को वनस्पति खाने का भी त्याग किया । इस प्रकार नगर के सेकडों मुसलमान भाईयों ने तथा हजारों सिन्धि भावुकों ने दारु मांस एवं जीवहिंसा का त्याग किया । नगर के प्रायः अधिकारी गण एवं मुख्य मुख्य प्रतिष्ठित सज्जनों ने व्यापारियों ने सन्तों के दर्शन कर त्याग प्रत्याख्यान द्वारा तपस्वियों के प्रति अपनी श्रद्धांजलि व्यक्त की ।

लधुतपस्वीजी मांगीलालजी महाराज ने एकोत्तर दिन की तपश्चर्या की थी । तपस्या की पूर्णाहुति का समय ज्यों ज्यों नजदीक आता था त्यों त्यों धर्म की जागृति बढने लगी । संघ के उपमंत्री श्रीमान् गोकलदास महादेव भावसार आपने तपस्वीजी महाराज के पारनेपर महान उपकार का कुलभार श्री संघ को प्रार्थना कर अपने उपर ले लिया । आपने तपश्चर्या की पूर्णाहुति के अवसर पर दो अनाथाश्रमों को, विधवाश्रम को, तथा अन्धशाला को एवं स्कूल के सभी छात्रों को भोंजन कराया और गरीबों को तथा साधर्मि भाईयों को आर्थिक सहायता दी । रोहतक के सेठ श्रीजोतराम केदारनाथ सेठ पन्नालालजी साहब ने अपनी तरफ से कराची के तथा आस पास के बगीचे में पहाड आदि आश्रम में रहने वाले योगी संन्यासियों को भोंजन कराया । बडे बडे योगी लोग सैकडों की जमात में एकत्र होकर जैन धर्म की जय बोलते हुए तपस्वीजी के दर्शन के लिए आये । दर्शन कर बडे प्रसन्न हुए । लोगों ने भी योगियों का एवं संन्यासियों का स्वागत किया ।

घोर तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने ९६ दिन की सुदीर्घ तपस्या की थी । तपश्चर्या की पूर्णाहुति का समय ज्यों ज्यों समीप आता जाता था त्यों त्यों दूज के चन्द्र की तरह लोगों का उत्साह भी बढ़ता जाता था । तपश्चर्या का समय नजदीक आ गया । जैन संघ ने तपोत्सव अत्यन्त उत्साह से मनाने के लिए सर्वत्र पत्र पत्रिका को छाप कर भारत के मुख्य मुख्य नगरों में एवं ग्रामों में भेजी गई । सिन्धी, गुजराती हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा में बुलेटिन छापकर समस्त नगर में वितरित किये । जैन उपाश्रय के विहार होस्पिटल रोड पर बडे बडे कपडों पर स्वर्णाक्षरों में तपस्वीजी के तपश्चर्या की पूर्णाहुति महोत्सव लिखकर लटकाये गये । पूर्णाहुति के दिन कराची के कसाईखाने बन्धरहे इस भावना से पं. श्री घासीलालजी महाराज ने म्यु. कोन्सलर साहेब श्री खीमचन्द माणकचन्द शाह के द्वारा कसाईगृह के संचालकों को तपस्वीजी म० के दर्शनार्थ बुलवाए गये । जहां की साढे तीन लाख जनता मांसाहार करती हो वहां कितने जानवर मारे जाते होंगे यह कल्पना से बाहर की बात है । लगभग ५० कसाई जैन उपाश्रय में आकर तपस्वीजी म० के दर्शन किये । जिनका कद्दावर भारी भरखमशरीर, मुख का रौद्रस्वरूप, बडा भयावना प्रतीत होता था । उनको पंडित मुनिश्री ने अहिंसा धर्म का उपदेश कुरानेशरीफ की आयतों से एवं मुस्लिम सन्तों के सुवचनों के अनुसार दिया । उपदेश सुनकर सभी कसाई भाई बडे प्रभावित हुए । अन्त में

महाराज श्री ने उनसे कहा कि इन ओलिया तपस्वी मुनिश्री ने ९६ दिन के उपवास किये हैं । जैन मुनि उपवास किसी स्वार्थवश नहीं करतें । अपने उपवास में स्वहित के साथ जगतकल्याण की परम भावना इनमें रही हुई है । मनुष्य की रक्षा तो सरकार कर रही है परन्तु बिचारे मूक पशु पक्षियों की रक्षा करनेवाले संसार में परमात्मा की प्रार्थना करनेवाले महात्मा के अतिरिक्त दुसरे कोई नहीं हैं । इसलिए इन तपस्वी महात्मा की खास इच्छा है कि आप सभी लोग एक दिन सभी प्राणियों की रक्षा करके ईश्वर की प्रार्थना करें । सभी कसाई लोग बोले "इंशाअल्लाह ।" परमात्मा चाहेगा तो हो जायगा ।" महाराज श्री से ने कहा हम चाहेंगे तो परमात्मा भी चाहेगा । "क्योंकि हुई हमसे शोहरत है काजी खुदा की" बन्दा चाहेगा तो खुदा भी चाहेगा ।"

महाराज श्री के समझाने पर आए हुए सर्व कसाई समाज के प्रतिनिधियों ने कहा—कि हम सभी को समझाने का प्रयत्न करेंगे ऐसा कहकर वे अपने साथी कसाई भाईयों को समझाने अपने स्थान पर चले गये । दूसरी ओर नगरपति श्री जमशेदजी नसरवानजी को बातचित के लिए बुलाये गये । सेठ श्री जमशेदजी कराची के माने हुए गृहस्थ थे । वे परोपकारी स्वभाव के थे । कराची का कोई भी गरीब से गरीब गृहस्थ यदि आधी रात को भी उनके घर पर जाता तो वे उसी समय मोटर में बैठकर उसके घर जाते । कोई भी बिमार हो तो अस्पताल लेजाते । भूखा हो तो भोजन की व्यवस्था करते और नंगा हो तो वस्त्र देते । जो कोई मनुष्य जिस किसी आशा को लेकर जाता वह जमशेदजी के घर पर जाने के बाद निराश नहीं लौटता । इस परोपकार वृत्ति से सारा शहर उनसे प्रभावित था । और जमशेदजी जिन्हें भी कुछ कहते वे उनका कहना नहीं टालते । उनसे पं. श्री घासीलालजी म० ने फरमाया कि तपस्वी म० के ९६ दिनके उपवास की तपश्चर्या समाप्ति के दिन यहां के कतलखाने बन्द रखवाने हैं । जमशेदजी ने कहा—इस दिशा में मैं प्रयत्न अवश्य करूंगा । सेठ जमशेदजी ने तथा भाई खीमचन्द माणेकचंद शाह ने कसाईयों के साथ संपर्क करके एक दिन का कतलखाना बन्द करने का कसाईयों से वचन लिया । तदनुसार तपश्चर्या के पूर के दिन कराची शहर का कतलखाना तथा मटन मार्केट बंद रहा । समुद्र में मच्छी पकडने का धंधा करनेवालों को समझा करके एक दिन मच्छी पकडने का कार्य भी बन्द रखवाया गया । फलस्वरूप उस दिन लाखों जीवों को अभयदान मिला । इस वर्ष भी तपश्चर्या के पूर के दिन एक भव्य जुलुस निकला । जिसमें सीन्धी समाज ने गतवर्ष की तरह ठण्डे पानी की गाडी तथा नुगती की गाडी जुलुस में साथ रखकर हर-एक को नुगती की मिठाई दी गई । स्थानकवासी संघ ने पूर के दिन गरीबों को भोजन कराया । भोजन करने के स्थान से ४००–५०० गरीब लोग जय जयकार करते हुए उपाश्रय में आये और तपस्वी के दर्शन किये । पूर के दिन कराची के सब से बडे खालीकदिना हॉल में महाराजश्री का जाहिर प्रवचन रखा । तपश्चर्या की महत्ता पर महाराजश्री ने एक घंटे तक भाषण दिया । भाषण बडा प्रभावशाली हुआ । अन्य मुनिवरों ने तथा स्थानीय विद्वानो ने भी भाषण दिये । श्रोताओं से हाल खचाखच भर गया था । ९६ दिन की उग्र तपश्चर्या से कराची की जनता बहुत ही प्रभावित थी । कराची की लाखों जनता में से आधे से अधिक भाग के लोगों ने दर्शन का महान लाभ लिया होगा । तपस्वीजी म० के दर्शन करके सभी आश्चर्य मुग्ध हो जाते थे । संघ ने तपश्चर्या के समाचार रेडियों से प्रसारित कर सभी को तप की महत्ता समझाई ।

इस महा महोत्सव को सफल बनाने में सेठश्री छगनलालजी ललचन्दजी तुरखिया, खीमचंद मगनलाल वोरा, खीमचंद माणेकचन्द शाह, श्री सोमचंद नेणसी महता, श्रीत्रिभुवनदास शाह, श्री जयचंद जीवराज शाह डॉ० निहालचंदभाई, नारायणजीभाई, सेठ पन्नालालजी दिल्लीवाले ने खूब सहयोग दिया । पारसी संसार

लुहाने गोविन्दरामजी ने दारु मांस, व जीवहिंसा का सदा के लिए त्याग किया । चंबा स्टेट के निवासी नानकपंथी वैद्याचार्य संन्यासीजी ने जैन शास्त्राचार्य पूज्य श्री के एवं तपस्वीजी के दर्शन कर अत्यन्त प्रसन्नता प्रगट की । आपने प्रतिमाह पांच दिन तक हरिखाने की प्रतिज्ञा की । नेपाल सरदार महेश्वरसिंहब्रह्मा फासिस्ट कंट्राक्टर आपने उपदेश सुनकर बडी प्रसन्नता प्रगट की । आध्यात्मिक विषय पर देढ घंटे तक चर्चा करते रहें । महाराजश्री के गहन तत्व ज्ञान से ये बडे प्रभावित हुए । आपने एकादशी को निर्जला उपवास करने का नियम लिया । कमलनेन व सुजानमल ने सर्वथा दारु मांस का त्याग किया । सेठ दिनशाजी पेस्तन जी दस्तुर फारसी मेनेजर सिंध प्रोविंशियलबेंक तथा इनके पुत्र नोरजने दर महिने की पहली तारीख को दारू मांस एवं शराब का त्याग किया, इलेक्टरिक इंजिनीयर होरमजी भिखाजी खरास ने सदा के लिए दारु मांस का त्याग कर दिया । मुनिसिपल कोन्सलर डॉ० ताराचन्द लालवाणी ने महाराजश्री का उपदेश सुनकर अनेक नियम ग्रहण किये । यहां तक की पहली तारीख को वनस्पति खाने का भी त्याग किया । इस प्रकार नगर के सेकडों मुसलमान भाईयों ने तथा हजारों सिन्धि भावुकों ने दारु मांस एवं जीवहिंसा का त्याग किया । नगर के प्रायः अधिकारी गण एवं मुख्य मुख्य प्रतिष्ठित सज्जनों ने व्यापारियों ने सन्तों के दर्शन कर त्याग प्रत्याख्यान द्वारा तपस्वियों के प्रति अपनी श्रद्धांजलि व्यक्त की ।

लघुतपस्वीजी मांगीलालजी महाराज ने एकोत्तर दिन की तपश्चर्या की थी । तपस्या की पूर्णाहुति का समय ज्यों ज्यों नजदीक आता था त्यों त्यों धर्म की जागृति बढने लगी । संघ के उपमंत्री श्रीमान् गोकलदास महादेव भावसार आपने तपस्वीजी महाराज के पारनेपर महान उपकार का कुलभार श्री संघ को प्रार्थना कर अपने उपर ले लिया । आपने तपश्चर्या की पूर्णाहुति के अवसर पर दो अनाथाश्रमों को, विधवाश्रम को, तथा अन्धशाला को एवं स्कूल के सभी छात्रों को भोजन कराया और गरीबों को तथा साधर्मि भाईयों को आर्थिक सहायता दी । रोहतक के सेठ श्रीजोतराम केदारनाथ सेठ पन्नालालजी साहब ने अपनी तरफ से कराची के तथा आस पास के बगीचे में पहाड आदि आश्रम में रहने वाले योगी संन्यासियों को भोजन कराया । बडे बडे योगी लोग सैकडों की जमात में एकत्र होकर जैन धर्म की जय बोलते हुए तपस्वीजी के दर्शन के लिए आये । दर्शन कर बडे प्रसन्न हुए । लोगों ने भी योगियों का एवं संन्यासियों का स्वागत किया ।

घोर तपस्वीजी श्री सुन्दरलालजी महाराज ने ९६ दिन की सुदीर्घ तपस्या की थी । तपश्चर्या की पूर्णाहुति का समय ज्यों ज्यों समीप आता जाता था त्यों त्यों दूज के चन्द्र की तरह लोगों का उत्साह भी बढ़ता जाता था । तपश्चर्या का समय नजदीक आ गया । जैन संघ ने तपोत्सव अत्यन्त उत्साह से मनाने के लिए सर्वत्र पत्र पत्रिका को छाप कर भारत के मुख्य मुख्य नगरों में एवं ग्रामों में भेजी गई । सिन्धी, गुजराती हिन्दी एवं अंग्रेजी भाषा में बुलेटिन छापकर समस्त नगर में वितरित किये. । जैन उपाश्रय के विहार होस्पिटल रोड पर बडे बडे कपडों पर स्वर्णाक्षरों में तपस्वीजी के तपश्चर्या की पूर्णाहुति महोत्सव लिखकर लटकाये गये । पूर्णाहुति के दिन कराची के कसाईखाने बन्धरहे इस भावना से पं. श्री घासीलालजी महाराज ने म्यु. कोन्सलर साहेब श्री खीमचन्द माणकचन्द शाह के द्वारा कसाईगृह के संचालकों को तपस्वीजी म० के दर्शनार्थ बुलवाए गये । जहां की साढे तीन लाख जनता मांसाहार करती हो वहां कितने जानवर मारे जाते होंगे यह कल्पना से बाहर की बात है । लगभग ५० कसाई जैन उपाश्रय में आकर तपस्वीजी म० के दर्शन किये । जिनका कद्दावर भारी भरखमशरीर, मुख का रौद्रस्वरूप, बडा भयावना प्रतीत होता था । उनको पंडित मुनिश्री ने अहिंसा धर्म का उपदेश कुरानेशरीफ की आयतों से एवं मुस्लिम सन्तों के सुवचनों के अनुसार दिया । उपदेश सुनकर सभी कसाई भाई बडे प्रभावित हुए । अन्त में

महाराज श्री ने उनसे कहा कि इन ओलिया तपस्वी मुनिश्री ने ९६ दिन के उपवास किये हैं । जैन मुनि उपवास किसी स्वार्थवश नहीं करतें । आने उपवास में स्वहित के साथ जगतकल्याण की परम भावना इनमें रही हुई है । मनुष्य की रक्षा तो सरकार कर रही है परन्तु विचारे मूक पशु पक्षियों की रक्षा करनेवाले संसार में परमात्मा की प्रार्थना करनेवाले महात्मा के अतिरिक्त दुसरे कोई नहीं हैं । इसलिए इन तपस्वी महात्मा की खास इच्छा है कि आप सभी लोग एक दिन सभी प्राणियों की रक्षा करके ईश्वर की प्रार्थना करें । सभी कसाई लोग बोले "इंशाअल्लाह ।" परमात्मा चाहेगा तो हो जायगा ।" महाराज श्री से ने कहा हम चाहेंगे तो परमात्मा भी चाहेगा । "क्योंकि हुई हमसे शोहरत है काजी खुदा की" बन्दा चाहेगा तो खुदा भी चाहेगा ।"

महाराज श्री के समझाने पर आए हुए सर्व कसाई समाज के प्रतिनिधियों ने कहा—कि हम सभी को समझाने का प्रयत्न करेंगे ऐसा कहकर वे अपने साथी कसाई भाईयों को समझाने अपने स्थान पर चले गये । दूसरी ओर नगरपति श्री जमशेदजी नसरवानजी को बातचित के लिए बुलाये गये । सेठ श्री जमशेदजी कराची के माने हुए गृहस्थ थे । वे परोपकारी स्वभाव के थे । कराची का कोई भी गरीब से गरीब गृहस्थ यदि आधी रात को भी उनके घर पर जाता तो वे उसी समय मोटर में बैठकर उसके घर जाते । कोई भी बिमार हो तो अस्पताल लेजाते । भूखा हो तो भोजन की व्यवस्था करते और नंगा हो तो वस्त्र देते । जो कोई मनुष्य जिस किसी आशा को लेकर जाता वह जमशेदजी के घर पर जाने के बाद निराश नहीं लौटता । इस परोपकार वृत्ति से सारा शहर उनसे प्रभावित था । और जमशेदजी जिन्हें भी कुछ कहते वे उनका कहना नहीं टालते । उनसे पं. श्री घासीलालजी म० ने फरमाया कि तपस्वी म० के ९६ दिनके उपवास की तपश्चर्या समाप्ति के दिन यहां के कतलखाने बन्द रखवाने हैं । जमशेदजी ने कहा—इस दिशा में मैं प्रयत्न अवश्य करूंगा । सेठ जमशेदजी ने तथा भाई खीमचन्द माणेकचंद शाह ने कसाईयों के साथ संपर्क करके एक दिन का कतलखाना बन्द करने का कसाईयों से वचन लिया । तदनुसार तपश्चर्या के पूर के दिन कराची शहर का कतलखाना तथा मटन मार्केट बंद रहा । समुद्र में मच्छी पकडने का धंधा करनेवालों को समझा करके एक दिन मच्छी पकडने का कार्य भी बन्द रखवाया गया । फलस्वरूप उस दिन लाखों जीवों को अभयदान मिला । इस वर्ष भी तपश्चर्या के पूर के दिन एक भव्य जुलुस निकला । जिसमें सीन्धी समाज ने गतवर्ष की तरह ठण्डे पानी की गाडी तथा नुगती की गाडी जुलुस में साथ रखकर हर-एक को नुगती की मिठाई दी गई । स्थानकवासी संघ ने पूर के दिन गरीबों को भोजन कराया । भोजन करने के स्थान से ४००–५०० गरीब लोग जय जयकार करते हुए उपाश्रय में आये और तपस्वी के दर्शन किये । पूर के दिन कराची के सब से बडे खालीकदिना हॉल में महाराजश्री का जाहिर प्रवचन रखा । तपश्चर्या की महत्ता पर महाराजश्री ने एक घंटे तक भाषण दिया । भाषण बडा प्रभावशाली हुआ । अन्य मुनिवरों ने तथा स्थानीय विद्वानो ने भी भाषण दिये । श्रोताओं से हाल खचाखच भर गया था । ९६ दिन की उग्र तपश्चर्या से कराची की जनता बहुत ही प्रभावित थी । कराची की लाखों जनता में से आधे से अधिक भाग के लोगों ने दर्शन का महान लाभ लिया होगा । तपस्वीजी म० के दर्शन करके सभी आश्चर्य मुग्ध हो जाते थे । संघ ने तपश्चर्या के समाचार रेडियो से प्रसारित कर सभी को तप की महत्ता समझाई ।

इस महा महोत्सव को सफल बनाने में सेठश्री छगनलालजी ललचन्दजी तुरखिया, खीमचंद मगनलाल वोरा, खीमचंद माणेकचन्द शाह, श्री सोमचंद नेणसी महता, श्रीत्रिभुवनदास शाह, श्री जयचंद जीवराज शाह डॉ० निहालचंदभाई, नारायणजीभाई, सेठ पन्नालालजी दिल्लीवाले ने खूब सहयोग दिया । पारसी संसार

नामक अखबार के प्रतिनिधि श्री ठाकरसीभाई प्रायः हर सप्ताह तपश्चर्या के समाचार एवं पं. श्री घासीलालजी महाराज के व्याख्यान प्रकाशित करते थे। पारसी संसार वांचक जन महाराज श्री के प्रवचन को बडे श्रद्धा से पढते थे।

चातुर्मास में नवरात्रि के अवसर पर संघ के आगेवानों ने पं. श्री घासीलालजी महाराज से निवेदन किया कि नवरात्रि में जहां जहां बलिदान होने के स्थान हैं वहां वहां अहिंसा के प्रचार के लिए मुनियों को भेजे तो बहुत ही अच्छा प्रचार होगा। तदनुसार श्री समीरमुनिजी श्री कन्हैयालालजी म० श्री मंगलमुनिजी नवरात्रि के समय सारे दिन बलिदान होने के स्थानों पर प्रचार के लिए घूमते और लोगों को समझाते थे जिससे कई जगह प्राणिवध बन्द रहे। कई जगह से हिंसा के लिए लाए हुए जानवरों को छुडवाकर संघ के गृहस्थ ले आए। एक दो जगह बलिदान करनेवालों ने प्रतिरोधात्मक सामना भी किया, परन्तु नवरात्रि के नौ दिनों तक प्रचार कार्य चालू रहा। जिससे परिणाम अच्छा आया। पं० मुनिश्री घासीलालजी महाराज के लगातार दो चातुर्मास कराची में होने से बडा उपकार हुआ। जैन अजैन जनता महाराज श्री की विद्वत्ता से बडी प्रभावित हुई। जैन साधु की चर्या बडी कठिन होती है निर्दोष संयम का पालन करते हुए सिन्ध जैसे हिंसा प्रधान देश में विहार करना लोहे के चने चबाने जैसा था। नंगे पैर, नंगे सिर, पैदल विहार, बयालीस दोष टालकर आहार पानी लेना आदि अत्यन्त कठोर नियमों का पालन करते हुए विचरना साधारण व्यक्ति का कार्य नहीं है। जैन मुनियों के कठोर आचार देखकर कराची की अजैन जनता भी आश्चर्य मुग्ध थी। मुनिलोग यदि विद्वान, लोगस्थिति को जाननेवाले और धर्म के वास्तविक सिद्धान्तों को प्रगट करनेवाले हो तो उनके उपदेश का कैसा उत्तम असर होता है इसका ज्वलंत उदाहरण कराची चातुर्मास में देखा गया। व्याख्यान में बहुसंख्यक अजैन, प्रतिष्ठित सज्जन व विद्वान लोग उपस्थित होते थे। सभी लोग आपके प्रवचन सुनकर मुक्तकण्ठ से आपके ज्ञान और चारित्र की प्रशंसा करते थे। आपके व्याख्यान की खास बडी खूबी तो यह थी कि उसमें संकीर्णता की तनिक भी बू न थी। किसी भी मत वाले को कडवी लगे ऐसी कोई बात न होती थी। आपका एकमात्र सिद्धान्त था लोगों को अधिक से अधिक दुर्व्यसनों से मुक्त कराना। चातुर्मास काल में हजारों व्यक्तियों ने शराब पीना और मांस खाना बन्द किया। आपका यह भव्य चातुर्मास कराची के इतिहास में स्वर्णाक्षरों से लिखा जाने योग्य था।

चातुर्मास समाप्त हुआ और आपने कराची से विहार कर दिया। कराची के हजारों नागरिकों ने अश्रुभीने नयनों से आपको विदा दी। विदाई का दृश्य बडा ही भावपूर्ण था। जिधर देखो उधर अपार जनमेदनी दृष्टिगोचर होती थी। किन्तु सभी के मुह पर अत्यंत उदासीनता झलक रही थी। आपने कराची से विहार कर गुजरात नगर में प्रवेश किया। हजारों लोग गुजरात नगर तक पैदल ही आपके साथ चलते रहें। गुजरात नगर में एक दिन विराजे। यहां आपका जाहिर प्रवचन हुआ। कराची की हजारों जनता ने आपका प्रवचन सुना। गुजरात नगर से विहार कर आप दिगरोड पधारे। गुजरात नगर से दिग रोड ५ मील दूर पडता है। रास्ता कच्चा होने से कांटे और कंकर विपुल मात्रा में थे। ५०० स्त्री पुरुष दिगरोड तक पैदल ही आपके साथ आये। यहां भी आपका प्रवचन हुआ।

अचार्यपद महोत्सव

कराची की जनता पं० मुनि श्री घासीलालजी म० श्री के व्याख्यानों को मंत्रमुग्ध होकर सुनती थी। आप की विद्वत्ता और संयमनिष्ठा से प्रभावित होकर कराची संघ ने आपको आचार्य पद पर प्रतिष्ठित करने का विचार किया। श्री संघ ने संगठित होकर महाराजश्री के सामने अपनी भावना व्यक्त की। श्री संघ के प्रमुख

व्यक्तियों से आपने कहा मैं संघपति बनने की अपेक्षा संघसेवक बनना अधिक पसन्द करता हूं । आचार्य पद यह एक बहुत बडी जिम्मेदारी का पद है । इस पद को निभाने के योग्य इस समय मैं नहीं हूं । अन्त में श्रावकों का आग्रह तथा सभी मुनिवरों की प्रार्थना पर स्वयं इच्छा न होने पर भी आपने विनय आचार्य बनने कि बाबत में मैन रहे । महाराज श्री मलीर पधारे । मलीरवासियों के हर्ष का पार न रहा हजारों नरनारियों ने आपका भव्य स्वागत किया ।

मार्गशीर्ष वदी नौम रविवार संवत् १९९३ ता. १३-१२-३६ का दिन पट्टप्रदान करने के लिए नियत किया गया । कराची से मलीर तक संघ ने बसों व मोटरो की व्यवस्था कर दी । आचार्यपद महोत्सव में सम्मलित होने के लिए हजारों व्यक्ति बाहर से आने लगे । सारा नगर भक्त श्रावक वृन्द से भर गया । मलीर और कराची संघ ने स्वागत का उत्तम प्रबन्ध किया । ता. १३-१२-३६ को प्रातः ही महोत्सव के स्थान में दर्शकों की भींड जमा होने लगी । रंग विरंगे पोशाखों में सजे हुए विभिन्न प्रान्त निवासियोंका यह सम्मेलन अपूर्वसा दिखाई देता था । यह एसा मालूम पडता था जैसे जिनशासन को रमणीय उद्यान रंग बिरंगे फूलों से भरा हो और विकाश के यौवन में प्रवेश कर रहा हो । धार्मिक उद्देश्य के लिए एकत्र इतने बडे जन समूह को देखकर यही प्रतीत होता था कि भारतीय जीवन में धर्म कितना ओत प्रोत हुआ है ।

सभा मण्डप में पं. मुनि श्री घासीलालजो महाराज अपनी मुनि मण्डली के साथ पाट पर बिराजे ।

श्रावकों ने तथा मुनिवरों ने मंगलगान के साथ आपका अभिनन्दन किया मुनियों के तथा कराची संघ के प्रतिष्ठित सज्जनों ने प्रासंगिक प्रवचन दिया बाद में सर्व मुनिमंडल ने बडेहर्ष से पं. मुनि श्री घासीलालजी महाराज को जय ध्वनि के साथ आचार्य पद की चद्दर ओढाई । चद्दर ओढाने समय उपस्थित जनता ने जय-नादसे प्रांगन को गुंजारित कर दिया । संघ के प्रमुख व्यक्तियों ने आचार्यपद एवं जैनधर्म दिवाकर पद को समर्पित करने वाली पत्रिका गुरु देव को अर्पन कर बाद में समस्त संघ में उसे वितरित की उसकी प्रति लिपि इस प्रकार है—

श्रीः ॥

श्रीवीतरागाय नमः

प्रसिद्ध वाचक, पञ्चदशभाषा ज्ञाता, अनेकग्रन्थ निर्मापक, वादिमानमर्दक, श्रीशाहु छत्रपति कोल्हापुर राज्यगुरु तत् प्रदत्त "जैनशास्त्राचार्यपदविभूषित बालब्रह्मचारी पंडित रत्न आशु कवि सिद्धान्त महोदधि पूज्यपाद सकल गुणालंकृत, परम पूज्य श्री१०८ मुनि श्री घासीलालजी महाराजनी चरण सेवामां ।

समर्पित

पूज्यपाद गुरुजी

सहस्र अब्दो पश्चात् आपना विद्वान शिष्यमण्डल सहित प्रभु महावीरना पुनित पगले चाली, ये महान विभूतिना अनुगामी बनी, आपे सिंध प्रदेशनी भूमि पावन करी, ए सिंधप्रदेशनु महद् भाग्य छे ।

विकट प्रदेशनो विहार सेकडों वर्षों थी संतोना परिचयथी वंचित रहेला जन समुदायने आपे अमृतमय वाणी थी आपेल सद्बोद सिंध प्रदेशमा आपे प्रवर्तविल अद्भूत धर्मोद्योत ए अत्यन्त अतीव उज्जवल अने प्रशंसनीय छे ।

सिद्धान्त महोदधि गुरुदेव !

अत्यन्त निखालस वृत्तिथी अमोने कहेवाद्यो के आप अने आपना पुरोगामी पूज्य श्री फूलचन्द्रजी महाराज के जेमना हिस्से सिंधनु क्षेत्र खुलवानु मानजायछे. ए अने आप सर्व सिंधमां पधार्या पहेलां

साधु टी. एल वासवानी को जब पूज्य श्री के हैदराबाद पधारने की सूचना मिली तो वे बडे प्रसन्न हुए। पूर्व परिचय तो था ही। वे अपने आश्रम वासियों के साथ पूज्य श्री के दर्शनार्थ आये। उन्होंने पूज्य श्री को अपने आश्रम में व्याख्यान देने के लिए निमंत्रित किया तदनुसार पूज्य श्री अपने शिष्यों सहित वहां पधारे। वहां दो व्याख्यान पूज्यश्री के हुए जिससे सुनने के लिए बहुत बडी संख्या में श्रोता वहां आये थे।

सन् १९३३ में अंग्रेजों जे भारत को स्वायत्त शासन देना स्वीकृत किया था। उसी के सिलसिले में भारत भर में चुनाव हुए थे। हैदराबाद के मानें हुए गृहस्थ श्री मुखी गोविन्दरामजी हिन्दू महासभा की तरफ से चुनाव में खडे हुए थे। वे चुनाव प्रचार के लिए एक दिन सेठ लालचन्द एडवाणी के यहाँ आये। उन्हे श्री पार्वती बहन बी. ए. ने पूज्यश्री का एवं तपस्वीजी महाराज का परिजय दिया जिससे वे दर्शनार्थ आये। श्री पार्वती बहन ने पूज्यश्री तथा तपस्वीजी को सेठ गोविन्दरामजी का परिचय दिया। पूज्य श्री ने उन को अहिंसा का उपदेश दिया। जिसे सुनकर वे बहुत प्रसन्न हुए। बाद में वे बोले–मैं चुनाव में खड़ा हुआ हूँ मुझे आप आशीर्वाद दें कि मैं चुनाव में सफल बनूं। तब पूज्यश्री ने फरमाया कि "यादृशी भवाना यस्य सिद्धिर्भवतितादृशी" पवित्र भावना का फल पवित्र ही मिलता है। स्वार्थ भावना को छोडकर परमार्थ भाव से चुनाव में खडे हुए होंगे तो बिना मांगे ही आशीर्वाद मिल जायगा। आशीर्वाद मांगने से नहीं मिलता कार्य करने से मिलता है।

हैदराबाद में उस समय एक लाख जनता निवास करती थी। हिन्दू कम थे और मुसलमानों की संख्या अधिक थी। मुखी गोविन्दमाजी हैदराबाद में धनी–मानी गृहस्थ थे। उनके खेती की जमीन भी बहुत थी। व्यापार व खेती से सम्पन्न मुखी सारी प्रजा का हितैषी था। उनके हृदय में हिन्दु मुसलमान का कोई भेद नहीं था वे सभी के दर्द में हिमायती बनकर हित का काम करनेवाले थे। इस कारण हैदराबाद के सभी लोग मुखी गोविन्दरामजी को चाहते थे।

वह दिन भी आया जिस दिन वोट पडनेवाले थे। वोटो में दोनों पक्ष बराबरी के दिखाई दे रहे थे। चुनाव परिणाम जाहिर होंने के दश दिन पूर्व एक दिन दुपहर में ध्यान में मुखी गोविन्दरामजी के विजय का संकेत पूज्यश्री को मिला। और पूज्जश्री ने वह बात श्री पार्वती बहन को कही। श्री पार्वती बहन ने मुखी को जाकर कहा कि आज गुरुजो को ध्जान में आपकी विजय का संकेत मिला है। चुनाव का परिणाम कराची से जाहिर होने वाला था। वोटों की गिनती में मुखी को सोलह हजार वोट मिले। विजय का तार मुखी को सुवह दातन करते समय मिला। तार मिलते ही जैसे बैठे थे वैसे हि मोटर में बैठकर सीधे पूज्यश्री के पास साधु टी. एल. वासवानी के आश्रम पर पहुँचे और अपने विजय के समाचार प्रसन्न मुद्रा से सुनाए और साथ में ही पूज्जश्री को अपने बाग में बिराजने की विनंती की।

मुखी श्रीगोविन्दरामजी की विनती को मानदेकर वहां से विहार करके मुखी गोविन्दरामजी के बाग के बंगले में पधारे। हैद्राबाद स्टेशन के पास ही मुखीजी का बाग था। बाग में बहुत बड़ा बंगला पूज्य श्री को बिराजने के लिए खोल दिया गया। जैन मुनियों के नियमों से अज्ञात होने के कारणउन्होंने अपने मुनीम को आज्ञा दी की गुरुजी के साथ नो मुनीवर है। दो रसोइदार को बुलाओ और जीन जीन मुनि को जैसी जैसी रुचि हो वैसा भोजन सभी के लिए बनाने का कहो। जब मुखीजी के मुनीम ने आकर पूज्य अचार्य श्री से पूछा कि आप सब को एक समान ही भोजन चाहियेगा या जुदा जुदा ? पूज्य श्री ने मुनीमजी से पूछा यह क्यों पूछ रहे हो ? तब मुनीमजी ने कहा की–सेठ मुखी साहेब मुझे आदेश दे गये हैं कि मुनियों को रुची के अनुसार रसोइया को बुलाकर भोजन की व्यास्था करना। इसलिये मैं पूछ रहा हूँ। पूज्य आचार्य श्री ने मुनीमजी से कहा कि–"हम जैन मुनि अहिंसक घरों से भिक्षा लाकर भोजन करते हैं। हमारे लिए पृथक रसोइया

रखकर भोजन नहीं बनाया जाता । जैन मुनियों का नियम ही ऐसा है कि वे अपने लिये बनाया हुआ भोजन कभी भी नहीं लेते" । पूज्य श्री से समाधान पाकर मुनीमजी ने मन्त्री गोविन्दरामजी सेठ को जाकर सारी बात कही जिसे सुनकर मुखीजी को बडा आश्चर्य हुआ और जैन मुनि व धर्म के प्रति अत्यंत श्रद्धा बढ़ी । मुखी गोविन्दरामजी, सेठ किसनचन्द पोहुमल ब्रदर्स, सेठ लालचन्द एडवानी परिवार, विश्ना टी. डास्वानी परिवार तथा हैद्राबाद जैन श्रीसंघ पूज्य श्री का चातुर्मास कराना चाहता था परन्तु साथ के वयोवृद्ध तपस्वी श्री सुन्दरलालजी महाराज अपनी वृद्धावस्था के कारण विहार करने में असमर्थ होते जा रहे थे । जो चातुर्मास के लिये रहें और चातुर्मास बाद विहार नहीं हो सके तो इतने दूर स्थिरवास रहने जैसा कोई क्षेत्र नहीं था । उस कारण हैद्राबाद से पूज्य श्री ने मारवाड के लिये विहार कर दिया ।

हैद्राबाद शहेर से मीरपुरखास तक ट्रेनें अधिक चलती थी । जिससे पुतली मां पार्वती बहन आदि बहने तथा गुरुदास, हिराचन्दभाई आदि भाई नित्य ट्रेन से दर्शनार्थ आते और दो तीन घंटा ठहर कर चले जाते । मीरपुरखास तक आते रहे । उन सभी सिन्धी भाई बहनों ने पूज्य श्रीके अंतिम दर्शन मीरपुरखास में आकर किये । वापिस जाते समय उन सभी के नेत्र अश्रुपूर्ण थे । सबक–सबक कर रोते हुए बोले कि अब गुरुजीके दर्शन कब होंगे । हमें आप भूला न दें । जहां भी पधारें वहां से आसीर्वाद देते रहें जिसे हमारी आत्मा का उद्धार हो । जब तक पूज्यश्री व मुनि मण्डल दिखाई देते रहे तब तक थोडा चलते फिरसे लौटकर देखते हुए नमस्कार करते । जहां से अब दिखना असंभव लगा वहीं कुछ क्षण खडे रहकर दर्शन करते रहे और नमस्कार किया फिर स्टेशन पर पहुंचकर अश्रुभरे नेत्रो से गाडी में बैठकर रवाना हुए ।

सन् ३३ में हैद्राबाद तक जोधपुर स्टेट की रेलवे थी । मीरपुरखास इस लाइन का मुख्य केन्द्र था । बालोत्तरा से करांची तक जैन मुनियों को रेल्वे मार्ग से ही विहार करना होता था । करांची श्रीसंघ ने मीरपुर खास रेल्वे केन्द्र के टेलीफोन कंट्रोलर श्री हरगोविन्ददासभाई रावल तथा श्री रामगोपालजी से संपर्क करके इनके द्वारा इंजन से गरम पानी लेकर रखने की व्यवस्था करते थे । यहां रेल्वे स्टाफ में जोधपुर के लोग ही अधिक थे । इन सभी के आग्रह से दो व्याख्यान पूज्य श्री के वहाँ हुवे ।

मीरपुरखास से छोटी बडी छोर स्टेशन तक सिन्ध भूमिसरसब्ज है छोटेछोर स्टेशन से रेगीस्थान प्रारंभ होता है । खोखरेपार स्टेशन सिन्ध प्रान्त का तटवर्ती स्टेशन है । यहों से जोधपुरराज्य प्रारंभ होजाता है । पूज्य श्री आदि मुनिवर विहार करते हुए बाडमेर पधारे । भगवान श्रीमहावीर जयन्ती का व्याख्यान पूज्य श्री का ओसवालो के नोहरे में हुआ । वहां से बालोत्तरा पधारे । तपस्वीजी म. के शरीर की अशक्ति दिनो दिन बढती जा रहीथी । येन केन प्रकार से धीरे–धीरे विहार करते हुए यहां तक तो पधार गए परन्तु अब आगे विहार करने का सामर्थ्य नहीं था । चातुर्मास के दिन भी अत्यंत समीप आते जा रहे थे । तपस्वीजी म. के गिरते हुए स्वास्थ्य को देखकर बालोत्तरा के सेठ श्री फतेचन्दजी साहेब दांतो, श्री वक्षीरामजी श्री केशरीमलजी श्री मिश्रीमलजी आदि श्रावकों ने चातुर्मास बिराजने का आग्रह किया । पूज्य श्री का बिचार मेवाड में जाकर कहीं योग्य क्षेत्र में तपस्वीजी म. को स्थिरवास रखने का था । इस कारण वहां से पारलु होकर समदड़ी के लिये विहार किया । उधर बालोत्तरा वाले अपने गाँव में ही चातुर्मास के लिये बिराजित करना चाहते थे । अपने विचारानुसार बालोत्तरा के श्रावक चातुर्मास की विनंती के लिये पारलू तथा समदड़ी आए । बालोत्तरा वालों का अत्याग्रह देखकर तपस्वीजी म. की सम्मति के अनुसार चातुर्मास रहने की स्वीकृति दे दी ।

तपस्वी सुन्दरलालजी म. को ज्योतिष ज्ञान बहुत ही अच्छा था, आपने ज्योतिष ज्ञान के आधार से पूज्यश्री को नम्र निवेदन किया कि यह वर्ष मेरी आयु का अन्तिम वर्ष है । अब मैं अधिक नही रहने का हूं । तपस्वीजी म. के निर्णयानुसार शरीर बल भी घटता जा रहा था । समदडी से बालोत्तरा जाते समय

केवल दो तीन मील का ही विहार कर सकते थे। और वह भी मुनियों के सहारे से ही चल सकते थे। तपस्वीजी म. की पूज्य श्री के प्रति अनन्य भक्ति थी तो पूज्य श्री का तपस्वीजी म. के प्रति अगाध स्नेह था। एसी अवस्था में पूज्य श्री उनको तनिक भी जुदा नहीं छोडते थे। बालोत्तरा स्टेशन की जैन धर्मशाला में बिराजना रहा। रात को पूज्य श्री का जाहिर व्याख्यान भी होता था। रात की शान्ति के समय व्याख्यान में लोग भी श्रवणार्थ बहुत अधिक आते थे। आचार्यश्री अपनी शिष्य मण्ड़ली के साथ चातुर्मास के लिये शहर में सेठ फतेचन्दजी दांती के विशालभवन में पधारे, श्रीसंघ का अपार उत्साह था, श्रीसंघ के द्वारा दांतीजी के मकान के पीछे पटांगण में ऐक विशाल मण्डप तैयार किया गया था, वहां आचार्यश्री के व्याख्यान होते थे। चातुर्मास समय नजदीक आने पर तपस्वीजी म. ने पूज्य श्री से प्रार्थना की कि प्रतिवर्ष की भांति इस वर्ष भी चातुर्मास में तपश्चर्या करने की मेरी अत्यन्त इच्छा है। पूज्य श्री ने फरमाया--तपस्वीजी आपका शरीर बहुत ही दुर्बल होगया है। मुनियों के बिनासहारे चल नहीं सकते हो, एसी स्थीति में तपश्चर्या कैसे होगी? तपस्वीजी महाराज ने कहा गुरुदेव! तपश्चर्या का सम्बन्ध आत्मा से है, शरीर से नहीं। यह मेरा अन्तिम वर्ष-है। प्रतिवर्ष तो तपश्चर्या की और इस वर्ष तपश्चर्या न करुं तो फिर मेरे संसार त्याग का फल ही क्या होगा! संसार में अपने घर से जाने वाले अपने अपने स्नेही को रास्ते के लिये भाथा (भोजन) बंधाते हैं तो क्या आप मुझे जाते हुए को भाथा नहीं बधांएंगे? आप के साथ रहने का लाभ यह हि है कि आप मुझे मुक्त हृदय से अन्तिम साज (सहाय) दें। तपस्वीजी म. की इच्छा को पूज्य श्री सदा से मान दिया करते थे, उसी अनुसार पूज्य श्री ने तपश्चर्या करने की आज्ञा दे दी और तदनुसार तपस्वीजी म. ने प्रतिवर्ष की तरह महान तपश्चर्या प्रारम्भ की।

तपस्वी श्रीसुन्दरलालजी म. की तपश्चर्या असाधारण तपश्चर्या होती थी। वे केवल भूखे रहना ही नहीं जानते थे। किन्तु वे महान तप के साथ ज्ञान साधना भी करते थे! वे अपने तप के दिनों में बिना सहारे एक सामान्य आसन पर बठेते और सुबह से शाम तक शास्त्र स्वाध्याय करते। उन्हें श्रीदशवैकालिक, उत्तराध्ययन, आचारांग सूयगडांग, नन्दी सूत्र, सुखविपाक सूत्र कंठस्थ थे। गृहस्थावास से ही नित्य स्वाध्याय किया करते थे। तपश्चर्या में १२ लाख १३ लाख गाथाओं की स्वाध्याय कर लेते थे। तदनुसार आत्मबली तपस्वीजी म. ने निर्विघ्न महान तपश्चर्या पूर्ण की। तपश्चर्या के पूर पर हजारों मनुष्य दर्शनार्थ आए। गांव के जैन अजैन सभी को तपस्वीजी म, के प्रति परम विशुद्ध श्रद्धा जागृत हुई। सभी ने अगते पाले राज्य कर्मचारी लोग भी दर्शनार्थ तथा पूज्य श्री के उपदेश श्रवणार्थ आए। बालोत्तरा श्रीसंघ ने उत्कृष्ट भाव से तपोत्सव मनाया। तपस्वीजी म. के तपश्चर्या का पारणा सानन्द हो गया। जो कि पारणा करने की इच्छा नहीं थी वे तो संथारे की याचना कर रहे थे परन्तु पूज्य श्री ने संथारे का समय न देखकर पारणा कराया। पारणा करने के बाद पांच छ दिन बीतने पर तपस्वीजी म. को अति दस्ते लगना प्रारंभ हो गई। तपस्वीजी म. के बद्ध कोष्ठ होने से उम्रभर प्रायः कब्ज रहा करता था। परन्तु अब दस्ते लगना प्रारंभ होने से उन्होंने संथारा करने की अर्ज की पूज्य श्री तथा संघ के आगेवान गृहस्थ संथारे की जगह इलाज कराना चाहते थे।

तपस्वीजी म. को लगा कि स्नेह वश मुझे संथारा नहीं करा रहे हैं तो फिर स्वयं ने दूध, पानी दवा के अतिरिक्त अन्य वस्तु ग्रहण करना छोड़ दिया। एक दिन में तपस्वीजी म. के कृपापात्र श्री समीरमलमुनिजी म. ने पूज्य श्री की आज्ञा से दूध लेने का अति आग्रह किया। न पीने की इच्छा होते हुए भी पिलाने लगे तो उन्हें एसा लगा कि ये स्नेह से कहीं मुझे आगे बढने में रोक नहीं दें? इसलिये सभी के सुनते हुए प्रत्याख्यान ले लिये कि पूज्य श्री के सिवाय अन्य किसी के हाथ से आज से कुछ भी पदार्थ नहीं लूंगा। इससे

दूसरे मुनियों का आग्रह रुक गया।

दस पन्द्रह दिन निकल जाने के बाद तपस्वीजी म. ने दूध लेना भी बन्द कर दिया। केवल पानी और दवा लेते थे। ऐसी अवस्था में अजमेर सेठ घेवरचन्दजी चोपडा को श्रीसंघने तार से सूचना भेजी कि आप वैद्यराज जगन्नाथजी को लेकर जल्दि आवें। वैद्यराजजगन्नाथजी ने पहले भी तपस्वीजी म. का उपचार किया था, उससे आराम भी हुआ। जब तपस्वीजी म. को तार देने का पता चला तो वे बोले कि वैद्यजी नहीं आ सकेंगे। हुआ भी वही तार पहूंचा उस समय वैद्यजी स्वयं अस्वस्थ थे जिससे नहीं आसके।

तपस्वीजी म. की जन्मभुमि अलवर शहर थी आपके पिता का नाम भैरुबक्षजी था और माताका नाम अची-बाई था। आपके एक बडे भ्राता भी थे जिनका नाम कल्याणमलजी था। छोटी बहन का नाम सुन्दर-बाई था। आपकी पत्नी का नाम सुगनबाई था। आपके पुत्र नाथुलालजी थे। पोत्र का नाम बिरदीचन्दजी एवं ज्ञानचन्दजी थे। इस प्रकार आपके लड़का थो पोते थे परिवार बहुत बड़ा था दीक्षा के बाद वे जन्मभूमि अलवर नहीं पधारे अने कभी जाना भी नहीं चाहते थे। वे यह कहते थे कि मैने जब घर परिवार का संबन्ध त्याग दिया है तो फिर वहां जाने की जरूरत ही क्या! वहां जाने से मोह भाव जाग्रत होने की संभावना रहती है। अतः में अलवर जाना ही नहीं चाहता। परिवार से निर्मुक्त भाव रखनेवाले तपस्वीजी महाराजने पूज्य श्री से कहा कि अलवर वालों को संथारे का समाचार मत देना।

भादवा सुद १५ को तपश्चर्या का पारणा हुआ था आसोज विद ७ से दूध, पानी, दवा से अतिरिक्त अन्य आहार का त्याग कर दिया। आसोज सुद एकम १ से दुध का भी त्याग कर दिया और आसोज सुद ६ से दवा का भी त्याग कर दिया। तेविहार संथारा कर लिया पानी भी पूज्य श्री के हाथों से ही ग्रहण करते थे। उनको दीक्षा ली तब से यह नियम था कि मुहपति बन्धी रहै तब तक चारों अहार में से एक भी अहार नहीं लेना। दवा पानी लेना हो तो भी वे मुहपति का डोरा कानमेंसे निकालने के बाद ही लेते। इस नियम से वे मुहपति मुह पर होते हुए चारों अहार के त्यागी थे। आजोस सुद ६ से ८ तक शारीरिक स्थिति भयावह होती गई। रुग्णता के तार अन्यत्र भेजने के साथ अलवर भी तार भेजा गया। अलवर तार भेजने की बात जब तपस्वी जी म. को मालूम हुई तो उन्होंने फरमाया कि अलवर वाले नहीं आ सकेंगे। बात भी योंही हुई कि अलवर तार गया तो अलवर वालों ने पुनः तार से पूछाया कि तपस्वीजी महराज का स्वाथ्य कैसा है ? इस तरह का जवाब गया जितने तो इधर की सारी स्थिति ही बदल गई।

अत्यन्त अशक्तिवश तीन दिन तक वे स्वयं प्रतिक्रमण नही कर सके, नित्यपाठ भी दूसरों ने सुनाया। तीनों दिन रात्रि प्रति समय मुनि पासमें बने रहे। रात में ओसरे के अनुसार मुनि सेवा में जाग्रत रहेते थे। तपस्वी म. की चेतना बढती हुई थी, निरन्तर अंगुलियों के पेरखो पर अन्गूठा घूमता रह रहा था। उन्होने फरमा दिया था कि मेरे पास कोई भी बात नही करें। मेरे स्मरण में गड़बड़ी नहीं होनी चाहिए। आठम के बाद नवमी का दिन आनन्द से बीता। रात्रि के दोनों समय का प्रतिक्रमण और नित्य पाठ स्वयंने किया। सूर्योदय होने पर वहां के वैद्य ने नाड़ी देख कर कहा कि कल से आज नाड़ी बहुत ही अच्छी चल रही है। भय जैसी कोई बात नहीं है। आसोज सुद १० सुबह तपस्वीजीम. ने समीर मुनिजी तथा कन्हैया मुनिजी से कहा कि आज मेरा स्वास्थ्य ठिक है, तुम जाओ और पढो ? पूज्य श्री ने दोनो मुनियों से फरमाया कि तुम जाकर पण्डितजी से पाठ लेकर वापिस नौ बजे तक आजाना। नो बजे तपस्वीजी म. का आसन जिस कमरेमें है उससे दूसरे कमरे में परिवर्तित करना है। दोनों मुनिवर धर्मशाला में पढते थे वहां गये। पूज्य श्री बाहर पधार कर तपस्वीजी महाराज के पास पहुँचे इतने मे श्रावक बक्षीरामजी दांती और केसरीमलजी दोनो भी वहां दर्शनार्थ आए। पूज्य श्री ने तपस्वीजी म. से कहा कि आप को सोए सोए बहुत समय होगया

अब तो जरा इस मकान में ही घूमो फिरो तो अच्छा। तपस्वीजी म. बोले इतनी शरीर शक्ति नहीं है। दोनों श्रावको ने अर्ज की हमे तपस्वीजी म. को बैठा कर दर्शन कराने की कृपा करो। पूज्य श्री ने अपने हाथ के सहारे तपस्वीजी म. को बैठाए। तपस्वीजी म. ने दोनों श्रावकों की वन्दना स्वीकारी। पूज्य श्री अपने हाथों का सहारा दिए हुए हैं। किसे पता था कि तपस्वीजी म. अभी कुछ क्षण में ही महाप्रायाण करने वाले हैं। हिचकी आई और श्वासों ने तिव्र गति पकडी, उसी समय पूज्य श्री ने चौविहार संथारा करा दिया, जिसे तपस्वीजी महाराज ने चेतन युक्त स्वीकार करलिया। दोनों मुनि भी वहां उतावल से पहुंचे। शरीर में सिनेमां के चित्रों की तरह रंग दौड रहा था। जैन समाज की वह महान विभूति, महान तपस्वी, महान योगी इस नश्वर देह को पूज्य श्री के हाथों में सभी उपस्थित मुनियों श्रावकों की साक्षी से समर्पित करके सदा के लिये प्रस्थित होगए अर्थात् स्वर्गवासी होगए।

तपस्वीजी म. के स्वर्गवास के समाचार वायु वेग की तरह गांवमें सभी जाति, सभी समाज वालों को मालूम होते ही सभी ने अपना अपना व्यापार काम काज बन्द कर दिया। आस पास के गावों के संघो को तार फौन से समाचार पहुंच जाने से सैकडों लोग बाहर से आगये। करांची से ५०० मनुष्य आने के लिये कराची स्टेशन पर आए। बालोत्तरा श्रीसंघ को फोन किया कि यहा के लोग पहुँचे वहां तक अग्निदाह न करे। मारवाड प्रान्त में इतने समय तक मृत–शरीर को रोके रखने की प्रथा न होने से बालोत्तरा श्रीसंघ ने तबतक रुके रहने को ना कहदी, जिससे वहां के लोग हताश होकर स्टेशन से लौट गए।

एक बजे तक श्मशान यात्रा की तैयारी करली क्योंकि सामान तीन दिन पहले ही जोधपुर से ले आये थे। श्री फतेहचन्द्रजी दांती के मकान में चातुर्मास था। वह सारा मकान गली, बाजार लोगों से खचाखच भर गया। जैन जैनेतर सभी को तपस्वीजी महाराज के प्रति दृढ श्रद्धा होने से गांव की सभी जाति को भजन मण्डलियां अपने २ साधन लेकर प्रभु भजनों की धून लगा रहे थे। मनुष्यों की ठठ इतनी लगी थी कि कहीं पैर रखने की जगह नहीं थी। वेन्ड की विषाद स्वर लहरी में साक्षात जीवित मूर्ति बिराजित है एसी प्रतित हो रही थी। आत्मा द्वारा त्यागे जाने पर शरीर में कडक पन आजाता है परन्तु इस शरीर में वैसा कोई परिवर्तन नही आया। शरीर के सभी अंगो को जिधर झुकाओ उधर ही झुकता था। लोग ऐसा सोच रहे थे कि यह भव्य आत्मा अभी कुछ बोल कर जीवित होने की प्रतीति कराएंगे। परन्तु वह कल्पना साकार नही होसकी। हजारों जनता की आँखे सजल होजाती थी। निःश्वास भरे शब्दो में वे बोलते थे कि इस महान आत्मा का अब इस जन्म में दर्शन कब होगा? यह दिव्य यात्रा बजार से होती हुई श्मशान में चार बजे पहुंची। जहां चन्दन पीपल काष्ठ की चिता में नश्वर शरीर को रखा गया। हजारों नारियल प्रज्वलित आग में वर्षा की भांति हजारों लोगों ने श्रध्या अश्रु पूरित नयनों से अर्पित किये। तपस्वी म. का सारा शरीर जल जाने के बाद भी बहुत समय तक चद्दर और मुहपति न जली यह वहां उपस्थित लोगों के लिये महान आश्चर्य बना। दूसरे दिन करांची संघ के कार्यकर्ता श्रीछगनलाल लालचन्द भाई तुरखिया, श्री खीमचन्द माणेकचन्द शाह, श्री छोटालाल छगनलालशाह श्री नारायणजी भाई, श्री सोमचन्द्र नेणसी महता, श्रीत्रिभुवनदास भाई आदि आए और अपने साथ लाए हुए चन्दन को तपस्वीजी म. के शरीर का जहां अग्निदाह हुआ वहाँ समर्पित किया। समर्पित करते ही आग प्रज्वलित हो उठो, मानो वह इस भेट की राह देख ही रही थी। सभी आश्चर्यचकित रह गये पश्चात दग्ध शरीर की जगह से करांची श्रीसंघ वालोंने भभूति के रूप में राख टीनों में भरी। इस बात का बालोत्तरा के जैनो अजैनो को पता चला तो सभी वहां दौड पडे। उस जगह से राख हाथ लगी तो राख और बाद मे मिट्टी भी खोद खोद कर ले गए।

तपस्वीजी म. के स्वर्गवास के समाचारों से सारे स्थानकवासी जैन जगत मे विषाद छागया। सभी

के मुह से एक आवाज थी कि हमारे में से एक महान योगी तपस्वी चला गया ।

श्री

योगानिष्ठ महान तपस्वी मुनि श्री सुन्दरलाल जी म. सा. का संक्षेप जीवन परिचय·

तपस्वी श्रीसुन्दरलालजी का जन्म अलवर में हुआ । आपके जन्मदाता पिता का नाम भैरुबक्षजी है एवं माता का नाम अचीबाई है । आपके जन्म के बाद कुछ बडे होने पर श्री गोकुलचन्दजी के वहां आपको गोद लिया गया था । आप बाल्यअवस्थासे हि धर्म प्रति बडी श्रद्धा रखते थे । आपकी सुयोग्य उम्र होने पर सुशिला श्री सुगनबाई के साथ शादि की गई तत्पश्चात् आपको कोई संतान न हो ने से १९७६ में एक बालक को गोद लिया जिनका नाम नाथुलालजी है ।

आप बाल्यअवस्था में ही धर्म के प्रति पूर्ण श्रद्धालु होने से गृहस्थावस्थामें भी आप नित्यप्रति सामाइक प्रतिक्रमण उपवास वेला तेला आदि अनेविध धार्मिक तपस्याएँ कियाकरते हैं—

एक समय की बात है कि स्वर्गस्थ महानतपस्वीराज श्री सुन्दरलालजी महाराज जब गृहस्थाश्रममें थे तब उनके बडे भाई कल्याणबक्षजी को शादी करके बारात वापस अपने गाममें लौट रही थीं । उस समय रास्तेमें कल्याणबक्षजी को लघुशंका की हाजत हुई । और वे रथ से नीचे उतर कर कुछ दूर जाकर लघुशंका की निवृत्ति के लिये बैठे । परन्तु काफी देर होने पर भी वे वापस नहीं लौटे तो बारात के अन्यजन वहां तालाश के लिये गए, तो उन्होंने वहां कल्याणबक्षजी को वेहोश अवस्थामें पडे देखे । उनको वेहोश होने कि बातजानकर तपस्वीराज ने वहां जाकर उनकी नब्ज देखी । नब्जसे उनको अभी वेहोसी ही है ऐसा जानकर पूज्य तपस्वीजी ने उसी वखत वहां की जमीन पुंजकर आसनलगाकर ध्यानमें बेठ गये । कुछ समय के बाद वे कल्याणबक्षजी बोलने लगे की मेरे स्थान पर लघुशंका की है अतः मैं इन्हे लेकर हि जाउंगा । इस पर से तपस्वीराज ने कहा कि इन्होंने जो कुछ किया है वह भूल से ही किया है अतः भूलकी इन्हे क्षमा की जावे । तत्पश्चात वे होंश में आये और वहां से गांव के लिए रवाना हुए । गांव में पहुंचने पर वे फिर से बेहोश हो गए । फिर तपस्वीराज ने वेसा हि किया और तेले का तपकर उनसे वचन लिया कि मैं १२ वर्ष पर्यन्त किसी भी प्रकार की तकलीफ नहीं दूंगा ।

स्व० तपस्वीराज एकबार जब अलवरमें बिराज रहे थे तो उसी मौहल्लेमें रात्रीको कौवे की बोली सुनकर उन्होंने कहा कि यहां पर कोई बहुत बडा उपद्रव होने वाला है । उसके दो तीन घन्टे के बाद किसी ने एकब्राह्मणी को जान से मार दिया ।

कहने का भाव यह है कि आप तपस्या के बलसे इस प्रकार भूत प्रेत डाकनादि को हटा सकते थे । एवं अनेक पक्षियों की भाषा आदि भी जान कर भविष्य को कह देते थे ।

तपस्वीश्री जब कहीं ४५ वर्ष की अवस्थामें थे उस समय उनकी सांसारिक धर्म पत्नी का देहान्त हो गया । उसके बाद उन्होने अपने भाई को लडकी गेंदाबाई की शादि कर वे संसारमें रहते हुए भी महीने में २७ दिन धर्मध्यानमें व्यतित करना शेष ३ दिन दुकान पर जाने का निश्चय बना लिया ।

इस प्रकार कुछ समय पसार करने पर अपने सुपुत्र श्रीनाथुलालजी को घरका सारा कार भार सोंपकर संवत् १९७७के मगसीर सुदी बीजको शहर भिनासरमें पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज सा. के पास जाकर उन्होंने दीक्षा धारण की ।

इस प्रकार आप बाल्यावस्थासे ही बडे धर्म परायण होकर विरक्त रहे एवं गृहस्थाश्रम स्वीकारने पर भी तपस्वी श्री उससे विरक्त से ही रहे । जैसे जल कमलवत् ।

आपके पुत्र नाथुलालजी के दो पुत्र हुवे जिनका नाम श्री बिरदीचन्दजी एवं ज्ञानचन्दजी बिरदीचन्द जी के दो पुत्र हुवे जिनका नाम मंगलचन्दजी, एवं लाभचन्दजी, ज्ञानचन्दजी के पुत्रों के नाम महेन्द्रकुमार

नरेन्द्रकुमार, एवं देवेन्द्रकुमार इस प्रकार ज्ञानचन्दजी के तीन पुत्र है
इस प्रकार व्यावहारिक रीति से आपको पुत्र पौत्रादि सरणी दिव्य परंपरा आज भी विधमान है एवं तपस्वीजी के पुण्यबलसे वे सब व्यवहारिक सुख संपन्न है ।

घडी धन्य आज की सबको मुबारिक हो २ ।। हुवा है पूर चवदशाका मुबारिकहो २ ।।टेक।।
हमारे भाग्योदय से फिर कृपाकि इन मुनिवरने ।। हुवे दर्शन हमें यहां पर मुबारिक हो २ ।।१।।
मुनि सद् ग्रन्थ के ज्ञाता जैनागम व्याख्याता ।। वर्षती वाणी अमृतसी, मुबारिक हो मुबारिक हो ।।२।।
पिता भैरव के घर आये माता प्रताप के•जायें।। शहर अलवर को शोभाए, मुबारिक हो मुबारिक हो ।।३।।
घर की रिद्धि सब छोडी, कुटुम्ब से प्रिती तुम तोडी ।। गुरु के शिष्य हो होना मुबारिक हो मुबारिकहो ।।४।।
तपस्यारम्भ कर दिनी यहां पर आते हि पहले ।। पिच्योतर दिन है आजे मुबारिक हो मुबारिक हो ।५।
कहिं बेला कहिं तेला कहीं अठाई नव वरंगी ।। लगा है ठाट तपस्या का मुबारिक हो मुबारिक हो ।।६।।
हजार एक आठ तेले कर पुज्य मुनिवर ने फरमाया ।। हो गये उससे कईज्यादा मुबारिक हो मुबारिक हो ।।७।।
तप पूर के पहले, अमरपडा खूब बजवाया ।। रखे सर्वलोग ज्यां अगता मुबारिक हो मुबारिक हो ।।८।।
'शोभा, की अंत में मुनिवर, यहि है आपसे अर्जी ।। आपकी मुज पै हो मेहर मुबारिक हो मुबारिकहो ।।९।।

भजन नम्बर २

मुनि सुन्दर तपस्वी तपस्यामें है भारी २ पिता भैरुलालजी प्रताप बाई महतारी,
उगणीसे सित्योतर दिक्षा मुनि ने धारी २ यह काम धेनु सम जाण जगत सुख कारी
करे ज्ञान ध्यान उद्योत रत दिन सारी, मैरी नैया पडी मझधार आप दो तारी ।।१।।
तपस्यामें देख लो कैसे मुनि ये शूरे चम्मालीस इक्सट और एकावन पूरे
उगणसाठ इक्यासी छियोंतर ब्यावरके मांही, चौसठ पिचोतर उदयापुरमें आई
नित उठ करके सब लीजे नाम सवेरी ।। मैरी नैया पडी मझधार आप दो तारी ।।२।।
नव्यासी गाम मोटेमें आपने किने नेउ तप ठाम सेमल तर पिने
शहैर कुचेरा एकानु देव चरण चिने, नेउ छनो तप धार कराचि यश लिने
पिच्यासी का पूर पूर आदमा भारी मैरी नैया पडी मझधार आप दो तारी ।।३।।
सुन्दर तपस्वी अर्ज मैरी सुनलिजे २. अब हो जाय निस्तार आशिस ऐसी दीजे
कोई हुइ मेरे से भूल माफ कर दीजे, मेरे लिए प्रभु से आप दया कीजे
शोभा चरणों की आस एक है तेरी, मैरी नैया पडी मझधार आप दो तारी ।।४।।

चातुर्मास समाप्त होने पर पूज्य श्री खण्डप, जालोर, तखतगढ होते हुए पोष माह में सादडी मारवाड प• धारे । उस समय गोडवाड प्रान्त का सादडी के स्थानकवासी व मूर्तिपूजक संघ में भयानक कदाग्रह चल रहा था। परस्पर पूर्ण रुप से संबन्ध विच्छेद था ।इस कदाग्रह को मिटाने के—लिये बहुत से प्रयत्न हुए परन्तु सफलता नहीं मिली। पूज्य श्री वहां पधारें और वहां गाँव में अगता रखवाकर ईश्वर प्रार्थना का आयोजन रखा गया जिसमें कई मूर्तिपूजक भाई आए । यह देखकर वहां के लोग बोल उठे कि पूज्य आचार्य श्री के पदार्पण से यहां का क्लेष मिट जायेगा ।

पूज्य श्री ने भी सादडी के इस भयानक झगडे को मिटाने की बात मन में ठानली। पहले तो स्थानकवासी समाज की तड को मिटाई बाद में वहां के प्रमुख गृहस्थ पृथ्वीराजजी कोठारी श्री जवानमलजी चोवटिया तथा युवक दल से संपर्क स्थापित किया । अन्दर ही अन्दर सभी से हृदय में परस्पर के क्लेष को मीटाने की भावना जागृत हुई । एसे समय में वहां मूर्तिपूजक समाज के मुख्य कार्यकर्ता दलीचन्द्रजी का

देहावसान हो जाने से गोडवाड के पंच वहां बैठ ने आए थे। उनके सामने झगडे को निपटाने की बात चली सभी के मन में यही भाव थे। किसी विशेष अवसर की तक में सभी थे। पूज्य आचार्य श्री को मेवाड में जाना था, इस कारण सादडी से ५ मिल दूर मूर्तिपूजक समाज का प्रसिद्ध तीर्थ राणकपुरजी पधारे। उसी रात को सादडी मारवाड का स्थानकवासी व मूर्तिपूजक समाज का वर्षों का क्लेश समाप्त हो गया। दूसरे ही दिन एक हजार घरों में एक गृहस्थ ने इस क्लेश के अन्त की प्रसन्नता में एक श्रीफल और एक रुपए की प्रभावना करदी।

मेवाड में पदार्पण

पूज्य श्री का चार वर्ष के बाद से मेवाड़ में पदार्पण होने से सेरा प्रान्त के लोगों में प्रसन्नता छा गई। सिंगाडा गांव से श्रावक लोगों का तांता लग गया। सायरा, सेमड़, कम्बोल, पदराडा, ढोल, तरपाल होते हुए आप जसवन्तगढ पधारे। श्रीसंघ की आग्रह भरी विनन्ती को मान देकर होली चातुर्मास यहीं विराजे। आस पास के गांवों से बहुत से श्रावक श्राविकाएँ दर्शनार्थ आए। वहां से गाव नान्दीस्मां पधारे, जहा उदयपुर श्रीसंघ के २५, ३० अग्रेसर श्रावक चातुर्मास की तथा उदयपुर पधारने की विनन्ती करने के लिये आए। पूज्य श्री ने उदयपुर पधारने की विनन्ती स्वीकृत की। इधर के सभी गावों में जहां जहां पूज्य श्री पधारे वहां एक दिन का अगता पालकर ईश्वर प्रार्थना की गई। एक किसान ने अगता नहीं पाला और कुए पर रेंट (अरहट) चलाया। यकायक रेंट का बेल कुए में जा गिरा। गांव वालों ने पहुंचकर बेल को कुए से जीवित बाहर निकाला। किसान ने अपनी भूल के लिये पूज्य श्री के पास आकर वारंवार क्षमा मांगी। इसी प्रकार मंदार [गोपीनाथजी की] गांव में कलाल द्वारा अगता न रखे जाने पर उसे भी तत्काल ही अपनी भूल का पश्चाताप के साथ क्षमा मांगनी पडी। उदयपुर के पास ही नाई गांव है, वहां के श्रीसंघका आग्रह होनेसे शेष काल वहां बिराजे। वहां से उदयपुर चातुर्मास के लिये पधारे।

वि० सं. १९९५ का चातुर्मास उदयपुर में

उदयपुर जैन श्रीसंघ की चीरकाल से यह हार्दिक भावना थी कि चारित्र चूडामणि पूज्य आचार्य श्री घासीलालजी महाराज सा. का चातुर्मास हमारे यहा पर हो। जिस समय पूज्य श्री सिन्ध प्रान्त में कराची जैसे दूर प्रदेश में बिचरकर अपनी ओजस्वी वाणी द्वारा जैन धर्म का महान प्रचार कर रहे थे उस समय भी श्रीसंघ के प्रमुख मेहताजी सा. जीवनसिंहजी की ओर से पूज्य श्री की सेवामें विनती भेजी गई थी और मेवाड राज्य के दिवान कुंवरतेजसिंहजी सा. मेहता को भी यह हार्दिक कामना थी कि पूज्य श्री का चातुर्मास हमारे यहां हो। किन्तु सिन्धप्रान्त में होनेवाले अपूर्व उपकारों को छोडकर पूज्यश्री उसवक्त उधर नहीं पधार सके। लगातार दो वर्ष तक सिन्ध प्रान्त में बिचरकर वहां की जैन अजैन प्रजा में जो जो उपकार हुए हैं उसका विवरण कराची के चातुर्मास के विवरण में आ ही गया है

सिन्ध प्रान्त को पावन करते हुए जब पूज्यश्री बालोतरा पधारे तब भी चातुर्मास की विनती के लिए उदयपुर का प्रतिनिधि मण्डल पूज्यश्री की सेवामें पहुचा किन्तु उस समय भी उदयपुरवालों की इच्छा सफल न हुई। लेकिन् कुछ आशा बन्ध गई थी।

बालोतरा का चातुर्मास पूर्णकर पूज्यश्री जब जालोर पधारे उस समय भी उदयपुर जैन संघ का प्रतिनिधि मण्डल चातुर्मास की विनती करने के लिए पूज्यश्री की सेवामें जालोर पहुँचा। वहां भी पूज्यश्री की ओर से सन्तोष जनक उत्तर नहीं मिला। लेकिन् कुछ आश्वासन मिल गया था। जालोर से जब पूज्यश्री घानेराव सादडी पधारे उस समय पुनः उदयपुर का श्रीसंघ पूज्यश्री की सेवामें आया और उदयपुर पधारने की प्रार्थना करने लगा। उदयपुर संघ की अत्यंत आग्रह भरी प्रार्थना पर पूज्यश्री ने मेवाड की ओर विहार करना स्वीकार किया। सादडी से पूज्यश्री ने विहार किया बीच के छोटे बडे ग्रामों को पावन करते हुए

आप नान्देशमा पधारे। पूज्यश्री के चार वर्ष के बाद मेवाड में पदार्पण होने से पूरे प्रान्त में प्रसन्नता की लहर छा गई। उदयपुर श्रीसंघ को जब इस बात का पता चला तो श्रीसंघ के २१ मुख्य कार्यकर्तागण मोटर द्वारा नान्देशमां आये और पूज्यश्री से पुनः उदयपुर पधारने की बहुत विनंती की। इसके पहले ब्यावर श्रीसंघ भी पूज्यश्री की सेवामें पहुँच गया था और ब्यावर पधारने की आग्रहभरी प्रार्थना करने लगा। किन्तु लम्बे समय से उददपुर संघ की अत्यंत भावना को ध्यान में रख कर पूज्यश्री ने उदयपुर पधारने की स्वीकृति फरमा दी। सिंगाडा, सायरा, सेमड, कम्बोल, पदराडा ढोल तरपाल होते हुए आप जसवंत गढ पधारे। आपने श्रावकों की विनती पर होलि चातुर्मास जसवन्त गढमें ही व्यतीत किया। इस अवसर पर आशातीत धर्मध्यान तपश्चर्या हुई।

नान्देशमां से पूज्यश्री ने उदयपुर की ओर विहार किया। मेवाड के जिस जिसगांव में पूज्यश्री पधारे उस दिन वहां अगते रखे गये। और सभी प्रकार की जीवहिंसा भी बन्द रखी गई। जाहिर में ईश्वर प्रार्थना की गई। नान्दिशमां गाव में भी अगता रखा गया और ईश्वर प्रार्थना की गई।

पूज्य आचार्यश्री जब उदयपुर के समीप पधारे तो यह शुभ समाचार सुनकर समस्त उदयपुर में प्रसन्नता की लहर छा गई। पूज्यश्री के नगर में पदार्पण होने के शुभ दिन की प्रतीक्षा करने लगे।

चैत्र कृष्णा अष्टमी ता० ४-३ मार्च को पूज्यश्री नगर के बाहर आयड ग्रम में गंगोद्भव पर कोठारीजी की बाडी में पधारे। श्रीमहावीर मण्डल ने पहले से ही श्रीमान् महाराणा आर्यकुल कमल दिवाकर की सेवामें अर्जी भेज कर पूज्यश्री के शहर में पधारने के रोज आम अगता [पाखी] पलवाने का हुक्क प्राप्त कर लिया था। हुक्म से शहर में ढिंढोरा पिटवा दिया गया था कि "आज पूज्यआचार्यश्री घासीलालजी महाराज पधार रहे हैं। सो सारे शहर में अगता पालना अर्थात् जीवहिंसा आरंभ आदि के कार्य मत करना।" पूज्यश्री अपनी शिष्य मण्डली सहित ठीक ८ बजे हाथी पोल के दरवाजे होकर जयध्वनि के साथ बडे जूलूस से सदर बाजार में होकर (विशाल अक्षयभवन) महेता साहब श्रीजीवनसिंहजी की हवेली में पधारे।

पूज्यश्री के व्याख्यान अक्षयभवन में होने लगे। जनता उमड उमड कर आपके व्याख्यानों का लाभ लेने लगी। आपके आदेश से श्रीमान् महाराणा साहब बहादुर मेवाडाधीश ने तमाम राज्य मेवाड में चैत्र शुक्ला १२ ता० ११ अप्रेल को आम अगता पाखी रखाये जाने व उस रोज "ॐ शान्ति शान्ति शान्ति" की प्रार्थना करने का फरमान जारी फरमाया। तदनुसार उपरोक्त तारीख को समस्त मेवाड राज्यधानी में एवं मेवाड के साडे दस हजार गावों में जीवहिंसा बन्द रही। सारेशहर में "ॐ शान्ति प्रार्थना व दूसरे रोज भगवानश्री महावीर स्वामी की जयन्ति का समारोह मनाने के लिए विशाल पंचायती नोहरे का स्थान नियत किया गया। वहां पर स्टेट फराशखाने से जनता के लिए बडे बडे साईवान लगवा दिये गये। व बिछायत का इन्तजाम हो गया। पंचायती नोहरे के विशाल प्रांगन में पूज्यश्रीके आने के पूर्व ही हजारों व्यक्ति वहां एकत्रित हो चुके थे। प्रबन्ध व्यवस्था इतनी चतुराई से की गई कि प्रत्येक व्यक्ति पूज्यश्री को देख सकता था।

पूज्यश्री घासीलालजी महाराज ठीक आठ बजे संतमण्डली एवं श्रावक श्राविकाओं से परिवेष्ठित हो समारोह के स्थान पर पधारे। उपस्थित सर्व जन समूह ने श्रद्धावनत हो स्वागत किया। ऐसा प्रतीत होता था मानो समस्त उदयपुर नगर आज इसी एक ही स्थान पर आकर केन्द्रित हो गया है।

पाट पर मुनिवृन्द के साथ पूज्यश्री बिराजमान हो गये। पाट के सामने ही मेवाडाधिपति महाराणा सा.श्री भूपालसिंहजी बहादुर अपनी राजकीय पोशाक में आसीन थे। और पास में रजिडेन्ट साहेब भी बैठे थे। कुछ पास ही राजकीय अधिकारी नगर के संभ्रात प्रतिष्ठित नागरिक बैठे थे और उनके पीछे जनसाधारण का अपार समूह उपस्थित था। मंगला चरण के साथ पूज्यश्री ने अपना प्रवचन प्रारंभ किया।

प्राइमिनीस्टर दिवानबहादूर तेजसिंहजी सा. महेता
उदयपुर

पूज्यश्री के अनन्यभक्त महासभा के अध्यक्ष
श्री जीवनसिंहजी महता—उदयपुर

आपने एक घंटेतक ॐशान्ति की प्रार्थना पर सारगर्भित प्रवचन दिया। हीज हाइनेश महाराणा साहब ने बडे मनोयोग से प्रवचन सुना। प्रवचन सुनने के बाद महाराणा साहब ने उदयपुर में चौमासा करने की प्रार्थना की। दूसरे दिन श्रीमहावीर जयन्ति का भी पंचायती नोहरे में आयोजन रखा गया। इस प्रसंग पर पूज्यश्री ने एवं अन्य वक्ता मुनिराजों ने भगवान श्री महावीर स्वामी के पथ पर चलने का उपदेश दिया। श्रीमहावीर मण्डल की ओर से उस दिन कैदियों को मिष्ठान भोजन दिया गया।

पूज्यश्री के इस आदर्श उपकार को देखकर यहां की जैन अजैन जनता आपका चातुर्मास यहीं पर कराने की बड़ी हार्दिक इच्छा करने लगी। सादडीघाणेराव, गोगून्दा, ब्यावर अजमेर आदि कई शहरों की चातुर्मास की बहुत विनंती थी किन्तु यहां विशेष उपकार होता देख कर आखिर ता० १७ अप्रेल को पूज्यश्री ने यहां की आग्रहभरी चातुर्मास की विनती को मंजूर कर ली। जिसकी सूचना श्रीमहावीर मण्डल ने समाचार पत्रों में प्रकाशित करवादिं।

वैशाख वदि छठ को पूज्यश्री ने अपनी शिष्य मण्डली के साथ उदयपुर से विहार किया। भूवाना देलवाडा सेमल गोगून्दा नाई आदि ग्रामों में आप धर्म प्रचार करते हुए विचरने लगे। इन ग्रामो में आप के उपदेश से त्याग प्रत्याख्यान विपुलमात्रा में हुए। ग्रामों में हरजगह कई मरतबा अगते पलवाये गये। इस प्रकार मेवाड प्रांत में जैन शासन की प्रभावना करते हुए आपने चातुमासार्थ आषाढ शुक्ला ३ ता ३० जून को उदयपुर में प्रवेश किया। मनोहर व्याख्यानी श्री मनोहरलालजी महाराज घोर तपस्वी श्री मांगी लालजी महाराज को लेकर पूज्यश्री से पहले ही शहर में पधार गये थे और तपस्वीराज ने शहर में पधारते ही आषाढ कृष्णा २ ता० १५ जून से ८६ दिन के उपवास की तपश्चर्या प्रारंभ कर दी। नाई गांव वालों की बहुत आग्रह भरी विनती होने से पूज्यश्री ने अपने पट्ट शिष्य मधुर वक्ता पं० मुनि श्रीकन्हैया लालजी महाराज व मंगलचन्दजी महाराज को नाई चातुर्मास के लिए भेज दिए। यहाँ इन मुनिद्वय के प्रभाव शाली व्याख्यानों से तपश्चर्या आदि धर्मध्यान खूब अच्छा हुवा। नाई का अपूर्वचातुर्मास हुआ।

पूज्यश्री का बिराजना अक्षय भवन में हुआ। जैन अजैन जनता व राजकर्मचारी वर्ग व्याख्यान का खूब लाभ लेने लगे। बाहर से दर्शनार्थ आने वाले भाई बहनों के लिए ठहरने का व भोजन आदि का संघ ने उतम प्रबन्ध किया। पर्युषणपर्वाधिराज बडे आनन्द से मनाये गये। श्रावक श्राविकाओ में उपवास बेला तेला पचोला अणाईयां पंचरंगियां, दया पौषध ब्रह्मचर्यव्रत आदि तपश्चर्या त्याग प्रत्याख्यान खूब हुए। पूज्यआचार्य श्री एकलिङ्गदासजी महाराज की संप्रदायानुयायी महासतीजी श्री इन्द्रकुँवरी म० व धनकुंवरजी म० आदि भी उन दिनों चातुर्मासार्थ उदयपुर में बिराजमान थे। इनमें महासतीजी श्री इन्द्रकुँवरजी म० ने ४० दिन की उग्र तपश्चर्या की। तथा एक बहन ने भी ३४ उपवास किये और गोगून्दा निवासी तपस्वी श्री गणेशलालजी हरकावत ने ३६ दिन के उपवास किये। घोर तपस्वीराज मुनिश्री मांगीलालजी महाराज के ८६ दिन के उपवास का पूर भादवाँ सुदी १४ ता० ८-९-३८ को हुआ। जिसकी सूचना देश विदेश में चारों तरफ पत्रिकाओ द्वारा भेजी गई। श्रीमान् महाराणा साहब हिन्दवाकुलसूर्य की सेवा में भी श्रीमहावीर मण्डल द्वारा इसकी सूचना मालूम कराने पर आपने इस खुशी में भादवा सुद १३ ता० ७-८-३८ को समस्त मेवाड राज्य में अगता (पाखी) पालने का आदेश दिया। और उस दिन विश्वशान्ति के लिए ॐ शान्ति प्रार्थना करने का हुक्म जारी किया। जिसकी प्रतिलिपि पाठकों की जानकरी के लिए दी जाती है—वह प्रतिलिपि इस प्रकार है—

सेक्सन नं. ६ नं. २१ ६७ श्री एकलिंगजी ॥ श्रीरामजी ॥

सिद्ध श्री श्री सिटि पुलिसजोग राज्य श्रीमहक्माखास लि, अप्रंच दरख्वास्त श्री जैन महावीर मण्डल

द्वारा पेश हुई के यहाँ पर पूज्यश्री घासीलालजी महाराज का चौमासा है, साथ मुनिश्री मांगीलालजी महाराज के छीयांसी दिन के उपवास है सो भादवा सुदी १३ बुधवार को तमाम मेवाड में अगता पलाया जाने और ॐ शान्ति ॐ शान्ति की प्रार्थना कराइ जाने का हुक्म फरमाया जावे । लिहाजा लिखी जावे है कि शहर में भादवा सुद १३ बुधवार ता० ७सितम्बर सन हाल को अगता रखावोगा. और जिले जात के हेड क्वार्टर्स जिले के गावों में व ठिकाने जात में भी उस दिन अगता रखाने के लिए मुतालकीन को लिखा गया है । १९–९–५ भादवा विद ता. २४–८–१९–३५

इसके फलस्वरूप मेवाड के साढे दस हजार गावों में उस दिन जीवहिंसा बन्द रही एवं उस रोज तमाम आरम्भ के कार्य बन्ध रहे, जिससे लाखों पंचेन्द्रिय व स्थावर जंगम असंख्यात जीवों को अभय दान मिल ने का भारी उपकार हुआ । जेल के तमाम कैदियों से उसरोज मशक्कत नहीं ली गई । सरकारी स्कूल में सिरस्ते तालीम द्वारा सूचना कर दी गई थी जिससे सर्व दर्शनार्थ आये ।

दर्शनार्थी आगन्तुक बन्धुओं के लिए बहुत उचित प्रबन्ध किया गया था । श्रावण भादवा मास में श्रीयुत शोभालालजी साहिब जावरियां की तरफ से भोजन का प्रबन्ध था। स्वयं सेवक उनकी सेवा कर ने में सदा तत्पर रहते थे । मेवाड के करीब ३००० मनुष्यों के अलावा दिल्ली, आगरा, कराची, बेला पुर, इन्दौर, अजमेर, ब्यावर, बीकानेर, जोधपुर, पाली पंजाब, अम्रतसर लाहौर आदि कई अन्य शहरों के प्रतिष्ठित सज्जन दर्शनार्थ पधारे थे । जिनका स्वागत स्टेशन से ही स्वयं सेवकों के द्वारा कराया गया । जैन सराय, चतुरों का नोहरा, बदनोर की हवेली, आदि कई बडे बडे अन्य स्थानों में आगन्तुक बन्धुओंको ठहराया । आये हुए महमानों के लिये वैसे तो पहिले से ही सब प्रबन्ध था । मगर खाश कर इस मौके पर भादवासुदी ११ १२ को श्रीमान् सेठ शोभालालजी साहेब जावरिया की तरफ से व १३ को श्रीमान् सेठ चान्दनमलजी सा. जीवनलालजी सा० नलवाया व खूबीलालजी सा० सिंघवी की तरफ से व १४ के दिन श्री महावीर मण्डल की तरफ से व पूर्णिमा के रोज श्रीमान् मनोहरसिंहजी गणेशीलालजी साहेब मेहता की तरफ से व आसोज सुदी बीज प्रातः काल को श्रीमान् रतनलालजो नन्दलालजी महेता के कुंवर मा-स्टर सा० श्री शोभालालजी मेहता की तरफ से व सायंकाल को गोगूंदा निवासी जोधराजजी साहब सिंघ-वी की तरफ से मेहमानी की गई थी। पूरके अवसर पर स्पेशल जैन रत्न प्राइवेट स्कूल एवं स्पेशल जन रल कन्या पाठशाला के बालक बालिकाओंने भजन ड्रामा व्याख्यान आदि सुनाये ।

शान्ति प्रार्थना व पूर के रोज व्याख्यान में करीब ६–७ हजार जनता की उपस्थिति में विशाल अ क्षयभवन परिपूर्ण भर गया था । पूज्य श्री के दान शील तप भाव अहिंसा आदि विषयों पर सारगर्भित भा षण को सुनकर आई हुई जनता मुग्ध हो उठी ।

सरकार की ओर से श्रोताओं के लिये सामियाने आदि से भव्य मण्डप ध्वजा पताकाओं द्वारा सुशो भित तैयार किया गया था। स्वयं सेवक दल अपनी अटूट सेवा भक्ति से कार्य करने में जुटा हुआ था । पूर के रोज पूज्य श्री व मुनिराजों के तथा अन्य वक्ताओं के भाषण और कीर्तन होने के बाद एवं व्या ख्यान समाप्ति के बाद आई हुई जनता को श्रीमान् एक धर्म प्रेमी सद्गृहस्थ की तरफ से श्रीफल (नारियल) की प्रभावना दी गई । श्रीमान् वकिल मोहनलालजी साहब नाहर व रुघनाथसिंहजी साहिब बावेल की तरफ से सैकडों अनाथ गरीबों को लड्डू पुरी का भोजन कराया गया । इसके अतिरिक्त श्री जैन महावीर मण्ल की तरफ से कुत्ते व बन्दरों को लड्डू पुडी गायों को घास व मच्छियों को चने डलवाये गये। एक दफा फिर कैदियों को मिष्ठान भोजन कराया गया । पारने के रोज सैकडों बकरों को अभय दान मिला । बाहिर के अन्य शहरों में भी इस मौके पर बहुत उपकार हुआ । बालोतरा मारवाड में कतलखाना बन्ध

रहा। सिन्ध में कोटडी बन्दर व गीदु बन्दर पर सिन्धु नदी में संवत्सरी पर्व व तपस्वीराज के पुर के रोज मच्छियें मारना बन्ध रहा। बांदरवाडा व रामपुरा ग्वालियर में तीनरोज के अगते रक्खे गये। बड़ी सादडी में तप महोत्सव पर भारी जुलूस निकाला गया। और अगते तो थे ही व कई जगह से तपस्वीराज की सुख शान्ति के चाहने के तार चिट्टियें आई। जिसका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है। कराची कोटडी ब न्दर में श्रीमान् ठाकरसी रामजी भाई लिखते हैं कि "आप की आज्ञानुसार ता० ७-९-३८ बुधवार भादवा सुदी १३ को यहां कोटडी बन्दर पर सिन्धु के दोनों किनारे मच्छी, खगा, गांगट इत्यादि चलचर प्राणी की जीवहिंसा बन्ध कराई गई है, सो मच्छिमारों की लिस्ट गुजराती में लिखी हुई आपकी जानकारी के लिए शामिल रखी गई है" वह स्थानाभाव से नहीं दी गई।

सी. आइ. डी. ओफिसर पुलिस कराची मि० मिन्नो साहब अपने अंग्रेजी पत्र ता० ४-९-३८ में लिखते हैं। जिसका हिन्दी अनुवाद यह है कि "मुझे निमन्त्रण पत्र मिला मुझ जैसे क्षुद्र प्राणी को याद फरमाया उसके लिए मैं अत्यन्त कृतज्ञ हूं। मैं इन्स्पेक्षन के लिए बाहर गया हुआ था इस कारण पत्रोत्तर जल्द नहीं देसका। यदि मुझे पहिले यह पत्र मिलता तो अवश्य ही 'अहिंसा डे' पर 'उपस्थित होता। आप जानते हैं कि मैं भी सच्चाई और शान्ति का उपासक हूं। लेकिन इसका हर जगह मिलना अत्यन्त कठिन है। जहां देखता हूं खुदगर्जी व मक्कारी ही पाई जाती है। भावी युद्ध के बादल मंडरा रहे हैं और उसमें लाखों मनुष्यों के प्राण संकट में गिरने का भय है। इन आपत्तियों में भी हमें परमात्मा को नहीं भूलकर सदैव उसका स्मरण करना चाहिये ताकि हमें वह इन संकटों से मुक्त करें। मै आपको फिर निमंत्रण पत्र के विषय में धन्यवाद देता हूं और अधिक विलम्ब हो जाने से वहां उपस्थित नहीं होने की क्षमा चाहता हूं। सब महात्माओं को मेरा सादर प्रणाम कहियेगा।

पूज्यश्री का सच्चा अनुरागी। मि. मिन्नो। सिन्ध सी० आइ० डी० (सीटी) कराची

करांची से मेडिकल ऑफिसर प्रिन्सिपल वाइसप्रेसिडेण्ट और एग्जामीनर डाक्टर पी० वी० थारानी एम० सी० पी० एस० एल० एम० एस० अपने अंग्रेजी पत्र द्वारा सूचित करते हैं कि—"मैं तपस्वीराज के पूर पर हाजिर नहीं होसका जिसका खेद है। पूज्य श्री व सब महात्माओं से मेरा प्रणाम कहियेगा। यहां पर भी बहुत उपकार हुआ आदि २।

श्री जीवदया प्रचारक मण्डल कराची के मंत्री श्रीयुत मघालाल एम० शाह व जैन स्थान० श्री संघ कराची ने पत्र द्वारा सूचना दी है कि यहां पर तपस्वी राज के पूर पर गरीबों को मीठे चावल, रास्ते के भिखारियों को सेव बुन्दी तथा मघापीर के केदियों को मिठाई खिलाई गई है। निराधार जैन अजैन को मदद दी गई। कुत्तों को लड्डू व कबूतरों को जवार डाली गई आदि बहुत उपकार हुवे हैं।

हैदराबाद सिन्ध हिन्दू सभा के प्रेसिडेन्ट श्रीमान् मुखी गोविन्दरामजी साहेब कराची से श्रीमान् लोकामलजी चेलारामजी साहिब आदि सज्जनों ने चिट्ठियों द्वारा तपस्वीराज की सुख शान्ति चाही है। मेनेजर साहेब मैनेजमेण्ट ओगणा श्रीयुत राजसिंहजीसाहेब पंचोली लिखते हैं कि भादवा सुद १३ को अगता रखा गया व बकरे अमरिये किये गये और ईश्वर प्रार्थना की गई। सब मुनिराजों से वन्दना अर्ज करें।

रामपुरा (ग्वालियर) से श्रीमान् सेठ हीरालालजी साहेब नलवाया लिखते हैं कि यहां पर १८ रोज के अगते हमेशा से पलते आए हैं। भादवा सुद १३ को अगता था ही चउदस पूर्णिमा को खास तौर से अगते रखवाये गये। बांदरवाडा से श्रीमान् मोहनसिंहजी साहेब पोखरणा लिखते हैं कि आपके पत्र मुआफ़िक यहां पर सब काम बन्द कराया गया। बछडों छुडाया गया। बैलों से काम नहीं लिया। राज में भी सब काम बन्द रखा गया।

बडी सादडी मेवाड से श्रीमान् सेठ गब्बालालजी पन्नालालजी मारू लिखते हैं कि यहां पर तपस्वी राज बडे व बडे प्रवर्तक मुनी श्री १००८ श्री मोतीलालजी महाराज आदि संतो के बिराजने से धर्मध्यान उपकार बहुत हुवा। दिल्ली में व उदयपुर में बिराजित तपस्वीराज के पूर पर भी बहुत उपकार हुवा। आम अगते रहे दुकाने बन्ध रही व घरों में घट्टी उंखलाने बन्द रहे। तपमहोत्सव का एक विराट जलूस स्थानकजी से निकाला गया। बाहिर से आई हुई उपकार की सूचनाओं में सिर्फ थोडी सी ही यहां प्रकाशित की गई है। इनसे पाठक भली प्रकार समझ सकेंगे कि पूज्य आचार्य श्री के प्रति जैन अजैन जनता की कितनी भारी श्रद्धा है यह सब आपके तपोबल व उपदेश का ही प्रभाव है।

खमनौर में मिति आसोज शुक्ला एकम को विनोलामाता के वहां पाडे व बकरे चढायें जाते थे। यह खबर पूज्य श्री ने सुनी तब पूज्य श्री ने अपनी ओजस्वी भाषा में फरमाया की पाडे और बकरे माता के सामने नहीं कटने चाहिये। इस पर सूचना उसी स्थान पर पहुंचाई जिसपर श्रीमान् सेठ कन्हैयालालजी साहब नाहर लिखते हैं कि कल बिनोलामाता के वहां पाडे व बकरे चढाने का दिन था। यहां पर शोभा लालजी साहब थानेदार का राजनगर तबादला होकर उनके बजाय कल ही उनके बडे भाई श्रीचम्पालालजी साहब जो पहले खमणोर वर्षोतक रह चुके हैं वो हि वापिस आ गयें और लोगों से अच्छी जान पहचान हैं। उन्होंने फिर फरमाईश की जिस पर यह तै पाया कि माताजी पाती दे दें तो लोह नहीं किया जावे। इस पर (मैं जीवनसिंहजी भण्डारी और वे मन्दिर के एतकादवाले ईकठे मन्दिर में पहुंचे। पाती मांगने पर बली नहीं करने की पाती आई उसी वक्त आधामन आटेका कंसार करवा कर तकसीम करवा दिया। पाडे के कडी डलवा दी और कोई दुसरे जानवर बकरे पाडे का लोह नहीं हुआ सो यह हाल पूज्य-महाराज साहिब श्री घासीलालजी म० से अर्ज करा देवें १९९५ का आसोज सुदी १०।

ता० ४-१०-३८ द० कन्हैयालाल

पाखी के दिन जामनगर में भी पाखी पाली गई।

सरकार द्वारा सारे राज्य मेवाड में एक रोज का अगता रखने का हुक्म होने पर भी बहुतसी जगह तीन तीन रोज तक आम अगते रक्खे गये और भी कई जगह कई तरह से गुप्त उपकार हुए हैं। विस्तार भय से यहां उन सबका वर्णन करना असंभव है। पूज्य श्री के इधर पदार्पण से जगह जगह शान्ति प्रार्थना अहिंसा दिवस अनेकों तरह के उपकार हुए। सादडी मारवाड का इतने वर्षो का झगडा मिटाने का श्रय आप श्री को हि प्राप्त हुआ है। ईस प्रकार आपके ओजस्वी भाषणों से एक नहीं अनेकों ऐसी धार्मिक प्रवृत्तियों की ओर लोग प्रवृत्त हुवे जिनका वर्णन करना यहां असंभव है।

गत दो वर्षो में यहाँ चातुर्मास न होने से जो धर्मध्यान में कमी हुई थी उसको पूज्यश्रीने अपने इस आदर्श चातुर्मास की किशोर अवस्था में ही पूर्ण कर दी। पूज्यश्री के इस आदर्श चातुर्मास में समस्त जैन अजैन जनता ने तन मन धन से अपूर्व सेवा बजाई। प्रातः काल पूज्य आचार्यश्री नन्दी सूत्र की टीका गूढार्थ के साथ फरमाते थे। पूज्यश्री की आगम विषयक मार्मिक विवेचना सुनकर श्रोतागण अत्यन्त हर्षित होते थे। आधा घंटा कृष्णचरित्र भी विविध दृष्टान्तों के साथ सुनाते थे उसे सुनकर अजैन जैन जनता आपकी सुन्दर प्रवचन शैली से मुग्ध हो जाती थी। चातुर्मास बडे ही उत्साह और भव्य धार्मिक आचार विचारों की प्रभावना से पूर्ण हुआ। उपदेशामृत के पान से तृप्त उदयपुर की जनता को चार माह के समय का पता ही न चला कि कब पूरा हो गया। उनके मनमें यही अभिलाषा थी कि हम उपदेश सुनते ही रहें और धार्मिक आचार विचार-साधना से आध्यात्मिक विकास के मार्ग पर बढते रहें। लेकिन मुनि के आचार की मर्यादा तो परिभ्रमण के आदर्श में गर्भित है। जनता के कल्याण की भावनो ही सन्तों के विहार पथ

में गतिमान रखने का प्रेरित करती रहती है। मार्गशीर्ष प्रतिपदा को आपश्री ने सन्त मण्डली के साथ बिहार किया। सभी ने भावोर्मियों की विदाई भेट दी और आपश्री उदयपुर के समीपस्थ क्षेत्रों को अपनी दिव्य वाणी से पावन करने लगे। उदयपुर चातुर्मास होने के पूर्व ही से ब्यावर पधारने के लिए ब्यावर श्री संघ की अत्याग्रह भरी विनंती थी। पूज्यश्री ने फरमाया कि अभी तो समय कम है, चातुर्मास के बाद अनुकूलता रही तो ब्यावर की तरफ बिहार करने का ध्यान में रखेंगे। चातुर्मास समाप्ति पर ब्यावर संघ का फिर से आग्रह हुआ कि अब आपका बिहार ब्यावर की तरफ होना चाहिए। श्रीसंघ के आग्रह पर आपश्री ने ब्यावर की ओर बिहार कर दिया। नाथद्वारा कांकरोली सरदारगढ आमेट, देवगढ, भीम आदि क्षेत्रों को पावन करते हुए पूज्यश्री ब्यावर पधारे। ब्यावर के बाहर जैन गुरुकुल के विशाल भवन में बिराजे। कुछ दिन जैन गुरुकुल परिवार की विनंती से वहां बिराजकर फिर ब्यावर में पधारे। व्याख्यान में सभी संप्रदाय के लोग बहुत बडी संख्या में रायलाकम्पाउन्ड में आते थे। होली चातुर्मास यहां करके पूज्यश्री ने बिहार कर दिया। पाटन आकडसादा पडासौली आसीन्द, ताल लसाणी आदि गावों में होते हुए आप देवगढ पधारे। इन सभी गांवों में अगते पालने के साथ ईश्वर प्रार्थना का आयोजन रखा गया।

श्री मांगीलालजी (तपस्वी श्री मदनलालजी) को वैराग्य प्राप्ति—

जब पूज्यश्री आसीन पधारे उस समय समस्त गांव में अगता रखा गया प्रभु प्रार्थना की गई। उस समय रामपुरा से मांगीलालजी बाफना पूज्यश्री के दर्शनार्थ आये। पूज्यश्री के वैराग्यमय व्याख्यान से प्रभावित होकर ये पूज्यश्री के साथ २ बिहार करते हुए पडासोली तक साथ में आये। "सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसां" इस सुभाषित के अनुसार पूज्यश्री की सेवामें रहने से मांगीलालजी को संसार के भोग विलास से विरक्ति हो गई और आपने दीक्षा लेने का विचार किया। ये किसी के घर भोजन करने की अपेक्षा मुनि की तरह भिक्षावृत्ति से आहार करने लगे। तथा शास्त्रों का अध्ययन करने लगे।

पूज्यश्री के उदयपुर चातुर्मास से सारे मेवाड प्रान्त पर पूज्यश्री का बहुत अधिक प्रभाव पडा। पूज्य श्री के अगाध सिद्धान्तज्ञान, द्रव्य, क्षेत्र, काल भाव को परखने की अद्भूत शक्ति, चमत्कारपूर्ण वक्तृत्व शक्ति, विशाल प्रकृतिपर्यवेक्षण, आदि गुणों के कारण आपका इतना अधिक प्रभाव पडा कि सारा मेवाड आपके समागम के लिए उत्कंठित हो उठा। उदयपुर का चातुर्मास समाप्त भी न हो पाया था कि जगह जगह के भाई आगामी चातुर्मास की और अपने अपने क्षेत्र को पावन करने की प्रार्थना करने लगे। इनमें खास कर देवगढ श्रीसंघ का तथा देवगढ के रावजी श्री विजयसिंह का बड़ा आग्रह एक सराहनीय था। इनका आग्रह अत्यंत और उत्साह जनक था। देवगढ श्री संघ के साथ साथ वहां के रावतजी साहब की अति विनंती में विशेष उपकार की संभावना छिपी हुई थी। चातुर्मास के बाद पूज्यश्री मेवाड प्रान्त के गावों को पावन करते रहे। अपने उपदेश से मेवाड के हजारों गावों के भील आदिवासी एवं जैन अजैन जनता के हृदय को पूज्यश्री ने अपनी प्रभाव पूर्ण अमृतमय वाणी से पलट दिये और उन्हें सदा के लिए अहिंसक बना दिये। देवी देवताओं के नाम पर होनेवाली निर्मम पशुबलि को पूज्यश्री ने अपनी अहिंसामयी वाणी से सदा के लिए बन्ध कर दी। सैकडों ठाकुरों राजपूतों जागीरदारों भीलों आदिवासीयों ने शिकार, मांसभक्षण, मदीरा का त्याग कर दिया। इस प्रकार मेवाड के अनेक गावों को पावन करते हुए वैशाख मास में देवगढ पधारे। वहां के हजारों भाई बहनों बालकों एवं रावतजी साहब विजयसिंहजी व उनके कर्मचारी गण बड़ी दूर तक पूज्यश्री के सामने आकर स्वागत किया। पूज्यश्री स्थानक में बिराजे। आपके विशाल मैदान में जाहिर प्रवचन होने लगे। पूज्यश्री का उपदेश सुनने के लिए जैनों के अतिरिक्त हिन्दू, मुसलमान, भील समाज राज्य के कर्मचारी गण उपस्थित होते थे। अनेक प्रतिष्ठित सज्जनों ने पूज्यश्री के प्रवचन को सुना और मनन किया। पूज्यश्री

की सरल और हृदय स्पर्शी वाणी ने श्रोताओं का तथा स्थानीय महाराजा साहब का तथा कुंवरसाहब का हृदय इतना आकर्षित कर लिया था कि प्रतिदिन श्रोताओं की संख्या बढने लगी। पूज्यश्री के उपदेश से वैशाख शुक्ला प्रतिपदा के दिन विश्वशान्ति के लिए ॐ शान्ति की प्रार्थना का आयोजन रखा गया। राजा साहब श्रीविजयसिंहजी ने अपने अधिकार के – २४० गावों में अगता पालने का आदेश जाहिर कर दिया और समस्त प्रजा को ॐ शान्ति की प्रार्थना करने का आदेश जारी किया। फलस्वरूप हजारों प्राणियों को अभयदान मीला।

अब अवसर पाकर इसवर्ष का चातुर्मास देवगढ में ही व्यतीत करने का श्री संघ ने तथा खास कर रावतजी साहब ने प्रार्थना की। पूज्यश्री ने स्थानीय श्रावक संघ की और रावजी साहब की आग्रह भरि विनंती को देखकर चातुर्मास की स्वीकृति फरमा दी। पूज्यश्री की स्वीकृति से सारे नगर की सर्व जन्ता प्रसन्नता के सागर में डूब गई। चातुर्मास को सफल कराने के लिऐ अभी से ही जोर जोर से तैयारियां होने लगी आपने देवगढ से बिहार कर दिया।

वि० सं. १९९६ का चातुर्मास देवगढ में–

देवगढ से पूज्य श्री का रायपुर बोराणा, देवरिया, होते हुए सरदारगढ एवं आंवारिया पदार्पण हुआ। वहां पर मेवाड के स्थवीरपद भूषित पंडित मुनिश्री जोधराजजी म. एवं युवाचार्य पं. मुनिश्री मांगीलालजी म. ठाणा ३ का अत्यन्त वात्सल्यमय मिलन हुआ। बाहर के दर्शनार्थीयोका सतत आगमन बना रहा। आचार्य श्रीका एवं युवाचार्यश्री का स्नेह अमिटस्थापित हुआ यह धवलधारा अण्ड रही थी। वहां से आपश्री कांकडोली पधारे वहां पर जैनदिवाकर प्रसिद्ध वक्ता पं. मुनिश्री चौथमलजी म. के दर्शन किये दोनों ज्योतिधरोंका मिलन चन्द्र सूर्य जैसा लगता था। आपसका दिव्य प्रेम और स्नेह रहा। जैनदिवाकरजी म. के आर्शीवाद लेकर यहां से अनेक गावों को उपदेशामृत का पान कराते हुए आप अपनी शिष्य मण्डली के साथ चातुर्मासार्थ देवगढ पधारे। चातुर्मास में तपस्वीश्री मांगीलालजी महाराज ने ८८दिन की घोर तपश्चार्या प्रारंभ कर दी। पूज्यश्री के व्याख्यान में जैन अजैन सभी लोग बहुत बडी संख्या में उपस्थित होते थे जिससे सरकारी मकान में बहुत बड़ा पण्डाल बनाया गया। देवगढ रावजी श्री विजयसिंहजी साहेब की श्रद्धाअधिक बढी। वहां के नायब हाकिम श्री मोतीलालजी साहेब सुराणा की भक्ति पूज्यश्री के प्रति अत्यधिक थी। इन्हीके द्वारा रावजी साहब को समाचार पहुँचते रहते थे। राजमहल में रावजी साहब ने पूज्यश्री का व्याख्यान सुना और तपश्चर्या के पूर पर देवगढ प्रान्त के २४० गांवों में पूज्यश्री की आज्ञानुसार अगते पोलने का आदेश लिख दिया। भादवा सुद पूनम को शहर के बाहर तालाव की पाल पर तपोत्सव व ईश्वर प्रार्थना विषय पर पूज्यश्री का जाहिर व्याख्यान हुआ। व्याख्यान में ५–६ हजार जनता उपस्थित थी। व्याख्यान समाप्ति के बाद बाग के महलों में रावजी साहबकी माताजी तथा रानीजी ने पूज्यश्री के उपदेश सुनने की भावना प्रगट की। जिससे वहां भी पधारे और उन्हे उपदेश दिया।

इस वर्ष सभी जगह वर्षा न होने से दुष्काल था। सभी तालाव पानी के अभाव में सूख गये थे। घास पानी और अन्न के अभाव में सर्वत्र हा–हा कार छाया हुआ था। पूनम के दिन विश्वशान्ति की प्रार्थना का आयोजन हो ने के बाद आकाश बादलों से छा गया और रात्री में इतनी वर्षा हुई की सारा देश के तालाब पानी से भर गये। देवगढ की प्रजा प्रसन्नता से नाच उठी। रावजी साहेब उदयपुर होने से वर्षा के समाचार लेकर एक आदमी वहां गया और रावजी को वर्षा होने का शुभ समाचार सुनाया तो प्रसन्न होकर उस आदमी को रावजी ने ५१ रुपये इनाम में दिये। सभी राजा प्रजा को प्रसन्नता थी कि पूज्यश्री ने ईश्वर प्रार्थना कराई उसी का यह शुभ परिणाम है। भादवा सुदी १५ ता० २८–९–३९ के दिन तपस्वीसी का पारणा हुआ। पुर के अवसर पर हजारों व्यक्ति दर्शनार्थ आये। तपस्या के पूर को सफल बनाने के

लिये पत्र पत्रिकाओं द्वारा बाहर सूचना भेजी गई जिसका लोगों ने हृदय से स्वागत किया। लोगों नें इस अवसर पर खूब धर्मध्यान किया। पूज्यश्री के उपदेश से रावजी नें सदा के लिऐ तालावों में मच्छि मारने का कायम के लिए बन्ध कर दिया सब तरह से देवगढ का चतुर्मास सफल रहा देवगढ रावतजी साहब नें यह पट्टा लिख दिया।

श्री एकलिंगजी,, श्रीरामजी,,

नकल उसहुक्म पेशी खाद ठिकाना देवगढ श्रीमान रावतजी साहब विजयसिंहजी वाके द्वितीय श्रावण शुक्ला ३ ता. १७-८-१९-६९ई. स. १९-९६ई.

चूं के जैन संप्रदाय के पूज्यश्री घासीलालजी महाराज का यहां चातुर्मास है और ये अहिंसावृत्ति वाले महान साधु हैं, इनकी इच्छा है कि राघवसागर में तो पहले ही बिनाहुक्म मच्छियां वगैरा जानवर मारने की सदा के लिए मुमानियत थी मगर महाराज के कथन से फिर तमाम पट्टे हाजा के खालशाही तालावान में वजुजखास खानदान मालिक ठिकाना व मेहमान ठिकाना के आम के लिए मुमानियत की जाती है सो कोई मच्छियें वगैरेह का शिकार इन तालावान में बिना इजाजत नहीं करें हुक्म नं ३९-४८

नकल इसकी तामीलन कचहरी में भेजी जावे और लिखा जावे कि आमतौर पर सोहरत करादी जावे। जुमला तहसीलात व थानेजात में इतल्ला दी जावे। हुक्म कचहरी देवगढ नं. १५-७-९५ नकल इसकी तामीलन पुलिस व जुमला तहसीलात में भेजी जावे और लिखा जावे कि हुक्म पेसी खास की पूरे तौर से बन्धी रखी जावे। एक नकल इत्तिलायान पूज्यश्री घासीलालजी महाराज के पास भेजी जावे।

सं. १९-९६ द्वितीय श्रावण सुद ६ ता. २०-८-३९ मु. अ. चन्दनमल मेहता द० मोतीलाल

(मोहर छाप)

देवगढ का सफल चातुर्मास समाप्त कर आपने अन्यत्र विहार कर दिया। देवगढ के आसपास के गांववाले आपके प्रभावशाली प्रवचनों से बडे प्रभावित होते थे। आप जिस किसी ग्राम व नगर में पधारते वहाँ सर्व प्रथम ॐ शान्ति दिवस मनाने का उपदेश देते। पूज्यश्री के आदेश को गांव वालेबड़े सहर्ष से स्वीकार करते और पूज्यश्री द्वारा बताई गई अहिंसक एवं निरवद्य विधि से ॐ शान्ति दिवस मनाते। जिसमें सभी गांव के जैन अजैन भाई सामिल होते। उसी सारे गांव में अगता पलवाया जाता था। अगते के दिन जीवहिंसा एवं सर्व आरंभ सारंभ के कार्य बंध रखे जाते थे। आपने देवगढ से विहार कर ग्रामानु-ग्राम बिचरते हुए आसीन व पडासौलो पधारे। वैरागी श्रो मांगीलालजी बाफणा पूज्यश्री के साथ ही में थे। मांगीलालजी पूज्य श्री से दीक्षा लेने की बार बार विनंती करने लगे। पूज्यश्री ने वैरागी मांगीलालजी से कहा अगर तुम अपने घर वालों की राजीखूशी आज्ञा प्राप्त करलो तो आपकी दीक्षा हो जासकती है। इस पर आपनें पूज्यश्री से प्रार्थना कि–भगवान्! मुझे अकेले अपने घर जाने का तो त्याग है अगर आप श्रीपधारो तो मैं आपके साथ आकर अपने कुटुम्बियों से आज्ञा प्राप्त कर सकता हूँ। पूज्यश्री इस पर अपने दो शिष्यों को वैरागी मांगीलालजी के साथ भेजने की आज्ञा दे दी। वैरागी मांगीलालजी ने उस समय उपवास पचक्ख लिया और यह प्रतिज्ञा कि की अगर घरवाले मुझे दीक्षा की इजाजत दे देंगे तो मैं घर पारणा करूंगा वरना पुनः बिना पारणा किये ही वापस चला आउंगा। इसप्रकार वैरागी मांगीलालजी मुनिवरों के साथ रामपुरा जो कि पडासोली से १० मील पडता है वहाँ विहार कर के गयें। सायंकाल के समय सन्तों के साथ मांगीलालजी अपने गांव पहुंचे। मुनिजो राममन्दिर में ठहर गये। और मांगीलालजी घर पहुँच कर विनयपूर्वक दीक्षा की आज्ञा मांगने लगे। आप के मुख से दीक्षाकी बात सुनते ही सारा परिवार शोक मग्न हो गया। माता पुत्र वियोग में अश्रुपात करने लगी। दोनों भाई मांगीलालजी को संयमी जीवन की कठिनाईयाँ बता-

कर उन्हे घर ही रहने को बार बार आग्रह करने लगे । गांव के अन्य भी सगेसम्बन्धी मित्र जब उपस्थित हुए अन्त में पडासोली के श्रावकों के प्रयत्न से वैरागी मांगीलालजी के भाई भोजाई के समझाने पर मांगीलालजी को दीक्षा की आज्ञा मिल गई । पडासौली श्रीसंघ ने ही इनका दीक्षा महोत्सव किया । अत्यन्त वैराग्य भाव से आपने दीक्षा ली । दीक्षा लेने पर इनका नाम मदनलालजी म. रखा गया । दीक्षा लेने पर मुनिश्री मदनलालजी महाराज ने शास्त्रों का अच्छा अध्ययन किया । अपने गुरुदेव की सेवा में आपने अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया । आपने जो निष्ठा पूर्वक पूज्यश्री की सेवा की वह अतिस्मरणीय है । आपका सारा जीवन लम्बी. लम्बी तपश्चर्या में व्यतीत हुआ । दीक्षित होने के साथ ही आपने ओज को तपस्या द्वारा तेज में रुपान्तरित किया था आपकी यह तप साधना जीवन पर्यन्त चलती रही ज्यादा से ज्यादा ९२ दिन तक की तपश्चर्या की थी और मास खमण एवं बेला तेला आदि की तपस्याएँ तो अनेक बार कर चुके थे । आप जैसे उच्च कोटि के तपस्वी थे वैसे ही ज्ञानी और सेवाभावी भी थे । आपकी सेवा परायणता साधुओं के सामने एक आदर्श उपस्थित करती है ।

ता० १७-४-७२ प्र० वैशाख सुदी ४ बुधवार के दिन अहमदाबाद में पूज्य श्री की सेवा करते हुए स्वर्गवासी बने । आपके स्वर्गवास से पूज्य श्री के हृदय पर जो अघात लगा वह अवर्णनीय है ।

वि. स. १९९७ का ३९ वाँ चातुर्मास रतलाम में

स्थानकवासी श्रीसंघ रतलाम की ओर से कुछ मुख्य मुख्य श्रावक गण फाल्गुन मास में जैनाचार्य जैन धर्म दिवाकर पूज्य श्री घासीलालजी महाराज आदि ठाना ६ की पवित्र सेवा में पडासौली (मेवाड) पहुचे और पूज्यश्री से रतलाम फरसने की विनंती करने लगा । क्योंकि मालवा प्रान्त का जैन श्रीसंघ लम्बे समय से आपके प्रवचन सुनने व दर्शन करने को उत्सुक हो रहा है । श्रावकों का अत्यन्त आग्रह देखकर पूज्यश्री ने चातुर्मास के पूर्व रतलाम फरसने की स्वीकृति फरमा दी । आपकी इस स्वीकृति से रतलाम की जनता को बडी प्रसन्नता हुई । आपने रतलाम की ओर विहार कर दिया । अपनी मुनि मण्डली के साथ आप बदनोरा देश में पधारे । यहां जगह जगह देवी देवताओं के नाम होनेवाली हिंसा को बंध करवाई । व कई जगह तो सारे गांवों के लोगों ने जीवहिंसा त्याग कर पूज्जश्री से सम्यक्त्व ग्रहण किया । और जैन धर्मानुरागी बने । जैसे पडासौली, जयनगर, शंभूगढ, गजसिंहपूरा परा, आकडसादा, आसण दाँतडा जीवार, बालापुरा, जग पुरा, गेनसिंहकाखेडा, अंटाली लाम्बा, धनोप, नान्दसी मौजा सागरिया, कैरोट, बछखेडा आदि गांवों के जागीरदारों, व ठिकानों आदिवासियो भीलों आदिने अहिंसा के पट्टे लिखकर पूज्यश्री को भेट किये । उन पट्टों की प्रतिलिपी इस प्रकारहै—

श्रीनाथजी

श्रीरामजी

नकल हुक्म अदालत ठिकाना सरदारगढ मवरखा जेठ विद ८ ता. ११-५-३८ ई० सं. १९९५

द० मोतीलाल ता. ११-५-३९ द० मीरजा अबदुलबेग

जैन श्वेताम्बर बाइस संप्रदाय के पूज्य महाराज साहेब श्रीघासीलालजी म. मनोहर व्याख्यानी मुनि मनोहर लालजी तपस्वीजी महाराज मांगीलालजी मुनिश्री कन्हैयालालजी म० वगैरा ठाणा ६ से जेठविद ७ को यहां पधारणा हुवा और आज शान्ति का व्याख्यान बडे आनन्द से हुआ । इसलिए आज की तारीख पटे हाजा में अगता रखाया गया और तालाव मनोहर सागर में बगेर इजाजत किसीको भी शिकार नहीं खेलने व मच्छियें नहीं मारने की रोक की गई और बडा बीड का घास कट जाने बाद मुहचर घास मुकाते दिया जाया करता है वो आयन्दा मुकाते नहीं दिया जाकर मवेशियान को पुन्यार्थ चराने की इजाजत दी गई । लिहाज। हुक्म—

असल तामिलन कचहरी में भेजा जावे और लिखा जावे कि पूज्य महाराज व उनके शिष्य जब कभी यहां पधारे उस रोज पटे हाजा में अगता रखा जावे। मुहचर घास मुकाते न देकर पुण्यार्थ मवेशियान को चराया जावे। तालाव मनोहरसागर में बिगेर इजाजत कोई शिकार नहीं खेलने व मच्छियें नहीं मारने पावे। इसका इंतजाम कर देवें फक्त—हुक्म कचहरी नं २४५३—नकल इतलान पूज्य महाराज साहेब के पास मेजी जाकर वास्ते तामिल थाने में लिखा जावे। असल दर्जे मुतरफकात हो सं० १९९५ का जेठ वद ८ ता. ११-५-३९ ई० मु. कू. नन्दलाल संघवी

पूज्य श्री के उपदेश से सरदार गढ में खटिकों के बीस घरवालों ने सकुटुम्ब अपनी वंश परम्परा गत कसाई का धन्दा न करने की व जीवहिंसा नहीं करने की प्रतिज्ञा ग्रहण की।

"श्री एकलिंगजी　　अहिंसा परमोधर्म—के विषय पर　　श्रीरामजी

सिद्धश्री खांखला में जैनाचार्य जैनधर्मदिवाकर पूज्य श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज के आज्ञावर्ती मनोहर व्याख्यानी पं० मुनिश्री १००७ श्री श्री मनोहरलालजी महाराज घोर तपस्वीजो १००५ श्री मांगीलालजी महाराज आदि ठाना का कुंवारिया से विहार कर जेठ शुक्ला १० को यहां पधारना हुआ और जेठ शुक्ला निर्जला ११ एकादशी को सर्व गांव में आम अगता रखा गया यांने सब गांव वालों ने मिलकर ॐ शान्ति प्रार्थना की और जेष्ठ शुक्ला चतुर्दशी को गांव के बाहर तालाव के पाल जहां राडाजी का स्थान है वहां अहिंसा के विषय पर मुनिश्री ने व्याख्यान फरमाया और साथ में यह भी फरमाया की किसी भी देवता के स्थान पर उनके नाम से (बलिदान) जीवहिंसा आदि नहीं करना। ऐसा फरमाने पर प्रायः गांव के सभी कोमवालों ने सहर्ष स्वीकार किया और वहां पर पहले से सालमें करीब सैकड़ों जीवों का बलिदान लोगों के बिमारी होने की वजह से वे लोग करते थे। इसके अलावा नवरात्रि आदि दिनों में माता चामुण्डाजी, कालकाजी, मालियों की कालका आदि स्थानों में भी जीवहिंसा होती थी वो महाराजश्री के उपदेश होने से सब जगह की जीवहिंसा बन्द होकर सब देवी देवताओं ने मीठी परसादी खुद अपने स्थानों पर भाव होकर मुनिश्री के वचन मंजूर कर स्वीकार कर लिया। इसके अलावा एक दो देवी देवताओं के स्थान जो आबादी के अन्दर है। उसके नाम पर बलिदान गांव के बाहर होता था, वो भी बन्द कर दिया गया और गांव के सभी सज्जनों ने भी इकट्ठे होकर मुनिश्री से यह प्रतिज्ञा करली की आइन्दा हम कोई लोग बलिदान नहीं देवेंगे और अगर गांव का तथा बाहर का कोई भी जीव देवी देवताओं के स्थान में बोलमा का लेकर आवेगा उसको अमरिया कर दिया जावेगा और मीठी परसादी होगी। यह प्रतिज्ञा हम लोगों ने महाराजश्री से ली है सो इसका उलंघन कभी नही होगा और सदा के लिए अपने अपने इष्ट धर्म का पालन करते रहेंगे। सं.१९-९६ का जेठ शुक्ला १४ ता. १-६ ३९ ई.स. समस्त पंचान गांव वालों के कहने मुताबिक गणेशलाल दशोरा स्कूल मास्टर खांखला जिला साहडा उदयपुर मेवाड़ निवासी बेगुंका जिला राशमी द. माधूलाल रांका द. काल्रू पटेल द. काल्रू राम द. कुंभार रामा द. ब्राह्मण लालू राम द. रावत भेरजी द. जोधराज रांका द.जाटकजोड़ा काला द. कजोडीमल डांगी द. भील हेमा द. फूलचन्द्र भलावत द- कुम्भार मोतो द. फूलचन्द्र सुनार द. गाडरो काल्रूदुवाला द. कानमल सींगी द. बाबा भेरवनाथ नि० सुवालाल रांका नी० खटीक रपा द. गाडरी सुखा नि० नाथुलाल कछरा नि० लगजो गाडरी नि० उदागाडरी नि० माली हीरा नि० पीथाजी माली नि० जेतामाली नि० गणेश गूजरगोड नि०. देवरामजीशुजावत नि० कुंभार केरिंग आदि

नकल पट्टा परागांव——

अर्ज पत्रिका अज तर्फ समस्त वासिन्दगान परा भोजपुरा पट्टा बदनोर व खिदमत श्री महाराज साहब पूज्य श्री श्री श्री १००८ श्री श्रीश्री घासीलालजी महाराज साहब जैन संप्रदाय बावीस अपरंच आपका

पधारना मोजा परामें हुआ और जानवरहिंसा नहिं करने को उपदेश फरमाओ जिमे मां यों उपदेश धारण करके कुल वासिन्दगाने तय किंया कि कोई जानवर हिंसा व सर्व देवता के जानवर कतई नहीं मारांगा । धर्मप्रण के विरुद्ध करेंगो वांको भगवान् खोटो करेगा । सं. १९९६ का महासुद ता० १६–८–४० मु० की रामराय सोमानी दाणी पडासोली द. जीवराज बुर्ड का छे नि० चतरभुज पटेल नि० गम्भीर पटेल नि० जीता पटेल नि० हजारी किसना पटेल नि० नाथुनाई नि० छितर पटेल द. उंकार लुवार नि० कसन्ना पटेल नि० खेता पटेल नि० हजारी पटेल नि० सवाई पटेल नि० फत्तेसिंह ठाकुर द. रिखबचन्द रोकडचन्द पडासोली

नकल पट्टा जयनगर– ।

सिद्ध श्री श्री १००८ पूज्य महाराज साहेब श्री घासीलालजी महाराज साहेब व्याख्यांजी पं महाराज श्री कन्हैयालालजी महाराज साहेब श्री १००५ श्री मङ्गलचन्दजी महाराज साहेब श्री मदनलालजी महाराज सा० ठाना से आज जैनगर बिराजमान हैं । आज दिन ॐशान्ति की प्रार्थना हुई और अहिंसा को उपदेश फरमांयो । उस उपदेश को धारण करके हमने जैनगर निवासी गुजर पटेल हमारी सब कौम याने गुजर, खाती, लुहार सुनार कुम्हार, माली, तेली, भील, बलाई, खटिक, आदि जैनगर के सब कौम की अर्ज मालूम होवे कि हम लोग कोई जीवहिंसा करांगा नहीं तथा देवता माताजी भैरूजी आदि सर्व देवता के जीवहिंसा नहीं करांगा मिठी परशादी चढावांगा तथा वणांका नाम का अमरीया कर देवांगा । यो प्रण श्री चारभुजाजी महाराज को बीच राख कर चन्द्रामा सूर्य की साकसी सु किना है सो हमारी आल औलाद तक निभावांगा व गाँव रेवेगा जहां तक निभावांगा । अणी प्रणसु विरूद्ध चालेगा वणिरो भलो नहीं होवेगा । २

सं. १९९६ का मिति महासुद्ध १३ बुधवार पुखनक्षत्र द. कालु खाती नि. भुराहलकी छे नि. जोरा नम्बरदार, नि. बालुफागनकी छे, द. मेघराज रांका द. परताबा फागन, द. गोपी फागन, नि लक्ष्मण कोलीखेडा नि. कालुफागन, द. धन्ना तेली, नि. बालुचन्द्र लुहार, नि. बगतावर तेली, द. देवा खाटीक द. रामचंद्र पंड्या नि. देवा तेली की, नि. उदा माली, नि. सुखा की जवाई नि. ,किसना, द. घीसु सुनार, द. कालु फागन, नि. उंकार कलाल इत्यादि समस्त गांव के निवासियोंके कहने से

श्री एकलिंगजी   नकल पट्टा गांव शंभुगढ   श्रीरामजी

सिघ श्री श्री १००८ श्री पूज्य महाराज श्री घासीलालजी महाराज, तथा १००७ पं श्री कन्हैयालालजी महाराज, मंगलचन्दजी महाराज मदनलालजी महाराज ठा० ४ पधारिया । ॐशान्ति की प्रार्थना हुई । अहिंसा का उपदेश फरमाया सो मां लोग धारण करके शंभुगढ निवासी सारी कोमवाला महाजन की कोम, ब्राह्मणकी कोम, तेली की कोम, लुहार की कोम, गुजरजाट की कोम, सुनार, सुतार, बोला, मोची, मुसलमान, कुंभार, बलाई, आदि सब कोमवाला हिंसा नहीं करांगा तथा देवता के देवी के भैरुजी आदि कोई भी देवता के जीव नहीं मारांगा । यो प्रण मांको वंश रहेगा जबतक पालांगा । देवता के मीठी परसादी चढावांगा । तथा अमरिया कर देवांगा । यो प्रण मां चारभुजाजी ने बीच में रखकर चन्द्रमा और सूरज की साखसु करियो है सो मां सर्व लोग गांववाला सब कोमका मां मांका गांव में कोई जीव मारांगा नहीं मारवादांगा नहीं गांव रहेगा जहाँ तक या प्रतिज्ञा पालांगा । इस में जो विरुद्ध चलेगा उनारो भलो नहीं होवेगा । सं, १९९६ का फागन बिद ६ बुधवार , दः मोडा नम्बरदार का सर्व का. गांव शंभुगडवाला का केवासुलिख्यो है ।

दः कालु जाट, दः खेमारेगर नि. सेवा रेगर, दः बालुतेली नि. बगतातेली नि. जुवान लखारा, नि. हेमातेली द. धुलादरोगा नि. दवा तेली दः धुला जाट नि. उंकार तेली नि. हीराबलाइलाई दः नाथु तेली नि. मेरोकीर नि. मांगू नायक नि. भूरा भावी नि. ऊंकारलाल...इत्यादि

श्री एकलिंगजी   गजसिंहपुरा   श्रीरामजी

सिद्ध श्री श्री श्री श्री १००८ श्री पूज्य महाराज साहेब श्री घासीलालजी महाराज पं १००७ श्री कन्हैयालालजी महाराज १००५ श्री मंगलचन्दजी महाराज १००५ त० श्री मदनलालजी महाराज आदि ठाना ४ को पधारवो हुओ। अहिंसा को उपदेश फरमायो सो उस उपदेशको धारण कर मां गजसिंहपुरा का निवासी गुजर पटेल खाती कुंभार लुहार नाई ढोली बलाई भील रेगर चमार आदि सब कौम की अरज मालूम होवे के आज पीछे में सब कोम का लोग कोई तरह की जीवहिंसा करांगा नहीं तथा देवी देवता माताजी, भेरुजी; जक्षजी, अंबाजी आदि के कोई प्रकार की जीवहिंसा करांगां नहीं तथा इनके नाम से कोई जीव मारांगा नहीं। सब देवता के मीठो परसादी चढ़ावाँगां तथा इनका नाम का अमरा करांगा पण माके लिए तथा देवता के लिए मां सर्व कोम का लोग के लिए कोई जीवहिंसा नहीं करांगा और प्रण यह श्री चारभुजाजी महाराज को बीच में रखकर चन्द्रमा सूरज की साख सुं आपका उपदेश लागनेसु किया है। सो मां लोक मांको गांव गज़सिंहपुरा रहेगा तथा मांको वंश रहेगा वहां तक प्रण पाला जावांगा, कोई हिंसा नहीं करांगा इन प्रण से जो विरुद्ध चलेगा उसका भला नहीं होगा संवत १९९६ का मिति फागन विद ८ शुक्रवार दः रंगलाल कुकडा सर्व कोमका केवासु गजसिंहपुरा में लिख दीना। दः खेमराज कुकडा द. लालदास, द. शोभालाल, नि. पटेल लालू, दः भीमराज,, नि. भजापटेल, नि. कला पलस,. नि. हेमाभील; दः वरदीचन्द, द. भजा-भड़ादो, नि. किसना बलाई, द देवजी दः फूलचन्द नि. गोदुहलसर, द. देवजी, इत्यादि......

श्री एकलिंगजी नकल पट्टा आकडसादा बालपुरा का छे श्रीरामजी

सिध श्री श्री श्री श्री १००८ श्री पूज्य महाराज साहेब श्रीघासीलालजी महाराज १००७ श्री पं कन्हैयालालजी महाराज १००५ श्री मंगलचन्दजी महाराज १००५ श्री मदनलालजी महाराज ठा० ४ सु पधारिया। आज सं. १९९६ का फागन विद ऽऽ शनिवार ॐशान्ति की प्रार्थना हुई, अहिंसा. का उपदेश फरमायो जणीसु मांलोग आकडसादा तथा बाला पुरा मजरा आकडसादा का निवासी सर्व कोम ब्राह्मण जाट गुजर नाई तेली, बलाइ, चमार आदि सर्व कोम वाला यानि हिन्दू, मुसलमान पिंजारा आदि सर्व कोमवालां अहिंसा धर्म को धारण करके यो प्रण कराहां के हमलोग कोई जीवहत्या नही करांगा और मां का गांव का देवी देवता आदि को जीव नहीं मारांगा। वणाने मीठी परसादी चडावांगा तथा देवता के नाम का अमरिया कर देवांगा, यों प्रण मां लोग सर्व कोमवाला चारभुजाजी महाराज ने बीचमें राखकर करयो है सो चन्द्र सूरज की साख सु मां लोग की आल औलाद रहेगा जब तक पालता रहेवांगा अणी सु विरुद्ध प्रण तोडेगा तो वणीको भगवान भलो नहीं करेगा, । स. १९०६ का फागनवदऽऽ शनिवार

दः मुंलदास सर्वगांव या कोम के केणासु कीदा दः किस्तुरचन्द का, द. हीरापटेल, द. धणरूपमल रांका नि. पटेल हीरा नि. जालम पटेल, नि. कालु पटेल नि. शंकरलाल पटेल, द. परताब भागीरथ, नि. भूरानाई द. कजोडीमल, नि. कानापटेल द. लुहार हीरा नि. नानुराम नि. छोगाकालूजी इत्यादि...

श्री एकलिंग जी नकल पट्टा गेनसिंह का खेडा श्रीरामजी

सिद्ध श्री १००८ श्री जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर परमपूज्य श्री घासीलालजी महाराज मुनी श्री १००७ श्री पं कन्हैयालालजी म. श्रीमदनलालजी म. आदि ठाना ४ की सेवा में पट्टा भेट किया जावे ऐतान गेनसिंहजी का खेडा का गुजर खारोल दरोगा कुंभार रेगर आदि में लोग आकड सादा में ॐशाँति प्रार्थना हुई जिन से अब हम सर्व कोम वाला जीवहिंसा नहां करांगा, और माताजी भेरुजी के मीठो पूजा चढावांगा और शराब भी नहीं पीवांगा और पेहला हमारे ठाकुर साहब नारसिंहजी साहब के भी जीवहिंसा का त्याग किया हुवा है, सो हम सर्व लोग जीवहिंसा नहीं करांगा। आज मितिसु माने पक्कासोगन हैं। मांके गाँव में आल औलाद रेवेगा जतरे जीवहिंसा नहीं करांगा और नहीं करने देवांगा। माने त्याग है और यह सोगन लीया सो चान्द सूर्य की

साक्षीसु अगर सोगन लेकर बिगाडेगा तो वांरो सत्यानाश जावेगा सं० १९९६ का मिति चेत वद १ द० रोकडचन्द संचेती का छे सब कौम का केवासुं ।

द० सोलाल पटेल नि० जवारा गुजर नि० उदा नि० जगन्नाथ दारोगा नि० भूरा गुजर नि० गणेस दरोगा नि० सवाई गुजर नि० हजारी नि० घीसा खारोल नि० बदाखारोल नि० कानागुजर नि० सूरजमल नि० हरजी [देवा खारोल महिना में एक उपवास करीया जावेगा साल में बारा । मुलाखारोल १ वास महिना में बाकी निबेगा सो करूंगा] नि० मांगुरेघर नि० छोगा । गुजर नि० देवाखारोल नि० मूला खारोल

श्री एकलिंगजी

आसण दांतडा

।। श्री रामजी ।।

सिद्धश्री १००८ श्री पूज्य श्री महाराज साहब घासीलालजी म. साहित्य प्रेमी पण्डित व्या० मुनी श्री कनैयालालजी म० मुनि श्री मदनलालजी महाराज आदि ठाना ६ सु हमारे यहां दांतडानगर में पधारनो हुवो और अहिंसा को उपदेश फरमायो । उस उपदेश को धारणकर मां आसनदांतडा निवासी गुजर पटेल जाट जोगेश्वर खाती नाई आचारत कुम्हार रेबारी ढोली भील बलाइ रेगर चमार बागरिया आदि सर्व जाति की अर्ज मालूम हो के आज पिछे मां सर्व कोम का लोग कोई तरह की जीवहिंसा नहीं करांगा तथा देवता माता जी देवी भैरूजी जक्षजी आदि के कोई जीवहिंसा नहीं करांगा । तथा इनके नाम से कोई जीव मारांगा नहीं । सब देवी देवता के मीठी प्रसादी चढावांगा तथा इनका नाम के कोई भी जीव को कान में कुडक घाल अमर्या कर देवांगा । देवता के लिये या और भी हमारे खाने के लिये मां सर्व कौम का लोग कोई जीवहिंसा करांगा नहीं । यों प्रण मां चारभुजाजी महाराज को बीच में राख चन्द्रमा सूरज की साख सु आपका उपदेश लागनेसु करियो है । सो मांलोगा का वंश जबतक रहेगा, तथा हमारो गाव आसणदांतडो रहेगा जबतक यो प्रण मां पालश जावांगा । श्रीपूज्य महाराज साहब का इण उपदेश को हमारे गांव का बच्चा २ पर पूर्णतया असर पडियो छे सो इन प्रणसुं जो विरुद्ध चालेगा उसको भगवान भलो नहीं करेगा । संवत् १९९६ शुभ मिति चैत वदी ११ बुधवार ता. ३-४-४० द० कुंवर बसंतीलाल बोहरा सर्व गांव का लोगा का केवासुं लिखी छे ।

द० बोहरा विजयलाल द० बोहरा लालचन्द नि० भारमल नि० सुखाजाट नि० मेघा रेबारी नि० लच्छी रामा कुमार नि० हीरा रावल नि० किसनन्नाथ जोगेश्वर नि० गंगातागु नि० माधु साडोल्या नि० पन्ना रावल नि० देवा गूंजर नि० सुवा पटेल नि० शिवा रावल नि० रायमल भडाणा नि० उदाखाती नि० सेवा बलाइ द० डावा रावल नि० जाट केलू द० हरदेव खाती द० रामनारायण ब्राह्मण नि० मांगू चमार नि० उंकारदास नि० चम्पाजाट नि० बाबूदान रेबारी नि० मोडदास नि० गांवबलाइदेबीडा नि० देवलाबागरिया नि० लछमन भोपा

श्री एकलिंगजी ।।

अंटाली

।। श्री राम जी ।।

सिद्धश्री श्री १००८ श्री पूज्य महाराज महाराज साहब श्री घासीलालजी महाराज प्रिय व्याख्यानी १००५ श्री पं मुनिश्रीकनैयालालजी महाराज, तपस्वी श्री मदनलालजी महाराज आदि ठाना ६ हमारे यहां अंटाली पधारना हुआ और अहिंसा का उपदेश फरमाया उस उपदेश को सुनकर हम अंटाली निवासी राजपूत गुजर पटेल जाट, धोबी कुंभार, तेली, खाती नाई रावत, ढोली बलाइ, रेगर चमार भील भंगी आदि सर्व जाति की अर्ज मालूम हो कि आज पीछे हम सब कौम के देवता माताजी भैरूजी शख्सजी सकोतरी आदि देवों के नामसे कोई जीवहिंसा करांगा नहीं तथा इनके नाम से कोई जीव मारांगा नहीं । सर्व देवता के मिठाई चढावांगा तथा इनके नाम के जीवों को कुडक घालकर अमरिया कर देवांगा । देवता के लिये जीवहिंसा करांगा नहीं यह

प्रण हम सर्व कौम का लोग इकट्ठा होकर श्री चारभूजाजी को बीच में रखकर चन्द्रमा सूरज के साख से आपका उपदेशसुं करियो। सो जब तक हम लोगों का वंश रहेगा तब तक बच्चा बच्चा यो प्रण पाला जावेगा। पूज्य महाराज का इण उपदेश से गांव का बच्चा २ पर पूरांतरह से असर हुवा। इससे विरुद्ध चालेगा उसका भगवान भला नहीं करेगा। शुभ सं० १९९६ का चैत्रकृष्ण अमावश्या रविवार

द० श्री दान किये सर्व जातिवालों के कहनेसे लिखा है द० मेहता शेरसिंह द० सामन्तसिंह द० कल्याणसिंह द० दौलतसिंह द. केशरसिंह द० बलवन्तसिंह नि० भूरासिंह नि—डूगाबावजी, नि नन्दासिंह डोलिया नि० नंदाजाट नि० अमराजाट, द० मोतीमाली द० छोटूमाली खेजडी नि० भूराखुमार द० रामा देवाला, नि. सबलपुरीजी सा०सा वागा, नि. जुवारा पटेल जातछावण नि. सा० परतावजीसा० नि० लछमण सा० नि० ऊंकारा पटेल, नि० सा० मूंगाजाड बकरा पाडा मारा हाथ सुं न मारुंगा द० बालुबाला परतापुरा, नि. श्रीरामकोल्या,नि० श्रो नि. बाईमेस, द० भेरखाअमराजी नि. कूकाजी. द० करमखानीलगर सा० बख्ता० वरखेर, द० चारणनन्दसिंह, नि०सुखदेव सिंह, द० ढोलीभुराका पटेल छे।

॥ श्रीरामजी ॥ नकल पट्टा गांव जीवार

सिद्ध श्री श्री १००८ श्री श्री पूज्य महाराज साहेब श्री घासीलालजी महाराज मुनि श्री १००७ श्री कन्हैयालालजी महाराज श्री १००५ श्री मंगलचन्दजी महाराज श्री १००५ श्री मदनलालजी महाराज आदि ठा० ४ सु बिराजमान हैं। गांव जीवार में आज दिन ॐ शान्ति की प्रार्थना हुई। जणी में पूज्य महाराज अहिंसा को उपदेश दियो उपदेश को धारण करके मां सर्व लोग जीवारवाला सर्व कोम का ठाकुर माली खाती, नाई, कुम्हार लुहार बलाइ भील चमार, आदि कोम की अर्ज मालूम होवे। आज पीछे मां लोग सर्व कोमवाला जीवहिंसा नहीं करांगा। तथा देवी देवता माताजी भैरूजी आदि देवता के नाम की कोई जीवहिंसा नहीं करांगा। इनके नाम से जीव मारांगा नहीं। सर्व देवता के मीठी परसादी चढावांगा तथा इनका नाम का सर्व जीवों को अमरियां कर देवांगा। पण मांके लिये तथा देवता के नाम केलिए में सर्व कोम का कोई जीवहिंसा नहीं करांगा। यो प्रण श्री चारभुजाजी महाराज को बीच में रखकर चन्द्रमा सूरज की सालसु करि यो है। सो मां लोग मांको गांव जीवार रेवेगा तथा मां को वंश रेवेगा वहां तक प्रण पाला जावांगा। कोई जीवहिंसा नहीं करांगा इण प्रणसु विरुध जो चालेगा उसका भगवान भला नहीं करेगा सं० १९९६ का फागन सुदी ६ शुक्रवार द० तोलाराम रांका जेनगर वाला का सर्व कोम का केवासु जिवार में लिख दिनो छे। द० रिखबचंद रोकडचंद संचेती पडासोली नकल पट्टा गांव जीवार

नि० जोधामाली नि० कानासुत कसना नि.भूराखाती, नि.भुराकी नि.गंगारामधना नि.मालीलछमण प्राबूदान नि. उदाचमार नि. रूपाडोई नि. खातीछोगा. नि. नीबा नि. मोतीमाली नि. गुणेश नि. भुरा सवाइ सुतबर नि.मालीगांगा नि. छोगासुत कालुको नि.हजारीउदका नि. नन्दाकी नि. दोलाकी नि.हमीराकी नि.बालूडोइ नि. खेमामाली, नि. कजोडखाती नि. बलाइखेमा नि. छोगा दोला की नि. छोगासुतगोगा नि. भूराकालू नि. मुलाबलाई नि. आईदिन नि. कसनाबलाई नि. गरधारी नि. उंकारामाली नि. गामबलाइ, नि. जाला की नि. माना नि. नीबा की नि. बलाईधना नि. बलाइगांवकी नि. दुलाबलाई नि. कसनाकी नि. हरदेवाकी नि. भुरानट नि. छोगा सुत नि. जुवारामाली नि. रामा नि. रूपाफागन नि. सुतनंदा नि. गंगाराम नि. उंकारा सुतजुवारा नि. मालीहाजारी नि. मालीवगतावर नि रामाबलाई

॥ श्री एकलिंग जी नकल पट्टा जगपुरा ॥ श्री रामजी ॥

श्रीमान् श्री श्री श्री श्री १००८ श्री पूज्य श्री घासीलालजी महाराज साहब का पधारना गांव जगपुरा में हुआ और फागन सुद ९ को शान्ति व्याख्यान हुआ। जिसका सरहद जगपुरा में अगता रखाया

गया और होली के तीसरे दिन अहडा की शिकारखेली जाती थी जिसकी ऐवज में गुगरी ठिकाने में पंच महाजनों की तरफ से जमा होकर शिकारखेलना बंद था। लेकिन पांच साल से गुगरी न देकर अहडा खेलने की रोक नहीं करते थे। अहडा चढाया जाता था। अब पूज्य महाराज साहेब के पधारने से ठिकाना हाजा की तरफ से यह अहडा चेत विद का बंद किया गया हैं और ग्यारस अमावस पुनम को शिकार नहीं करेंगे। सं० १९९६ का चैत्रवदी १ दीतवार द: पदमसिंह ठि० जगपुरा

श्री एकलिंगजी नकल पट्टा पडासौली श्रीरामजी

सिद्ध श्री श्री १००८ श्री श्री पूज्य श्री घासीलालजी महाराज १००७ श्री साहित्यप्रेमी मनोहर व्याख्यानी पं मुनिश्री कन्हैयालालजी महाराज श्री १००७ श्री मंगलचन्दजी महाराज श्री १००५ श्री विद्यार्थी विजेचन्दनी महाराज श्री १००५ श्री तपस्वी श्री मदनलालजी महाराज ठाना ६ सु पधारिया और ॐशान्ति की प्रार्थना हुई और अहिसा का उपदेश दिया। उस उपदेश को सुनकर हम सर्व कोमवाला आज से कोई जीवहिंसा नहीं करांगा यो प्रण मां चारभुजाजी महाराज व चांद सूरज की साक्षी से सोगन किया है। अणी प्रण सु विरुद्ध चलेगा विणरो भगवान भलो नहीं करेगा सं. १९९६ का चेतवदि दीतवार

द: रोकडचन्दसंचेती सर्व कोम के केवासु, द: मोड्रलाल कांठेड, द.कंवरलाल बडोला द:मांगीलाल कांठेड द.भुरालालबुरड द.मांगीलाललोढा द.कसनामाली द.किस्तुरचन्दसुनार द.सुरजाधोबी नि.वरदालखमावत नि.परताबाडाकोत नि. नाईलाडु नि. भनाबजाड नि. माधुदरजी नि. लखमावतऊंदा द. नन्दलालब्राह्मण नि. भील भरदा नि. कुणगर नि. भीलरूपा नि. हमीरा कुम्भार नि. भीलरूपा नि. रीमापीनारा नि. मेरूखाती नि. रामाभांभी नि.राजमल आंचला इत्यादि...

नकल पट्टा काचलाखारी पट्टा न. ८

सिद्ध श्री पूज्य श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज ठाना ५ से दानपुर में विराजमान थे उस मौके पर हम काचलाखारी के कूल भिलान उपदेश सुनने आये। महाराज श्री १००८ श्री ने दया धर्म का उपदेश सुनाया। उसको सुनकर हम सभी ने नीचे को मुजब कुलदेवी, देवतागण ने पाडा बकरे मुर्गे आदि जीवों को मारकर चढाना बन्द कर उनके बदले मीठा भोग चढाकर धूपध्यान करांगा, कोई भी जीव देवी देवतागण के नाम थी देवता के सामने तथा घर में व बाहर में नहीं मारेंगे और न मारवा देंगे। इस ठहराव को तोडेगा उसको बाराबीज पूगेगा। यह ठहराव हमारे गाँव व हमारे वंश रहेगा वहां तक पालेगा। संवत १९९७ माघ वदि ६ शनिवार ता. १८, १, ४१ द: जयनन्दन शास्त्री—पंचों के कहने से लिखा

नकल निशानी व दस्खत नि. रावत थावरजी नि. गामड कालू नि. रंगजी गामड गाम जूझार नि. निनमा रुकमा नि. गामड रतना नि. कूरिया नि. गामड थावरावल्ददीत्या नि. नाथू दानपुर (इसने हिंसा दारू पीना मांस खाना छोडा दिया) नि. चरपटो वीरजी गाम खेडिया नि. केरींगो गाम नेगडिया नि. रावजी नागजी नि. मंगरा राठौड

श्री चत्रभुजजी नकल पट्टा लाम्वा सही— श्रीरामजी ॥

सिद्ध श्री श्री १०० श्री पूज्य महाराज साहव श्री घासीलालजी महाराज पण्डित आदि शिष्य मण्डली सहित लाम्वा में चैत्र सुदि ३ को पधारिया चोथ का अगता रहा तथा आज रोज ॐ शान्ति की प्रार्थना हुई। इस उपदेश से नीचे मुजब प्रतिज्ञा कर हमेशा पट्टा में पाली जावेगी। ठाकुर साहब राजश्री मोतीसिंहजी सोना नवेश वा ताजीमदार के वक्त से। (१) पजुषणों के आठों दिनों में अगता रखा जावेगा (२) फुल सागर तालाव में शिकार खेलना कतई बन्द कर दिया जावेगा। आज से बन्द किया गया (३) बारह महिनों में

शुक्लपक्ष की अष्टमी पर देवीजीके नाम पर जो बलिदान होता है वह बन्दकर सब ही देवी देवताओं के स्थान पर मीठाई चढाई जावेगी (४) आहेड की शिकार हमेशा के लिये बन्द की गई (५) ग्यारस अमावस पूनम बारहमहिनों की वा वैशाख वा कार्तिक में हम शिकार दारूका खान, पान नहीं करेंगे और हमारी जबान से कहकर के किसी जिव की हिंसा नहीं करावेंगे न खुद करेंगे। उपरोक्त लिखी हुई कलमों का पालन ठिकाना लाम्बा में पाला जावेगा सं.० १९९७ का चैत सुद ४ गुरुवार द० ओंकारलाल व्यास श्री रावला का हुक्म से लिया है।

मोहर छाप ठिकाना नान्दसी ता० २१-४-४०

स्वस्ति श्री राज श्री करणसिंहजी वचनायतु पूज्य श्री घासीलालजी महाराज के अक्समात यहाँ भाषण होने पर निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जायेगा। (१) अहेडा बन्द किया जायेगा (२) भैंसा मारना बन्द किया जायगा (३) पनघरिया तालाव में गोली चलाने व मछली मारने की इजाजत नहीं दी जायगी। (४) कार्तिक मास में दरबार साहब खुद गोली न चलावेंगे मिति चैत्र सुद १४ सं. १९९७ वे का हुक्म श्री दरबार साहेब लिखा है। (जि० अजमेर मेरवाडा)

(नकल पट्टा कुँवर साहबान लाम्बा)

सिद्ध श्री श्री श्री १००८ पूज्य महाराज घासीलालजी म.मय शिष्य मण्डली सहित के चरण कमलों में लाम्बा से कंवर हरनाथ सिंह बलदेव सिंह की चरण वन्दना अर्ज होवे। आपका पधारना यहां लाम्बा में चेद सुद ३ को हुआ। उस शुभ अवसर पर हम दोंनों भाई हाजिर नहीं थे और आप की अमृतवाणी का लाभ नहीं उठा सके जिस का हमको बहुत अफसोस हैं। अब भी आपसे प्रार्थनो है कि हम पर कृपा फरमा कर ऐसा शुभ अवसर जल्दी बक्षे और आपके उपदेश की चर्चा यहों के आदमियों से सुनकर हमारे हार्दिक भाव से प्रतिज्ञा करते हैं सो हमेसां आपकी दया से निभाते रहेंगे

(१) हमारें परम पूज्य पिताजीने जो प्रतिज्ञा की है वो सब हम निभावेंगे (२) बियोला नामी तालाब व काला नामी तालाव में किसी क़िस्म की हिंसा हम न करेंगे। हमारे होते हुए दूसरो को भी न करने देंगे। (३) सांभर बटेर हिरण रोज रींच मच्छी हरेल इन जानवरों को हिंसा नहीं करेंगे न इस्तेमाल करेंगे (४) हमारे मातेश्वरी के यादगार में तीन महीना वैशाख जेठ और अषाढ में प्याउ का इंतेजाम आपके उपदेश मा फिक रखा जावेगा (५) श्रावण मास में किसी किस्म की हिंसा नही करेंगे न मांस मदिरा का सेवन करेंगे. उपर लिखी प्रतिज्ञा करते हैं सो लिखकर आपके चरण कमलों में भेट करते हैं कृपा फरमा कर स्वीकृत करावें सं. १९९७ का वैशाख दिन गुरुवार द. कुंवर बलदेवसिंह द. हरनाथसिंह लाम्बा

घनोप का पट्ठा

यह सब वीर जयन्ती के मोके पर पट्टा हुआ है सही—

सिद्ध श्री पूज्य महाराज साहब श्रीघासीलालजी महाराज तपस्वी श्री मदनलालजी महाराज आदि ठाना ६ सु हमारे यहाँ घनोप नगर में पधारना हुआ और अहिंसा का उपदेश फरमाया उस उपदेश को धारण किया। गुजर पटेल जोगेश्वर, खाती नाई राजपूत, कुंभार, रेबारी, भील, बलाई चमार खटीक आदि सर्व जाति घनोप निवासी की अर्ज मालूम हो कि आज पिछे घनोप के सब कौमका लोग कोई तरह की जीवहिंसा करांगा नहीं तथा देवता माताजी भेरूजी सगसजी आदि के लिये कोई जीव हिंसा करांगा नहीं तथा इन के नाम से कोई जीव मारांगा नहीं सब देवता के मीठी प्रसादी चढावांगा। इनमें किसी प्रकार की भूल न होगी हम सब पंचोंने पट्टा खुशी से लिख दिया है।

द० माधो प्रसाद पेरोकर, सब पंचों के कहने से लिखा चेतवदि १३ सं. १९९७ ता० २०—

४-४० मांगीलाल पालडेचा द. सुगनचन्द्र संचेती द. हगामीलाल लोढा द. ठा. ० बलवन्तसिंह द० हगामी सुनार नि० भोपाजी छोटू कलाल नि० रामकिसन सिरोठा नि गंगा मीटर को गुजर नि० तेजू किर की द० दसामी द. कल्याण खटीक, द. महन्त वसन्तीलाल खटीक, नि. धन्नामाली नि कल्यान तेली नि. बाबू रेवारी नि. मोड्चमार नि. सुवोनाई नि. रामा मीटरपटेल खंगार कोली द. लादु लोहार नि. घासीकलाल, नि.हमीरा नायक नि. गङ्गाराम खाती नि. भजाचमार नि.जमनी चमोरी नि. छोटूखमीर नि. सुजाबाम्र नि.भूरा नाई द. गङ्गाधर द. उदराम पंड्या द. जालमसिंह । नि. कजोड कुमार नि. शान्तागुसाई नि. सहदेवखाती नि. भोडारेवारी नि. भगवान रेवारी नागोलाहाला की छे नि. पटेल हमीरा नि. हरसल नि. मोहनमेहतर नि. हगामीलालमेहतर नि. मोतीमेहतर

नकल पट्टा मोजा सागरिया

सिद्ध श्री श्री १००८ श्री पूज्य महाराज साहब श्री घासीलालजी महाराज तपस्वी श्री मदनलालजी महाराज ठाना ४ से हमारे यहाँ सागरिया पधार्या और अहिंसा का उपदेश फरमाया उस उपदेश को हम सागरिया निवासी गुजर, पटेल, जाट, जोगेश्वर खाती नाई, कुम्भार माली, धोबी रेबारी, ढोली, भील, रेगर बलाई, खटीक, चमार फकीर मुसलमान बागरिया भंगी सर्व गांव कि अर्ज मालूम होवे की आज पीछे हम सर्व कोम के लोग कोई तरह की जीवहिंसा करांगा नहीं । देवी देवता माताजी भेरुजी, शरदाजी धनोप माताजी के कोई जीवहिंसा करांगा नहीं । तथा इनके नामसे कोई भी जीव होगा उन्हें अमरियो कर कुडक घाल देवेंगे और देवता के लिए व खाने के लिये हम सर्व कौम का लोग जीवहिंसा करांगा नही । यह प्रण श्री चारभुजाजी महाराज को बीच में रखकर चन्द्रमां सुरज की साक्षी से आपका उपदेश लागवा सुं कर्यो है । सो हम लोनों का वंश तथा गांव सागरोया रहेगा तब तक निभावांगा आद औलाद रहेगा वहाँ तक पाल्या जावांगा इन प्रणसु जो विरुद्ध चलेगा जीको भगवान भलो नहीं करेगा । स० १९९७ मिति वैशाख वद ३ बुधवार । ता० २३-४-४० गामवाला का केवासु लिखो ।

द० भूरालाल चोकरी द० हगामीलाल छगानीराम द० भूरालाल बावेल, द० दौलतसिंहजी चौधरी, द० भुरा दीपा, द० पटेलमोजूबेली द० अहमदखां द० ठा० पृथ्वीसिंह द० कल्याणरेगर नि. मांग्या नि. लच्छा चमार, नि० छोगाखटीक, नि० उकाचमार नि०बालु । नि० रेंगर नि० सुखा रेगर नि० बालू चमार नि० लछारेगर नि० मोती रेगर नि. गोप्या रेगर नि० सफरातफकीर नि० लछमीनारायण दरोगा नि० नारायण रेगर नि० नाथु गुजर द० नाथुपनारा द० धन्नालुहार द० लादुरामनाई नि० पन्नामाली नि० पोलदारेंगर द. कालाधारी दः धन्ना लोहार दः लादूराम नाई नि. पन्नामाली दः पोलदारेगर नि कालू धाडी दः राजमा पुरा नि. गंगा रेगर दः जुवानारेगर नि भागीरथकीर दः नखरियानट नि. मांग्यारेगर दः हरजारेगर नि. बीरमारेगर नि. जगल्या रेंगर ।

(मोहर छाप ठिकाना केरोट)

श्री श्री१००८ श्री पूज्य महाराज साहेब श्रीघासीलालजी म० तथा तपस्वीश्री मदनलालजी महाराज का केरोट राजस्थान में पधारना हुवा और दरबार खास के चौक में पूज्यश्री महाराज का व्याख्यान धर्म और सद् उपदेश हुवा । उस उपदेश के अनुसार नीचे लिखे नियमों का पालन होता रहेगा ।

(१) सभी देवी देवताओं को मीठा प्रसाद चढाया जावेगा हिंसा नहीं की जावेगी । (२) इलाका केरोट के सर्व तालावों में कोई बिना इजाजत शिकार नहीं कर सके ऐसा साईनबोर्ड लगा दिया जावेगा । इलाके भर में पजुषन में भादवावदि ११ से भादवा सुदि ५ तक शिकार करने की सख्त मुमानियत रहेगी और घाणी वगैरा का अगता रहेगा और मैं श्रावण भादवा कार्तीक वैशाख में वा तिथि ११-१५-३०

में खुद शिकार नहीं खेलूंगा । (४) बीड़ मौजुदा दुचल्या का घास पूरा कट जाने पर या खुद कर उठ जाने पर इजाजत बिना किमत पुण्यार्थ मवेशियान को (गायों को) चराने को दी गई है । (५) महाराज के शुभागमन की तिथि वैशाख वदी ४ को हरसाल अगता रखा जायेगा । लिखा श्री दरबार साहब का हुक्म से फक्त ता० २५-४-४० मुताबिक मिति वैशाख वदी ४ सं. १९९७ रामधन कामदार केरोट द० अंग्रेजी में (ठाकुरसाहब) उदयसिंह २४-४-४०

नकल पट्टा बछखेडा

सिद्ध श्री पूज्य महाराजश्री १००८ श्रीघासीलालजी महाराज प्रिय व्याख्यानी पं-रत्न मुनिश्री१००७ श्रीकन्हैयालालजी म० तपस्वी श्री मांगीलालजी महाराज आदि ठाना ४ चार का मिति वैशाख वदि ११ को गांवबछखेडा में पधारना हुआ । बाजार में अहिंसा का उपदेश फरमाया । उस उपदेश को हम सब बछखेडा निवासी महाजन ब्राह्मण क्षत्री, छिपा, जाट, गुजर, कुम्हार, नाई. सुनार, सुथार दर्जी, साधु खाती लुहार माली मीणा तेली, धोबी ढोली खारोल नाथ गुसाई, बावर, कलाल, खटीक, बलाई चमार रेगर, भील, महत्तर आदि बछखेडा के निवासी सर्व जाती के हमलोग माताजी भैरुजी. देवी, देवता सगसजी धनोपमाताजी वगैरा और देवी देवता के नामपर नकोई तरह का बलिदानजीवहिंसा नहीं करेंगे तथा अपनी तरफ से देवताओं को मीठी प्रसादी चढा दी जावेगी । यो प्रण मां चारभुजाजी तथा चन्द्रमा सूरज की साखसु अपनी इच्छासे किया है। इस प्रण सू जो विरुद्ध चलेगा जिंको भगवान भलो नहीं करेगा । यो प्रण मांको वंश रहेगा जहांतक निभाया जावांगा । संवत १९९७ वैशाख वदी ११ शुक्रवार द० फौजमल टोग्पा पिपलाज वाला सर्व गांव कौम के कहवा सु लिख्याछे । द. फूलचन्द टोन्पा द०भूरानाई द. जोरूलाल गोखरू द० कल्याणमलतोसनींवाल द० राधाकिसन सुतार द० रामचन्द्रछीपा द० कनीराम तिवारी द. हीरासाधु द० जगन्नाथ ब्राह्मण द. धन्नालाल परासर द० रामसुख पंडा नि० जगन्नाथ परोत द. रामकरण ब्राह्मण नि. जगन्नाथदरजी द० फौजमल टोम्पा (सर्व हिंसा का दारु मांस का त्याग) दः धन्ना—दारु मांस व बलिदान जीवहिंसा नहीं करेगा । इस वास्ते बकरा बछडा नहीं बेचांगा द. सेनानी भूरा जाट बारोडा की छे, द. गुजर उदा वल्द कालूफनाकी दारु मांस छोड दिनों है । कभी लेऊं नहीं । नि. से. ब्रजदासका अंगुठानाणी नि. धन्नानाथ की से नाणी है जाट हजारो है गोरा की सेनानी, नाई जवाहरमल की से. जाट किशन बारोट की सेनानी जाट गिरधारी बारोडा की से. नि. बलाई छोगा के अंगुठा की जाट बगतावर बारोडा की से. छीतर डागा की से० गुजर मांगाखाराकी से० कल्याणदास की से० सुखा नटकी सेनानी, सुखानट राजीखुशी से दारु जीव मारवो जन्म भर छोड दीनो है । पोखर रेगर की अंगुठा की से. चमार धन्ना का अंगुठा की सेनानी चमार भैरु वल्द धुलाकी से. भुरा लखाराकी से० माली किसना की से. दः रामनाथ जाटका, द.धन्नालाल तेली, दः भुरसिंह का, दः हीराधोबी का, दःहीरालुहार का, लुहार धन्ना का अंगुठा की निसानी, दः भैरूखाती का नि.उगमा धोबी की सेनानी, बख्तार बावर की, से कल्याण कारीगर खाती की इत्यादि

इस प्रकार अनेक गांवों में धर्मोद्योत करते हुए पूज्यश्री बदनोर पधारे । यहां आपका जाहिर प्रवचन हुआ । बदनोर रावजी १०५ श्री गोपालसिंहजी ने पूज्यश्री के आदेश से बदनोरा देश में एक रोज का अगता पलाया । इस देशमें धर्मकार्य करते हुए पूज्य श्री गुलाबपुरा विजयनगर, धनोप, हुरडा आदि गांवों में अहिंसा का झंडा फराते हुए तथा ॐ शान्ति की प्रार्थना कराते हुए शाहपुरा पधारे । वहां पर जनता की ओर से ॐ शान्ति की प्रार्थना हुई । और शाहपुरा नरेश श्री १०५ श्री उम्मेदसिंहजी साहेब ने नाहर निवास में पूज्यश्री का व्याख्यान सुना और चातुर्मास करने की जोरदार विनती की तथा वहां श्री मनोहरसिंहजी चंडालिया को रतलाम श्री संघ की सेवा में यह कोशिश करने के लिए भेजा कि पूज्यश्री का चातुर्मास सहापुरा करने के लिए. पुज्यश्री को खुला कर दे किन्तु पुज्यश्री का चातुर्मास लम्बे समय से रतलाम

में नहीं हुआ था और बहुत समय से अलभ्यलाभ मिलने वाला था इसलिये आये हुए श्रावक को खाली हाथ वापीस लौटना पडा। साथ ही रतलाम श्रीसघ की तरफ से पूज्यश्री का विहार शीघ्र करने की विनती करने के लिए रतलाम से सेक्रेटरी श्री लखमीचन्दजी मुनोत को शाहपुरा भेजे। लखमीचन्दजी ने संघ की ओर से अपना प्रार्थना पत्र पूज्य श्री की सेवा में पेश किया।

मेवाड में अमर पडह

शाहपुरा से बिहार कर रास्ते में धर्मोद्योत करते हुए भिलवाडा चितौडगढ पधारे। यहां पर उदयपुर श्रीसंघ के मुख्य मुख्य श्रावकगण व चौवीसाजी सा. श्री कन्हैयालालजी सा. पूज्यश्री के दर्शनों के लिए पधारे। पूज्यश्री ने चौवीसाजी द्वारा हिज हाईनेस हिन्दवाकुलसूर्य महाराणा साहेब से सारे मेवाड़ देश के करीब साढे दस हजार ग्रामों में आगता पालने का हुक्म जारी करने का फरमाया जिससे असंख्य प्राणियों को अभय दान मिला।

मालवा में पदार्पण

मेवाड में अलौकिक उपकार कर पूज्यश्री ने मालवे की तरफ अपने पद पंकज बढाये। पूज्यश्री निम्बाहेडा जो टोंक रियासत का एक सूबा है वहां पधारे। आपके पधार ने से जनता व राज कर्मचारी लोगों में धर्मजागृति बहुत हुई। सारे शहर में ॐ शान्ति की प्रार्थना हुइ व जीवदयादि धर्मकार्य हुए। इसी तरह पूज्यश्री के धर्मोपदेश से तहसीलदार साहेबने नीमच सीटी में कत्लखाने बन्द रखवाये और आम बाजार में ॐ शान्ति की प्रार्थना करवाई।

मन्दसौर का अलौकिक दृश्य

नीमच से ग्रामोंग्राम विचरते हुए पूज्यश्री मन्दसौर पधारे। श्रावक समुदाय चार मिल तक पूज्यश्री के स्वागतार्थ गया। जयध्वनि के साथ पूज्यश्री का जमकुपुरा के भवन में पधारना हुआ। आठ रोजतक मन्दसौर की जनता को अमूल्य वाणी का लाभ प्राप्त हुआ। ता० ३०-६-४० को मन्दसौर प्रजा परिषद् की तरफ से राजेन्द्रविलास में ॐ शान्ति का प्रार्थना दिवस मनाया गया। पूज्यश्री का दो घन्टे तक ईश्वर प्रार्थना विषय पर प्रवचन हुआ। पिछे एक घंटे तक हजारों जनता ने मिलकर ॐ शान्ति की पवित्र धुन से आकाश को गुंजा दिया। जनता खूब प्रसन्न हुई। वहां पर रतलाम से श्रीमान् रतनलालजी गान्धी श्रीचांन्दमलजी गान्धी श्री सोमचन्द्र भाई, मास्टर मिश्रीमलजी, श्रीलखमीचंदजी मुणोत, पूज्यश्री के दर्शनार्थ पधारे और पूज्यश्री से रतलाम शीघ्र पधारने की प्रार्थना की। वहां से बिहार कर आप खलचीपुरा पधारे वहां की हिन्दु मुस्लिम जनता ने व्याख्यान का लाभ लिया। समस्त जनता ने ॐशान्ति की प्रार्थना की उसदिन रात्रि भोजन, हरीसब्जी का त्याग, ब्रह्मचर्य पालन, दारु मांस का त्याग जीवहिंसा न करने के आदि नियम ग्रहण किये। वहां से आप ढोढर पधारे. पूज्यश्री का ढोढर पधारना सुनकर जावरा के २०-२५ भाई वहां पहुँचे। दूसरे रोज पूज्यश्री के जावरे पधारने की खबर सुनकर नर नारियों के वृन्द के वृन्द सामने आये। जयध्वनि के साथ पूज्यश्री ने पौषध शाला में प्रवेश किया। जहाँ आपने २-३ प्रवचन दिये। उसके बाद आप स्टेशन पधारे। जनता का अत्यधिक आग्रह होने से दो व्याख्यान स्टेशन पर भी हुए। वहां पर जावरा स्टेट के चीफ मिनिस्टर सा. ने पूज्यश्री के दो बार दर्शन कर व्याख्यान श्रवण किया। रतमाल से करीब ६०-७० भाई पूज्यश्री के स्वागतार्थ जावरे पहुँचे और पूज्यश्री से प्रार्थना की कि चातुर्मास के दिन बहुत समीप आगये हैं अत: आप शिघ्र ही रतलाम पधारें।

रतलाम मे पदार्पण

पूज्यश्री के रतलाम स्टेशन पर पधार जाने की जनता को जब खबर मिली तो जनता सैंकड़ों की संख्या में स्टेशन पर जा पहुंची और दर्शन कर अपने भाग्य को सराहने लगी। अषाढ शुक्ला १० गुरुवार को

प्रातः समय परम मंगलकारी था क्योंकि आज पूज्यश्री का शहर में प्रवेश हो रहा था। सर्व के आगे श्री धर्मदास जैनमित्रमण्डल की पाठशाला के विद्यार्थी केसरियां टोपी से सज कतार बन्ध चल रहे थे। उनके बाद पूज्यश्री अपनी शिष्य मण्डली के साथ कदम आगे बढ़ा रहे थे। बाद में रतलाम के हजारों स्त्री पुरुष पूज्य की जय जय कार करते हुऐ एवम् मंगल गान गाते हुए चल रहे थे। समय सुहावना था। दृश्य रमणीय था। पूज्यश्री बड़ी सड़क से होते हुए नीम चौक में पधारे। वहां पहले से ही स्थविरपदविभूषित तपस्वी श्री हजारीमलजी महाराज सलाहकार परमहितैषी पं. मुनिश्री केशरीमलजी महाराज सेवा भावी मुनिश्री प्रेमचन्द्रजी महाराज ठाना ४ से विराजित थे। तपस्वी श्री के दर्शन कर मांगलिम सुनकर बजाजखाना में होते हुए पूज्यश्री ने विशाल जनसमुदाय के साथ श्री धर्मदास जैन मित्रमण्डल के भव्य भवन में प्रवेश किया। भवन जय ध्वनि से गूंज उठा। जय ध्वनि सुन कर आस पास का जन समूह उठ उठ कर देखता था व पूज्यआचार्यश्री का दर्शन करता था। वास्तव में यह अपूर्व दृश्य था। पूज्यश्री व सलाहकार पं. मुनिश्री केशरीमलजी म० के मुखारविंद से मांगलिक प्रवचन सुनकर जनता विसर्जित हुई।

पूज्यश्री अपनी अमोघवाणी द्वारा संसार के कलुषित वातावरण से संतत अनेक भव्य प्राणियों के हृदय को संतोषित करने लगे। पूज्यश्री के व्याख्यान हौल में पधारने तक तो जनता का खूब जमाव हो जाता था, व्याख्यान भवन में जनता का समावेश न होने से सड़क पर टीन का छपरा खींचवाया गया। व्याख्यान समाप्ति का समय हो जाने पर भी लोगों की यही इच्छा रहती थी कि पूज्यश्री अभी व्याख्यान फरमाते हि रहे। क्योंकि पूज्यश्री की वाणी लोगों को अति प्रिय लगती थी। पूज्यश्री की वाणी मार्मिक तथा सरल होने से हरएक आ बाल वृद्ध अच्छी तरह से समझकर लाभ उठा सकते थे। दोनों सम्प्रदाय का एक ही स्थान पर व्याख्यान होता था। मुनिराजों का पारस्परिक स्नेह भाव आदर्श एवं अनुकरणीय था।

ॐ शान्ति की प्रार्थना का भव्य आयोजनः—

श्रावनवदी १४ ता० २-८-४० को पूज्यश्री के आदेशानुसार श्रीमन्त महाराजाधिराज महाराजा श्री १०८ श्री मेजर जनरल हिज हाईनेश सर सज्जनसिंहजी साहेब बहादुर G. C. I. E. K. C. I. E. K. C. S. I. K. C V. O. C To His Imperial Majesty. ने सारी रियासत में उस रोज जीव-हिंसा नहीं करने का आदेश जारी किया। पूज्यश्री का ईश्वर प्रार्थना पर मार्मिक प्रवचन स्वस्थान पर ही हो रहा था। जैन अजैन श्रोता गणों से व्याख्यान भवन खिचोखिच भरा हुआ था। पूज्यश्री की अमृतवाणी भव्यजीवों के हृदय को पवित्र कर रही थी। उसी समय श्रीमान् लक्ष्मीनारायणजी साहब सेक्रेटरी स्टेट कोन्सिल ने महाराजा साहब की तरफ से आ कर प्रार्थना कि की श्रीमंत महाराजा साहब मित्र निवास में ॐ शान्ति के विषय पर व्याख्यान सुनना चाहते हैं। उस पर पूज्यश्री १०॥ बजे मित्र निवास महल में पधारे। साथ में जनता भी जयध्वनि करती हुई वहां पहुँची। वहां पर श्रीमन्त महाराजा साहेब, तथा श्रीमन्त महाराज कुँवर साहेब, मेजर साहेब, दिवान साहेब, उच्चकर्मचारीगण आदि पधारे थे। मित्र निवास के अन्दर के कमरे में श्रीमती राजमाता महारानी साहिबा भी प्रवचन सुनने के लिए बैठ गई थी। पूज्यश्री का प्रवचन साढे ग्यारह बजे तक हुआ। १५-मिनिट तक एकान्त में महाराजा साहब ने महाराजश्री से वार्तालाप किया। इसके बाद माहाराजश्री अपने शिष्य मण्डली के साथ स्वस्थान पधारे।

पर्यूषण पर्वाराधान—

भाद्रपद शुक्ला पंचमी को पर्वाधि राज पर्यूषण पर्व की भव्य आराधना की। व्याख्यान में प्रतिदिन ७ ८ हजार जनता एकत्र होती थी। व्याख्यान के लिए एक भव्य पाण्डाल बनाया गया था। व्याख्यान में प्रथम मनोहर व्याख्यानी मनोहरलालजी महाराज सुबोधवक्ता श्री हरखचन्दजी महाराज सूत्रकृतांग अनेक हेतू दृष्टान्त

में नहीं हुआ था और बहुत समय से अलभ्यलाभ मिलने वाला था इसलिये आये हुए श्रावक को खाली हाथ वापीस लौटना पडा। साथ ही रतलाम श्रीसघ की तरफ से पूज्यश्री का विहार शीघ्र करने की विनतो करने के लिए रतलाम से सेक्रेटरी श्री लखमीचन्दजी मुनोत को शाहपुरा भेजे। लखमीचन्दजी ने संघ की ओर से अपना प्रार्थना पत्र पूज्य श्री की सेवा में पेश किया।

मेवाड में अमर पडह

शाहपुरा से बिहार कर रास्ते में धर्मोद्योत करते हुए भिलवाडा चितौडगढ पधारे। यहां पर उदयपुर श्रीसंघ के मुख्य मुख्य श्रावकगण व चौवीसाजी सा. श्री कन्हैयालालजी सा. पूज्यश्री के दर्शनों के लिए पधारे। पूंज्यश्री ने चौवीसाजी द्वारा हिज हाईनेस हिन्दवाकुलसूर्य महाराणा साहेब से सारे मेवाड़ देश के करीव साढे दस हंजार ग्रामों में आगता पालने का हुक्म जारी करने का फरमाया जिससे असंख्य प्राणियों को अभय दान मिला।

मालवा में पदार्पण

मेवाड में अलौकिक उपकार कर पूज्यश्री ने मालवे की तरफ अपने पद पंकज बढाये। पूज्यश्री निम्बाहेडा जो टोंक रियासं का एक सूबा है वहां पधारे। आपके पधार ने से जनता व राज कर्मचारी लोगों में धर्मजाग्रति बहुत हुई। सारे शहर में ॐ शान्ति की प्रार्थना हुइ व जीवदयादि धर्मकार्य हुए। इसी तरह पूज्यश्री के धर्मोपदेश से तहसीलदार साहेबने नीमच सीटी में कत्लखाने बन्द रखवाये और आम बाजार में ॐ शान्ति की प्रार्थना करवाई।

मन्दसौर का अलौकिक दृश्य

नीमच से ग्रामोंग्राम बिचरते हुए पूज्यश्री मन्दसौर पधारे। श्रावक समुदाय चार मिल तक पूज्यश्री के स्वागतार्थ गया। जयध्वनि के साथ पूज्यश्री का जमकुपुरा के भवन में पधारना हुआ। आठ रोजतक मन्दसौर की जनता को अमूल्य वाणी का लाभ प्राप्त हुआ। ता० ३०–६–४० को मन्दसौर प्रजा परिषद् की तरफ से राजेन्द्रविलास में ॐ शान्ति का प्रार्थना दिवस मनाया गया। पूज्यश्री का दो घन्टे तक ईश्वर प्रार्थना विषय पर प्रवचन हुआ। पिछे एक घंटे तक हजारों जनता ने मिलकर ॐ शान्ति को पवित्र धुन से आकाश को गुंजा दिया। जनता खूब प्रसन्न हुई। वहां पर रतलाम से श्रीमान् रतनलालजी गान्धी श्रीचान्दमलजी गान्धी श्री सोमचन्द भाई, मास्टर मिश्रीमलजी, श्रीलखमीचंदजी मुणोत, पूज्यश्री के दर्शनार्थ पधारे और पूज्यश्री से रतलाम शीघ्र पधारने की प्रार्थना की। वहां से बिहार कर आप खलचीपुरा पधारे वहां की हिन्दु मुस्लिम जनता ने व्याख्यान का लाभ लिया। समस्त जनता ने ॐशान्ति की प्रार्थना की उसदिन रात्रि भोजन, हरीसब्जी का त्याग, ब्रह्मचर्य पालन, दारु मांस का त्याग जीवहिंसा न करने के आदि नियम ग्रहण किये। वहां से आप ढोढर पधारे। पूज्यश्री का ढोढर पधारना सुनकर जावरा के २०–२५ भाई वहां पहुँचे। दूसरे रोज पूज्यश्री के जावरे पधारने की खबर सुनकर नर नारियों के वृन्द के वृन्द सामने आये। जयध्वनि के साथ पूज्यश्री ने पौषध शाला में प्रवेश किया। जहाँ आपने २–३ प्रवचन दिये। उसके बाद आप स्टेशन पधारे। जनता का अत्यधिक आग्रह होने से दो व्याख्यान स्टेशन पर भी हुए। वहां पर जावरा स्टेट के चीफ मिनिस्टर सा. ने पूज्यश्री के दो बार दर्शन कर व्याख्यान श्रवण किया। रतमाल से करीब ६०–७० भाई पूज्यश्री के स्वागतार्थ जावरे पहुँचे और पूज्यश्री से प्रार्थना की कि चातुर्मास के दिन बहुत समीप आगये हैं अतः आप शिघ्र ही रतलाम पधारें।

रतलाम में पदार्पण

पूज्यश्री के रतलाम स्टेशन पर पधार जाने की जनता को जब खबर मिली तो जनता सेंकड़ों की संख्या में स्टेशन पर जा पहुंचो ओर दर्शन कर अपने भाग्य को सराहने लगी। अषाढ शुक्ला १० गुरुवार को

प्रातः समय परम मंगलकारी था क्योंकि आज पूज्यश्री का शहर में प्रवेश हो रहा था। सबके आगे श्री धर्मदास जैनमित्रमण्डल की पाठशाला के विद्यार्थी केसरियां टोपी से सज कतार बन्ध चल रहे थे। उनके बाद पूज्यश्री अपनी शिष्य मण्डली के साथ कदम आगे बढ़ा रहे थे। बाद में रतलाम के हजारों स्त्री पुरुष पूज्य श्री का जय कार करते हुऐ एवम् मंगल गान गाते हुए चल रहे थे। समय सुहावना था। दृश्य दर्शनीय था। पूज्यश्री बड़ी सड़क से होते हुए नीम चौक में पधारे। वहां पहले से ही स्थविरपदविभूषित तपस्वी श्री हजारीमलजी महाराज सलाहकार परमहितैषी पं. मुनिश्री केशरीमलजी महाराज सेवा भावी मुनिश्री प्रेमचन्दजी महाराज ठाना ४ से विराजित थे। तपस्वी श्री के दर्शन कर मांगलिक सुनकर बजाजखाना में होते हुए पूज्यश्री ने विशाल जनसमुदाय के साथ श्री धर्मदास जैन मित्रमण्डल के भव्य भवन में प्रवेश किया। भवन जय ध्वनि से गूंज उठा। जय ध्वनि सुन कर आस पास का जन समूह उठ उठ कर देखता था व पूज्यआचार्यश्री का दर्शन करता था। वास्तव में यह अपूर्व दृश्य था। पूज्यश्री व सलाहकार पं. मुनिश्री केशरीमलजी म० के मुखार्विंद से मांगलिक प्रवचन सुनकर जनता विसर्जित हुई।

पूज्यश्री अपनी अमोघवाणी द्वारा संसार के कलुषित वातावरण से संतप्त अनेक भव्य प्राणियों के हृदय को संतोषित करने लगे। पूज्यश्री के व्याख्यान होल में पधारने तक तो जनता का खूब जमाव हो जाता था, व्याख्यान भवन में जनता का समावेश न होने से सड़क पर टीन का छपरा खींचवाया गया। व्याख्यान समाप्ति का समय हो जाने पर भी लोगों की यही इच्छा रहती थी कि पूज्यश्री अभी व्याख्यान फरमाते हि रहे। क्योंकि पूज्यश्री की वाणी लोगों को अति प्रिय लगती थी। पूज्यश्री की वाणी मार्मिक तथा सरल होने से हरएक आ बाल वृद्ध अच्छी तरह से समझकर लाभ उठा सकते थे। दोनों सम्प्रदाय का एक ही स्थान पर व्याख्यान होता था। मुनिराजों का पारस्परिक स्नेह भाव आदर्श एवं अनुकरणीय था।

ॐ शान्ति की प्रार्थना का भव्य आयोजनः—

श्रावनवदी १४ ता० २–८–४० को पूज्यश्री के आदेशानुसार श्रीमन्त महाराजाधिराज महाराजा श्री १०८ श्री मेजर जनरल हिज हाईनेश सर सज्जनसिंहजी साहेब बहादुर G. C. I. E. K. C. I. E. K. C. S. I. K. C V. O. C To His Imperial Majesty. ने सारी रियासत में उस रोज जीव-हिंसा नहीं करने का आदेश जारी किया। पूज्यश्री का ईश्वर प्रार्थना पर मार्मिक प्रवचन स्वस्थान पर ही हो रहा था। जैन अजैन श्रोता गणों से व्याख्यान भवन खिचोखिच भरा हुआ था। पूज्यश्री की अमृतवाणी भव्यजीवों के हृदय को पवित्र कर रही थी। उसी समय श्रीमान् लक्ष्मीनारायणजी साहब सेक्रेटरी स्टेट कोन्सिल ने महाराजा साहब की तरफ से आ कर प्रार्थना कि की श्रीमंत महाराजा साहब मित्र निवास में ॐ शान्ति के विषय पर व्याख्यान सुनना चाहते हैं। उस पर पूज्यश्री १०॥ बजे मित्र निवास महल में पधारे। साथ में जनता भी जयध्वनि करती हुई वहां पहुँची। वहां पर श्रीमन्त महाराजा साहेब, तथा श्रीमन्त महाराज कुँवर साहेब, मेजर साहेब, दिवान साहेब, उच्चकर्मचारीगण आदि पधारे थे। मित्र निवास के अन्दर के कमरे में श्रीमती राजमाता महारानी साहिबा भी प्रवचन सुनने के लिए बैठ गई थी। पूज्यश्री का प्रवचन साढे ग्यारह बजे तक हुआ। १५–मिनिट तक एकान्त में महाराजा साहब ने महाराजश्री से वार्तालाप किया। इसके बाद माहाराजश्री अपने शिष्य मण्डली के साथ स्वस्थान पधारे।

पर्यूषण पर्वाराधान—

भाद्रपद शुक्ला पंचमी को पर्वाधि राज पर्यूषण पर्व की भव्य आराधना की। व्याख्यान में प्रतिदिन ७ ८ हजार जनता एकत्र होती थी। व्याख्यान के लिए एक भव्य पाण्डाल बनाया गया था। व्याख्यान में प्रथम मनोहर व्याख्यानी मनोहरलालजी महाराज सुबोधवक्ता श्री हरखचन्दजी महाराज सूत्रकृतांग अनेक हेतु दृष्टान्त

के साथ फरमाते थे। पर्व के दिनों में अपूर्व धर्म ध्यान हुआ।

महान तपश्चर्या—तपस्वीश्री मदनलालजी महाराज ने ता० ७-७ ४० को छाछ के आगार से ७० दिन की महान तपश्चर्या के पूर के दिन समस्त रतलाम स्टेट में अगता रखा गया था। जिससे हजारो प्राणियों को अभयदान मिला। सैकडों गांवों के लोग तपस्वीजी के दर्शन के लिए आये। तपश्चर्या की पूर्णाहुति की सूचना पत्र पत्रिकाओं द्वारा सर्वत्र दी गई। परिणाम स्वरूप बाहर के गांव वालों ने भी उस दिन जीवहिंसा बंध रख कर धर्मध्यान किया। बाहर से जिन लोगों ने उस दिन उपकार के कार्य किये उसका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है– ।कोटडी बन्दर सिन्ध से श्रीमान् ठाकरसी रामजो भाई पत्र द्वारा सूचित करते हैं–

आपकी तरफ से तपश्चर्या की पत्रिका मिली। तपस्वी श्री मदनलालजी महाराज की आज्ञानुसार यहां सिन्धू नदी के किनारे तपस्या की पूर की खुशी में मच्छि आदि जानवरों की शिकार करना बन्ध रखा गया है। मैने अपनी ओर से निज व्यवस्था की थी। कार्यवशात् दर्शनों के लिए नहीं आ सका सो क्षमा चाहता हुँ। इसी तरह वास भौमट (मेवाड) से श्रीमान् जडावचंदजी संघवी लिखते हैं तपश्चर्या की पत्रिका मिली। तपस्वीश्री मदनलालजी म० के ७० उपवास के पूर पर निम्न जगह भादवा सुद १३ १४ १५ तीन दिन अगते पाले गये। और धर्मध्यान में समय व्यतीत किया।

श्रीमान पानरवा राणाजी श्री मोहब्बतसिंहजी साहब ने अपनी रियासत के बारहसौ गांवों में तथा मेहरपुर के रावजी साहब श्रीशिवसिंहजी साहब ने अपनी रियासत के नवसौ गांवों में और ओगनारावजी श्री करणसिंहजो अपनी समस्त रियासत में आपकी आज्ञानुसार अगते पलवाये गये और उस दिन जीवहिंसा बंद रखकर ॐ शान्ति की प्रार्थना करवाई। हमारे यहा भाद्रपद शुक्ला १३ को आश्चर्यकारी घटना यह हुई कि यहाँ पर अम्बामाता के स्थान पर तीन बकरों की बली चढनेवाली थी। बकरे मरने की तैयारी में थे कि उसी समय अंबिका माता के भील भोपा ने भाव में आकर कहा कि रतलाम से तपस्वी महात्मा ने जीवहिंसा बन्द करने का हुक्म फरमाया हैं सो यहां जीवहिंसा नहीं होगी। पहले भी आपकी आज्ञानुसार स्थानीय श्रावकों के सुप्रयत्न से पाडा मारना बन्द करवाया था सो वह अब भी बन्द ही है।

रतलाम नरेश का उपदेश श्रवण—

सा० २-८-४० मो श्रीस्थानकवासी जैनसंघ की तरफ से गये हुए डेप्यूटेशन की अर्ज को स्वीकार करके रतलाम नरेश उनके राजकुमार व राज्य के मुख्य मुख्य कर्मचारी गण पूज्यश्री के व्याख्यान में पधारे। करीब १॥ घंटे तक पूज्यश्री का मानवधर्म पर प्रवचन हुआ। प्रवचन सुन कर महाराजा बडे प्रसन्न हुए प्रवचन में करीब ८ ९ हजार जनता उपस्थित थी। इतना विशाल जनसमूह के एकत्र होने के तीन कारण थे। एक पूज्यश्री के प्रवचन पीयूष का पान करने को अति अभिलाशा दुसरी महानतपस्वीजी के पुण्य दर्शन व तीसरा रतलाम नरेश का पूज्यश्री के दर्शन के लिए आना। इस प्रकार त्रिवेणी संगम का पुण्यअवसर रतलाम के लिए प्रथम था। चातुर्मास काल में आशातीत धर्मध्यान हुआ। त्याग–प्रत्याख्यान उपवास आदि मासखमन तक की तपश्चर्या तथा सामायिके पौषध आदि धर्माराधन बहुत हुआ। प्रतिदिन प्रातः प्रवचनों में तथा सायंकाल प्रतिक्रमण के अनन्तर हौने वाली तात्विक चर्चा में पूज्यश्री धर्म के यथार्थ चिन्तन–मनन और वस्तु स्वरूप का विवेचन करते थे।

चातुर्मास समाप्ति और विहार

आपश्री ने चातुर्मास की समाप्ति पर आपने अंतिम प्रवचन में सभी को धार्मिक प्रेरणा दी। प्रवचन समाप्ति के बाद आपका विहार हुआ। विहार के अवसर पर विदाई के लिए विविध क्षेत्रों के आबालवृद्ध जन उपस्थित थे। ऐसे समय में स्थानीय जनसमूह की भावोर्मियां अनुभूति गम्य थी और भरे मन से श्रद्धेय पुज्यश्री को विहार के

लिए विदाई दी और मीलों तक साथ साथ चले और मांगलिक श्रवणकर सर्व मयअपने अपने आवास पर आये।

आप अपनी शिष्य मण्डली के साथ कोटावाले बाग में पधारे। यहां समस्त जैन संघ की प्रार्थना पर आपके दो जाहिर प्रवचन हुए। वहां से आपने सैलाने की ओर विहार किया। मार्ग में बरवड आया। रतलाम से सैकडों भाई और बहने पूज्यश्री के साथ चलकर बरवड आये। श्रीमान अध्यक्ष मा० चान्दमलजी गान्धी ने आगन्तुक सज्जनों का भोजनादि से स्वागत किया। दूसरे दिन पूज्यश्री का धामनोद की ओर विहार हुआ। धामनोद पधारने के थोडे समय के बाद रतलाम से एक डेप्युटेशन आया। और पूज्यश्री से प्रार्थना करने लगा कि आज रतलाम नरेश श्रीमान् महाराजाधिराज महाराजा श्री कर्नल हिज हाइनेस सर सज्जनसिंहजी साहब बहादुर अपनी समस्त रियासत में अगते पालने की एवं विश्व शान्ति के लिए रामबाग में ॐ शान्ति की जाहिर प्रार्थना करने की आज्ञा फरमाई है। अतः आपको ऐसे अवसर पर पुनः अवश्य रतलाम पधारना होगा और कल ता० २० । ११ । ४० को मार्गशीर्ष कृष्णा पंचमी को ॐशान्ति प्रार्थना कराने की महाराजा की विनती माननी पडेगी। रतलाम नरेश की धार्मिक भावना को ध्यान में रखकर तथा रतलाम संघ की प्रार्थना को ध्यान में लेकर आपने पुनः रतलाम पधार ने की विनती मान ली। विनती की स्वीकृति से रतलाम संघ में अत्यधिक प्रसन्नता छा गई। रतलाम का संघ प्रार्थना के आयोजन में जुट गया। समस्त रतलाम शहर में आयोजन की सूचना पत्र पत्रिकाओं द्वारा सर्वत्र कर दी गई। हजारों विज्ञप्ति पत्र जनता के हाथों में पहुँच गये।

शान्ति प्रार्थना का विशाल दृश्यः—

सायंकाल के समय पूज्यश्री के तेले की तपश्चर्या होते हुए भी अपनी शिष्य मण्डली के साथ रतलाम की ओर विहार किया। रामबाग की सरकारी कोठी में पूज्यश्री विराजे। दूसरे दिन पूज्यश्री ने तेले का पारणा किया। और नौ बजे विशाल शिष्यमण्डली के साथ प्रार्थना सभा में पधारे। पूज्यश्री के आने के पूर्व ही रामबाग के गुलाबचक्र में हजारों लोग आ कर अपने अपने स्थान पर बैठ गये थे। चारों ओर से जनसमूह उमड उमड कर सभा खण्ड में आने लगा। देखते देखते समस्त गुलाबचक्र तथा उसके आसपास का प्रदेश जनता से खचाखच भरगया। बिलकुल बीच के ऊचे भाग पर पूज्यश्री को बैठने के लिए पाटे रखे गये थे। चारों तरफ भाई और बहनों को बेटने के लिए योग्य प्रबन्ध किया था। पूज्यश्री के पाट पर बिराजते ही हजारों लोगों ने जयध्वनि से आकाश को गुंजा दिया। पूज्यश्री ने आज का महामांगल्यकारी दिवस मनाने के लिए राजा प्रजा का एक चित्त देखकर हर्ष प्रगट किया। प्रारम्भ में अन्यमुनिराजों ने प्रार्थना का महत्व समझाते हुए कहा—प्रार्थना हृदय की मलीनता को दूर करने की अमोघ औषधि है। प्रार्थना से आत्मा विशुद्ध परमात्मस्वरूप बन जाता है ईसी दृष्टिसे प्रार्थना का हमारे जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। इस प्रकार पूज्यश्री ने करीब एक घंटे तक प्रार्थना के महत्व को समझाया।

पूज्यश्री के प्रवचन का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा। प्रार्थना में सरकारी कर्मचारी बड़ी संख्या में उपस्थित हुए। शान्त, दान्त, धैर्यवन्त, पूज्यआचार्यश्री खूबचन्दजी महाराज साहब की सम्प्रदाय के विचक्षण सलाहकार पं० श्री केशरीमलजी महाराज सा. का भी इस प्रार्थना सभा में पधारना हुआ था। ॐ शान्ति की प्रार्थना के बाद पूज्यश्री ने अपनी शिष्य मण्डली के साथ सैलाना की ओर बिहार किया। रास्ते में धामनोद गांव आया। यहां पर पूज्यश्री का जाहिर प्रवचन हुआ। जैन अजैन भाइयों ने मिलकर ॐ शान्ति की सामुहिक प्रार्थना की। उस दिन धामनोद गांव में अगता रखा गया। समस्त गांव की भक्त मण्डली जैन अजैन सभी बड़ी संख्या में उपस्थित हुए। पूज्यश्री ने ईश्वर स्वरूप समझाकर देवी देवताओं के स्थान पर जीवहिंसा न करने का उपदेश दिया। पूज्यश्री के उपदेश से प्रभावित होकर गांव के सर्वजाति

के साथ फरमाते थे । पर्व के दिनों में अपूर्व धर्म ध्यान हुआ ।

महान तपश्चर्या—तपस्वीश्री मदनलालजी महाराज ने ता० ७-७ ४० को छाछ के आगार से ७० दिन की महान तपश्चर्या के पूर के दिन समस्त रतलाम स्टेट में अगता रखा गया था। जिससे हजारो प्राणियों को अभयदान मिला। सैकडों गांवों के लोग तपस्वीजी के दर्शन के लिए आये। तपश्चर्या की पूर्णाहुति की सूचना पत्र पत्रिकाओं द्वारा सर्वत्र दी गई। परिणाम स्वरूप बाहर के गांव वालों ने भी उस दिन जीवहिंसा बंध रख कर धर्मध्यान किया। बाहर से जिन लोगों ने उस दिन उपकार के कार्य किये उसका संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है– ।कोटडी बन्दर सिन्ध से श्रीमान् ठाकरसी रामजो भाई पत्र द्वारा सूचित करते हैं–

आपकी तरफ से तपश्चर्या की पत्रिका मिली। तपस्वी श्री मदनलालजी महाराज की आज्ञानुसार यहां सिन्धू नदी के किनारे तपस्या की पूर की खुशी में मच्छि आदि जानवरों की शिकार करना बन्ध रखा गया है। मैने अपनी ओर से निज व्यवस्था की थी। कार्यवशात् दर्शनों के लिए नहीं आ सका सो क्षमा चाहता हुँ। इसी तरह वास भौमट (मेवाड) से श्रीमान् जडावचंदजी संघवी लिखते हैं तपश्चर्या की पत्रिका मिली। तपस्वीश्री मदनलालजी म० के ७० उपवास के पूर पर निम्न जगह भादवा सुद १३ १४ १५ तीन दिन अगते पाले गये। और धर्मध्यान में समय व्यतीत किया।

श्रीमान पानरवा राणाजी श्री मोहब्बतसिंहजी साहब ने अपनी रियासत के बारहसौ गांवों में तथा मेहरपुर के रावजी साहब श्रीशिवसिंहजी साहब ने अपनी रियासत के नवसौ गांवों में और ओगनारावजी श्री करणसिंहजो अपनी समस्त रियासत में आपकी आज्ञानुसार अगते पलवाये गये और उस दिन जीवहिंसा बंद रखकर ॐ शान्ति की प्रार्थना करवाई। हमारे यहा भाद्रपद शुक्ला १३ को आश्चर्यकारी घटना यह हुई कि यहाँ पर अम्बामाता के स्थान पर तीन बकरों की बली चढनेवाली थी। बकरे मरने को तैयारी में थे कि उसी समय अंबिका माता के भील भोपा ने भाव में आकर कहा कि रतलाम से तपस्वी महात्मा ने जीवहिंसा बन्द करने का हुक्म फरमाया हैं सो यहां जीवहिंसा नहीं होगी। पहले भी आपकी आज्ञानुसार स्थानीय श्रावकों के सुप्रयत्न से पाडा मारना बन्द करवाया था सो वह अब भी बन्द ही है।

रतलाम नरेश का उपदेश श्रवण—

सा० २–८–४० मो श्रीस्थानकवासी जैनसंघ की तरफ से गये हुए डेप्यूटेशन की अर्ज को स्वीकार करके रतलाम नरेश उनके राजकुमार व राज्य के मुख्य मुख्य कर्मचारी गण पूज्यश्री के व्याख्यान में पधारे। करीब १।। घंटे तक पूज्यश्री का मानवधर्म पर प्रवचन हुआ। प्रवचन सुन कर महाराजा बडे प्रसन्न हुए प्रवचन में करीब ८ ९ हजार जनता उपस्थित थी। इतना विशाल जनसमूह के एकत्र होने के तीन कारण थे। एक पूज्यश्री के प्रवचन पीयूष का पान करने को अति अभिलाशा दुसरी महानतपस्वीजी के पुण्य दर्शन व तीसरा रतलाम नरेश का पूज्यश्री के दर्शन के लिए आना। इस प्रकार त्रिवेणी संगम का पुण्यअवसर रतलाम के लिए प्रथम था। चातुर्मास काल में आशातीत धर्मध्यान हुआ। त्याग–प्रत्याख्यान उपवास आदि मासखमन तक की तपश्चर्या तथा सामायिके पौषध आदि धर्माराधन बहुत हुआ। प्रतिदिन प्रातः प्रवचनों में तथा सायंकाल प्रतिक्रमण के अनन्तर होने वाली तात्विक चर्चा में पूज्यश्री धर्म के यथार्थ चिन्तन–मनन और वस्तु स्वरूप का विवेचन करते थे।

चातुर्मास समाप्ति और विहार

आपश्री ने चातुर्मास की समाप्ति पर आपने अंतिम प्रवचन में सभी को धार्मिक प्रेरणा दी। प्रवचन समाप्ति के बाद आपका विहार हुआ। विहार के अवसर पर विदाई के लिए विविध क्षेत्रों के आबालवृद्ध जन उपस्थित थे। ऐसे समय में स्थानीय जनसमूह की भावोर्मियां अनुभूति गम्य थी और भरे मन से श्रद्धेय पुज्यश्री को विहार के

लिए विदाई दी और मीलों तक साथ साथ चले और मांगलिक श्रवणकर सर्व मयअश्रुअपने अपने आवास पर आये।

आप अपनी शिष्य मण्डली के साथ कोटावाले बाग में पधारे। यहां समस्त जैन संघ की प्रार्थना पर आपके दो जाहिर प्रवचन हुए। वहां से आपने सैलाने की ओर विहार किया। मार्ग में बरवड आया। रतलाम से सैकडों भाई और बहने पूज्यश्री के साथ चलकर बरवड आये। श्रीमान अध्यक्ष सा० चान्दमलजी गान्धी ने आगन्तुक सज्जनों का भोजनादि से स्वागत किया। दूसरे दिन पूज्यश्री का धामनोद की ओर विहार हुआ। धामनोद पधारते के थोडे समय के बाद रतलाम से एक डेप्यूटेशन आया। और पूज्यश्री से प्रार्थना करने लगा कि आज रतलाम नरेश श्रीमान् महाराजाधिराज महाराजा श्री कर्नल हिज हाइनेस सर सज्जनसिंहजी साहब बहादुर अपनी समस्त रियासत में अगते पालने की एवं विश्व शान्ति के लिए रामबाग में ॐ शान्ति की जाहिर प्रार्थना करने की आज्ञा फरमाई है। अतः आपको ऐसे अवसर पर पुनः अवश्य रतलाम पधारना होगा और कल ता० २० । ११ । ४० को मार्गशीर्ष कृष्णा पंचमी को ॐशान्ति प्रार्थना कराने की महाराजा की विनती माननी पडेगी। रतलाम नरेश की धार्मिक भावना को ध्यान में रखकर तथा रतलाम संघ को प्रार्थना को ध्यान में लेकर आपने पुनः रतलाम पधार ने की विनती मान ली। विनती की स्वीकृति से रतलाम संघ में अत्यधिक प्रसन्नता छा गई। रतलाम का संघ प्रार्थना के आयोजन में जुट गया। समस्त रतलाम शहर में आयोजन की सूचना पत्र पत्रिकाओं द्वारा सर्वत्र कर दी गई। हजारों विज्ञप्ति पत्र जनता के हाथों में पहुँच गये।

शान्ति प्रार्थना का विशाल दृश्यः—

सायंकाल के समय पूज्यश्री के तेले की तपश्चर्या होते हुए भी अपनी शिष्य मण्डली के साथ रतलाम की ओर विहार किया। रामबाग की सरकारी कोठी में पूज्यश्री विराजे। दूसरे दिन पूज्यश्री ने तेले का पारणा किया। और नौ बजे विशाल शिष्यमण्डली के साथ प्रार्थना सभा में पधारे। पूज्यश्री के आने के पूर्व ही रामबाग के गुलाबचक्र में हजारों लोग आ कर अपने अपने स्थान पर बैठ गये थे। चारों ओर से जनसमूह उमड उमड कर सभा खण्ड में आने लगा। देखते देखते समस्त गुलाबचक्र तथा उसके आसपास का प्रदेश जनता से खचाखच भरगया। बिलकुल बीच के ऊचे भाग पर पूज्यश्री को बैठने के लिए पाटे रखे गये थे। चारो तरफ भाई और बहनों को बेठने के लिए योग्य प्रबन्ध किया था। पूज्यश्री के पाट पर विराजते ही हजारों लोगों ने जयध्वनि से आकाश को गुंजा दिया। पूज्यश्री ने आज का महामांगल्यकारी दिवस मनाने के लिए राजा प्रजा का एक चित्त देखकर हर्ष प्रगट किया। प्रारम्भ में अन्यमुनिराजों ने प्रार्थना का महत्व समझाते हुए कहा-प्रार्थना हृदय की मलीनता को दूर करने की अमोघ औषधि है। प्रार्थना से आत्मा विशुद्ध परमात्मस्वरूप बन जाता है इसी दृष्टिसे प्रार्थना का हमारे जीवन में महत्वपूर्ण स्थान है। इस प्रकार पूज्यश्री ने करीब एक घंटे तक प्रार्थना के महत्व को समझाया।

पूज्यश्री के प्रवचन का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा। प्रार्थना में सरकारी कर्मचारी बड़ी संख्या में उपस्थित हुए। शान्त, दान्त, धैर्यवन्त, पूज्यआचार्यश्री खूबचन्दजी महाराज साहब की सम्प्रदाय के विचक्षण सलाहकार पं० श्री केशरीमलजी महाराज सा. का भी इस प्रार्थना सभा में पधारना हुआ था। ॐ शान्ति की प्रार्थना के बाद पूज्यश्री ने अपनी शिष्य मण्डली के साथ सैलाना की ओर बिहार किया। रास्ते में धामनोद गांव आया। यहां पर पूज्यश्री का जाहिर प्रवचन हुआ। जैन अजैन भाइयों ने मिलकर ॐ शान्ति की सामुहिक प्रार्थना की। उस दिन धामनोद गांव में अगता रखा गया। समस्त गांव की भक्त मण्डली जैन अजैन सभी बड़ी संख्या में उपस्थित हुए। पूज्यश्री ने ईश्वर स्वरूप समझाकर देवी देवताओं के स्थान पर जीवहिंसा न करने का उपदेश दिया। पूज्यश्री के उपदेश से प्रभावित होकर गांव के सर्वजाति

के पंचोने अपने गांव के तमाम देवी दवताओं के स्थान में हिंसा न करने का पट्टा लिखकर भेट किया साथ ही ग्यारस, अमावस्या, के दिन खेती का काम न करने की प्रतिज्ञा ग्रहण की। गांव वालों ने इस विषयक जो पट्टा लिख कर दिया उसकी प्रतिलिपि इस प्रकार है—

पट्टा न० २ धामनोद

सिद्ध श्री श्री श्री १००८ श्री पूज्य महाराज साहब श्री घसीलालजी महाराज १००७ श्री वीरपुत्र समीरमलजी महाराज तथा पं व्याख्यानी मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराज १००५ श्री तपस्वीजी श्रीमदनलालजी महाराज १००५ श्रीतपस्वीजी मांगीलालजी महराज आदिठाना ५ सुमिती मगसर विदी १० रविवार का पधारना हुआ व महासतीजी श्री स्थीवर पद भूषित १००८ श्री सज्जनकुंवरजी महाराज तथा विदूषि १००७ श्रीमोहनकुंवरजी महाराज आदि का मिती मगसर विदी १२ मंगलवार का पधारना हुआ व उसी दिन ॐशान्ति की प्रार्थना हुई व पुरी तोर से सारे गांव में अगता रहा व सारे गांव के लोग शान्ति प्रार्थना में शामिल हुए। उस में पूज्य महाराजश्री का उपदेश सुन कर हम कुल गांव के सभी जाति के समस्त पंचों ने मिलकर धामनोद निवासी मिलकर सर्व देवी देवताओं को मीठे बनालिये। आयंन्दा हमारे गांव में हमारा वंश व हमारा गांव रहेगा वहाँ तक कुल देवी देवताओं के नाम से जीवहिंसा नही करेंगे व नही करनें देवेंगे व कुल देवी देवताओं को मिठा प्रसाद चढावेंगे तथा बोलमां के जीवों को अमरिया कर देवांगा। यह प्रण हमने चारभुजाजी को बीच में रखकर व चन्द्र सूर्यकी साक्षी से किया हैं सो आनन्द से निभावांगा। मितिमिगसर विदि १२ मंगलवार सं.१९९६ ता० २८-११-१९४० द.रतनलाल सियार ,मुदा सारे गांव के केवासु

नि. भैरुसिंहजी राजपूत द.कालूराम रोजान्या द.भैरुसिंह गोयल नि,जवरचन्द्र तेली द.कन्हैयालाल द.नजीरमहमदखां पठान रतलाम मु.धामनोद हेड मुहरिर द.हरलाल भाट द.भैरुसिंह नि.उंकार भील नि.लालसिंह राजपूत द.कुशालसिंह राठौर नि.नागू वाधरो द.रतनलाल तंबोली पानवाला नि.शम्भूभील नि.पून्याभील द. कमरुदीन द.कालुभील नि..बहादुर सिंह राजपुत द. कालुराम पटवारी नि. धूराजीभोल द. नरसिंघ पटेल द. पूना तेली द. गामोठनथू द. बाबरू कुमार द. किशनभील नि, नानूराम भील नि. अमरा भील नि., नरसिंघ भील नि. बगदोराम द. बगदीराम साधू नि अमरा भोल द:.कालू भील द० घासीराम नि. बहादुरसिंह राजपूत द० नाथूराम कुलम्बी द० सीताराम कुलम्बी द०शंकर ब्राह्मण नि० बगदीराम कुमावत द० नारायण गुसाई द० सुथार भागीरथ नि० देवाकुंभार द. चत्रभुज कुंभार द.रघुनाई नि० देवरामकुलम्बी नि. नारायण कुलम्बी तेली नि० भागीरथ राजपूत द० सोभाराम नाई द. केशरजी द. भंगीरथ मुकाती द. गुजराती नाथ का द.नाथुराम कुलम्बी द. चंपालाल द. किशोरदमामी द. लछीराम पटेल द. तेली अम्बारामगणेश द. शीतलनाथ द. सीताराम कुलम्बी

सैलाना नरेश द्वारा धर्मोपकार–

धामनोद से पूज्यश्री बिहार कर अपने सर्व मुनिगण के साथ सैलाना पधारे। वहाँ श्री पुलिस सुप्रीडेन्ट श्री रेखाशंकरजी साहब के जरिये पूज्यश्री ने सैलाना नरेश श्रीमान् महाराजाधिराज श्री दीलिपसिंहजी साहब हिज हाइनेस K. C. I. E. K. के पास एकरोज सम्पूर्ण रियासम में अगता (पाखी) पलाकर ॐ शान्ति की प्रार्थना करने का सन्देश भिजवाया। जिसको सैलाना दरबार ने सहर्ष स्वीकार कर सारी रियासत में अगता तथा 'ॐ शान्ति' की प्रार्थना करने का हुक्म फरमाया। सैलाने में गांव के बाहर गेस्ट हाऊस पर दरबार ने सारी प्रजा को आने का हुक्म फरमाकर अपनी तरफ से सामीयाना लगाकर प्रजाजनों को बैठने के लिए यौग्य आसन की व्यवस्था की सामने ही महारानी साहिबा को बेठने

के लिए योग्य प्रबन्ध परदे आदि का किया गया। ठीक दोपहर को महाराजासाहेब और महारानी साहिबा के पधार जाने पर विशाल जन समूह के लाभार्थ पूज्यश्रीने अपनी उपदेशरूप अमृतधारा वर्षानी शुरु की। आपके उपदेशों को सुनकर महाराजा बडे ही प्रसन्न हुए। और व्याख्यान के अन्त में पूज्यश्री के दर्शनार्थ दक्षिण से आये हुए व्याकरणाचार्य पं. दुखमोचनजी झा (जिन्होंने बाल्य-अवस्था में पूज्यश्री को पढाया था) के समक्ष खूब ही सन्तोष प्रगट किया और पूज्यश्री के पांडित्य को खूब ही प्रशंसा की और दूसरे रोज महलों में पधारकर पूज्यश्री उपदेश फरमाये ऐसी इच्छा प्रदर्शित की जिसको पूज्यश्री ने मान्य फरमाई।।

दूसरे दिन पूज्यश्री अपनी शिष्य मण्डली सहित महलों में पधारे। जहां दरबार ने खानगी बात-चीत की और उपदेश का लाभ भी लिया। पूज्यश्री ने फरमाया कि "क्षात्रतेजके कारण ही धर्म का अस्तित्व है। आप जैसे राजा, महाराजा धर्म के प्रति श्रद्धा प्रगट कर इस तरह जो धर्म की सेवा करते रहे तो वह सत्युग दूर नहीं है।" ये वचन सुनकर दरबार ने फरमाया-कि "यह तो हमारा फर्ज है। वह दिन हमारे लिये धन्य है कि हमारे कारण से धर्म और धर्म गुरुओं की प्रशंसा चारों ओर फैले। यदि हम धर्म और धर्मगुरुओं के यश के कारण न बने तो दूसरा कोन बनेगा? राजा धर्म का रक्षक होता है और धर्म राजा प्रजा की रक्षा करता है। आप जैसे महान त्यागी सन्तों की प्रेरणा से ही धर्म की रक्षा होती है। आपने जो मेरी रियासत में फिर कर लोगों को धर्माभिमुख किया इसकेलिए हम आपके उपकृत है। इसी तरह समय समय पर आप इधर पधारते रहें और धर्म की प्रेरणा देते रहें यही हमारी आप से हार्दिक प्रार्थना है।" समय बहुत हो चुका था और महाराजाधिराज ने गत दिवस से शान्ति प्रार्थना तक कुछ खाया नहीं था। यह बात महाराजा के प्राइवेट सेक्रेटरी ने पूज्यश्री से कही तब पूज्यश्री ने महाराजा को मांगलिक सुनाया। मांगलिक श्रवण कर महाराजा ने पूज्यश्री को प्रणाम किया। महाराजा अपने निजी स्थान पर चले आये। सैलाना से पूज्यश्री अपनी शिष्य मण्डली के साथ बोदिना पधारे। बोदिना के ग्रामनिवासियो ने पूज्यश्री का प्रवचन सुना। पुज्यश्री ने अपने प्रवचन में अहिंसा के महत्त्व को समझाया। फलस्वरूप समस्त ग्राम निवासियों ने व पंचों ने ग्रामके सभी देवी देवता के स्थान में हिंसा न करने की प्रतिज्ञा ग्रहण की। और इस विषयक समस्त गांवके पंचों ने पट्टा लिखकर पूज्यश्री को भेट किया। उस पट्टे का नमूना इस प्रकार है—

<u>बोदिना</u>-सिद्ध-श्री श्री १००८श्री पूज्य महाराज साहब श्री घासीलालजी महाराज १००७ श्री वीरपुत्र समीरमलजी महाराज तथा पं. मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराज१००५श्री मदनलालजीम० तथा तपस्वीजी श्री १००श्री मांगीलालजी महाराज ठाणा ५ से मिति मगसर सुद ९ सं० १९९७ को गांव बोदिना पधारे।

पूज्य महाराज साहब का उपदेश सुनकर हम गांव बोदिनाताल के सरवन इ० रतलाम के कुल पंच सभी जाति के मिलकर बोदिना के कुल देवी देवताओं को मीठे बना लिये। आयन्दा हमारे गांव में हमारा वंश रहेगा वहाँतक कुलदेवी देवताओं के नाम कोई जीव नहीं मारेंगे और कोई जीव मार कर नहीं चढावेंगे। उनका बोलमा के आये हुवे जीवों को अमरिया बना देवेंगे और उनके कान में कडी डालकर उनको छोड देंगे। अगर काम पडेगा तो कुल देवी देवताओं को सब गावबाला मिलकर मीठी प्रसादी चढावेंगे। यह प्रण हमलोग चारभुजाजी को बीच में रखकरे चन्द्रसूर्य की साक्षी से कुलगावबाला मिलकर किया है सो आद औलादतक निभावेंगे। मिति मगसर सुदि ९ सं० १९९७ का छे इतवार ता० ८-१२-४०

द. तेजमल धाडीवाल हततानावाला सर्व पंचों के कहने से लिखा है—

नि० भील सवाजी नीनामा नि. भील रामाजी की द० दलपतसिंह सरदार शीशोदिया द० नानुराम-बलाई नि० गोगाजी गायरी द० लालजी पटेल नि० डेरिया रामचन्द्रजी की द० जगन्नाथ कोदार नि०राम-

सिंहजी राठोड (सरदार) द. नीपाजी जाट नि. करणसिंहजी सोनगरा द. सरदार सीवा जाटका छे नि. कालू-चमार बोदिना द. भीरू भारती गोसाई नि. करनारजी हीराजी नि. चमार कुनाराम बोदिना नि. गोरिया धूरजी नि. सागाजी कुलम्बी नि. भील भगाजी नि. चमार परथाजी द० नथमल महाजन द० केशरीमल महाजन द० गुलाबचन्द्र कुलम्बी द० अम्बारामजाट का द. बालाराम का नि. नन्दाजी हतनारा नि. नैन-महाराज गुसाई बोदिना द. तोलारामजी पटेल द. बजेरामगी कोदार नि. भील भगाजी नि. चमार परभाजी

बोदिना से पूज्यश्री ने विहार किया। वहां से आप घामनोद पधारे। घामनोद में भी बडा उपकार हुआ। सैकड़ों व्यक्तियों ने आपका प्रवचन सुनकर हिंसा न करने की प्रतिज्ञा की। गांव के लोगों ने भी देवी देवता के स्थान में पशु बलि न करने का पट्टा लिखकर पूज्यश्री की सेवा में भेंट किया। घामनोद के पट्टे की नकल इस प्रकार है—

पट्टा नं० १—सिध श्री श्री श्री १००८ श्री पूज्यमहाराज साहब श्री घासीलालजी १००७ श्री वीरपुत्र स-मीरमलजी महाराज तथा पं. कन्हैयालालजी महाराज १००५ श्री तपस्वी मदनलालजी महाराज १००५ श्री तपस्वीजी मांगीलालजी महाराज आदि ठाना ५ सु मिति मगसर विदि १० रविवार को घामनोद पधारे व महासतीजी श्री स्थवीर पद भूषित १००८ श्री सज्जनकुँवरजी महाराज तथा विदुषी महासतीजी १००७ श्री मोहनकुँवरजी महाराज आदि मिति मगसर विदि १२ मंगलवार को पधारे व उसीदिन पूज्यश्री ने शान्ति प्रार्थना कराई। सारे गांव में पूरी तौर से अगता रखा गया व सारे गांव के लोग ॐ शान्ति प्रार्थना में शामिल हुए। उसमें पूज्यश्री के उपदेश को सुनकर हम गांव के कुल सब जाति के समस्त पंचों ने मिलकर हर ग्यारस व हर अमावस्या को जबतक घामनोद कायम रहेगा व हमारा वंश रहेगा तबतक बैलो के कन्धे पर जुडा नहीं रखेंगे। व कोई भूल से जोड देवेगा तो हम समस्त पंच मिलकर उसकी कार्यवाही करके फौरन बन्द कर देंगे वे जो भी कुछ पंचों को मुनासिब होगा व दण्ड लेकर पिछा शरीक कर लेंगे और आईन्दा के वास्ते हिदायत कर देंगे, मगर हम अपना प्रण कभी नहीं तोड़ेंगे। यह प्रण हमने चारभुजाजी को व हर जाति के धर्म को बीच में रखकर चन्द्रसूर्य की साक्षी से किया है सो आनन्द से अखंड निभावेंगे, अगर इस प्रण को कोई भी तोडेगा तो वह ईश्वर का गुणनेगार होगा। यह पट्टा हमने सारे गाववालों ने मिल-कर हमने अपनी खुशी से लिखकर और पढकर तथा सुनकर दस्तखत और निशानी की है सो सही है। मिति मगसरविदि १२ संवत १९९७दस्तखत रतनलाल सियाल आम पंचो के कहने अनुसार लिखकर दस्त-खत किये सो सही।

एक पट्टा हमने सब पंचों ने मिलकर कुल देवो देवताओं घामनोद के मीठा बनाया है। वो श्री श्री पूज्य महाराज के भेट किया कि जानते अजानते कभी भी हिंसा नहीं करेंगे व न करने देंगे उपर लिखे पण को कोई भी नहीं तोड़ेंगे अगर कोई भी इसके विरुद्ध चलेगा तो वह अपने प्रभुका गुने-गार बनेगा। यह सब शर्तें हमने अपनी खुशी से लिखकर दस्तखत और निशानी कीनी है सो सही है।

मिति मगसर विदि १२ मंगलवार संवत १९–९७।

दः रतनलाल सियाल सारे गाव के पंचो के कहने के अनुसार लिखकर दस्तखत किया है सो सही है—

नि. अनारजी राजपूत नि. तुलसीरामजी कोठारी नि० भैरुसिंहजी नि. अमराजी भारमल नि. वेणिराम द. रतनलाल पानवाला द०सोभाराम नाई द. दरजी रामनारायण द. केशवजी का नि. फकीरचन्द कोरिया द. देवीदास साधू द. केशरीमल का द. शंकर द. केशवराम घाडवी द. नाथूराम कुलम्बी नि. देवा कुलम्बी द. काल्राम रोजाना का नि. हिरा घाडवी द. किसोर दमामी द. काल्राम कुलम्बी द. धूलचन्द ननवाना द. राघाकिसन सेवक द०तेली अम्बाराम गणेश नि० देवाकुंभार द० मेरुलालसजावतिया नि० उंकार भील

नि नानूरामकुलम्बी आमलीवाले द० वेणीरामनारायण भाई द० नानालाल गामोट नि० मेराकुलम्बी द० गेन्दालाल सियार नि० हीरालाल कुलम्बी द० देवराम तेली नि० बगदीराम कुलम्बी नि० सोभारामजी गोरा द०भैरुलाल कुलम्बी नि० सोभारामजी धाडवी नि० सवाजी कुलम्बी द० पूना तेली द० अनोपसिंह कुलम्बी द० खुशालसिंह नि० बगदीराम कुलम्बी द० रणसिंहराजपूत द०रतनलाल सियार द० कस्तूरचन्द नि० कालू भील द० वावरू कुंभार नि० नानूरामभील नि० कालू भील

पूज्य आचार्य महाराज श्री के शिष्य तपस्वी श्री मांगीलालजी महाराज ने रतलाम से विहार करने के पहले ही से आयंबिल वर्धमान तप शुरू किया था उसका समाप्ति दिवस (पूर) पिपलोदा में धूम धाम से ता० १९-१२-४० को मनाया गया।

पिपलोदा में आयंबिल वर्धमान तप—

उक्त तारीख के दिन पिपलोदा सुप्रिडेन्ट साहब श्री फूलसिंहजी ने सारी रियासत में अगता पालने का तथा ॐ शान्ति' की प्रार्थना करने का आवेदन पत्र जाहिर किया था। जिससे सारी रियासत में व पिपलोदा में अगता रखा गया था और 'ॐशान्ति' की प्रार्थना हुई। स्थान स्थान पर गौवों को घास आदि का प्रबन्ध किया गया और व्रत उपवास आदि धार्मिक कार्य बडे मात्रा में हुए। पिपलोदा की ग्राम्य जनता तथा बाहिर के आये हुए दर्शनार्थियों से गांव के बाहर स्कूल के चौगान के विशाल मैदान में बांधा हुआ सामियाना खचाखच भर गया। अन्दर गुन्जाइस न होने से खुले मैदान में तथा स्कूल में नर-नारियों की भीड लग गई। ग्यारह बजे से जुलूस पिपलोदे गांव से रवाना होकर प्रार्थना स्थान पर पहुंचा जहाँ नियमित समय पर पूज्यश्री का व्याख्यान शुरू हुआ।

व्याख्यान में पूज्यश्री ने ईश्वर प्रार्थना का दिव्य स्वरूप समझाया जिसको सुनकर सुप्रिन्डेन्ट साहब तथो अन्य प्रजाजन खूब ही प्रसन्न हुए। बाद में सुप्रिडेन्ट साहब तथा स्कूल मास्टर, राजकवि आदि के भाषण हुए। पूर के मौके पर व अन्य समय सैकडों दया पौषध हुए। खास बात यह हुई कि कसाइयों के लड़कों ने मुखवास्त्रिका बांध कर दया व्रत किये। इस प्रकार अनेक उपकार हुए।

दयाना, पंचेवा, नवलखा भोखेडी आदि छोटे मोटे गांवों में भी अगते के साथ 'ॐशान्ति प्रार्थना" हुई और इन सब गांवों में देवी देवताओं के स्थान पर हिंसा न करने का पट्टा गांव के लोगों ने लिखकर भेट किया। जिसकी प्रतिलिपि इस प्रकार है।

पट्टा नं. ४

पट्टा नकल इयाणा

सिद्ध श्री श्री श्री १००८ श्री श्री पूज्य महाराज साहेब श्री घासीलालजी महाराज साहेब अपने शिष्यों के साथ गांव पिपलोदा से हमारी तरफ विनंती करने पर मिति पौषवदी ७ ता०२२-१२-४० को इयाना (जावरा स्टेट) में पधारे। मिति पौषविदि ८ ता० २३-१२-४० को सारे गांव में पूज्य महाराज साहब की आज्ञा से पलती व अगता पाला गया ओर ॐशान्ति की प्रार्थना हुई। जिसमें सारा अयाना गांव के सभी जाति के पंच इकट्ठे हुए और श्री पूज्य महाराज साहब का उपदेश सुनकर हम गांव इयाना के कुल पंच सभी जाति के मिलकर इयाने के कुल देवी देवताओं को मीठे बना लिये। आन्दा हमारे गांव में हमारा वंश रहेगा वहाँ तक कुल याने गांव के सभी देवी देवताओं के नाम से कोई जीव नहीं मारेंगे और न दूसरे को मारने देंगे। कोई जीवमारकर नहीं चढावेंगे। उनके बोलामा में आये हुवें जीवों के कान में कडी डालकर अमरिया बनादेंगे। अगर कभी काम पडेगा तो सभी देवी देवताओं को सब गांव वाले मिलकर मिठा प्रसाद चढावेंगे। इस प्रण को हम सब गांव के पंचोंने मिलकर व ठाकुरजी को बिच में रखकर चन्द्र सूर्य की साक्षी मानकर किया है सो हम व हमारा वंशज और हमरा गांव रहेगा वहाँतक निभाते रहेंगे।

इस प्रण को तोडेगा उसको गौ मारने की हत्या और चित्तौड मारे का महान पाप लगेगा। और ठाकुरजी पूछेगा। यह पट्टा लिखकर आपको भेट करते हैं। द० जयनन्दन शास्त्री सभी पंचो के कहने से लिखा— मिति पौषवदि ८ रविवार ता० २३—१२—४० द. नम्बरदार दुलेसिंहका नि० गुलाबसिंहजो गेलौत नि. उदेसींगजी भाई इयाना द. कालूराम नि० गुलाबजी रावत नि० रामाजी द. रामसिंहजी नि. लछमनसिंहभाटी पंचेवा

नकल पट्टा नं. ५

सिद्ध श्री श्री १००८ पूज्यश्री घासीलालजी महाराज साहेब व्याख्याता शास्त्रज्ञ पं. मुनि श्री कन्हैयालालजी म. १००८ श्री सलाहकर केशरीमलजी महाराज के सुशिष्य सुबोध रतनलालजी महाराज तथा तपस्वी मदनलालजी महाराज आदि ठाना ४ का श्रीसंघ की विनंती से पिपलोदा से पंचेवा पधारना हुआ। आज रोज ॐशान्ति की प्रार्थना हुई। उपदेश सुनकर हम पंचेवा निवासी सब जाति के पंच मिलकर नीचे मुजब पट्टा लिखकर पूज्यश्री १००८ को भेट करते हैं. आज से हमारे गांव पंचेवा के कुल यानि सभी देवी देवताओं को मीठा प्रसाद चढायेंगे। यानि पंचेवा निवासी कुल देवी देवताओं के नामसे न बलिदान करेंगे और न दूसरों को करने देवेंगे। कुल देवी देवताओं के सामने कीसी जीवको न मारेंगे और न मारने देंगे। यह प्रण हम जाति के पंचोंने मिलकर किया है सो हमारा गांव व वंश रहेगा वहाँ तक निभावेंगे। इस प्रण को तोडेगा उसको गौ मारने की हत्या और चित्तौड मारने का पाप लगेगा। और ठाकुरजी पूछेगा संवत १९—९८ पौषवदि ११ बुधवार दः श्री जयनन्दन शास्त्री गांव के सब जाति के पंचों के कहने से लिखा निशानी व दस्तखत द० तेली रामनारायण द० दमामी रुगनाथ मोती वेगड द० भगवान भील नि०किसान हजूरी नि० कालूबाबा द० हरचन्द माली नि० मोतीलालआजणा नि० चेना-भोपा द० रखुलपिंजारा नि० घासी बादडिया

जब महाराज श्री नवलखा पधारे तो सारा गांव महाराज श्री का उपासक बन गया। यहाँ के निवासी महाराजश्री के प्रवचन से बडे प्रभावित हुए। महाराजश्री ने गांव वालों को छकाया (दया) व्रत करने का उपदेश दिया। महाराजश्री के उपदेश के अनुसार गांव वालों ने दया व्रत किये। जिसमें नायक व थोरी जाति के लोगों ने भी मुखवस्त्रिका बांधकर दया की। यह दृश्य बडा ही अनोखा एवं हृदय परिवर्तन का साक्षात् उदाहरण था। महाराज श्री के उपदेश से सैकडों हिंसक व्यक्ति अहिंसक बन गये। सारे गांव वालों ने देवी देवताओं के नाम पर होने वाली हिंसा पर प्रतिबन्ध लगाया। और अहिंसा का पट्टा लिख कर महाराजश्री को भेट किया। नवलखा गांव वालों का अहिंसा विषयक पट्टा इस प्रकार है—

नकल पट्टा नौलखा

पट्टा नं. ६

सिद्ध श्री श्री पूज्यश्री १००८ श्री श्री घासीलालजी महाराज पं. रत्न मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराज व साहब १००८ श्री सलाहकार केसरीमलजी महाराज के सुशिष्य रतनलालजी महाराज, तथा तपस्वी श्रीमदनलालजी महाराज आदि ठाना ४ का श्रीसंघ की विनती से पिपलोदा से पंचेवा पधारना हुआ। आज रोज ॐ शान्ति की प्रार्थना हुई। उसमें दयाधर्म का उपदेश सुनकर हम सर्व नौलखा निवासी सर्व जाति के थोरी यानी नायक पंचमिलकर निचे लिखेमुजब पट्टा लिखकर पूज्जश्री १००८श्री को भेट किया है।

आज से हमारे गांव नौलखा के कुल यानी सभी देवी देवताओंके नाम से कोई भी जीव नहीं मारेंगे और न मारने देंगे। जो मारेगा उसको गौ मारने की हत्या और चित्तोड मारे का पाप लगेगा। इस पट्टा के नियमो को हमारा गांव व वंश रहेगा वहां तक पालेंगे। सं. १९—९७ पौषवदी ११ बुधवार दः श्री जयनन्दन शास्त्री नौलखा गांव के सर्व जाति के पंचों के कहने से लिखा। दः सेवा चमना, द० परताजो, द. बगदीराम द० रामा नि० गोवागिरधारी द० जीवा नि० सेराजी नि० कान्हा नि० सवा नि० नाथु नि० उदा

नि० कालू नि० रोडा नि० नानुरामसेरा नि० सेरा रत्ता नि० खूमा नि० वीजा नि० घासी नि० देवा नि० सेरा नि० हरीदेवा नि० तुलसा नि० गिरधारी नि० तुलसी नि० खेता

काचलाखारी-सिद्ध श्री:पूज्य१००८श्री घासीलालजी महाराज ठाना ५ से दानपुर में विराजमान थे उस मौके पर हम काचलाखारी के कूल भिलान उपदेश सुनने को आये। महाराजश्री १००८ श्री ने दयाधर्म का उपदेश सुनाया उसको सुनकर हम सभो ने निचे मुजब कुल देवी देवतागण ने बजाया पाडा बकरे, मुर्गे आदि जीवों को चढाना बन्द कर उन्हों के बदले मोठा भोग चढाकर धूप ध्यान करांगा। कोई भी जीव देवी देवता के नामसे देवता के सामने तथा घर में भो व बाहर में नहीं मारेंगे और न मरवा देंगे, । इस ठहराव को तोडेगा उसको बारा बीज पूगेगा, यह ठहराव हमारे गांव व हमारे वंश रहेगा वहाँ तक पालांगा संवत१९-९७ माघ वदि ६शनिवार ता०१२-१-४१ द० जयनन्दन शास्त्री ने पंचों के कहने से लिखा।

नि० रावत थावरजी,, नि० रंगजी गामण गामजूवा,, नि०गामड रतना,, नि०गामण थावरावल्द दीत्या द० नाथूदानपुर गला,, द० चरपटो विरजी गाव द० खेडिया ,, केरीगोगावनेगडिया ,, रावत नगजी हालरा पाडा,, मगरा राठौर गामड कालू ,, नि० तमा रुकमा गाम जुआ नि. कुरिया।

इस प्रकार आसपास के अन्य ग्रामों में विविध प्रकार का धर्मोपकार करते हुए पूज्य आचार्य श्री सेरपुर तथा पुन्याखेडी गांव पधारे। यहां दोनों गांव में एक रोज का पूर्ण अगता रखा गया और ॐ शांति की प्रार्थना हुई। मौमिडन और हिन्दु तमाम भाईयोंने पूर्ण श्रद्धा से सारा आरंभ संमारंभ के कार्य तथा हिंसा बन्द रखी।

पास ही के आंवे नामक गांव में पधारे पर आंवे के महाराजा साहब श्री विश्वनाथसिंहजी ने गांव में अगता पलाकर ॐशान्ति की प्रार्थना करवाई और जितने दिन पूज्य श्री का बिराजना हुआ उतने दिन ठाकुर साहब ने तन, मनसे सेवा की। यहाँ श्रीमान भैरुमलजी डुगड बडे धर्म प्रेमी श्रद्धालु श्रावक है। इन्होंने अच्छी सेवा की।

आंवे से बिहार कर पूज्य श्री बडे सरवण पधारे। जहाँ ठाकुर साहब श्री महेन्द्रकुमारजी साहब और उनके भाई ठाकुर साहब ने सारे गांव में पूज्य श्री का उपदेश सुनकर सारे गांव भर में अगता पलवाया सारा आरंभ सारंभ बन्द कर वाया और सामुहिक रूपसे ॐ शान्ति की प्रार्थना करवाई। यहां पर कांग्रेस के कार्य कर्ता श्री जगन्नाथजी ने ईस कार्य में पूर्ण रूप से मदद की। ठाकुर साहब ने पूज्यश्री को दो तीन दिन अधिक बिराजने की प्रार्थना की किन्तु बांसवाडा पधारने की विनती के लिए बांसवाडा से डेप्युटेशन आया हुआ थां इसी कारण शीघ्र बिहार कर बांसवाडेके सरहद उपर आया हुआ दानपुर गांव पधारे।

यह गांव चारों ओर पहाडों से घिरा हुआ है। मुनियों का यहां आना दुर्लभ होता है। स्थानक-वासी जैन के ७-८ घर है। भक्ति भाव अच्छा है। अन्य माहेश्वरी भाइयों में सेठ रामचन्द्रजी सरवण वाले मुख्य है। गांव के आस पास भीलों की बस्ती हजारों की संख्या में है। आठवें दिन यहाँ हाट बजार भरता है। जिसमें हजारों मील माल खरीदने तथा वेचनें आते हैं। यहाँ पूज्यश्री आठ दिन बिराजे। एक दिन गांववालों ने हिंसा आरंभ आदि सर्व बन्द कर अगता पाल्कर ॐ शान्ति दिन मनाया, जिसमें सारा गांव तथा आस पास के भील लोग बहुत ही आये। पूज्य श्री का उपदेश सुनकर राजपूत, मोई मील लोगों ने दारु, मांस नहीं पीने व नहीं खाने की प्रतिज्ञा ग्रहण की।

बादमें सेठ धूलचन्दजी सेठ श्रीझब्बालालजी आदि श्रावकोंने गाडी भेजकर व खुद जाकर आसपास के ४-५ गांवों के मीलों को ईकठे किये फिर सर्व भील पन्चों को पूज्यश्री ने देवी देवताओं के स्थान पर होती हुई हिंसा को रोकने के लिये अहिंसामय उपदेश फरमाया। देवीदेवता कभी भी जीवों की बलि नहीं चाहते और जहाँ पशुवध होता है वह स्थान देवीदेवताओं की शक्ति से शून्य है। कारण कि किसी भी

इस प्रण को तोडेगा उसको गौ मारने की हत्या और चित्तौड मारे का महान पाप लगेगा । और ठाकुरजी पूछेगा । यह पट्टा लिखकर आपको भेट करते हैं । द० जयनन्दन शास्त्री सभी पंचो के कहने से लिखा– मिति पौषवदि ८ रविवार ता० २३–१२–४० द. नम्बरदार दुलेसिंहका नि० गुलाबसिंहजी गेलौत नि. उदेसींगजी भाई इयाना द. कालूराम नि० गुलाबजी रावत नि० रामाजी द. रामसिंहजी नि. लछमनसिंहभाटी

पंचेवा नकल पट्टा नं. ५

सिद्ध श्री श्री १००८ पूज्यश्री घासीलालजी महाराज साहेब व्याख्याता शास्त्रज्ञ पं. मुनि श्री कन्हैया-लालजी म. १००८ श्री सलाहकर केशरीमलजी महाराज के सुशिष्य सुबोध रतनलालजी महाराज तथा तपस्वी मदनलालजी महाराज आदि ठाना ४ का श्रीसंघ की विनंती से पिपलोदा से पंचेवा पधारना हुआ । आज रोज ॐशान्ति की प्रार्थना हुई । उपदेश सुनकर हम पंचेवा निवासी सब जाति के पंच मिलकर नीचे मुजब पट्टा लिखकर पूंज्यश्री १००८ को भेट करते हैं. आज से हमारे गांव पंचेवा के कुल यानि सभी देवी देवताओं को मीठा प्रसाद चढायेंगे । यानि पंचेवा निवासी कुल देवी देवताओं के नामसे न बलिदान करेंगे और न दूसरों को करने देवेंगे । कुल देवी देवताओं के सामने कीसी जीवको न मारेंगे और न मारने देंगे । यह प्रण हम जाति के पंचोंने मिलकर किया है सो हमारा गांव व वंश रहेगा वहाँ तक निभावेंगे । इस प्रण को तोडेगा उसको गौ मारने की हत्या और चित्तौड मारने का पाप लगेगा । और ठाकुरजी पूछेगा संवत १९–९८ पौषवदि ११ बुधवार दः श्री जयनन्दन शास्त्री गांव के सब जाति के पंचों के कहने से लिखा निशानी व दस्तखत द० तेली रामनारायण द० दमामी रुगनाथ मोती वेगड द० भगवान भील नि०किसान हजूरी नि० कालूबाबा द० हरचन्द माली नि० मोतीलालआजणा नि० चेना-भोपा द० रसुलपिंजारा नि० घासी बादडिया

जब महाराज श्री नवलखा पधारे तो सारा गांव महाराज श्री का उपासक बन गया । यहाँ के निवासी महाराजश्री के प्रवचन से बडे प्रभावित हुए । महाराजश्री ने गांव वालों को छकाया (दया) व्रत करने का उपदेश दिया । महाराजश्री के उपदेश के अनुसार गांव वालों ने दया व्रत किये । जिसमें नायक व थोरी जाति के लोगों ने भी मुखवस्त्रिका बांधकर दया की । यह दृश्य बडा ही अनोखा एवं हृदय परिवर्तन का साक्षात् उदाहरण था । महाराज श्री के उपदेश से सैकडों हिंसक व्यक्ति अहिंसक बन गये । सारे गांव वालों ने देवी देवताओं के नाम पर होने वाली हिंसा पर प्रतिबन्ध लगाया । और अहिंसा का पट्टा लिख कर महाराजश्री को भेट किया । नवलखा गांव वालों का अहिंसा विषयक पट्टा इस प्रकार है—

नकल पट्टा नौलक्खा पट्टा नं. ६

सिद्ध श्री श्री पूज्यश्री १००८ श्री श्री घासीलालजी महाराज पं. रत्न मुनि श्री कन्हैयालालजी महा-राज व साहब १००८ श्री सलाहकार केसरीमलजी महाराज के सुशिष्य रतनलालजी महाराज, तथा तप-स्वी श्रीमदनलालजी महाराज आदि ठाना ४ का श्रीसंघ की विनती से पिपलोदा से पंचेवा पधारना हुआ । आज रोज ॐ शान्ति की प्रार्थना हुई । उसमें दयाधर्म का उपदेश सुनकर हम सर्व नौलखा निवासी सर्व जाति के थोरी यानी नायक पंचमिलकर निचे लिखेमुजब पट्टा लिखकर पूज्जश्री १००८श्री को भेट किया है ।

आज से हमारे गांव नौलखा के कुल यानी सभी देवी देवताओं के नाम से कोई भी जीव नहीं मारेंगे और न मारने देंगे । जो मारेगा उसको गौ मारने की हत्या और चित्तोड मारे का पाप लगेगा । इस पट्टा के नियमो को हमारा गांव व वंश रहेगा वहां तक पालेंगे । सं. १९–९७ पौषवदी ११ बुधवार दः श्री जयनन्दन शास्त्री

नौलखा गांव के सर्व जाति के पंचों के कहने से लिखा । दः सेवा चमना, द० परताजी, द. बगदी-राम द० रामा नि० गोवागिरधारी द० जीवा नि० सेराजी नि० कान्हा नि० सवा नि० नाथु नि० उदा

नि० कालू नि० रोडा नि० नानुरामसेरा नि० सेरा रत्ता नि० खूमा नि० वीजा नि० घासी नि० देवा नि० सेरा नि० हरीदेवा नि० तुलसा नि० गिरधारी नि० तुलसी नि० खेता

काचलाखारी–सिद्ध श्री पूज्य १००८श्री घासीलालजी महाराज ठाना ५ से दानपुर में बिराजमान थे उस मौके पर हम काचलाखारी के कूल भिलान उपदेश सुनने को आये। महाराजश्री १००८ श्री ने दयाधर्म का उपदेश सुनाया उसको सुनकर हम सभी ने निचे मुजब कुल देवी देवतागण ने बजाया पाडा बकरे, मुर्गे आदि जीवों को चढाना बन्द कर उन्हों के बदले मोठा भोग चढाकर धूप ध्यान करांगा। कोई भी जीव देवी देवता के नामसे देवता के सामने तथा घर में भी व बाहर में नहीं मारेंगे और न मरवा देंगे, । ईस ठहराव को तोडेगा उसको बारा बीज पूगेगा, यह ठहराव हमारे गांव व हमारे वंश रहेगा वहाँ तक पालांगा संवत१९–९७ माघ वदि ६शनिवार ता०१२–१–४१ द० जयनन्दन शास्त्री ने पंचों के कहने से लिखा।

नि० रावत थावरजी,, नि० रंगजी गामण गामजूवा,, नि०गामड रतना,, नि०गामण थावरावल्द दीत्या द० नाथूदानपुर गला,, द० चरपटो विरजी गाव द० खेडिया ,, केरीगोगाबनेगडिया ,, रावत नगजी हालरा पाडा,, मगरा राठौर गामड कालू ,, नि० तमा रुकमा गाम जुआ नि. कुरिया।

इस प्रकार आसपास के अन्य ग्रामों में विविध प्रकार का धर्मोपकार करते हुए पूज्य आचार्य श्री सेरपुर तथा पुन्याखेडी गांव पधारे। यहां दोनों गांव में एक रोज का पूर्ण अगता रखा गया और ॐ शांति की प्रार्थना हुई। मौमिडन और हिन्दु तमाम भाईयोंने पूर्ण श्रद्धा से सारा आरंभ समारंभ के कार्य तथा हिंसा बन्द रखी।

पास ही के आंवे नामक गांव में पधारे पर आंवे के महाराजा साहब श्री विश्वनाथसिंहजी ने गांव में अगता पलाकर ॐशान्ति की प्रार्थना करवाई और जितने दिन पूज्य श्री का बिराजना हुआ उतने दिन ठाकुर साहब ने तन, मनसे सेवा की। यहाँ श्रीमान भैरुमलजी डुगड बडे धर्म प्रेमी श्रद्धालु श्रावक है। इन्होंने अच्छी सेवा की।

आंवे से बिहार कर पूज्य श्री बडे सरवण पधारे। जहाँ ठाकुर साहब श्री महेन्द्रकुमारजी साहब और उनके भाई ठाकुर साहब ने सारे गांव में पूज्य श्री का उपदेश सुनकर सारे गांव भर में अगता पलवाया सारा आरंभ सारंभ बन्द कर वाया और सामुहिक रूपसे ॐ शान्ति की प्रार्थना करवाई। यहां पर कांग्रेस के कार्य कर्ता श्री जगन्नाथजी ने ईस कार्य में पूर्ण रूप से मदद की। ठाकुर साहब ने पूज्यश्री को दो तीन दिन अधिक बिराजने की प्रार्थना की किन्तु बांसवाडा पधारने की विनती के लिए बांसवाडा से डेप्युटेशन आया हुआ था इसी कारण शीघ्र बिहार कर बांसवाडेके सरहद उपर आया हुआ दानपुर गांव पधारे।

यह गांव चारों ओर पहाडों से घिरा हुआ है। मुनियों का यहां आना दुर्लभ होता है। स्थानकवासी जैन के ७–८ घर है। भक्ति भाव अच्छा है। अन्य माहेश्वरी भाइयों में सेठ रामचन्द्रजी सरवण वाले मुख्य है। गांव के आस पास भीलों की बस्ती हजारों की संख्या में है। आठवें दिन यहाँ हाट बजार भरता है। जिसमें हजारों मील माल खरीदने तथा वेचनें आते हैं। यहाँ पूज्यश्री आठ दिन बिराजे। एक दिन गांववालों ने हिंसा आरंभ आदि सर्व बन्द कर अगता पालकर ॐ शान्ति दिन मनाया, जिसमें सारा गांव तथा आस पास के भील लोग बहुत ही आये। पूज्य श्री का उपदेश सुनकर राजपूत, भोई मील लोगों ने दारु, मांस नहीं पीने व नहीं खाने की प्रतिज्ञा ग्रहण की।

बादमें सेठ धूलचन्दजी सेठ श्रीझब्बालालजी आदि श्रावकोंने गाडी भेजकर व खुद जाकर आसपास के ४–५ गांवों के भीलों को ईकठे किये फिर सर्व भील पन्चों को पूज्यश्री ने देवी देवताओं के स्थान पर होती हुई हिंसा को रोकने के लिये अहिंसामय उपदेश फरमाया। देवोदेवता कभी भी जीवों की बलि नहीं चाहते और जहाँ पशुवध होता है वह स्थान देवीदेवताओं की शक्ति से शून्य है। कारण कि किसी भी

शास्त्र व संम्प्रदाय में देवी देवताओं को मांसाहारी नहीं बनाया है।

देवता हमेशा अमृतहारी होते हैं ऐसा पुराणों में कहा गया है। तो फिर जो मनुष्य अमृत, दूध घृत मिष्ठान्न के स्थान पर मांस देवी देवताओं को चढाते हैं वे भयंकर भूल करते हैं और गंधे पदार्थोंसे देवी देवताओं को नाराजकर वे शारीरिक अने मानसिक अनेक आपदाएं सहन करते हैं। एतदर्थ आप लोगों को देवी देवताओं के स्थान पर सदा के लिए पशुबली बन्द करदेनी चाहिये। ऐसे हरे भरे प्रदेश में रहकर भी दुखमय जीवन बिताने का कारण दारुमांस सेवन करना तथा देवीदेवताओं के स्थान पर प्राणियों कि बलि चढाना ही है। इसलिए तुमलोग आज से प्रतिज्ञा करोकि हम अपने २ गांवो में कोई भी देवी देवताओं के स्थान पर हिंसा नहीं करेंगे।

उपरोक्त आदेश सुनकर पूज्यश्री के सन्मुख समस्त गांव के भील लोगोंने अपने अपने गांव के देवी देवता के स्थान पर हिंसा नहीं करने तथा जब तक हमारे वंश का अस्तित्व और गांव रहेगा वहाँतक हमारे कुटुम्बी जन जीवहिंसा नहीं करेंगे एसी प्रतिज्ञा कर पट्टा लिखकर भेट किया। दानपुर के भोई लोगोंने भी देवी देवताओं के स्थान हिंसा नहीं करने की प्रतिज्ञाकर पट्टा लिखकर पूज्यश्री को भेट किया। बहुतों ने यावजीव दारु मांस जुआ आदि का त्याग किया। दानपुर का पट्टा इस प्रकार है--

पट्टा न ७ नकल पट्टा दानपुर

सिद्ध श्री १००८ श्री श्री पूज्य श्री घासीलालजी महाराज साहेब ठाना ५ से सर्वन (बडी) से बिहार कर दानपुर (रियासतबांसवाडा) पधारे। और आज रोज ॐ शान्ति की प्रार्थना हुई। उसमें दयाधर्म का उपदेश सुनकर हम दानपुर निवासी भाईयों व वाघरियों की सारी कौम मिलकर दानपुरवासी कुल देवी देव ताओं को मीठे बना लिये यानी बकरे पाडे, मूर्गे आदि जीवों के बजाय मिठा प्रसाद ही देवी देवताओं को चढावेंगे। दानपुरवासी सभी देवताओं के सामने कोई जीव नहीं मारेंगे और दानपुरवासी सभी देवी देवताओं के नाम से घर व बाहर में कोई जीव नहीं मारेंगे और न मारने देंगे। यह ठहराव हमने चन्द्रमा और सूरज की साक्षी से व गंगा माता की सौगन खाकर किया है सो हमारा वंश रहेगा वहांतक पालेंगे इस ठहराव को तोडेगा उसको गंगामाता पूगेगा और हम लोग बलद को वाधिया नहीं करेंगे।

यह ठहराव हम लोग अपनी राजी खुशी से होंस हवास में लिख दिया सो सनद रहे, जो वक्त पर काम आवेगा। यह ठहराव पूज्यश्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज की सेवामें भेट किया है और यही ठहराव पूज्यश्रीजी ने देख रेख के लिए दानपुर के पञ्चों को दे दिया। पञ्च लोग देख रेख रक्खें। संवत १९९७ माघ वदी ४ शुक्रवार। बोलमा आखडी का बकरा, पाडा, आदि जीवों को अमरिया कर देवांगा। दः श्री जयनन्दन शास्त्री दानपुर निवासी भोई, गवारियों के कहने से लिखा।

नि. अमरा पटेल भोई नि. रतना भोई नि० रूपजी भोई नि०वगता भोई नि० हीरा भोई नि. कचरिया पानू भोई नि. हीरा कोदरिया भोई नि. रतना छोटा भोई नि० धनजी भोई नि० हीरा पूंजा भोई नि० मोगजी भोई नि. कादरिया भोई नि. गोवरिया भूतिया नि. गोवरिया थावरा।

इस प्रकार दानपुर में बहुत बडा उपकर कर पूज्य श्री अपनी शिष्य मण्डली के साथ दानपुर से विहार का बांसवाडा पधारे। बासवाडा शहर यों तो राजस्थान प्रदेश में आया हुआ है। इस प्रदेश में घूमने से मालूम होता है कि सभी बाहरी शहरी प्रवृत्तियों से यह प्रदेश सर्व शून्यसा हैं। बांसवाडा चारों तरफ से बांस के वन से घिरा हुआ है। दोनों तरफ महीसागर और अनास ये दो बडी नदियाँ बहती रहती है। इस कारण इसकी शोभा अत्यन्त सुन्दर है। यह प्रदेश पहाडी होने के कारण बडा सुहावना मालूम होता है। इसकी सघन वन राजी चित्त को आकर्षित करती हैं। यहां पर पूज्यश्री के बिराजने से बहुत बडा उपकार

हुआ। रात्रि के समय आपके सुशिष्य पं मुनि श्री के प्रभाव शाली प्रवचन होते थे। व्याख्यान में जैन अजैन भाई १००० १२०० अी संख्या में उपस्थिप होते थे। तनाम हिन्दु मुस्लिम जैन अजैन जनताने महाराजश्री को अधिक बिराजने की और चातुर्मास के लिए बडी विनंती की। किन्तु कुशलगढ संघ की बारम्बार विनंती होने से पूज्यश्रीने कुशलगढ की तरफ बिहार किया। बांसवाड़ा आने व जाने में बहुत ही परीषह सहन करना पडता है। क्योंकि मार्ग में जैनों की वस्ती नहीं वत् है। इधर थोडे से पूज्यश्री के बिचरने से करीब चार पांच हजार भीलोंने सर्वथा दारुमांस जीवहिंसा का परीत्याग किया। जिनभीलोंने मांसमदिरा को त्याग किया वे भक्त के उपनाम से प्रसिद्ध हुए। ये बडे सुखी नजर आते हैं। धन धान्य से बडे समृद्ध हैं। पूज्य श्री को अपना परम अराध्यदेव मानते हैं। और आज भी इनके उपकारों का स्मरण करते रहते हैं। पूज्यश्री मार्ग के अनेक छोटे बडे गावों को अहिंसा का दिव्य सन्देश फरमाते हुऐ कुशलगढ पधारे। कुशलगढ पधारने पर वहां के श्रीमान् मेनेजर साहेब श्री तजुमुलहुसेनजी साहबने पूज्यम०श्री की आज्ञानुसार सारे कुशलगढ के राज्य में ता० ९-३-४१ को अगता पालने का आदेश जाहिर किया तदनुसार उक्त तारीख को सारे राज्य में हिंसा (आरंभ) बंद रही। आस पास के तमाम भील लोग उस रोज कुशलगढ आये और दूर दूर के अलग अलग जागिरदारों के गांवों के भोललोगों की बडी में बडी सभा इकठी हुई। जिसमें प्रत्येक स्थान पर प्रत्येक गांव के ठाकुरोंने भाषण दिये शांति प्रार्थना का महत्व समझाया। अपनी अपनी प्रजा को हिंसा नहीं करने का एवं दारु मांस सेवन नहीं करने का सन्देश सुनाया।

कुशलगढ में उदयबाग के भीतर सभास्थल तैयार किया गया था। चारो ओर आम्रवृक्षों की सुन्दर घनी छाया में स्त्री पुरुषो को वेठने के लिये योग्य प्रबन्ध किया गया था। सारे गांव में व्यापार बन्ध रखा गया था। दुपहर को पंचायती नोहरे से शानदार जूलूस निकला। जो उदयबाग के भव्य मण्डप में पहूचने के बाद सभा के आकार में स्थित हो गया। पहले समीरमुनिजी को बाद में पूज्यश्री का शानदार भाषण हुआ। हजारों मनुष्यों की परिषद एक भाव से व्याख्यान श्रवणकर बहुत प्रसन्न हो उठी। मेनेजर साहब ने सभास्थल पर पोलिस का योग्य प्रबन्ध किया था। सरकारी राज्यकर्मचारी तथा स्थानिक प्रजावर्ग का उत्साह आदर्श था। पूज्यश्री का अमृतमय उपदेश सुनकर सारी परीषद बहुत ही प्रसन्न हुई। विशेष हर्षजनक बात यह हुई कि कुशलगढ के पास एक बडी नदी है उसमें जगह जगह जलद्रह है। उस जगह भील लोग आ-आकर मच्छी आदि प्राणियों की शिकार करते थे। वहां पूज्यश्री के उपदेश के कारण श्रीयुत मेनेजर साहबने सदन्तर सभी कौम को शिकार करने का मनाई हुक्म फरमा दिया है।

विशेष हर्ष की बात यह हुई कि उदयपुर के श्रीमान महाराणाजी साहब के भेजे हुए दारोगाजी साहब कन्हैयालालजी चौबीसाजी साहब के पधारने से पूज्जश्री ने दो दिन ज्यादा बिराजकर लीमडी शहर की तरफ विहार किया। लीमड़ी कि तरफ पधारने की खबर को जानकर पूज्यश्री को लेने के लिये लीमडी श्रीसंघ पीथापुर गांवतक सामने आया। पीथापुर से पूज्यश्री के साथ साथ श्रीसंघ लीलवा गांव आया। लीलवा प्राचीन काल में लीलावती शहर के नाम से प्रसिद्ध था। लीलवा पधारने पर ठाकुर साहब श्री रणजीतसिंहजी साहब ने अपने गांव में अगता पलाकर तालाव के किनारे ॐ शान्ति की प्रार्थना करवाई। जहाँ सारा गाव तथा आसपास के सेकडों मनुष्य आये। लीमडी श्री संघ भी आया। पूज्य श्री का व्याख्यान श्रवणकर ठाकुर सा. बहुत ही पसन्न हुए।

लीबडी शहरमें पदार्पण

फाल्गुन शुक्ला १३ को पूज्यश्री लीमडी पधारे। लीमडी से लीलवा तक पूज्यश्री के स्वागत के लिये श्रावक एवं श्राविकाओं का तांता लग गया था। जय ध्वनि तथा मंगल गान के साथ पूज्यश्री लीमडी

शहर में पधारे। श्री झालोद महालकारी साहब प्राणशंकर गणपतलाल दवे एक खुशमिजाजी तथा विचक्षण पुरूष है। उन्होंने पूज्यश्री के उपदेश से ॐ शान्ति की प्रार्थना अगते के साथ कराने का आदेश सुनकर खुद माल कारी साहब ने अपने नाम से विज्ञप्ति पत्र छपवाकर झालोद तालुके के प्रत्येक गांव में भेज दिये। दुसरी पत्रिका श्रीसंघ ने अपनी तरफ से छपवाकर चारों तरफ ॐशान्ति प्रार्थना के दिन किसी भी प्रकार की जीव हिंसा तथा आरम्भकार्य बन्द रखने के लिये भेज दी। रमणीय माछन नदी के किनारे चेत्र कृष्णा ९ एवं ता० २९-३-४१ के दिन ठाकुर साहब श्री की रमणीय वाडी में चारो ओर से मानवमेदनी आने लगी। लीमडी स्था० स्वयं सेवक मण्डल ने दिनरात परिश्रम करके रास्ते पर बडे बडे आकर्षक दरवाजे खडे कर दिये थे। ध्वजा पता का से रास्ते को शृंगारित किया था। सुन्दर सुनहरी अक्षरों वाले बोर्ड लगाए गये थे। बगीचे में छाया की सुन्दर व्यवस्था की गई।

दुपहर को पौषधशाला से भव्य जुलूस रवाना हुआ जिसमें मालकारी साहब झालोद तथा लीमडी ठाकुर साहब आदि राज्यकर्मचारी गणभी शामिल थे। सेंकड़ो नरनारियों के साथ जुलूस गांव में घूमता हुआ धीरे धीरे बारह बजे माछन नदी को लांघ कर वाडी में यथास्थान पहुँचकर सभा के आकार में परिणत्त हो गया। सेकडों भील के टोले के टोले चारो तरफ के गांव से इस महानउत्सव में हर्ष भरे हृदय से असह्य गर्मी के होते हुए भी गरमी की परवाह न कर आने लगे। स्त्रियाँ बालक सभी बडे उमंग के साथ भयंकर गर्मी के असह्यताप में उत्कण्ठित भाव से झुण्ड के झुण्ड बगीचे में उतर आये। कुशलगढ दाहोद संजेती झालोद झाबुआ आदि शहरों के दर्शनार्थी भी बडी संख्या में आये। श्रीमालकारी साहब झालोद लींमडी ठाकुर साहब श्री दीपसिंहजी साहब श्री खुमानसिंहजी साहब कुंवर साहब श्री बिलवाणी ठाकुर साहब श्री संभु- सिंहजी साहब तथा भ्राता हिम्मतसिंहजी, श्री लिलवा ठाकुर साहब, श्री रणजीतसिंहजी साहब आदि की सभी में राजकर्मचारियों की उपस्थिति अतीव शोभा प्रद थी।

इस तरह हजारों की संख्या में परिषद की उपस्थिति में मुनिश्रीने मङ्गलाचरण किया। पश्चात् महत् धर्मोउपदेशक यशस्वी पूज्यश्री ने अपना मार्मिक प्रवचन प्रारंभ किया। ईश्वर प्रार्थना का महत्व समझाते हुए पूज्यश्री ने फरमा कि "संसार में अगर मानवी सच्चे हृदय से शान्ति प्रार्थना करके जो भी कार्यकरना चाहे वह उसमें आसानीसें सफलता प्राप्त कर सकता है। आज से पहले ऋषि महाऋषि और नर वीरों ने न बनने जैसा जो भी कार्य किया है तो वह ईश्वरीय शक्ति से ही हुआ है। और उस ईश्वरी शक्ति को प्र गट करने के लिये प्रत्येक मानव को प्रयत्न करना चाहिए

अहिंसा देवी की उपासना

असहाय प्राणी पर जुल्म करना मानवियों का कांम नहीं है क्योंकिं धर्मग्रन्थों में अथवा नैतिक ग्रन्थों में किसी भी असहाय प्राणीपर जुल्म करने की सख्त मनाई है। इसलिए हमें हर समय आदि भौतिक आदि दैविक आपत्ति से बचने के लिये ईश्वर प्रार्थना अहिंसा भाव से करनी ही चाहिये। इस प्रकार के प्रभा- वशाली प्रवचनद्वारा श्रोताओं के हृदय पर अहिंसा का अच्छा असर हुआ। पूज्यश्री के प्रभाव पूर्ण प्रवचन से सारी जनता मंत्र मुग्ध थी। पूज्यश्री के प्रवचन से मन्त्र मुग्ध हो कर सर्व लोगोने एवं श्रीसंघने चातु- र्मास करने की जोरदार विनंती पूज्यश्री से भाव भीने शब्दों में अर्ज की कि हमारा क्षेत्र मालवा तथा गुर्जर देश के किनारे आया हुआ पहाड़ी प्रान्त का मुख्य क्षेत्र है। अगर यहाँ चातुर्मास होगा तो यहाँ महान उपकार होने की संभावना है। हम लोग अपने यहाँ आये हुए मुनिरत्नों को कभी भी नहीं जानें देंवे। यह हमारा पुराना भाविक क्षेत्र है। यहां बडे बडे आचार्य एवं मुनिराजों के चातुर्मास हुए हैं। इसलिये हमारी विनती को माननी ही पडेगी, उपरोक्त भाव पूर्ण विनंती को पूज्यश्री ने स्वीकार की

जिससे समस्त लीमडी की जनता आनन्द विभोर हो गई । चारों तरफ के आये हुए सज्जनों को भी यह जानकर खुशी हुई की हमारे प्रान्त में अहो भाग्य से लीमडी में इस वर्ष चातुर्मास है । जिससे हमें भी पूज्यश्री एवं अन्यमुनियों के दर्शन तथा वाणी का अपूर्व लाभ मिलेगा । जिस समय यह विनती मंजूर हुई उसके पूर्व बासवाडा, थांदला, दाहोद, कुशलगढ, दिल्ली आदि क्षेत्रो से बड़ी संख्या में संघआया तथा पिपलोदा, गोधरा, उदयपुर. दिल्ली, अलवर, आदि स्थानों से सामूहिक विनंती पत्र आये और अपने अपने शहर में चातुर्मास बिराजने की विनती की किन्तु लींमडी श्रीसंघने अपने क्षेत्र में आये हुए लाभ को अपना कर विनती मंजूर कराली ।

अहिंसा का उपदेश देने के लिये जैन मुनि देश विदेशों में बिहार करते हैं और अनेक कष्टों को सहन कर अहिंसा का प्रचार करते हैं । तथा हिंसकों को अहिंसक बनाते हैं । अहिंसा धर्म सारे विश्व में फैले इस आदर्श की उपयोगिता दुनियाँ को समझाते हैं । इसी कारण लीमडी में कोई शान्ति प्रार्थना का विस्तृत समाचार टेलिग्राम द्वारा व पत्र द्वारा वाइसराय को सीमला भेजा गया । उन समाचारों से श्री नामदार वाइसराय को कितना आनन्द हुआ वह तो स्वयं ही उनके पत्र पढने से मालूम होगा । इसीलिए उस पत्र को अक्षरशः यहाँ उद्धृत किया जाता है ।

नामदार मार्कवीस ऑफ लींलीथगो

P: C. Night G. M. S. I. G. M. E. O. B. F. D. L. T. D.

Viceregal Lodge
Simla.
Viceroy's House.

वाइसराय का आया हुवा पत्र

New Delht 31st March 1974

Dear Sir,

I am desired by His Excellency the Viceroy to thank you for your letter in which you have informed him of the observance by Jain Divakar Shreeman Ghashilaljee of Limdi of the day of National Prayer.

Yours truly,
Sd Assistant Secretary.

Secretary—
The Shwetamber Sthanakvasi Jain Sangh Limdi, Via Dohad.

इस प्रकार नामदार वाइसराय ने पत्र द्वारा अपने हृदय में रहीं हुई धर्म भावना तथा सन्तपुरुष के प्रति आदरभावनां व्यक्त की ।

संजेली रियासत में उपकार—

संजेली लिमडीं से वायुकोण में आया हुआ एक राज्य का मुख्य शहर है । यह भी बगीचे तथा बडे बडे तालावों और पहाडों से सुशोभित है । यहाँ के महाराजा का नाम है श्रीमान महाराज श्री नरेन्द्रसिंहजी आपके भ्राता के नाम—विक्रमसिंहजी मोहनसिंहजी, राजेन्द्रसिंहजीं, श्रीमहावीरसिंहजी । ये चारां भ्राता तथा महाराजा पूर्ण भक्त है । स्टेट मेनेजर साहब श्री सनतकुमारजी पूर्ण स्नेही और विचक्षण है । संजेली शहर ही प्राकृतिक शोभा से सुशोभित तो है ही सुश्रद्धालु ऐसे नर वीरों के अधिपत्य से संजेली शहेर विशेष सुशोभीत है । वहां के सेठ साहब श्री गुलाबचन्दजी, छुनाजी प्रेमचन्दजी, उदयचन्दजी, कुंवरजी, मिश्रीलालजी,

आदि की विनती के कारण पूज्यश्री का पदार्पण होनेसे शहर तथा राज्य में जैनमुनियों के प्रति अजब प्रेम विकसित हुआ कारण की पूज्यश्री से पहले प्राय यहाँ मुनियों का पधारना बहुत कम हुआ है। यह क्षेत्र चारों ओर से पहाडी प्रदेश से घिरा हुआ है। रास्ते में जैन लोगों के घरोंका एक भी गांव नहीं है। जिसमें संजेली पधारने में मुनियों को बढा परिषह उठाना पडता है। जबसे पूज्यश्री संजेली पधारे तबसे भील कौम व अन्य कौम दर्शन तथा व्याख्यान सुनने के लिये बडी २ संख्या में आने लगी।

तालाव के किनारे सेठ साहब श्री प्रेमचन्दजी की दुकान पर प्रतिदिन पूज्यश्री के प्रभावशाली प्रवचन होते थे। प्रवचन में राजकर्मचारी गण, व अन्य प्रजाजन बडी श्रद्धा पूर्वक बडी संख्या में उपस्थित होते थे। रात्रिमें भी प्रियवक्ता पं. रत्न मुनि श्रीकन्हैयालालजी म. के जाहिर व्याख्यान होते थे। जनता की बड़ी अच्छी उपस्थिति रहती थी

संजेली रियासत के मेनेजर साहब श्री सनत्कुमारजी साहब पूज्यश्री के व्याख्यान में पधारे। पूज्यश्री के उपदेश और आदेश को सुनकर मेनेजर साहब ने अहिंसा दिवस पालने का और ॐ शान्ति की प्रार्थना कराने का समस्त राज्य में आदेश फरमाया। ता० १५–५–४१ को समस्त राज्यमें अगता पालने का हुक्म जारी किया गया। हुक्मके अनुसार सारी रियासत में व संजेली में भी हिंसा बन्द रही। सारे आरंभ संभारंभ के कार्य बन्द रहे और आम्रवांडी में सुबह से ही नर नारियों के वृन्द उमडने लगे। गाँव से आम्रवाडी तक श्रीमान् महाराजा साहबने सारे राजमार्ग को ध्वजा पताका से श्रृंगारित किया। आम्रवाडी में एक रोज पहले सरकार ने अपनी तरफ से बडे २ छायावान बन्दवाकर लोगों को बैठने के लिए योग्य प्रबन्ध किया। रास्ते में भव्यदरवाजे खडे किए गये थे। सारा नगर ध्वजा और पताकाओं से भव्य व सुन्दर लगता था उसकी शोभा देखने योग्य थी। आमन्त्रण पत्रिका छपवाकर सर्वत्र भेज दी गइ थी। आमन्त्रण पत्र पाकर हजारों की संख्या में लींमडी. झालोद, कुशलगढ आदि आस पास के गांवों व शहरों के लोग ॐ शान्ति की प्रार्थना में सामिल होने के लिये उपस्थित हुए। संजेली श्रावक संघ ने आगन्तुक सज्जनों के खाने पीने रहने की बड़ी सुन्दर व्यवस्था की थी। नगर सेठ श्री प्रेमचन्द्रजी उदयचन्दजी बागेरचा घासीलालजी महता तथा राजमलजी घोका आदि सर्व श्रीसंघने बहार के महेमानो की अच्छी सेवा बजाई

शान्ति प्रार्थना के दिन वेन्ड के साथ शहर में जुलूस निकला और शहर में घूमकर आम्बांवाडी में उपस्थित हुआ जुलूस के साथ श्रीमान् राजा साहब एवम् उनके भ्रातागण तथा मेनेजर साहब, आदि राज कमचारीगण भी उपस्ति हुआ। जुलूस के आगे वेण्ड पीछे महाराजा एवम् राज्यकर्मचारीगण उनके पीछे लींमडी संघ संजेली संघ व अन्य प्रजाजन जयजय कार करती हुई चलती थी। स्थान स्थान पर लींमडी के छात्रों व सेठ मिश्रीलालजी तथा बाबूलालजी बांठिया के सुरिले भजन होते थे। जिसको सुनकर प्रजा तथा महाराजा को खूब संतोप हुआ। जुलूस धीरे धीरे शहर में फिरता हुआ सभा स्थान पर पहुंचा। इसी प्रकार आस पास की रियासत में से सैकड़ो भील शान्ति प्रार्थना में सामिल होने के लिये बड़ी संख्या में उपस्थित हुए। आम्रवाडी में जुलूस सभा के रूप में बदल गया अपने अपने स्थान पर जब समस्त लोग बैठ गये तब पूज्यश्री ने अपनी अमोघवाणी द्वारा आगन्तुक परिषद् को सम्बोधित करते हुए फरमाया भाईयों ! संसार में इस समय चारों ओर अशांति का साम्राज्य है। आज भारत परतन्त्र होने के कारण अनेक बन्धनों से बन्धा हुआ हैं। और दुखमय जीवन बिता रहा है। मनुष्य को खाने का पीने का ओढने का पहनने का आदि सब प्रकार का दुःख है और इन दुःखों से छूटने के लिये प्रत्येक व्यक्ति सतत् प्रयत्न शील रहता है। परिशुद्ध ईश्वर प्रार्थना से संसार में मनुष्य अलभ्य वस्तुएँ भी प्राप्त कर सकता है। ईश्वर प्रार्थना करने वाले के लिये संसार सदा सुखमयी बनता है। सर्व जीवों के साथ मैत्री भाव रखना ही सच्ची ईश्वर भक्ति

है। पितृ भक्त पुत्र वही कहलायगा कि जो अपने समान दूसरे भ्राता के साथ प्रेम रखता हो कारण कि पिता की दृष्टि में सर्व पुत्र एक सा होते हैं। इसी प्रकार ईश्वर भक्त भी वही है कि जो दूसरे प्राणियों के साथ मैत्रि भाव से रहता हो। अगर अहिंसा भक्त होकर हम इस संसार में जो भी कार्य करेंगे वह ईश्वर कृपा से जरूर सफल होंगे। यानि अहिंसा के साथ ॐशान्ति की प्रार्थना की जाय तब ही इष्ट सिद्धि प्राप्त होगी। इस प्रकार दो घण्टे तक पूज्यश्री का प्रभावशाली प्रवचन हुआ। प्रवचन सुनकर राजा और प्रजा बड़ी प्रभावित हुई संजेली के महाराजा साहब ने प्रवचन सुनकर जीवदया का पट्टा पूज्यश्री को भेट किया और तालाव में मच्छ-लीयाँ पकडी जाती थी उसे सदा के लिये बन्द कर दिया।

सरकार की तरफ से हुक्म न. ११७५ द्वारा यह हुक्म जारी किया गया कि "संजेली रियासत के तमाम तालाव तथा नदी नाले व द्रह पर कोई भी मनुष्य मच्छी आदि की शिकार नहीं करेगा जिसके लिए सरकार की तरफ से पूरा इन्तजाम रहेगा। दुसरा दशहरा के दिन जो चोगानिया पाडा मारने में आता था वह सदा के लिये बन्द किया जाता है। यानी आयन्दा नहीं मारा जायगा।"

शान्ति प्रार्थना के दुसरे दिन श्रीमती महारानीजी सहिबा की तरफ से संजेली श्रीसंघ तथा बाहर के आये हुए दर्शनार्थियों को धाम धूम से प्रेम पूर्वक प्रीति भोजन (स्वामीवात्सल्य) कराया। श्री संजेली दरबार पधारकर पूज्यश्री को विनंती कर महलों में ले गये। और अपने हाथ से आहार पानी बहराया तथा माजी साहब ने अर्ज कराइ कि पूज्य महाराज साहब हमे भी उपदेश सुनावें कारण कि वयोवृद्ध दरबार अभी ही स्वर्ग वासी हुए हैं। जिसकारण में बाहर नहीं आसकती। माजी साहब की मयविनय प्रार्थना पर पूज्यश्री ने माजी साहब को भी उपदेश सुनाया। उपदेशको सुनकर माजी साहब बडे प्रसन्न हुए। इसी प्रकार ओर भी अनेक त्याग प्रत्याख्यान हुए। संजेली में आचार्य महाराज को विराजने के लिए संजेली श्रीसंघ की तथा दरबार की बहुत विनंती थी मगर अन्यत्र मुनिराजों के पधारने से प्रत्येक स्थल पर विशेष उपकार होते हैं इस हेतु से पूज्य श्रीने झालोद कि ओर बिहार किया। झालोद पंचमहाल का एक मुख्य स्थान है। यहाँ श्रीमान प्राणशंकर गणपत-लाल दवे मालकारी साहब है। आपकी योग्य तथा संत स्नेहिता की बात पहिले ही लीमडी प्रकरण में लिखी जा चुकी है। पूज्य श्री जबसे झालोद पधारे तबसे तमाम राज्य कर्मचारियों के साथ नित्यमेव पधारकर पूज्यश्री की सेवा एवं उपदेश का लाभ लेते थे। झालोद से लीमडी कुशलगढ होते हुए थांदला पधारते रास्ते में उदेपुर्या गांव के ठाकुर साहब मोतीसिंहजी साहब ने उपदेश सुनकर सदा के लिये दशहरा पर मरते हुए पाडे को मारने का मनाई हुक्म जाहिर किया।

थांदले में अपूर्व उपकार—

उदयपुर्या से बिहारकर पूज्यश्री थांदला पधारे। पूज्यश्री के थांदला पधारने से सारा थांदला शहर उत्साहि नजर आता था। कारण जब पूज्यश्री का रतलाम चातुर्मास था तबसे ही थांदला श्रीसंघ पूज्य श्री को थां-दला पधारने का बार बार आग्रह कर रहा था। पूज्यश्री के पधारने से श्रीसंघ की मनोकामना पूरी हो गई। महाराजश्री के बिराजने से धर्म ध्यान खूब होने लगा। पूज्यश्री के दोनों समय प्रवचन होते थे। हजारों की संख्या में जनता व्याख्यान का लाभ लेने लगी। गांव में लम्बे समय से आपसी वैमनस्य चलता था पंचायत में भी फूट थी। इसी वैमनस्य के कारण गांव की प्रगति रुकी हुइ थी। किन्तु पूज्यश्री के प्रभाव शाली प्रवचनों से गांव का वैमनस्य सदा के लिए मिट गया। जनता में पुन प्रेम छा गया।

दुसरा पूज्यश्री के प्रभावशाली प्रवचनों से चामुण्डा माता के स्थान पर जो प्रतिवर्ष बहुत जीवहिंसा होती थी वह सदा के लिए बन्द हो गइ। थांदला श्रीसंघ ने पूज्यश्री के उपदेश से नदी आदि में जो मच्छियां पकडी जाती थी वह सदा के लिए बन्द करवा दी। इस प्रकार ओर भी बहुत उपकार हुए। ता० ८-६-४१

के दिन पूज्य आचार्य महाराज श्री की आज्ञा से थांदला श्रीसंघ ने उस रोज गांव में सब आरंभ कार्य बन्द कराये। कत्लखाना बन्दरहा और श्रीसंघ ने पत्रिका छपवाकर चारों ओर आमंत्रण पत्र भेदिये। जिससे झाबुआ कुशलगढ लींमडी आदिसे काफी संख्या में दर्शनार्थी उपस्थित हुए। नदी किनारे घोडा कुण्ड बगीचे में श्रीसंघने शान्ति प्रार्थना के लिए परिषद को बेठने के लिये योग्य बन्दोवस्त किया। ता० ८-६-४१ के दिन चारों ओर से जनता आनेलगी। सभा स्थल खचाखच भरजाने पर पूज्यश्रीने अपना प्रभाव शाली प्रवचन प्रारंभ किया। पूज्यश्रीने अपने प्रवचन में इश्वर प्रार्थना का सुन्दर महत्व समझाया और अहिंसा धर्मकी आवश्यकता बतलाई। पूज्यश्री ने अपने प्रवचनमें फरमाया कि प्रत्येक व्यक्ति को सर्व संसार में व्याप्त अशान्ति को समाप्त करने के लिये पवित्रतासे इश्वर प्रार्थना करनी चाहिये। ईश्वर प्रार्थना में अपूर्व शक्ति है इससे आध्यात्मिक सुख के साथ भौतिक सुख भी प्राप्त हो सकते हैं। आज जो मानव अशान्त दुखी ओर पीडित नजर आ रहा है। जिसका मूल कारण ईश्वर के प्रति अविश्वास ही है। अगर मानव ईश्वर के प्रति पूर्ण आस्था रखकर काम करता है तो उसमें उसे अवश्य हि सफलता मिलती है। ईश्वर प्रार्थना का अर्थ है समस्त प्राणियों के प्रति मैत्रीभाव। सुख देने से ही सुख की प्राप्ति होती है। अगर हम अपने ही आत्मा की तरह दूसरे प्राणि को भी समझने लग जायें तो संसार के सर्व दुखों का अन्त अवश्यभावी है।" इस प्रकार पूज्यश्री का करीब दो घन्टे तक प्रभावशाली प्रवचन होता रहा। जनता मंत्र मुग्ध होकर प्रवचन का लाभ ले रही थी। इस शान्ति प्रार्थना में श्रीमान् देहरावासी सम्प्रदाय के पं. न्यायविजयजी महाराज भी पधारे थे। पं श्रीन्यायविजयजी म. एक अच्छे विद्वान और उच्च विचार के व्यक्ति हैं। उनका स्वभाव बडा ही मिलनसार है। पूज्यश्री के साथ इनका बडा मनमोहक वार्तालाप हुआ। शान्ति प्रार्थना में पं. न्यायविजयजी म. ने भी प्रार्थना के महत्व को समझाने के लिए सुन्दर प्रवचन दिया। प्रवचन बडा ही प्रेरक रहा। आपकी प्रेरणा से अच्छे त्याग प्रत्याख्यान हुए। यह दृश्य बडा नयनरम्य था। थाँदला के पास क्रिश्चियन पादरी साहब ने पूज्यश्री के उपदेश से उस रोज तमाम भील छात्रों को तथा अनुयाईयों को शिकार की मनाई करना और दारु मांस खाने के लिये मना किया। इसी प्रकार एक बडे मोलवीसाहब पेशावर के निवासी ने भी तमाम जनता को पूज्जश्री की आज्ञा मानने के लिये स्थल स्थल पर भाषण दे देकर उत्तेजना की। यहां पर श्री झाबुआ से दिवान साहब पूज्यश्री के दर्शनार्थ पधारे।

इस प्रकार थांदले की विश्व शान्ति प्रार्थना में अपूर्व आनन्द आया। थांदला श्री संघ का विशेष बिराजने की भाव भीनी साग्रह विनती होने पर भी पूज्यश्रीने आगे बढने के भाव से विहार कर दिया। हजारों लोगों ने साश्रुनयनोंसे पूज्यश्री को विदाई दी। थांदला से विहार कर पूज्य श्री अपनी शिष्य मण्डली के साथ झाबुआ पधारे। पूज्यश्री के आगमन से झाबुआ में आनन्द छा गया। पूज्यश्री के दोनों समय प्रभावशाली प्रवचन होने लगे। हजारों की संख्या में लोग प्रवचन का लाभ लेने लगे। झाबुआ स्टेट के दिवान साहब श्री रामनारायणजी मुल्लाजी साहब तथा खवासा महाराजा श्रीदीलीपसिंहजो साहब पूज्यश्री के प्रतिदिन व्याख्यान श्रवण करते थे। जैन अजैन लोग बडी संख्या में व्याख्यान श्रवण के लिए आते थे। चातुर्मास का समय समीप होनेसे झाबुआ संघ का अत्याग्रह होने पर भी पूज्यश्री ज्यादा नहीं बिराजसके और वहाँ से पूज्यश्री ने विहार कर दिया। झाबुआ से विहारकर पू. महाराज श्री करडावद पधारे। यहाँ ॐ शांन्ति की प्रार्थना हुई। इस ॐ शान्ति की प्रार्थना में झाबुआ का समस्त श्री संघ ऐवं पुलिस सुपरिंडेन्ट साहब श्री नन्दकिशोरजी साहेब भी उपस्थित थे। शान्ति प्रार्थना के दिन करडावत निवासियों ने अपना सारा कारोबार बन्द रखा। भीलों ने पूज्यश्री के उपदेश से जीवसिंहा का त्याग किया। तथा और भी बहुत उपकार हुए।

करडावद से विहार कर पूज्यश्री कलवारा पधारे यहां के सेठ नानालालजी आदि श्री संघ ने खब लाभ

लिया। वहां से आप दाहोद पधारे। दाहोद पधारने पर प्रतिदिन दो समय पूज्यश्री के व्याख्यान होते थे। हजारों की संख्या में जनता व्याख्यान श्रवण करती जिसमें श्वेताम्बर मूर्तिपूजक दिगम्बर जैन अजैन सभी जनता बडी श्रद्धा से व्याख्यान का लाभ लेती थी। दाहोद के मामलतदार सा. श्री नौतमलाल भाई सोमेश्वर ठाकुर भी व्याख्यान श्रवण करते थे। पूज्यश्री के आदेश पर मामलतदार साहब ने तथा गांव के अग्रगण्य सज्जनों ने ता० ३०-६-४१ को शान्ति प्रार्थना करने का एवं उस रोज व्यापार जीवहिंसा बन्द रखने की विज्ञप्ति निकाली। तदनुसार दाहोद शहर का कापड बाजार एवं दाणा बाजार बन्द रखा गया। हलवाई तेली भडभुंजाओंने अपना अपना धन्धा बन्द रखा। कसाईयोंने कतलखाना बन्द रखा। सात मिल मालिकोंने गुरुदेवके आदेशानुसार अपनी अपनी मिले सारे रोजा बन्द रखी। सारे शहरमें गुरुदेव के आदेशानुसार मिल कारखाना, दुकाने तथा अन्य व्यवसाय बन्द रखकर जनता ॐ शान्ति की प्रार्थना में शामिल हुई। विशाल पण्डाल जनतासे खचाखच भर गया था। जगह के अभाव में बहुत जनता बाहर खडी थी। विशाल जन समूह के बीच ॐ शान्ति की प्रार्थना प्रारंभ हो गई। प्रार्थना के बाद पूज्य गुरुदेव का मंगल प्रवचन प्रारम्भ हुआ। विशाल जनसमूह को सम्बोधित करते हुए पूज्यश्री ने ईश्वर प्रार्थना का हार्द मर्मपूर्वक समझाया। आज के अशान्त युगमें शान्ति पाने के लिये परम पवित्र हृदय से प्रार्थना की परम आवश्यकता बताई। साथ ही अहिंसा धर्म पर भी आपका मननीय प्रवचन हुआ जिसको सुनकर दाहोद की जनता की अहिंसा देवी के प्रति बहुत श्रद्धा बढगई। दाहोद जैसे गांव में संपूर्ण चौवीस घंटे कतलखाने का बन्द रहना एक आश्चर्य माना जाता है। यह सर्व पूज्यश्री के पुण्य प्रभाव का ही चमत्कार था। पूज्यश्री जहां भी जाते हैं वहाँ की जनता अवश्य धार्मिकता की और प्रवृत्त होती है। पूज्यश्री के उपदेश से और भी बडे बडे त्याग प्रत्याख्यान हुए। हिंसक वृत्ति के लोगों ने हिंसा का परित्याग किया दारु मांस सदा के लिए छोड दिया। इस महति कार्यवाही में मामलतदार साहब श्री नौतमलाल सोमेश्वरभाई ठाकुर, मूर्ति पूजक समाज के अग्रगण्य सेठ मगनलाल मनसुखलालभाई एवं दिगम्बर समाज के मुखिया दलाल भागीरथजी मोतीलालजी केशरीमलजी, सेठ खेंगारजी दयारामजी, लुनाजी चम्पालालजी ओछवलालजी पन्नालालजी आदि महानुभावों का सराहनीय सहयोग रहा। रात्रि को कोरट के जाहेर मैदान में पं. रत्न मुनि श्री कन्हैयालालजी म० के जाहिर व्याख्यान होते थे। दाहोद में इस प्रकार महत्व का उपकार कर पूज्यश्री व. पं. मुनिश्री कन्हैयालालजी म. लींमडी की ओर बिहार किया। दाहोद से पूज्यश्री ने तेले की तपस्या कर रखी थी। दाहोद से पूज्यश्री मीराखेडी पधारे। मीराखेडी तक दाहोद का श्रीसंघ पूज्यश्री को पहुँचाने के लिए आया था। पूज्य आचार्यश्री दाहोद से लींमडी की तरफ बिहार सुनकर लींमडी का श्रीसंघ हर्षीत हो उठा। और मीराखेडी पूज्यश्री की सेवामें वीर पुत्र समीरमुनिजी 'जो कि पहले ही से लींमडी में बिराजते थे। उनके साथ श्रीसंघ आ पहुंचा। मीराखेडी से पूज्यश्री रुखडी पधारे। यहां तो लींमडी की जनता का तांता सा लग गया था। रुखडी में से बिहार कर पूज्यश्री अषाढ शुक्ला नवमी को चातुर्मास के लिये लींमडी पधारे।

लींमडी में तपश्चर्या—

लीमडी जब पूज्यश्री पहले फाल्गुन महिने में पधारे तबसे आज पर्यन्त श्री संघ को दर्शन एवं व्याख्यान का लाभ मिलता ही रहा कारण कि पहले पूज्यश्री और बाद में वीरपुत्र समीरमुनिजी सकारण यहां बिराजे। जिससे श्रीसंघ को अपूर्व लाभ प्राप्त हुवा। वीरपुत्र समीरमुनि के साथ तपस्वी श्रीमदनलालजी महाराज एवं तपस्वी श्री मांगीलालजी महाराज बिराजमान थे दोनों तपस्वीश्री ने अषाढकृष्णा १ ता० १०-६-४१ से तपश्चर्या शुरू कर दी थी मांगीलालजी महाराज ने २१ दिन की तपश्चर्या का पारणा किया।

वीरपुत्र समीरमुनिजी महाराज के प्रयास से श्री स्थानकवासी जैन उपदेशक मण्डल स्थापित किया गया जिसमें श्री वीरपुत्र तथा मण्डल के सदस्यों के प्रति गुरुवार को विविध विषय पर व्याख्यान रात्रि के समय होने लगे। पूज्य आचार्यश्री के सूचन से आषाढ कृष्णा ११ ता० २०-६-४१ से ॐ शान्ति का चौवीस कलाक अखण्ड जाप किया गया। जिसमें क्रमशः सर्वभाई बहनोंने सहर्ष भाग लिया। इसके पहले जरा भी बरसात नहीं हुई थी। असह्य गरमी पडती थी। लोगों में बेचैनी फैली हुई थी परन्तु ज्यों ही 'ॐ शान्ति' के जाप पूरे हुए उसी रोज प्रातः ही से वर्षा प्रारम्भ हो गई। जिससे स्थानिक जनता में अपूर्व श्रद्धा बढी। इस प्रकार पूज्यश्री के पधारने के पहले भी संघ ने अपनी व्यवस्थित ढंगसे शान्ति सप्ताह मनाया। पूज्यश्री के पधारने पर विशेष रूप से धर्म ध्यान होने लगा। उपाश्रय में जब जगह कम पडने लगी तब उपाश्रय के बाहर एक भव्य और विशाल मंडप बनाया गया। पूज्यश्री का व्याख्यान प्रतिदिन मण्डप में होने लगे। लीमडी की जनता व्याख्यान के समय अपना सर्व कारोबार बन्द रखती थी। जिससे सभी लोगों को समान रूप से व्याख्यान श्रवण का लाभ मिलता था। झालोद दाहोद; रणीयार; नानसभाई आदि आसपास के गावों के 'लोग सैकडों की संख्या में पूज्यश्री के दर्शन के लिये आने लगे ज्यों ज्यों चातुर्मास के दिन नजदीक आने लगे त्यों त्यों धर्म ध्यान की भी वृद्धि होने लगी। लोगों में नदी के बाढ की तरह धार्मिक उत्साह बढने लगा। इधर तपस्वी श्री मदनलालजी महाराज की भी तपस्या बढने लगी। तपस्वीजी की प्रेरक तपस्या से श्रावक गण में भी तपस्या के प्रति अनुराग बढ गया। श्रावक श्राविकाओं ने भी बडी मात्रा में तपश्चर्या प्रारम्भ करदी। पूज्यश्री के विराजने से सारा गांव यात्रा धाम सा बन गया था।

रणीयार में शांति प्रार्थना—

रणीयार निवासी पाटीदार एवं अन्य भाईयोंने अपने गांव में शान्ति प्रार्थना मनाने की पूज्य श्री से प्रार्थना कि जिसको पूज्य श्री ने स्वीकार की। तदनुसार श्रावणशुक्ला ९ ता०१-८-४१ को रणीयार गांव वालों ने अपने यहां शान्ति प्रार्थना दिन जाहिर किया। उस रोज गांव वालों ने खेती बाडी आदि सारा आरम्भ कार्य बन्द रखा। बैलों को छुट्टी दी गई। व्यापार बन्द रखा गया। ता० १-८-४१ के प्रातः रणीयार गांव वाले अग्रसर लीमडी आये, और लिमडी श्रीसंघ को तथा पूज्यश्री को रणीयार पधारने की विनंती की। लिमडी श्रीसंघ ने दुपहर को ११ बजे आये हुए रणीयार निवासियों को सरघस के रूप में लिमडीमें घुमाया और रणीयार रवाना हुए। पूज्य श्री भी अपने शिष्य समूह के साथ रणीयार पधारे। रणीयार लीमडी से दो माइल पडता है। तथापि छोटे छोटे बच्चे भी अतीव उल्लास के साथ रणीयार जाने के लिये पूज्यश्री के साथ; तैयार हो गये। लीमडी तथा रणीयार के बीच के मार्ग में मनुष्यों का तांता-सा लग गया था। रणीयार से स्कूल मास्टर अपने सर्व छात्रों के साथ पूज्यश्री को तथा लीमडी संघ को लेने के लिये बहुत दूर तक सामने आये। रणीयार निवासियों ने पूज्यश्री को अपने गांव में सरघस के आकार में घुमाकर नवाफलिया के व्याख्यान स्थल पर ले गये। जहां पहले ही से लोगों को बैठने के लिये उचित ढंग से व्यवस्था कर रखी थी। पूज्यश्री के पधार जाने पर सारी जनता अपने अपने स्थान पर बैठ गई। लीमडी वोलियण्टर टीम यहां भी व्यवस्था करने के लिये खडी थी। पूज्यश्री ने अपना मंगल प्रवचन प्रारम्भ किया। पूज्य श्री ने अपने मंगल प्रवचन में ईश्वर प्रार्थना की आवश्यकता पर बल देते हुए फरमा कि "आजके अशान्त युग के लिये शान्ति प्राप्त करने का अभय मार्ग ईश्वर प्रार्थना ही है। साथ ही आपने अहिंसा धर्म को भी जीवन के लिये आवश्यक बताया।" ॐ शान्ति की प्रार्थना में लीलवा के

ठाकुर साहबश्री रणजीतसिंहजी भी सपरिवार पधारे। लीलवा की सारी जनता भी व्याख्यान सुनने आई साथ ही तोसलिया, नानसभाई, चनासे, राजपूतनी रणीयार आदि आस पास के गांवों से बडो संख्या में लोग आये। सर्व जनता व्याख्यान सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुई। इस प्रसंग पर आसपास के सर्वगांववासी को शान्ति प्रार्थना की सूचना देकर बुलाने की लीमडी निवासी प्यारचन्दजी चोपड़ाने बड़ी मेहनत की और सारी व्यवस्था की पूज्यश्री का अहिंसामय उपदेश सुन कर दीता, हीरा, वेलजी, रंगजी, मीठिया, विचियो, वीरो आदि भीलों ने आजीवन दारु पीना मांस भक्षण एवं जीवहिंसा का परित्याग किया।

कुंभारजातिवालोंने इग्यारस, अमावस को अम्बाडा नहीं लगाने का तथा उस रोज अपना धन्दा बन्द रखने का वचन दिया। इस प्रकार महत् उपकार हुआ। सायंकाल के समय पूज्यश्री अपनी शिष्यमण्डली के साथ लीमडी पधारे। लीमडी में भी सुबह रणीयार की जनता पूज्यश्री के व्याख्यान श्रवन के लिये प्रतिदिन आया करती थी। पूज्यश्री के यहां चातुर्मास से लीमडी और आस पास के गांव में अपूर्व प्रेम एवं धर्म की अपूर्व श्रद्धा जागृत हुई

लीमडी का अपूर्व पर्यूषण पर्व

पर्यूषण पर्व पर बाहर से बांसवाडा, कुशलगढ थान्दला, झाबुवा, दादोह, झालोद संजेली लीमखेडा धार किलनगढ़ राजगढ रतलाम इन्दोर आदि शहरों के सैकड़ों श्रावक श्राविकाएँ पूज्यश्री के दर्शनार्थ आए पर्यूषण के व्याख्यान में प्रारंभ में पं.मुनिश्रीकन्हैयालालजी मा.वैराग्यमय वाणी से अन्तगढ सूत्र फरमाते थे बादमें पूज्यश्री अपनी अमोघवाणी से जनता को उपदेश फरमाते थे। पूज्यश्री के प्रभावशाली प्रवचन को जनता मन्त्रमुग्ध होकर श्रवण करती थी। दुपहर में भी पं.रत्नमुनिश्रीकन्हैयालालजीम. अनुतोववाई तथा जम्बूचरित्र फरमाते थे। दुपहर के समय भी जनता खूब ही इकठी होती थी। पूज्यश्री का इस क्षेत्र में चातुर्मास होने से इस मांगल्यकारी पजुषण पर्व में तपस्या और धर्म ध्यान की बाढ आगई थी। बेले तेले से लगा कर नौ तक की तपस्या एवम् आयंबिल बड़ी मात्रा में हुए। पजूषण के आठोंही दिनों में लीमडी श्री संघ ने तथा आस पास के गांव वालों ने एवम् स्थानीय श्रावकों ने अलग अलग रूप से प्रभावनाकी। संवत्सरी के दिन पूज्य श्री ने क्षमा धर्म पर प्रभावशाली प्रवचन दिया तथा संवत्सरी पर्व की विशेषता बताई। आपके प्रवचन से प्रभावित होकर ओंकारलालजी कोठारीजी ने सपत्नीक शीलव्रत ग्रहण किया। दुपहर को आलोयणा का वांचन हुआ। सायंकाल के समय प्रतिक्रमण कर समस्त जीवायोनी से क्षमा याचना की। यह दृश्य बड़ा अपूर्व था। संवत्सरी के पारनें के दिन लीमखेडा निवासी जोरावरसिंहजी सूरजमलजी नाहरने अपने अठाई तप के उपलक्ष में समस्त श्रीसंघ को प्रति भोजन कराया।

८७ दिनकी तपश्चार्या का पूर:—

तपस्वीश्री मदनलालजी महाराज की तपश्चर्या ने लीमड़ी और आसपास के क्षेत्रों में अपूर्व उत्साह बढाया। चारों ओर से तपस्वीजी की तपस्या की पूर्ति का अंतिम दिवस कब होगा इस प्रकार की पूछ परछ करने वाले पत्र स्थानिय श्रीसंघ के नाम पर आने लगे। स्थानीय श्रीसंघ भी तपश्चर्या का पूर खूलवाने के लिये लालायित वन रहा था। पूज्यश्री व. तपस्वीजी श्री से अर्ज कर श्रीसंघ ने भाद्रपद शुक्ला १४ गुरुवार ता० ४ ९-४१ को पूर खुलवाया। फिर स्थान स्थान पर उपकार और जीवदया के लिये पत्रिका छपवा कर देश विदेश में भेजी। फिर स्थानीय श्रीसंघका डेंप्युटेशन झाबुवा गया। खवासा दरबार, कुशलगढ महाराजकुंमार दाहोद मामलतदार साहब लीमडी ठाकुर साहब वोलवानी तथा लीलवा के ठाकुरसाहब वकिल साहब श्री रामचन्द्रजी पाण्डे के पास गया और ता० ३-९-४१ अपने अपने जिले में अगता रखवा कर ॐ शान्ति की प्रार्थना करने व कराने की तथा उस दिन व्याख्यान में पधारने की अर्ज की। जिसको सभी महाशयोंने सहर्ष स्वीकार

की। तदनुसार श्रीमान् झालोद माहलकारी साहबने अपने तालुके में ता० ३१–८–४१ भादवा सुदि १० के दिन अगता पालकर ॐ शान्ति की प्रार्थना के लिये सर्व जनता को विज्ञप्ति पत्र द्वारा निवेदन किया।

लीमडी में शान्ति प्रार्थना

भादवा सुदी १० ता० ३१–८–४१ के दिन जगतभर की शान्ति के लिये अपनी व प्राणिमात्र की शान्ति के लिये अहिंसा के साथ शान्ति दिवस मनाया गया। उसरोज लीमडी का सर्व व्यापार बन्द रहा। चक्की खेती बाड़ी का सर्व धन्धा बन्द रखा गया। ठाकुर साहब श्री दीपसिंहजी साहब ने अपने हुक्म से कतलखाना बन्द करवाया, होटले बन्द रखी गई यानी सर्व आरंभकार्य बन्द रखे गये। दुपहर को ११ बजे उपाश्रय से भव्य सरघस निकाला गया। सरघस आमरास्ते व बजार में होता हुआ वापिस उपाश्रय के भव्य मण्डप में आया जहां सभा के आकार में बदल गया। जनता अपने अपने स्थान पर बैठ गई। पहले स्थानीय छात्रों की प्रार्थना हुई। लघुमुनियों के प्रारंभिक प्रवचन के बाद पूज्यश्री ने अपना प्रवचन प्रारंभ किया। प्रवचन में आपने उपस्थित विशाल जन समूह को सम्बोधित करते हुए कहा—

"आजका सारा विश्व भौतिकता की ओर बढता जा रहा है। इसकी अध्यात्मिक दिनोदिन शक्ति क्षीण होती जा रही है। मानव विलासी बनता जा रहा है। यही कारण है कि आज विश्व में सर्वत्र दुःख ही दुःख दृष्टिगोचर हो रहा है कहीं भी शान्ति नहीं है। मानव आजके इस अशान्त वातावरण से संत्रस्त है। उसे अगर सच्ची शान्ति प्राप्त करनी होतो वह ईश्वर प्रार्थना से ही प्राप्त कर सकता है। इस कनीष्ठ समय में हमारा आश्रय स्थल है तो एक ही ॐ शान्ति का जाप जब जब किसी पर संकट दिखाई दे तो उन्हें प्रभु भजन करना चाहिये। ईश्वर स्मरण से आत्मा को अवश्य अद्भूत शान्ति प्राप्त होती है। प्रभुस्मरण से सुदर्शन की शूली उसके लिये सिंहासन बनगई। चित्तौड़की महाराणी मीरा के लिये जहर के प्याले भी अमृत बनगये। अप्राप्यवस्तु भी ईश्वर प्रार्थना से प्राप्य हो जाती है। हमारा भारत वर्ष प्राचीन समय में नामस्मरण में बहुत आगे था। आज का भारतवासी अपनी इस पवित्र परम्परा को विलासिता की चकाचौंध में भूलगया। आज फिरभी अगर हम उस पुराने भारत का अनुकरण करें तो वह शान्ति का समय हमारे लिये दूर नही हैं। भारत परतन्त्रता की ओर में जिस दुःख का अनुभव कर रहा है उसका कारण भी यही है। विदुर सुल्सा की तरह भारतवासियों के हृदय में ईश्वर प्रेम जाग्रत हो जाएँ तो वह परतन्त्रा की बेड़ी से आज भी मुक्त हो सकता है। आप सब मिलकर जगत की शान्ति के लिये ईश्वर से प्रार्थना करेंगे तो शासनदेव जरूर हमारी सहायता करेगा। इस प्रकार दो घन्टे तक पूज्यश्री का धारा प्रवाह प्रवचन होता रहा। आजकी इस शान्ति प्रार्थना में सम्मिलित होने के लिये गांव के तथा बाहर गांव के करिब चार पांच हजार मानव समूह एकत्र हो गया था। ईस प्रार्थना में लीमडी के ठाकुरसाहब व कुंवर साहब तथा विलवाणी के ठाकुर सा० और झालोद के फौजदार साहब एवं मालकारी साहब भी पधारे थे। गांव के किसान भील आदि भी हजारों की संख्या में उपस्थित थे। इसप्रकार शान्ति प्रार्थना बड़ी भव्यता के साथ सम्पन्न हुई शांति प्रार्थना के। दिन से ही जनता उमड उमड कर आने लगी स्थानीय वालियन्टर नित्य लिमडी से दाहोद स्टेशन पर आगन्तुक मेहमानों का स्वागत करने को जाते थे। यहाँ पर भी मोटरस्टेन्ड पर वालीयन्टर खडे मिलते थे। नित्यमेव, लोकलट्रेन फास्ट ट्रेन से दर्शनार्थी बड़ी संख्या में उतरते थे। उतरने वाले मेहमान समय पर लिमडी पहुंच जाय इस खातिर सर्विस के प्रेसिडेन्ट साहब को कहकर खास चार मोटरों का बन्दोवस्त कराया था। मगर ईतने नित्य दर्शनार्थी उतरते थे कि एका एक मोटर को चार चार चक्कर करने परते थे। दाहोद से भरी हुई मोटरे ज्यों ही लीमडी उपाश्रय के पास पहुँचती त्योंही उनका स्वागत के लिये स्थानीय संघ तैयार मिलता था। इस प्रकार मेवाड, उदयपुर, मारवाड, गोधरा मोरबी, सैलाना झाबुआ थांलदा पटलावाद धार गौतम

पुरा संजेली कुशलगढ दाहोद बांसवाडा आदि गांवों से अनेक श्रावक श्राविकाएँ दर्शन के लिये प्रतिदिन आते थे। पास के गांव के प्रति दिन हजारों की संख्या में किसान, भील आदि व्याख्यान श्रवन के लिये आते रहते थे। इस अपार मानव मेदनी को देखकर गोधरा पुलिस सुप्रिटेन्ड साहब ने स्थानिक पुलिस पर व फौजदार साहब को रोजाना रात दिन दर्शनार्थियं। की बदमाशों से सुरक्षा के लिए पोलिस का बन्दोवस्त करना पडा। सर्वत्र पुलिस को यात्रियों की सुरक्षा के लिए सावधान कर दिया और उन्हें ड्युटि पर तेनात कर दिया गया। इस प्रकार नदी की बाढ की तरह दर्शन के लिए आई हुई मानव मेदनो का स्वागत करने के लिये रात दिन सर्व चातुर्मास कमेटीयाँ अपने अपने कार्य में लगी रहती थी। मेघदेव की भी पूर्ण कृपा दृष्टि थी। कारण कि बादलों ने अपना जमाव शान्ति प्रार्थना के दिन से ही कर रखा था। उसी रोज रात को जोर से बारिष हुई जिससे स्थानीय श्रीसंघ के हृदय में डर बना रहता था कि जोर से वर्षा हुई तो कहीं मेहमानो को तकलीफ न हो जाय। मगर जहाँ तक दर्शनार्थी 'लिमडी में रहे वहाँ तक नित्य बादलों का जमाव भी रहता था। एक एक फरलांग की दूरी पर वर्षा भी होती थी मगर गांव में मनुष्यों को अडचन पैदा हो ऐसी वर्षा न हुई। मानो इतनी मानव मेदनी को आती देख मेघदेव भी इस उत्सव में सम्मलित होने के लिए उत्सुक दृष्ठि गोचर हो रहा था। तथा आगन्तुक दर्शनार्थियों को धूप से बचाने के लिए अपना विशाल छत्र खोल दिया हो कहने का तात्पर्य यह है कि इस पुनित प्रसंग को सफल बनाने के सर्वत्र सफल प्रयत्न हो रहे थे।

इस धार्मिक प्रसंग पर सम्मलित होने के लिए भी हिन्दवाकुल सूर्य महाराणा साहेब आर्यकुलकमल दिवाकर बहादुर मेवाडाधीश ने अपनी तरफ से मर्जीदान श्रीमान् दरोगाजो साहब श्री कनैयालालजी चौवीसाजी और भैरुलालजी चौवीसाजी को पूज्यश्री एवं तपस्वी मुनि के दर्शनार्थ भेजे गये। इस अवसर पर श्रीमान् खवासा महाराज साहब श्री दिल्लोपसिंहजी साहब ऑफ झाबुवा स्टेट कौन्सिल प्रसिडेन्ट साहब भी पधारे हुवे थे। आपको आमन्त्रण देने के लिये यहाँ से श्रीमान श्रीचन्दजी चोपडाजी ने खवासा दरबार को यहाँ पधारने के लिये तैयारकर टेलीग्राम द्वारा श्रीसंघ को खबर दी कि आज ता० ३-९-४१ को सायंकाल ४ बजे के फास्ट से दाहोद स्टेशन पर उतरेंगे अस्तु लीमडी ठाकुरसाहब ने तथा स्थानिक संघ ने स्वागत की तैयारियाँ की। श्रीमान कुशलगढ महाराजकुमार साहब श्री भारतसिंहजी साहब भी उसी रोज पधारे।

आप दोनों साहिबानों के स्वागत के लिये स्थानिक सकल संघ आये हुवे व महेमानों के साथ दाहोद रोड पर उपस्थित हुआ। एक मीलतक जनसमूह ही जन समूह दिखाई देता था। सर्व जनता उत्सुकता के साथ आती हुई मोटरों को ध्यान से देखती थी कारण की अन्य महमानों को लाने के लिए मोटरे दौड धूप कर रही थी। इधर ठीक ४ बजे के फास्ट से खवासा दरबार दाहोद स्टेशन पर उतरे जहाँ दाहोद तथा लीमडी के अग्रेसरों ने तथा वालीयन्टरोंने स्वागत किया। श्रीमान् महाराजा साहब दिन को एकही समय एक ही स्थान पर भोजन पानी ग्रहण करते हैं। जिससे दाहोद निवासी वकिल सा० श्री रामचन्द्रजी पाण्डेय ने अपने यहाँ उनकी व्यवस्था की। इस कारण लींमडी आने में दरबार को देर हुई तथापि जनता ज्यों की त्यों स्वागत के लिए खडी ही रही

रात को आठ बजे महाराजा साहब की मोटर भूं भूं आवाज करतो आकर खडी हुई। श्री लीमडी ठाकुरसाहब के कुंवरसाहब ने तथा श्रीसंघ ने स्वागत किया। श्री महाराजा व कुशलगढ राजकुमार को हार तोरा पहनाये। फिर सरघस आकार में दोनों साहिबान को लेकर जयध्वनि के साथ उपाश्रय की ओर प्रयाण किया। लीमडी की जनता ने स्थान स्थान पर महाराजा का स्वागत किया गया था। मेदनी खूब ही उलट पडी। केप्टन साहब ने वालीयन्टरों की कतार बान्ध दी। आगे आगे महाराजा व महाराज कुमार चलते थे पीछे पीछे

मेघ की भाति सारा जन समूह आ रहा था । बीच बीच में ग्यास के हण्डे प्रकाशमयअपने माथे पर लिये हुए मजूर लोग चल रहे । आखरी महाराजा पूज्य आचार्य महाराज श्री व तपस्वी श्री के दर्शनार्थ उपाश्रय के भव्य मण्डप में आये । मण्डप सारा मानव समूह से भर गया । यहाँ तक की स्थानाभाव के कारण जनता मण्डप के बाहर भी चारों ओर सैकडों की संख्या में खडी थी । जनता की बडी भारी भीड होने से बडा शोरगुल मच रहा था । स्वयंसेवक ध्वनि विस्तार से लोगों को शान्त कर रहे थे । दरबार पूज्यश्रीका अभिवादन कर पूज्यश्री के सामने बैठ गये ओर वार्तालाप करने लगे । करीब एक घंटे तक पूज्यश्री के साथ दरबार ने वार्तालाप किया । दरबार ने पूज्यश्री से कहा आपतो साक्षात् भगवान की मूर्ति हो । आप के प्रेमने मुझे यहाँ तक खींच लाया । पूज्यश्री के साथ और भी धार्मिक विषय पर विविध प्रश्नोत्तर कर उनका पूज्यश्री से उत्तर सुना । वार्तालाप के बाद दरबार ने बडा सन्तोष व्यक्त किया । पूज्यश्री को अभिवादन कर दरबार ठाकुर साहब के महल में पधार गये । इस अवसर पर दाहोद मामलतदार साहब श्री नौतमलाल सोमेश्वर ठक्कर आये आपने दाहोद तालूके में ता० ३-९-४१ को अगता याने पाखी पालने के लिये अपने नाम से विज्ञापन पत्र निकालकर तलाटीयों द्वारा स्थान स्थान पर आवेदन पत्र भेजे ।

श्रीमान् झालोद माहालकरी साहब श्री रामप्रसादजी चन्दुलालजी बंशी पधारे । आपने भी ता० ३१-८-४१ को झालोद तालुके में अगता यानी पाखी पालने की विज्ञप्ति निकाली थी । श्रीमान लीमडी ठाकुर साहब श्री दीलीपसिंहजी साहबने ता० ३१-८-४१ की शान्ति प्रार्थना में पूर्ण सहयोग दिया आगन्तुक महमानों के लिये आवश्यक चीजों को सहर्ष लेजाने के लिये आज्ञा दी थी ।

श्रीमान बिलवाणी गोलाणा ठाकुर साहब श्री शंभुसिंहजी साहब भी पधारे । आपने अपनी रियासत में ता० ३-८-४१ को हुक्म द्वारा अगता पलाकर यहाँ के संघ को हर प्रकार की मदद दी । उपरोक्त महानुभावों के अलावा निम्न सद्गृहस्थ अधिकारी वर्ग आया जिनके उल्लेखनीय नाम ये हैं— । श्री पोलिस इन्स्पेक्टर साहब झालोद, अहवलकारकून जीवनलालभाई झालोद, दाहोद तथा झालोद तालुके के सर्वेयर साहब जनरल एकाउन्टर श्रीमानकचन्दजी राठोड झाबुआ, श्री रामचन्दजी दयाशंकर पंडया वकील, कतवारा गांव के नायक मानसिंहजी देवीसिंहजी और आस पास के गांव के छोटे छोटे जागीरदार भी दर्शन के लिये उपस्थित हुए ।

तपश्चर्या का पूर्ति दिवस—

इस प्रकार राज्य कर्मचारी गण एवं श्रावक श्राविकाएं तथा आस पास के गावों से आये हुए खेडूत वर्ग से लीमडी की अपूर्व शोभा दिखाई देती थी । जहां देखो वहां मनुष्यों के झुंड के झुंड दिखाइ देते थे । कोई भी गली और मकान नजर नहीं आता था कि जहां बाहर के आये हुए मनुष्य दिखाइ नहीं देते हों । अस्तु इस प्रकार जन समूह से लीमडी चिकार भर गई थी ।

भादवासुद १४ ता० ४-९-४१ के दिन सुबह से नरनारियों से उपाश्रय, गेलरी, हाल, मण्डप चारों मकानों के तिबारे वो जाहिर मार्ग आम जनताओं से खचाखच भर गया । चारों तरफ दिखाइ दे एसी जगह पूज्यश्री व अन्य मुनियों को बिराजने के लिये तख्ते लगाये गये । अधिकारियों को बैठने के लिए अलग व्यवस्था की गई । स्वयंसेवक गण व्यवस्था रखने के लिये तन मन से जुट गया था । सर्व सभासदों के लिये बिछोने बिछाये गये । विशेष छाया के लिये व्यवस्था की गई यानी सर्व प्रकार की सुन्दर व्यवस्था रखी गई । ठीक आठ बजे व्याख्यान शुरू हुआ । पहले छोटे सन्तोंने मांगलिक प्रवचन किया । तत्पश्चाद् पूज्य श्री ने लाक्षणिक शैली से अपनी अमृतमयी वाणी द्वारा आई हुई अपार मेदनी के हृदय को पवित्र किया । पूज्य श्री ने उपस्थित विशाल जन समूह को सम्बोधित करते हुए फरमाया—" संसार में

मनुष्यों के लिये धर्म ही आधार भूत है। बिना धर्म के कोई भी प्राणी न तो मुख पाया है और न पायेगा। आज इतिहास बोल रहा है। इस धर्म के लिये बडे बडे नरवीरों ने अपने प्राण न्योछावर करदिये हैं। धर्म को धारण करना सहज बात नहीं है। तथापि छोटे छोटे बालक से लेकर बडे बडे चक्रवर्ती महाराजा भी इस धर्म को अपना सकते हैं। धर्म में जाति भेद नहीं है। कारण कि "कर्मण्येवाधिकारस्ते–अथवा "कम्मुणा बम्भणो होइ कम्मुणा होइ खत्तियो" के अनुसार सर्व प्राणिमात्र का धर्म में अधिकार है। धर्म चार प्रकार का कहा गया है। दान, शील, तप और भावना इन चार प्रकार के धर्माचरण से आत्मा मोक्ष मार्ग की ओर प्रवृत्त होता है। ये हि आत्मा के गुण हैं। जब ये गुण आत्मा में प्रगट हो जाते हैं तो उन महान आत्मा को देव भी नमन करते हैं। एसे आत्मवान पुरुषों की संकटावस्था में देव भी आकर सेवा करते हैं। सति सीता के अग्नि कुण्ड का पानी होना, सति चन्दनबाला को विकट समय में मदद प्राप्त होना। सुदर्शन सेठेको शूली का सिंहासन बनना। हरिश्चन्द्र महाराजा को स्मशान में आनन्द प्राप्त होना आदि अनेक पुरुषों को समय समय पर दैवीक मदद मिली थी। इस दैविक मदद को वे ही प्राणी प्राप्त कर सकते हैं जो धर्म के लिए अपना सर्वस्व अर्पण करते हैं। इस कारण प्रत्येक मनुष्यों को धर्माचरण करना ही चाहिये। आज आप सर्व महानुभाव यहाँ तस्वीजी के दर्शन के लिये आये हो। अस्तु यहाँ आकर एकने एक जरूर प्रतिज्ञा करना चाहिए कारण की इस समय ऐसे तपोत्सव पर की गई प्रतिज्ञा अवश्य ही हमें अपने संकटों से मुक्ति पाने में सहायता करती है।': पूज्यश्री के मार्मीक प्रवचन के पश्चात् मास्टर श्रीशोभालालजी मेहता उदयपुर, मास्टर देवेन्द्रकुमारजी कुशलगढ बाबू, राजमलजी मेहता कुशलगढ के सामुहिक प्रवचन हुए। तत्पश्चात् तपस्वीजी श्रीमदनलालजी महाराज साहेब एवं तपस्वी मांगीलालजी महाराज ने मण्डप में पधार कर सारी परिषद को दर्शन दिये। बाद में पृथ्वीराजजी नाहटा और नवलमलजी श्रीमाल ने सपत्नीक शीलव्रत ग्रहण किया। बाद में जयध्वनी के साथ सभा विसर्जित होगई। व्याख्यान के अन्त में प्रभावना दी गई।

आज सारे दिन भील के टोले के टोले लम्बी दूर से दर्शन के लिये आते थे। सर्व मनुष्यों ने दर्शन कर खूब ही सन्तोष प्रगट किया। तथा दारु, मांस भक्षण जीवहिंसा, ग्यारस अमावस्या के दिन खेती न करना आदि की प्रतिज्ञा ग्रहण की। करीब तीन चार हजार किसान व आदिवासी भीलों ने पूज्यश्री के दर्शन कर विविध त्याग प्रत्याख्यान किये। दर्शनार्थी भीलों को खाने के लिये भुने हुए चने दिये गये। इस प्रकार बडे भारी समारोह के साथ तपस्वी मुनिश्री मदनलालजी महाराज की तपश्चर्या का अन्तिम दिवस मनाया गया। इस अवसरपर स्थानीय श्रावकों कि तरफ से दर्शनार्थियों के लिये भोजन प्रबन्ध बडा सराहनीय रहा।

गुरुदेव का चमत्कार

तपस्वीजी के पारने दिन ता० ५–९–४१ को करवारा निवासी श्रीमान् सेठ नानालालजी राजमलजी बूंड ने बाहर के दर्शार्थियों के लिये भोजन का प्रबन्ध किया। भोजन करीब तीन चार हजार आदमियों के लिये ही बनाया गया था। किन्तु गुरुदेव के चमत्कार पूर्ण प्रभाव से दर्शनार्थियों ने दोनों समय भोजन किया फिर भी सामग्री उतनी ही उतनी नजर आई तो गांव के मोढ वणिक जाती को भोजन के लिए निमंत्रित किया। वह ज्ञाति भी जीमकर चली गई किन्तु भोजन सामग्री उतनी ही दिखाई दी तब गांव के लुहार, सुनार माली दरजी, तेली, कुम्हार आदि समस्त ज्ञाति को बुलाकर उन्हें जिमाया गया। सारे गाव वालों ने भोजन कर बडी तृप्ति का अनुभव किया। गुरुदेव की इस चमत्कार पूर्ण प्रभाव से सारा गांव आश्चर्य चकित हो गया।

इस अवसर पर बाहर गांव के आये हुए पत्र तथा उपकार वर्णन इस प्रकार है–

कुंवरजी गेंदालालजी । श्री स्था. जैन संघ । लीमडी (पंचमहाल) आपकी पत्रिका प्राप्त हुई । पूज्य-श्री तथा तपस्वीजो महाराज को नमस्कार कहें । तपस्वीजी महाराज की तपस्या के प्रति हार्दिक अभि· नन्दन । आपका जमशेद नशरवानजी मु० कराची

कुंवरजी गेंदालालजी

पूज्य महाराज साहब श्रीघासीलालजी महाराज व तपस्वीजी महाराज साहब की सेवा में दासानुदास जीवनसिंह मेहता उदयपुर निवासी की वन्दनां अर्ज करें। जाहिर सन्देश व जीवदया का विराट अयोजन को पत्रिका पहुंची । पढकर बहुत खुसी हुई । कोटान्नुं कोटी धन्यवाद है कि ऐसे महानुभावों महात्माओं के वहाँ बिराजनें सै जीवदया का अपूर्व उपकार हुआ और हो रहा है । हम कारनवश सेवामें उपस्थित न होसके जिसके लिये दिलगीर हैं । दोनों बाबू की वन्दना अर्ज करें और चातुर्मास बाद मेवाड देश में पधारने की अर्ज करें । आपका जीवनसिंह मेहता उदयपुर

इस अवसर पर चिटनीस प्राणशंकर दवे मु०खेडा, रेल्वे सुप्रीटेन्डेट चन्द्रसिंहजी मेहता उदयपुर' मणीलाल सुन्दरजीदेसाई कलकत्ता, नागोर से मूलचन्दजी व्यास, सीतामउ श्रीसंघ, शाहपुरा मेवाड से मनोहरसिंहजी चंडाल्या, उदयपुर से केशरीमलजी छगनलालजी संघवी, बोदवड से छगनमलजी दानमलजी, भादरण से श्री संघ, हुरडा से घूलचन्दजी वैद्य, इन्दौर से छोगालालजी पोखरना, लासलगांव से मास्टर रतनलालजी सुणोत, कराची से पोपटलाल प्राणजीवनशाह, उदयपुर से जीवनसिंहजी भण्डारी, रतनलालजी तलेसरा, कामलीघाट से सीरिलालजी अग्रवाल, जयपुर से मणिलालजी संकलेचा, अहमदाबाद से भोगीलाल छगनलाल शाह, रतलाम से सेठश्री माणकचंदजी छाजेड, हैदराबाद सिन्ध से सेठ विसना डी. डास्वानी, ठेकेदार टिकाराम जोसी आदि महानुभावोंने तपश्चर्या के शुभ अवसर पर अभिनन्दन भेज कर अपनी हार्दिक भक्ति भाव का परिचय दिया । इस अव सर पर बाहर गावों में भी अच्छा उपकार हुआ जिसका किंचित् मात्र दिग्दर्शन निम्न पत्रों से करवाते हैं ।
कोटरी बन्दर—श्री जैनाचार्य जेनधर्म दिवाकर पूज्य श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज साहब ठाना ५ व श्री स्थानकवासी श्रीसंघ समस्त की सेवामें लिंमडी ।

सिद्ध श्री कोटडी बन्दर से लिखी सेठ ठाकरसी रामजी का सादर जयजिनेन्द्र बंचना । वि० लिखना है कि तपस्वीजी श्री मदनलालजी महाराज का ८७ उपवास का महान तपोव्रत का पूर आज भाद्रशुक्ला १४ गुरुवार ता० ४–९–४१ को पाखी रख कर यथा शक्ति धर्मध्यान किया गया । और सिन्धुनदी में होती जीवहिंसा को बन्द करने का प्रबन्ध पूर्ण बन्दोवस्त रखकर के किया गया । यथा शक्ति खर्च करकें मच्छी. मारों को रोजी देकर वेठा दिया था । आपकी आज्ञानुसार धर्मध्यान खब अच्छा किया गया । आपके दर्शन के लिये हमलोग नहीं आसके जिसके लिये क्षमा याचना । आपका ठाकरसी रामजी का जयजिनेन्द्र

लिखी हुई कलमों के अनुसार भादवा सुद १४ ता० ४–९–४१ के दिन हमारे गांव के ठाकुर साहब की तरफ से कचहरियों को बन्द रखी गई व कसाईयों औ दुकाने बन्द रखी हमने व्यापार बन्द रखा धर्मध्यान खूब किया और कराया । सो आपको ज्ञात रहे । महाराज श्री को वन्दना आपका स्थानक वासी जेन संघ शिवगढ (मालवा)

लीलवा १४–९–४१

आपना तरफ थी तपस्वी श्री मदनलालजी महाराज नी तपस्यानी पत्रिका मळी पत्रिकामां लख्या मुजब तारीख ३–९–४१ ना दिवसे अगता पालवा मां आव्या । अमारावती पूज्यश्री घासीलालजी महाराजने वन्दना कहेशो अने पूज्य महाराज साहब ने अरज करशो के मारु गांव पण लिमडी थी वे माइलज छे माटे चातुर्मास मां एक दिवस अहिंया पधारी शान्ति प्रार्थना कराववी अने व्याख्याननुं लाभ आपशो एज ।

ठाकोर रणजितसिंह केशरीसिंह लिलवा

संजेली २३-९-४१ आपने त्या बिराजमान जैनमुनि पूज्यश्री १००८ श्रीघासीलालजी महाराज अने तपस्वीजी महाराज ने अमारा प्रणाम कहेशो। आपना तरफ थी तपस्यानी पत्रिका मळी हती। आपना लख्या प्रमाणे भादवा सुदि १३ता० ३-९-४१ ना रोज संजेली तथा रियासत मां पाखी पालनामां आवी अने ईश्वर प्रार्थना करी। ॐ शान्ति दिन मनावामां आव्यु ते आप जाणशोजी। हवे हमारा वती पूज्य महाराज सा. ने अर्ज करशों के चौमासा पछी फरीथी अमने दर्शन आपवा संजेली पधारें। आपनो सनतकुमार मेनेजर संजेली

लसानी (मेवाड)

पत्र आपका मिला। आपके वहां बिराजमान पूज्यश्री घासीलालजी महाराज साहब ठाना ५. की सेवामें ठाकुरसाहब श्री खुमानसिंहजी साहब की व मेरी तरफ से बन्दना अर्ज करें। और अर्ज करे कि तपस्वीजी श्री मदनलालजी महाराज साहब के ८७ दिन की तपस्या के पूर की खुशी में भादवा सुदि १३-१४-ता० ३-९-४१ के दिन ठाकुर साहब श्रीने अगता पलाना स्वीकार किया है। उसीके अनुसार पट्टे के सर्व गांवोंमें सेहनेलोगों के मारफत सहोरत कराके अगता पलाया गया है। यह अरज पूज्य महाराजसाहब से करदें कि आपके फरमान माफिक तामिल करा दी गई है। संवत१९९८ भादवा सुदी १५ मोतीलाल सुराणा का ठि० लसानी मेवाड

इस पूनीत अवसर पर कतवारा जागीरदार साहब ने तपस्वी महाराजश्री के पूर के दिन जाहिर किया था कि मैं दशहरा पर जो एक बकरा मारा जाता था वह सदा के लिये मारनाबन्द करता हूँ। इस प्रकार जागीरदार साहब ने जीवदया के कार्य में उत्साह के साथ सहयोग दिया।

तपस्वी श्रीमांगीलालजी महाराज

दूसरे तपस्वीश्री मांगीलालजी महाराजने २१ दिन का पारना कर पुनः श्रावण शुक्ला १३ से तपश्चर्या शुरू की आपके त्रेसठ उपवास का पूर आसोज शुक्ला १ सोमवार ता० २२-९-४१ को हुआ। पूरके दिन कसाईयोंने सहर्ष कतलखाने बन्द रखे। भट्टियें बन्द रखी। व्यापारियों ने अपना व्यापार बन्द रखा तथा सावद्य कार्य बन्द रहे। उपवास पौषध दया सामायिकें तथा आयंबिल ऐवं अन्य त्याग प्रत्याख्यान विपुलमात्रा में हुए।

लीलवा में शान्ति प्रार्थना

श्रीमान ठाकुरसाहब श्री रणजितसिंहजी साहब ने पूज्यआचार्य श्री से अर्ज कि के एक रोज लीलवा गांव पधारकर शान्ति प्रार्थना करवावें। तदनुसार ता० २३-९-४१ के दिन शान्ति प्रार्थना के लिये लीलवा गांव के ठाकुर साहब नें तैयारी शुरू करदी। पत्रिकाएँ छपवाकर लीमडी, लीलवा, रणीयार नानसलाई, मुंडासेडो, झालोद, दाहोद, आदिगांवों में भेजी, उक्त तारीख के दिन पूज्यश्री लीमडी से लीलवा पधारे। लीमडी श्रीसंघ तथा आसपास के तमाम गावों से खेडूतवर्ग, एवं भील समूह बडी संख्या में आये। व्याख्यान स्थल ध्वजा पताका से सणगारित किया गया। तथा व्याख्यान श्रवण करने वालों के लिये विशाल पण्डाल बनाया गया। सर्व आसपास के सभी गावों के हजारों नरनारियों के एकत्रित होने पर व्याख्यान शुरू किया। पहले छोटे मुनिवरों ने प्रासंगिक प्रवचन किया। बाद में पूज्यश्रीने अपनी गम्भीर वाणी से उपस्थित श्रोतावर्ग को सामूहिक शान्ति प्रार्थना का महत्व समझाया-पूज्यश्री ने अपने वक्तव्य में फरमाया कि "सर्व प्राणियों का शरणभूत एकमात्र परमात्मा ही है। ईश्वर स्मरण से आत्मिक लाभ के साथ साथ एहिक लाभ की भी प्राप्ति होती है। पूज्यश्री ने आगे कहा-यहां पहले जब मैं आया था तब इसी तालाव के किनारें शान्ति प्रार्थना हुई थी। उस समय सूखा था किन्तु इस समय तालाव पानी से भर गया है। सर्वत्र हरियाली ही हरियाली

छाई हुई है। मुझे मालूम हुआ है कि अन्य प्रान्तों से पंचमहाल प्रान्त सुखी है समृद्ध है। यह भी एक ईश्वर प्रार्थना व धार्मिक लगन का ही सुफल है–पूज्यश्री के इस व्याख्य का ठाकुर साहब एवं उपस्थित सभासदोंने हां कहकर अनुमोदन किया और कहा कि आपका कथन सोलह आना सत्य है।

हमारे यहाँ धर्म व गुरु के प्रसाद से आनन्द है। पूज्यश्री ने अपने प्रवचन में अहिंसा पर भी पूरा बल दिया और दारू मांस जीवहिंसा जैसे घृणित कार्य न करने की जनता से अपील की। पूज्यश्री के गम्भीर प्रवचन से प्रभावित होकर सैकडों भीलों ने जीवहिंसा, दारु, मांस का परित्याग किया। व्याख्यान के बाद ठाकुर साहब की तरफ से प्रभावना दी गई। इस शान्ति प्रार्थना पर आये हुए महेमानों को चाय पानी का बन्दोवस्त किया। तथा बाकी सारा खर्च ठाकुर साहबने अपनी ओर से किया। आपकी तरफ से इस समय इस अवसर पर आये हुए सैकडों भीलों को चने और गुड दिया गया। इस प्रकार बडे प्रभावशाली ढंग से शान्ति प्रार्थना दिन मनाया गया।

दशहरे पर जीवदया का प्रचार

दशहरा पर कुरूढी के अनुसार चारों ओर हिंसा का बवण्डर उठता है इस हिंसा के भयकर तुफान में हजारों असहाय प्राणीयों की आहुति संसार को संकटमयी बनाने के लिये दी जाती है। न जाने वह घातक रिवाज कब से और किस अज्ञान ने प्रचलित किया। अफसोस है कि ऐसे अनार्य कार्यों में भान भूलकर आर्यावर्त निवासी ऐसे समय में अपना धर्म कर्म सब भूल जाते हैं। और अपने हाथों से अपने प्यारे धर्म को तिलांजली देते हैं। ऐसे पुरुष महा दयनीय अवस्था को प्राप्त हो जाते हैं। उपरोक्त विघातक प्रथा को नाबूद करने के लिए भारत प्रसिद्ध स्व०परमशांत तपोधनी महानतपस्वी योगिराज श्री सुन्दरलालजी महाराज की स्मृति में बनी हुई आदर्श संस्था श्री मुम्बई जीवदयामण्डली' भी भरसक प्रयत्न कर रही हैं। इस अनुसार श्री गजानन्द कुलकर्णी बम्बई के सेठ चतुर्भुजजी, डाह्याभाई, नाथाभाई, कुसुमकान्त,जैन आदि ने दशहरा पर होती हुई हिंसा को रोकने के लिये पंचमहाल प्रान्त में खूब हि प्रयन्न किया। जिला मजिस्ट्रेट सा. भडूच पंचमहाल ने भी इसकार्य में पूर्ण सहयोग दिया। वीरपुत्र समीरमुनि व पं. श्री कन्हैयालालजी महाराज ने भी आस पास के गांवों में २ घूम घूम कर हिंसा को रोकने का आशातीत प्रयत्न किया। इसके परिणामस्वरूप कारट,रणीयार, वरोड, टांडी आदि गांवों में बिलकुल हिंसा बन्द रही। इस वर्ष पंचमहाल प्रान्त में दशहरे पर जीव दया मण्डली ने खूब प्रचार कर हजारों जीवों को अभयदान दिलवाया तथा स्व० तपोधनी योगीराज श्री की स्वर्ग तिथी विजयादशमी के दिन जीव दया के कार्यों से तथा धर्म ध्यान से अतीव उत्साह के साथ मनाइ गई।

पूज्यश्री का यह चातुर्मास सभी दृष्टि से सफल रहा। नगर की साधारण जनता से लगाकर राजा महाराजा और राजकुमारों ने गुरुदेव के प्रभावशाली प्रवचनों को सुने।

उदयपुर महाराणा साहब की विनंती–

श्री हिन्दवाकुल सूर्य आर्य कुल कमल दिवाकर दाम इकबालहू हिजहाइनेश महाराणा साहब श्री भूपालसिंहजी साहब की पूज्यश्री के प्रति अपूर्व श्रद्धा थी। महाराणा साहब ने गतवर्ष भी मेवाड में पधारने की विनंती के लिये श्री दारोगाजी साहब श्री कनैयालालजी चौविसाजी को भेजे थे। इस चातुर्मास की समाप्तिके अवसर पर महाराणा साहब ने उदयपुर पधारने की विनंती के हेतु पुनः कनैयालालजी चोविसा को भेजे। महाराणा ने कहलवा कर भेजे कि पूज्यश्री उदयपुर अवश्य पधार कर हमें दर्शन दें। तथा पूज्यश्री उदयपुर पधारें ऐसा तार भी भिजवाया गया। कई पत्र भी आये। तब उदयपुर के विशिष्ट उपकार को ध्यान में रखकर पूज्यश्री ने चातुर्मास के बाद उदयपुर मेवाड में पधारने के लिए बागड प्रांत की तरफ बिहार करने की अपनी भावना प्रगट की। चातुर्मास समाप्त हुआ। श्रावकों नें बडे समारोह के साथ अश्रुभिनेनयनों

से गुरु देव को विदा दी।

मेवाड की यशस्वी यात्रा—

लींमडी का चातुर्मास समाप्त कर पूज्य श्री ने अपनी मुनि मंडली के साथ ता० ५–११–४१ को बिहार कर दिया। पूज्य श्री का उस समय स्वास्थ्य ठीक नहीं था। लीमडी संघ ने स्वास्थ्य के ठीक होने तक लीमडी में ही बिराजने की बड़ी विनंती की किन्तु पूज्य श्री का मनोबल बड़ा दृढ था। चातुर्मास का बिहार तो होना ही चाहिये। यह कह कर पूज्य श्री ने लींमडी से बिहार कर दिया और वहाँसे एक मील पर टांडी गांव पधारे। वहाँसे सायंकाल के समय पुनः बिहार कर एक मील पर स्थित बरोड गाव के पास सरकारी कोटड़ी में पधारे। यहाँ पधारने पर पूज्य श्री का स्वस्थ्य और भी बिगड़ गया। तबियत अधिक बिगड़ती देख श्रीयुत वीरचन्दजी पन्नालालजी करनावट उसी समय दाहोद गये वहाँ जाकर श्रीमान् देशभक्त ईश्वरलाल-जी वैद्य जो वहाँ के एक अच्छे भावुक सद् गृहस्थ है। एवं वैद्य विद्या में बडे भारी निपुण और अनुभवी है उनको लाये। वैद्यराजजी ने पूज्य श्री की तबियत की जांच कर चिकित्सा प्रारंभ कर दी। वैद्य के उपचार से एवं मुनिगण की अपूर्व सेवा से पूज्य श्री का स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन अच्छा होने लगा। करीब पूज्य श्री यहाँ अठारह दिन बिराजे। इसअवसर पर मणीलालजी दुगड ने एवं करणावटजी ने तथा लीमडी श्रीसंघने अपने सारे व्यवसाय धंधे को छोड़कर अपूर्व सेवा की। करोड निवासी पाटीदार पुरुषोत्तम भाई वैष्णव हैं उन्होंने रातदिन अपना व्यवसाय छोड़कर पूज्य श्री की सेवा में लगे रहे। योग्य उपचार से पूज्य श्री पूर्ण स्वस्थ हो गये। वहाँ से ता० २२–११–४१ को विहार कर पूज्य श्री झालोद पधारे। वहाँ विरदीचन्दजी कोचेटा, प्रेमचन्द-जी शोभालालजी भंडारी बडे श्रद्धालु श्रावक है। यहाँके श्रीसंघने पूज्य श्री के बिराजने के लिये बहुत विनंती की; किन्तु उदयपुर पधारने के लिये महाराना साहब का पूर्ण उत्साह वर्धक तकादा आरहा था जिससे बांसवाडा की तरफ ता० २४–११–४१ को बिहार कर सालोपाट पधारे यहाँ गुलाम अली थानेदार है। पूज्य श्री से इन्होंने धार्मिक चर्चा की। पूज्य श्री के इसल्लाम धर्म विषयक जान कारी से बडे प्रभावित हुए। उसने पूज्य श्रीके उपदेश से मांस मदिरा एवं जीव हिंसा का सदा के लिए त्याग कर दिया। वहाँ से ता० २५–११–४१ को पूज्य श्री ने बिहार कर दिया। थानेदार साहब बहुत दूर तक पहुँचाने आये। मार्ग में बांसवाडा सरहद में आई हुई अनासनदी के तटपर पूज्यश्री वटवृक्ष की घनी छाया में रात्रीके लिए बिराज गये। वहाँ अचानक ही कुशलगढ के महाराज कुंमार श्री भारतसिंहजी साहब अपनी मंडली के साथ पूज्य श्री के दर्शन किये थे। ये पूज्य श्री के परम भक्त है। इन्होंने पूज्य श्री से कुशलगढ पधारने की विनंती की। इसके पहले भी महाराजकुंवर साहब ने कुशलगढ पधारने के लिये पूज्य श्री से कई बार प्रार्थना की थी। आपने आग्रह भरे स्वर में पूज्य श्री से कहा—गुरुदेव हम लोग वर्षों से आपके दर्शन पिपासु हैं। आप के कुशलगढ पधारने से अच्छा उपकार होगा। महाराणी साहब को भी आपके दर्शन करने की और व्या-ख्यान सुनने की बड़ी अभिलाषा है। तब पूज्य श्री ने फरमाया—महाराजकुमार आपकी भक्ति स्तुत्य है किन्तु उदयपुर दरबार की तरफ से उदयपुर जल्दी पधारने का आग्रह है और वहाँ जल्दि पहुंचने से बडे उपकार की संभावना है इसलिए मैं मेवाड जाने की जल्दि कर रहा हूं। इस पर महराजकुमार ने फरमाया गुरुदेव कुशलगढ में भी आपकी इच्छानुकुल उपकार का कार्य होगा। चार दिन तक अगता पाला जायगा और मैं अपनीसमस्त रियासत में चार दिन के लिए जीव हिंसा बंद करवा दूंगा। आप अवश्य पधारें। इस पर भी पूज्य श्री ने कुशलगढ पधारने की अपनी स्वीकृत नहीं दे सके। दो घंटे तक महराज कुमार पूज्य श्रीकी सेवा में रहकर वापस कुशलगढ चले आये।

वागडदेश का बिहार

अनासनदी को पार करने के बाद बागड देश प्रारंभ होता है। बागड देश के सरहद की यह एक बडी भारी नदो है। गतवर्ष ही (यानी पूज्य श्री के पधारने के एक वर्ष पूर्व) ही इसका पुल बांसवाडा दरबार ने तैयार कराया है। नदी के दोनों तट घने वृक्षों से एवं ऊंची ऊंची टेकरियों से बडे सुहावने लगते हैं। इसका प्राकृतिक दृश्य बड़ा नयनरम्य है यों तो सारा बागड देश प्राकृतिक सौंदर्य से सुशोभित है। इस देश के चारों और भीलों की वस्ती है। यहाँ के आदिवासी शहरी जीवन के वातावरण से शून्य होने के कारण अपने आप में बडे सुखी नजर आते हैं। इस देश में स्थानकवासी और श्वेताम्बर मूर्ति पूजकों की वस्ती नहीं वत है। यहाँ के सर्व गांवों में विशेषकर दिगम्बर संप्रदाय के ही घर दिखाई देते हैं। एक समय था जब की सारा बागडदेश शुद्ध स्थानकवासी परम्परा को माननेवाला था। यहाँ आज भी कईगावों में स्थानकवासी सम्प्रदाय के उपाश्रय भी दृष्टि गोचर होते हैं। भूंगडा, मोटेगाँव कलिंजर, खूदनी आदि गाँवों में अभी भी वृद्धपुरुष कहते हैं कि यहाँ मुहपत्ति बांधकर एक साथ सौ सौ दौसौ दौसौ मनुष्य दया व्रत पालते थे व घर घर मुहपत्ति बांधकर सामायिकें होती थी। मुनियों के अच्छे चातुर्मास भी होते थे। किन्तु ज्यों ज्यों स्थानकवासी मुनि का आवागमन कम होता गया और दिगम्बर मुनियों का आवागमन बढता गया त्यों त्यों लोग स्थानकवासी धर्म को छोड़कर दिगम्बर मत को स्वीकार करने लगे। यहाँ दिगम्बर सम्प्रदाय का प्रसार १७ वीं सदी के आसपास से प्रारंभ हुआ था ऐसा अति प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों से मालूम होता है। यहाँ आज भी कई स्थल पर हस्तलिखित ग्रन्थों के भण्डार हैं और कई उपाश्रयों में बड़ी अव्यवस्था के साथ हस्तलिखित ग्रन्थ पडे हैं। आज इस प्रदेश में सर्वत्र दिगम्बर जैन समाज को मानने वाले हैं। ये लोग श्वेताम्बर मुनियों से बड़ाद्वेष रखते हैं और आहार पानी भी नहीं देतें। भयंकर सर्दी में भी वे श्वेताम्बर मुनियों को ठहरने के लिये मकानतक नहीं देते थे। पूज्य श्री को इस प्रदेश में संप्रदायिक कट्टरता का बड़ा सामना करना पड़ा। सर्वत्र सांप्रदायिक कटुता दृष्टि गोचर होती थी यहाँ के दिगम्बरजैन लोग स्थानकवासीजैन मुनि से बात करना तो दूर रहा किन्तु आंख खोलकर देखना भी पसन्स नहीं करते हैं। इतना कष्ट होने पर भी पूज्य श्री दृढता पूर्वक भूख और प्यास के परीषह कों सहते हुए बागड देश में खूबधर्मप्रचार किया। बागडदेश के छोटे बडे ग्रामों में जैन अजैन एवं आदिवासियों को अपने पावन प्रवचनो से लाभान्वित किया और सैकड़ों को जैन धर्म का अनुयाई बनाये

बांसवाडा शहर मे प्रवेश—

बागडदेश का मुख्य शहर बांसवाडा और डूंगरपुर है। दोनों राजधानियां है। बांसगाडे के महाराजा पृथ्वीसिंहजी है। और आपके दो पुत्र है।

बाँसगाडा के उत्तर पूर्व एवं दक्षिण की तरफ बडी बडी ऊंची पहाडियाँ है। ये पहाड वृक्षों से सुशोभित हैं। पहाडों की वनश्री से यह शहर बडा ही सुहावना लगता है। यहां बहुत हि आम्रवृक्ष है। आम्रवृक्ष की विपुलता देख अगर इसका दूसरा नाम आम्रवाड रखा जाय तो असंगतियुक्त नहीं होगा। यों तो बांसवाडे का नाम गुणनिष्पन्न ही है कारण कि इसके चारों तरफ बांस की उत्पत्ति अधिक है।

शहर के पास दो बडे वडे सुन्दर सरोवर है। पास ही एक छोटी नदी है। शहर के बीचमें ऊंचे राजमहल है। इससे शहर बडा ही आकर्षक लगता है। इस प्रांत का मुख्य शहर होने से यह बहुत बडे व्यापार का भी केन्द्र है। मेवाड की तरह इसके भी सोलह बत्तीस ठिकाने है।

इस शहर में स्थानक वासी जैन और दिगम्बर समाज के अधिक घर है। मंदिर मार्गियों के केवल दो घर है मालवे से ऋषभदेवजी तीर्थ यात्रा जाते समय मूर्तिपूजक साधु साध्वीयों का यहां सदा आवागमन बना रहता है। स्थानकवासी जैन समाज के २५ घर है जिनमें हीरालालजी कोठारी ताराचन्दजी कोठारी भँवरलालजी मेघराजजी

आदि मुख्य सेवाभीवी सज्जन हैं ।

चारसो घर नीमा महाजन के हैं । सन्तां के प्रति इनकी अच्छी भक्ति है ये सर्व वैष्णव धर्म के अनुयाई हैं । किन्तु पूज्यश्री के प्रवचन से बडे प्रभावित थे । सभी लोग व्याख्यान श्रवण करते थे । रामस्नेही संत चौकसीरामजी भी व्याख्यान श्रवण करते थे । पूज्यश्री रामद्वारे में विराजते थे । रात्रिको आम बाजार में व्याख्यान श्री पं. रत्न मुनिश्री कन्हैयालालजी महाराज के जाहिर व्याख्यान होने लगे । हिन्दुमुसलमान सर्व कोम के लोगों की बडी हाजरी रहती थी । बांसवाडा धर्म मार्ग में जागृतबन गया आचार्यश्री के सुब्ह व्याख्यान शहर में होते थे ।

मेवाड की तरफ बिहार—

बांसवाडे में पूज्यश्री के बिराजने से अच्छी धर्म प्रभावना हुई । माहाराजा साहब ने एवं महाराज कुमार ने पूज्यश्री का व्याख्यान श्रवण कर बडा हर्ष प्रगट किया । नगर निवासियोंने भी पूज्यश्री के प्रवचनों का अच्छालाभ लिया । बांसवाडे में पुनः उदयपुर महाराणा का पत्र आया कि पूज्यश्री शीघ्र हि मेवाड को अपनी चरणधूलि से पावन करें । महाराणा साहब के आग्रह को ध्यान में रखकर पूज्यश्री ने बांसवाडे से ता० १०-१२-४१ को अपनी मुनि मण्डली के साथ मेवाड की तरफ बिहार कर दिया । बडगांव चन्दुजी रोगडो भूंगानो लवारिया, लसाडा छोटा, वोडीगाव मार आसपुर वीरवास आदि गावों को क्रमशः अपने अमृतमय प्रवचनों से जनता को लाभान्वित करते हुए सलूम्बर पधारे । बांसवाडे से सलूंबर तीस कोष पडता है । मार्ग में आपने सेकडों आदिवासीभीलों को मांस मदिरा शिकार एवं जीवहिंसा का त्याग करवाया । अनेक जैन भाईयों कों सम्यक्त्व दी । सलूम्बर तक प्रायः गावों में दिगम्बर जैन समाज की ही वस्ती है । लसाडा गांव जो अधिक पाटिपारों की वस्तीवाला है । इसके पास ही बांसवाडा डुंगरपुर रियासत के सरहदी महीसागर नामकी बड़ी नदी है । इस नदी का उद्गम स्थल मालवा है । यह नदी सैलाना बांस, वाडा, उदयपुर डुंगरपुर गुजरात में होती हुई खंभात के आखात में समुद्र से जाकर मिलती है । इस नदी का जेनागमों में भी उल्लेख आता है ।

सलुम्बर मेवाड के सोले के ठिकाने में से एक मुख्य ठिकाना है । यहाँ के रावजी का नाम खुमानसिंहजी है । सलूम्बर पहले पहाडपर बसा हुआ था । आज भी पहाड पर महल एवं किल्ला है । इसके चारों ओर दूरतक कोट घिरा हुआ है । अब पहाड के नीचे दो विभाग में यह शहर बसा हुआ हैं । नया सलूम्बर जूना सलूम्बर के नाम से ईसकी प्रसिद्धि है । नये और पुराने शहर में दिगम्बर समाज के ही अधिक घर है । कुछ मूर्तिपूजक श्वेताम्बरों की भी बस्ती है । वहाँ पर एक भी स्थानकवासी का घर नहीं हैं । यहाँ भी बागड संस्कृति के ही दर्शन होते हैं । पूज्यश्री के यहां पधारने की किसी को इत्तला नहीं थी । शहर में पधारने पर साथ में कोई श्रावक नहीं होने से यथा समय मकान नहीं मिलसका । बाद में वैद्य गोवर्धनदासजी जिनका सरकारी मंदिर में दवाखाना है । उन्होंने भंडारी गोपीलालजीका दरीखाना खुलवा दिया । भंडारीजी साहब एवं श्री कन्हैयालालजी साहब बडे ही लायक आदमी है । आपका मुनियों के प्रति बडा अच्छा प्रेम भाव हैं । यहां के कामदार साहब मोहम्मदशफीक व मजिस्ट्रेज जगदीशकुमारजी बडे श्रद्धालु राजकर्मजारी हैं। आप दोंनों को पूज्यश्री के सलूम्बर पधारने के खबर गुरांसा भैरुलालजी ने जाकर दी । खबर प्राप्त होते ही आप दोंनों पूज्यश्री के दर्शन के लिये आये व उपदेश सुना । ये सज्जन पूज्यश्री के प्रवचन से बडे प्रभावित हुए । पूज्यश्री ने अपने प्रवचन में विश्वशान्ति के लिए ॐ शान्ति की प्रार्थना का रहस्य समझाया । पूज्यश्री ने अपने प्रवचन के अन्त में दोनों सज्जनों को एक दिन के अगते के साथ ॐ शान्ति की प्रार्थना करवाने का कहा । पूज्यश्री के आदेश को शिरोधार्य कर दोनों भाईयों ने राज्य

की ओर से ता० १७-१२-४१ को अगते के साथ सरकारी स्कूल के विशाल प्रांगन में ॐ शान्ति की प्रार्थना का हुक्म जाहिर किया । हुक्म सुनकर यहाँ के निवासी जैन अजैन सर्व जन समूह आश्चर्य चकित हो उठां कारण सलूम्बर के लिए यह प्रसंग नया था । यहाँ के निवासी स्थानकवासी जैन मुनियों से एवं उनके आचार विचार से पूर्ण अनभिज्ञ थे ।

स्कूल में ॐ शान्ति की प्रार्थना—

ता० १७-१२-४१ को सरकारी स्कूल के विशाल चौगान में आम जनता को बैठने का सरकारी इंत-जाम हो चुका था । बिछोना आदि की व्यवस्था होगई थी । ता० १६-को कोतवाली की तरफ से शाम को ता० १७ के रोज अगता पालने का एवं ॐ शान्ति प्रार्थना में शामिल होने का एलान सारे नगर में डोंडी द्वारा करा दिया गया । जिससे सर्व जैन अजैन जन समूह यथासमय शान्ति प्रार्थना में शामिल होने के लिए हजारों की संख्या में एकत्रित हुए । जनता के आजाने पर पहले सरकारी स्कूल के छात्रोंने एवं वीर पुत्र समीरमुनिजी ने मंगलाचरण किया । पश्चात पूज्यश्री ने अपनी अमृत मय वाणी द्वारा ईश्वर का स्वरूप समझाया । आपने अपने प्रवचन में कहा ईश्वर के स्वरूप कि प्राप्ति त्याग से होती है । न कि महामाया से ? हिंसा के स्थान पर कभी भी ईश्वर का अस्तित्व नहीं रहतो है । इस प्रकार आपका दो घंटे तक भाषण हुआ जिसको सुनकर जनता खूब हर्षित हुई । समय नहीं था किन्तु जनता कि यह प्रार्थना थी कि पूज्यश्री अपना प्रवचन ओर भी कुछ समय के लिए चालु रखें तो अच्छा । व्याख्यान समाप्ति के बाद लोगों ने खडे होकर पूज्यश्री को ओर भी कुछ दिनों के लिए बिराजने का आग्रह किया और कहा आप जैसे चारित्रवान सन्तों का यहाँ कभी पदार्पण नहीं होता । इधर की जनता आपके धर्म से सर्वथा अपरिचित है । आपके यहाँ पर बिराजने से धर्म का अच्छा प्रचार होगा । वर्षो से हम लोग मार्ग भूले हुवे हैं । आपके बिराजने से फिर हम लोग आपके सिद्धान्त के अनुगामी बन सकते हैं । आपका यहाँ बिराजना सर्वके लिए अत्यन्त लोभदाई है । कामदार साहब एवं मजिस्ट्रेट साहब ने फरमाया कि व्यापार के कारण दिन में कुछ लोग आपके प्रवचनों से वंचित रह जाते हैं । अतः रात्रि के समय राजमहल के प्रांगण में आपके प्रवचन होतो बडा लाभ होगा । बडी संख्या में लोग आपका धर्मोपदेश सुन सकेंगे । जनता के आग्रह को ध्यान में रखकर पूज्यश्री एक दो दिन अधिक बिराजगए । इधर पूज्यश्री कहाँ है जिसकी खबंर उदयपुर की जनताको नहीं मिलती थी । कारण इस प्रान्त में डाक तारऑफिस का साधन नहीं होने से खबर नहीं मिल सकती थी । महाराणा सहाब का मुकाम जयसमुद्र था तब पूज्यश्री बांसवाडे में हि बिराज रहे थे । दरबार ने बांसवाडा सरहद में दो ऊँट सवार भेजकर खबर मंगाई कि पूज्यश्री कहाँ तक पधारे हैं ? किन्तु पूज्यश्री कहाँ तक पधारे हैं इसके समाचार उन्हे नहीं मिल सके । हां पूज्यश्री शीघ्र ही बिहार करके पधार रहे हैं । इसकी सूचना महाराणा साहब को जयसमुद्र पर मिली । अब यह आशंका थी कि उदयपुर आने के दो मार्ग हैं एक तो जयसमुद्र और दूसरा बंबोरा। पूज्यश्री किस मार्ग से पधारेंगे यह अनिश्चित था इस कारण दरबार उदय निवास होकर नाहर मगरे पधारे और ईधर पूज्यश्री सलूम्बर से बिहार कर जयसमुद्र पधारे ।

जयसमुद्र मेवाड का सबसे बडा तालाब है । इसको महाराणा साहब श्री जयसिंहजी ने बनवाया थो । इसके बाद गुजरात निवासियों की प्रार्थना पर इसकी पुनः मरम्मत की गई जिसका खर्च करीब ऐक लाख रुपया आया है । इसकी पाल बडी संगीन है । पालपर ऊंची टेकरी पर हवा महल रूठीराणी का महल बडा सुन्दर गेस्ट हाउस आदि अनेक सुरमणीय स्थान हैं तालाव के चोरों ओर ऊँची ऊँची पहाडियाँ है पास ही वीरपुर गांव के बाहर कचहरी बनी हुई है । इस समय कन्हैयालालजी नाहर डिप्टी कलेक्टर है कलेक्टर साहब बडे हि अच्छे स्नेही व्यक्ति है । यहाँ पूज्यश्री एक दिन बिराजे थे । दूसरे दिन पूज्यश्री ने बि-

हार कर दिया। कलेक्टर साहब करीब दो मील तक पूज्य महाराजश्री को पहुंचाने आए। मार्ग में प्राकृतिक सौंदर्य देखने योग्य है। जयसमुद्र से लकडवास तक का प्रांत मेवल के नाम से प्रसिद्ध है। यह सारा प्रदेश पहाडों में बसा हुआ है। रास्ता भी बडा कष्ट दायक है। इस प्रदेश में स्थानक वासी जैनों की अपेक्षा दिगम्बर समाज के घर अधिक है। जयसमुद्र से झर अदवास होते हुऐ पूज्यश्री जगतगांव में पधारें। यहां के ठाकुर साहब श्री शार्दूलसिंहजी साहब बडे सेवाभावी एवं धर्मानुरागी सज्जन हैं। आपने रात्रि में पूज्य श्री का प्रवचन सुना। और अनेक धार्मिक प्रश्नोत्तर किए। समाधान पाकर इन्होंने बडा हर्ष प्रगट किया। पूज्यश्री के उपदेश से इन्होंने ॐ शान्ति प्रार्थना दिवस मनाने का निश्चय किया। तदनुसार ता० २२-१२-४१ को अगते के साथ सारे गाँवमें ॐ शान्ति की प्रार्थना करने का हुक्म फरमाया। गांव के बाहर चामुण्डामाता के मन्दिर के पास विशाल प्रांगन में गांव की जनता एकत्रित हुई। श्री ठाकुर साहब भी सपरिवार पधारे। पूज्यश्री अपनी मुनि मण्डली के साथ पाटे पर बिराजे। ऐकत्रित जन समुह के बीच पूज्य गुरुदेव ने ॐ शान्ति की प्रार्थना पर मार्मिक प्रवचन प्रारंभ कर दिया। आपने अपने प्रवचन में ईश्वर का स्वरूप और उनकी महत्ता को मार्मिक भाषा में समझाया। फलस्वरूप ठाकुर साहब ने जीवदया का पट्टा लिखकर पूज्यश्री की सेवा में भेट किया-प्रतिलिपि इस प्रकार हैं-

श्रीरामजी=आज से पूज्यश्री घासीलालजी महाराज की पवित्र सेवामें मालासर माताजी और जगत माताजी के ठिकाने में हरसाल दो पाडे चढते थे वे अब बंद कर दिये हैं। अब कभी भी नहीं चढाये जावेंगे।

१९९८ शार्दूलसिंहजी जगत (ठाकुर साहब)

जगत गांव में दो दिन तक बिराजकर पूज्यश्री ने अपनी शिष्य मंडली के साथ बिहार कर दिया। जगत के ठाकुर साहब ने रास्ता बताने के लिये एक सिपाही को साथ भेजा। कारण रास्ता पहाडी होने से खूब विकट था। रास्ते में नुकीले कंकर व कांटों के कारण चलने में बडा कष्ट होता था। चान्दा होते हुए पूज्यश्री लकडवास जो उदयसागर तालाव के पास बसा हुआ एक गांव है। वहाँ पधारे। यहाँ पधारने पर उदयपुर निवासियों को मालूम हुआ कि पूज्यश्री तो विकटमार्ग से बिहार कर सात मील की दूरी पर लकडवास पधार गये हैं, खबर सुनते नी चारों ओर हर्ष और आश्चर्य छा गया। इधर महाराणा साहब भी बार बार अपने आदमियों द्वारा तलाश कर ही रहे थे। तथा उन्होंने इसी कार्य के लिऐ चोवीसाजी साहब को मोटर दे जयसमुद्र भेजे। वहाँ पूज्यश्री के दर्शन न होने से वापस उदयपुर आकर पुनः तलाश के लिए-ज्यों ही बम्बोरा अन्य श्रावकों के साथ जा ही रहे थे कि वहाँ उनको पूज्यश्री के लकडवास पधारने की खबर मिली। खबर मिलते ही श्रावक गण एवम् चौविसाजी साहब महाराणा साहब को खबर देने सीधे नारमगरे दरबार की सेवामें पहुँचे।

लकडवास में शान्ति प्रार्थना—

ता० २५-१२-४१ उदयपुर पुलिस थाने ने पूज्यश्री की आज्ञा से अगते पलाये और ॐ शान्ति प्रार्थना में शामिल होने के लिए ड्योंडी पिटवाई, तदनुसार गांव बाहर वटवृक्ष के नीचे सारा गाँव ॐशान्ति की प्रार्थना करने के लिए सम्मलित हुआ। उदयपुर से भी बडी संख्या में लोग वाहनों में आरूढ होकर प्रार्थना में सम्मिलित हुए। ॐ शान्ति की प्रार्थना के बाद पूज्यश्री ने अपना मांगलिक प्रवचन प्रारंभ किया। आपने प्रवचन में मानव जन्म की दुर्लभता और ॐ शान्ति की प्रार्थना का महत्त्व समझाया। पूज्यश्री के प्रवचन से श्रोताओं ने अच्छे त्याग प्रत्याख्यान किये। दूसरे दिन पूज्यश्री अपनी शिष्य मंडली के साथ बिहार कर मटूण पधारे।

महाराणा साहब का नारमगरे पधारने का आमंत्रण—

चौविसोजी साहब ने ज्योंही जाकर पूज्यश्री के पधारने की महाराणा साहबको खबर दी। खबर सुनते हि महाराणा साहब बडे हर्षित हुए। उन्होंने चोविसाजी को आज्ञा दी कि आप पूज्यश्री की सेवा में जाकर मेरी ओर से नारेमगरे पधारने की विनंती करो। यह आज्ञा सुनते हि चोविसाजी घोडे पर बैठ कर पूज्य श्री की सेवामें मदूण पहुंचे और महाराणा साहब की विनंती चरणों में व्यक्त की। चोविसाजी ने पूज्जश्री से अर्ज कि की आप नारेमगरे ललितबाग में पधारें। आप जिस दिन नारेमगरे पधारेंगे उस दिन सारी मेवाड रियासत में जीवहिंसा बंध रखी जावेगी। अगता पाला जायेगा। महाराणा साहब भी ललितबाग में आपके दर्शन करने की अभिलाषा रखतें हैं। महाराणा साहब की प्रार्थना को पूज्यश्री ने स्वीकार करली। चोंविसाजी ने इसकी सूचना महाराणा साहब को दे दी। इधर पूज्यश्री मदूण से बिहार कर देबारी होते हुए डगेक गांव पधारे। वहां पुनः पूज्यश्री को लेनेके लिए चोविसाजी साहब पधारे। उदयपुर से पूज्यश्री के परम भक्त सुश्रावक मास्टर शोभालालजी महेता दौलतसिंहजी लोढा व रतलाम के नन्दलालजी बाफणा भी साथ में थे। पूज्यश्री यहां से चौविसाजी के साथ अपने शिष्यो सहित नारमगरे की ओर बिहार कर दिया। दो हि मील दूर रहने पर चोविसाजी साहब आगे जाकर पूज्यश्री के शुभ पदार्पण की खबर दी। जिनको सुनकर महाराणा साहब एवं अन्य सामन्त वर्ग बडा हर्षित हुआ

महाराणा साहब एवं पूज्यश्री—

ललितबाग से अन्य सामन्तवर्ग के साथ कालूलालजी सा० कोठारी आदि को सामने पूज्यश्री को लेने के लिये भेजे गये। पूज्यश्री अपनी उसी गजहस्ति की चाल से धीरे धीरे बिहार करते हुए ललितबाग में पधारे। महाराणा साहब पहले ही से फर्श आदि को छोडकर मुनियों के वेठने योग्य स्थान पर बिराजे हुए थे। पूज्यश्री के पधारते ही सर्व समान्त वर्ग ने व महाराणा साहब ने योग्य सत्कार किया। पश्चात् पूज्यश्री अपने शिष्यों द्वारा लाये गये पाट पर जा बिराजे। विश्राम के बाद श्रीमान् महाराणा साहब ने मार्ग के परिश्रम के लिए पूछा। पुनः यहां पर एक दो रोज बिराजने की एवं उदयपुर पधारने की तथा चातुर्मास आदि के बारे में पूछताछ की। बाद में उनके प्रश्नो का यथा योग्य समाधान कर अपना मांगलिक प्रवचन प्रारंभ किया

ॐकारं विन्दुसंयुक्तं नित्यं ध्यायन्ति योगिनः। कामदं मोक्षदं चैव ॐ काराय नमो नमः॥

महाराणा साहब सामन्त वर्ग एवं उपस्थित श्रोतागण महाराणा साहब कि एवं आपलोगों की दिव्य भक्ति ने मुझे यहाँ तक खींच लाया है। मानव जीवन की सफलता भक्ति और प्रेम में ही है। प्रत्येक मनुष्य को ईश्वर की भक्ति करनी चाहिये। ईश्वर भजन आत्मधन है। पौद्गलिक धन से आत्मधन पर हमको अधिक विश्वास होना चाहिये। क्योंकि पौद्गलिक पदार्थ का संसार में जितना अधिक विश्वास है उससे भी ज्यादा मुनियों का एवं विचक्षण पुरुषो का आत्मधन पर विश्वास है। जो व्यक्ति प्रातः नित्य थोडी देर भी ईश्वर का भजन करता हैं वह महान निधि पाने का उपाय करता है। अमृत संसार में अगर थोडा भी हो तो काफी है। उसी अमृत द्वारा हजारों का पालन हो सकता है। बहुमूल्य चीजें दुनियाँ में थोडी ही रहा करती हैं। सुवर्ण और लोहा दोनो की तुलना करने से स्वयं ज्ञात हो जायगा। अस्तु। इसी प्रकार मनुष्य सुबह के समय जो ईश्वर भजन करता हो वह आत्मधन की अखूट स्वर्णसिद्धि प्राप्त करता है। ईश्वर भजन में बडी ताकत है। उस ताकत को प्राप्त करने का साहस है वह के तो योगियों में या आप जैसे नरवीरों में। क्यों कि रासायणिक दवाईयाँ प्रत्येक व्यक्ति पचा नहीं सकता। उसके लिए धैर्य शक्ति और पथ्य की आवष्यकता है। उसी प्रकार ईश्वर भजन रूप रासायनिक पदार्थ का सेवन त्याग हिम्मत और सदाचार रुप पथ्य

के बिना लाभ दायी नहीं हो सकता। जिसका आत्मा में दृढ विश्वास है वही ईश्वर भजन कर सकता है। परम योगिनी मीरा बाई का उदाहरण हमारे सामने हैं। उसके ईश्वर के प्रति अटूट श्रद्धाने ही जहर के प्याले को अमृत बना दिया था। ईसलिए हे राजन्! जीवन में सच्चा आनन्द व सुख शान्ति पाने की इच्छा हो तो वह ईश्वर भजन से ही प्राप्त हो सकता है। इस क्षणिकजीवन में तथा आज के अशान्त युग में हमें केवल एक मात्र ईश्वर का ही सहारा है। उसी कि हृदय से उपासना करने पर ही हमारा जीवन धन्य बन सकता है। आदि

इस प्रकार पूज्यश्री ने एक घंटे तक प्रभाव शाली एवं विस्तृत व्याख्यान दिया। जिसे सुनकर महाराणा साहब एवं सामन्त वर्ग बडा हि प्रसन्न हुआ। व्याख्यान समाप्तिके बाद महाराणा साहब ने पूज्यश्री से विविध विषयक प्रश्न किये और पूज्यश्री ने उनका योग्य समाधान किया। तत्पश्चात् पूज्यश्री ने महाराणा साहेब से अपने विहार की बात कह कर स्वस्थान पर चले आये। बाद में महाराणाजी ने कोठारीजी ऐवम् केलवा के ठाकुर साहब श्रीदौलतसिंहजी एवम् फतहलालजी को भेजकर कहा कि पूज्य महाराजश्री को कंवर पदे के महलो में ठहराओ। विहार न करने दो। जब तक पूज्य महाराज श्री यहाँ विराजेंगे तब तक शिकार जीवहिंसा बन्द रहेगी। पूज्यश्री महाराजा साहब के आग्रह को स्वीकार कर कुंवरपदों के महल में जा विराजे। उस दिन दोनों तपस्वियों के तेले के पारने का दिन था। पूज्यश्री के महल में विराजने से महाराणा के सामन्त वर्ग अच्छा लाभ उठाते रहें।

अपने हाथ से आहार पानी को वहराया—

महाराणा साहब के साथ कुछ शाकाहारी राजकर्मचारियों का भी विशाल दल था उनके लिए अलग रसोडा चलता था। महाराणा साहब ने पूज्यश्री से अपने हाथ से आहार देने की अत्यन्त इच्छा व्यक्त की। तब पूज्य महाराजश्री ने फरमाया कि हम राजपिण्ड तो ग्रहण नहीं कर सकतें। तब महाराणा साहब शाकाहारी राजकर्मचारियों के रसोडे में पधारे वहाँ पूज्यश्री को अपने हाथों से आहार पानी वहराया। पश्चात् पूज्यश्री ने फरमाया कि हाथ कच्चे पानी से न धोयेजाय तब महाराणा साहब ने पूज्यश्री से फरमाया कि यह तो गरम पानी ही है। उसके बाद महाराणा साहब ने कहा आज ये मेरे हाथ भी पवित्र हो गये हैं जिससे कि आप जैसे पवित्र सन्तों को आहार पानी दान करने का मुझे सौभाग्य मिला है। आज का यह शुभदिन मुझे अपने जन्मदिन की खुशी से भी ज्यादा अच्छा लग रहा है। दूसरे दिन पूज्यश्री ललितबाग में व्याख्यान देने के लिए पधार रहे थे। कुछ बकरे कसाई खाने में लेजारहे थे। पूज्यश्री ने पूछा ये बकरे कहा लेजारहे हो। उसने कहा— कसाई खाने में। पूज्यश्री ने उसी समय बकरों को वही खडा करवा दियां और इसकी सूचना महाराणा साहब को करवाई। पूज्यश्री का आदेश मिलते ही महाराणा साहब ने एवं महाराणी साहब ने उन समस्त बकरों को अमर करवा दिये। पश्चात् पूज्यश्री ने ता० ३०–१२–४१ को ललितबाग के महल में मनकी एकाग्रता पर प्रभावशाली प्रवचन दिया—अपने प्रवचन में "मनएव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः—का उच्चारण कर फरमाया कि—संसार में मनकी शक्ति इतनी विशाल है कि जिसका माप किया जाय तो किसी की भी ताकत नहीं कि इसका माप लगाले। मन ही आत्मा को भोग या योग में झुकाता है। ऋषिमुनि इसीलिये मन को अपने तावे में रखते हैं क्योंकि अजर अमर पद की प्राप्ति करने की चावी इसी के पास ही में रहती है। चेतनराजा पवित्र धर्म क्रिया से खुश होकर अजर अमर पुरी का राज्य आत्मा को प्रदान करता हैं तो मन रूप खजानची आकर एसा करने से उसको रोकता है। अगर यह खुश हो तो स्वयं इस बात की प्रेरणा दे कर सुखी भी बना देता है। मन के विषय पर ही आत्माओं ने बडे बडे ग्रन्थ लिखे हैं। उसकी निन्दा और प्रशंसा से ग्रन्थों के पन्ने के पन्ने भर दिये हैं। फिर

भी मन की व्याख्या पूरी नहीं लिखी जा सकी। इस विषय में जितना भी लिखा जाय या कहा जाय वह नया ही लगेगा। अतएव मानव अपने विकास में महान सहायक मन को सदा ईश्वर भजन में रोके रखना चाहिये। मन को जितना एकाग्र किया जाय उतना ही मानव शक्तिशाली बनेगा।" इस प्रकार 'मन' की एकाग्रता पर विवेचन कर ईश्वर भक्ति का महत्त्व समझाया। प्रवचन के बाद महाराणा साहब ने पूज्यश्री से एकान्तवार्तालाप के लिए उपस्थित सभी सामन्तवर्गों को एवं जनता को दूसरे कमरे में जाने की आज्ञा दी। सब के चले जाने पर करीब एक घन्टा महाराणा साहब ने पूज्यश्री से एकान्त में विविध विषयक चर्चा की और बडी प्रसन्नता प्रगट की। वार्तालाप के बाद जब पूज्यश्री स्वस्थान पधारने लगे। तब श्री महाराणा साहब ने कोठारीजी साहब एवम् चौबीसाजी साहब से फरमाया कि पूज्यश्री यहाँ से कहा पधारेंगे। तब कोठारीजी ने कहा कि पूज्यश्री डबोक गुडली देबारी आदि गांव में पधारते हुए उदयपुर पधारेंगे। तब महाराणा साहब ने कोठारीजी साहब को फरमाया कि उदयपुर तो थाराबंगला में बिराजेगा। तब कोठारीजी साहब ने फरमाया कि 'बडो हुकुम' फिर चोमासो कठेवेगा जणी की दरीयाफ्त फर्माई कि पूज्यश्री फाल्गुनी पूर्णिमा के पहले चोमासा को निश्चय नहीं फरमा सके। पुनः महाराणा साहब ने कहा—उदयपुर तो नराई वर्षासु पधार्या सो थोडे रोज ज्यादा ठहरणो पडेगा। इसके उत्तर में पूज्यश्री ने फरमाया—जैसाअवसर। आज हमलोग उदयपुर की ओर बिहार करने का विचार रखते हैं। इस प्रकार के वार्तालाप के बाद पूज्यश्री अपनी शिष्यमंडली के साथ कुँवरपदे के महल में पधार गये।

यहां आहार पानी करके पूज्यश्री दोपहर को बिहारकर डबोक पधारे। यहाँ पर पधारने से सारा गांव पूज्यश्री की सेवा में संलग्न हो गया। ता० ३१–१२–४१ को सारे गांव में अगता रखा गया और ॐ शान्ति की प्रार्थना की गई। समस्त गांव के जैन अजैन भाई बहनों ने ॐ शान्ति की प्रार्थना की और पूज्यश्री ने विशाल जन समूह को अपने प्रवचन से लाभान्वित किया। यहाँ से आपने बिहार कर दिया और आप देबारी स्टेशन होकर उदयपूर पधारे। गुडली के श्रावकसंघ का आग्रह होनेपर पं. मुनिश्री गुडली पधारे। यह पं. मुनिश्री कन्हैयालालजी म० श्रीका जन्म गांव है। रात्रि में पं. मुनिश्रीका प्रवचन हुआ वहाँ से दोपहर को बिहार कर मुनिश्री ता०२—१-४२ को उदयपुर स्टेशन पर पूज्यश्री की सेवा में पधारे। आप इन्पेक्षण रूम में तीन दिन तक रेल्वे कर्मचारियों के आग्रह पर बिराजे। आप के तीनों दिन तक कर्मचारियों के बीच व्याख्यान होते रहे। ता०४–१–४२ को ॐशान्ति दिवस मनाया गया। समस्त रेल्वेकर्मचारियों ने एक दिन अगता रखा। स्टेशन का कसाई खाना बन्द रहा। ॐ शान्ति की प्रार्थना की। स्टेशन मास्टर ने कई बकरों को अमरिया किये। रेल्वे के विशाल गोदाम में पूज्यश्री का प्रवचन होता था। जिसमें रेल्वे-कर्मचारियों के समस्त कुटुम्ब के साथ व उदयपुर का जन समूह भी पूज्यश्री का व्याख्यान श्रवण करता था। पूज्यश्री ४–५ दिन बिराजने का स्टेशन मास्टर ने आग्रह किया। किन्तु आयड संघ की विशेष प्रार्थना होने से आप आयड पधारनेलगे। सहसा पूज्यश्री के बिहार को देखकर स्टेशन मास्टर दौडा हुआ आया और उस दिन स्टेशन पर ही पूज्यश्री को रोक दिया। दूसरे दिन पूज्यश्री ने आयड बिहार कर दिया। यहाँ आप सेठ झूमरलालजी सिरोया के मकान में बिराजे।

ता० १०–१–४२ को सभी जैन अजैन हिन्दू मुसलिम भाईयोंने अगता पालकर ॐ शान्ति की प्रार्थना आयड के प्रसिद्ध स्थल गंगूमे पर की गई। मध्यान्ह में पूज्यश्री का प्रवचन हुआ। प्रवचन में उदयपुर शहर की जनता बढी संख्या में उपस्थित थी। व्याख्यान के बाद महाराणा सा. के जेब खजानची सा. श्री कालूलालजी कोठारी ने अपने रंगनिकुंज भवन में पधारने की पूज्यश्री से प्रार्थना की। पूज्य श्री ने कोठारीजी की प्रार्थना को मानकर उसी समय बिहार कर दिया और रंगनिकुंज में आकर बिराजे।

यहाँ पर पधारने के बाद पूज्यश्री का नित्य प्रातः काल व्याख्यान श्रवण करने के लिए उदयपुर की बडी संख्या में जनता उपस्थित होती थी। ता० १५-१-४२ को चम्पाबाग में उपदेश सुनने के लिये श्री महाराणा साहब ने पूज्यश्री को आमंत्रण दिया तदनुसार पूज्यश्री अपनी शिष्यमण्डली के साथ चंपाबागमें पधारें। स्थानकवासी जैन समाज के मुखिया तथा श्री महावीर मंडल के सभी कार्य करतागण भी पूज्यश्री के साथ थे। यहाँ पधारने पर महाराणा साहब ने पूज्यश्री से लम्बे समय तव विविध विषयक चर्चा की पूज्यश्री के उत्तरों से महाराणा साहब बडे प्रसन्न दिखाई देते थे। करीब दो घन्टे तक महाराणा साहब से वार्तालाप एवं प्रवचन कर पूज्यश्री स्वस्थान पधार गये।

राजमहल मे पूज्यश्री का पदार्पण–

श्री कोठारजो साहब एवं चोविसाजी द्वारा पूज्यश्री को ता०३०—१–४२ को महाराणा साहब ने महलों में पधारने का आमन्त्रण दिया। तदनुसार पूज्यश्री अपनी शिष्यमण्डली व राजकर्मचारी गण तथा श्रावकगण एवं उदयपुर के गण्य मान्य भक्तजनो के साथ ता०३०-१–४२ के दिन दुपहर में महेलोंमें पधारे। महाराणा साहब पूज्यश्री के पधारते ही महाराणा साहब ने एवं समान्तवर्ग ने यथायोग्य सम्मान किया। पूज्यश्री अपनी जगह पर बिराज गये। तत्पश्चात् महाराणा साहब से प्रारंभिक वार्तालाप के बाद पूज्यश्री ने अपना मांगलिक प्रवचन प्रारंभ कर दिया। आपने अपने प्रवचन में कहा–

इस संसार में मनुष्यों को सन्तभक्ति से अनेक फायदे होते हैं। जो मनुष्य सन्त पुरुषों के समागम में नहीं आता वह अपना श्रय कदापि नहीं कर सकता। जिसको अपनी भलाई का सदा ध्यान रहता है वह कदापि संत समागम से विमुख हो नहीं सकता। सन्तसमागम में ही मनुष्यमात्रका हित समाया हुआ है। प्रथम महाराजा जनक के समय तथा राजा हरिश्चन्द्र व विक्रम के समय मुनियों की बडी सेवा भक्ति की जाती थी। उस समय में प्रत्येक राजा महाराजा वासुदेव चक्रवर्ती धनी निर्धन धर्मी व पापी संत सेवा से खूब ही फायदा उठाते थे। आज के समय में वह हालत नहीं होने से धर्म कर्म से मनुष्य भ्रष्ट हो रहा है। आप सर्वसज्जनों को चाहिये कि आप श्री महाराणां साहब के हित चिन्तक हैं तो संत सेवा अवश्य किया करें जो उसमें आपको भी कुछ अवश्य मिलेगा तो अच्छा ही मिलेगा। हमारा आप पर जोर है। हम आप पर जितना भी वजन देना चाहें दे सकते हैं। कारण कि वजन समर्थ व्यक्ति ही उठा सकता है कम्जोर नहीं। आपने इस पर एक दृष्टान्त फरमाया–एक समय दिल्ली के बादशाह का अकस्मात देहावसान हो गया। बादशाह के शाहजादा न होने से भाईयों में राज्य प्राप्ति के लिये लढाईयां होने लगो। तब वजीर ने विचार किया कि राज्य भोंक्ता तो एक ही मनुष्य होगा और ये आपस में व्यर्थ ही झगडा कर अपनी शक्ति बरबाद करदेंगे। ऐसा विचार कर उसने उन सभी भाईयों को बुलाकर अर्ज की कि आप लडना झगडना बन्द करें कारण आपसी लडाई और फूट के कारण यह सारा राज्य ही नष्ट हो जायगा। अगर आप अपने राज्य की सुरक्षा चाहते होतो मै आपको एक एसा उपाय बताता हूं जिससे राज्य भी सुरक्षित रहे और राज्याधिकार भी प्राप्त हो जाय। अपने यहाँ पुरातन काल से रिवाज है कि पट्ट हस्ती को श्रृंगारित कर उसकी सूंड में फूल की माला रखकर शहर में छोड दिया जाय और वह जिसे माला पहनावे उसी को अपना बादशाह मान लिया जाय। वजीर की इस नेक सलाह को सभो सज्जनों ने स्वीकार की। बजीर के कथनानुसार हाथी को स्नान करवाकर आभूषणों से सज्जितकर उसकी सूंड में फूल की माला पकडा दी गई। अब शहर में बडी भारी तैयारियाँ हुई।

राज्य प्राप्ति के प्रलोभन से लोग झुन्ड के झुन्ड श्रृंगारित हाथी के पीछें पीछे घूमने लगे। जिधर हाथी जाता है लोग उसके सामने जाकर माला प्राप्ति के लिए खडे हो जाते थे। हाथी के पीछे पीछे बाजों की झन-

कार के साथ सेना भी चल रही थी। बडे बडे सामन्त सरदार भी अपने अपने वाहन पर बैठ कर साथ साथ में चल रहे थे। स्थान स्थान पर नाटक गायन हो रहे थे। इत्र गुलाब जल की पिचकारियां छोडी जा रही थी। इस समारोह के साथ हाथी आगे बढ रहा था। इस सुहावने अवसर को देखकर प्रत्येक व्यक्ति का मन प्रफुल्लित हो रहा था। इस प्रकार सेकडों व्यक्ति को निराश करता हुआ हाथी बाजार के बीच पहूंचा। वहाँ ऐक भिखारी भिखमांग रहा था। ऊंचे स्वर में एक लखपति साहुकार की पेढी के सामने खडा रहकर बोल रहा था भाई रोटी दे' मैं भूखा हूं परमात्मा तेरा भला करेगा एक गुना देगा, तो लाख गुणा पायगा। इस प्रकार आवाज दे रहा था। उस समय वहीं पर हाथी आया और अपनी सूंड से पुष्पमाला उस भिखारी के गले में पहना दी। थोडे समय पहले रोटी का टुकडा मिलना भी बड़ा दुर्लभ था वह आज इस राज्य का सम्राट बन गया। विधी का विधान अजीब है। किस समय मनुष्य के भाग्य का पर्दा खुल जाता हैं यह ज्ञानी के सिवाय ओर कौन जान सकता है। दर दर का भिखारी आज महाराजा बन गया ज्यों हि उसके गले में पुष्प की माला पडी लोग उसकी जय जय कार करने लग गये। उसके शरीर पर के चीथडे हटा कर उसे नया शाही पोशाक पहनाया गया और राज्य का ताज उसके सर पर रख दिया गया। जिसको वेठने के लिए टूटी खाट भी दुर्लभ थी वह आज रत्न जटित हाथी के होदे पर जा वेठा। गाजे बाजे के साथ उसे राजमहल में लाया गया और उसका राज्याभिषेक कर उसे अपना राजा बना दिया गया। धीरे धीरे वह राज्य नीति में निपुण हो गया और धैर्य उदारता आदि महान गुणों के कारण थोडे समय में ही वह प्रजावत्सल बन गया। राज्य का संचालन अच्छे ढंग से करने लगा।

बादशाह जब कभी उठता तो हरवक्त वजीर के कन्धे पर हाथ दे कर उठता था। एक रोज बादशाह का जोर वजीर के कन्धे पर अधिक पडने से वजीर के मन में पूर्व की बात याद हो आई कि एक समय वह था जब रोटी का टुकडा मांगने से भी नहीं मिलता था। हड्डियाँ हड्डियां निकल रही थी। और एक आज का भी समय हैं कि बिना सहारे उठ नहीं पाता। ऐसा विचार होते ही वजीर को सहज हंसी आगई। वजीर को असमय हसते देख बादशाह ने वजीर से पूछा वजीर तुम असमय क्यों हस रहे हो? वजीर जहाँपनाह यों-ही हंसी आगई। बादशाह नहीं सच कह, हसी क्यों आई? वजीर गुस्ताखी माफ हो। बादशाह बोले सर्व कसूर माफ है। सच बात कहदे। वजीर को जिस बात पर हसी आई थी वह कह सुनाई। वजीर की बात सुनकर बादशाह बोला वजीर! बस तेरे से इतना वजन भी सहन नहीं होसका, सचमुच तूं मेरे वजन देने के इरादे को नहीं समझसका। मेरा तेरे कन्धे पर भार देने का आशय यह था कि इतनी बडी सल्तनत का सारा बोज मेरे ही सरपर रख दिया गया है। इस बोझ को उठाने के लिए सहायक की जरूरत है और इस जरूरत को तूं ही पूरा कर रहा है। क्योंकि इस राज्य की जितनी जिम्मेदारी बादशाह पर है उससे कम वजीर पर नहीं हो सकती अतः वह भी राज्य का बोज अपने सर उठाता है। इस कारण मैं तुझे इशारे से समझाता रहता हुं कि तूं यों न समझ ले कि मैं निश्चिंत हुं। किन्तु राज्य का आधा बोज तेरे सर पर भी हैं। यों कहकर बादशाहने अपने विचार वजीर को समझा दिये। जिस प्रकार बादशाह का आधा वजन उस वजीर पर था उसी प्रकार हमारा आधा वजन राज्य धर्म की सेवा बजाने के लिये आप सामन्त वर्ग पर भी है। राज्य के संचालन में व प्रजा को न्यायमार्ग पर दृढ रखने के लिए सामन्तवर्ग का सबसे बडा हिस्सा होता है। आपने हमको इस त्याग के सिंहासन पर बैठाया हैं। आप हमें धर्म के संयम के बादशाह स्वरूप समझते हो।

हमारे धर्म कार्य में आप सरदारों की सहायता की हमेशा जरूरत रहती है सो हर समय संतसेवा किया करें। त्यागियों के यहाँ जाने से आपको समय समय पर लाभ की प्राप्ति होती रहेगी। इस प्रकार पूज्य

श्री ने राजनीति और राजकर्मचारियों के कर्तव्य एवं संतसमागम जैसे विषयों पर दो घन्टे तक मार्मिक प्रवचन सुनाया। इसके बाद हिज हाईनेश महाराणा साहब ने पूर्ण श्रद्धा से पूज्यश्री को वस्त्र वहराया।

भव्य शान्ति समारोह—

चम्पाबाग की ता. १२-१-४२ की मुलाकात में श्री महाराणा साहब को पूज्य आचार्यश्री ने फरमाया कि आपकी इच्छा हो जब सारे मेवाड के साडेदस हजार गांवों में अगता पलवाया जाय। प्रत्येक गांव के व्यक्तियों से जीव (बकरे आदि) अमरिये करवाये जाय एवं उस रोज राज्य के एवं विश्व के प्राणिमात्र की शान्ति के लिए ॐ शान्ति की प्रार्थना की जाय। पूज्यश्री की इस आज्ञा का महाराणा साहब ने सहर्ष स्वीकार कर लिया। तदनुसार माघ शुक्ला पूर्णिमा रविवार पुष्यनक्षत्र के योग में ता. १-२-४२ के दिन सारे मेवाड भरमें अमरिये करने का व अगता पालने का व ॐ शान्ति की प्रार्थना करने का हुक्म श्री महाराणा साहब ने जाहिर किया। तदनुसार सारे मेवाड मे सर्व जगह हुक्म तामिले भेजी गई। महाराणा साहब के आज्ञानुसार सारे मेवाड में उस दिन जीवहिंसा एवं आरंभ समारंभ के कार्य बन्द रखे गये और गावों गावों में ॐ शान्ति की प्रार्थना की गई।

उदयपुर में ॐ शान्ति दिवस—

श्री हिजहाईनेस महाराणा साहब की छत्र छाया में उदयपुर राजधानी में ॐ शान्ति दिवस मनाने की भव्य तैयरियां शुरु हुई। श्री महाराणा साहब ने सज्जन गार्डन गुलाब बाग में नवलखा फिल्ड के विशाल चौक को शान्ति प्रार्थना के लिए अत्युत्तम स्थान पसंद किया। तदनुसार श्री फराश खाना के हाकिम साहेब भंडारीजी श्री नन्दलालजी सा. ढींकड्या द्वारा नवलखा फील्ड में छायावान व पुरूषों व स्त्रियों को बैठने के लिए सुन्दर व्यवस्था की गई। प्रवेश स्थल पर भूपालगेट नगर नामका बडा रमणीय दरवाजा बनवाया गया जो देखने में बडा ही सुन्दर मालूम देता था। रास्ता ध्वजाओं से श्रृंगारित किया गया। चारों ओर साइनबोर्ड लगाये गये। इस प्रकार परिषद् बेठने के लिए भव्यस्थल को सुव्यवस्थित तैयार किया गया। श्री जैन महावीर मंडल जो कि स्थानकवासी संप्रदाय की मुख्य संस्था है। जिनके सदस्य बिना भेद भाव के समस्त स्थानकवासी जैन मुनियों की सेवा बडे तन मन से एवं उदारता से करते आये हैं। उनकी ओर से हजारों पेंपलेट जनता को बाँटे गए। उन पेम्पलेट में ॐ शान्ति प्रार्थना के दिन हिंसा एवं आरंभ सारंभ के कार्य सर्वथा बन्द रखने की जनता को प्रार्थना की गई थी और ॐशान्ति की सामूहिक प्रार्थना में सम्मिलित होने का निमंत्रण दिया गया था। बडे बडे राज्यकर्मचारि, सेठ, एवं प्रतिष्ठित व्यक्तियों को सुन्दर कार्ड छपवा कर डेप्युटेशन द्वारा पहुंचाया गया। उस दिन राज्य के समस्त केदियों को भी ॐ शान्ति की प्रार्थना का आदेश मिला था। तदनुसार सेन्ट्रल जेल के तमाम कैदियों को उस दिन ॐ शान्ति की प्रार्थना के लिए एक स्थान पर एकत्र होने का आदेश मिला। जैन महावीर मंडल की तरफ से कोठारीजी साहब ने महाराणा से अर्ज की कि हम जैन लोग आज सभी कैदियों को भोजन देना चाहते हैं। तथा पूज्यश्री ने फरमाया कि उस दिन कैदियों से किसी भी प्रकार का काम न लिया जाय। इन सर्व बातों के लिए महाराणा साहब ने अनुमति व आज्ञा दी। तदनुसार ता० ३१-२-४२ के दिन तीन बजे शान्ति प्रार्थना करने के लिए जेलर साहब श्री किशनसिंहजी सा०के पास श्री महाराणा साहब का हुक्म पहुंचाया गया और उपरोक्त टाईम पर श्री कोठारीजी साहब के सुपुत्र श्रीनजरसिंहजी को खुद महाराणा साहब ने फरमाया कि आहार पाणी में मोडो वे जावेगा सो थूं वठे जल्दि जाकर जेल में शान्ति प्रार्थना करवा की जल्दि व्यवस्था करवा दे। आज्ञानुसार कुंवरसाहब पूज्यश्री के पास आये और जेलर साहेब को कहला भेजा कि सब कैदियों को फौरन इकट्ठे किये जाय। तदनुसार जेलर साहब ने जेल के तमाम कैदियों को एक स्थान पर एकत्र

किये । इधर पूज्यश्री भी ठीक समय पर अपनी शिष्यमंडली के साथ जेल में पधारे । साथ में बहुत से श्रावकगण भी थे । जेलर साहेबने पूज्यश्री का स्वागत किया और समस्त कैदियों ने भी खडेहोकर पूज्यश्री का अभिवादन किया । जेल में किसी को भो आने जाने की ईजाजत नहीं होती । और न ईस प्रकार का पुनित अवसर ही कैदियों को नसीब होता । सभी कैदियों को यह सब कुछ देखकर बडा आश्चर्य हुआ । सभी कैदी आज अपने अपने भाग्य को सरहाने लगे और महाराणा साहब को धन्यवाद देने लगे कि महा राणा साहब ने दया कर के हमको यह सुअवसर प्रदान किया ।

पूज्यश्री श्रावकगण और सन्तमन्डली के साथ जेल के अन्दर के चौक में पधारे । जेल का मकान अन्दर से बडा अच्छा लगता था । स्वच्छता सर्वत्र दिखाई देती थी । ऊंचे ऊंचें वृक्षो एवं बाग जैसे बडा सुशोभित था । कैदिगण भी बडे सुव्यवस्थित लगते थे । कैदियों को देखने से पता लगता है कि यहाँ के कैदियों के साथ दया का अच्छा वर्ताव होता है । उनके साथ नृशंसता नहीं होती

पूज्यश्री मुनियों द्वारा लाए गए टेबलपर जा बिराजे । जेलर साहब ने सभी कैदियों को पंक्ति बद्ध बैठने का हुक्म फरमाया। पूज्यश्रीने सर्व कैदियों को सम्बोधित करते हुए पाप पुण्य के अच्छे और बुरे फल बताए । आपने फरमाया भाईयो संसार में इस आत्मा को कहो भी सुख नहीं है । कर्म जन्म दुःख सब जगह आ घेरते हैं । अहिंसा सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य सदाचार अपरिग्रहत्व आदि सद्गुणों को अपने जीवन में उतार कर बुरी आदतों को छोडकर ईश्वर भजन करना चाहिए ईश्वर भजन से ही आत्मा सुखी व बलवती होती है ।

सेन्ट्रल जेल में प्रवचन—

आचार्यश्री ने अपने प्रेरणास्रोत प्रवचन में कहा–प्रिय बन्धुओ जेल की सजा होना मात्र ही पाप का प्रायश्चित नहीं है । सजा होने के बाद भी यदि पाप का प्रकटीकरण नहीं होता है तो उससे पूरी शुद्धि कभी नहीं होगी । पाप की शुद्धि के लिए वृत्तियों में सहजता होनी चाहिये सहजता के लिए धर्म का सहारा लेना होगा । जीवन का ऊँचा आचार और पवित्र विचार ही वास्तविक धर्म है । धर्म जीवनजागृति का साधन है । वह विकास और शान्ति का सच्चा मार्ग देता है। पर यह सर्व कबतक ? जबकि व्यक्ति उसके आदर्शों पर अपने जीवन को ढाल देता हो । केवल परम्परा–पोषण और स्थिति पालन में धर्म को बांधे रखना उसे जड और निस्तेज बनाना है । धर्म तो जीवन– शुद्धि का निर्द्वन्द्व और अप्रतिबन्ध राजमार्ग जैसा है । बन्धन और धर्म, इनका कैसा मेल ? यदि जडता और चेतना का मेल हो तो इनका हो । धर्म साधना में अपने मन को रमा देनेवाले के अंतरतम में वह चिनगारी पैदा होती जाती है. जो हरदम उसे कुमार्ग से बचने के लिये सदा सजग और सद् बुद्धि रखती है । जडता में वह उसे जाने नहीं देती । वह तो उसे आत्म चेतना में खोए रखना चाहती है । इसलिए मैं अक्सर कहा करता हूँ, केवल मन्दिरों में जाने मात्र से तीर्थ स्थानों पर चक्कर लगाने मात्र से क्या बनेगा ? यदि धर्म के मूल आदर्शों को जीवन में प्रश्रय नहीं दिया जाए । मैं कईबार देखता हूँ– लोग आते हैं । मेरे चरणों के नीचे की धूल ले जाते हैं । उसके सहारे अनेकानेक बाधाओं से छूटने की परिकल्पना करते हैं । मैं कहता हूं । आप उन आदर्शों को ही लीजिए जिन्हें मैं हर समय जीवन में लिये चलता हूं, और जिनकी व्याप्ति मैं लोगों में भी देखना चाहता हूं । वे हैं – अहिंसा, दया, सत्य, शील संतोष और शौच । इन्हें लीजिए । यही सच्चा 'जीवन' तीर्थ है जैसा कि महाभारत में युधिष्ठिर को कहा गया है–

आत्मा नदी संयम पुण्यतीर्थं । सत्योदकं शीलतटोदयोर्मि ॥
तत्राभिषेकं कुरु पाण्डुपुत्र ! न वारिणा शुद्धयति चान्तरात्मा ॥

आत्मा नदी है संयम उसका पवित्र तीर्थ है। सत्य उस नदी का जल है। शील उसका तट है। दया की लहरें छलछलाती है। हे युधिष्ठिर! उसमें ही स्नान कर। पानी से अंतरात्मा शुद्ध नहीं होता।

मुझे भारतवर्ष की विभिन्न सेन्ट्रल जेलों में जाने का अवसर मिला है। प्राचीन युग की तुलना में आज की जेलों का बहुत बडा सुधार हुआ है। बन्दियों को गृह उद्योग का प्रशिक्षण दिया जाता है। अध्ययन के लिये पुस्तकालय की सुविधा होती है। कला सत्संग और विविध सांस्कृतिक कार्यक्रमों के द्वारा उनकी जीवन दीशा को मोडने का सफल प्रयास किया जाता है। इसके सुखद परिणाम निकले हैं। मैं इसे अहिंसा का ही सफल प्रयोग मानता हूं। व्यक्ति निर्माण की प्रक्रिया भी यही है। किसी अपराधी को कांनूनी ढंग से सजा देने मात्र से ही उसका जीवन सुधार नहीं हो सकता। जीवन सुधार के लिए हृदय परिवर्तन को आवश्यकता है। हृदय परिवर्तन के लिए सत्संग ही एक राजमार्ग है। वह बुराई. असद्वृत्ति और अनैतिक के प्रति घृणा पैदाकर भलाई, सद्वृत्ति और नैतिकता के लिए मन में एक प्रेरणा पैदा करता है। ताकि व्यक्ति स्वयं बुराईयों की ओर से मुख मोडे तथा भलाईयों की ओर अधिकाधिक उन्मुख हो सकें।

पापसे मुक्ति ईश्वर भजन से होती है। बाल्मिकी जैसा हत्यारा लुटेरा भी ईश्वर भजन से अजर अमर हो गया है। जेल में जब कभी तुम्हें समय मिले उस समय में निरर्थक बाते न करके अपना निरीक्षण करों। यह जेल जो हमें मिली है। मनुष्य का स्वभाव है वह भूल करता है लेकिन भूल को मनुष्य ही सुधारता है। आपने गलत काम किया वह आपने अनायास किया या जानकर किया है किन्तु आज से हमें यह निश्चय करना होगा कि अब हम चोरी हत्या आदि अमाननीय कृत्य कभी नहीं करेंगे। हम मनुष्य हैं इसलिए मनुष्य बनकर रहेंगे। आपलोग इस समय अपने दुष्कृत्यों की सजा भुगत रहे हो। अगर अब भी आप सदाचार से रहने लगजावों तो आपके सदाचार से प्रसन्न होकर सरकार स्वयं आप की सजा कम कर देगी। जेल को भी अपना घर मानकर भाई भाई की तरह आपस में रहो। एक दुसरों के दुःख पर हसो मत किन्तु सहानुभूति रखो। और अपने पाप से मुक्ति पाने के लिए हृदय से ईश्वर प्रार्थना करो। आप अपने व्यवहार और आचरण से जेल को भी स्वर्ग बनादो। जब कभी तुम्हारे पर आपत्ति आवे उस समय सदा यह सोचते रहो–प्रभो मैंने अज्ञानता के कारण पाप किये हैं। और उसी की सजा भुगत रहा हूं। भविष्य में मुझे सदा अच्छा आचरण करने का मौका दे। मैं दुनियां को अब यह बता दूंगा कि बुरा आदमी भी अच्छा आदमी बन सकता है। आपको महाराणा साहब ने यह एक बडा अच्छा सुअवसर दिया है। इस प्रकार पूज्यश्री ने एक घंटे तक कैदियों को उपदेश दिया उपदेश समाप्ति के बाद कैदियोंने सामूहिक रुप से दस मिनिट तक ॐ शान्ति की धुन लगाई। और खडे होकर तीन मिनिट तक मौन रखा बादमें जोरों की आवाज में यह नारा लगाया–व्यक्ति का देश व संसार का कल्याण हो।

तत् पश्चात् पूज्यश्री ने जेलर साहब को फरमाया कि कल सारे मेवाड में आमतौर पर अगते पाले जावेंगे। एवं गुलाबबाग में महाराणा साहब के नेतृत्व में ॐ शान्ति की प्रार्थना होगी। इसलिए कल सर्व कैदियों को छुट्टी मिलनी चाहिये। इस सम्बन्ध में श्री महाराणा साहब का आपको हुक्म मिल गया होगा। जेलर साहब ने इस पर अर्ज को कि आपकी आज्ञानुसार कल छुट्टी करदी जावेगी। उसी समय खडे होकर सभी कैदियों को कह दो पूज्य महाराज सा० की इत्तला के अनुसार तुम्हें कल की छुट्टी दी जाती है। तदनुसार जमादार ने जेलर साहब के कथनानुसार बुलन्द आवाज से हुक्म सुना दिया। सब कैदियों ने यह हुक्म सुनकर बडे जोरों से हर्षनाद किया और बाहों को ठपकारते जमीन से उछलते–हमें छुट्टी और भोजन दिलाने वालों की जय' श्री महाराणा साहब की जय' पूज्य महाराज की जय' की बुलुन्द

आवाज़ से सारे कैद खाने को गुंजित किया । तत् पश्चात जब कैदियों ने पूज्यश्री से प्रार्थना की कि हमें पुनः ऐसा पुनित अवसर देते रहें और अपने पावन उपदेश से हमारा उद्धार हो । इस प्रकार जेल में शान्ति प्रार्थना कराके पूज्यश्री स्वस्थान पधारने लगे तब जेलर साहब पूज्यश्री को अपने घर ले गये वहा आहार पानी बहराकर कैदियों को अपनी तरफ से प्रसाद बांटा । दूसरे दिन श्रीमहावीर मण्डल की तरफ से कैदियों के लिए भोजन की तैयारियाँ प्रारम्भ हुई । श्री वकिल साहब रणजीतलालजी श्रीसोहनलालजी मेहता आदि महावीर मण्डल के सभी सदस्यों ने सारी व्यवस्था की । जब यह बात श्री स्थानकवासी समाज के मुख्य श्रावक उदार सेठ अम्बालालजी हीरालालजी खेमलीवालों ने सुनी तो अपनी तरफ से समस्त कैदियों को मिष्ठान्न खिलाने का जाहिर किया । सेठ साहब की इस उदारता के लिए संघ ने सेठ साहब को धन्यवाद दिया ।

श्री महावीर मण्डल के परम हितेषी श्री शोभालालजी जावरिया आदि मुख्य श्रावकों के प्रबन्ध से माहेश्वरी पंचायती नोहरे में भोजन तैयार किया गया और उसे जेलखाने में पहुंचाया गया । सब कैदियों ने बडी प्रसन्नता के साथ उसे खाया और खिलाने वालों को खूब धन्यवाद दिया ।

ता० ३१-१-४२ को सरकारी डयोंडी द्वारा अगता पालने व जीवों को अमरियां करने और ता० १-२-४२ को गुलाबबाग में शान्ति प्रार्थना में सम्मलित होने का हुक्म सुनाया गया । स्थान-स्थान पर पेम्पलेट चोंटाये गये । इस प्रकार शान्ति प्रार्थना की सूचना सर्वत्र करा दी गई ।

प्रातः महलों में पूज्यश्री को आमंत्रण

ता० १-२-४२ को सुबह श्री महाराणा साहब ने श्री चौविसाजी को भेजकर पूज्यश्री को महलों में पधारने का आमंत्रण दिया । तदनुसार पूज्यश्री सुबह मेहलों में पधारे । लम्बे समय तक शान्ति प्रार्थना होती रही तथा धार्मिक विषयों पर चर्चा हुई । इस समय महान बुद्धिमान दिवान श्री तेजसिंहजी साहब मेहता भी वहापर हाजिर थे । प्रसंगवश दिवान साहब की बात चली । दिवान सा० की प्रमाणिकता के लिये श्रीजी हुजूर ने भी भूरि भूरि प्रशंसा की । श्री महाराणा साहब आज के जलसे से बडे प्रसन्न दिखाई देते थे ।

गुलाब बाग में भव्य शान्ति प्रार्थना

ता० १-२-४२ को गुलाबबाग में ॐशान्ति की प्रार्थना के लिये पहले ही से सुन्दर तैयारियाँ हो चुकी थीं । परमभक्त श्री रोशनलालजी मेहता ने इस कार्य में बहुत अच्छा भाग लिया । फोटुग्राफर श्री दौलतसिंहजी लोढा ने रुई के बडे अक्षर वाले साइनबोर्ड तैयार किये और उसे स्थान स्थान पर लगाये गये । इस सभा मण्डप की शोभा बढाने में व आकर्षक सभा मण्डप बनाने में महावीर मण्डल के सदस्य एवं उनके प्रेसिडेन्ड साहब चन्दनमलजी व जीवनलालजी नलवाया काल्लूलालजी लिलवाया आदि सर्व श्रीसंघने तन तोड परिश्रम किया । ठीक ग्यारह बजे पूज्यश्री स्थानक से प्रार्थना स्थल पर पधारने के लिए रवाना हो गये । इधर सारा नगर प्रार्थना स्थल पर जाने के लिए उमड पडा । सर्वत्र जनता के झुण्ड के झुण्ड प्रार्थना स्थल पर जाते हुए दिखाई दे रहे थे । आज के इस धार्मिक उत्सव को मनाने के लिए सबकी अनुकूलता को ध्यानमें रखकर महाराणा साहब ने समस्त राज्य में सरकारी छुट्टी जाहिर की थी तदनुसार स्कूल कालेज कोर्ट कचहरियाँ आदि सब उस दिन बन्द रखी जिसकी वजह से शहर के नागरिक भोजन आदि से निवृत्त होकर सैकडों की संख्या में प्रार्थना स्थल पर उपस्थित होने लगे । देखते देखते सारा गुलाबबाग का मैदान जनता से खचाखच भर गया । आजकी सभा का प्रबन्ध बडा हि सुन्दर बना था । वाइस प्रेसिडेन्ट सा. श्री छगनलालजी सा० शोसतिया श्री चिमनलालजो बोरदिया और श्री जीवनलालजी नलवाया ने बडे सुन्दरढंग से

सभा की सुव्यवस्था की। इनका एतद् विषयक परिश्रम बडा हि सराहनीय रहा।

प्रथम वीर पुत्र समीरमुनिजीने "आओ बन्धु सभी मिल आओ, 'शान्ति भजन सुखदाय' यह भजन कह-कर सभा का कार्य प्रारंभ किया बाद में पं. श्री कन्हैयालालजी म० ने आधे घन्टे तक मांगलिक प्रवचन दिया करीब एक घण्टे के भाषण के बाद रेजिडेन्ट साहब का भी आगमन हो गया। रेजीटेण्ड साहब के आने के बाद पूज्यश्री ने अपना भाषण प्रारंभ किया–

अरिहंता असरीरा आयरिय उवज्झाय मुणिणो। पढम अक्खर निउण्णो ओंकारो भविस्सइ ॥
अकारो वासुदेवः स्यात् उकारः शंकरस्तथा। मकारो ब्रह्मणी प्रोक्तः त्रिभिरोंकार उच्यते ॥

उपस्थित सज्जनों आज हम सामुहिक रूपसे ॐकार का स्मरण करने के लिए एकत्र हुए हैं। ॐकार यह अक्षर संक्षिप्त रूप से ईश्वर का ही स्मरण है। अरिहंत प्रभु का अ, अशरीरी सिद्ध भगवान का अ आचार्य का आ, इसप्रकार अ, अ, और आ यह तीनों मिलकर अकःसवर्णे दीर्घः इस सूत्र से आ बन जाता है। उपाध्याय का उ, आ और उ के मिलने से 'आद्‌गुणः इस सूत्र से ओ हो जाता है। मुनि के मकार से ओम् शब्दकी उत्पत्ति होती है। यह रही जैनमान्यतानुसार ॐ शब्द की व्युत्पति। वैष्णव दृष्टि से ॐ शब्द इस प्रकार बनता है– अ से वासुदेव, उ, से उमेश और म से ब्रह्मा इस प्रकार दोनों जैन और वैष्णव दृष्टि से ॐ शब्द के अंतर्गत ईश्वर शब्द हि ग्रहण होता है। एक ही शब्द से समग्र अपने अपने माने हुए सर्व ईश्वर कोही संबोधित करते हैं। प्रत्येक मनुष्य को ईश्वरपर श्रद्धा होनी चाहिये। जिसकी ईश्वर के प्रति श्रद्धा नहीं है वह नास्तिक समझा गया है।

नास्तिक संसार में कहीं सुखी नहीं हो सकता। वह अपना अस्तित्व संसार में मिटा देता है। सच्चा सुख और वास्तविक आनन्द पाना है तो हमें आस्तिक बनना पडेगा। भारत एकमहान धर्म प्रधान देश है। युगों से भारतवासी आस्तिक है। एक युग में राजा, महाराजा, धनिक, निर्धनी सर्व के सर्व आस्तिक थे। ईश्वर के नाम पर अपने आपको भी मिटा देने में वे जरा भी हिचकते नहीं थे। महाराजा हरिश्चन्द्र, कर्ण, विक्रम महाराणा प्रताप आदि महापुरुष का उदाहरण हमारे सामने हैं। उनके बलिदान की कथा आज भी इतिहास गारहा हैं। अपने धर्म के लिए महाराणा प्रतापसिंहने घास की रोटी खाई। भामाशाह, आशाशाह जैसे नर वीरों ने धर्म के नाम पर सर्वस्व अर्पण कर दिया। धाय पन्ना ने राजपूत्र उदयसिंह को बचाने के लिए अपने प्रिय पुत्र का बलिदान कर दिया। इन सर्व कर्मवीरों के मन में अपने ईश्वर और धर्म के प्रति असीम श्रद्धा और आस्था थी तब ही इन लोगोंनें हँसते हंसते इतना बडा बलिदान कर दिखाया।

आज संसार सर्वत्र अशान्ति की प्रचण्ड ज्वाला से झुलस रहा है। और वह इससे त्राण पाने के मार्ग खोज रहा है। लेकिन् उसे अभी तक शान्ति पाने का सही मार्ग हि नहीं मिल सका। ऐसे अशान्ति के समय हम ऐसी शक्ति प्रगट करें कि जिससे चारों ओर शान्ति फैल जाय। भगवान श्री शान्तिनाथ में जो शक्ति थी और उन्होंने जो सर्वत्र शान्ति फैलाई उनकी कथा सर्व विश्रुत है।

चइत्ता भरहं वासं चक्कवट्टि महड्ढिओ। संति सन्ति करे लोए पत्तो गई मणुत्तरं ॥

भगवान श्रीशान्तिनाथ लोक में सदा शान्ति करने वाले हैं। कोई मूढ अज्ञानी ऐसा भी कहते हुए सुना देता है कि–ईश्वर भजन से शान्ति मिलती है। भगवानश्री शान्तिनाथ के भजन से शान्ति मिलती है। ऐसा उल्लेख किसी भी शास्त्र में नहीं आता इत्यादि अनेक अज्ञानता की बात का वे महापुरुष के वचन को ए ईश्वर की शक्ति को छुपाते हैं। और अपनी मूर्खता का परिचय देते हैं। ईश्वर भजन से सर्वत्र शान्ति ही शान्ति होती है इस सिद्धान्त में कोई दो मत नहीं हो सकता। जब पूर्वकाल में ग्राम नगर देश वासियों को संकट का समय मालूम होता तो वे फौरन ईश्वर भजन में लग जाते थे। ईश्वर भजन दुःखी और सुखी राजा

और रंक धनी और निर्धनी वृद्ध एवं बालक, तपस्वी व भोगी, निरोगी व रोगी संसारी व संयमी स्त्री और पुरुष सर्व कोई कर सकते हैं। सीता और अंजना का जंगल में कौन साथी बना। द्रोपदी के चीर किसने बढाये ! सती सुभद्रा का गोरव कायम रखने में, चम्पा के द्वार खोलने में सहायक कोन बने ? अर्जुन का यश किसने कायम रखा। सती कलावती के हाथ कट जाने पर पुनः हाथ किसने लगाये। इन सबका जवाब होगा ईश्वर भक्ति की दिव्य शक्ति ने। मनुष्य जानता हुआ भी अपने मार्ग को भूल रहा। अपनी सत्ता व सुख बढाने इधर उधर भटकते फिरते हैं परन्तु यह नहीं जानता कि वह शक्ति मेरे पास मौजूद है। तो रोटी के मौजूद होते हुए भी क्यों भूखा मरूं, भरे सरोवर के होते हुए भी क्यों प्यासा मरूं ? अपनी वस्तु को लेते हुए कोई रोक सकता है ? ऐसा करने की किसी में भी ताकत नहीं। हम खुद ही भूल भुलैया में पडे हुए हैं। हम संसार के मोह माया में फसना जानते हैं किन्तु माया के इस बन्धन को तोडना नहीं जानतें। शिकारी एक ओर जाल बिछाकर दूसरी ओर उन्हे मारने के लिए दौडता है। मृग शिकारी से बचने के लिए खुद इधर उधर दौडता है। मार्ग होते हुए भी भय से वह भ्रान्त हो जाता है और जाल को ही अपने त्राण का स्थान मानकर उसी की ओर दौडता है और जाल में फस जाता है। जाल से बच निकलने की शक्ति होते हुए भी यह भोला प्राणी अपनी इस शक्ति से अज्ञात रहता है और कुशलता पूर्वक जाल से बच निकलने के बजाय और भी अधिक जाल में फस जाता है। यही स्थिति आज हमारी हो रही है। हम यह जानते हैं कि ईश्वर भजन व नाम स्मरण ही अशान्ति, दुःख, रोग, शोक रूप पारधी के जाल से मुक्त होने का मार्ग है और यह हमारे लिए खुला है। फिर भी वह इसी जाल में फसता चला जा रहा है। आत्मा में अनन्त शक्ति है अगर वह चाहे तो एक ही क्षण में संसार में फसाने वाले विषय कषाय, राग, द्वेष मिथ्यात्व, हिंसा, झूठ चोरी, मैथुन परिग्रह आदि के जाल से मुक्त हो सकता है। सज्जनों ईश्वर नाम में अपार शक्ति है। इसकी गहनता ज्ञानी के सिवाय अन्य कोई नहीं जान सकता। मैंने पहले भी कह दिया था कि पुरातन काल में जब कभी संकट मालूम होता तो वे ईश्वर भजन करते थे और सारे देश को संकट से मुक्त करते थे।

श्री शान्तिनाथ भगवान के जन्म के पूर्व जब वे अपनी माता के गर्भ में स्थित थे तब विश्वसेन राजा के देश में सर्वत्र महामारी और मृगी का भयंकर रोग फैल गया था। जिधर देखो उधर सर्वत्र हाहाकार हि हाहाकार दृष्टि गोचर होता था। मृतकों के ढेर स्मशान में पडे रहते थे उन्हें जलाने के लिए कोई व्यक्ति नहीं मिलता था। इस भयंकर आपत्ति से त्राण पाने के लिए सभी देवी देवताओं को पूज चुके थे। और जो कुछ भी जिस किसी ने कहा वह लोगोंने किया किन्तु वे लोग इस महामारी से अपने आपको, देश को नहीं बचा सके। तब सबने विचार किया कि इस संसार में प्रजा के दुःख को दूर करने के लिए अपना सर्वस्व अर्पण करने वाले राजा ही है। अतः हमें महाराजा के पास जाकर अपने संकट की कहानी सुनानी होगी। यह सोच कर नगर की प्रजा राजा के पास पहुंची और अश्रु भीनी आखों से अपनी दर्द भरी कहानी राजा को सुनाई और महामारी से मुक्ति दिलवाने के लिए प्रार्थना की। प्रजा की प्रार्थना को सुन कर राजा का दयार्द्र हृदय पिघला और प्रजा को आश्वासन देते हुए बोला—प्रजाजनों मैं आपको इस बिमारी से मुक्ति दिलवाने का अवश्य प्रयत्न करूंगा और जबतक आपका दुःख दूर नहीं होगा तबतक मैं अन्न जल भी नहीं ग्रहण करूंगा। प्रजा भी राजा के इस आश्वासन से आस्वस्थ हुई। इधर महाराजा उसी क्षण एकान्त में जाकर कायोत्सर्ग पूर्वक ईश्वर के ध्यान में लीन हो गया। और प्रभु से प्रार्थना करने लगा कि हे भगवन ! हे प्रभो ! आप हमारे रक्षक हैं। आप अपने दिव्य ज्ञान द्वारा हमारे दुःख को देख व मुझे वह शक्ति प्रदान कर कि जिससे मैं देश को इस महामारी से मुक्त करूं। इस प्रकार की भावना में तल्लीन हो गया। उस समय महाराणी भी महाराजा के पास आ पहुंची। महाराज को ध्यानस्थ देख वह भी प्रजा के दुःख को

दूर करने का उपाय सोचने लगी। सहसा उसे अपने गर्भस्थ महानआत्मा का ध्यान हो आया। वह विचारने लगी—मेरे घर में ही समस्त विश्व को शान्ति प्रदान करने वाले त्रिलोकीनाथ विराज रहे हैं। संसार के अन्धकार को, रोग, पीडा, महामारी को दूर करने वाले सच्चे युगपुरुष मौजूद हैं तो मैं इन्हीं का स्मरण कर क्यों नहीं संसार का दुःख दूर करूं ? यह विचार कर महाराणी धीरे धीरे महल के छत पर पहुंची। उसी समय दासी ने महाराणी के चरण को धोकर वह जल महाराणी को दिया। महाराणी ने गर्भस्थ इष्ट देव का स्मरण कर वह जल चारों दिशा की ओर छिडका। जल के छिडकते ही सर्वत्र शान्ति छा गई प्रजाजनों में अपार हर्ष छा गया। और महाराजा के पास आ कर महामारी के उपशान्त होने की बात कही। महामारी उपशान्त होने की बात सुन कर महाराजा ने अपना ध्यान छोडा और प्रजा का बड़ा सत्कार किया। महारानी ने अपने गर्भस्थ बालक का चमत्कार बताया। संसार में जिनके नाम मात्र से ही शान्ति हो गई थी। उस त्रिलोकीनाथ बालक के जन्म के बाद उनका 'शान्तिनाथ' नाम रखा गया। आज शान्तिनाथ भगवान शरीर के रूप में हमारे सामने मौजूद नहीं हैं किन्तु उनके नाम में ही विश्व शान्ति का चमत्कार रहा हुआ है। यह एक उदाहरण है। किन्तु ऐसे हजारों उदाहरण हमें मिलेंगे। ईश्वर के नाम स्मरण में अमोघ शक्ति है। समस्त रोगों की राम बाण औषधि है। ईश्वर के नाम स्मरण से हम स्वयं ईश्वर की स्थिति तक पहुंच जाते हैं। ईश्वर भक्त संसार की सबसे बडी शक्ति पर भी विजय पासकता है।

इस प्रकार पूज्यश्रीने करीब डेढ घन्टे तक नामस्मरण व विश्व शान्ति पर मार्मिक प्रवचन दिया। पूज्यश्री के प्रवचन से महाराणा साहब बडे प्रसन्न हुए। महाराणा के जीवन का यह पहला प्रसंग था कि प्रजाजनों के बीच सामान्य नागरिक की तरह बैठ कर पूज्यश्री का व्याख्यान श्रवण करने का सुअवसर प्राप्त कर रहे थे। प्रजा भी महाराणा साहब को देखने के लिए बडी उत्सुक थी। व्याख्यान समाप्ति के बाद प्रजाजनों ने महाराणा साहब से भी भेट की और इस महान समारोह के लिए उनकी भूरि भूरि प्रशंसा करने लगी। सारे मेवाड में आज का दिन अपूर्व था। राजा और प्रजा का मिलन विश्वशान्ति के लिए प्रार्थना व पूज्यश्री का व्यक्तित्व यह सब मेवाड वासियों को एक चमत्कार था। इस सुवर्ण अवसर पर मेवाड के महाराणा ने सैकडों कैदियों को मुक्त किये। एवं सैकडों कैदियों को सजाएँ कम की। सैकडों बकरों को अमरिया किये। आज सारे मेवाड भर में अगता होने से लाखों जीवों को अभयदान मिला। व्याख्यान समाप्ति के बाद पूज्यश्री की जय घोष से सारा गगन मंडल उद्घोषित हो उठा। इस अवसर पर महावीर मंडल के कार्य कर्ताओंने राजा प्रजा को इस सुवर्ण अवसर को सफल करने के उपलक्ष में धन्यवाद दिया। आज के इस भव्य उत्सव को सफलता पूर्वक संचालन का सारा श्रेय महावीर मण्डल के सेक्रेटरी श्री कालूलालजी लीलवाया, मास्टर शोभालालजी मेहता श्री दुलेसिंहजी लोढा जीवनसिंहजी भण्डारी श्री अम्बा-लालजी बावेल आदि सर्वस्थानकवासी सज्जनों को ही हैं।

भीलमण्डली का आदर्शत्याग—

मेवाड सरहद के पहाडीप्रदेश में रहनेवाले पल्ली पति) श्री दलपति रणमल 'कानो' पालवी, पूंजो पालवी, जो हजारों भीलों के अधिपति है। इन्हें मालूम हुआ कि इस समय उदयपुर में बडे जैन महात्मा पधारे हुए हैं। उनके आदेश पर मेवाडाधिपति ने सारे मेवाड में अगता पलवाया और विश्वशांति के लिए ॐ शान्ति की प्रार्थना करवाई। जिसमें स्वयं मेवाडाधिपति भी सम्मिलित हुए थे। ऐसे महात्मा के हमें भी दर्शन करना चाहिये और उनके उपदेश को सुनना चाहिये। ऐसा विचार कर उन्होंने अपने समस्त भील प्रजा जनों को एकत्र होने का आदेश दिया। तदनुसार हजारों की संख्या में भील एकत्र हुए और पूज्यश्री के दर्शन के लिए पैदल ही उदयपुर की ओर चल पडे। मार्ग में जहां जहां भीलों की वस्ती आती थी वे

भी इस पवित्र संघ यात्रा में सम्मलित हो गये। ता० ३-२-४२ के दिन ये लोग उदयपुर पहुंच गये। जब मोतीलालजी तेजावत को भीलों के आगमन का समाचार मिले तो वे भी उनका स्वागत करने के लिए उनके सामने गये। बाजार के बीच होते हुए हजारो भीलों का जूलूस पूज्यश्री की जय जय का घोष करते हुए पूज्य आचार्य महराज श्री की सेवा में पहुंचे। सारे मार्ग में भील ॐ शान्ति का गान करते थे। उस समय पूज्यश्री का व्याख्यान हो रहा था। भील व्याख्यान स्थल पर पहुंच पूज्यश्री के दर्शन किये और बडे संतुष्ट हुए। पूज्यश्री ने भीलों को सम्बोधित करते हुए सदाचार का उपदेश दिया। पूज्यश्री के प्रवचन से हजारों भीलों ने दूसरे दिन दारु, मांस जीवहिंसा और चोरी का त्याग किया। और अपने हाथ में तलवार लेकर सभी भील अपने मुख से इस प्रकार बोले—आज पिछे हिंसा नहीं करांगा दारु मांस नहीं खावांगा चोरी डकैती नहीं करांगा। अणा सोगन ने चूके तो माने भवानी माता पूगे। यों सर्व भीलोंने प्रतिज्ञा ली। प्रतिज्ञा की विधि में करीब एक घन्टा समय लगा। इसके बाद् भीलों का शानदार जूलूस अक्षय भवन से पूज्यश्री की जय जयकार करते हुए निकला। सब से आगे पूज्यश्री थे उनके पीछे मुनिवृन्द और उनके पीछे श्रावक और उनके पीछे भीलों के नेता और बाद में भीलों का समूह था। जलूस के पीछे बहने मंगल गान गाती हुई आ रही थी। इस प्रकार यह भव्य जूलूस आम बाजार, घण्टा घर धानमंडी होता हुआ सूरंज पोल के बहार श्री रंगनिकुंज पहुँचा। सारा शहर भीलों के द्वारा बोली हुई पूज्यश्री घासीलालजी महाराज की जय, ॐ शान्ति, और अहिंसाधर्म की जय की ध्वनि से गूंज उठा। इस भव्य जूलूस को देखने के लिए सारा उदयपुर उमड पडा था। अहिंसा प्रेमी सज्जन भीलों के इस महान त्याग को देख फूले नहीं समाये और उनकी खूब प्रशंसा करने लने।

समस्त आगंतुक भीलों के लिए उत्तम भोजन की व्यवस्था की गई थी। यह व्यवस्था वकिल साहब श्री मोहनलालजी नाहर श्री चन्दनमलजी नलवाया स्थानकवासी जैन संघ, श्री महावीर जैन मित्र मण्डल, श्री अस्थल के महन्तजी मालिक 'उदयप्रेस' श्री मेनेजर मालिक 'कृष्णप्रिंटिंग प्रेस' श्री जगदीशमन्दिर भोजनशाला व हिज हाईनेस महाराणा साहब की तरफ से की गई थी। भील मण्डली आठ दिन तक उदयपुर में ठहरी। भील मण्डली महाराणा साहेब से भी मिली। विदाई के समय भील के अधिपति ने पूज्यश्री से अर्ज की कि हम आपके द्वारा बताये गये अहिंसा धर्म का लाखो भीलों में प्रचार करेंगे तथा हिंसा, मांस मदिरा शिकार और लूट चौरी न करने की उनसे प्रतिज्ञा करावेंगे। साथ ही समस्त उपस्थित भीलों ने एक एक बकरे को अमरिया करने का प्रण ग्रहण किया। सर्व भीलों ने पूज्यश्री से मांगलिक श्रवण किया और पूज्यश्री की जय जय कार करते हुए अपने अपने घर के लिए रवाना हो गये।

स्थानीय संघ ने व श्री महावीर मण्डल ने पूज्यश्री की आज्ञा से सामुहिक दया की। जिसमें सैकड़ों श्रावक श्राविकाओं ने इस धार्मिक उत्सव में भाग लिया। इस प्रकार पूज्यश्री के उदयपुर पधारने से जो उपकार हुआ वह चिरस्मरणीय रहेगा। पूज्य श्री ने कुछ दिन तक यहाँ बिराजकर उदयपुर से बिहार कर दिया।

ब्यावर की तरफ पूज्यश्री का प्रस्थान—

मेवाड को पावन करते हुए पूज्यश्री ने पूज्य आचार्य श्री खूबचन्दजी महाराज साहब के दर्शन के लिए अपनी मुनिमण्डली के साथ ब्यावर की ओर बिहार किया। श्री समीरमुनिजी शारीरिक अस्वस्थता वश उदयपुर में ही विराजे। पूज्यश्री ठाना ३ से यामला कोशीथल आसीन्द, पडासौली, आदि गांवों में बिचरते हुए शीघ्राति' शीघ्र बिहार कर ब्यावर गुरुकुल पधारे। गुरुकुल पधारने के पूर्व ब्यावर विराजित पूज्यश्री को व मुनियों को खबर मिलते ही सरल स्वभावी स्थविर मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराज व विचक्षण सलाह कार पं० मुनिश्री केशरीमलजी महाराज आदि सर्व मुनिमण्डल व ब्यावर के श्रावक श्राविकागण पूज्य आचार्य

श्री का स्वागत करने गुरुकुल तक पधारे थे। गुरुकुल में एक दिन विराजने के बाद पूज्यश्री घासीलालजी महाराज ठाना तीन से पूज्यश्री खूबचन्दजी महाराज के दर्शनार्थ कुन्दनभवन पधारे। दोनों पूज्य मुनिवरों का पारस्परिक अपूर्व प्रेम को देख सर्व जनता आश्चर्य चकित हो उठी। सब कहने लगे कि इस तरह यदि सर्व मुनिराजों व संप्रदायों मे परस्पर प्रेम भाव हो तो समाज शीघ्र ही भाग्यशाली होगा। आज का समय एकता का है। परस्पर का द्वेष समाज को अवनति की दशा में ले जाता है। आज हमारे समाज के कर्णधार पूज्य मुनिराज चाहें तो शीघ्र ही समाज का कल्याण हो सकता। किन्तु उनकी आपसी साम्प्रदायिक द्वेष बुद्धि व ईर्षा ही समाज के विकाश में बाधक हो रही है। आदि......

पूज्यश्री व सर्व मुनि मण्डल ने मांगलिक स्तवन फरमाया फिर माँगलिक सुन सर्व जनता विसर्जित हुई। दोनों पूज्यश्री कुन्दन भवन में ही बिराजे। प्रतिदिन व्याख्यान होता था। प्रथम मनोहर व्याख्यानी पं. प्रतापमलजी महाराज व्याख्यान फरमाते थे बादमें पूज्य श्रीघासीलालजी महाराज अपनी लाक्षणिक शैली में प्रवचन फरमाते। पूज्य खूबचन्दजी महाराज के आखों का आपरेशन हुआ था इसलिए डॉक्टरों ने उन्हे विश्राम करने की सलाह दी थी अतः वे व्याख्यान नहीं फरमासके।

पुनः उदयपुर की ओर—

इधर समीरमलजी महाराज इलाज के लिए उदयपुर ही ठहरे हुए थे। जिससे पूज्यश्री को उदयपुर वापिस पधारने की ताकिद थी। रास्ते में भीम, देवगढ सरदारगढ, कुंआरिआ कांकरोलि आदि गांवों में धर्मप्रचार करते हुए पूज्यश्री पुनः उदयपुर पधारे। और महावीर मण्डल के भवन में बिराजे। यहाँ से सर्व मुनियों के साथ बिहार कर पूज्यश्री चांदपोल के बाहर डॉ० छगननाथजी की वाडी में बिराजे। महाराणा साहब ने चौविसाजी को भेज कर पास ही हरिदासजी की मगरी पर ता० २२-३-४२ को धर्मोपदेश सुनने के लिए पूज्यश्री को आमंत्रित किये। तदनुसार पूज्यश्री व मेवाड संप्रदाय के युवाचार्य पं० मुनिश्री मांगीलालजी महाराज आदि मुनिमण्डल के साथ हरिदास जी की मगरी के महल में महाराणासा० को उपदेश देने पधारे। महाराणा साहब ने पूज्यश्री का व युवाचार्यजी का यथोचित भावभीना स्वागत किया। पश्चात् युवाचार्य श्री मांगीलालजी महाराज ने सुन्दर भजन के साथ अपनी रसीली मेवाडी भाषा में महाराणा को उपदेश दिया। उपदेश के बाद महाराणा साहब ने करीब एक घंटे तक पूज्यश्री से बातचित की। पूज्यश्री ने अन्त में महाराणा साहब से कहा कि हमारा कल यहाँ से बिहार करने का बिचार है। दरबार ने पूछा कि-"कठिने विहार वेगा पूज्यश्री ने फरकाया नाई मोटेगाम की तरफ जावाको विचार है" आगे समय वेगा तो भोमट झालावाड की तरफ भी विचार है। महाराणा साहब ने फरमाया कि "वहीने भी श्रावकां का घर है? पूज्यश्री ने फरमाया कि "आपके राज्य में प्राय सर्व गांवों में श्रावकों के घर हैं। इसके बाद महाराणा साहब ने उपस्थित एक भाई को देख उसके बारे में पूछा – यह भाई कौन है? क्या आपके पास दीक्षा लेना चाहता है? तब पूज्य श्री ने कहा—हां! यह भाई यहां के हि निवासी है और इनका नाम हरकचन्द है। यह भागवती दीक्षा लेना चाहता है। तब महाराणा साहब ने जैनमुनियों की दीक्षा विधि पूछी। पूज्यश्री ने वह बताई। तब महाराणा सा. ने कहा कि इस भाई की दीक्षा मेरी तरफ से होगी। पूज्यश्री ने महाराणा साहब की भावना को स्वीकार किया। चातुर्मास आदि के विषय में भी महाराणा साहब ने पूछ ताछ की। इस प्रकार के वार्तालाप के बाद पूज्यश्री ने महाराणा साहब को मांगलिक सुनाया और वे स्वस्थान पधार गये। दूसरे दिन महाराणा साहब ने दीक्षार्थी के लिए पात्र मंगवाकर उन्हें महलों में ही रंगने का आदेश दे दिया। साथ ही दीक्षार्थी के लिए उपयोगी वस्त्र व रजोहरण आदि सर्वसामग्र भी अपनी ओर से ही मंगवाली। श्री हरकचन्दजी साहब की दीक्षा बडे उत्सव के साथ की गई। दीक्षा के पूनीत अवसर पर सारा

उदयपुर व मेवाड के आसपास के गांवों के लोग उमड पडे थे। छत्र चंवर वेण्डबाजे की व्यवस्था राज की तरफ से हि थी। दीक्षा कार्य बडे उत्साह के साथ समाप्त हुआ।

दीक्षा के दूसरे दिन पूज्यश्री ने अपनी मुनिमण्डली के साथ उदयपुर से विहार कर दिया। हजारों की संख्या में उदयपुरनिवासी पूज्यश्री को विदा देने साथ आये। यह दिन भी उदयपुर के लिए अपूर्व था। सभी के आँखों में अश्रु थे और सभी पूज्यश्री को उदयपुर पुनः फरसने का आग्रह कर रहे थे। इस प्रकार के बिदाई के बाद पूज्यश्री ने नाई की ओर विहार किया ता० १३–३–४२ को पूज्यश्री नाई पधार गये। यहां पूज्यश्री के उपदेश से ता० १५–३–४२ को अगता रखा गया। नदी के तट पर आमवृक्ष के नीचे ॐ शान्ति की जाहिर प्रार्थना हुई। प्रार्थना में दो हजार जन समूह उपस्थित था। नाई गांव के लिए पुनित प्रसंग नया हि था। पूज्यश्री के उपदेश से सैकडों स्त्रीपुरुषों ने अपनी यथा शक्ति त्याग ग्रहण किये। तथा अनेकोंने दारु, मांस एवं जीवहिंसा का त्याग किया।

वहाँ से बिहार कर पूज्यश्री बूजडा होते हुए मंदार पधारे। ता० २५–३–४२ को सारे गांव में पूज्यश्री की आज्ञा से अगता रखा गया और ॐ शान्ति की प्रार्थना की गई। प्रार्थना स्थल पर सारा गांव ऐकत्र था। पूज्यश्री का ईस अवसर पर मननीय प्रवचन हुआ। पूज्यश्री का उपदेश सुन सारे गांववालों ने चेतसुद एकम के दिन प्रतिवर्ष अगता पालने का और उसदिन ॐ शान्ति की प्रार्थना करने का नियम ग्रहण किया। उसी सायंकाल के समय बिहार कर आप रात्रि के समय भादवीगुडा बिराजे। दूसरे दिन ता० २६–३–५२ को आप गोगुन्दा पधारे। यह गांव पहाडी पर बसा हुआ है। आबू से नौ फीट एवं समुद्र की सपाटी से ५००० फीट ऊँचा है। यहां की आबोहवा बडी आरोग्य प्रद हैं। गर्मी के मोसम में यहां बडी ठन्डक रहती है। यहों से सायरागाँव तक सेहरा प्रांत कहलाता है। यहाँ के रावजी का नाम भैरोसिंहजी है। ये सोलह उमरावों में से एक हैं। रावजी साहब उम्र में छोटे होने पर भी पूज्यश्री के प्रति असीम श्रद्धा रखते हैं। पूज्यश्री का कईबार रावजी साहब ने उपदेश सुना। पूज्यश्री की आज्ञा से ता० १८–५–४२ को रावजीने अपनी समस्त रियासत में अगता पालने का हुक्म दिया। और उस दिन विशाल मैदान में ॐ शान्ति की प्रार्थना रखी गई। प्रार्थना में रावजी साहब उनके कर्मचारी गण तथा समस्त प्रजाजन उपस्थित थे। सामुहिक प्रार्थना के अवसर पर पूज्यश्री का अहिंसा धर्म पर उपदेश हुआ और लोगोंने प्रभावित होकर अच्छे प्रत्याख्यान किये। पूज्यश्री का निवास ब्रह्मपुरी के उपाश्रय में था वहाँ प्रतिदिन प्रवचन होता था और हजारों स्त्री पुरुष प्रवचन का लाभ उठाते थे। हजारों जीवों को अभयदान मिला।

चातुर्मास की विनंती—

लीमडी चातुर्मास में थाँदला श्रीसंघ ने अपने गांव में आगामी चातुर्मास के लिए अत्याग्रह भरी विनंती की थी। महाराजकुमार भारतसिंजी साहब ने भी चातुर्मास के लिए खूब प्रयत्न किया था। उदयपुर से विहार होने पर गोगुन्दा, बगड्ंदा, जसवंतगढ, घासा आदि के स्थानकवासी संघो ने भी अपने अपने गांव में चातुर्मास करने की विनंती की। वहाँ से विहारकर पू० श्री जसवंतगढ पधारे। वहाँ भी स्थानीय संघ ने तथा नान्देसमां बगड्ंदा के संघ ने गोगुंदा श्रीसंघ ने एवं जसवन्तगढ के श्री संघ ने सात आठ वार आकर चातुर्मास की विनंती की। पूज्यश्री ने जीव दया का विशिष्ट उपकार जानकर ता० ७–६–४२ के दिन द्रव्य, क्षेत्र, काल,भाव की अनुकूलता रही तो क्षेत्र खाली नहीं रहेगा इस प्रकार बगड्ंदा की विनंती को मंजूर फरमाई।

जसवंतगढ व आसपास के गांवों में पूज्यश्री का पधारना हुआ वहां अगते पाले गये और ॐशान्ति की प्रार्थना हुई। तरपाल, नांदेसमां, खाखडी, गोगुंदा, वास, मादडा आदि गांव के लोग व्याख्यान श्रवण

करने के लिये बडी संख्या में आये। खालडी के ठाकुर सा० खुमानसिंहजी ने अपनी तरफ से ॐशान्ति प्रार्थना की खुशी में वहाँ एक बकरा लाकर उसे अमर कर दिया। तथा गांव के श्रावकों की तरफ से २५, ३० बकरों को अमरिया कर दिया। तथा उपवास आयंबिल दया पौषध आदि धर्म ध्यान खूब हुआ। अनेकोंने जीवहिंसा व दुर्व्यसनों का त्याग किया। यहाँ उदयपुर से विहार कर मनोहर व्याख्यानी प्रतापमलजी म० व मनोहरलालजी म. सा. का पधारना हुआ। पूज्यश्री के दर्शन कर बडी प्रसन्नता प्रगट की। कुछ दिन ठहरकर उन्होंने सायरा की ओर विहार कर दिया। गोगुंदे से रावजी साहब श्री भैरुसिंहजी साहब व अपछरी के ठाकुर श्री भोपालसिंहजी व गार्जनसाहब अपछरी महाराजकुमार साहब श्री रघुवीरसिंहजी आदि परिवार सहित पधारकर पूज्यश्री के दर्शन किये व व्याख्यानश्रवण कर बडी प्रसन्नता प्रगट की।

सेरे प्रान्त का विहार

जसवंतगढ से विहार कर पूज्यश्री नांदेसमां ढोल होते हुए कम्बोल पधारे। यहाँ परम प्रतापी पूज्य अमरसिंहजी म० की संप्रदाय की विदुषी महासतीजी श्री लहरकुँवरजी म० ठाना चार से बिराजती थी। महासतीजी बडी विचक्षण व सरल हृदयी है। पूज्यश्री के दर्शनकर उन्होंने बडा संतोष व्यक्त किया।

यहाँ से पूज्यश्री पदराडा पधारे। पदराडा के ठाकुर साहब श्री मानसिंहजी बडे संत भक्त हैं। पूज्यश्री के विहारकरजाने के समाचार सुनकर वे करीब देढ मील जहाँ पूज्यश्री विहारकर जा रहे थे वहां पहुँचे और अति आग्रह कर वापस ले आये। एक दिन का अगता पालकर ॐशान्ति की जाहिर प्रार्थना की। सैकडों बकरों को अभय दान मिला। यहाँ से पूज्यश्री सुवावता के गुडे होते हुए तरपाल पधारे। यहाँ के श्रावकों ने पूज्यश्री के उपदेश से १०-१२ बकरों को अभयदान दिया। तरपाल से आप वापस जसवंतगढ़ पधारे।

भीनासर में यशस्वी पूज्यआचार्यश्री जवाहिरलालजी म० के अत्यंत रुग्णस्थ होने के समाचार पूज्यश्री को मिले थे। शायद उनकी बिमारी की अवस्था में बुलाने पर भिनासर जाना पडे इस विचार से पूज्यश्री ने चातुर्मास पूर्णिमा के पहले न मानने का निश्चय किया।

तपस्वी मुनिश्रीकी तपश्चर्या—

आषाढ कृष्ण ४ गुरुवार ता० २-७-४२ से घोर तपस्वी श्री मदनलालजी म० सा० व घोर तपस्वी श्री माँगीलालजी महाराज सा० ने पूज्यश्री की आज्ञा से महान तपोव्रत धारण किया। इसी रोज यहाँ से विहार कर जसवंतगढ से थोडी दूर भैरुजी के मन्दिर में रात बिराजे। ता० ३-७-४२ को गोगुंदा होकर चातुर्मास के लिए आषाढ कृष्णा ५ शुक्रवार ता०४-७-७२ के मंगल प्रभात में पूज्यश्री का बगड्ंदे गांव में पधारना हुआ। जैन अजैन जगत सैंकडों की संख्या में पूज्यश्री का स्वागत करने के लिए दूर तक सामने आया। पूज्यश्री के आगमन से सारा गांव हर्षित हो उठा।

वि० सं० १९९९ का चातुर्मास बगड्ुंदे में

सर्व लोग अपने भाग्य को सरहाने लगे थे कारण कि बगड्ंदा क्षेत्र में आज दिन तक कोई मुनियों का चातुर्मास नहीं हुआ था। न कभी ऐसे अलभ्य लाभ की संभावना ही थी। यहाँ वालों को यह लाभ सहसा प्राप्त हुआ जिससे सर्व का हृदय प्रफुल्लित हो उठा। श्रावक श्राविकाओं के मंगल गान और तुमुल जयध्वनि से पूज्यश्री ने बगड्ंदे में प्रवेश किया। चातुर्मासार्थ पूज्यश्री सरकारी कोटडी में विराजे। व्यवस्थित सभा के रूप में जनता के बैठ जाने पर पूज्यश्री ने मङ्गल स्तुति की और भाववाहक प्रवचन किया। अपने प्रवचन में आपने सन्त सेवा पर मार्मिक प्रवचन दिया। बाद में श्रीमान् कन्हैयालालजी साहब ने अपना वक्तव्य पढकर सुनाया जिसमें पूज्यश्री की इस असीम कृपा के लिए अपने व श्री संघ के भाग्य की सराहना की। अन्त में पूज्यश्री व मुनिराजों के गुण कीर्तन कर जयध्वनि के साथ सभा विसर्जित हुई।

गोगुन्दे व बगडुंदे का चातुर्मास–

पूज्यश्री की सेवा में गोगुन्दे श्रीसंघ ने अपने यहां चातुर्मास विराजने के लिए बहुतबार विनंती की। श्रीसंघ की अत्याग्रह भरी विनंती को मान देकर पूज्यश्री ने क्षेत्र खाली न रहनेका फरमाया था तदनुसार चातुर्मास पूर्व शेषकाल में पं. रत्न व्याख्याता मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराज को व घोरतपस्वीश्री मदनलालजी महाराज साहब को चातुर्मासार्थ गोगूंदा आषाढ शुक्ला सप्तमी ता० २७–७–४२ के दिन भेज दिये गये। दो दो सन्तों के पधारने से गोगुंदावासी बडे प्रसन्न हुए। दोनों क्षेत्रों में धर्मध्यान की बाढ आने लगी व्याख्यान श्रवण करने के लिए प्रतिदिन हजारों की संख्या में जनता उपस्थित होती थी।

वगडुंदे में ॐ शान्ति की प्रार्थना

जब से वगडुंदे में पूज्यश्री का पदार्पण हुआ तबसे गांव के जैन अजैन समाज में ही नहीं अपितु आसपास के सभी क्षेत्रों में जैसेकि जोलोवा, भारोडी, जीराइ, मनाम मजावद कानाजीकागुढा व छोटे बडे गावों में उत्साह छा गया।

व्याख्यान श्रवण के लिए तथा पूज्यश्री के दर्शन के लिए सभी जाति और वर्ग के लोग बिना किसी भेद भाव के आने लगे। पूज्यश्री को चातुमासार्थ बिराजने के लिए श्रीमान देलवाडा रावजी साहब श्री खुमानसिंहजी ने अपनी कोठी खाली कर दी और तहसीलदार को यह आज्ञा दी कि सुविधानुसार बगडुंदे श्रीसंघ को प्रत्येक कार्य में मदद दी जाय। पूज्यश्री चातुर्मास सरकारी कोठी में ही बिराजे। व्याख्यान के लिए बाजार के बीच एक विशाल मण्डप बनाया गया था। प्रतिदिन पूज्यश्री अपनी शिष्य मण्डली के साथ पाण्डाल में पधारते और हजारों लोगों को व्याख्यान सुनाते थे। पूज्यश्री के प्रवचन पियूष का पान करने के लिए जालोवा, जीराई मजावद, भारोडी, गडा, मजास, आदि आसपास के गावों के हजारों व्यक्ति आते थे और व्याख्यान श्रवण कर आनन्द का अनुभव करते थे। पूज्यश्री के प्रवचन से प्रभावित होकर सभी गांव के निवासियों ने 'ॐ शान्ति की प्रार्थना का आयोजन किया। ता० २–८–४२ के दिन 'ॐ शान्ति' प्रार्थना की सूचना आस पास के गांववालों को पत्र पत्रिकाओं द्वारा दी गई। फलस्वरूप बीस गांव वालों ने उस दिन सभी प्रकार की आरंभ सारंभ की प्रवृत्तियां बन्द रखी। कसाई खाने बन्द रखे। शराब पीना उस दिन सर्वथा बन्द रखा गया। शान्ति प्रार्थना के पुनीत अवसर पर सम्मिलित होने के लिए आस पास के सभी जाति और वर्ग के लोग हजारों की संख्या में आने लगे। सारा पाण्डाल लोगों से भर गया। स्थान न मिलने के कारण सैकडों लोगों को पान्डाल के बाहर खडा रहना पडा. दुपहर के बारह बजे पूज्यश्री ने ईश्वर स्मरण और अहिंसा विषय पर मार्मिक प्रवचन फरमाया–। प्रिय बन्धुओं! संसार में प्रत्येक व्यक्ति को प्रभु का स्मरण अवश्य करना चाहिए. केवल आपत्ति के समय ही प्रभु का स्मरण आवश्यक नहीं किन्तु सुख में भी प्रभु को विस्मृत नहीं करना चाहिए. एक प्राचीन कवि ने कहा है–

दुःख मे सुमिरण सब करे, सुख में करे न कोय। जो सुख में सुमिरण करे तो दुःख कहां से होय ॥

कवि के इस वाक्य से ही सुस्पष्ट है कि मानव को ईश्वर का भजन सतत पवित्रता से करना चाहिए. ईश्वर भजन एक प्रकार का रसायण है. जो रसायण का सेवन करता है उसे पथ्य का भी पालन करना चाहिए. रसायण खाकर जो पथ्य का पालन नहीं करता उसका परिणाम बडा भयंकर होता हैं. इसी प्रकार भगवान के जप रूपी रसायन का सेवन करते समय मानसिक पवित्रता रखना ही उसका पथ्य पालन करना है. मानसिक वाचिक कायिक एवं अहिंसा का पालन करने वाला व्यक्ति ही ईश्वर भजन से ईश्वर बन जाता है हिंसा के स्थान या हिंसा करने वाला प्रभु भक्त कभी नहीं हो सकता. क्यों कि हिंसा कर्म भयानकता का द्योतक है व

तामस गुणों का बढ़ाने वाला है. प्रभु का स्मरण वैर विरोध को शान्त करने वाला है और सात्विक गुणों में वृद्धि करता है। हिंसा ताप है, तो प्रभु का स्मरण चन्द्र की चांदनी जेसा शीतल है। हिंसा भयानक रात्रि है तो प्रभु का स्मरण अन्धकार को नाश करने वाला दिवाकर है। हिंसा विष है और प्रभु स्मरण अमृत है। परस्पर इन दो विरोधी तत्वो का संमिश्रण कैसे हो सकता. सारांश यह है कि यदि हमें भगवान के दरबार में जाना है तो पूर्णतया अहिंसक बनना हि पडेगा. आज के इस पावन प्रसंग पर उपस्थित श्रोताओं से यह आशा रखता हूँ कि इस प्रान्त में भेंसे के जन्मे हुए पाडे के बच्चे को रस्सीसे पेर बांध कर एकान्त जंगल में जा छोडने की जो घातक प्रथा है उसे सदा के लिए बन्द कर दें। अपने लोभ के कारण थोडे से दूध बचाने के लिए उस कोमल शिशु को जो निरापराध है उसको मौत के शरण पहुंचाना कहां तक मानवता है. । आप यदि मानव हैं तो इस दानव कृत्यों का परित्याग कर दें. किसी भी प्राणी की हिंसा का परिणाम जन्म जन्मान्तर में भुगतना पड़ता है. हिंसा करने वाला व्यक्ति नरक व तिर्यंच योनि में उत्पन्न हो कर अनन्त दुःखों का भागी बनना पड़ता है. । इसलिए आप लोग प्रतिज्ञा करें कि आज से यह क्रूर कर्म सदा के लिए हमलोग बन्द कर देंगे। पूज्यश्री का उपदेश सुनकर सभी ने खडे हो कर यह प्रतिज्ञा की कि आज से यह पापकृत्य नहीं करेंगे। प्रार्थना सभामें प्रभु प्रार्थना कर सभी लोग अपने अपने स्थान पर चले गये. इस प्रकार यह चातुर्मास धार्मिक प्रभावना से अत्यधिक महत्वपूर्ण रहा. इस चातुर्मास में आस पास के हजारों ग्राम निवासियों ने पूज्यश्री का प्रवचन सुन कर अपने आप को धन्य बनाया. यह चातुर्मास पूर्ण सफल रहा.

छकायका सामुहिक व्रत—

एक समय पूज्यश्री ने सर्व ग्राम निवासीयों को एवं आसपास के सभी गांव वालो से भादवावदि ता० २९-८-४२ के दिन छकायव्रत (दयाव्रत) करने को फरमाया। पूज्यश्री के इस आदेश को समस्त ग्राम निवासियों ने सहर्ष स्वीकार किया। पूज्यश्री की इच्छानुसार ओसवाल, ब्राह्मण, क्षत्रिय कुम्हार, लुहार सुथार तेली, नाई, भील, बलाई आदि सर्व जाति के लोगों ने सामुहिक छकाया का व्रत पालन किया। सर्वने अचित पानी लिया। आरंभ कार्यों का परित्याग किया। और सारा दिन रात धर्मध्यान में व्यतीत किया। श्री मान गोगुन्दा निवासी मोतीलालजी साहेब ने इस कार्य में सुन्दर सहयोग दिया।

पर्यूषन पर्व की अराधना—

जैन धर्म में पर्यूषण पर्व का बडा महात्म्य है। प्रतिवर्ष भाद्रपद शुक्ला पञ्चमी को आता है। उस दिन प्रायः सभी जैन समाज आरंभ सारंभ का त्याग कर धार्मिक प्रवृत्ति में समय व्यतीत करती है। इस वर्ष पूज्यश्री के बिराजने से पर्यूषण पर्व के आठों हि दिन बडे उत्साह के साथ मनाये गये। प्रातः व्याख्यान में पूज्यश्री श्री अन्तगढसूत्र फ़रमाते थे। उसके बाद अन्य मुनियों के प्रासंगिक प्रवचन होते थे। सामायिकें पौषध, उपवास बेले तेले आदि की तपश्चर्या एवं त्याग प्रत्याख्यान सीमातीत हुए। हजारों लोगों ने पूज्यश्री के प्रवचन पीयूष का पानकर धन्यता का अनुभव किया

कृष्णजन्माष्टमी का जाहिर प्रवचन

भाद्रपद कृष्णा अष्टमी के दिन ता०-३-९-४२ को त्रिखण्डाधिपति वासुदेव श्रीकृष्ण जयन्ती मनाने का निश्चय किया इसकी सूचना पत्र पत्रिकाओं द्वारा आस पास के गांववालों को दी। सूचना पाकर सभी जाति के लोग व्याख्यान पाण्डाल में एकत्र हुए। उस दिन समस्त गांव में पाखी रखी गई। पूज्यश्री ने कृष्ण के जीवन पर विस्तृत प्रकाश डाला। उस दिन श्रावकों ने दयाव्रत रखा। संवत्सरी के दिन समस्त ग्राम निवासियों ने अपनी दुकाने बन्द रखी, पूज्यश्री ने पर्यूषण पर्व के शास्त्रोक्ति महात्मय को समझाया ग्यारह बजे तक। पूज्यश्री के एवं अन्य मुनियों के प्रवचन होते रहे। मध्याह्न के समय आत्म शुद्धि के लिएआलोचना हुई।

सांयकाल में प्रतिक्रमण कर चौरासी लाख जीवों से क्षमा याचना की। उस दिन हजारों उपवास सामायिकें एवं पौषध हुए। ग्रामनिवासियों का उत्साह अपूर्व था। पूज्यश्री के बिराजने से सारा गांव धर्मनगर बन गया संवत्सरी के दिन बड़ी सख्या में बाहर के दर्शनार्थी उपस्थित हुए। दान प्रभावना प्रत्याख्यान सीमातीत हुए। बाहर से आनेवालेसज्जनों की स्थानीय संघ ने भोजनादि से बड़ी अच्छी सेवा की। अपने व्यवसाय को भी एक तरफ रख कर अत्यन्त अनुराग पूर्वक स्थानीय श्रीसंघ आगनन्तुको की सेवा करता था। इनकी अपूर्व सेवा देखकर दर्शनार्थी स्थानीय संघ की बडी प्रशंसा करते थे।

संवत्सरी के दूसरे रोज स्थानकवासी जैन संघ के कार्यकर्ता गण पूज्यश्री के पास आए और प्रार्थना की कि प. रत्न प्रियवक्ता मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराजश्री को सेवा में बिराजित घोर तपस्वी शान्त-स्वभावी मुनिश्री मदनलालजी म० सा० ने विशाल तपोव्रत ग्रहण किया है जिनकी समाती का दिन कब होगा ? कृपा कर फरमावे। पूज्यश्री ने कार्यकर्ताओं की यह प्रार्थना सुन कर कहा कि तपस्वीजी की ८२ दिन की तपश्चर्या का पारणा भाद्रपद शुक्ला १२ ता० २१-९-४२ को होगा। उस अवसर पर आप लोग जीव-दया का कार्य करें। उस दिन अगता रख कर समस्त आरम्भ समारम्भ के कार्य बन्द रखे जाय। पूज्य श्री के इस आदेश को संघ ने शिरोधार्य किया।

पं. मुनिश्री कन्हैयालालजी महाराज के गोगुन्दे में बिराजने से धर्मध्यान खूब हुआ। पूज्यश्री के आदेश से संघ ने तपमहोत्सव के समय पत्र पत्रिकाओं द्वारा तमाम नर नारियो को सूचित किया कि ता०२१।९। ४२ क। अगता पाला जाय और आरम्भ की प्रवृत्ति बन्द रखी जाय। तदनुसार हजारों ग्राम निवासियों ने उस दिन अगते रखे और यथा शक्ति धर्मध्यान किया। ता० २०-९-७२ को गोगुन्दा श्रावक संघ की प्रार्थना पर पूज्यश्री गोगुन्दा पधारे। पूज्यश्री के पधारने से संघ में अपार हर्ष छागया।

वे महान भाग्यशाली जिन्हें तपस्वी, त्यागी संयमी मुनियों की सेवा का लाभ मिलता है। जो व्यक्ति अपनी कलुषित भावना के कारण एसी सेवा से वंचित रहता है वह सचमुच ही बडा दुर्भागी है। जैन धर्म तो रागद्वेष को दूर करने का ही विधान करता है। किन्तु रागद्वेष के आधिन हो जो व्यक्ति एसे पुनित प्रसंग का लाभ नहीं उठा सकता वह अधन्य ही है।

गोगुन्दा श्रीसंघ ने पूज्यश्री व तपस्वीजी म० की अपूर्व सेवा का लाभ मिला। पुनित प्रसंग को सफल बनाने के लिए समस्त संघ तन मन धन से जुट गया। पूर के अवसर पर हजारों लोग बाहर गांव से तपस्वियों के दर्शनार्थ आये। इतनी बड़ी संख्या में आने वाली जनता का स्थानोय संघने भोजनादि से खूब अच्छा सत्कार किया। दर्शनार्थ अने बाले हजारो लोगो ने तरह तरह के त्याग प्रत्याख्यान किये। हजारों जीवों को अभयदान मिला। विशाल प्रवचन पण्डाल में ता० २१-९-४२ के दिन जनसमूह एकत्र होगया पाट पर पूज्यश्री अपनी शिष्य मन्डली के साथ बिराजे। इस अवसर पर प्रथम पं. श्री कन्हैयालालजी महा-राज ने तप के महात्म्य पर प्रवचन दिया। उसके वाद पूज्यश्री ने गम्भीर वाणी "द्वारा तपब्रडो रे संसार में "इस गाथा से प्रवचन प्रारम्भ किया। आपने कहा-इच्छा का निरोध करना ही तप है। अपनी इच्छाओं, कामनाओं को, वासनाओं का जो निरोध करता है वह तपस्वी होता है। इच्छा, वासना, कामना, यह मनुष्य जोवन की सबसेबडी दुर्बलता है इस, दुर्बलता के कारण संसार अनन्तशक्तियो का धारक मनुष्य भी दीन हीन बन गया। हीरों की और पन्नों की खान पर वेठने वाला व्यक्ति भी यदि अपने आपको दरिद्रमानता हो तो इससे बढकर जोवन की विडम्बना और क्या हो सकती है ? परन्तु इसविडम्बना का कारण कोई दूसरा नहीं है। मनुष्य स्वयं हि है, उसकी इच्छा है आसक्ति है कामनाओं को दासता है एक उर्दू कवि ने ठीक ही कहा है–

हम खुदा थे गर न होता, दिल में कोई मुद्दआ । आरजुओंने हमारी, हमको बन्दा कर दिया ।।

तप ही मनुष्य की इच्छा पर नियंत्रण करता है । वासनारूपी झंझावातों को शान्त करता है । तप का अराधन करना सामान्य बात नहीं है । तप जितना महान है उसका आचरण भी उतना ही दुष्कर है । प्रत्येक व्यक्ति इसकी आराधना नहीं कर सकता । जन्म जन्मांतर के शुभ संस्कारों वाला कोई जितेन्द्रिय और मुमुक्षु ही इसकी उपासना कर सकता है । तप का मार्ग बडा दुष्कर है । उन्हें धन्य है जो इस दुगम मार्ग पर चल कर मोक्ष मार्ग को प्राप्त करते हैं । मेरे शिष्य श्री मदनलालजी ने तप के महत्त्व को खूब अच्छा समझा है और उसे अपने जीवन में उतारा है । जब से मुनि मदनलालजी ने दीक्षा ग्रहण की थी तभी से आज दिन तक प्रतिवर्ष इसी प्रकार की लम्बी लम्बी तपश्चर्या करके अपने पूर्वोपार्जित कर्मों को जर्जरित कर रहे हैं । ऐसे तपस्वियों के जीवन का अनुकरण हमें भी करना चाहिए । इतनी बडी तपस्या तो सभी नहीं कर सकते किन्तु यथा शक्ति त्याग प्रत्याख्यान कर इस महानतपस्वी को श्रद्धांजली अर्पित कर सकते हैं ।

पूज्यश्री तप और तपस्वीजी के महात्म्य पर करीब एक घण्टे तक प्रवचन दिया । पूज्य श्री के प्रवचन का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा । फलस्वरूप सीमातीत त्याग प्रत्याख्यान हुए । दूसरे दिन अपने हाथ से ८२ दिन के तपस्वी मुनि को पारणा कराकर पूज्य श्री वापस बगडूंदे पधार गये ।

बगडूंदे में ८४ दिन का महान तपोत्सव–

पूज्यश्री के चातुर्मास के पदार्पण के साथ ही तपस्वी मुनिश्री मांगीलालजी महाराज ने अपनी तपसाधना प्रारंभ कर दी थी । इनकी तप साधना को देखकर स्थानीय श्रावक श्राविकाओ ने भी यथा शक्ति तपश्चर्या प्रारंभ कर दी । तपस्वी जी की महान तपश्चर्या का प्रारंभ आषाढ़ कृष्णा ४ को हुआ था । तपस्वीजी की महान तपश्चर्या ज्यों ज्यों बढती गई त्यों त्यों स्थानीय श्री संघ में एवं आस पास के सारे प्रान्त में अपूर्व धर्मोत्साह जागृत हुआ । संघ की यह इच्छा थी कि तपस्वीजी अपनी तपश्चर्या का अन्तिम दिन प्रगट करें । एक दिन बगडूंदे का श्री संघ पूज्य श्री की सेवा में उपस्थित हुवा और नम्र प्रार्थना करने लगा कि तपस्वीजी की तपश्चर्या का अन्तिम दिवस प्रगट किया जाय । श्रीसंघ का अत्याग्रह भरी विनती को मान कर पूज्य श्री ने ८४ दिन की तपश्चर्या का पूर ता० २३।९।४२ को प्रगट किया । संघ में हर्ष छा गया । संघ ने तपश्चर्या की पूर्णाहुति का दिन बडे प्रभावशाली ढंग से मनाने का निश्चय किया । तपमहोत्सव की आमंत्रण पत्रिका छपवाकर सर्वत्र भेजी गई ।

बगडूंदा गांव उदयपुर शहर से १५ मील दूर अरावलियों की पहाडों में बसा हुआ है । छ माईल का रास्ता सडक का है और नौ माईल का रास्ता पहाडी है । घोडे तथा ऊंट की सवारी पर या पैदल ही बगडूंदे पहुँचना होता है । यह गांव समुद्र की सतह से भी बहुत ऊंचा है । और आबू की टेकरियों जैसा लगता है प्राकृतिक शोभा से सुरम्य है । इसके चारों और कि पहाडियां आकाश को छूती हुई नजर आती है । घनेजङ्गल बडे ऊंचे वृक्ष इसकी शोभा में चार चान्द लगाते हैं । बगडूंदे का मार्ग दुर्गम होते हुए भी आमंत्रण पत्र पाकर हजारों लोग मेवाड निवासी श्रद्धालु श्रावक झुण्ड के झुण्ड बगडूंदे पहुंच कर पूज्यश्री के चरणों को छू कर वन्दना करते हुए अपनी श्रद्धा व्यक्त करने लगे । जिसकी लम्बे समय तक प्रतीक्षा की जा रही थी वह पावन दिवस आ पहुँचा । हजारों श्रावक गण इस पुनित प्रसंग पर मार्ग की अनेक कठिनाईयों को सहते हुए भी पहुंच गये । बगडूंदे से गोगून्दा चार माईल होता है । गोगून्दे के भाविक श्रावक श्राविकाएँ सैकडों की संख्या में मंगल गान गाती हुई पं. मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराज के साथ पैदल ही चल पडी । बगडूंदे में पूज्य श्री के एवं तपस्वीजी के दर्शन कर अपने नेत्रों को पवित्र करने

लगे । बगडू दे के श्रावक गण सम्मानपूर्वक आगन्तुक सज्जनों का स्वागत करने लगे । गांव छोटा होते हुए भी स्थानीय श्रीसंघ ने अतिथियों को ठहरनेकेलिए उचित एवं सुन्दर प्रबन्ध किया । ता० २०-९-४२ के पांच बजे तक तो सारा गांव मानवों की भीड से यात्रा धाम बन गया । जंगल व गांव जहां देखो वहां मानव ही मानव नजर आते थे । उदरपुर, लीमडी दाहोद, राजगढ, कुशलगढ, नागोर, कानपुर, कम्बोल, पदराडा, नान्देसमां, तरपाल, जसवन्तगढ, खमणोर वाटी, भूताला, नाई, मादडा, वाँगपुरा, देवास, आदि बहुसंख्यक गांवों से व मेवाड, मारवाड, मालवा, सेरा, नरा भोमट, झालावाड आदि प्रान्त के हजारों भक्त गण पूज्यश्री के ५वें तपस्वीजी के दर्शन के लिए आये ।

दूसरे दिन अर्थात् तारीख २५।९ ४२ को जाहिर प्रवचन का विशाल आयोजन किया गया । दर्शनार्थियों के लिए विशाल पांडाल बनाया गया । प्रातः होते ही श्रावक गण पाण्डाल में पहुँच कर यथायोग्य स्थान ग्रहण करने लगे । तपस्वीजी के साथ पूज्य श्री ठीक आठ बजे पट्टे पर बिराजे । उनके साथ अन्य मुनिवर भी यथा स्थान बिराज गये । मांगलिक स्तुतिपाठ के बाद पूज्यश्री ने तप के विषय में मननीय प्रवचन दिया । अन्य भी कई विचारकों ने एवं मुनिवरों ने तप के विषय में अपने अपने विचार व्यक्त किये एवं अपनी शुभकामनाएँ व्यक्त की ।

इस अवसर पर छोटी बडी अनेक तपस्याएँ हुई । सीमातीत त्याग प्रत्याख्यान हुए । मिठाईयों की प्रभावना हुई । तपस्वीजी की जय जयकार करते हुए सभा विसर्जित हुई । बगडु दे का यह प्रसंग सबके लिए चिरस्मरणीय बन गया । आज के इसपुनीत प्रसंग पर बगडुंदा, गोगुन्दा, उदयपुर, जसवन्तगढ पदराडा आदि के स्थानकवासी जैन संघ के स्वयंसेवयकों ने बडी भारी सेवा की तथा स्थानीय श्रावक संघ ने तन मन धन से सेवा का कार्यकर एक आदर्श उपस्थित किया । समारोह सानन्द सम्पन्न हुआ ।

पूज्यश्री ने चातुर्मास किया उस समय वहां एक एक घर में आठ आठ. दस-दस गायें भेंसें थी । किसानों के घर तो २५ पंचास भैसों का होना सर्व साधारण था । दूध बेचना महापाप मानाजाता था । विवाह शादियों में तेल के स्थान पर शुद्ध घी का ही प्रयोग किया जाता था । गांव में लडाइ, झगड़ा, टंटा फिसाद या मुकदमा बाजी में किसी को रुचि नहीं थी । सभी लोग अपने अपने काम काज तथा हाल हवाल में मस्त रहते थे । वहां उस समय ८० वर्ष के एक लक्षाधिपति सेठ रहता था । वह पूज्य श्री से कहा करता था कि मैंने अपने जीवन में कोर्ट कचहरी, वकिल या मजिस्ट्रेट का नाम भी नही लिया । जिनसे मेरा व्यापारिक लेन देन हैं उनमें मुझे और मेरे में उनको पूर्ण विश्वास है । सभी लोग समय पर ले जाते हैं वैसेहि तो दे भी जाते हैं । परस्पर के शुद्ध व्यवहार से किसी को भी गडबड़ पेदा करने का या पैसा न देने का विचार ही नहीं उत्पन्न होता तो फिर कोर्ट में जाने की आवश्यकता ही क्या है । उस भाई ने कहा-एक बार भयंकर दुष्काल पडा । दुष्काल के कारण सर्वत्र हाहा कार मच गया था । एक किसान कुटुम्ब यहां रहता था । दुष्काल के कारण उस वर्ष उसके खेत में अन्न का एक दाना भी नहीं पका । उसके पास का रहा सहा अन्न भी समाप्त हो गया । अन्नाभाव के कारण सारा कुटुम्ब भूखा रहने लगा । एक दिन वह किसान मेरे पास आया और बोला-सेठजी, घर में अनाज का एक दाना भी नहीं रहा । मेरी पत्नी बाल बच्चे सभी कल से भूखे बैठे हैं । सेठ उसकी दुःखभरी कहानी सुनकर अपने आंखों में भी आसू छलछला गये । मैंने उसे आश्वासन देते हुए कहा भाई ! आपत्तियां तो सब पर ही आती है । ऐसे समय धीरज से काम लेना चाहिए । मैंने तुरत कोठार में से अनाज बिना तोले हि उसे जितना चाहिए उतना दे दिया । उसने अपनी चादर में अनाज बांध दिया । वह गठरी उठाकर चलने लगा तो मैंने कहा और चाहे तो फिरसे लेजाना किन्तु भूखे मत रहना । वह घर पहुँचा और उस अनाज की राबडी बना बना

कर अपने पेट का गड्ढा भरने लगा। किसान और उसका सारा परिवार बच गया।

दूसरे वर्ष बहुत वर्षा हुई। खेत अनाज से लहलहा उठे। उस वर्ष उसके खेत में अच्छी फसल आई। अनाज पकने पर वह उसे घर लाया और पत्नी से बोला–सेठ ने हमें मरने से बचाया है। सेठ के उपकार को कैसे भूल सकते हैं ? पहले हम उस उपकारी के घर अनाज ले जायेंगे बाद में हम घर पर इसे खायेंगे। जितना मैंने उसे दिया था उससे दुगुना वह अनाज मेरे यहां लाया और मेरे ना कहने पर भी दे कर चला गया। इतना ही नहीं वह प्रतिवर्ष जब तक जीवित रहा तबकक अनाज के दो गठ्ठर मुफ्त में दे जाता रहा।

एक दिन मैंने उसे कहा–भाई ! मैंने तुझे जो अनाज दिया वह उधार नहीं था। मैंने उसे अपनी बही में भी लिखा नहीं और मैंने तुझ से मांगा भी नहीं फिर भी तू प्रतिवर्ष मुझे दुगुना अनाज दे जाता है यह ठीक नहीं करता अब तुम अनाज देना बन्द कर दो।

उसने कहा–आपने संकट के समय सहायता की है। यदि आप अनाज नहीं देते तो भूखमरी के कारण मेरा सारा परिवार नष्ट हो जाता। मैं आपके उपकार का बदला कैसे चुका सकता हूँ। इस प्रकार वह प्रतिवर्ष मुझे अनाज पहुंचाता रहा। यह है उस गांव की पवित्रता की उज्ज्वल गाथा।

बगडूंदे का यह चातुर्मास एक अनोखा चातुर्मास था।

दशहरे पर जीवदया का प्रचारः—

दशहरे के दिन प्रायः गांवों में पाडे बकरे आदि अबोल पशुओं को बलि चढाने की नृशंस और घातक प्रथाएँ पूर्व से प्रचलित थी। पूज्यश्री इस घातक प्रथा को बन्द कारना चाहते थे। आपने दशहरे के पूर्व ही प्रचार प्रारंभ कर दिया। तमाम आस पास के गांवों में जहां पाडे बकरे मारे जाते थे उन ग्रामनिवासी लोगों को बुला बुला कर उपदेश दिया फलस्वरूप बगडुंदे व जीराई आदि ८–९ स्थानों पर होने वाली हिंसा को बन्द करवा दी। वास भौमट में अम्बामाता के स्थान पर हिंसा बन्द रही। नाथबाबा की देवी के मन्दिर में जो प्रतिवर्ष बकरा चढ़ाया जाता था उसे कायम के लिये अभयदान दिया गया। जोलावा की माता अम्बाजी के स्थान पर प्रतिवर्ष पाडा और बकरा मारा जाता था उसे भी बन्द कर दिया। जोग्याकागुडा गोगून्दा, आदि आस पास के गांवों में पूज्य आचार्य श्री ने उपदेश देकर जीवहिंसा बन्द करवाई। इस कार्य में बगड़न्दा स्थानकवासी जैन संघ के मुखियों ने तथा नरसी वैरागी ने पूरा सहयोग दिया।

स्वर्गीय तपोनिधि श्री सुन्दरलालजी महाराज की स्वर्गवास तिथि को विजया दशमी के दिन बडी धूमधाम से मनाई गई। इस दिन अनेक जीवों को अभयदान दिलवाया गया। उस दिन सामयिक, पौषध दया आदि व्रत बडी संख्या में हुए।

सभी दृष्टि से यह चातुर्मास सफल रहा। चातुर्मास को सानन्द सम्पन्न कर पूज्य श्री ने अपनी सन्त मण्डली के साथ बिहार कर दिया। पूज्यश्री को पहुंचाने के लिए सैकडों व्यक्ति दूर तक गये। अश्रुभीने नयनों से पूज्यश्री को विदा करने के समय पुनः क्षेत्र फरसने की आग्रह भरी विनंती की। पूज्यश्री ने मांगलिक सुनाकर आगे बिहार कर दिया।

बगडूंदे से विहार करते समय मेवाड के महाराना ने अपने प्राइवेट सेकेटरी श्रीमान् कन्हैयालालजी चोबीसा से पूज्यश्री को तार करवाया कि पूज्यश्री बगडुंदे से बिहार कर उदयपुर पधारे। तार इस प्रकार था

"पूज्यश्री घासीलालजी महाराज साहब से उदयपुर दरबार निवेदन करते हैं कि महाराज साहब उदयपुर पधारें–खुलासा पत्र में देखिए"

महाराणा के अत्यन्त आग्रह के बाद उदयपुर का श्रीसंघ भी पूज्यश्री की सेवा में आया और उदय-

पुर पधारने की प्रार्थना करने लगा। पूज्यश्री ने भावी उपकार को ध्यान में रखकर अपनी मुनिमण्डली के साथ उदयपुर की ओर विहार किया। मार्ग के अनेक गांवों को पावन करते हुए आप मदार पधारे। मदार में आपका जाहिर प्रवचन हुआ। मदार के ठाकुर श्रीमान् शार्दूलसिंहजी अपने राज परिवार के साथ आपके प्रवचन में आये। प्रवचन से प्रभावित हो मालासर माताजी के स्थान पर एवं जगत् माताजी के स्थान पर प्रतिवर्ष दो पाडों की बली कीजाती थी उसे सदा के लिए बन्द करने की प्रतिज्ञा ग्रहण की। ठाकुर साहब ने इस विषयक पट्टा लिखकर पूज्य श्री को भेट किया। इस पट्टे की प्रतिलिपी इस प्रकार है—

जगत का जीवदया का पट्टा
श्रीरामजी

पूज्यश्री घासीलालजी महाराज की पवित्र सेवा में—

मालासर माताजी और जगत माताजी के ठिकाने से हरसाल दो पाडे चढते थे वे अब बन्द कर दिये हैं अब कभी भी नहीं चढाएँ जायेंगे। सं १९१७ फ़ा सुदी ३ दः शार्दूलसिंह जगत् (ठाकुर साहब)

मदार निवासियों को प्रतिबोध दे आप नाई पधारे। नाई गांव संघ ने आपका भाव भीना स्वागत किया। महाराणा भूपालसिंहजी के प्राइवेट सेक्रेटरी श्रीमान् चौबीसाजी साहेब एवं उदयपुर संघ बडी संख्या में नाई पूज्यश्री के दर्शन के लिए उपस्थित हुआ। और उदयपुर पधारने की प्रार्थना करने लगा। पूज्यश्री ने उदयपुर पधारने की स्वीकृति दे दी।

नाई से आप उदयपुर पधारे। उदयपुर में चान्दपोल के बाहर हनुमान टेकरी पर स्थित महाराणा भूपालसिंहजी के निवास स्थान पर पधारे। वहाँ श्रीमान् महाराणा साहब ने आपका १॥ घंटे तक धार्मिक प्रवचन सुना। आध घंटे तक आप महाराणा साहब से धार्मिक चर्चा वार्ता करते रहे। महाराणा साहब ने मुलाकान्त के अन्त में बडा सन्तोष व्यक्त किया। इस प्रकार दो घन्टे तक महाराणा साहब को प्रतिबोध देकर आप गोपालभवन एवं गलुण्डिया भवन में पधारे। यहाँ आपके नियमित प्रवचन होने लगे। प्रवचन में उदयपुर के प्रतिष्ठित नागरिक, शिक्षक, शिक्षाधिकारी। राज्याधिकारी और सामान्य जनता बडी संख्या में उपस्थित होकर प्रवचन सुनने लगो। जनता पर आपके प्रवचनों का गहरा असर पडा। उदयपुर के विभिन्न स्थानों में कुछ दिन तक विराजकर और प्रवचन पीयूष से जनता को तृप्त कर आप एकलिंगजी पधारे एकलिंगजी तीर्थ स्थान माना जाता है। मेवाड के अनेक तीर्थस्थानों में इसका भी अधिक महत्व माना जाता है। मेवाड के आद्यराजा बापारावल से ही इस तीर्थ की महिमा गाई जाती है। मेवाड राज्य में यह मान्यता है कि "एकलिंग महादेव का ही यह समस्त राज्य है महाराणा तो केवल उसके दिवान है। मेवाड का समस्त राजघराणा इसका उपासक है। पूज्यश्री के एकलिंगजी में पधारने के बाद एकलिंगजी के मुख्य पूजारी महन्तश्री ने पूज्यश्री का भावभीना स्वागत किया। पूज्यश्री के उपदेश से महन्त ने " ॐ शान्ति की प्रार्थना का आयोजन किया। समस्त एकलिंगजी की जनता प्रार्थना सभा में उपस्थित हुई। पूज्यश्री ने प्रार्थना सभा में 'ईश्वर प्रार्थना' पर मननीय प्रवचन दिया। प्रवचन का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा। एकलिंगजी से विहार कर पूज्यश्री देलवाडा पधारे। देलवाडा रावजी ने आपका भावभीना स्वागत किया। आपका यहाँ जाहिर प्रवचन हुआ। देलवाडारावजी अपने राज्याधिकारियों के साथ प्रवचन में पधारे। पूज्यश्री के आगमन के उपलक्ष में यहाँ अगता रखा गया। देलवाडा के बहार तालाव की पाल पर पूज्यश्री की प्रवचन सभा हुई। प्रारंभ में ॐ शान्ति की एक घन्टे तक धून लगाई गई। रावजीसाहेब श्रीखुमानसिंहजी भी जनता के साथ धून गाते रहें।। इसके बाद पूज्यश्री ने 'ईश्वर प्रार्थना' पर एक घन्टे तक प्रवचन दिया। प्रवचन के अन्त में जनता ने यथा शक्ति त्याग प्रत्याख्यान किये। देलवाडे की

जनता को इस आयोजन से बडी प्रसन्नता हुई । देलवाडे से आप नाथद्वारा पधारे । नाथद्वारा के मुख्य श्रावक वकील मन्नालालजी श्रीमान् कन्हैयालालजी सुराणा, वकील कालीदासजी, आदि भक्तजनों के सुप्रयत्न से एक दिन समस्त नाथद्वारे में अगता रखा गया । 'ईश्वर प्रार्थना' की गई । यहाँ के महन्त संस्कृत पाठशाला के पंडित एवं विद्यार्थी, राज्य के उच्च अधिकारी, नगर के सन्मान्य नागरिक जनता प्रवचन में बडी संख्या में उपस्थित हुई । पूज्यश्री ने हजारों की संख्यामें जनता को उपदेश दिया । इस प्रकार का सुन्दर आयोजन नाथद्वारे के लिए प्रथम ही था । नाथद्वारे की जनता पूज्यश्री की विद्वत्ता से बडी प्रभावित हुई ।

यहाँ से विहार कर बागोल, परावल मोलेला, मचीन, खमनोर, सेमल, सलोदा, वाटी, कदमाल, अमराजी-कागुडा, घोडच, कडोयाँ लोसिग आदि गांवों को पावन करते हुए आप जसवंतगढ पधारे । इन सभी गांवोंमें पूज्यश्री के उपदेश से अगते पाले गये थे । उस दिन सर्व आरंभ समारंभ के कार्य सारे रोज वन्द रखकर ईश्वर की प्रार्थना की गई । ईश्वर प्रार्थना पर पूज्यश्री के प्रवचन हुए ।

पूज्यश्री ने मेवाडके प्रान्त गांव नगरों में विचर कर महान उपकार किये । सर्वत्र स्थानीय नागरिकों ने राजा, महाराजा, राव, राणा एवं जागीरदारोंने विविध पट्टे कर जिसमें सर्वत्र जीवहिंसा बन्द करवाने का आदेश जारी किये गये थे वे पूज्यश्री को भेट किये थे । उनका उल्लेख समय समय पर किया गया । और उनकी पतिलिपियां भी यथास्थान दी गई । जो अवशेष पट्टे मिले हैं उनकी प्रतिलिपियां आपकी सेवा में प्रस्तुत है । वे प्रतिलिपियां ये हैं—

से. नं. ६ "श्री एकलिंगजी" श्री रामजी ता. ६ । ४ । ३८

सिध श्री श्री सीटी पुलिस जोग राज्य मेहकमा खास अपरंच चेत सुद १२ गुरुवार के दिन तमाम मेवाड में शान्ति की प्रार्थना होवे तथा वी दिन अगतो पलावा की पूज्यश्री घासीरामजी महाराज श्रीमान् श्रीजी हुजूर दाम इकबाल हू ने मालूम कराई । जिस पर अर्ज मंजूर फरमाईजाकर लिखी जावे है कि चेत सुद १२ के दिन शहर में भी अगतो पलायो जावे और सब लोग दस मीनीट के वास्ते पंचायती नोहरे में इकट्ठा होकर सर्व ॐ शान्ति, ॐ शान्ति की प्रार्थना करें । सो इस माफिक तामिल करावें ।

१९९४ चैत सुद ६ ता० ६ । ४ । ३८

"श्रीनाथजी" श्रीरामजी ता. ११ । ५ । ३९

नकल हुक्म अदालत ठिकाना सरदारगढ़ मवरखा जेठ वद ८ ता० ११–५–३९ ईस्वी०

जैन श्वेताम्बरी बाईस संप्रदाय के पूज्य महाराज साहब घासीलालजी म. मनोहर व्याख्यानी मुनि मनोहर-लालजी, तपस्वीजी महाराज मांगीलालजी व पं. मुनि श्री कन्हैयालालजी म. वगेरा ठाणा ६ से जेठवद ७ को यहाँ पधारना हुआ । और आज ॐ शान्ति का व्याख्यान बडे आनन्द से हुआ । इसलिए आज की तारीख पट्टे हाजा में अगता रखाया गया और तालाव मनोहरसागर में बगर इजाजत शिकार नहीं खेलने व मच्छियें नहीं मारने की रोक की गई । और बडे बीडे का घास कट जाने के बाद मुहु चार घास मुकाते दिया जाया करता है । वह आयन्दा मुकाते नहीं दिया जाकर मवेसीयात को पुण्यार्थ चराने की ईजाजत दी गई ।

लिहाजा हूक्म असल तामीलान कचहरी में भेजा जावे ओर लीखा जावे के पूज्य महाराज व मनोहर-लालजी म. यहाँ पधारे उस रोज पट्टे हाजा में अगता रखा जावे ।

मुहुचारा घास मुकाते न देकर पुण्यार्थ मवेशियान को चराया जावे । तालाब मनोहर सागर में बगेर इजाजत कोई शिकार नही खेलने व मछीयें नहीं मारने पावे इसका इन्तजाम कर देवें फक्त हुक्म कचहरी नं० २४ ५३ नकल ईतलान पूज्य महाराज साहब के पास भेजो जाकर वास्ते तमोल थाने में लीखा जावे । असल दर्ज मुतफर कात हो । ता० ११ । ५ । ३९ मु० कु० नन्दलाल सोंगवी यहां महोर छाप है ।

ॐ

अपरंच घासीलालजी महाराज ने मालूम कराई के महासुद रविवार को शान्ति मनाई जावे । लिहाजा लिखो जावे है के महासुद १ इतवार को आमतोर से सब जगह अगता रखाया जावे । और दस मिनीट तक पूर्व दिशा की तरफ मुहकर सब लोग ॐ शान्ति करें और बकरे भो अमरिये कराये जायें । पट्टे के सब गामों में इसका इन्तजाम करा देवें सं. १९९९ महासुद १

"श्री एकलिंगजी" "श्रीरामजी" ता. २४ ६ ४०

नोटी फीकेशन अज पेशगाह राज श्री महेकमेखास श्री दरबार मुल्क सदस्त मेवाड मवरखा जेठ सुदी १४ संवत् १९ ९६ नं १० ९ ३७ फी. एण्ड पो० दरख्वास्त

चोईसा कन्हैयालालजी वाके जेठ सुदी १४ समस्त हाल पेश हुई कि पूज्य मुनिश्री महाराज घासी-लालजी म. की आज्ञा है कि एक पखवाडा तेरा दिन का है इसकी शान्ति होना जरूरी है। इसलिए असाढ वद ५ सोमवार ता० १४ जून सन १९४० इस्वी को सारे मेवाड में अगता रखाया जावे इसके बाबत हुक्म फरमाया जावे। लीहाजा हर खास व आम की ईतला के लिए लिखा जाता है कि हस्ब दरख्वास्त शहर उदयपुर व तमाम मेवाड में अषाड विद ५ ता० २४ जून सन हाल को जीहहिंसा बंध कर अगता रखा जावे व शान्ति जाप किया जावे। फक्त—१९९६ का जेठ सुद १०

"श्री एकलिंगजी" श्री रामजी ।४।६।४१ नम्बर १०३४३ वे० सु० १५ १५९७

डिप्टी कलेक्टर व ठिकाने जात उमरावान के नाम लिखने का मसविदा व सीलसिले हुकम नम्बर १०८६७ मवरखा जेठ सुदि १४ संवत १९९५

लिखी जावे है कि गुरजीस्ता माफिक इस साल भी अषाड वि ५ तारीख १४ जूने १९४१ वहाँ तालुक कुल मवाजियात में जीवहिंसा का अगता पलाया जावे व ॐ शान्ति जाप के लिए डुंडी पीटवा दी जावे फकत

"श्रीरामजी"

पूज्य श्री घासीलालजी महाराज की पवित्र सेवा में

मालासेर माताजी और जगत माताजी के ठिकाने से हरसाल दो पाडे चढते थे वे अब बन्द कर दिये हैं। अब कभी भी नहीं चढाये जायेंगे सं. १९९८ पोस सुदी ३ दः शार्दूलसिंह जगत

यह पट्टा पूज्यश्री घासीलालजी महाराज को जगत जैन पंचों के मोके पर काम आने के लिये दिया। दः शाह मोहनलाल परोत मुकाम चासदा का सं. १९९९ का पोष सुदी ५ मंगलवार

नम्बर २३५ ॥श्री एकलिंगजी ॥ ॥श्रीरामजी ॥

व नाम कलेक्टर उदयपुर भीलवाडा, राजसमुद्र भोम आई, जी. पी व ठिकाने जात कलमबंदी

अपरंच देश की शान्ति के लिए आसोज सुदि १४. ता० २३ अक्टूम्बर सन हाल को वहां तालुके खास कसबों में अगता पलाया जावे और उसदिन लोगों को ॐ शान्ति का पाठ करने की भी हिदा-यत कर देवें । फकत

श्री एकलिंगजी ॥श्रीरामजी ॥ १५६२४ ता. १६—९—४२

व नाम सिटी पुलीस

देश की शान्ति के लिए भादवासुदि ६— ता० १९ सिताम्बर सन हाल को शहर में अगता रखाया जावे व ॐ शान्ति का जप करने के लिए जरिये ड्योण्डी सोहरत करादी जावे। फक्त

नं० ६०४१ श्री एकलिंगजी ॥ श्रीरामजी ॥ उदयपुर ता. ९-२-४३

डिप्टी कलेक्टरान व ठिकाने जात उमरावान को लिखा गया। ता०९-२-१९-४३ व सिलसिले हु० नं० ५६३९ मवरखा ३०-१-४३। इतल्ला दी जाती है कि अगता बजाप्ते बडे बडे कसबों तमाम मवाजियात इजलाय सारे मेवाड में रखाया जावे। स. १९९९ महासुद ५

॥श्री ऐकलिंगजी ॥ श्रीरामजी

नकल हुकुम आज पेशगाह राज्य श्री महकमें खास। फो० ऐण्ड० डी मवरखा माहविद ९, समत् १९९९। ता० ३० -१-१९४३ ईस्वी नम्बर ५६३९

देश की शान्ति के लिए महासुद १० ता० ९ फरवरी सन ४३ रविवार के दिन उदयपुर में व मेवाड के बडे बडे कस्बों में अगता रखया जावे। और उसदिन तमाम गावों में लोगों को ॐ शान्ति का पाठ करने की भी हिदायत कराई जावे। फकत

नंम्बर ९७४० ॥श्री एकलिंगजी ॥ ॥श्रीरामजी ॥ फो० ए० पो० डी०

सीधश्री राज्य श्री महकमाखास दरबार राज्य उदयपुर को हुक्म इलाके मेवाड का खालसां कामदारां, थानेदारां, भोमियां जागीरदार व सासणिक गामों का पटेल, पटवारी व गरडा, गमेती, वगैरह लोगों ने पहुंचे। अपरंच जैन आचार्य घासीलालजी महाराज और उनके शिष्य परिवार रियास्त हाजा के जिन जिन गावों में जावे और व्याख्यान धर्मचर्चा आदि करे उस सिल सिले में इमदाद चाहे और वो वाजीवतोर से दी जा सके वो दी जावे। सं० १९९९ का वैशाख व० १२। ता० १ मई सन १९४३। यहाँ राज्य की महोर छाप है।

॥श्री सीतावरजी ॥ ता. ११-३-४४

श्री श्री १००८ मुनि गोडीदासजी १००८ श्री पूज्य महाराजश्री घासीलालजी म. का उपदेश व ॐ शान्ति गढ देवलिये में हुआ। श्री महाराज का उपदेशसूं नीचे लिखी प्रतिज्ञा करता हूं। सो हमेशा निभाऊंगा

१ मै. हरेक छोटी शिकार व हीरण मछली की शिकार नहीं करूंगा। मच्छियां तलाबों में से वगेर इजाजत दूसरा कोई शिकार नहीं कर सकेगा।

(२) सारे राज्य में देवीदेवता के नाम से पाडे व बकरे का बलिदान हमेशा के लिए बन्द रहेगा।

(३) साल में आठ महिना, वैशाख, जेठ श्रावण, भादवो, कार्तिक, मिगसर, पोस फाल्गुन, में मारी तरफसु देवी देवता को कोई जीव को बलिदान नहीं होवेला। चेत व आसोज में भी कभी नहीं करूंगा। फक्त ता० ११ मार्च सन् १९४४ ई० द: रखबचन्द जैन

तहसीलदार का किये श्री हजूर साहब का हुक्मसु लिख्यो। मिति चेत्रबदी २। सं. २०००

॥श्रीरामजी ॥ ता. ११-३-४४

कोटा संप्रदाय के १००८ श्री गोडीदासजी महाराज श्री श्री १००८ श्री पूज्य महाराज साहब घासीलालजी म० साहित्य प्रेमी व्या० मुनिश्री पंडित समीरमलजी म. आदि ठाना ५ देवलिया में पधारे। ता० ११ मार्च ४४ को शान्ति प्रार्थना में मैंभी पहुंचा और उस मोके पर मैने उपदेश श्रवण किया। उपदेश के अनुसार नीचें लिखे नियमों का पालन करूंगा। (२) सभी देवा देवताओं को मीठा प्रसाद चढ़ाया जायगा। और जीव हिंसा बन्द रहेगी। (२) इलाके कुरथल के तलावों में कोई बिना इजाजत शिकार नहीं कर सकेगा। जिसके लिए तलावों पर सेनबोर्ड लगा दिया जावेगा। (३) मेरे गांव में पजूषण के भादवा वदी ११ से सुदी ५ तक शिकार करने की मुमानियत रहेगी। घाणी भी नहीं चलाई जावेगी। और श्रावन भादवा, कार्तिक वैशाख में इन तिथियों में ११-५-३० को मैं खुद शीकार नहीं खेलूंगा।

(४) बीड–नाडिया जिसका घास पूरा कट जाने पर इजाजत बिनाकिमत पुन्यार्थ मवेसियान को चराने के लिए दी गई हे इसके अलावा जिन बिडों का घास कट जाने पर जो चराई लेता हूं उसे पुण्यार्थ में लगाउंगा। लि० ठाकुर साहब का हुक्म से फक्त ११ मार्च स० १९४४ मिति चेत्रवदि २ सं. २००० दः रिखबचंद देवलिया वाला श्री ठाकोर साहब का हुक्मसे।

॥श्री परमेश्वरजी॥ श्री गोपालजी अज ठिकाना श्री रायपुर मु० रायपुर (मारवाड)

चूंकि पूज्यश्री घासीलालजी महाराज रो पधारणो रायपुर में हुओ ने श्रीमान् रावले साहब महाराज श्रीरा दर्शन करने पधार्या ने उपदेश सुणियो सो श्री महाराज साहबरा फरमावणसु हर महिनारी कृष्ण पक्षरी ९ नवमी ने जीवहिंसा रो अगतो मेरे राज में व गांव में पलावणो मुकरर करायो है। सो बारे महिना में १२ (बारे) अगता उपर लिखिया मुजब तिथिरा साल हरसाल पलाया जावसी। यो परवानो श्रीमान रावले साहिबारा हुक्मसुं कर दियो है। संवत् २००० रा चैत्र शुक्ला ८

मेहता अमोलकचंद नकल लिखी वही पाने नं. १६२

नं.०६४१ ॥श्री एकलिंगजी॥ ॥श्री रामजो॥ ता. ९. २. ४३

डिपुटी कलेक्टरान वो ठिकाने जात उमरावान को लिखा गया ता० ९. २. १९४३ व सिलसिले हु० नं. ५६३९ मवरखा ता. ३०.१.४३ इतल्ला दी जाती है कि अगता रखा जाय बडे बडे कसबों में तमाम मवाजियात इजलाय मेवाड में रखया जावे। सं १९९९ महासुद ५।

नकल हुक्म अज महकमे आलिये दरबार सैलाना नम्बर ४१६

नाम. पंचान जैन स्थानक० मामला. बाबत इतला करने पलती बर्ताना ता० ३.१२.४०

अर्जी सकल पंचान महाजन जैनी चम्पालाल की तरफ से चम्पालाल महाजन साकिन सैलाना ता० ३. १२.४० व खुलासे के हमारे धर्माचार्य पूज्य श्री घासीलालजी महाराज साहब आदि पाँच सन्तों का सैलाने पधारना हुआ है और जहां तहां पधारते हैं। वहां सब जगह राजा, प्रजा और सारी राजधानी के सुख शान्ति के लिए एक रोज पलती रखकर ॐ शान्ति की प्रार्थना करवाते हैं। इसलिए अगहन सुदी ७ सातम शुक्रवार के दिन उपर मुताबिक ता० ६. १२. ४० के दिन समस्त राज्य में पलती रखवा कर ॐ शान्ति का जाप प्रार्थना कराई जाने के लिए व नजरे परवरीष हुक्म होने को महक्मे आलिये इजलास खास में पेश हुई। उस पर महक्मे आलिये इजलास-खास से हुक्म रो० नं. १४१ ता० ३. १२. ४०. को फरमाया गया के दरख्वास्त मन्जूर की जाती है। ता० ६. १२. ४० को पलती मनाई जाय। लिहाजा हु. दः दिवान दरबार

श्री एकलिंगजी श्रीरामजी

सिद्ध श्री महाराज साहेब श्री १०८ श्री घासीलालजी महाराज आदि ठा० से ग्राम वाटी बिराजमान होने पर ग्राम कदमाल के समस्त जनों की प्रार्थना से दया कर बडे महाराज साहब व श्री तपस्वीराज मा. ठा०–३ से कदमाल पधारना हुआ सो ग्रामाधीश ठाकुर सा. श्री १०५ परबतसिंगजी व समस्त ग्रामवाला श्री च्यार भुजाजी के मन्दिर ऊपर व्याख्यान सत्य उपदेश सुन नीचे लीखीया मुजब प्रतिज्ञा कर यह पट्टा महाराज साहब श्री तपस्वीराज के भेट किया सो मां को वंश रहेवेगा जबतक पालता रेवांगा (१) माताजी अम्बाजी तलाव उपर बिराजे ज्यारे एक बकरा चढ़ता है वो आज दिन से बिलकुल बन्द है। (२) खेडादेवी मा गजी ग्राम में बिराजे ज्यारे बकरा व पाडा चडता है सो आज दिन से बिलकुल बन्द है। (३) अमलोइजी भीलवाड बिराजे ज्यारे भी जीव चढ़ता है सो आज दिन से बिलकुल बन्द है। बोलमा आयगा जीने अमरीया कर दिया जावेगा। (४) चामुण्डा माताजी बलार्यों के घरों के पास है वहां की भी

आज दिन से सब जीव हिंसा बन्द कीया है।' (५) श्रीआदमाताजी ठिकाना रावला में बकरा चढता है सो आज मिती से बिलकुल बन्द कर दिया है। आज दिन बाद मिठाई का नीवेद बनाकर माताजी के पूजन होगा। (६) श्रीमान ठाकुर साहब अपने हाथ से झटका नहीं करने की प्रतिज्ञा की। न कोई छोटे जीव पर गोली चलानी। हिरण वगैरा लावा तीतर पंखी वगैरा को नहीं मरना, (७) एक बकरा हरसाल अमरिया तपस्वी-राज के नाम से समस्त गांववाले करते रहेंगे। (८) अग्यारस अमावस पुनम को कोई जीवहिंसा और शिकार नहीं करेगा और हल भी नहीं जोतेगा यानी सब तरेह का अगता रहेगा। उपर मुजब सोगन श्री च्यार भुजाजी के सामने श्री एकलिंगजी व सूरजनारायण कि साक्षीसु किदा सो पाला जावेगा। याने देवताओं को मीठो प्रसादो होवेगा। माताजी रे कोई जीव नहीं मरेगा। माताजीरा नाम से कोई भी ठीकाने जीव नहीं मरेगा अगर कोई जीव आवेगा तो उसे अमरिया कर छोड दिया जावेगा। यह सोगन कर पट्टा ठाकुर साहब खुद व समस्त गांववाला कीदा सो साबत है। १९९९ का फागन सुदी २ गुरुवार दः अ. गीरधर-लाल गोगुन्दा निवासी ठाकुर साहब श्री परबतसिंगजी व समस्त गांववालों के कहने से लिखा है। दः ठाकुर साहब के अंगूठे की निशानी

स्वामी जो महाराज २२ संप्रदाय के पूज्य श्री घासीलालजी महाराज साहब.

आपका पधारना बागपूरा हुआ और आपसे जेवडा पधारने की विनंति की गई। उस पर आपका आज जेवडा पधारना हुआ। आपके उपदेश से ॐ शान्ति की प्रार्थना कराई गई। इससे मुझे बहु खुशी हुई और प्राणशरण साहब. दौलतसिंहजी साहब तथा सरदारमलजी सा. काफी कोशिश करके ॐ शान्ति प्रार्थना करवाई। मैं इस मोके पर सदा के लिए प्रतिज्ञा नीचे मुजव करता हूँ। (१) पांच बकरे हरसाल अमरिया करूँगा। (२) श्रावन भादवें में शिकार नहीं करूँगा (३) महिने में चार रात में (दोनो अग्यारस, अमावस पूनम को) नहीं खाऊंगा। (४) छोटे जानवर व तालाब में मच्छियें मारना बन्द करवाऊंगा। (५) ॐ शान्ति का नियमित स्मरण करूँगा। (६) दशहरे के मोके पर माताजी के स्थान पर बकरे वगेरा जीवों को मारना सदा के लिए बन्द किया जाता है। इन सब कलमों को पालूंगा ता० ४. ६. ४३ दः रावतजी केसरसिंह

"श्रो एकलिंगजी" श्रीरामजी" अर्ज तरफ ठाकुर कर्णसिंह पलासिया (झालावाड)

ब खीदमत स्वामीजी महाराज आचार्य पूज्यश्री घासीलालजी महाराज आपका पधारना कल झाडोल में हुआ। और बगीचे में ॐ शान्ति मनाई गई। इसलिए आपके उपदेश से ...शान्ति की खुशी में प्रतिज्ञा करता हूँ जिसकी सदा के लिए पाबन्दी रखी जावेगी। (१) आज अन्दर जनाने में से १ बकरा अमरिया किया गया। व गऊवों को घास १) रुपये का दिया जावेगा। (२) दशहरे पर जो पांच बकरिये बलि किये जाते थे वे सदा के लिए बन्द कर दिये जावेंगे और उन्हें अमरियाँ कर दूंगा। (३) मेरे यहां माताजो के नवरात्रि में एक बकरा बलिदान होता है उसे माफ कर सदा के लिए अमरिया कर दूंगा। (४) महीने में चार रात्रि भोजन (यानी दो ग्यारस अमावस व पूनम को) नहीं करूंगा। (५) श्रावन भादवे में शिकार नहीं करूंगा। (६) छोटे जानवर तीतर लावा बटेर हरण परिन्दे आदि सर्व पशु पक्षियों की शिकार सदा के लिए बन्द करता हूँ। पजूषन में अगता पालूंगा फकत १९९१ का जेठकृष्ण ११ ता० १९ मई ४३ दः ठाकुर कर्णसिंह पलासिया पट्टे का

संजेली स्टेट

प्रिय प्रजाजन,

मारी पासे केटलीक गांमनी महान व्यक्तिओए आवी ने जाहैर कर्युं के संजेली मां एक महान पुरुष पधारेला छे। तेमनी इच्छा ता० १५। ५। १९४१ वार गुरुवार ना दिवसे ॐशान्ति दिवस तरीके पालवो जोइए. आ बाबत अमने घणीज प्रशंसनीय लागे छे। हुं पण ते विचारने उत्तेजन आपु छुं।

आज काल संसार में घणी अशान्ति फेलायली छे. तेनी शान्ति माटे परमात्मानी प्रार्थना करवानी जरूर छे। तेनाथी संसारमां शान्ति थाय छे। कारण के साचा हृदयथी अने भक्ति भावथी करेली प्रार्थना घणीज असर कारक होय छे। ते लोको मानसिक मोजाने मेन्टल दाइ वेशन माने छे। ते लोको आबाबत सहेलाईथी समजी सकशे माटे हुं संजेली स्टेटनी तमाम प्रजाजनोंने विनन्ती करूं छु के उपर जनावेली तारीखे सवारना नव वाग्यानी अन्दर पोताने योग्य स्थले एकठा थई प्रभु प्रार्थना करो के "हे भगवान् विश्वमां शान्ति स्थापो" ते दिवसे पोतानी श्रद्धा अनुसार दान आपे। आत्मानी शुद्धि माटे पोते व्रत पाले। ब्राह्मणो शान्ति पाठ भणे। प्रजाजनों ने दारु मांस हिंसा दुराचरण करवानी मनाई छे।

संजेली मां पूज्य महाराज श्री श्री घासीलालजी महाराजश्रीना उपदेशर्थी संजेली स्टेट के मेनेजर साहेबनी ओफिसथी ठेराव न. ११७५ थी संजेली स्टेटनी हदमां जे जे जगाये पाणीना नीरवाणो छे. त्यां कोई पण माणसोए माछला वीगेरे जंतुओ मारवानी सखत मनाई करवामां आवी छे।

संजेली मां उपर बतावेली ता. पूज्य आचार्य महाराज श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराजश्रीनुं व्याख्यान श्रीमान् महाराजा साहेबनी आंबावाडी मां थशे। त्यां सर्वे प्रजाजनों वेपार बन्द राखी लाभ उठावे। आ विनंती राजा प्रजानी शान्ति माटे छे. हु आशा राखु छुं के जनता आ बाबत मां सहकार आपशे.

ता० १०।५।४१ मेनेजर संजेली स्टेट हस्ताक्षर महोरछाप

श्री एकलिंगजी श्री रामजी बागपुरा। ता० ३।६ ४२

अजत्रफ ठा० किशोरसिंह। पट्टे जाडोल इलाका मेवाड

ब खीदमत स्वामीजी महाराज २२ संप्रदाय के आचार्य पूज्य श्री घासीलालजी म. की परम पवित्र सेवा में निवेदन हो

आपका पधारना यहां पर हुआ और धर्मोपदेश का व्याख्यान हुआ। वो निहायत अच्छे व सरल सब के समझ में आए आज की तारीख को ॐ शान्ति का जप किया। उसमें सब जाती के लोग शरीक हुए। मैं भी आया और मुझे बडी खुशी हुई। ॐ शान्ति के निमित्त निम्न लिखित प्रतिज्ञा करता हूं। (१) मेरी तरफ से एक बकरा अमर करवा दूंगा, (२) शक्ति अनुसार कबुतरो को मक्की डालूंगा (३) हिंसा जहां तक हो सके नहीं करूंगा, (४) लोह (यानी जटका) ब शरते के मालिक के हुकुम के अलावा नहीं करूंगा कारण के इसमें पराधीनता का ख्याल रहता है। (५) दशहरे पर माताजी को बकरे का बलिदान किया जाता है, उसे कायम बन्द कर दिया जाता है। (६) दीवासा (यानेहरियाली आमावस्यां) जो श्रावन में आती है उस रोज यहां के लोग मेरा याने खेडा देव कहते हैं उनके बलिदान में बकरा काटते हैं जिसको तीन साल से अमावस को काटना बन्द किया अब जहां तक हो सके सदा के लिए बन्द करने की कोशीश करूंगा। (७) ग्यारस अमावस को मांस भक्षण नहीं करूंगा (८) दरख्तो की चोटी यानी सिर नहीं काटने देऊंगा कि जिससे उनके बढने में बाधा उत्पन्न न हो (९) लावा, बटेर, घटक, शनदा, हिरण आदि जीवों की सर्वथा शिकार नहीं करूंगा और इनका मांस नहीं खाऊंगा। (१०) आज से यथा शक्ति हरिस्मरण करूंगा उपर माफिक प्रतिज्ञा का बराबर पालन करूंगा (१) भाई स्वरूपसिह की तरफसे १ बकरा अमर करेंगा। (२) ग्यारस अमावस को मद्य मांस भक्षण नहीं करेंगे। (३) लोह अलावे मालिक के हुक्म बिना मन से नहीं करूंगा १९९९ का जेठ शुक्ल १ द: किशोरसिंह बागपुरा (झाडोल)

इस प्रकार के सैकड़ों पट्टे पूज्यश्री को राजा महाराजा, जागीरदार ठाकुरों ने भेट में दियें। उन सब का उल्लेख स्थानाभाव के कारण नहीं किया जा सका। पाठक गण क्षमा करें।

वि० सं० २००० का ४२ वाँ चातुर्मास जसवन्तगढ में

वहां से तरपाल, सुवावता का गुडा पदराडा कम्बोल आदि ईन सर्व गांवो में पूज्य श्री पधारे तो

सभी जगह अगता (पाखी) पालने के साथ ईश्वर प्रार्थना प्रवचन होता रहा। जसवन्तगढ़ वालों ने भी चातुर्मास की विनन्ती के लिये पहुंचने का तांता बांध दिया था। जसवन्तगढ संघ की माँग थी कि पूज्य-श्री हमारे यहां पर दीक्षित हुए तो हमें उसके उपलक्ष में एक चातुर्मास अवश्य मिलना ही चाहिए। इस प्रकार जसवन्तगढ़ संघ की अत्याग्रह भरी विनन्ती देख कर पूज्य श्री ने संघ की विनन्ती स्वीकार कर ली।

पूज्यश्री सेमब, सायरा, सिंगाड़ा ढोल, नान्दिस्मा, होकर गोगुन्दा पधारे। चातुर्मास समय नजदीक आ जाने पर तपस्वी मदनलालजी म. तथा तपस्वी मांगीलालजी म. ने तपश्चर्या प्रारंभ कर दी। तपश्चर्या में ही धीरे धीरे विहार करते हुए दोनों तपस्वी म. पूज्य श्री के साथ मजावड़ी खाखडी होते हुए जस. वन्तगढ़ पधारे। जसवन्तगढ़ के जैन अजैन सभी लोगों को चातुर्मास के लिये पूज्य श्री के पधारने से अत्यन्त प्रसन्नता थी। बहुत ही उत्साह उमंग के साथ स्वागत किया गया। जसवन्तगढ़ एक सुन्दर टेकरी पर बसा हुआ है। गोगुन्दा रावजी साहेब के पूर्वज पहले यहां पर रहते थे। यह गढ प्राचीन समय में सामरिक महत्व रखता था। वहां आज भी प्राचीन समय की घाटियां, मालपुवे, मिरचियें, हल्दी, तेल, सोर, बन्दुके आदि वस्तुएँ भण्डार में पडी हुई है। स्थान स्थान पर बुरजें बनी हुई है। गढ़ को एक ही दरवाजा है। वर्तमान में सभी घर जैनां के ही है केवल तीन घर वैरागी जाति के हैं।

गोगुन्दा रावजी ने दरीखाना बुरज का मकान चातुर्मास बिराजने के लिये दे दिया था। सुबह में पं० श्री समीरमुनिजी म. व्याख्यान देते थे। दुपहर में प्रथम पं० मुनिश्री कन्हैयालालजी म. बाद में पूज्य श्री घासीलालजी महाराज व्याख्यान फरमाते थे। जसवन्तगढ़ के नीचे में चारों तरफ बारह गांव (भागल) बसे हुए हैं। इस बारह गांव के लोगों को दुपहर को हि समय मिलता होने से बहुत बडी सख्या में ओसवाल ब्राह्मण, राजपूत, सुथार कुम्हार, वैरागी, साधु, भील आदि जाति के सैकड़ों स्त्री पुरुष व्याख्यान में आते थे। पूज्य आचार्य श्री जवाहरलालजी म. सा. (बीकानेर) भीनासर में स्थिरवास बिराजित थे। पूज्य श्री को अपने प्रिय शिष्य श्री घासीलालजी म. के प्रति पूर्ण स्नेह था, यह उल्लेख पाठको ने पूर्व वर्णन में पढा ही है। बीच में आए हुए विक्षेप के कारण गुरु शिष्य में विछोह हो गया था। वही विक्षेप अन्ततक अवरोध रूप में बनाही रहा और चाहते हुए भी गुरु शिष्य दोंनो नहीं मिल सके। यहि एक पूर्व अंतराय कर्म का कारण था एक दिन उदयपुर से समाचार मिले कि पूज्य श्री जवाहिरलालजी म. का आषाढ शुक्ला ८ ता० १०।६।४३ के दिन भीनासर में स्वर्गवास हो गया। इस समाचार से पूज्य श्री घासीलालजी म. आदि सभी मुनियों को तथा जसवन्तगढ के संघ को बहुत ही विक्षोभ हुआ। दूसरे दिन व्याख्यान बन्द रखा गया। और शोक सभा हुई शोक सभा में पूज्य श्री के महान जीवन का परिचय पू. श्री घासीलालजी म. ने तथा समीर मुनिजी म. ने दिया।' दोनों तपस्वी मुनियों की तपश्चर्या के साथ साथ भाईयों बाईयों में भी पंचरंगियां बेले, तेले, पंचोले अठाई आदि तपश्चर्याएं बहुत हुई। पर्यूषण पर्व में आस पास के गांव के श्रावक श्राविका बहुत आए। धर्म ध्यान तपश्चर्या भी बहुत हुई।

श्रावण मास में अति वृष्टि के कारण खारी नदी में भयंकर बाढ़ आने से किनारे के सभी गाँवो में जान माल का बहुत ही नुकसान हुआ। गांव के गांव जलमग्न हो गए थे। बाढ से त्रस्त लोगों के लिए स्थान–स्थान से अनाज कपड़े दवा विगेरे पहूंचाने की व्यवस्था की जा रही थी। जसवन्तगढ में भी पूज्य श्रीने अपने व्याख्यान में बाढ़ ग्रस्त लोगों को सहायता पहुंचाने का उपदेश दिया जिससे यहां के संघ ने घर घर से अनाज इकठ्ठा करना प्रारंभ किया। सभी जाति के लोगों ने यथा शक्ति अपनी अपनी इच्छा से अनाज ला–लाकर बडा ढेर कर दिया। एक भील ने जंगल से लकडी का गठ्ठर (मोली) लाकर बेचा, उसके बदले में जो अनाज आया वह लेकर बाढ़ ग्रस्त लोगों के लिये भेजने के वास्ते जो अनाज इकठ्ठा हो रहा था उसमें देने के लिये लाया। भील बहुत ही गरीब था, लाया हुआ अनाज दे देता है

तो उसे अपने परिवार सहित भूखा रहना पडता है इस लिये उसे कहा गया कि तेरे घर पर खाने के लिये कुछ नहीं है, यह अनाज मत दे, अपने घर बच्चोंके लिये ले जा। भील यह सुनकर दुखयुक्त अश्रु भीनी आंखों से बोला-"मैं गरीब हूं इस लिये मेरा लाया हुआ अनाज नहीं ले रहे हो और मेरी इच्छा देने की है। मैं दूबारा जंगल से लकडो का गट्ठर लाकर बेच दूंगा और अपने परिवार के लिये खाने की व्यवस्था कर लूंगा। जो मेरा लाया हुआ अनाज नहीं लोगे तो मुझे बडा दुःख होगा। क्या कोई गरीब होने से किसी की भी सहायता करने का अधिकारी नहीं हो सकता? भीने नयनों से बोल रहे भील की उदात्त भावना के सामने इनकार करने वालों को उसका लाया हुआ अनाज ले लेना पड़ा। भील जो अपढ और लोगों की दृष्टि से गिरा हुआ माना जाता है वह देने के लिये कितना उत्कंठित और भावों से कितना उज्वलितथा। दूसरी और लोगों की दृष्टि में जो ज्ञानवान और समृध्यवान माना जाता है। उसे ऐसे कार्यों में देने के वास्ते किस प्रकार मनाना पड़ता है। और देता है तो कितना! फिर अहसान का पुलिन्दा चारों तरफ दिखाता भी फिरता है। तब प्रश्न खड़ा होता है कि मन गरीब धनी है या मन का उदात्त धनी है? पर्युषण के बाद भादरवा शुद १४ के दिन दोनों तपस्वियों के तपश्चर्या का पूर होने से पानरवा, महेरपुर ओगणा, झाड़ोल, गोगुन्दा, पदराडा के जागीरदारों ने अपने अपने परगणों में अगते पलवाए। पदराड़ा ठाकुर सा. श्रीमानसिंहजी स्वयं दर्शनार्थ आए। सायरा हाकीम (कलक्टर) श्री जीवनलालजी चौधरी परिवार सहित पूर पर आए। लीमडी, संजेली, झालोद, दाहोद, कुशलगढ़ वांसवाडा से दर्शनार्थी आए। उस दिन व्याख्यान मे लगभग ३-४ हजार जनता थी। सभी के लिये ठहरने की व्यवस्था में अन्य जाति के लोगों ने पूरा सहयोग दिया। पारणे के दिन पास के भागल (गांव) के निवासी अमराजी ब्राह्मण के भी आठ उपवास का पारणा था। उसने व्याख्यान में सभी से आग्रह किया कि आप सभी मेरे घर पर पधारोगे तो में पारणा करूंगा। उसके ऐसा कहने पर हाकिम साहब आदि सभी आधा मील दूरी उनके घर पहूंचे। छोटा सा घर, सामान्य परिस्थिति, परन्तु राम के पदारपण से शबरी को, कृष्ण के आने से विदुर को तथा भगवान महावीर के आने से सती चन्दना को जो खुशी हुई वही खुशी सारी सभा सहित पूज्य श्री के वहां पहुंचने से उन अमराजी ब्राह्मण को हुई। उसने महेमान गिरी के लिये दो किलो मालपूए, बनवा रखे थे। तीन हजार लोगों में दो किलो मालपूए, इनकार करे तो उसके मन को पिडा पहुंचना सम्भव था इसिलिये हाकीम साहब ने परसाद के रूप में सभी को बटवा दिया। उस समय देने वाले लेने वालों को प्रसन्नता अवर्णनीय थी। भावों का निर्मलता पदार्थों को मौन बना देता है भाव ही जीवन विकाश का एक दिव्य साधन है।

चातुर्मास समाप्ति के साथ दामनगर सौराष्ट्र से शास्त्रज्ञसेठ दामोदरदास भाई आदि श्रीसंघ जगजीवन भाई का दामनगर पधारने के लिये आग्रह भरा विनन्ती पत्र आया। पं. श्री गबूलालजी म. का परिचय जब से सेठ दामोदर दास भाई से हुआ तब से पं. श्री गबूलालजी म. ने सेठ को सलाह दी कि आप पूज्य श्री घासीलालजी म. को विनन्ती करके दामनगर बुलावें और जैनागमों की संस्कृत हिन्दी गुजराती भाषा में सर्वमान्य टीका लिखवावें। एसे मयश्रद्धा के लेखक भारत में मिलना दुर्लभ है तदनुसार सेठजी ने पूज्य श्री को दामनगर पधारने का विनन्ती पत्र भेजा। उधर चातुर्माम समाप्ति के समय अशाता वेदनी कर्म के उदय से पूज्यश्री को तथा पं श्री समीरमुनिजी म. को ज्वर आने लग गया जशवन्तगढ श्रीसंघमहान सेवा भावी अने भक्ति वान परंतु छोटा गांव होने से आधुनिक उपचार व्यवस्था का अभाव होने के कारण ज्वर का तांता चलता ही रहा। चातुर्मास समाप्त होने पर विहार किया। प्रथम विहार भेरुजी के मन्दिर पर हुआ। जहां आस पास के गांवों के ब्राह्मण आदि जाति के स्त्री पुरुष बहुत बड़ी संख्या में आए। वहां केवल एकमन्दिर के

अतिरिक्त कोई मकान न होते हुए भी सभी खुले जंगल में रात्रि निवास रहे। भजनो से सारा जंगल गुंजित हो रहा था। किसी को नींद स्पर्श ही नहीं कर रही थी। रात्रि जागरण में बीत जाने पर सुबह सूर्य उदय हुआ और पूज्य आचार्य श्री ने वहाँ से गोगुन्दा विहार किया। सभी जाति के स्त्री पुरुष बहुत दूर तक पहुंचाने आए। अर्धमार्ग से सभी को मांगलिक सुनाकर पूज्य श्री ने अन्तिम सन्देश दिया कि आप सभी का धर्म स्नेह अथाग है, यह बड़ा स्तुत्य हैं भविष्य में प्रभु भक्ति द्वारा इस स्नेह को सिंचित करते रहें। अश्रु भीनी आखों से बहुत से स्त्री पुरुष लौट गए। कुछ लोग गोगुन्दा तक साथ आए।

गोगुन्दा संघ ने मजावडो तक पहुंच कर पूज्य श्री का बड़ा स्वागत किया। गोगुन्दा में दो दिन बिराजे, वहां उदयपुर महाराना श्रीभूपालसिंहजी ने अपने मर्जीदान श्री कन्हैयालालजी चौविसा को पूज्य श्री की सेवा में भेजकर पूज्य श्री को उदयपुर शिघ्र पधारने का आग्रह किया। पूज्य श्री को तथा पं. श्री समीरमुनिजी म. को ज्वर ने अभी भी नहीं छोड़ा। स्वास्थ्य लाभ के लिए विश्राम तथा अनुकूल जल वायुवाले स्थान की आवश्यकता थी। गोगुन्दा के पास ही चांख्या खेडी गांव के ब्राह्मणों का बड़ा ही आग्रह था। जिससे पूज्य श्री वहां पधारे। वहाँ पहुंचने पर ज्वर ने अपना प्रभाव अधिक दिखाया। जिससे पूज्य आचार्यश्री को वहीं रुक जाना पडा। सभी ब्राह्मण लोग जैन मुनियों के नियमों को जानने वाले होने से उन्होंने अपने सभी लोगों को इकट्ठे कर के आदेश दिया कि पूज्य म. यहां बिराजे जितने दिन कोई भी रात को भोजन नहीं करें, अगर कोई भी रात को भोजन करेगा तो पंच ५१ रु. जुर्माना करेंगे। सभी लोग बडी श्रध्धा से सेवा का लाभ लेने लगे। गोगुन्दा संघ गोगुन्दा से डाँ. साहेब प्रभुलालजी को लेकर आये तबियत बताई और उपचार करने से ८-१० दिन में ज्वर ने विश्राम दिया।' सामान्य स्वास्थ्य सुधरने पर पूज्य श्री ने विहार कर दिया चोरवावडी भाद्वीगुड़ा, मदार थूर, लोइरा गांवों में विश्राम करते हुए पूज्य श्री पधार रहे थे। पं. श्री समीर मुनिजी म. की तबियत ठीक हो गई परन्तु पूज्य आचार्य जी को ज्वर आता रहा। इस कारण विहार भी थोडा थोडा होता था। उदेयपुर के समीप फतेपुरा में विश्राम किये बिना आगे बढना असंभव था। विश्राम के लिये स्थान की तपास करने के लिये पं. श्री समीर मुनिजी म० आगे पहुंचे और फतेहपुरा चोराहे के पास के एक बंगले में गए। बंगला के स्वामी कुर्सी पर बैठे किताब पढ रहे थे। मुनिजी ने जाकर उनसे कहा कि हमारे पूज्य महाराज को ज्वर आरहा है, पीछे धीरे धीरे आरहे हैं। थोडी देर विश्राम के लिये आप के यहां स्थान मिल सकेगा ?

मुनिजी की आवाज सुनते ही वे सज्जन तत्काल कुर्सी से खडे हो गए, और बोले, आप महाराज श्री को जरूर ले आइये, यहां स्थान उपलब्ध हैं। उसी समय एक कमरा खोल दिया। ये मकान मालिक थे भूत पूर्व रीयां किसनगढ़ स्टेट के प्रधान मंत्री श्री केसरोचन्दजी पंचोली। मकान में अपना सामान रख कर मुनिजी पुनः पूज्य श्री के सामने गये, ज्वर के कारण चला नहीं जा रहा था फिर भी दृढ़ साहस के साथ धीरे धीरे चलते हुए उस बंगले पर पहुंचे। श्री केसरी चन्दजी पंचोली चोराहे तक सामने आए और अपने मकान पर ऐसे महान विद्वान मुनि के पद पंकज स्पर्शित हुए इसके लिये महति प्रसन्नता प्रकट कर रहे थे। पूज्य श्री ने फरमाया हमारे ठहरने से आप को मकान की संकड़ाई होगी। पंचोलीजी बोले संत चरन मेरे बंगले पर मेरे भाग्य से ही मिले हैं। हमें कोई तकलीफ नहीं है। संतो के लिये हम अपना सारा सामान बाहर रखकर सारा बंगला खाली कर दें, यह हमारा परम कर्तव्य है। संत सेवा का लाभ बिना भाग्य के नहीं मिलता। आप यहां अधिक दिन बिराजें यहां का जल वायु बड़ा शुद्ध है। इससे आपके स्वास्थ्य को भी लाभ पहुंचेगा। दुपहर के बाद विहार करने की इच्छा थी परन्तु श्री पंचोलीजी ने दो दिन तक विहार नहीं करने दिया। पूज्य श्री के पदार्पण के समाचार उदयपुर पहुंचते ही उदयपुर से बड़ी संख्या में लोग दर्शनार्थ

आने लगे । दूसरे दिन पूज्य श्री के और केसरीचंदजी पंचोली के परस्पर ज्ञान चर्चा हो रही थी तब पंचोलीजी ने कहा–मैं भी जैन ही हूं । अन्य जितने भी जैन हैं वे जैन कुल में जन्मे हुए होने से जैन हैं । तब मैं तो जैन धर्म को समझ करके जैन बना हुवा हूं । कलकत्ता वाले बाबू धनपतसिंहजी मेरे परम मित्र थे । उनका प्रकाशित पूरा साहित्य मेरे पास है । मैंने उन सभी ग्रन्थों को पढे हैं । फिर तो जैन धर्म के विषय की तत्व चर्चा बहु समय तक परस्पर चलती रही । उन्होंने अपने पास जैन धर्म की पुस्तकोंका संग्रह जो पूरा कबाट भरा हुवा था,वह पूज्य श्री को दिखाया । पूज्य श्री उनके जैन धर्मका ज्ञान सुनकर बहुत ही आनन्दित हुए ।

डॉ. मोहनसिंहजी महता द्वारा स्थापित विद्याभवन संस्था पास ही होने से वहां के मास्टर केसरीचन्दजी बोर्दिया ने पूज्य आचार्य श्री को विद्याभवन पधारने का आग्रह किया । पूज्य श्री अपने मुनियों सहित वहां पधारे । श्री बोर्दियाजी ने संस्था में बालकों को अक्षर ज्ञान, तकनिकि ज्ञान, जीवन निर्माण ज्ञान, किस तरह दिया जाता है वह सर्व क्लासवार बताया । बाद में एकत्रित छात्रों को पूज्य श्री ने विनय–व्यवहार–धार्मिक ज्ञान बढाने का प्रेरणात्मक उपदेश दिया ।

फतेपुरा फतहसागर तालाव के नीचे की ओर बसा हुआ होने से जलवायु की शुद्धता होने के कारण यहां वाडियां युक्त बंगले अधिक हैं। यहाँ पर शिक्षित वर्ग ही अधिक रहता है । इन सभी की इच्छानुसार क्लब घर में पूज्य आचार्य श्री का व्याख्यान हुआ । फतेपुरा के अतिरिक्त उदयपुर शहर से भी व्याख्यान श्रवणार्थ लोग अधिक संख्या में आए थे। शिक्षित वर्ग की सभा के अनुसार पूज्य श्री ने वैसा ही व्याख्यान (असाम्प्रदायिक सार्वजनिक उपदेश) दिया. जिसे सुनकर सारी सभा अति प्रसन्न हुई ।

श्री केसरीचन्दजी पंचोली के आग्रह से पूज्य श्री उनके बंगले पांच दिन तक बिराजे. उनका आग्रह तो और भी बिराजित रखने का था परन्तु रेल्वे मेनेजर श्री चन्द्रसिंहजी महता के आग्रह से 'चन्द्रनिवास' पधारे वहां दो दिन बिराजकर फिर सरुपसागर के किनारे डॉ. श्री मोहनसिंहजी महेता के बंगले पधारे. यहां पधारे ने पर श्री समीर मुनिजी को टाइफॉंड ज्वर हो गया, जिससे एक माह तक इसी बंगले में बिराजना पडा ।

उधर दामनगर से सेठ दमोदरदास भाई का पत्र लेकर श्री मोहनलालभाई अजमेरा व सेठ गुलाबचन्दभाई पानाचन्द महेता रतलाम के सेठ सोमचन्द तुलसीदासभाई महेता आदि का डोप्युटेशन दामनगर सौराष्ट्र पधारने की विनन्ती करने के लिए आया । श्री मोहनलालभाई अजमेरा ने पूज्य श्री को दामनगर पधारने का अति आग्रह किया । तीनोहि अति श्रद्धालु धर्मनिष्ठ कर्तव्यशीलशास्त्र के अनुभवि होने से उन्होंने पूज्य श्री के सामने इस प्रकार भाववाही विनन्ती की, जिसे पूज्य श्री को स्वीकारनी पड़ी । श्री डेप्युटेशन विनन्ती स्वीकृत करा के प्रसन्न होकर दामनगर गया ।

महाराणा श्री भूपालसिंहजी ने उदयपुर पधारने की विनन्ती करने के वास्ते श्री कन्हैयालालजी चौवीसा को गोगुन्दा भेजे थे, यह पहले हि लिखा जा चुका है । श्री महाराणा साहेब पूज्य श्री से उपदेश सुनने के इच्छुक होने से उदयपुर में प्रसिद्ध सलियों की वाडी के महलों में उपदेश का आयोजन रखा गया है । वहां हिज हाइनेश महाराणाश्री ने धर्म उपदेश, स्वाध्याय पाठ सुना। उसके बाद महाराणाजी से पूज्यश्री ने फरमाया कि दामनगर व सौराष्ट्र से दामनगर श्री संघ का डेप्युटेशन विनन्ती के लिये आया था जिससे उधर विहार होना निश्चित हुआ है । महाराणाजी ने पूज्य श्री से कहा कि आप बहुत दूर पधारजाओगे तो वापीस कब पधारोंगे ? यहां से विहार हो उसके पहले एकबार फिर दर्शन देना । तदनुसार दूसरी बार बडे महलों में पूज्य श्री का उपदेश हुआ, जिसे श्री महाराणाजी और महाराणीजी साहेबा को धर्म उपदेश सुनने का सुयोग्यअवसर मिला । महाराणाजीने उपदेश सुनने के बाद पुनः जल्दि मेवाड पधारने का अति आग्रह किया । उस समय किसी को स्वपन में भी वह कल्पना नहीं थी कि पूज्य आचार्य श्री घासीलालजी म. का उदयपुर से यह अन्तिम विहार हो रहा

है । उदयपुर से देलवाड़ा घासा, पलाना, थामला, सारोल, पालंड रेलमगरा जितास पोटला सहाडा होते हुए गंगापुर पधारे, यहां एक दिन का अगता पलवाया । बाजार में पूज्य श्री के व्याख्यान हुए । भीलवाडा पधारने पर यहां भी एक दिन का अगता पलाया गया । स्कूल के प्रांगण में एक विशाल सभा हुई । जिसमें कलेक्टर तहसीलदार आदि राज्याधिकारी, प्रधानाध्यापक आदि विद्याधिकारी तथा भीलवाड़ा भूपालगंज के श्रावक, श्राविका जैन अजैन हिन्दु, मुस्लीम बहुत बडी संख्या में उपस्थित रहे। वहां से शाहपुरा पधारे शाहपुरा में रामस्नेही संप्रदाय की मुख्य गादी है । रामस्नेही संप्रदाय के आचार्य तथा रामस्नेहि साधु जैन मुनियों से पूरा स्नेह रखते हैं । सुना जाता है कि राम स्नेही संप्रदाय के आद्य संस्थापक श्री राम चरणजी महाराज का मारवाड के पूज्य श्री जयमलजी म. के साथ गृहस्थावास में अच्छी मैत्री थी । जयमलजी को माता और पत्नी की तरफ से दीक्षा के लिये आज्ञा नहीं मिल रही थी । रामचरणजी संसार त्याग करने में अधीर बने हुए थे, इस कारण वे घर छोडकर निकल गए और किन्हीं वैष्णव सन्त के पास पहुंच कर शिष्य हो गए । इन्हें अपने त्यागी जीवन में अपूर्णता दिखाई दी, जिससे वे स्वतंत्र विचरण करने लगे । उन्होंने अपने ज्ञान बल से रामस्नेही संप्रदाय की स्थापना की । रामस्नेही संप्रदाय में प्रारंभ से हि खुले पैर पैदल चलना, भिक्षा मांगकर लाना, सिर मुंडन 'बिना छाना पानी नहीं पीना, भोजन करते समय नीचे एक बुंद नहीं पड़ने देना, ब्रह्मचर्य पालन आदि बहुत से नियम जैनधर्म से मिलते जुलते चले आ रहे हैं । रामस्नेही संप्रदाय के आचार्य तो वर्तमान में भी पैदल हि जाते आते हैं ।

रामद्वारा के पास से पूज्य श्री शहर में पधार रहे थे वहां किन्हीं रामस्नेही मुनि की नजर पूज्यश्री पर पडी पास में जाते ही वे बोले आप यहीं ठहरें । ठहरने का आग्रह करके वे अपने आचार्य श्री निर्भयरामजी म० के पास पहुंचे और जैन मुनि के आने के समाचार दिये । आचार्य जी को ठहराने के लिये मकान आदि की व्यवस्था करने का आदेश दिया । तदनुसार रामस्नेही मुनियों ने सारी व्यवस्था कर दी । विश्राम लेने के बाद आचार्य श्री निर्भयरामजी म. के तथा पूज्य आचार्य श्री घासीलालजी म. के परस्पर सौहार्द पूर्ण वार्तालाप हुआ । उस समय दोनों ओर के सभी मुनि वार्तालाप श्रवणार्थ उपस्थित थे । वार्तालाप के बाद रामस्नेही आचार्यजी ने अपने भंडारी शिष्य से रामद्वारा उपासना गृह दिखाने को कहा दतनुसार वह उपासनागृह पूज्य श्री को तथा साथ के मुनियों को दिखाया । उपासना गृह में जोरों से बोलना निषेध है । अनन्तर दिन में तथा रात्रि में रामस्नेही सन्त पूज्य श्री के पास आकर विविध बातचीत करते रहे ।

दूसरे दिन शाहपुरा पधारे शाहपुरा में एक सप्ताह व्याख्यान का लाभ देकर धनोप पधारे । धनोप खारी नदी के बिल-कुल किनारे बसा हुआ है। चातुर्मास में पूर आया तब गांव के चारों ओर पानी ही पानी था, धनोप उस समय टापु सा बन गया था । यहीं से जलविप्लव के भयंकर दृश्य सामने आने लगे। नदी के दोनों तटो से पानी दो दो मील दूर फेल गया था । दो मील दूर के वृक्षों में पानी से प्रवाहित कचरा उलझा हुआ दिखाई दे रहा था । किसी महान पुण्योदय से ही धनोप गांव जलप्लावन से बच गया । यहां भी एक दिन का अगता पलाकर पूज्य श्री ने ईश्वर प्रार्थना करवाई । धनोप से देवलिया कलां पधारे । यहां पर कोटा संप्रदाय के वयोवृद्ध पं. श्री गोडीदासजी म. ठाणा २ के साथ दो दिन बिराजना रहा। यहां के ठाकुर सा० ने पूज्य श्री की आज्ञा से एक दिन का अगता पलवाया, पूज्य श्री का ईश्वर प्रार्थना के विषय पर व्याख्यान हुआ । धनोप से देवालियाकला, विजयनगर, जालिया आकडसादा, पडासोली, आसीन्द, जगपुरा, जयनगर, शंभूगढ आदि जो गांव खारी नदी के आस पास बसे हुए हैं । जिनमें भयंकर बाढ के कारण संहारक लीला का तान्डव नृत्य दिखाई दे रहा था । पूज्य श्री तथा साथ के मुनियों ने इन विनाश पूर्ण दृश्यों को देखा तो हृदय द्रवित हो उठा । एक गांव में केवल वैष्णव मन्दिर ही बचा, जहां पूज्य श्री

रात्रि निवास विराजे । चान्दनी रात, पानी के प्रवाह से प्रवाहित गांव के घरों की खण्डित भींते राक्षसों की सी भयानक दिखाई दे रही थी। गांव के निराश्रित लोग खन्डित गांव से कुछ दूर झोपडीयों में रह रहे थे । उजड़ गांव में घुग्घुओं की आवाज रात्रि की निरवता को भयानक बना रही थी। विजयनगर के पास एक गांव ऐसा हो गया कि वहाँ का स्थल देखकर कोई नहीं कह सकता कि यहां गांव था। मार्ग में मनुष्यों की खोपडियां मनुष्यों की हड्डियां बिखरी पडी थी। पानी के प्रवाह ने कहीं खेतों में रेती का ढेर कर दिया तो कहीं खेतो में ऐसी तराडे डाल दी कि जहां कभी फसल ही नहीं बोया जासके। ये सारे दृश्य अनित्य, अशरण संसार भावना को उद्वेलित कर रहे थे ।

उन गांवो के लोगों से भयानक जलप्लावन के समय का विविध बातें सुननेको मिली । एक मकान में बडे पाट पर एक आदमी निश्चिन्त सोया हुआ था । मकान में पूर का पानी भर जानेसे पाट ने नाव का रुप धारण कर लिया । आदमी जग गया और जमीन से उंचे हुए पाट पर सावधानी से बैठा हुआ इस भयानक आपत्ति से बचने की राह देख रहा था, वहां तो बहते हुए पानी में से एक बडा भयंकर काला सांप उसी पाट पर आश्रय लेने के लिये आगया । भय के समय प्राणी परस्पर शत्रुता भूल जाते हैं, और परस्पर मैत्रीभाव से रहते हैं। इस बात का यह जीवित उदाहरण सामने उपस्थित था । नदी के प्रवाह में बह रहे मूर्दों में एक कोई अभागी माता भी थी, जिसका छोटा सा बालक उसके वक्षस्थल पर स्तनों से मुह लगाए हुए था । दोनों निर्जीव जल स्तर पर माता पुत्र प्रेम दिखाते हुए बहते चले जा रहे थे ।

एक घर से सारा परिवार पानी के भयानक प्रवाह से बचने के लिये रक्षित स्थान की तरफ जा रहे थे। उस समय गृह स्वामी को आभूषण से भरि हुई पेटी स्मरण हो आई, और वह आभूषण पेटी लेने पुनः घर में आ गया, घर में पानी भरता जा रहा था। रात्रि के भयंकर अंधकार में अभ्यस्त होने से पेटी उठा लाया, थोडा आगे वढा ही था कि जल तरंग के झपाटे ने पेटो सहित उन गृहस्थ को न जाने किस अनन्त में लेजाकर छिपा दिया । पेटी के लोभ ने प्राण—लोभ को निरस्त कर दिया ।

विजयनगर में एक जैन कुटुम्ब पानीसे बचने अपने मकान की छत पर चढ़ गए । पानी का प्रवाह मकान से थपेड़ा खाने लगा । गृहस्वामी ने सोचा यह पुराणा मकान इन थपेड़ों की मार में स्थिर रहे या न रहै । पास ही सटे हुए नये मकान की छत पर अपने कुटुम्ब को चले जाने की सलाह दी, और सबके सब अपने मकान की छत से उस छत पर चले गये । अन्त में गृहस्वामी भी इस छत से उस छत पर जाने के लिये अपना एक पैर उधर रखा दूसरा उठाया और उधर एकदम उस मकान ने जल समाधि ले ली । वह मकान मानो यही राह देख रहा था कि यह परिवार दूर हो जाय । साथ ही यह प्रत्यक्ष उदाहरण दिख रहा था कि पूर्व कृत सद्कर्म मनुष्यों के संरक्षक हैं । जगपुरा भी नदी के तट पर बसा हुआ है । गांव के लोग बडे हि श्रद्धालु होने से जल संकट देखकर तत्काल अपने गांव की चारों ओर ईश्वर के नाम की ओर धर्म के नाम की कार खींच दी । पानी का प्रथम तेज प्रवाह दूसरी ओर दो मील तक जाकर फिर लौटा । घात करने वाला प्रवाह न रह कर शान्त प्रवाह बन गया जिससे गांव के मकानों को गिरा नहीं सका । फिर गांव वालों ने मिल कर जल पूजा की जिससे गांव वालों का तनिक भी नुकसान नहीं हुआ "धर्म श्रध्धाः कथय किं न करोति पुंसाम्" उक्ति का यह तादृश उदाहरण था। सामने दिखने को मिला ।

पूज्य श्री शंभूगढ पधारे तब उदयपुर से हिज हाईनेश महाराणा श्री भूपालसिंहजी साहेब स्वयं अपने राज्याधिकारियों सहित खारी नदी द्वारा त्रस्त गाँवों की परिस्थिति स्वयं समझने के लिये पधारे थे। उन्हें पूज्य श्री के शंभूगढ में विराजने के समाचार मिले तो आपने मनुष्य को भेजकर दर्शन देने के लिये पूज्य श्री से

अर्ज करवाई पूज्य आचार्य श्री महाराणा की इच्छानुसार वहां पधारे और जलप्लावन से दुःखित लोगों के लिये योग्य व्यवस्था करने;के लिये परामर्श दिया। वहां से ब्यावर कुंदन भवन में विराजित स्थविर पद् भूषित पूज्य श्री खूबचन्द्रजी म. के दर्शनार्थ ब्यावर पधारे। कुन्दन भवन तथा पीपली बजार स्थित जैन स्थानक में पूज्य श्री के सात व्याख्यान हुए। ब्यावर संघ का कुछ अधिक दिन बिराजने का आग्रह था परन्तु सौराष्ट्र में पधारने का निश्चित हो जाने से जल्दि विहार किया।

रायपुर पधारने से वहां के ठाकुर साहेब से एक दिन का संपूर्ण अगता पलवा कर पूज्य आचार्य श्री ने ईश्वर प्रार्थना करवाई। इसी प्रकार सोजत पधारने पर वहाँ भी बजार में पूज्य श्री के तीन जाहिर व्याख्यान हुए। वहां से पाली पधारने पर पाली संघ ने बहुत ही उमङ्गसे स्वागत किया। सलाहकार पं. श्री केसरीमलजी महाराज साहेब ठा २ पूज्य श्री धर्मदासजी म. की संप्रदाय के श्री मोतीलालजी म पं. श्री धनचन्द्रजो म. ठा ३, स्थविर श्री शादुलसिंहजी म. ठा. ४ यहां बिराजित थे। महावीर जयन्तो का व्याख्यान सभी मुनियों का पूज्य श्री के साथ कपड़ा मार्कीट में हुआ।

जब पूज्य श्री ब्यावर से सौराष्ट्र कि और दामननगर श्रीसंघ का व. शास्त्रज्ञ सेठ श्री दामोदरदास भाई के अत्यन्त आग्रह से शास्त्रोद्धार के कार्य के लिए पधार रहे हैं यह समाचार जाहेर पत्रोंमें आये इन समाचारों से विघ्न संतोषीयों के कलेजे में भयंकर अग्नि लग गई। अच्छा बुरा होना यह तो पूर्व कर्म के उपार्जित है फिर भी अधम आत्मा अपने कर्तव्य से बाज नहीं आते। उन्हें लगा कराची उदयपुर रतलाम देवगढ विगेरे शहेरों में अपना जोर नहीं चला पूज्य आचार्य श्री को कष्ट देने में कमी न रखी, फिरभी पूज्य श्री तो एक महान क्षमा के अवतार थे। पर अब तो वे सौराष्ट्र देश में पधारते है सौराष्ट्र तो दुलर्भजीभाई तथा चुनिलाल नागजीभाई का शास देश है वह तो पूज्य आचार्य महाराज श्री जवाहिरलालजी म. का एक अभेद्य देश है वहां पधारेंगे तो हमारा सारा किला टुट जायगा, पर यह नहि मालुम कि सौराष्ट्र के महान संत रत्न व श्रावकगण तो गुणों का परम उपासक हैं। उन्होंने सौराष्ट्र में पूज्य श्री न जासके इसके लिए प्रयत्न करने में तो कमी नहीं रखी। परन्तु ज्यां सत्य है संजम है त्याग है वैराग्य है वहां सदाजय होती ही है. इन लोगों ने राजकोट मोरबी और दामननगर जैसे शहेरों में पूज्य श्री को न माने ऐसा प्रयत्न खूब चालू किये इसका नमुना मात्र देते है। श्री साधु मार्गी जैन पूज्य श्री हुकमीचन्द्रजीम० के हितेच्छु श्रावक मण्डल के सेक्रेटरी बालचन्दजी श्रीश्रीमाल ने एवं प्रमुख श्री हीरालालजी नांदेचा ने दामनगर श्रीसंघ को एक पत्र लिखा और पूज्य आचार्य श्री घासीलालजी महाराज को किसी भी प्रकार का सहयोग न देने की अपील की. दामनगर श्रीसंघने उचित जवाब देकर इन दोनों महानु भावों की अपील को रद्दी की टोकरी में फेंक दी और इनकी अपील का जवाब अत्यन्त नम्रता के साथ दिया इन दोनों पत्रों की प्रतिलिपि इस प्रकार है—

बालचन्दजी श्रीश्रीमाला का पत्र—

कोन्फरन्सनी सूत्राधार श्री काठीयावाड स्था. जैन संघ समीती तथा दामनगरना श्री स्था. जै. संघ ने नम्र विनंती :—

काठीयावाड एक शिक्षित प्रदेश छे. त्यानी धर्मभावना पण प्रशंनीय छे, एथी आकर्षाई ने मोटा मोटा आचार्यो अने विद्वान मुनियों पधारता रहे छे काठीयावाडना श्रावको पण विद्वान तथा आचारशील मुनिवरोने आमंत्रण करताज रहे छे परन्तु काठियावाड जेवो सुधार प्रिय शिक्षित देश भूल करवा लाग्यो छे, जेने माटे सावधानी सुचववी एमां अमे अमारू कर्तव्य समजीए छीए

स्था. जै. जनताने ए सारी रीते विहित छे के प्रातः स्मरणीय पूज्य पाद श्री हुकमीचंदजी म. नी सं. ना नायक षष्टम पट्टधर सुप्रसिद्ध जैनाचार्य स्वर्गीय पूज्य श्री १००८ श्री जवाहरलालजी महाराज साहेबे

पोताना शिष्य श्री घासीलालजी ... ने सं १९९० मां संप्रदायथी बहार कर्या छे अने आज्ञाबहारनी घोषणा आ मंडळ द्वारा करावी दीधी छे जेने मान आपीने कोन्फरन्सना प्रेसीडेन्ट श्रीमान हेमचन्दभाई रामजीभाई महेता ए 'जैन प्रकाश' ता. २९-१०-१९३३ अंक २ पृष्ट १४ पर श्री संघने आवश्यक सूचना' हेडिंगथी जाहेर करेल छे के, जे उपरथी आ खबर हिंदना श्री. स्था. जैनना चतुर्विध संघने आपवामां आवे छे के जेथी साधुसंमेलन अने कोन्फरन्सना धाराधोरण अनुसार व्यवहार करी शकाय.

हालमां अमदावादथी प्रकट थतां 'स्थानकवासी जैन' ना अंक १४ ता. ९-१-१९४४ मां समाचार शीर्षकमां प्रगट थयां छे के दामनगरना आगेवान गृहस्थोंना प्रबन्धथी श्रीघासीलालजी ने दामनगर पधारी शास्त्रोद्धारनुं कार्य करवा माटे संघवति शाह मोहनलाल केशवलालभाईने विनंती करवा माटे उदगपुर मोकल्या हता इत्यादि ....

आ मरुधर पंडित मुनि श्री ऐज छे के जेमने स्वर्गीय पूज्य श्री जवाहरलालजी म साहेबे सम्प्रदाय थी पृथक कर्या हता' अने आज सुधी आज्ञा बहारज छे.

प्रत्येक स्था. जैनो नुं ए सामान्य नैतिक कर्तव्य छे के आचार्य महाराजे जैने संप्रदायथी जुदा कर्या छे. अने कोन्फरन्से जाहेर करेल छे, तेमनी साथे कोई प्रकारनो शिष्टाचार आदि व्यवहार न करें, परन्तु काठियावाड जेवा शिक्षित प्रदेशनो दामनगर संघ अने श्रीमान दामोदरदास भाई जेवा शास्त्रज्ञ पुरुष आ सामान्य नियमनो भंग करीने तेमने विनंती करीने बोलावे अने स्वच्छन्दाचारनो पोषण आपे एथी अधिक खेदनो विषय शुं होई शके ? एटले अमे कोन्फरन्सना अग्रेसरो तथा काठियावाड स्था. जैन. संघ समीतीना नेताओनुं लक्ष्य खेंचीगे छीये अने कोन्फरन्सनी जाहेरातनुं पालन करवानो आग्रह करीये छीये.

बालचन्द श्री श्रीमाल-सेक्रटरी हिरालाल नांदेचा प्रमुख

श्री साधुमार्गी जैन पूज्य श्री हुक्मीचन्दजी म. नी सं. ना हितेच्छु श्रावक मण्डल-रतलाम

श्री साधुमार्गी जैन पू. श्री हुक्मचन्दजी म. नी सं. ना हितेच्छु श्रावक मण्डल रतलाम नम्र विनती साथे प्रत्युत्तर :—

आ पेपरना ता. २४-१-४४ ना अंकमां आपना तरफथी कोन्फरन्सना सुत्रधार श्री काठीयावाड स्था. जैन. संघसमीति तथा दामनगरना श्री स्था. जैन. संघने नम्र विनंती, ये मथाळा नीचे जे लेख लखायेलो छे ते लेखमां अने एक जुदा रजीस्टर पत्रथी मने जे सूचना करीने खेद जाहेर कर्यो छे. ते सम्बन्धमां जणाववानुं के—

आपे पूज्य श्री घासीलालजी महाराजने 'सम्प्रदायथीपृथक' करवानु लख्युं छे तेनो अर्थ शास्त्रीय भाषामां 'विसंभोग' करवानो थांय छे. शास्त्रमां 'विसंभोगी करे आणा न आणा नाई वच्चइ'' । एवो पाठ छे, धारोके आ पृथकरण न्यायपुर सर छे तो पण अनेक तीर्थंकरोंनी 'आणा' त्यांज खतम थाय छे, अने त्यार पछीनी जे प्रवृत्ति शास्त्राज्ञा बहारनी प्रवृत्तिमा क्यो धर्मज्ञ संघ संस्था के व्यक्ति साथ आपी शके ? केमके आपने साथ आपतां अनन्त तीर्थंकरोनी आज्ञा उपर पग मूकवो पडे परिणामे बहुल संसारी थवुं पडे, जिनाज्ञा बहारना कारणे नियतिनु अस्तित्वज नथी त्यां भंगनो सवाल उपस्थीत ज शी रीते थई शके ?

जैन तत्वज्ञानमां प्रत्येक व्यक्ति पोतानु कल्याण पोतेज साधी शके छे, पर साधी शके नही, छतां पण कोई खोटो प्रयत्न पण करे तो पोताना कल्याण ने कुभावना सिवाय (मात्र प्रयत्न पण) करी शके नहीं

उपर अवतारेल पाठ निषेधार्थमां मूकवा शास्त्रकारे भाषा संमिती साचवी छे, अर्थात् विसंभोगी करतां आज्ञा तो नथी (मोक्ष मार्गनुं विधान नथो) पण विषय ऐटलो सत्वहीन छे के तेथी आज्ञा नो अतिक्रम थाय नहिं. तो पछी तेनाथी आगल जता तो आज्ञा ज शी रीते घटी शके? अर्थात् न घटी शके. उलट आज्ञानो अतिक्रम छे.

जैन धर्म तो समतानो छे-सूत्र पाठ छे के (समयाए धम्मं विपहिए) पण ज्यारे समतानी मर्यादा छूटी जाय छे. त्यारे नथी रहे तो धर्म के नथी रहेती जानाज्ञा. धर्मनी जग्या 'टक' ल्ये छे अने ,जीनाज्ञा' नी जग्या स्वआज्ञा ले छे. मनुष्यने बळथी सजा पहोंचाडवानी नीती राज्योमां होय छे. केमके तेने सत्तानु संरक्षण करवानु होय छे, पण ए नीती संतोनी न होई शके, केमके संतोने सत्तानु नहि पण पोताना संयमनुं रक्षण करवानुं होय छे. अने ज्यां जीननी आज्ञानु अतिक्रमण थाय त्यां संयमनुं रक्षण शी रीते होई शके ?

मारी पासे शास्त्रोद्धार नो कार्य करावना माटे दरखास्त आवी त्यारे सारांय समाजनुं अवलोकन करतां ए काम करी शके तेवी व्यक्तिओ मने बे नजरमां आवो. (१) नं, उपाध्याय श्री आत्मारामजी महाराज अने(२) पू० आ० श्री घासीलालजी महाराज प्रथमनी व्यक्ति वधारे दूर छे अने आपणो सम्बन्ध ओछो छे तेथी पू० श्री घासीलालजी महाराज नी पसन्दगी वधारे थई, संस्कृतमां स्वतन्त्र टीका लखी शके एवी भूतकाल अने वर्तमानमां आ एक ज व्यक्ति देखाणो, आवा प्रखर पंडित रत्न ना ज्ञान ने बळथी मात्र मामुली कारण माटे गुंगळावी नाखीने समाज ने तेथी वे नसीब राखवो तेमां ज्ञानावरणीय कर्मना बन्धनो भय रहेलो छे, आवा ज्ञान नो उपयोग खूद कोन्फरन्स पण करे छे, वळी प्रवचननी दीपती प्रभावना करांने, राजा महाराजाओ शुद्धाने पण आकर्षनार जे व्यक्ति होय तेने समजी सर्वने सहकार आपवो जोइये, आवो दाखलो भूतकालमां 'श्री सिद्ध-सेन दिवाकर' नो बनेलो छे. आप भाईओ पूण्यवान छो आ प्रश्न खास शास्त्रिय होवाथी कदाच आप अप-रिचित हो, तेथी हूं नम्रता साथे विनंती करी शकुं के, सत्यने खानर कोई छे. तटस्थ आचार्यो नी सलाह लेवी.

उपरना कारणने 'मामुली' एटला माटे कह्युं छे, के पू० श्री घासीलालजी म. ना पृथ्थकरणमां कारण तेमनी कोई अन्तकुत्व के चारित्रनी सबलता नथी पण मात्र मतभेद छे. अहीं ते विरोधी बे मतमां सत्य कोना पक्षे छे ये तो मात्र सर्वज्ञ देवज कही शके, पण आ किस्सामां तो एक पक्षे संघ बळथी 'पृथ्थकरण कर्युं माटे तेने मामुली कह्युं छे. आ पुरुषना पृथकरण पछी अनेक चातुर्मासो मंडलना सानिध्यमां मडळना प्रदेशमां थाय छे. तेना करता दामनगर संघ क्लेशथी ए व्यक्ति ने त्रणसो गाउ दूर लई जाय छे ते कार्य खरो रीते तो आपने अनुकूल ज थतुं गणावुं जोईये,

जवाब आपवा मारी इच्छा न हती केमके आमार्ग,वीतराग शासनना दरज्जाने उतारी नाखे छे, पण आपतो साहस करी चूकया तेथी जवाबमां सत्य जाहेर न थाय तो आ व्यक्ति ने अन्याय मळवा जेवुं थाय तेमज अत्रे जवाब पण माग्यो हतो आ लेखमां कोई पण प्राणी प्रत्ये अविनय थयो होय तो हूँ विधि साथे क्षमा मांगू छुं

सुश्रावकोनु कर्तव्य शासनमां उपस्थित थयेल झगडा उपशमाववानां कार्यमां दामनगर संघनो वधारे सारो उपयोग करवानो अवकाश आपने हतो अने छे. शेठ दामोदरदास. जगजीवन-दामनगर

दामनगर सन्घ के इस उत्तर से विरोधियों का टिमटिमाता दीप पूज्य श्री के प्रखर तेज में विलीन हो गया। पूज्य आचार्य श्री अपनी गज गमनि चाल से भव्य आत्माओं को बोधामृत पान कराते हुय आगे पधार रहें हैं। पाली का महान मुनिजनों का मिलन व श्री संघ की भक्ति अपूर्व थो वहाँ से-साण्डेराव, शिवगंज, सिरोही होकर अनादरा के मार्ग से अनेक गांवो को पावन करते हुवे आबू माउन्ट पधारे । माउन्ट आबू राजस्थान का काश्मीर है । वैशाख मास में भी वहां इतनी ठडक रहती है कि कमरा बन्द करके सोना पड़ता है। गर्मी के दिनों में गुजरात सौराष्ट्र के सहेलानी ममरे बहुत आते हैं । उस समय वहां शेर भी बहुत हैं । सुबह जल्दि या शाम को देरी से जाना आना सर्व के लिए भय भरा माना जाता है। आचार्य श्री शान्तिविजयजी म० ने यहां के पर्वतों में रहकर योग साधना की थी । कई वैष्णव सन्त जंगल में योग साधनार्थ रहते हैं ।जैन मन्दिर के मेनेजर आदि ने पूज्य आचार्य श्री के प्रति अच्छी श्रद्धा भक्ति बताई । पांच दिन विराज कर आबूरोड होते हुए पालनपुर पधारे । दरियापरी संप्रदाय के विद्वान महासतीजी श्री शास्त्रज्ञ

वयोवृद्ध स्थविर पूज्य सुरजबाई केशरबाई पारवतीबाई श्री तारामतिबाई म. श्री बाबुमतीबाई म. आदि ठाणा बिराजित थो । इनके पास पालनपुर की परम वैराग्यवति श्री हीराबहन की दीक्षा होने से महासतीजी म. के तथा संघ के आग्रह से दीक्षा दिन तक बिराजित रहे । और पूज्यश्री के हाथ से दीक्षा बहुत ही उत्सव के साथ समपन्न हुई ।

पालनपुर पधारते ही दामनगर से दुखद समाचार मिले कि शास्त्रज्ञ सेठ श्री दामोदरदास भाई का देहावसान हो गया। इन समाचारों के आने पर पूज्य आचार्य महाराज श्री ने सोचा कि मूल कर्णधार अब नहीं रहे तो फिर दामनगर जाने से क्या लाभ? ऐसा विचार कर के श्री मोहनलालभाई अजमेरा को दामनगर समाचार भेजे कि जिस उद्देश्य से दामनगर के लिए विहार हुआ था वह उद्देश्य अब सेठदामोदरदास भाई के न रहने से पूर्ण होना असंभव सा लगता है, इसलिये पूज्य आचार्य श्री की पालनपुर से हि वापीस लोट जाने की इच्छा है। ये समाचार पहुँचते ही राजकोट से सेठ श्री गुलाबचन्द भाई रतलाम से श्री सोमचन्द तुलसीदासभाई व दामनगर से श्री जगजीवनभाई बगडिया तथा श्री मोहनलालभाई अजमेरा पालनपुर आए। दामनगर से सेठ श्री दामोदरदासभाई के पुत्र सेठ विनयचन्द्रभाई ने इन के साथ पत्र भेजा। सभी का एक ही आग्रह था कि सेठ के देहावसान हो जाने से पूज्य श्री को सौराष्ट्र में जिस उद्देश्य से पधारने की विनन्ती की है वह उद्देश्य मिट नहीं जाता है अर्थात् शास्त्र लेखन कार्य अवश्य चलेगा कृपाकर के पिछे आप लोटे नहीं। दामनगर अवश्य पधारें। इस प्रकार आए हुए प्रतिनिधि मंडल द्वारा आग्रह होने पर पालनपुर से सिद्धपुर ऊंझा महेसाणा विरमगाम होते हुए सौराष्ट्र में प्रवेश किया।

मार्ग में ढांकी गांव से लीलापुर स्टेशन पर पूज्य श्री पहुंचे तब अत्यंत गर्मी के कारण सभी सन्तों को पिपासा अधिक सताने लगी। ज्येष्ठ मास की कड़ाके की गर्मी और फिर ऊसर की खारी भूमि होने से धूप की प्रखरता तो अधिक सता रही थी। ढांकी गांव में दरबार जोरुभा क्षत्रिय है वह बडे हि विवेकी और उदार है, जैन मुनियों की निर्दोष आहार पानी की व्यवस्था के लिये प्रयत्न करने वाले श्रद्धावान थे। वे दो मुनि को गांव में गरम पानी के लिये ले गए। उधर पिपासा की अधिकता से संतप्त मुनिवरोंने सोचा कि पास ही में जिनींग फेक्ट्री है वहाँ पानी मिलेगा इस उद्देशसे वहाँ जाकर के इंजन से गरम बना हुआ पानी लाकर हवा में ठण्डा करके ज्योंही पिया तो पीने वाले मुनियों को वमन हो गया। वह पानी इतना कडु और खारा था कि जिह्वा पर एक बीन्दु रखें तो भी जी घबराने लगे। इतने में गांव में गए हुए मुनि छाछ व गरम पानी ले आए, जिसे पीने के बाद ही सान्त्वना मिली।

वहां से लखतर पधारे, लखतर महाराजश्री इन्द्रसिंहजी के कारभारी (कामदार) कोठारी जैन थे। उन्होंने लखतर नरेश को पूज्य श्री के पदार्पण के समाचार दिये, तो नरेश स्वयं दर्शन तथा व्याख्यान श्रवण के लिये आए। पूज्य श्री की आज्ञा से लखतर नरेश ने अपनी राजधानी में एक दिन पाखी (अगता) पलवाई। स्कूल के पटांगण में पूज्य श्री ने ईश्वर प्रार्थना विषय पर प्रवचन दिया। लगभग ४ हजार जनता उपस्थित थी। स्वयं लखतर नरेश परिवार सहित प्रवचन सुनने के लिए आए थे। लखतर राज्य जब स्वतंत्र राज्य था तब लखतर नरेश ने अपने राज्य में कतलखाना, दारुपीना, सिनेमा और होटल इन चार व्यापारों को रोक रखा था, वे राजा यह मानते थे कि ये चारों व्यापार मेरी प्रजा के धन को और बुद्धि को बिगाड़ने वाले हैं। इन चारों कार्यों को अपने राज्य में न होने से ही प्रजा के धन की सुरक्षा रहेगी और बुद्धि की पवित्रता बनी रहेगी। जब तक अंग्रेज राज्य नहीं हुआ तब तक लखतर में ये चारों राक्षसी व्यापार बन्द थे। आज इन्हीं के कारण भारतमें नैतीकता का ह्रास होता नजर आता है कारण इन हि व्यसनो से देश दुखी होता जा रहा है। फीर भी इन्हीं की प्रगती दिखती है, वहाँ से आचार्य श्री सुरेन्द्रनगर की तरफ विहार कर दिया सुरेन्द्रनगर

में सौराष्ट्र के एक महानसंत मुनिश्रीसदानन्दी पं. रत्न सेवाभावी गुणानुरागी श्रीछोटालालजी महाराज ठाणा ३ से बिराजमान थे। स्वयं पूज्य आचार्य श्री के स्वागत के लिए सामने पधारे। जो के आचार्य श्री से दिक्षा में वडील थे फिरभी वात्सल्य और स्नेह अपूर्व रहा तीनों संत एक महान विभूति थी, सदानन्दजी म० की प्रेरणा से सुरेन्द्रनगर श्रीसंघने खूब सेवा बजाई और श्री संघ ने पूज्य श्री की आज्ञा से पाखी पलवाई। महाजन वाडी में जाहिर सभा हुई, जिसमें हजारों स्त्री पुरुष सम्मिलित हुए। वहां विराजित सदानंदी पं. मुनिश्री छोटालालजी म० का तथा पूज्य श्री का सम्मिलित व्याख्यान हुआ। वहां से वढवाण शहेर पधारे। वढ़वाण शहर का श्रीसंघ बडा हि उत्साहि, आगे वान बडे दश और धर्म प्रेमी हैं। श्री वढ़वाण संघने नरेश हिज हाईनेश श्री सुरेन्द्रसिंहजी साहेब को पूज्य श्री के पधारने के समाचार दिये। वढवाण नरेश ने पूज्य श्री के दर्शन किये, व्याख्यान सुना और पूज्य श्री घासीलालजी म० की इच्छानुसार सारे शहर में पाखी पलवाई। जाहिर सभा हुई जिसमें वढवाण नरेश सपरिवार तथा वढ़वाण की जैन अजैन जनता हजारों की संख्या में उपस्थित हुई।

वढवाण नरेश श्रीसुरेन्द्रसिंहजी उस समय ३० तीस वर्ष के थे। आप बडे सादे निर्मल जीवन जीने वाले थे। जीवन में कभी दारु मांस को पास नहीं आने दिया। इनके यहां राजस्थान के सगे सम्बन्धी राजा आते तो उन्हें भी वे स्वयं अहिंसाके मर्मको समझाते और दुर्व्यशन से दूर हटाते। सादा निर्मास भोजनसे स्वागत करते परन्तु दारु, मांस खाने पीने वालों के लिये भी सात्वीक व्यवस्था कर देते थे। अहिंसा और निर्व्यसनी राजा लोग सौराष्ट्र में ही दिखाई दिये और सौराष्ट्र एक महान अहिंसक देश है।

वहां से विहार कर चूडा राणपुर होते हुए बोटाद पधारे, यहां मालवाप्रान्त के स्वीरपदविभूषित पं० मुनि श्रीकिशनलालजी महाराज व प्रखर वक्ता पं श्री सौभागमलजी महाराज आदि मुनि मण्डल बिराजित थे। संघ ने पूज्य श्री का बहुत शानदार स्वागत किया। गुजरात-सौराष्ट्र में संप्रदायें हैं, संप्रदायवाद भी बहुत है, परन्तु परस्पर के व्यवहार में बडे उदार हैं कुशल है। बाह्य कटुता नहीं हैं। एक मकान में ठहरना, एक साथ व्याख्यान देना, आहार पानी परस्पर नियमानुसार लेना-देना यथाक्रम वन्दना करना आदि बाह्योपचार-बाह्य व्यवहार अति प्रशंसनीय है। जब कि मारवाड मेवाड मालवे प्रान्तमें श्रमण संघ बनजाने पर भी परस्पर द्वेष वृति विशेष दृष्टि गोचर होती है। ईर्षा ओर द्वेशमय व्यवहार नजर आता है। सौराष्ट्र जैसा परस्पर प्रेम सुमेल नहीं है श्रमण संघ न हुवा उसके पहले तो परस्पर का सौम्यव्यवहार आकाश कुसुम वत था। वहां से पूज्य श्री ढसा पधारे। यह समाचार से दामनगर श्री संघ को बड़ा हर्ष हुआ दामनगर संघ के आगेवान दर्शनार्थ आये और दामनगर चातुर्मासार्थ प्रवेश का समय नक्की करके गये।

वि. सं, २००१ का ४३ वां चातुर्मास दामनगर में

दामनगर श्री संघ ने बडे ही उत्साह के साथ पूज्य श्री का चातुर्मास प्रवेश के समय स्वागत किया। चातुर्मास प्रारंभ के साथ ही तपस्वीश्री मदनलालजी महाराज साहेब तथा तपस्वी श्री मांगीलालजी महाराज की तपश्चर्या प्रारंभ हुई। तपश्चर्या बढने के साथ-साथ आसपास के गांवोंवाले श्री संघ के रूप में दर्शनार्थ आने लगे। दामनगर श्री संघ में भी तपश्चर्या की झडी लग गई। संघ में धर्म उत्साह बढता ही गया।

पर्युषण पर्व धर्मध्यान तपश्चर्या द्वारा मनाये जाने के बाद दोनों तपस्वी मुनिराजों की तपश्चर्या का पूर भांद्रपद शुक्ला १४ का निश्चित हुआ। तपश्चर्या के पूर पर आने वाले दर्शनार्थियों की व्यवस्था कैसे करना ? संघ के सामने यह मुख्य प्रश्न था। तहसीलदार साहेब ने भी संघ के कार्य कर्ताओं को बुलाकर पूछा कि तुम्हारे यहां तपोत्सव पर बाहर से आने वाले हजारों दर्शनार्थियों के लिए भोजन विगेरे की व्यवस्था कन्ट्रोल की स्थिति में केसे करोगे ? कार्यकर्ताओं ने जो समाधान दिया वह उन्होंने नोट कर लिया।

और तपोत्सव के समय पर तहसीलदार दोर पर होने से कोई सरकारी अडचन नहीं आई। इन दोनों तपस्वियों ने ७० दिन की सुदीर्घ तपश्चर्या की। उसका पूर ता० ३१ ८ ४४ के दिन निश्चित होने से सर्वत्र पत्र पत्रिकाओं द्वारा स्थानीय संघ की तरफ से आमन्त्रण पत्र भेजा गया। तदनुसार तपोत्सव पर, वढवाण-केम्प, साणंद वीरमगांव अहमदाबाद, चूडा, राणपुर ढसा, चीतल, अमरेली, कुंडला, राजकोट और आसपास के करीब चार हजार से भी अधिक जनता दामनगर तपस्विमुनियों के दर्शनार्थ आई। पाँच हजार की वस्तीवाला दामनगर इतनी बडी जनसंख्या से यात्रा धाम बन गया था। उनके रहने का भोजन का स्थानीय श्रीसंघ ने बहुत उत्तम प्रबन्ध किया था। कल्पना से भी अधिक दशनार्थियों के आने पर भी श्री संघ की इतनी सुन्दर व्यवस्था थी कि दर्शनार्थी संघ की व्यवस्था की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते थे। तमाम गांव की स्कूलों में दर्शनार्थिओं को ठहराये गये थे। स्वयंसेवकों का बडा उत्तम प्रबंध था। इसके अतिरिक्त एक एक घर में करीब ५०-५० मेहमानों को स्थान मिलने से ग्रामवासियों को भी सेवा का अपूर्व अवसर मिला। वढ़वाण केम्पकी स्वयं सेविका बहने श्रीमती दोनों चंपाबहन के नेतृत्व में श्राविका समूह की व्यवस्था बडी सुन्दर रही जिससे व्याख्यान श्रवण में किसी प्रकार की अडचने नहीं आई। ग्राम के बाहर स्कूल के विशाल मैदान में पूज्य श्री घासीलालजी महाराज, पं० मुनिश्री समीरमलजी म० तथा मधुर वक्ता पं० श्रीकन्हैयालालजी म० के प्रभाव शाली प्रवचनों का श्रोताओं पर बड़ा हि सुन्दर प्रभाव पडा। इस पुनित अवसर पर सेठ प्रभुदासभाई सेठ विनुभाई' मोदी सेठ केशवलालभाई, शाह मोहनलाल भाई, बगडिया सेठ जगजीवन भाई, गीरधरभाई आदि दामनगर श्री संघ की सेवा अपूर्व रही। इस प्रसंग पर कोई भी अनिष्ट बनाव नहीं बना। यह एक बडाही शुभ चिन्ह था। पारने के अन्तिम व्याख्यान के दिन आगम साहित्य के उद्धार के लिए भिन्न भिन्न वक्ताओं के प्रवचन हुए। भाषण के अन्त में रेल्वे कि सुविधा के लिए रेल्वे अधिकारियों का, स्वयं सेवकों का, आगन्तुक महमानों का श्रीसंघ की ओर से आभार माना गया। वढवाण केम्प के स्टेशन मास्टर चत्रभुज नानचंद भाई को दामनगर की इस अपूर्व सेवा के लिए आभार के साथ खूब धन्यवाद दिया। और सेवाभाव की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की।

दामनगर में मानो दीपमालिकोमहोत्सव ही मनाया जा रहा हो ऐसा सर्वको आभास हो रहा था। रात्रि के समय बहने धार्मिक गीत गाकर उत्सव में चार चान्द लगा रही थी। इस अवसर पर इन्दोर रहने वाले दानवीर सेठ केशवलाल हरिचन्द मोदी, श्री मोरारजीभाई कानजीभाई कापडिया, श्री मोहनलाल लीलाचंद कपासी ने दामनगर के १४० घरों में प्रत्येक के घर जर्मन सील्वर के प्यांले, एवं दखा निवासी सेठ ने आधे शेर सुखडी के साथ पीतल की तपेलियों को एवं अहमदाबाद-निवासी शा. तलकचंद भाइ व खीमचंद भाई ने पूंजनियों की एवं लम्बे झाडूओं की प्रभावना की। समस्त गांव में इस दिन पाखी पाली गई। उस दिन जीवहिंसा बंद रखकर ॐ शान्ति की प्रार्थना की। शाह मनमुखलाल जीवनलाल भाई ने सामुहिक आयंबिल तप करवाया था जिसमें सैकडों स्त्री पुरुषों ने भाग लिया।

सेठश्री विनयचन्दभाई व श्री जगजीवनभाई बगडिया दामनगर, श्री गुलाबचंद भाई महता राजकोट, रेल्वे इंजिनियर श्रीछगनलदास भाई कोठारी बोटाद आदि ने पूज्य श्री द्वारा जैन शास्त्रों की संस्कृत हिन्दी, गुजराती भाषा में टीका लिखाने का कार्य प्रारंभ कराया। पूज्यश्री को लेखन कार्य में मदद करने के लिए तीन पण्डित श्री चतुरानन्दन झा० पं० मूलचन्दजी व्यास, तथा पण्डित मुनीन्द्रमिश्रजी को रखे गये। लेखन कार्य प्रारंभ होने से पूज्य श्री का सौराष्ट्र पधारना सफल हुआ।

चातुर्मास काल में अनेक धार्मिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक कार्य हुए। यहां भावनगर लाठी बोटाद गढडा भावरकुन्डला विगेरे श्रीसंघों की विनंतियें आई इस अवसर पर भावनगर संघ भी विनंति के लिये

आया। अवसर देखकर पूज्य श्रीने विनंति स्वीकार कर ली। सफल चातुर्मास पूर्ण कर पूज्य श्री ने अपनी शिष्य मण्डली के साथ दामनगर से विहार किया। दामनगर से आप ढसा जंक्शन पधारे ॥

ढसा में दीक्षा समारोह

जैन मूर्तिपूजक साधु दीपविजयजी को मूर्तिपूजा सावद्य क्रिया है। सावद्य क्रिया धर्म के नाम से करना कराना दुर्गति का कारण है। ऐसा समझकर दीपविजयजी ने मूर्तिपूजक वेश छोडकर ढसा जंक्शन की धर्मशाला के बाहर अशोक वृक्ष के नीचे प्रातः १०॥ बजे स्थानकवासी जैन दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा के बाद उनका नाम देवीलालजी महाराज रखा गया। दीक्षा प्रसंग पर दामनगर. ढसा, लाठी आदि का संघ उपस्थित था। दीक्षा ता० ४-११-४४ के दिन सम्पन्न हुई। दीक्षा के उपकरण दामनगर संघ ने दिये।

ढसा से घोजंक्शन उमराला सोहनगढ शिहोर आदि क्षेत्रो को पावन करते हुवे आपश्रीमांडवे गांव में पधारे। मांडवे के संघ ने आपके आगमन के दिन पाखी रखी। पाखी के दिन समस्त प्रकार की आरम्भ प्रवृत्ति बन्द रखी गई। पाखी के दिन गांव वालों ने ४ चार मन गुड की प्रभावना की। यहां सात घर होने पर भी लोगों की धार्मिक श्रद्धा बडी अच्छी है। यहां सुन्दर उपाश्रय भी है। संघ के प्रमुख सेठ रतिभाई चत्रभुज ने पूज्य श्री की बहुत अच्छी सेवा की। जब धोला पधारे तब पं० श्री मनोहरलालजी महाराज ठाना २ पूज्य श्री की सेवा में आ गये इस प्रकार पूज्य श्री ठाना नौ के साथ भावनगर पधारे।

पूज्य श्री के आगमन से भावनगर की जनता में अपूर्व उत्साह छा गया। भावनगर की जनता ने आप का भव्य स्वागत किया महाराज श्री को विशाल जैन स्थानक में उतारे गये आप के प्रतिदिन प्रभावशाली प्रवचन होने लगे।

भावनगर स्थानकवासी जैन श्री संघ के मुख्य २ कार्यकर्ताओं ने एवं श्री रंगीलदासभाई कोठारी आदि के सुप्रयत्न से एक दिन विश्वशान्ति के लिए ॐ शान्ति की प्रार्थना का आयोजन किया गया। इस दिन समस्त नगर में पाखी रखी गई, नगर के कसाईखाने बन्द रखे गये। जिससे सैकडों जीवों को अभयदान मिला, भावनगर के प्रसिद्ध यशोनाथ महादेव के मन्दिर के प्रांगन में विश्वशान्ति के लिए जाहिर प्रवचन सभा का आयोजन किया गया। प्रवचन सुनने के लिए भावनगर की हजारो की संख्या में जनता एकत्रित हुई। सर्व ने खडे होकर ॐ शान्ति की धून लगाते हुए ईश्वर प्रार्थना की। पूज्य श्री ने एवं अन्य मुनिराजों ने प्रार्थना पर १॥ घंटे तक प्रवचन दिया। प्रवचन का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा। इस अवसर पर सौराष्ट्र के प्रसिद्ध कवि एवं देशभक्त दुलहराय 'कवि काग' ने बडी हृदय स्पर्शी कविता सुनाई। इस पुण्य अवसर पर नगर के उच्च अधिकारी एवं अन्य प्रमुख व्यक्ति भी उपस्थित थे, बाहर के दर्शनार्थी भी अच्छी संख्या में उपस्थित थे। इस सुन्दर आयोजन से भावनगर की जनता बडी प्रभावित हुई।

शास्त्रोद्धार समिति की स्थापना--

दामनगर से प्रारम्भ हुए शास्त्रोद्धार के कार्य को व्यवस्थित करने का प्रयत्न भावनगर में हुआ। इस कार्य को साकार रूप देने के लिए जामनगर के रहनेवाले हाल बोटाद से सेठ श्री छबीलदासभाई कोठारी एवं उनके लघु भ्राता भावनगर निवासी सेठ रगीलदास भाई कोठारी दामनगर के सेठ जगजीवन रतनशीभाई बगडीया राजकोट के तत्वज्ञ सेठ श्री गुलाबचन्दभाई पानाचन्दभाई महेता रतलाम के सुश्रावक श्री सोमचन्द तुलसीदास भाई ने खूब अच्छा प्रयत्न किया। ईनके सुप्रयत्न से शास्त्रोंद्धार के पवित्र कार्य को अच्छा वेग मिला और सेठ श्री शांतिलालभाई मंगलदासभाइ को प्रमुख बनाकर शास्त्रोद्धारसमिति की स्थापना हुई। भावनगर में आप भक्तिबाग में ठहरे थे ओर व्याख्यान के लिए स्थानक में पधारते थे, शास्त्रो के कारण व शरीर के कारण कुछ समय भावनगर में बिराजकर आपने नौ मुनिराजों के साथ बिहार कर दिया। यहां से

और तपोत्सव के समय पर तहसीलदार दोरे पर होने से कोई सरकारी अडचन नहीं आई। इन दोनों तपस्वियों ने ७० दिन की सुदीर्घ तपश्चर्या की। उसका पूर ता० ३१ ८ ४४ के दिन निश्चित होने से सर्वत्र पत्र पत्रिकाओं द्वारा स्थानीय संघ की तरफ से आमन्त्रण पत्र भेजा गया। तदनुसार तपोत्सव पर, वढवाण-केम्प, साणंद वीरमगांव अहमदाबाद, चूडा, राणपुर ढसा, त्रीतल, अमरेली, कुंडला, राजकोट और आसपास के करीब चार हजार से भी अधिक जनता दामनगर तपस्विमुनियों के दर्शनार्थ आई। पाँच हजार की वस्तीवाला दामनगर इतनी बडी जनसंख्या से यात्रा धाम बन गया था। उनके रहने का भोजन का स्थानीय श्रीसंघ ने बहुत उत्तम प्रबन्ध किया था। कल्पना से भी अधिक दशनार्थियों के आने पर भी श्री संघ को इतनी सुन्दर व्यवस्था थी कि दर्शनार्थी संघ की व्यवस्था की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते थे। तमाम गांव की स्कूलों में दर्शनार्थिओं को ठहराये गये थे। स्वयंसेवकों का बडा उत्तम प्रबंध था। इसके अतिरिक्त एक एक घर में करीब ५०-५० मेहमानों को स्थान मिलने से ग्रामवासियों को भी सेवा का अपूर्व अवसर मिला। वढ्वाण केम्पकी स्वयं सेविका बहने श्रीमती दोनों चंपाबहन के नेतृत्व में श्राविका समूह की व्यवस्था बडी सुन्दर रही जिससे व्याख्यान श्रवण में किसी प्रकार की अडचने नहीं आई। ग्राम के बाहर स्कूल के विशाल मैदान में पूज्य श्री घासीलालजी महाराज, पं० मुनिश्री समीरमलजी म० तथा मधुर वक्ता पं० श्रीकन्हैयालालजी म० के प्रभाव शाली प्रवचनों का श्रोताओं पर बड़ा हि सुन्दर प्रभाव पडा। इस पुनित अवसर पर सेठ प्रभुदासभाई सेठ विनुभाई' मोदी सेठ केशवलालभाई, शाह मोहनलाल भाई, बगडिया सेठ जगजीवन भाई, गीरधरभाई आदि दामनगर श्री संघ की सेवा अपूर्व रही। इस प्रसंग पर कोई भी अनिष्ट बनाव नहीं बना। यह एक बडाही शुभ चिन्ह था। पारने के अन्तिम व्याख्यान के दिन आगम साहित्य के उद्धार के लिए भिन्न भिन्न वक्ताओं के प्रवचन हुए। भाषण के अन्त में रेल्वे कि सुविधा के लिए रेल्वे अधिकारियों का, स्वयं सेवकों का, आगन्तुक महमानों का श्रीसंघ की ओर से आभार माना गया। वढवाण केम्प के स्टेशन मास्टर चत्रभुज नानचंद भाई को दामनगर की इस अपूर्व सेवा के लिए आभार के साथ खूब धन्यवाद दिया। और सेवाभाव की मुक्तकण्ठ से प्रशंसा की।

दामनगर में मानो दीपमालिकोमहोत्सव ही मनाया जा रहा हो ऐसा सर्वको आभास हो रहा था। रात्रि के समय बहने धार्मिक गीत गाकर उत्सव में चार चान्द लगा रही थी। इस अवसर पर इन्दोर रहने वाले दानवीर सेठ केशवलाल हरिचन्द मोदी, श्री मोरारजीभाई कानजीभाई कापडिया, श्री मोहनलाल लीलाचंद कपासी ने दामनगर के १४० घरों में प्रत्येक के घर जर्मन सील्वर के प्यॉले, एवं दखा निवासी सेठ ने आधे शेर सुखडी के साथ पीतल की तपेलियों की एवं अहमदाबाद-निवासी शा. तलकचंद भाइ व खीमचंद भाई ने पूंजनियों की एवं लम्बे झाडूओं की प्रभावना की। समस्त गांव में इस दिन पाखी पाली गई। उस दिन जीवहिंसा बंद रखकर ॐ शान्ति की प्रार्थना की। शाह मनसुखलाल जीवनलाल भाई ने सामुहिक आयंबिल तप करवाया था जिसमें सैकडों स्त्री पुरुषों ने भाग लिया।

सेठश्री विनयचन्दभाई व श्री जगजीवनभाई बगडिया दामनगर, श्री गुलाबचंद भाई महता राजकोट, रेल्वे इंजिनियर श्रीछबिलदास भाई कोठारी बोटाद आदि ने पूज्य श्री द्वारा जैन शास्त्रों की संस्कृत हिन्दी, गुजराती भाषा में टीका लिखाने का कार्य प्रारंभ कराया। पूज्यश्री को लेखन कार्य में मदद करने के लिए तीन पण्डित श्री चतुरानन्दन झा० पं० मूलचन्दजी व्यास, तथा पण्डित मुनीन्द्रमिश्रजी को रखे गये। लेखन कार्य प्रारंभ होने से पूज्य श्री का सौराष्ट्र पधारना सफल हुआ।

चातुर्मास काल में अनेक धार्मिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक कार्य हुए। यहां भावनगर लाठी बोटाद गढडा मावरकुन्डला विगेरे श्रीसंघों की विनंतियें आई इस अवसर पर भावनगर संघ भी विनंति के लिये

आया । अवसर देखकर पूज्य श्रीने विनंति स्वीकार कर ली। सफल चातुर्मास पूर्ण कर पूज्य श्री ने अपनी शिष्य मण्डली के साथ दामनगर से विहार किया । दामनगर से आप ढसा जंक्शन पधारे ॥

ढसा में दीक्षा समारोह

जैन मूर्तिपूजक साधु दीपविजयजी को मूर्तिपूजा सावद्य क्रिया है । सावद्य क्रिया धर्म के नाम से करना कराना दुर्गति का कारण है। ऐसा समझकर दीपविजयजी ने मूर्तिपूजक वेश छोडकर ढसा जंक्शन की धर्मशाला के बाहर अशोक वृक्ष के नीचे प्रातः १०॥ बजे स्थानकवासी जैन दीक्षा ग्रहण की । दीक्षा के बाद उनका नाम देवीलालजी महाराज रखा गया । दीक्षा प्रसंग पर दामनगर, ढसा, लाठी आदि का संघ उपस्थित था। दीक्षा ता० ४-११-४४ के दिन सम्पन्न हुई। दीक्षा के उपकरण दामनगर संघ ने दिये ।

ढसा से घोजंशन उमराला सोहनगढ शिहोर आदि क्षेत्रो को पावन करते हुवे आपश्रीमांडवे गांव में पधारे । मांडवे के संघ ने आपके आगमन के दिन पाखी रखी । पाखी के दिन समस्त प्रकार की आरम्भ प्रवृत्ति बन्द रखी गई। पाखी के दिन गांव वालों ने ४ चार मन गुड की प्रभावना की। यहां सात घर होने पर भी लोगों की धार्मिक श्रद्धा बडी अच्छी है। यहां सुन्दर उपाश्रय भी है । संघ के प्रमुख सेठ रतिभाई चत्रभुज ने पूज्य श्री की बहुत अच्छी सेवा की। जब धोला पधारे तब पं० श्री मनोहरलालजी महाराज ठाना २ पूज्य श्री की सेवा में आ गये इस प्रकार पूज्य श्री ठाना नौ के साथ भावनगर पधारे ।

पूज्य श्री के आगमन से भावनगर की जनता में अपूर्व उत्साह छा गया। भावनगर की जनता ने आप का भव्य स्वागत किया महाराज श्री को विशाल जैन स्थानक में उतारे गये आप के प्रतिदिन प्रभावशाली प्रवचन होने लगे ।

भावनगर स्थानकवासी जैन श्री संघ के मुख्य २ कार्यकर्ताओं ने एवं श्री रंगीलदासभाई कोठारी आदि के सुप्रयत्न से एक दिन विश्वशान्ति के लिए ॐ शान्ति की प्रार्थना का आयोजन किया गया । इस दिन समस्त नगर में पाखी रखी गई, नगर के कसाईखाने बन्द रखे गये । जिससे सैकडों जीवों को अभयदान मिला, भावनगर के प्रसिद्ध यशोनाथ महादेव के मन्दिर के प्रांगन में विश्वशान्ति के लिए जाहिर प्रवचन सभा का आयोजन किया गया । प्रवचन सुनने के लिए भावनगर की हजारो की संख्या में जनता एकत्रित हुई । सर्व ने खडे होकर ॐ शान्ति की धून लगाते हुए ईश्वर प्रार्थना की । पूज्य श्री ने एवं अन्य मुनिराजों ने प्रार्थना पर १॥ घंटे तक प्रवचन दिया । प्रवचन का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा। इस अवसर पर सौराष्ट्र के प्रसिद्ध कवि एवं देशभक्त दुलहराय 'कवि काग' ने बडी हृदय स्पर्शी कविता सुनाई । इस पुण्य अवसर पर नगर के उच्च अधिकारी एवं अन्य प्रमुख व्यक्ति भी उपस्थित थे, बाहर के दर्शनार्थी भी अच्छी संख्या में उपस्थित थे । इस सुन्दर आयोजन से भावनगर की जनता बडी प्रभावित हुई ।

शास्त्रोद्धार समिति की स्थापना--

दामनगर से प्रारम्भ हुए शास्त्रोद्धार के कार्य को व्यवस्थित करने का प्रयत्न भावनगर में हुआ । इस कार्य को साकार रूप देने के लिए जामनगर के रहनेवाले हाल बोटाद से सेठ श्री छबीलदासभाई कोठारी एवं उनके लघु भ्राता भावनगर निवासी सेठ रगीलदास भाई कोठारी दामनगर के सेठ जगजीवन रतनशीभाई बगडीया राजकोट के तत्वज्ञ सेठ श्री गुलाबचन्दभाई पानाचन्दभाई महेता रतलाम के सुश्रावक श्री सोमचन्द तुलसीदास भाई ने खूब अच्छा प्रयत्न किया । ईनके सुप्रयत्न से शास्त्रोंद्धार के पवित्र कार्य को अच्छा वेग मिला और सेठ श्री शांतिलालभाई मंगलदासभाइ को प्रमुख बनाकर शास्त्रोद्धारसमिति की स्थापना हुई। भावनगर में आप भक्तिबाग में ठहरे थे ओर व्याख्यान के लिए स्थानक में पधारते थे, शास्त्रो के कारण व शरीर के कारण कुछ समय भावनगर में बिराजकर आपने नौ मुनिराजों के साथ बिहार कर दिया। यहां से

सिहोर सोनगढ उमराला बोटाद होते हुए आप का राणपुर पधारना हुआ। राणपुर में भी पाखी और ॐ शान्ति प्रार्थना का आयोजन किया गया। वहाँ से चुडा पधारे यहां आप का दरबारगढ में प्रवचन हुआ। प्रवचन में दरबार एवं दिवान साहब उपस्थित हुए। ॐ शांति की प्रार्थना का आयोजन हुआ समस्त चूडा में पाखी पाली गई। यहां से आप लोंबडी पधारे इस बार आप लींबडी में स्थानकवासी जैन छात्रावास में बिराजे। छात्रावास के गृहपति मास्टर प्रेमचन्द भाई ने संतों की अच्छी सेवा की।

उन दिनों लीम्बडी में पूज्य श्री आचार्य म. श्री गुलाबचन्दजी म० सदानन्दी पं० श्री छोटालालजी-म० पं० श्री लखमीचन्दजी महाराज आदि मुनिवर विराज रहे थे। सन्तों का यह स्नेह मिलन अपूर्व रहा। लिमडी संप्रदाय का संबन्ध पूर्व काल से वडिलो द्वारा उपार्जित संबन्ध को अभी भी अरस परस बिजके चन्द्र जैसा बढ़ता ही है ऐसा अनुभव हुवा। इस संप्रदाय के सर्व मुनिमंडल बडा उदार और पवित्र विचार धारा का है। शास्त्रोद्धार के कार्य में उपरोक्त मुनिराजों का अपूर्व सहयोग रहा। सन्तों का यह स्नेह मिलन संघ के लिए बडा आनन्द दायक रहा।

वि. सं. २००२ का चातुर्मास जोरावरनगर–

लीम्बडी से विहार कर पूज्य श्री वढवाण पधारे। वढवाण में पहले शहर में बाद में शहर के बहार छात्रावास में ठहरे। वढवाण शहर के तीनों उपाश्रय के श्री संघ ने पूज्य श्री को खूब प्रेमपूर्वक सेवा भक्ति की और नियमित रूप से व्याख्यान श्रवण किया। जोरावर नगर संघ की बडी इच्छा थी कि पूज्य श्री का इस वर्ष का यहां चातुर्मास हो। संघ ने मिटिंग की और पूज्यश्री का चोमासा अपने यहां करने का निर्णय किया तदनु सार श्री संघ पूज्य श्री की सेवा में आया और चातुर्मास की जोरदार विनंती करने लगा। महाराज श्री ने संघ की विनंती मान ली। आचार्य श्री की स्वीकृती से संघ में अत्यानन्द छागया। पूज्यश्रीकुछ समय तक वढवाण शहर में बिराज कर सुरेन्द्रनगर पधारे सुरेन्द्रनगर में थोडे समयतक बिराजे। तदनन्तर पूज्य श्री ने अपनो शिष्य मण्डली के साथ सुरेन्द्रनगर से विहार कर दिया और वढवाण शहेर पधारे। वर्द्धमान संघ ने पूज्य श्री का भावभीना स्वागत किया। यहां से आप चातुर्मासार्थ जोरावरनगर पधारे।

तपस्वो श्री मदनलालजी महाराज ने एवं तपस्वी श्री मांगीलालजी महाराज ने चातुर्मास के पूर्व ही तप प्रारंभ करदिया। सुरेन्द्रनगर जोरावरनगर और वढवाण सिटी तीनों शहरों को दो, तीन माइल का ही फासला था। अतः तीनों नगर निवासी पूज्य श्री के पवित्र दर्शन के लिए एवं व्याख्यान श्रवण के लिए प्रति दिन बडी संख्या में आने लगे। दो दो तपस्वियों की दीर्घ तपश्चर्या सौराष्ट्र के सारे झालावाड प्रान्त के लिए आकर्षण का केन्द्र बन जाने से जोरावरनगर तीर्थ भूमि सा बन गया था।

श्रावक श्राविकाओं में धर्म की भावना बढ जाने से तपश्चर्या भी बहुत हुई। पर्युषण पर्व में सारी महाजन वाडी श्रोताओं से चिकार भर जाती थी। जोरावरनगर संघ ने अति उत्साह से पर्युषण पर्व मनाए। व्याख्यान सुनने का लाभ लेने के लिए सुरेन्द्रनगर तथा वढवाण से भी श्रावक श्राविका आते रहते थे। जोरावरनगर श्रीसंघ के मन्त्री श्री भाइचन्द अमूलखभाई के जमाई २५ वर्ष कि तरुण अवस्था में थे। बीमार होने से श्वसुरगृह में इलाज के लिए आए थे। वे पर्युषण प्रारंभ के दिन ही इस असार संसार से सर्व लीला पूर्ण करके चल बसे। भाईचन्दभाई का घर उपाश्रय के सामने ही था। अपना २५ वर्ष को जमाई चल बसा और वह भी अपने घर पर ही और उधर महामंगल कारी पर्युषण पर्व का प्रारंभ दोनों बातें अपने आप में महत्व भरी थी। दोनों में से किसको पहले स्थान दिया जाय? ईसका निर्णय संघ सेक्रेटरी श्री भाइचंद भाई को करना था।

एक तरफ मोह के रक्षण की सांसारिक बात थी तो दूसरी तरफ मोह के स्थान पर निर्मोह भाव से धर्म रक्षण को आध्यात्मिक बात थी। श्रीभाईचन्द भाई ने निर्मोह भाव के धर्म रक्षण की बात ही पसन्द की

अपने जमाई के पार्थिव शरीर को अंत्यष्टि कृया के लिए ले गये तब और वापस घर आए घर कुछ रुदन की आवाज आई थी। उसके बाद श्री भाईचन्दभाई ने सभी को हिम्मत से कह दिया कि प्रथम पर्युंपण पर्व की आराधना और बाद में तपोत्सव की आराधना यह मुख्य कार्य है। तब तक घर पर रोना कुटना बन्द रहेगा। और इस कार्य के लिए कोई भी गांव के यहां बाहर के व्यक्ति बैठने के लिए न आवे। इसकी सूचना उन्होंने सर्वत्र पत्र द्वारा सभी को भेज दी। स्वयं भाईचन्दभाई उसी समय व्याख्यान में आये। उनका सारा कुटुंब भी नियमित व्याख्यान में आने लगे। रुढिवादी समाज के सामने भाईचन्दभाई ने एक दिव्य आदर्श उपस्थित किया।

पर्युषण पर्व समाप्त होते ही तपोत्सव प्रारंभ हो गया। दोनों तपस्वियों ने ७३–७३ दिन की तपश्चर्या की थी जिसका पूर तारीख १९–९–४५ भाद्रपद शुक्ला चतुर्दशी को था। चारों ओर तपोत्सव पत्रिका भेजी गई। वढवाण शहर के महाराजा सुरेन्द्रसिंहजी ने संघ की प्रार्थना पर राज्य की ओर से दर्शनार्थियों को समी प्रकार की व्यवस्था करने का वचन दिया तथा पानी की टंकी, एवं पाण्डाल के सभी साधन राज्य की ओर से दिये। सौराष्ट्र के इतिहास में यह एक महान् तपोत्सव था। संवत्सरी के पारणे से भाद्रपद शुक्ला १४ तक जोरावरनगर की महाजन वाडी व उपाश्रय में बहनों द्वारा नित्य सांगियां होने लगी। इस पूनीत प्रसंग पर उपस्थित होने के लिए संघ ने सर्वत्र आमंत्रण पत्र भेजे। फलस्वरूप इस पूनीत प्रसंग पर वढवाणकेम्प, चूडा सायला, ध्रांगध्रा, राणपुर, बोटाद, लखतर वीरमगाव, धंधुका, खंभात, लींबड़ी, बावळा, साणंद, भावनगर, राजकोट, अमदावाद, कल्लोल, वासवांडा, के संघ के अतिरिक्त उदययर एवं मेवाड के अनेक ग्राम निवासी मालवा, महाराष्ट्र आदि प्रान्तों के सज्जन उपस्थित हुए। करीब बीस हजार का विशाल जन समूह आया। पारने के अन्तिम चार दिनों में संघ भोजन में पन्द्रह से बीस हजार जन समूह ने लाभ लिया।

जोरावरनगर शुद्ध हवा खाने का स्थल होने से श्री मन्तों ने यहां अपने २ बंगले बना रखे हैं। उन लोगों ने दर्शनार्थियों को उतरने के लिए अपने अपने बंगले खाली कर दिये। इनमें सेठ रतीलाल वर्धमानभाई मील वाले, सेठ रतीलाम अमुलखभाई सेठ अमूलख अमीचन्दभाई सेठ शिवलाल गुलाबचन्दभाई स्टेट की पाठशालाएँ, सेठ कानजी अमूलख सेठ पून्जा भाई दीपचन्द, सेठ रतीलालभाई झोबालावाले सेठ जयचन्द देवचन्दभाई आदि ने अपने अपने निवास स्थान देकर धर्म कार्य में पूरा सहयोग दिया।

इस पुनित प्रसंग पर जोरावरनगर वढवाण केम्प का मूर्तिपूजक संघ सामूहिक रूप से आकर तपस्वियों के दर्शन कर संघ प्रेम का अपूर्व आदर्श उपस्थित किया। स्थानकवासी जैन संघ ने इनका भाव भीना स्वागत किया। ईस प्रसङ्ग पर उदयपुर के महाराणा श्री भूपालसिंहजी साहेब ने अपने ए. डी. सी, श्री चोवीसाजी को भेजे। तपश्चर्या के दिन मेवाड के महाराणा ने संपूर्ण मेवाड में अगता रखने का आदेश दिया। अतिरिक्त संजेली स्टेट, महेरपुरस्टेट, जुडास्टेट वढवाण राज्य, धाँगध्रा राज्य आदि के राजा महाराजाओं ने भी अपने अपने राज्य में पाखी (अगता) रखने का आदेश दिया।

वढवाण नरेश का आगमन–

ता० १६–९–४५ रवीवार को १०॥ साडे दस बजे वढवाण नरेश श्री सुरेन्द्रसिंहजी महाराज सा. पूज्य श्री के दर्शनार्थ आये। दर्शन कर आप ने एक घंटे तक पूज्य श्री का प्रवचन सुना, प्रवचन सुनकर बडी प्रसन्नता प्रगट करते हुए कहा कि मेरे योग्य जो भी सेवा हो वह फरमाईए" पूज्य श्री ने कहा हमारी सेवा यानी मानव की सेवा है। आप हमारे अहिंसा धर्म के प्रचार में अधिक से अधिक सहयोग प्रदान करें। इस अवसर पर छ सात हजार मानव मेदनी उपस्थित थी। पूज्य श्री के प्रवचन के बाद डॉ. कस्तुरचन्द भाई मे संघ की ओर से श्रीमान् वढवाण नरेश का स्वागत किया। इस अवसर पर संघपति सेठ लखमी

चन्द मनसुखलाल भाई के भतीजे ने ना० ठाकोर साहब को एवं शास्त्रोद्धार समिति के अध्यक्ष सेठ श्रीशान्तिलाल मंगलदासभाई को अचित्त चन्दन काष्ठ पुष्प की माला पहना कर इन महानुभावों का हार्दिक स्वागत किया गया।

शास्त्रोद्धार समिति—

मध्याह्न के पहले सेठ नरोत्तमदास ओघडदास भाई के बंगले पर भोजन करने के बाद सेठ श्रीअमूलख अमीचन्द भाई के बंगले पर सेठ श्री शान्तिलाल मंगलदास भाई के प्रमुखपनेमें शास्त्रोद्धार समिति की जनरल मिटिंग हुई। इस में शास्त्र प्रकाशन के कार्य को वेगवान बनाने का निर्णय किया। समिति खर्च को निभाने के लिए शास्त्रोद्धार समिति के अध्यक्ष शान्तिभाई ने प्रति वर्ष एक हजार रुपया पाच वर्ष तक समिति को देने का प्रवचन दिया उप प्रमुख श्री ने एक हजार रुपया दिया।

तपश्चर्या के अवसर पर शास्त्रोद्धार के लिए २०००, संघ भोजन के लिए ७००० हजार एवं जीव दया के लिए ४००० हजार रुपये दान में प्राप्त हुए।

इस समाज के आदर्श महान शास्त्र कार्य को पार करने में समाज को प्रेरित करना यह कर्णधारों का परम कर्तव्य है। समाज के बडे सज्जन प्रयत्न करे तो क्या नहीं हो सकता है। इस कार्य के मर्म को समझ कर लिमडी के एक अग्रगण्य सुश्राविका, जीन का जीवन त्याग मय है ऐसी मोतीब्हेन झवेरचन्द तल साणीया तथा वढवाण की नगर सेठाणी मोतीब्हेन नागरदास शाह तथा प्रभाब्हेन नरोत्तम दास शाह तथा वांकानेर की नगर सेठाणी जडावब्हेन ने ईस महान कार्य के लिए जो जो परिश्रम किया है उसे समाज कभी नहीं भूल सकता। ईन ब्हेनोने अपना अनमोल समय लेकर घर घर में फिरफिर कर समिति के शास्त्रो उद्धार का कार्य के लिए सहायता प्राप्त की, उनका इस समाज उपर महान उपकार है। समिति ने अपने ठहेराव में भी उनका आभार माना है। इन्ही की शुभ प्रेरणा से यह कार्य रूप प्रज्वलित बन सका है। एसा लक्ष अगर सर्व समाज के कर्णधार सोचलें तो क्या नहीं हो सकता परन्तु संप्रदाय वाद, देश भेद, राग द्वेष ही सर्व को नष्ठ कर देता है। यह कार्य कोई एक संप्रदाय का नहीं है। समाज के रक्षण का आदर्श कार्य है। क्या समाज अज्ञान के पडदे को तोडकर ज्ञान के प्रकाश में आवेगा? ज्ञानविना सर्व मिथ्या है—ऋते ज्ञानान्मुक्तिः ज्ञान बिना मोक्ष हो नहीं सकता।

तपोत्सव के दिन विशाल पण्डाल में पूज्य आचार्य श्री के एवं पं रत्न मुनि श्री कन्हैयालालजी. म. आदि अन्य सन्तों के तथा स्थानीय वक्ताओं के प्रवचन हुए। पूज्य श्री ने तप की महिमा पर प्रभावशाली प्रवचन दिया। पं. श्री समीर मुनि जो का स्वास्थ्य ठीक न होने से वे प्रवचन मण्डप में नहीं आ सके फिर भी संघ को मार्गदर्शन देते रहते थे।

जोरावरनगर संघ के लिए यह चातुर्मास बडा प्रेरणा दायी रहा। समस्त चातुर्मास में संघ का उत्साह अभूत पूर्व रहा। चातुर्मास समाप्त हुआ और पूज्य श्री को हजारों लोगों ने अश्रुभीने नयनों से विदा दी। पं. मुनि श्री समीरमलजी महाराज का स्वास्थ ठोक न होने से चातुर्मास के बाद पूज्य श्री वढवाण केम्प में कुछ दीन विराजे। ईधर लिमडी से पूज्य गच्छाधिपति परम आचार्य श्री गुलाबचंदजी म० की प्रेरणा से लिमडी संघ वढवाण आया और विनंती कि की पूज्य आचार्य म. का फरमान है कि सर्व पडितों को साथ में लेकर लिमडी शिघ्र पधारे और लिमडी में ही रहकर शास्त्रों का कार्य करो और आचारांग सूत्र की पूर्णाहुति लिमडी में हि होनी चाहिए। पूज्य श्री की आज्ञा का पालन कर आचार्य श्री ने लिमडी की विनंति मानली। वहां से आपने लीमडी की और बिहार किया। लीमडी में पूज्य श्री तीन मास बिराजे और शास्त्र लेखन का कार्य करते रहे। लीमडी में बिराजित पूज्य आचार्य श्री गुलाबचन्दजी म० सदानन्दी श्री छोटालालजी म.सा. पं. श्री शामजी स्वामी (वयोवृद्ध) पं. रत्न कविवर्य श्रीनानचन्दजी म० सरलस्वभावी पं. श्री रूपचन्दजी महाराज

आदि सर्व संतो ने लेखन कार्य में पूर्ण सहयोग दिया।
यहां भी पं. श्री समीरमुनिजी महाराज के पेर की नस में दर्द हो गया था। उपचार द्वारा आराम होने पर अपने माताजी वयोवृद्ध महासतीजी को दर्शन देने के लिए पूज्य श्री की आज्ञा प्राप्त कर मेवाड़ की तरफ विहार कर दिया।

पूज्य श्री लीमडी से विहार कर चूडा पधारे। थोडे दिन यहां बिराजकर आप सायला पधारे यहाँ कविवर्य प्रसिद्ध वक्ता पं. श्री नानचन्दजी म० विराजित थे। आप समाज के एक आदर्श कवि थे महान वक्ता और सौराष्ट्र के रत्न थे, ज्ञान के मर्मज्ञ थे आप की सहृदयता पूज्य श्री के प्रति बहुत ही भावपूर्ण रही। यहां के संघत्रय (दरियापुरी लीमडी, और सायला संघ बड़ा संघ, छोटा संघ,) ने सेवा भक्ति का लाभ बहुत ही अच्छी तरह से लिया।

सायला नरेश श्री कर्णसिंहजी ने पूज्य श्री के व्याख्यान का लाभ लिया। सायला नरेश की जैन मुनियों के प्रति अगाढ श्रद्धा है। होली चातुर्मास यहां करके पूज्य श्री आयाडोल्या पधारे। यहां के नरेश श्री कनकसिंहजी के महल में पूज्य श्री बिराजे। श्री कनकसिंहजी सायला नरेश श्री कर्णसिंहजी के लघु भ्राता है। दोनों भाईयों के जन्म में केवल ५ मिनिट का ही अन्तर था। श्री कनकसिंहजी ने पूज्य श्री की आज्ञानुसार एक दिन की पाखी रखी और पूज्य श्री ने ईश्वर प्रार्थना पर प्रवचन दिया।

वहां से आप थान पधारे थान संघ में ही नहीं सारे सौराष्ट्र में सेठ श्री ठाकरसी करसनजीभाई धर्म ध्यान शास्त्रज्ञान के कारण बड़ी ख्याति प्राप्त व्यक्ति थे। इन्होंने पूज्य श्री के शास्त्र लेखन कार्य में पूर्ण सहयोग दिया। पूज्य श्री के साथ रहकर लेखन कार्य करने वाले पंडितो का श्री संघ की तरफ से सन्मान करवाया। थान श्रीसंघ ने सेवा भक्ति का अच्छा लाभ लिया।

थान से विहार कर वांकानेर पधारे, वाकानेर पधारे पर वांकानेर श्री संघ ने पूज्य श्री के शास्त्र लेखन के कार्य में पूर्ण सह योग दिया। तन मन धन से खूब सेवा बजाई, यह संघ महान गंभीर है। यहां के महाराजा श्री अमरसिंहजी ने पूज्य श्री का प्रवचन सुना, मेवाड से अपनी मातुश्री महासतीजी को दर्शन देकर समीरमुनिजी म० पुनः पूज्य श्री से वकानेर में आ मिले। पूज्य श्री ने वांकानेर से मोरबी की ओर विहार कर दिया।

वि. सं. २००३ का ४५ वाँ चातुर्मास मोरबी में

मोरबी श्री संघ ने पूज्य आचार्य श्री घासीलालजी म. का चातुर्मास कराने का विचार किया और संघ का एक डेप्युटेशन नगर सेठजी के सुपुत्र वर्तमान नगर सेठ श्री चन्द्रकान्तभाई के नेतृत्व में वॉकानेर आया। डेप्युटेशन में ग्यारह श्रावक आए थे! आए हुए डेप्युटेशन ने पूज्य श्री को सं. २००३ का मोरबी चातुर्मास के लिये आग्रह किया जिसे पूज्य श्री ने स्वीकार किया। वाकानेर श्री संघ की इच्छा आगामी चातुर्मास वांकानेर में हि हो परंतु मोरबी की बिनंति स्वीकार हो जाने पर श्री संघ विवश बन गया, कुछ समय विराजने के बाद वर्षा आरम्भ हो जाने से पूज्य श्री ने वांकानेर से मोरबी कि ओर विहार किया और रेल मार्ग से विहार करते हुए मोरबी पधारे। मोरबी संघ ने उत्साह के साथ स्वागत किया। नगर सेठ श्री विकमचन्द भाई, महात्मा प्राणलालभाइ आदि, संघ के सभी कार्यकर्त्ताओं ने विचार किया कि पूज्य श्री घासीलालजी म. का चातुर्मास होने से जनसमूह दर्शनार्थ आएँगे ही। कंट्रोल के कारण अनाज का मिलना दुलर्भ है, फिर भी दर्शनार्थियों के लिये सत्कार करना श्री संघ का परम कर्तव्य हो जाता है, इसीलिये कोई उपाय सोचा जाय। श्री नगर सेठ सा० ने कहा कि संघ के सभी लोग अगर व्यवस्थाँ कर सकते हैं तो मुझे कोई आपत्ती नहीं है। नगर सेठजी की स्वीकृती प्राप्त कर के कार्यकर्ताओं ने महात्मा प्राणलालभाई को सारी व्यवस्था करने का भार सोंप दिया।

महात्मा प्राणलाल भाई मोरबी संघ में एक कुशल प्रभाविक कार्यकर्ता थे। वे मोरबी के गान्धी कहलाते थे। उन्होंने व्याख्यान में उपस्थित बहनों को कहा कि–दर्शनार्थ आने वालों का सत्कार करना मोरबी संघ का परम कर्तव्य हो जाता है। संघ अन्य व्यवस्था कर लेगा, परन्तु शक्कर की व्यवस्था करना बहनों के हाथ की बात है। संघ कल चार कोठियां यहां रखेगा, प्रत्येक घरों को कंट्रोल की शक्कर मिलती ही है। उस शक्कर में से अपनी इच्छानुसार थोडी थोड़ी शक्कर लाकर इन कोठियों में डालें। एक सप्ताह में चारों कोठियें जो शक्कर से भर गई तो शेष सभी व्यवस्थाएँ हो जाएगीं। महात्मा के कहने पर शक्कर प्रत्येक घर से बहनों द्वारा आने लगी। मोरबी जैसे बड़े संघ में चार कोठियां भरजाना कोई बड़ी बात नहीं थी। बहनों द्वारा कोठियां भर जाने पर नगर सेठजी की आज्ञा से दशनार्थियों के लिये रसोड़ा खोल दिया गया। नगर सेठजी व महात्मा प्राणलालभाई काले बजार से कोई वस्तु लेकर राज्य विरुद्ध कर्म करना नहीं चाहते थे। भोजन की सभी वस्तुएँ भेट या उचित मूल्य से ही लीगई।

तपस्वी श्री मदनलालजी म० अने तपस्वी श्री मांगीलालजी म. वे ७३ दिन की बडी तपस्या की। मोरबी श्राविकासंघ में भी तपश्चर्या की लॉइनदारी लग गई। धर्म ध्यान तपश्चर्या से पर्युषण पर्व बडे हि उत्साह से मनाया गया। पर्युषण के बाद तपस्वी मुनि के पारणों में दो दिन रहे, तब नगर सेठ सा. तथा संघ की विनन्ति पर धर्म ध्यान को दृष्टि से पूर का दिन प्रकट किया।

मोरबी महाराजा श्रीलखधीरसिंहजी सा. बहुत ही धर्मात्मा थे। उन्होंने अपने जीवन में दाँरु माँस का आचरण कभी भी नही किया। शिकार की दृष्टि से कभी भी किसी जानवर पर गोली नहीं छोड़ी। महारानीजी होते हुए वे भी बारह वर्ष से ब्रह्मचर्य व्रत पालन कर रहे थे। आचार के अहिंसक मोरबी नरेश पूज्य श्री घासीलालजी महाराज के तथा तपस्वीजी म० के दर्शनार्थ पधारे। आपने तपश्चर्या के पूर के दिन मोरबी राज्य में अगता (पाखी) पालने का आदेश दिया।

पूर के दिन विशाल ग्रीन चौक में मोरबी के जैन अजैन हजारों स्त्रीपुरुष पूज्य श्री के व्याख्यान श्रवण के लिए आए। पूज्य श्री ने तपश्चर्या के महत्व पर सार गर्भित्त व्याख्यान दिया। मोरबी महाराजा भी व्याख्यान में पधारे। मोरबी की सर्व जनता तपस्वी मुनि के दर्शन करके बहुत ही प्रसन्न हुई। राजकोट के काका हरगोविन्द जयचन्दभाई कोठारी सकुटुम्ब दर्शनार्थ आए। इन्होंने पूज्य श्री को चातुर्मास के बाद राजकोट पधारने की विनंती की। तदनुसार चातुर्मास समाप्त होने पर पूज्य का श्रीमोरबी से राजकोट पधारने के लिये विहार हुआ। मोरबी से मालिया होते हुए पूज्य श्री टंकारा पधारे। टंकारा एक प्राचीन राज्यधानी का सुरम्य स्थान है। टंकारा महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्य समाज संस्थापक की जन्मभूमी होने से यहां आर्य समाज की और से महत्वपूर्ण संस्था चल रही है। टंकारा से छोटे बडे क्षेत्रों को पावन करते हुवे राजकोट पधारे और नदी किनारे काका हरगोविन्द भाई कोठारी द्वारा निर्मित व्याख्यान भवन में बिराजे।

राजकोट में उस समय क्षत्रीय वंशज राजपुत कुल से दिक्षित लीम्बडी संम्प्रदाय के अहिंसा मूर्ति जीवदया प्रेमी प्रभाविक श्री जेठमलजी महाराज वहां काका की पोषधशाला में बिराजितथे। इन मुनि श्री को सौराष्ट्र के सभी राजाओं की तरफ से तथा अंग्रेज सरकार की तरफ से परवाना पत्र मिले हुए थे। उस आधार से वे गाडी तांगे में जोडे हुए लंगडे रोगी पशु को तत्काल छुडवा देते थे। पशुओं के साथ निर्दय व्यवहार मनुष्यों द्वारा कहिं होता हुआ दिखाई देता हो तो उसे तुरन्त छुडवा देते। यदि कोई अनजान नहीं मानता तो उसी समय पुलिस में जानकारी पहुँचते ही पुलीसवाले उसको अपने कब्जे में ले लेते थे। इन मुनि का जिस शहर में पदार्पण की खबर मिलते ही सर्वलोग सजाग हो जाते थे। वैसे पशुओं को वे स्वयं गाडी तांगे में जोतना बन्द कर देते। अधिक भार या अधिक सवारियाँ भी नहीं लेते। उनकी इस प्रकार सारे
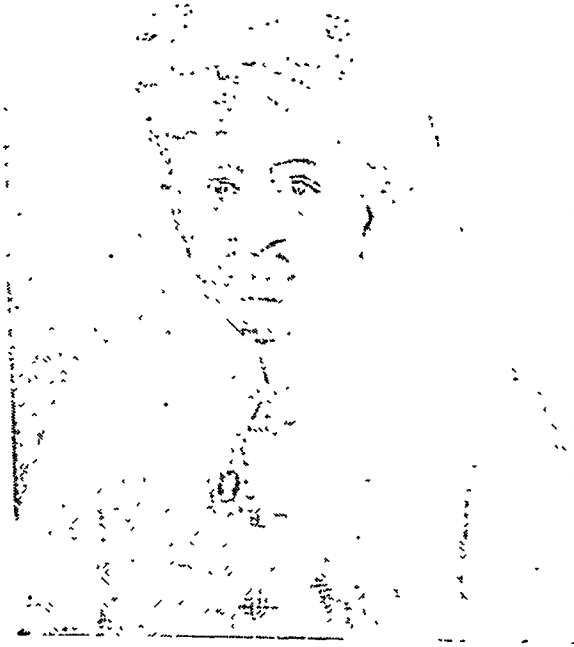
हीजहाइनेश महाराजा श्री लखधीरसिंहजी सा.
मोरवी

सौराष्ट्र में धाक थी। आपकी पूज्य आचार्य श्री के शास्त्रोद्धार के कार्य में पूर्ण सहानुभूति रही। आप ही ने काका को प्रेरित किये। पूज्य श्री के पास मोरबी चातुर्मास से अभ्यास करनेवाले रतागरखेड़ा मालवा के निवासी चान्दमलजी का काका के घर से हि दीक्षोत्सव हुआ। और ज्युबिलि बाग में पूज्य श्री के हाथों से उनकी दीक्षा हुइ। दीक्षा के अवसर पर राजकोट की जैन अजैन हजारों जनता थी। काका हरगोविन्द भाई का राजकोट में महत्व पूर्ण प्रभाव होने से राजकोट शहर के सरकारी बिन सरकारी प्रमुख व्यक्ति भी दिक्षा प्रसंगपर उपस्थित थे। मोरबी महाराजा ने दीक्षा पर अपनी तरफ से कम्बल तथा पात्रे भेजाए।

दीक्षा के बाद जामनगर वाले श्रावकों का आग्रह होने से जामनगर पधारे। जामनगर लोंकागच्छ उपाश्रय में पूज्य श्री के व्याख्यान होते थे। जामनगर की श्रावक श्राविकाओं ने व्याख्यान श्रवण तथा सेवा भक्ति का लाभ पूर्ण भावना के साथ लिया। गोंडल संप्रदाय के प्रसिद्ध यशस्वी सन्त श्री प्राण· लालजी म. का पदार्पण होने पर प्रत्यक्ष परिचय हुआ। शास्त्रोद्धार कार्य के प्रति उत्साह तथा सह विचार मिले। जामनगर से खीलोस जोडीया ध्रोल होते हुए पुनः राजकोट पधारे, तब कुछ दिन मोरबी महाराजा के महल में बिराजना रहा। काका हरगोविन्द भाई के आग्रह से चातुर्मासार्थ व्याख्यान भवन में पधारे

वि० सं० २००४ का २६वां चातुर्मास राजकोट में—

सं. २००४ का चातुर्मास राजकोट व्याख्यान भवन में ठा० ६ से बिराजे। चातुर्मास में पर्युषण पर्व के व्याख्यानों में व्याख्यान भवन का सारा हॉल श्रोताओं से भर जाता था। दोनों तपस्वी मुनियों के तपस्या के पूर पर काका ने राजकोट के कतलखाने बन्द रखवाए।

राजकोट शहर स्थानकवासी जैन समाज के घरों की दृष्टि से सौराष्ट्र में सब से बडा संपन्न शहर माना जाता है। जिधर जाओ उधर स्थानकवासी समाज के घर ही घर दृष्टि गोचर होते हैं। गौचरी जाने वाले मुनि सभी घरों में नहीं पहुंच पाते फिर भी दो माह पहले पुनः उन घरों में गौचरी का नम्बर नहीं आता। राजकोट में अंग्रेज के समय से रेजिडेन्ट रहा करता था। इस चातुर्मास तक वहां रेजिडेन्ट मौजूद था। उनके पास श्री चन्दुलालभाई, और सेक्रेटरी ताराचन्द भाई कार्य कर रहे थे। उन्होंने पूज्य श्री के सम्बन्ध में रेजिडेन्ट से बात की तो अपनी रेजिडेन्ट की कोठी पर पूज्य श्री को उपदेश देने के लिये आमंत्रित किये। तदनुसार पूज्य आचार्य श्री अपने मुनियों सहित कोठि पर पधारे। रेजिडेन्ट सा० ने अपनी पत्नि सहित पूज्य श्री के दर्शन किये, और अहिंसा तथा जैन धर्म के सम्बन्ध में प्रश्न करके जानकारी ली। पूज्य श्री द्वारा उपदेश सुनकर के वे बहुत ही प्रसन्न हुए।

पूज्य आचार्य श्रीघासीलालजी म. वय स्थविर० दीक्षा स्थविर हो जाने से तथा चलते हुवे शास्त्र लेखन के महान कार्य को एक जगह बिराज कर स्थिरता से अधिक कार्य करसकें इस दृष्टि से काका हरगोविन्दभाई ने पूज्य श्री को सं २००५ तथा सं२००६—दोनों चातुर्मास के लिये ज्युबिलि बाग के पास के अपने स्वयं के उपाश्रय में आग्रह करके रोक लिये।

वि. सं. २००५ व ६ का ४७-४८ वा चातुर्मास पुनः राजकोट में—

सं. २००५ के चातुर्मास के लिये राणपुर संघ ने पं मुनि श्री कन्हैयालालजी म० ठा० ३ के लिये विनन्ती की जिससे ठा० ३ राणपुर चातुर्मास के लिये पधारे। पूज्य श्री के पास सं २००५ का चातुर्मास रहकर ज्ञान वृद्धि की दृष्टि से तपस्वी श्री रोशनलालजी म० मालवे से पं. श्री समीर मुनिजी म० के साथ पधारे थे, जिससे पू श्री ठा० ४ से बिराजे। सं २००६ में पूज्य श्री ठा० ५ से चातुर्मास बिराजे। दोनों चतुर्मास में श्रावक श्राविकाओं ने व्याख्यान का महान लाभ लिया। पर्युषण पर्व उमंग से धर्म ध्यान व तपश्चर्या से मनाया। राजकोट के काका हरगोविन्द भाई एवं इनके छोटे भाई श्री उमेदचन्द भाई कोठारी के रेपू

परिवार ने पूज्य श्री कि सेवा का लाभ लिया। इसी प्रकार सेठ साकरचन्द भाई रुपाणी तथा उनकी धर्मपत्नी श्रीमती पूरीबहन ने तीन वर्ष तक अखण्ड भाव से पूज्य श्री तथा मुनिवरों की अपूर्व सेवा का जो लाभ लिया वह स्तुत्य एवं प्रशंसनीय था।

चातुर्मास दरमियान सौराष्ट्र के तत्कालीन मुख्य मंत्री श्री उछरंगराय भाई ढेबर ने तथा गृहमंत्री श्री रसीकलाल भाई परीख ने पूज्य श्री के दर्शन किये। मुख्य मंत्री श्री ढेबरभाई एक सामान्य बंगले में रह रहे थे। साज सामान फर्नीचर की दृष्टि से उस बंगले में कुछ नहीं था। केवल एक टेबल और एक कुर्सी उनके यहां गृह कार्यालय में थी। उनसे जो मिलने आते उनके साथ जाजम पर बैठकर ही बातचीत करते थे। उनकी इस महान सादाई ने ही उन्हें अधिक समय तक मुख्य मंत्री पद पर टिकने नहीं दिये। और न उन्हें फिर से कहीं उस पद पर आने दिये। गांधो वादी कहलानेवाली कोंग्रेस सरकार गांधीवादी न रहकर सामंतशाही बन गई है। पूज्य श्री की आज्ञा से मुख्य मंत्री श्री ढेबरभाई ने राजकोट में अगते (पाखी) के साथ ईश्वर प्रार्थना दिन निश्चिन्त किया और जाहिर सभा में पूज्य श्री का तथा श्री संतबालजी का ईश्वर प्रार्थना सम्बन्ध में संयुक्त भाषण हुआ।

जेतपुर के सेठ श्री कहानदास भाई कोठारी तथा श्री वेणीचन्द भाई कोठारी-दोनों भाई शास्त्रोद्धार समिति के मेम्बर होने से राजकोट पूज्य श्री के दर्शनार्थ आया ही करते थे। दोनों भ्राता ने पूज्य श्री को जेतपुर पधारने का कई बार आग्रह किया। कोठारी बन्धुओं के आग्रह को स्वीकार करके सं २००६ का चातुर्मास पूर्ण होते ही पूज्य श्री ने अपने मुनियों सहित विहार किया। प्रथम विहार कोठारिया स्टेशन पर हुआ, जहां राजकोट से पहुंचाने के लिये श्रावक श्राविकाएँ बहुत बडी संख्या में आए थे। सीन्ध से आए हुए सीन्धी शरणार्थी लोग जो पं० श्री समीरमुनिजी द्वारा जैन धर्म से परिचित हुए थे, वे भी सपरिवार वहां तक पहुंचाने आए। पहुँचाने के लिए आने वालो को काका हरगोविन्द भाई की तरफ से भोजन कराया गया।

आगे विहार करते हुए गोंडल पधारे। गोंडल सोसायटी में ही पूज्य श्री बिराजे। गोंडल नरेश की प्रजा पालन में बहुत बडी प्रशंसा थी। अंग्रेज के समय में गोंडल नरेश के लिये चार बातें कही जाती थी। (१) जिन गांवों के किसान स्त्री पुरुषों के शरीर पर बहुत प्रमाण में सुवर्ण आभूषण दिखाई दें तो समझना कि यह गांव गोंडल राज्य का है। (२) जिस रोड (सड़क) पर मोटर में बेठे हुए को कहीं भी झटका (आंचका) न लगे तो समझना कि यह गांव गोंडल का है। (३) छोटे बडे सभी गावों में राज्य महल जैसी स्कूल दिखाई दे तो समझना कि ये गांव गोंडल राज्य का हैं। (४) खेतों पर कूए और सरसब्ज खेती दिखाई दे तथा देशी खातों का ढेर दिखाई दे तो समझना कि यह प्रदेश गोंडल राज्य का है। इस प्रकार गोंडल नरेश की प्रजा-हित व्यवस्था के लिये अंग्रेजों की तरफ से प्रमाण पत्र उस समय के स्कूलों में लगे हुए दिखाई देते थे। वांकानेर मोरबी और गोंडल राजा अपने समय इतने प्रजा हितेषी थे कि जब भी राज्य में दुष्काल होता तो स्वयं अपने गांवों में नित्य जाते और मनुष्यों के लिये अनाज की जहां जरूरत होती वहां तत्काल पहुंचाते। गोंडल नरेश का जैन मुनियों व जैन धर्म के प्रति पूर्ण स्नेह है। राज्य में जैनों का पूर्ण सन्मान है। जेन पर्वो के दिन अगते (पाखी) भी पलाये जाते हैं। यहां गोंडल सम्प्रदाय के शास्त्रज्ञ पूज्य आचार्य श्री पुरुषोत्तमजी म० विराजित थे। बडेहि दक्ष समयज्ञ थे और आचार विचार के हिमायति थे। पूज्य श्रीघासीलालजी म० के तथा पूज्य श्री पुरुषोत्तमजी म. के परस्पर शास्त्र लेखन सम्बन्ध में सौहार्द पूर्ण विचार विनिमय हुआ। जब स्नेह बढगया और सारा क्लेश खतम हो गया।

गोंडल से जेतपुर पधारने पर कोठारी वन्धुओंने जेतपुर परा में पूज्य श्री को ठहराए। व्याख्यान शहर के लिम्बडी उपाश्रय में नित्य होते थे। पूज्य श्री जहां भी पधारते, वहाँ शास्त्र लेखन कार्य अबाध गति से चालू रहता था। जेतपुर में बिराजे जितने कोठारी वन्धु के परिवार ने तथा दोनों श्रीसंघोने सेवा का लाभ सम्यक प्रकार से लिया। एक दिन पूज्य श्री ने व्याख्यान में फरमाया था कि आज श्याम को सर्व जनों को प्रतिक्रमण में अवस्य लाभ लेना है। आज का बडा महत्त्व है उसी सायंकाल की घटना बडी आदर्श थी। उस समय भूपत डाकू की बडी धाक थी। भूपत के आतंक से सभी लोग त्रासित थे। उसी दिन सूर्य छिपने के समय अपने मनुष्यों के साथ एक धनवान चौकसी की दुकान पर आकर खडा हो गया और चारों ओर चार आदमी खडे होकर लगे गोलियां छोडने, उपाश्रय से एक भाई प्रतिक्रमण कर घर जा रहा था उसे पूछा कोन? भाई बोला में प्रतिक्रमण करके उपाश्रय से आ रहा हूं। भुपत ने कहा जल्दि चले जाओ। उस समय वजुभाई जो प्रतिक्रमण में न आकर बाहर फीरने गये थे आते समय गोली लगी बहुत उपचार करने पर भी बचे नहीं। अगर धर्म करणी में उपाश्रय आ जाते तो कदाच इस प्राण घातक गोली से बच जाते. धर्म आत्मा के लिए महान रक्षक है। उधर डाकु भूपत दुकान मालिक से चावियां मांग कर ले ली, और कबाट खोल कर सोने के गहने से थेला भरकर रवाना हो गया। भूपत आए की खबर शहर में फेलते ही होंटले दुकाने बाजार खटाखट बन्ध हो गए और लोग सब अपने २ घरों पर या इधर उधर जा छिपे। पुलीस पार्टी पडी हुई थी। फिर भी भयसे सर्व अपने स्थान पर चूप रहे। किन्हीं की हिम्मत नहीं हुई कि जाकर उसका सामना करें। पांच मिनीट में हजारों का माल लेकर रवाना हो गया। उसके चले जाने के बाद पुलीस के लोग इधर उधर दौड़ने लगे। उस समय प्रतिक्रमण करने के लिये आए हुए श्रावक भी अपने २ घर पर चले गए। सभी को अपनी जान प्रिय है। धर्म और प्रतिक्रमण का तादृश्य उदाहरण जेतपुर में दिखाई दिया।

कंट्रोल के पहले विवाह पर बरातें जाती तो ५-६ दिन वहीं भोजन-पानी धूम धाम में बिता देते किन्तु कन्ट्रोल ने ५-६ दिन की जगह २४ घंटे में ही बारात को पुनः स्वस्थान पहुंचा देने की व्यवस्था सर्जित की। ५-६ दिन बारात बाहर टिकती है यह बात अब लोगों के स्मरण में ही नहीं रही। यह व्यवस्था उपदेश से नहीं परन्तु समय ने बदलवादी। इसी प्रकार समाज में बाल विवाह, वृद्ध विवाह, वर वधु विक्रय विवाह, दहेज प्रथा आदि समाजिक विषमताएं भी अपने आप समय के द्वारा बदली जा रही है। या बदली जाएगी। समझ पूर्वक बदलना ज्ञान युक्त परिवर्तन लहलाता है, इस बात को ध्यांन में लें तो संसार की अव्यवस्था मिटते जरा भी देरी नहीं लगती।

जेतपुर से पूज्य श्री जेतलसर पधारे। यहाँ एक सप्ताह बिराज कर जूनागढ की तरफ विहार किया। जूनागढ में नबाबी राज्य था अंग्रेजों ने भारत छोडते समय भारत के नरेशों को भी स्वतन्त्रता दे दी। अनेक राजाओं में भारत राज्य कैसें बने यह एक महान प्रश्न तत्कालीन राज्य व्यवस्थापकों के सामने था। स्वतन्त्र भारत के चाणक्य सरदार पटेल ने युक्ति से राजाओं को अलग अलग राज्यों से संयुक्त किये और सभी राजाओं को अपनी सत्ता से उतार करके उन्हें सत्ताहीन बना दिये। आगे चलकर पटेल द्वारा दिये गए बचनों से भी उन्हें निरस्त कर दिये। राजाओं में सभी प्रजापीडक थे, ऐसी बात नहीं थी जो नरेश प्रजा वत्सल थे उन्हें शासन में योग्य स्थान देते तो लुंटकों की जमात नहीं बढती।

राजाओं ने अपनी सत्ता समर्पित की उसी तरह जूनागढ नवाब के सामने भी सत्ता समर्पित करने का प्रश्न भारत सरकार की तरफ से उपस्थित हुआ। जूनागढ से पाकिस्तान पास होने से नवाब को पाकीस्तान में जूनागढ मिला देने की ईच्छा हुई थी। परन्तु पटेल ने श्री शामलदास गांधी को जूनागढ प्रजा

का नेतृत्व देकर जूनागढ में प्रवेश कराया । आगे प्रजा सैन्य पीछे पीछे सशस्त्र दल ईस प्रकार जूनागढ को चारों और से घेर कर प्रजा सैन्य जूनागढ पहुंची। उधर नवाब ने जब अपने आप को असहाय समझा तो अपने परिवार को लेकर हवाई जहाज द्वारा पाकिस्तान भाग गया, और जूनागढ नवाबी मिटकर भार तीय राज्य का एक भाग बन गया।

कई गांव के मुसलमान भी गांव खालीकर पाकिस्तान चले गये तो वहां मुसलमान थे ऐसे कोई परि चय चिन्ह भी नहीं रहे। भयभीत हिन्दु लोग निर्भीक होकर रहने लगे। पूज्य श्री ने ईस प्रकार जूनागढ राज्य के कई गांवों में। "परिवर्तिनि संसारे मृतः को वान जायते" का प्रत्यक्ष चित्र देखकर अपने उपदेश में कई जगह फरमाया कि जैन सिद्धान्त संसार को परिवर्तन रूप मानता है। कहीं वह परिवर्तन धीरे धीरे होता है तो कहीं वह परिवर्तन एकदम हो जाता है। एकदम हुआ परिवर्तन दिखाई देता है। शनैः शनैः परिवर्तन दिखाई तो देता है परन्तु उस परिवर्तन को स्वीकारने के लिये मन्द बुद्धिवाले तैयार नहीं होतें। ज्ञानी जन इस परिवर्तन शील संसार से उदासीन रहते हैं तब अज्ञानी जनों को धीरे परिवर्तन दिखाई न देने से वे उस संसार में रचे पचे रहते हैं।

जूनागढ प्राचीन समय में अर्थात् कृष्ण युग में उग्रसेन महाराजा की राजधानी थी। यहीं नेमीनाथ भगवान की बारात आई और वाडे में बन्द जीवों को छुआ कर बिना विवाह किये हि वापिस लौट गये। वर्षीदान देकर भगवान ने दीक्षा ली। दीक्षा के बाद भगवान जूनागढ के पास के गीरनार पर्वत पर ध्यानस्थ रहे केवल ज्ञान पाने के बाद भी सहश्राम्रवन में भगवान का पधारना होता रहा, और ईसी गीरनार पर्वत पर ही भगवान सर्व कर्म को क्षय करके मोक्ष पधारे। इसी जूनागढ में रा खेंगार राजा तथा राणक देवी राणी इतिहास के एक प्रसिद्ध राजा राणी हुवें हैं जिन्होंने अन्तिम श्वास तक अपनी मर्यादा नहीं छोड़ी। जूनागढ का पूर्व काल से एक महान त्याग तप का व. वैराग्य का इतिहास है।

यहां से वेरावल पधारने के लिये पूज्य श्री ने विहार किया वेरावल पधारते हुवे मार्ग में अनेक भव्य आत्माओंको उपदेश देते हुवे हाटी के मालिया विगेरे गांवों में विचरण करते हुए चोरवाड़ पधारे। चोरवाड सुरम्य बागों सं सुशोभित अति सुरम्य स्थान है। पास ही समुद्र का सुन्दर दृश्य और बागों में नारियल, सुपारी, केले, आम आदि के सैंकडों बगीचे हैं। पूज्य श्री के यहां पधारने पर वेरावल से श्रावक श्राविका दर्शनार्थ आए। वेरावल पधारने पर संघ ने भावपूर्ण स्वागत किया।

वेरावल के पास प्रसिद्ध महा अर्बी समुद्र है। वेरावल के समिप वैष्णवों का इतिहास प्रसिद्ध तीर्थधाम सोमनाथ महादेव है। जिसका विनाश और विकास का अपूर्व इतिहास पढ़ते हुए पाठकों के रोमांच खडे हो जाते हैं। इसी वेरावल बंदर के पास ही कृष्ण युग में एक विशाल वनखण्ड था। जिसमें स्वयं श्री कृष्ण बलभद्रभाई के साथ आये। बलभद्र पानी लेने:गए, और सोए हुए श्री कृष्ण के पेर में पद्म था, पद्म को हिरण अंग समझ कर यदुवंशी जराकुंवर ने तीर छोड़ा जिससे यहीं श्रीकृष्ण महाराज ने अपने पार्थिव शरीर को छोड़ा।

वेरावल में भोई जाति के ५०० घर है। उस समय ईस जाति के संगठन की वहां के लोग प्रशंसा सुनाते थे। ईस जाति की अपनी न्याय पंचायत थी, जिसमें सामाजिक झगडे निपटाये जाते थे। पंचायत का फैसला सर्वोपरि मान कर उसे स्वीकार कर लेते थे। सरकारी कोर्ट कचहरी में जातीय झगडे कभी नहीं पहुंचते थे। कितना आदर्श सुन्दर समय था।

पूज्य श्री के बिराजने से श्री संघ में धर्म जागृति बढ़ी। आयंबिल ओली, श्री महावीर जयन्ती और वर्षी तप के पारणे ये तीन धर्म कार्य पूज्य श्री के बिराजने से संघ में अपूर्व धर्मोत्साह में मनाए गये।

संघ के नगर सेठ श्री जमनादासभाई सेठ मदनलालभाई खांडवाले, श्रीकाकुभाईसद्देजपाल, श्रीजमना दासभाई, दिक्षार्थिनी वैराग्यवतिब्हन श्रीविजयाबहन, श्रीशारदाबहन, तथा श्रीजयाबहन, श्रीपानकुंवरबहन आदि श्रीसंघ वेरावलने धर्म ध्यान, ज्ञान, सेवा आदि धार्मिक प्रवृत्ति में आगेवान होकर महान लाभ लिया।

वि. सं. २००७ का ४९ वां चातुर्मास जेतपुर में

वेरावल से चोरवाड़, सोरठ, वंथली धोराजी आदि गांवों में धर्म प्रचार करते हुए पूज्य श्री ठाना ४ से जेतपुर चातुर्मासार्थ पधारे। आप के आगमन से स्थानीय संघ में अत्यानन्द छा गया। यहाँ स्था-नक वासी समाज के काफी घर हैं। आर्थिक दृष्टि से सामान्य होते हुए भी धार्मिक दृष्टि से यहां के लोग समृद्ध हैं। पूज्य श्री के पदार्पण से सारा नगर प्रसन्न था। प्रथम पं. रत्न मुनि श्री कन्हैयालालजी- म० के बाद में पूज्य श्री के व्याख्यान इतने प्रभावशाली होते थे कि गांव के सभी वर्ग व्याख्यान श्रवण कर ने के लिए निर्धारित समय के पूर्व ही अपना अपना आसन जमा लेते थे। आस पास के गांव के हजारों लोग दर्शनार्थ आते थे और पूज्य श्री का प्रवचन सुनकर अपने आप को धन्य मानते थे। सामायिक प्रतिक्रमण दया पौषध और जीवदया के कार्यों के साथ साथ तपश्चर्या भी खूब होने लगी।

चातुर्मास के बीच तपस्वीजी श्री मदनलालजी महाराजने दीर्घ तपश्चर्या प्रारम्भ कर दी। तपस्वीजी की तपस्या पर अनेक छोटे बडे श्रावक श्राविकाओं ने यथा शक्ति त्याग प्रत्याख्यान दया पौषध उपवासादि तपस्याएँ प्रारम्भ कर दी। तपस्वीजी की तपस्या के समय स्थानीय श्रावक संघ के धार्मिक उत्साह को देखकर आगन्तुक सज्जन बडे प्रभावित हुए। और श्रावक संघ की भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे।

पूज्य श्री की वाणी का चमत्कार—

तपस्वीजी श्री मदनलालजी महाराज सा. ने ९२ दिन की तपस्या की। तपस्या की समाप्ति के प्रथम दिन स्थानीय श्रावक संघ ने सर्वत्र इस दिन को सफल बनाने की सुचना पत्र पत्रिकाओं द्वारा सर्वत्र भेजी गई। करीब दो हजार गांवों के श्रावक संघों ने पूज्यश्री के द्वारा भेजे गये सन्देश को बड़ी श्रद्धापूर्वक स्वीकार किया। सर्वत्र अगते पलवाये गये। उस दिन अपने अपने गांव वालों ने यथाशक्ति त्याग व्रत प्रत्याख्यान ग्रहण किये। तपस्याऐं की। और हजारों मूक प्राणियों को अभयदान दिया गया। स्थानीय संघ ने उस दिन सारा बाजार बन्द रखा। पूज्यश्री ने उसदिन गाँव वालों को २५० प्रतिक्रमण करने का आदेश दिया। सभी लोगों ने पूज्यश्री के आदेश को बड़ी श्रद्धा के साथ स्वीकार किया। इस में जेतपूर श्रीसंघ के आगे वान सेठ श्रीनाथालालभाई झवेरचन्द कामदार तथा कानसभाई जीवराजभाई कोठारी ने सर्वत्र प्रयत्न किया। आचार्यश्रीके आदेश से प्रतिक्रमण के समय जैन समाज के सभी श्रावक प्रतिक्रमण करनेके लिए पूज्यश्री की सेवा में पहुँच गये। यह दृष्य बडा आदर्श था। धर्म का प्रभाव अचिंत्य होता है। धर्म से निरत व्यक्तियों की बड़ी बड़ी आपत्तियां भी नष्ट हो जाती है। इस आदर्श प्रतिक्रमण का जनता पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा। लोगों में धर्म के प्रति खूब श्रद्धा बढ़ी। तपस्या का पारणा शान्ति पूर्वक हुआ।

सभी दृष्टि से यह चातुर्मास बडा सफल रहा। आस पास के क्षेत्रों को फरसने की अनेक विनंतियां चातुर्मास के बीच आने लगी। चातुर्मास समाप्ति के बाद भी पूज्यश्री शास्त्रलेखन के लिए एवं शारीरिक कारण वश छ महिने तक यहि बिराजे। इस प्रकार १० मास तक जेतपुर संघ को अमृतमय वाणी का लाभ देकर आपने अपनी सन्त मण्डलो के साथ विहार कर दिया। हजारों लोगों ने आंसू भीने नेत्रों से पूज्यश्री को विदा दी और पुनः पूज्यश्री से क्षेत्र को पावन करने की आग्रह भरी प्रार्थना की।

जेतपुर से विहार कर पूज्य श्री ने जेतलसर की ओर विहार किया। जेतलसर में करीब जैनों के दस बार घर हैं। बडे धर्म प्रेमी हैं। महाराज श्री के पधारने पर इन्होंने खूब धर्म ध्यान किया। व्याख्यान

श्रवण, ॐ शान्ति की प्रार्थना, प्रभावना सामायिक प्रतिक्रमण दया, पौषध आदि अनेक धर्म क्रियाएँ की। जेतलसर में धोराजी का श्रीसंघ पूज्यश्री के दर्शन के लिए आया और धोराजी पधारने का अतिआग्रह करने लगा। धोराजी संघ की प्रार्थना को स्वीकारकर पूज्यश्री धोराजी पधारे। धोराजी में लींबडी का संघ और गोंडल का संघ इस प्रकार यहाँ दो संघ हैं। दोनों संघों ने पूज्य श्री की बडी सेवा की। नियमित व्याख्यान श्रवण करते रहें। यहां के संघ के धर्मप्रेमी श्री प्रभाशंकरभाई बलाई जीवनभाई प्रभुदासभाई वालजीभाई वलभदासभाई, प्रेमचन्दभाई, हरिभाईकामदार, दलपतभाई कामदार माणेकचन्दभाई खाटलीवाले, वकिल शान्तिभाई, दलिचन्दभाई, बाबुलालभाई सेठ आदि दोनो संघ के अग्रणी श्रावकों ने धार्मिक कार्यो में बडा सहयोग अच्छा दिया। यहाँ के मुस्लिमभाई बडे धनवान है। सेठ शाहिगरा सेठ तेली हाजीमहमद सेठभाडल्या आदि बडे सज्जन है। परदेश में इनका व्यापार चलता है। पूज्य श्री का सर्वधर्म समभाव के प्रवचन से ये लोग बडे प्रभावित हुए।

महाराज श्री ने विश्वशान्ति के लिए ॐ शान्ति को प्रार्थना का उपदेश दिया। संघ ने उसे आदर पूर्वक स्वीकार किया। समस्त गांव में इस विषयक पत्र पत्रिका छपवाकर वितरण करवादि। बाजार के बीच विशाल पाण्डाल बनाया गया। उसदिन समस्त धोराजी में अगता रखा गया। सभी कसाई खाने बन्द रखे गये। गाँव के जैन अजैन सभी भाईयों ने दुकाने बन्द रखी। सभामें हजारों भाई बहनों ने सम्मिलित होकर ॐशांति प्रार्थना की। प्रथम पंडित रत्न मुनि श्रीकन्हैयालालजी म. का बाद में पूज्य आचार्य श्री का विशाल जनसमूदाय के बीच प्रार्थना के महत्व पर प्रवचन हुआ। आस पास के सैकडों गाव वाले भी उस अवसर पर धोराजी में उपस्थित हुए। धोराजी के लिये यह दिन ऐतिहासिक दिन था। उल्लास और आनन्द का सर्वत्र वातावरण था। लोगों ने उस दिन यथाशक्ति प्रत्याख्यान किये। शेषकाल में चातुर्मास जैसा दृश्य नजर आता था। महाराज श्री ने प्रार्थना प्रवचन में कहा–"प्रार्थना का प्रभाव और प्रताप अगम्य और अवर्णनीय है। वाणी के द्वारा इसका महात्म्य प्रगट नहीं किया जा सकता। शारीरिक, पारिवारिक, आर्थिक, बौद्धिक एवं आत्मिक क्षेत्र में प्रार्थनो का बडा महत्व पूर्ण स्थान है। प्रार्थना से सर्व प्रकार की अशुद्धियों का नाश होता है। शरीर और इन्द्रियों के सर्व विकार दूर हो जाते हैं। प्रार्थना से मानव का जीवन अलौकिक बन जाता है। प्रार्थना से भगवान भी प्रसन्न हो जाते हैं तो सामान्य मनुष्य की बात ही क्या है। इस प्रकार डेढ घंटे तक पूज्यश्री ने अपनी अमृतरूप वाणी का जनता को पान कराया। बारह से आगन्तुक दर्शनार्थियों के आतिथ्य सत्कार आदि की सुन्दर व्यवस्था स्थानीय विभिन्न सज्जनों की तरफ से थी। धोराजी संघ के लिए यह अपूर्व अवसर था। संघ ने इस महत्वपूर्ण आयोजन से अपनी धर्म भावना का अपूर्व परिचय दिया। उस समय आगामी चातुर्मास अपने यहां करने की पूज्य श्री से विनंती की। श्रीसंघ का विशेष आग्रह और महान उपकार देख धोराजी संघ की आग्रह भरी विनंती को स्वीकार कर ली। चातर्मास की स्वीकृति से श्रीसंघ में अपूर्व आनन्द छा गया। वहाँ शेषकाल बिराजकर आपने अन्यत्र विहार कर दिया।

वि. सं. २००८ का ५० पचासवाँ चातुर्मास धोराजी में

सौराष्ट्र के गांवों नगरों को पावन करते हुए पूज्य श्री चातुर्मासार्थ धोराजी पधार गये। स्थानीय जनता ने आपका बडा भव्य स्वागत किया। इस क्षेत्रमें समय समय पर अनेक सन्तो व सतियों के चातुर्मास होते ही रहते हैं। निरंतर संत सतियों की चरण रज से पवित्र होने के कारण यहां के लोगों में धर्म की ओर विशेष रुचि है। चातुर्मास के अवसर पर तपस्वीजी श्री मदनलालजी महाराज ने ८० दिन की लम्बी तपश्चर्या की। यहाँ पर लिंबडी संप्रदाय के स्थविर त्यागी शास्त्रज्ञ पू० श्री धनजी स्वामी तथा पू० श्री श्यामजी स्वामी का पधारना हुआ। आप श्री का बडा स्नेह भाव रहा। गोंडल सम्प्रदाय की महासतीजी

श्री जयाबाई स्वामी ठाना ५ ने भी अपना वर्षा काल यही व्यतीत किया । महासतीजी जयाबाई स्वामी बडी विदुषी साध्वी है । आपने चातुर्मास काल में पूज्यआचार्यश्री से प्राकृतव्याकरण का अध्ययन किया । चातुर्मास काल में पूज्य श्री के प्रतिदिवस प्रवचन होते थे । तपस्वीजी की तपस्या के अवसर पर आस पास के ग्राम निवासी सैकडों की संख्या में दर्शनार्थी आते थे । समस्त गांव में अगता रखा गया । बाहर से आने वाले दर्शनार्थियों का स्थानीय संघ ने भोजनादि से अच्छा स्वागत किया । त्याग प्रत्याख्यान भी आशातीत हुए । तपस्या की सफल पूर्णाहुति के बाद पूज्यश्री का आगम लेखन का कार्य नियमित चलता रहा । समस्त चातुर्मास काल में जो धर्म ध्यान हुआ उसका सम्पूर्ण आलेखन करना अशक्य है । ईस प्रकार अनेक धार्मिक कार्य एवं परोपकार करते हुए धोराजी का चातुर्मास समाप्त हुआ । चातुर्मास की समाप्ति के बाद आपने विहार कर दिया । यहां से पूज्य श्री ने ठाना ५ से भाणवड की ओर विहार किया । भाणवड में आपने पधारकर वर्षीतप का पारना करवाया । इस अवसर पर भी अच्छा धर्म ध्यान हुआ । भाणवड से विहारकर आप पुनः धोराजी पधारे । धोराजी में उपलेटा का संघ पूज्यश्री के दर्शनार्थ आया और अपने यहाँ पधारने की विनंति करने लगा । श्रीसंघ की प्रार्थना को स्वीकृत कर आपने उपलेटा की ओर विहार किया । उपलेटा पधारे । स्थानीय संघ ने आपका भव्य स्वागत किया । प्रतिदिन आपके जाहिर प्रवचन होने लगे । व्याख्यान में इतनी भीड होती थी कि लोगों को वेठने जगह नहीं मिलती थी । तब आपके प्रवचन हायस्कूल के प्रांगन में होने लगे । उस समय के मुख्य मंत्री श्री ढेबर भाई, गृहमन्त्री रसीकलाल भाई, बललन्तभाई जेठालालभाई तथा गांव के अन्य प्रतिष्ठित सज्जन हिन्दू मुसलमान पटेल आदि सभी लोग बडी संख्या में आपके प्रवचन सुनकर आध्यात्मि आनन्द का अनुभव करते थे । यहाँ के श्रावकों में सेठ कृपा शंकर भाई वनेचन्दभाई सेठ नरभेरामभाइ प्रतापभाई, बोधाणीवकिल पुंजाणी वकील ज्ञानचन्दभाई नट्टुभाई इत्यादि ने पूज्य श्री के प्रेति अत्यन्त भक्तिभाव का परीचय दीया ।

आपके प्रभावशाली व्याख्यान और उच्च चारित्रशीलता से प्रभावित होकर उपलेटा के श्रीसंघ ने सोचा यदि पूज्यश्री का चतुर्मास यहां पर ही कराया जाय तो जनता को बहुत अधिक लाभ होगा । हमारे धार्मिकज्ञान में वृद्धि होगी यह सोचकर श्री संघ पूज्यश्री के पास आकर आगामी चातुर्मास के लिए आग्रह पूर्वक विनंती की । उपलेटा निवासी श्रावक श्राविका की इस प्रकार की उत्कृष्ट श्रद्धा तथा विपुल उत्साह को देखकर आपश्री ने आगामी चातुर्मास उपलेटा में सुखे समाधे द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का आगार रखकर स्वीकार किया । पूज्यश्री की इस स्वीकृति से श्रीसंघ के श्रावक श्राविकाएँ हर्षोत्फुल्ल हो उठी । आचार्यश्री ने चातुर्मास की स्वीकृति फरमाकर अन्यत्र विहार कर दिया ।

वि. सं. २००९ का ५१ एकावनवां चतुर्मास उपलेटा में

चातुर्मास के प्रारम्भ के पूर्व आप सौराष्ट्र के मध्यवर्ती ग्रामों में विचरण कर चातुर्मासार्थ उपलेटा पधार गये । स्थानीय जनता ने आपका भव्य स्वागत किया ।

प्रतिदिन प्रातः प्रार्थना के बाद आप व्याख्यान फरमाने लगे, व्याख्यान, प्रार्थना के समय जनता की उपस्थिति अच्छी रहने लगी । तपस्वीजी श्री मदनलालजी म० ने अपनी दीर्घ तपस्या प्रारम्भ कर दी । तपस्या के दिनों में अनेक श्रावक श्राविकाओंने छोटी बड़ी तपस्या के अतिरिक्त ३०, १५, ८, ५-५-३, २ तथा उपवास पोषध आदि बड़ी मात्रा में हुए ।

उपलेटा संघ के लिए यह एक अपूर्व अवसर था । संघ ने तप पूर्णाहुति दिवस को बड़े समारोह के साथ मनाने का निश्चय किया । पत्र पत्रिकाओं से आस पास के सभी गावों वालों को सुचना भेजी गई । भाद्र शुक्ला १४ को तपश्चर्या की पूर्ति का दिवस था । स्थानीय संघ ने समस्त बाजार बन्द रखा ।

इस दिन शहर के तमाम कसाइ खाने बन्द रखे गये । हिन्दू मुसलमान, सभी भाईयों ने भी अपनी अपनी दुकाने बन्द रख कर तपस्वीजी के प्रति अपनी अपूर्व श्रद्धा व्यक्त की । तपस्वीजी म० के पारने के दिन विशाल मैदान में ॐ शान्ति की प्रार्थना हुई । पूज्यश्रीने हजारों भाई बहनों को प्रार्थना तथा तप का महात्म्य समझाया । बाहर से सैकडों व्यक्ति दर्शनार्थ आये । संघ ने उनकी भोजनादि की उचित व्यवस्था की । समारोह बड़ी सफलता के साथ समाप्त हुआ । इसके बाद शास्त्रोद्धार समिति की जनरल मिटिंग हुई । अब तक की प्रगति का अवलोकन कर आगामी वर्ष की प्रगति की ओर कदम बढाया ।

सब तरह से यह चातुर्मास उपलेटा संघ के लिए चिरस्मरणीय बन गया । पूज्यश्री चातुर्मास के काल में नियमित रूप से शास्त्र लेखन का कार्य करते रहे । चातुर्मास की समाप्ति का समय निकट आया । चातुर्मास के विहार के समय अपने अपने क्षेत्रों में पधारने की श्रावक संघ की विनन्तियां आने लगी । सानन्द और सफल चातुर्मास कर पूज्यश्री ने अन्यत्र विहार कर दिया ।

उपलेटा का चातुर्मास समाप्तकर आप कोलकी गाँव में पधारे । यहां जैनों के केवल छ ही घर है लेकिन् सभी लोग बड़े धर्म के श्रद्धालु हैं । यहाँ पटेलों के बहुत घर हैं । उनमें रामजी भाई गोविन्दभाई वि. प्रमुख है । आप धनिक होते हुए भी धार्मिक वृत्ति के व्यक्ति हैं । आपने जब पूज्यश्री का प्रवचन सुना तो जैनधर्म के प्रति विशेष श्रद्धाशील बने । प्रतिदिन नियमित रूप से प्रवचन सुनते रहें । आपके कारण अन्य पटेल भाइयों ने भी आचार्यश्री का प्रवचन सुनकर अपनी जैनधर्म के प्रति असीम श्रद्धा व्यक्त की। यहां के पटेलों ने पूज्यश्री के शास्त्रोद्धार कार्य देखा तो बडे प्रभावित हुए ओर शास्त्रोद्धार समिति के मेंबर बन गये । महाराजश्री के प्रवचन से यहां त्याग प्रत्याख्यान खूब हुए । यहां से आप विहार कर खाखीजालिया पधारे । यहां जैन समाज के आठ ही घर है किन्तु लोगों की धार्मिक भावना अपूर्व है । सेठ मोतीचन्दभाई, गीरधरभाई, अभीचन्दभाई, गुलाबचन्दभाई, मणीभाई, शोभाग्यचन्दभाई शांतिलालभाई हिम्मतभाई, बांटविया कुटुम्ब के एक ही परिवार के सज्जन हैं । उन्होंने पूज्यश्री की बड़ी सेवा की । यहां पूज्यश्री के प्रवचन खाखीजी के मठ में हुआ । यहां के संघ ने इतनी सेवा की कि चातुर्मास की याद दिलाता था । श्रीमान् गीरधरभाई का साहित्य प्रेम सराहनीय है । शास्त्रोद्धार के कार्य में आपने तन मन धन से सेवा की । अभीचन्दभाई तथा व्रजकुँवर बेन तो त्याग की मूर्ति ही है । आपने अपने पुत्र पुत्रियों को धार्मिक संस्कोरों से ओतप्रोत कर दिया । आपके तीन पुत्र और एक पुत्री है । तीनों पुत्र बेंगलोर में रहकर न्याय से अपना व्यवसाय चला रहे हैं । इकलौती पुत्री वैराग्यवती कुमारी इन्दुबेन ने भागवती दीक्षा ग्रहण कर मोक्ष का निरापद मार्ग अपनाया । आप लोगों की पूज्यश्री के प्रति असोम श्रद्धा है । समय पर आप अच्छा दान करते हैं । पूज्यश्री का जीवन चरित्र आपकी तरफ से लिखवाया गया एवं छापवाया गया ।

यहां शेषकाल बिराजकर पूज्यश्री ने अपनी सन्तमण्डली के साथ विहार कर दिया । आप भायावदर पधारे । संघ ने आपके सत्संग का अच्छा लाभ लिया । यहां से विहार कर पानेली मोटी पधारे । वहां से आप भाफा पधारे । यहां भी समयानुकूल अच्छा उपकार हुआ । यहां से विहार कर आप जामजोधपुर पधारे । स्थानीय संघ ने आपका भव्य स्वागत किया । पूज्यश्री के अनन्यभक्त एवं शास्त्रोद्धार समिति के उपप्रमुख समाज के कार्यकर्ता श्री मान सेठ पोपटलाल मावजी भाइ ने बड़ी सेवा की । यहां के नगर सेठ श्री प्राणलालभाई गोरधनभाई दलपतभाई पोपटलालप्रेमचन्दभाई माणेकचन्दभाई आदि स्थानीय संघ ने भी अपूर्व उत्साह बताया । यहां शेषकाल बिराजकर आप भाणवड पधारे । भाणवड के श्रीमान सेठ हरखचन्दजी वारिया बडे शास्त्रज्ञ मर्मज्ञ एवं धर्मश्रद्धालु व्यक्ति थे । आपने पूज्यश्री के शास्त्रोद्धार के कार्य का सूक्ष्मता से नीरीक्षण किया । और खूब विचार किया । तीन दिन तक बराबर पूज्यश्री के द्वारा लिखाये जानेवाले आगमो को पढे । और बड़े प्रभावित हुए । उस समय जामजोधपुर के प्रमुख श्रावक एवं अपने वैवाहि श्री पोपटभाई

को बुलाये । और बोले-पोपटभाई । पूज्य श्री घासीलालजी महाराज जो शास्त्र लेखन का कार्य कर रहे हैं वह कार्य अपूर्व है । मैं इस कार्य में अपना पूर्ण सहयोग देना चाहता हूं । सेठ श्रीहरखचन्द भाई वारिया को पूज्यश्री के आगम कार्य से प्रभावित देखकर सेठ श्री पोपटलाल भाई ने शास्त्रोद्धार की विस्तृत रूप रेखा समझाई । तो श्रीहरखचन्दभाई पुनः बोले-मैं इस पुनीतकार्य में ५०००) पाच हजार रुपया देना चाहता हूँ । पोपटलाल भाई ने उनका हार्दिक अनुमोदन किया । सेठ हरकचन्दभाई को शास्त्रोद्धार के कार्य में इतनी बड़ी रकम देते देख कर यहां के नगर सेठ सोमचन्दभाई श्री जयचन्दभाई माणेकचन्दभाई संघवी ने भी इस पुनीतकार्य में अपना सहयोग देना निश्चित किया । ये सभी शास्त्रोद्धार समिति के मेम्बर बन गये ।

महाराजश्री शेषकाल बिराजकर विहार की तैयारी में ही थे कि श्रीमान् सेठ हरखचन्दभाई वारिया का हृदयगति के बन्द पड़ जाने से अचानक स्वर्गवास हो गया । परिवार पर तथा समस्त संघ पर उनके इस अचानक निधन से वज्रपात जैसा दुःख आ पड़ा । श्रीमान् हरखचन्दभाई अत्यन्त दयालु प्रकृति के व्यक्ति थे । आपके निधन से सभी को बड़ा दुःख हुआ । आपके निधन के बाद शास्त्रोद्धार समिति की प्रगति में श्री हरखचन्द भाई वारिया की धर्मपत्नी श्री मणीबेन ने तथा उनके सुपुत्र श्रीमान् लालचन्दभाई वारिया जेचन्दभाई वारिया नगीनभाई आदि पुत्रों ने पूरा सहयोग दिया । और पिता की हार्दिक इच्छा को पूरी की ।

यहां से विहार कर पूज्यश्री पोरबन्दर पधारे । पोरबन्दर एक बड़ा आदर्श नगर है । समुद्र के किनारे बसा हुआ होने से बड़ा सुन्दर लगता है । यहां के संघ की धार्मिक लगन बड़ी सराहनीय है । पूज्यश्री की संघ ने बड़े मनोयोग से सेवा की । पूज्यश्री के शास्त्रोद्धार के मर्म को समझा और इस पुनीत कार्य में तन, मन, धन से सहयोग प्रदान किया । कुछ दिन तक पोरबन्दर में बिराजने के बाद पूज्यश्री ने अगामी चातुर्मासार्थ मांगरोल की ओर विहार किया । रास्ते में पूज्यश्री को मांगरोल पहुँचने तक बड़ा हि कष्ट का अनुभव करना पड़ा क्योंकि रास्ते में ओजत और भादर ये दो बड़ी नदियां आती है । ये दोनों नदियाँ समुद्र में आ के मिलती है । इन दो नदियों के व समुद्र के बीच रेती का एक विशाल टीला है । ईन टीलों पर से ही व्यक्तियों को आने जाने का मार्ग होता है । एक तरफ समुद्र और दूसरी तरफ विशाल काय नदियां जल-भण्डार लिये खडी है । जब समुद्र में नदियां आकर मिलती है तब मार्ग बन्द हो जाता है । ईस प्रदेश में मीठा पानी बहुत कम मिलता है । पूज्यश्री भूख और तृषा के कष्ट को सहन करते हुए तथा मार्ग में आनेवाले गांवों में धार्मिक प्रचार करते हुए चातुर्मास माँगरोल पधारे । संघ ने आपका भव्य स्वागत किया ।

वि० सं० २०१० का ५२ वां चातुर्मास मांगरोल में

पूज्यश्री के पधारने से संघ में धार्मिक उत्साह बढा । सैकडों व्यक्ति प्रतिदिन प्रवचन सुनने के लिए व्याख्यान हॉल में उपस्थित होने लगे । प्रतिवर्ष के अनुसार तपस्वीजी श्री मदनलालजी महाराज ने तथा तपस्वीजी श्री मांगीलालजी महाराज ने आत्म लक्षे धोवनपानी के अगार से लम्बी तपश्चर्या प्रारम्भ की । तपश्चर्या की पूर्णाहुति के दिन आस पास के गांव वाले बड़ी संख्या में तपस्वीजी के दर्शन के लिए आये । ईस अवसर पर समस्त गांववालों ने अपना कारोबार बन्द रखा । गांव के कसाई खाने बंद रहे । जीव दया का प्रचार भी अपेक्षाकृत बहुत अधिक हुआ स्थानीय संघ ने इस अवसर पर एकता एवं सेवा भाव का जो परिचय दिया वह सब के लिए प्रशंसनीय था । बाहर से आने वाले दर्शनार्थियों की संघ ने अत्यन्त लगन पूर्वक सेवा की ।

उपाध्याय पं. रत्न श्री प्यारचन्दजी महाराज सा० के शिष्य मुनि श्री वर्धमानजी महाराज को यहाँ पुनर्दीक्षा हुई । सानन्द एवं सफल चातुर्मास समाप्त कर पूज्यश्री ने सन्त मण्डली के साथ विहार कर दिया । वेरा-वल संघ के अत्यन्त आग्रह से आप वेरावल पधारे । मार्ग में शारदाबाग और चोरवाड श्रीसंघ ने बडा

उत्साह बताया और पूज्यश्री क सेवा की। वेरावल में पूज्यश्री के विराजने से संघ ने खूब धर्मध्यान किया। पूज्यश्री ने वर्धमान मुनि को उपाध्यायजी श्री प्यारचन्दजी म. सा. की सेवा में समर्पित करने के लिए पं. रत्न मुनिश्री कन्हैयालालजी महाराज ठा. ३ को खानदेश की ओर भेजे। मुनि श्री कन्हैयालालजी म० खानदेश मध्यप्रदेश, राजस्थान गुजरात आदि प्रदेश में विहार कर पुनः पूज्यश्री की सेवा में पहुंच गये। पूज्यश्री वेरावल में कुछ काल बिराजकर हाटी के मालीये में पधारे। इधर जामजोधपुर के श्री संघ को पूज्य श्री हाटी के मालिये पधारने की सूचना मिली तो यहां के संघ ने सोचा कि पूज्य श्री का चातुर्मास अपने यहाँ कराया जाय तो जनता को बहुत लाभ मिलेगा। हमारे धार्मिक ज्ञान में वृद्धि होगी। यह सोचकर मुख्य श्रावक श्रीमान् सेठ पोपटलाल मावजीभाई, नगर सेठ श्री प्राणलालभाई सेठमाणेकचन्दभाई, छगनलाल भाई वीरचन्दभाई आदि श्रावकों का डेप्युटेशन पूज्यश्री की सेवा में आया और आगामो चातुर्मास अपने यहाँ करने के लिए विनंती करने लगा। जामजोधपुर निवासी श्रावक श्राविकाओं की इस प्रकार उत्कृष्ट श्रद्धा तथा विपुल उत्साह को देखकर आप श्री ने आगामी २०११ का चातुर्मास जामजोधपुर में सुखे समाधे द्रव्य, क्षेत्र काल भाव का आगार रखकर स्वीकार किया। श्रावकों में प्रसन्नता छागई। वहां से विहार कर आपश्री सोरठ,वंथली, उपलेटा, खारवीजालिया भायावदार पानेली, भ्राफा होते हुए आप चातुर्मासार्थ जामजोधपुर पधारे। श्रीसंघ ने आपका भव्य स्वागत किया।

वि. सं. २०११ का ५३ वां चातुर्मास जामजोधपुर में

जामजोधपुर में प्रतिदिन प्रातः प्रार्थना और बादमें आप व्याख्यान फरमाने लगे। व्याख्यान आदि के समय जनता की उपस्थिति अच्छी रहने लगी। धर्मध्यान खूब होने लगा। पूज्य श्री का शास्त्र लेखन का कार्य अत्यन्त उत्साह के साथ चलता रहा। पूज्यश्री के चातुर्मास के बिराजने से काफी संख्या में बाहर से दर्शनार्थी उपस्थित होने लगे। श्री संघ बाहर से आनेवाले सज्जनों की भोजनादि से खूब सेवा करने लगा। इस चातुमास काल में शास्त्रोद्धार समिति के उपप्रमुख जामजोधपुर के प्रतिष्ठित व्यक्ति एवं अत्यन्त धर्म प्रेमी चिन्तक श्रीमान पोपटलाल मावजीभाई महेता तथा श्रीसंघने अत्यन्त तन मन धन से सेवा बजाई। और चातुर्मास को सफल बनाने के लिए अथाग परिश्रम किया। श्रीमान सेठ पोपटलालभाई के बडे सुपुत्र प्राणलालभाई ने अत्यन्त उदारता का परिचय दिया। आगन्तुक सज्जनों की बडी सेवा की। आपने पूज्यश्री की सेवा करके ऊँचा आदर्श उपस्थित किया। प्रति वर्ष के अनुसार इस वर्ष भी घोर तपस्वीद्वय श्री मदनलालजी महाराज सा० तथा श्री मांगीलालजी महाराज ने ८२-दिन की कठोर तपश्चर्या की। तपश्चर्या की पूर्णाहुति की सूचना सर्वत्र पत्र पत्रिकाओं द्वारा भेजी गई। पत्रिकाओं में तपस्वीजो की तपश्चर्या का पूर्णाहुति दिन को सफल बनाने के लिये निम्न बातों का सूचन किया गया—

१—जीव हिंसा न करना २—मद्य मांस आदि दुर्व्यसनों का त्याग। ३—सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन ४—उभयकाल प्रभु प्रार्थना करना और दीन अनाथों की सेवा करना ५—उस दिन गौ, भैस आदि के बछड़ों को अन्तराय नहीं देना अर्थात् उन्हें दूध पिलाने में अन्तराय नहीं डालना। ६—आरंभ सारंभ की प्रवृत्ति का यथाशक्ति त्याग रखना।

इस सूचना को हजारों गांववालों ने अत्यन्त श्रद्धा के साथ पालन किया। जामजोधपुर में उस दिन जैन अजैन समस्त गांववाले भाईयों ने व्यापार बन्द रखा। सर्व कसाई खाने बन्द रखे। सामूहिक प्रार्थना का आयोजन किया गया। समस्त गांव वालों ने पूज्यश्री के आदेशानुसार ॐ शान्ति की प्रार्थना की। इस पूनीत अवसर पर बाहर से बडी संख्या में लोग उपस्थित हुए। स्थानीय संघ ने उनका भोजनादि से स्वागत किया। दान तपश्चर्या, त्याग प्रत्याख्यान, प्रभावनाएं आदि शुभ कार्य हुए।

शास्त्रोद्धार समिति की जनरल मिटिंग हुइ। शास्त्रोद्धार समिति के अध्यक्ष श्रीमान् सेठश्रीशान्तिलाल मंगलदास भाई का यहां के संघ ने भव्य स्वागत किया। समिति के सदस्यों ने गत वर्ष की प्रगति का हिसाब अवलोकन किया और आगामी कार्यो को ठोस बनाने के लिए प्रस्ताव पास किये। समिति के उप-प्रमुख श्रीमान पोपलालभाई मावजी ने इस अवसर को सफल बनाने में पूर्ण सहयोग दिया। जामजोधपुर के सेठ माणेकचन्दभाई, सेठ प्रेमचन्दभाई, श्रीमान बावजीभाई, श्रीमान दलपतभाई, श्रीमान प्राणलालभाई, श्रीमान छगनभाई, श्रीमान वीरचन्दभाई त्रीभूवनदासभाई आदि प्रमुखश्रावकों की सेवा धर्मप्रेम और चातुर्मास को सफल बनाने के लिए सतत प्रयत्नशीलता चीर स्मरणीय रहेगी। जामजोधपुर का चातुर्मास एक अनूठा चातुर्मास था। पूज्यश्री के बिराजने से आशातीत धर्म ध्यान हुआ। परोपकार के अनेक कार्य हुए। इस प्रकार चातुर्मास काल आनन्दपूर्वक सम्पन्न हुआ। जामजोधपुर में पूज्जश्री आठमाहतक बिराजमान रहे। और शास्त्र लेखन का कार्य करते रहे।

पंजाब केसरी का मिलनः—

उन दिनों में पंजाबकेशरी पं. श्री प्रेमचन्दजी महाराज का चातुर्मास राजकोट था। चातुर्मास समाप्ति के वाद पंजाबकेशरी ने श्रावको के साथ प्रार्थना की कि हम पूज्य आचार्यश्री के दर्शन करना चाहते हैं किन्तु स्वास्थ्य ठीक न होने से जामजोधपुर तक आना संभव नहीं। पूज्य श्री ने पंजाब केशरी की प्रार्थना स्वीकार करली और आपने पंजाबकेशरी को दर्शन देने के लिए जामजोधपुर से विहार कर दिया। पूज्य श्री गोंडल पधारे। पंजाब केशरी ने भी राजकोट से विहार कर दिया। दोनों सन्त रत्नो का मिलन गोंडल में हुआ। आपस में खूब ही स्नेह पूर्ण वातावरण रहा। पंजाब केशरीजी ने पूज्य श्री के द्वारा लिखे गये शास्त्रों का अवलोकन किया। शास्त्र कार्य देखकर पंजाबकेशरो बडे हि प्रभावित हुए और पूज्यश्री के इस महान परिश्रम की भूरि भूरि प्रशंसा करने लगे। कुछ दिन तक गोंडल में पूज्य श्री बिराजकर पुनः जेतपुर पधारे। जेतपुर में गोंडल संप्रदाय के महान् शास्त्रज्ञ आचार्य श्री पुरुषोत्तमजी महाराज सा० बिराज रहे थे। दोनों सन्तों का मिलन हुआ। आपस में खूब स्नेहभाव रहा। यहां कुछ दिन बिराजकर पूज्यश्री धोराजी होते हुए पुनः जामजोधपुर पधारे। यहां शेष काल बिराजकर आपने जामजोधपुर से विहार कर दिया। भ्राफा पानेली कोलकी उपलेटा होते हुए जेतपुर पधारे।

जेतपुर में राणपुर का श्रीसंघ चातुर्मास की विनंती करने के लिए पूज्यश्री की सेवा में आया। राण-पुर श्रीसंघ की उत्कृष्ट भावना को देखकर पूज्यश्री ने राणपुर के चातुर्मास की विनंती स्वीकार कर ली। चातुर्मास की स्वीकृति से राणपुर के संघ में प्रसन्नता छागई।

जेतपुर से पूज्यश्री सुलतान पुर पधारे। यहां से विहार कर आप विंछिया पधारे विछीयां से पालियाद होते हुए आप बोटाद पधारे। बोटाद श्रीसंघ ने आप का भव्य स्वागत किया। यहां आप शेषकाल तक बिराजे। खूब धर्मध्यान हुआ। नियमित व्याख्यान होते थे। बोटाद से विहार कर आप बीच के गावों को पावन करते हुए चातुर्मासार्थ राणपुर पधार गये।

वि. सं. २०१२ का ५४ वां चातुर्मास राणपुर में

राणपुर श्रीसंघ ने पूज्यश्री का भाव भीना स्वागत किया। राणपुर संघ सैकडों की संख्या में प्रतिदिन पूज्यश्री का प्रवचन सुनने के लिए व्याख्यान हॉल में उपस्थित होने लगे। तपस्वियों ने प्रतिवर्ष के अनुसार इस वर्ष भी लम्बी तपश्चर्या प्रारम्भ की। तपस्वी श्री मदनलालजी म० तथा तपस्वी श्री मांगीलालजी महाराज ने ८१ दिन की तपश्चर्या कि। तपश्चर्या की पूर्णाहुति के दिन समस्त बाजार बन्द रहे। हिंसा बन्द रही। विश्व शान्ति के लिए जाहिर प्रार्थना की गई। इस पुनीत अवसर पर हजारों व्यक्ति दर्शनार्थ

आये। संघ ने उनकी समुचित व्यवस्था की। स्थानीय संघ ने जिन शासन की प्रभावना वढाने में अपूर्व योग दान दिया। चातुर्मास में प्रातः प्रार्थना उसके बाद व्याख्यान, मध्याह्न में रास चौपाई एवं सायंकाल में प्रतिक्रमण के बाद धार्मिक चर्चाएं इस प्रकार विविध साधन का क्रम चलता रहा।

सानन्द और सफल चातुर्मास समाप्त कर पूज्य श्री ने नागनेश विहार कर दिया। आप सौराष्ट्र प्रांत के ग्राम नगरों को पावन करते हुए धंधुका पधारे। धंधुका का श्रावकसंघ बडा श्रद्धालु है। पूज्यश्री की यहां के संघने बडी भक्ति की। उस समय बरवाला संप्रदाय की व्याख्याता विदुषी महासतिजी श्री मोंघीबाई स्वामी विराज रही थी। उन्होंने पूज्यश्री की बडी सेवा की। पूज्यश्री के यहां प्रतिदिवस बाजार के बीच जाहिर प्रवचन होते थे। हजारों लोगों ने आप का प्रवचन सुना। व्याख्यान में प्रतिष्ठित नागरिक राज्य के अधिकारी भी उप स्थित होते थे। समयानुकुल धर्मध्यान अच्छा हुआ। बरवाला संघ विनंती के लिए आया योग्य समय जानकर पूज्यश्री ने विनंती मानकर बरवाला पधारे–यहां का श्री संघ बडा भाविक है, बरवाला संप्रदाय के मुनि श्री सोमचन्दजी महाराज तथा विदुषिमहासति श्रीमोंघीबाई बिराजमान थी। उन्होंने खूब ही स्नेह रखा, शास्त्र कार्य में अच्छा सहकार दिया वहां से फिर विहार कर वापिस धंधुका पधारे। धंधुका से विहार कर आप पाणेसणा होते हुए लिंबडी पधारे। लींबडी में कुछ दिन तक बिराजकर आप लखतर पधारे। वहां से ढांकी होते हुए आप वणी पधारे। विरमगांव निवासी जनता की यह कई वर्षो से इच्छा थी कि पूज्यश्री का चातुर्मास हमारे यहां हो। इसके लिए सदैव प्रयत्नशील रहते थे। पूज्यश्री के वणी पधारने के समाचार जब विरमगांव वालों को मिले तो यहाँ से श्रीमान वकील वाडीलालभाई सेठ माणेकचन्दभाई, श्री वाडीलालभाई मणीभाई, भगतसुदरभाई, नागरदासभाई, ईत्यादि बडी संख्या में चातुर्मास की विंनंती करने के लिए पूज्य श्री की सेवा में वणी आये। और चातुर्मास की विनंती करने लगे। इनके आग्रह वश सं. २०१३ का चातुर्मास विरमगाम करने की स्वीकृति दे दी। सौराष्ट्र के मध्यवर्ती क्षेत्रों को पावन करते हुए आप चातुर्मासार्थ विरमगाम पधारे। पूज्य आचार्य श्री के आगमन से सारे नगर में प्रसन्नता छा गई। वि, सं. २००६ में पं. मुनी श्री कन्हैया-लालजी म० सा. ने चातुर्मास किया था। उस समय विरमगाव में खूब धर्म प्रभावना हुई थी तभी से स्थानीय संघ की पूज्यश्री को चातुर्मास करवाने की तीव्र अभिलाषा थी। अब वह पूर्ण हुई। पूज्यश्री के प्रवचनों का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा।

वि. सं. २०१३ का ५५ वां चातुर्मास विरमगांव में

चातुर्मास काल में पूज्यश्री के नियमित प्रवचन होने लगे। प्रवचन में हिन्दू मुसलमान आदि सभी जाति और धर्म को मानने वाले उपस्थित होते थे। आप के प्रभावशाली प्रवचन से लोगों में खूब धार्मिक उत्साह बढा। प्रातः नियमित रूप से प्रार्थना होती थी। प्रार्थना में विशाल जन समूह उपस्थित होता था। प्रार्थना के नन्तर प्रथम पं. रत्न व्याख्याता मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराज का बाद में पूज्य आचार्य श्री का व्याख्यान होता था। व्याख्यान में आप प्रथम सूत्र का वांचन करते थे। व्याख्यान के अतिरिक्त पूज्यश्री अपना सारा समय शास्त्र लेखन की प्रवृत्ति में ही व्यतीत करते थे।

चातुर्मास काल में तपस्वीजी श्री मदनलालजी म० सा. तथा तपस्वीजी श्री मांगीलालजी म० सा. ने ९०–९० दिन की लम्बी तपश्चर्या की। जिसकी पूर्णाहुति ता. २७–९–४९ के दिन हुई उस दिन समस्त विरमगांम के कसाई खाने बन्द रखे गये। विश्व शांति के लिए ॐ शांति की प्रार्थना का आयोजन किया गया। उस दिन समस्त बाजार बन्द रहे। पूज्यश्री के एवं अन्य मुनिवरों के तप की महत्ता और प्रार्थना के महत्त्व पर प्रभावशाली प्रवचन हुए। प्रवचन का प्रभाव जनता पर खूब अच्छा पडा। विरमगांव के लिए यह चातुर्मास अपूर्व रहा त्याग प्रत्याख्यान आदि खूब हुए। इस प्रकार विविध धार्मिक प्रवृत्तियों से भरा यह

चातुर्मास सानन्द सम्पन्न हुआ। यहां दरियापुरी सम्प्रदाय की पूज्य महासतीजी श्रीइच्छाबाई ठाना २ से विराज मान थी। आप गत तीस वर्ष से छठ छठ की तपश्चर्या कर रही है।

विरमगांव में दीक्षा समारोह :

यहां के श्रीमान शाह भाईचन्दभाई चतुरभाई की सुपुत्री वैराग्यवति बा० ब्हेन वसुमती की मार्गशीर्ष शुक्ला पंचमी को बडे समारोह के साथ दीक्षा सम्पन्न हुई। दीक्षा के अवसर पर परम श्रद्धेय आचार्य श्री घासीलालजी म० सा. व उनके शिष्य प. रत्न मुनि श्रीं कन्हैयालालजी म० ठाना ६ तथा: श्री जमुबाई स्वामी बा० ब्र० म. स. श्री शारदाबाई स्वामी ठा ४, दरियापुरी सम्प्रदाय की महासतीजी श्री ईच्छाबाई ठा २, पू० आनन्दी बाई ठाना २ से विराजमान थी। दीक्षा विधि पं. मुनि श्री कन्हैयालालजी महाराज ने करवाई। विरमगांव के लिए यह दीक्षा महोत्सव ऐतिहासिक रहा। पूज्य श्री विरमगाँव में करीब एक वर्ष विराजे और शास्त्र लेखन का कार्य करते रहे। यहां के सेठ मणीलालभाई वकील श्री वाडीलालभाई सेठनागरदास भाई आदि सर्व श्री संघ बडाहि सेवाभावी और धर्मानुरागी है।

उस समय साणन्द में पूज्य महासतीजी श्री शारदाबाई स्वामी के समीप शाह खेमचन्दभाई नरसिंह भाई (नानाचन्द शान्तिदास के कुटुम्ब की सुपुत्री बालब्रह्मचारी कान्ताबेन (वय २०) की भागवती दीक्षा होने वाली थी। ईस शुभ प्रसंग पर पू० आचार्य श्री घासीलालजी महाराज सा० से प्रार्थना की गई थी कि आप श्री अवश्य दीक्षा समारोह उपर पधारें। किन्तु शास्त्र लेखन कार्य होने से आपने अपने प्रिय शिष्य पं. मुनी श्री कन्हैयालालजी म० ठाना २ को भेजे। गुरुदेव की आज्ञा से पं. मुनीश्री साणन्द पधारे साणन्द में बडे समारोह के साथ बा. ब्र. कान्ताबेन की दीक्षा सम्पन्न हुई। साणन्द में दीक्षा देकर पं. मुनिश्री अहमदाबाद संघ के अत्याग्रह से अहमदाबाद पधारे। अहमदाबाद दो मास तक विराजकर अनेक क्षेत्रों को पावन करते हुए आप पुनः पूज्यश्री की सेवा में विरमगांम पधार गये।

पू० महासतीजी श्री ताराबाई स्वामी दरियापुर संप्रदाय की एक महान विदुषी साध्वी रत्न है। जैन आगमों की आप पूर्ण मर्मज्ञ है। त्याग और तप की साक्षात् मूर्ति है। वो उस समय गीरधरनगर में बिराजमान थी। उनके पास अहमदाबाद में दीक्षा होने वाली थी। पू० महासतीजी की यह हार्दिक भावना थी कि इस शुभ प्रसंग पर पूज्य आचार्य श्रीघासीलालजी म० सा. पधारे और दीक्षा उनके करकमलों से हों। गीरधरनगर संघ के आगेवान सेठ रमणलालभाई आदि संघ के प्रमुख व्यक्तियों का एक डेप्युटेशन विरमगांम गया और पूज्य आचार्यश्री को अहमदाबाद पधारने की सनम्र प्रार्थना की महासतीजी की प्रार्थना को लक्ष में रखकर आचार्य श्री ने अपने पट्टशिष्य पं. रत्नमुनिश्री कन्हैयालालजी म० सा. को अहमदाबाद की ओर बिहार करवाया। अहमदाबाद में पं. मुनिश्री के पधारने के बाद दीक्षा समारोह बडे हि उत्साह के साथ सम्पन्न हुआ। उस समय पं. मुनिश्री कन्हैयालालजी म० सा. ने अहमदाबाद के सर्व सघों को प्रेरणा दी कि पूज्यश्री का शास्त्र लेखन कार्य अहमदाबाद में हो। और साथमें पूज्य आचार्य श्री को किस स्थल में रहने से संयम कि मर्यादा के साथ सुख शांति से कार्य हो सके एसा निर्मल स्थल की तपास में थे। इधर पूज्य आचार्य श्री ईश्वरलालजी म. बडे विद्वान और मर्मज्ञ अने महान उदार थे। उनका पं. मुनि श्री के प्रति बडा स्नेह और पूर्ण कृपा थी। उन्होंने फरमायाकि कन्हैयामुनि मेरी आज्ञा है कि पूज्य म. को अहमदाबाद लाओ और सरसपुर का स्थान बडा अच्छा है। वहां रह कर शास्त्र कार्य सम्पूर्ण करें। पुज्यश्री ने सेठ भोगीलालभाई को बुलाये और कहा कि देख यह महान जवाबदारी तेरे ऊपर है। आचार्य श्री को अपने यहां बुलाते हैं तो उन्हें राखजानना। सम्पूर्ण कार्य अपने वहां ही पूर्ण हो एसी मेरी ईच्छा है। में श्री संघ को आज्ञा देता हूं। उसके बाद पं. मुनिश्री से प्रेरणा लेकर अहमदाबाद के सर्व श्री

संघों का डेप्युटेशन विरमगांम पहुंचा और पूज्यश्री से अहमदाबाद पधारने की नम्र प्रार्थना करने लगा। अहमदाबाद संघ की ओर से श्रीमान् भोगीलाल छगनलालभाई, सेठ श्री शांतिलाल आत्मारामभाई ईश्वरलाल-भाई पोपटलालभाई सेठ जोसिंगभाई, तथा बरडिया सेठ श्री मुलचन्दजी प्रेमचन्दभाई माणेकचंदभाईआदि सज्जन थे। उपरोक्तमहानुभावों ने पूज्यश्री से अत्यन्त निष्ठापूर्वक अहमदाबाद पधारने की प्रार्थना की। विरमगांव का संघ भी यह पूनित अवसर अपने हाथ से जाने देना नहीं चाहता था। वह भी प्रार्थना करने लगा कि पूज्यश्री विरमगांम में स्थायी रूप से बिराजकर यहीं शास्त्रो का कार्य पूर्ण करें। अहमदाबाद श्री संघ का अत्याग्रह था कि पूज्यश्री द्वारा समाजके लिए आगम लेखन का कार्य हमारे यहां हो। क्योंकि आगम प्रकाशन की समस्त सुविधा जैसी अहमदाबाद शहर में हैं वैसी अन्यत्र मिलना दुर्लभ है। आचार्यश्री ने गम्भीरतापूर्वक विचार कर अहमदाबाद के श्रीसंघ की विनंती पर सम्पूर्ण विचार किया। अन्त में द्रव्य, क्षेत्र, काळ भाव आदि दृष्टियों को ध्यान में रखकर आपने अहमदाबाद पधारने की स्वीकृति फरमाई। अहमदाबाद संघ में प्रसन्नता छा गई। इस अवसर पर अहमदाबाद के संघ ने शास्त्रलेखन के कार्य को सफल बनाने वाले पण्डितों को दुशाले आदि देकर सम्मानित किये। पूज्यश्री ने अहमदाबाद की ओर अपनी शिष्य मण्डली के साथ विहार किया। विरमगांम के व्यक्तियों ने अश्रूपूर्ण नयनों से आपको विदा किया और पुनः क्षेत्र फरसने का निवेदन किया।

पूज्यश्री अपनी शिष्य मण्डली के साथ साणन्द पधारे। साणन्द श्रीसंघ ने खूब सेवा भक्ति की। साणन्द से सरखेज होते हुए आप पालडी सेठ पोपटलाल मोहनलालभाई के बंगले पर पधारे। उस समय दरियापुरी सम्प्रदाय के पूज्य आचार्यश्री ईश्वरलालजी म० सा० शाहपुर उपाश्रय में बिराज रहे थे। उनकी यह हार्दिक भावना थी कि पूज्यश्री घासीलालजी महाराज मेरे पास रहकर आगम लेखन का कार्य करें। पूज्यश्री की भी यही इच्छा थी। पूज्यश्री ईश्वरलालजी महाराज सा. की इच्छानुसार आप शाहपुर पधारे। दोनों आचार्य का मिलन बडा स्नेह पूर्ण था जैसे चंद्र सूर्य का मिलन हो। कुछ दिन शाहपुर में बिराजने के बाद पूज्यश्री घासीलालजी महाराज ने अपना कार्य क्षेत्र सरसपुर को चुना। सरसपुर के श्री संघ की भी यही इच्छा थी कि पूज्यश्री सरसपुर उपाश्रय में विराजकर आगमलेखन का कार्य पूरा करें। सरसपुर संघ की उत्कृष्ट भावना से प्रभावित होकर पूज्य श्रीइश्वरलालजी म. के आर्शिवाद व मांगलिक लेकर आचार्य श्री सरसपुर पधारे।

सरसपुर में विराजकर आप शास्त्रलेखन का कार्य करने लगे।

वि० सं. २० १४—से वि० सं, २० २८ तक के १६ सोलह चातुर्मास आपने सरसपुर (अहमदाबाद) में बिराजे। इधर मलाड श्रीसंघ के अत्याग्रह से पं. मुनिश्री कन्हैयालालजी म० सा को पूज्यश्री की मलाड चातुसर्मास करने की आज्ञा मिली। पूज्य गुरुदेव की आज्ञा को शिरोधार्य कर जिस दिन पूज्यश्री सरसपुर पधारे उसी दिन शायंकाल के समय मलाड (मुंबई) की ओर बिहार कर दिया। मलाडका दिव्य चातुर्मास कर वापिस पूज्यश्री की सेवा में पधार गये।

आचार्य प्रवर सतत अप्रमत्तभाव से शास्त्रलेखन एवं साहित्य निर्माण के कार्य में जुट गये। तपस्वीजी श्री मदनलालजी महाराज भी प्रत्येक चातुर्मास में लम्बी लम्बी तपश्चर्याएं करने लगे। तपश्चर्या की समाप्ति पर कई बार अहमदाबाद में समस्त कसाईखाने बन्द रहे थे। त्याग प्रत्याख्यान सामायिक, पौषध, उपवास संख्यातीत हुए। पूज्यश्री के विराजने से सरसपुर दर्शनार्थियों के लिए यात्रा धाम बन गया था। सन्तों और श्रावकवर्ग विविध धार्मिक प्रवृत्तियों में धर्म प्रभावना के आयोजनों में चातुर्मास काल एवं शेष काल पूर्ण होने लगा। राजस्थान, महाराष्ट्र, पंजाब सिन्ध गुजरात, मध्यप्रदेश, बंगाल आदि स्थानों से सतत

श्रावक वर्ग पूज्यश्री के दर्शन के लिए आता था और अपने को धन्य मानता था।

१६ वर्ष से आप सरसपुर में बिराजकर निरंतर साहित्य निर्माण का कार्य करते रहे। ८८ वर्ष की अवस्था में भी आपकी अप्रमत्त अवस्था को देखकर आश्चर्य होता था। तपस्वीजी श्री मदनलालजी महाराज अपने जीवन के अन्तिम समय तक बराबर निष्ठापूर्वक आपको सेवा करते रहें। मगज की अस्थिरता का दौरा कभी कभी हुआ करता था। छेले समय में भी उन्हें यही दोरा हो गया फिर भी आपने अंतीम अवस्था में तीन दीन चौविहार उपवास कर ता.१७-४-७२ को स्वर्गवास हो गये। तपस्वीजी के स्वर्गवास से आपके हृदय को अत्यन्त आघात लगा। क्योंकि तपस्वीजी का गुरुदेव पर अथाग प्रेम था। पूज्य श्री के प्रत्येक कार्य में ये वडी निष्ठा के साथ सहयोग प्रदान करते रहते थे। उनके अचानक स्वर्गवास से पूज्यश्री के हृदय में अत्यंत दारुण वेदना होती थी। संसार की स्थिति विचित्र है। सुख दुःख हर्ष शोक के चक्कर में फंसे हुए प्राणी क्षण क्षण में विपरित अनुभव करते रहते हैं। शरीर की क्षणभंगुरता का अनुभव कर पूज्यश्री ने अपने मन को शांत किया। समयज्ञ पं. मुनिश्री सतत सेवा में लीन थे हि। पूज्यश्री का शरीर दिन बदिन कमजोर होता जाता था फिर भी मनोवल वडा हिम्मतवान था। चलने फिरने की शक्ति कम होती गई फिर भी पन्द्रह दिनों में तेले तो चालू हि थे। बहुत बार मुनिश्री विनंति करते तो भी अपने ध्येय से कभी पीछे न हटे। अत्यन्त कमजोरी देखकर डॉ. का उपाय भी करने में श्रीसंघ ने कमि न रखी। बरडियाजी सा० का सारा परिवार सोलह वर्ष से सेवा करने में हर तरह कटीबध थे। पूज्यश्री के परमभक्त महानसेवा भावी श्रीरसीकलालभाई शाह जिन्होंने पूज्य आचार्य महाराज कि सेवा में व शास्त्रों के कार्य में सदा तन मन धन से संलग्न रहते हैं। गीरधरनगर के सेठ श्रीरमणलालभाई जीवराजभाई शास्त्रो के तत्व के अच्छे रसीक हैं। उनका सारा परिवार महाराज श्री का कृपा पात्र है। इन्होंने भी खूब उपचार करवाये फिर भी कुछ जोर नहीं चला। सेठ श्री भोगीलालभाई और उनका परिवार तथा सरसपुर श्री संघ तो अपूर्व सेवा बजा हि रहा था। सारा अमदावाद आदर्श भावना वाला है। साधु साध्वीजी सतत सेवा में पधारते रहते थे। सरसपूर एक भव्य तीर्थधाम जैसा लगने लगा।

१-१-७३ आचार्यश्री के शरीर में ज्वर का प्रारम्भ हो गया। यह समाचार वायु की गति से अहमदाबाद में फैल गये। महाराज श्री की व्याधि का पता चलते ही यहाँ के श्रीसंघ के सर्व आगेवान श्रावकगण बडे डॉक्टर को लेकर पूज्यश्री की सेवा में पहुँच गये। डॉक्टरों ने पूज्य श्री की शारीरिक गम्भीरता को देख उन्हें ऑक्सीजन पर रखना उचित समझा। तत्काल ऑक्सीजन की व्यवस्था कि गई। आचार्य श्री कि इच्छा न होने पर भी अनेक प्रयत्न करने बाद भी यह प्रयत्न फलदायी न हो सका। अवस्था सुधरने के बजाय उत्तरोत्तर बिगडती गई। ऐसी भयानक वेदना के समय भी आचार्यश्री के मुख पर अपार शान्ति एवं सोम्यता के दर्शन होते थे। घबरांहट बढती जाती थी किन्तु आंखों में एक अलौकिक दिव्यता प्रतीत होती थी। वही लौ थी जो दिये बुझने के पूर्व एक बार पूर्ण प्रकाश के साथ जल उठती है। ता० १-१-७३ को पं० मुनिश्री ने पूज्यश्री से पूछा। आप श्री के दिल में जो भी भावना हो सो फरमादें। दिलमें न रह जाय। तब पूज्यश्री ने फरमाया कि यह शास्त्रों का कार्य जो चल रहा है वह अधूरा न रह जाय ? मुनिश्रीने अर्ज कि की आप निश्चिन्त रहें कार्य सम्पूर्ण करने का प्रयत्न करेंगे। मुनि श्री ने कहा कि आपश्री हमको छोडकर कहां पधार रहें हों ? तब बोले कि छठे स्वर्ग में कब ? रात्रि में इस प्रकार आचार्यश्री की ईस अवस्था को देखकर पं० मुनिश्री कन्हैयालालजी महाराज ने पूज्य श्री से पूछा "क्या आपको संथारा करवा दें" इस पर पूज्यश्री ने हकारात्मक उत्तर दिया। इस पर श्री संघ से पूछकर पूज्यश्री को यावज्जीवन का चौविहार संथारा करा दिया। मुख पर तेज चमक रहा था। उस समय वे त्याग मुर्ति बनकर उत्थान मार्ग में लग रहे थे। संथारा अंगीकार करने के छह सात दिन पूर्व ही आपने अन्नाहार का त्याग कर दिया था।

सिर्फ प्रवाही पदार्थ लेते थे। लेकिन् उन पदार्थों के प्रति भी उनकी आत्मा से विरक्ति ही थी। अब आपने चतुर्विध आहार का त्याग कर पोष वदि १४ बुधवार को प्रात दश बजकर दस मिनीट दि० २-१-७३ को संथारा किया। इस अवसर पर दरियापूरी संप्रदाय के पू. आचार्य श्री शांतिलालजी महाराज ठा० ४ व वसुमतिबाई, तथा पूज्यश्री की शिष्या श्री इन्दुबाई वि. महासतिजी भी सेवा में पधार गई थी।

दि० ३ १ ७३ के सायंकाल के समय पं. मुनिश्री कन्हैयालालजी महाराज प्रतिक्रमण करा रहे थे। प्रतिकमण का पाठ सुनाते समय जहां मिच्छामि दुक्कडम् बोलना होता था वहां पूज्यश्री बड़ी सावधानी पूर्वक श्रवण करते थे। प्रतिक्रमण के बाद पूज्यश्री की शारीरिक स्थिति अत्यन्त चिन्तनीय हो गई। हजारों श्रावक गण उपाश्रय के प्रांगण में एकत्र होकर भजन कीर्तन करने लगे। संथारे की सूचना तार टेलिफोन आकाशवाणी द्वारा सर्वत्र भेजी गई। ता०३-१-को तो हजारों भाई बहन संथारे की सूचना मिलते ही सरसपुर पहुंच गये थे। पूज्यश्री की मिनिट मिनिट पर स्वास क्रिया तीव्र होती गई। और अंत में पोपवद अमावश्या और बुधवार ता. ३-१-७३ का रात्रि के नौ बजकर २९ मिनीट पर पूर्ण समाधि पूर्वक में वह ज्योति पुंज हंसते हंसते इस लौकिक पार्थिव देह को छोडकर उस महान ज्योति पुंज में एकाकार हो गया। इस संसार का सर्वनाता तोड आप अलौकिक स्थान में जा विराजे। पूज्य आचार्य श्री के परम भक्त दिल्लीवाले अनन्य सेवाभावी दानवीर शुद्ध श्रमणोपासक झवेरी श्रा कपुरचन्दजी सेठ किशनलालजी सा. महेताबचन्दजी सा हजारीलालजी सा. विज्याव्हेन निर्मला व्हेन विगेरे सर्व भक्त गण भी दो तीन दिन पहले से ही सेवा में उपस्थित हो गये थे जब तप और दान का अखूट प्रवाह चल रहा था।

उस समय आचार्यश्री के संथारा सीझने का समाचार अहमदाबाद नगर के इस ओर से उस ओर तक प्रसारित हो गये। इन समाचारों को संघ ने आकाशवाणी अहमदाबाद और दिल्ली केन्द्र से रात को १० बजे प्रसारित किये। प्रातः नौ बजे भी उन समाचारों को पुनः प्रसारित किये। अहमदाबाद के सभी समाचार पत्रो में पूज्यश्री के स्वर्गवास के समाचार प्रकाशित करवाये। उस दिन अहमदाबाद निवासियों ने अपना अपना कारोबार बंद कर दिया। आचार्य श्री के अन्तिम देह के दर्शनार्थ को अपार भीड उमड पडी। जिसने सुना वह दर्शनार्थ पहुँचा। बाहर से भी हजारों लोग दर्शनार्थ आये। चारो ओर भजन मण्डलियां उच्चस्वर से भजन गाने लगी। सारी रात भजन मण्डलियों के कीर्तन का अलौकिक आध्यात्मिक वातावरण बना रहा। विधिवत महाप्रयाण की सभी तैयारिया रात्रि में पूर्ण करली गई।

दूसरे दिन ता०४-१-७३ को प्रातः १० बजे पालकी में आचार्यश्री का पार्थिव देह रखा गया। आचार्य श्री का देह स्वेत वर्णवस्त्र कंबलों से एवं कुंकुम गुलाल से सुशोभित था। उस समय पालकी के चारों पायों की बोली बोलन के लिए श्रीमानों की सभा मण्डप में सभा हुई। प्रारंभ में पजाबी बहनों ने "तुमतरण तारण दुःख निवारण भविक जीव अराधनम्" इस स्तुति पाठ से कार्यवाही प्रारंभ हुई। छीपापोल संघके कार्यकर्ता श्रीमान पुंजालालभाईशाह ने यह घोषणा की कि "बोली में आनेवाली तमाम रकम शास्त्रोद्धार के कार्य में खर्च की जायगी। अभी तक २७ आगमो का प्रकाशन हुआ है और पांच आगमों का प्रकाशन का कार्य बाकी है। साथ ही पूज्यश्री का अन्य अप्रकाशित साहित्य भी प्रकाशित करना है। अतः इस पुनित कार्य में आप लोग अधिक से अधिक सहयोग प्रदान करें।" साथ ही इस पवित्र कार्य के प्रकाशन के लिए अभी कम से कम ढाईलाखरुपयां को नितान्त आवश्यकता है। तथा जीव दया के लिए भी अन्य फण्ड खास एकत्र करना है। पूंजालाल भाई के प्रभावशाली वक्तव्य का जनता पर अच्छा प्रभाव पडा और बात ही बात में २, ३१, १४८ रुपयों का विशाल फण्ड एकत्र हो गया। इसके अतिरिक्त जीव दया के लिए ३१ हजार रुपये एकत्र हुए।

भव्य श्मशान यात्राः—

ठीक १२–३० को हजारों कण्ठो से जय जय नन्दा जय जय भद्दा के गगनभेदि नारों से पालकी उठाई गई। भजन मण्डली और हजारों भक्त जनों के साथ पालकी सरसपूर जैनस्थानक से निकली और मुख्य रोड से होती हुई सरसपुर बाजार, कालुपुर के पुल पर से होकर साकरबाजार, मस्कतीमार्केट, रीलीफरोड, धनासुथार-की पोल, टंकशाल की पोल कालुपुर पुल के नीचे से होकर माणकचौक, फुवारा, पानकोरनाका, रीगलटोकीज, कृष्ण सीनेमा, स्वामीनारायण मन्दिर, छीपापोल, लुणसावाड दिल्ली चकला, शाहपुरदरवाजा होकर शाहपुर के शान्ति नगर स्मशान गृह में पहुँची। सडक के रास्ते चोराहे के मकान गेलेरियों एव उँचे स्थानों पर दर्शनार्थ हजारों जन समुदाय नजर आ रहा था। भक्त लोग मुट्टी भर भर कर अपने इस आध्यात्मिक नेता कि पालकी को ओर बदामें चाँवल रुपये पैसे उछाल रहे थे। तुमुल ध्वनि व जयनाद के बीच पालकी नीयत स्थान पर पहुँची। आचार्य श्री के देह को पालकी से निकाला गया। सामने मनोबंधकाष्ठ, चन्दन, हजारों नारियल, मेंवा, और घी का ढेर था उस पर आचार्यश्री का देह रखा गया। देह पर चन्दन के काष्ठ चारों ओर चुन दिये गये। चिता में अग्नि प्रज्वलित की गई। बात ही बात में आचार्यश्री का वह तेज पुंज देह चिता में सदा के लिए विलीन हो गया। मुनिश्रेष्ठ इस असार संसार से वह देह से भी सदा के लिए चले गये।

स्मशान भूमि में पूज्यश्री के धर्मप्रतीक जैसे मुखवस्त्रिका, शास्त्र के पन्ने, चादर आदि की आजीवन ब्रह्मचर्य के व्रत की बोली से ली गई। स्मशान भूमि में अन्य भी त्याग प्रत्याख्यान बहुत–बडी मात्रा में हुए। इस प्रसंग पर दिल्ली राजस्थान गुजरात सौराष्ट्र महाराष्ट्र से हजारों जनों ने पूज्य श्री के अन्तिम दर्शन कर अपने आपको धन्यता का अनुभव किया। पूज्य आचार्य श्री का पार्थिव देह आंखों से सदा के लिए ओझल हो गया। जिस उद्देश्य के लिए जीवन का प्रारंभ किया था उसमें संपूर्ण सफलता प्राप्त कर महाप्रयाण की ओर चल पडे। सभी की आंखो में श्रावण–मास की तरह अश्रू की झडियां लगी हुई थी। सचमुच सामान्य जन का भी वियोग अखरने लगता है तो फिर परोपकारी महान दयालु सन्त के विछोह से कोन पाषाण हृदय न पसीजेगा। शोक की सीमा होती है। किसी की मृत्यु के बाद केवल सिर पर हाथ रखकर अश्रु बहाते रहने से कुछ नहीं होता। इसलिए किसी की मृत्यु के बाद उसके द्वारा प्रारंभ किये हुवे आदर्श कार्य की रक्षा करना ही उनकी आत्मशान्ति का सब से श्रेष्ठ उपाय है। ऐसा करके ही अनुयायी वर्ग अपने गुरुवर के ऋण से उऋण हो सकता है। पूज्यश्री के गुणों का स्मरण करते हुए एवं उनके द्वारा प्रदर्शित मार्ग पर चलने से ही हमारा श्रेय निश्चित रूपेण होगा।

श्रद्धाञ्जली समर्पण

ब्यावर संघ का शोक प्रस्ताव

श्री महावोर जैन नवयुवक संघ ब्यावर की यह शोकसभा जैनाचार्य शास्त्रज्ञ पं० पू० मुनि श्री १००८ श्री श्री घासीलालजी म० सा० के अहमदाबाद में हुए स्वर्गवास पर हार्दिक शोक प्रकट करती है।

पं० मुनिश्री समाज की एक महान विभूति थे। आपका सारा जीवन शास्त्रों की अध्ययन व धार्मिक क्रियाओं में हि व्यतीत हुआ।

आप सादगी क्षमा व त्याग की दिव्य मूर्ति थे। पं० मुनिश्री शान्त स्वभावी सरल हृदय व उच्च-कोटि के सन्त थे जिसकी पूर्ति निकट समय में होना असंभव है। यह शोक सभा पं० मुनिश्री के प्रति हार्दिक श्रद्धाञ्जली अर्पित करती हुई वीर प्रभु से यही प्रार्थना करतो है कि दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करें।

मंत्री—स्था० महावीर जैन नवयुवक संघ ब्यावर (राजस्थान)

रतलाम ५-१-७३

श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन संघ, रतलाम की यह सभा शास्त्रों के मर्मज्ञ, प्रकाण्ड विद्वान श्री जैनाचार्य पूज्य श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज के अहमदाबाद में हुए स्वर्गवास पर शोक प्रकट करती है।

पूज्य श्री के स्वर्गवास से जैन समाज के एक महान जोतिर्मय अस्त हो गया है। आपने आगमों पर सुन्दर संस्कृत टीका निर्माण कर स्थानकवासी समाज के गौरव को बढाया है और जैन साहित्य की अमूल्य सेवा की है। आपके निधन से जो क्षति हुई वह अपूरर्णीय है। शासनदेव से प्रार्थना है कि स्वर्गीय आत्मा को शाश्वत शान्ति प्रदान करें

अध्यक्ष

स्थानकवासी जैन संघ रतलाम

निर्वाण सभा

कोठारी भवन (नाहर वाडा) शाहपुरा (राजस्थान)

दिनाङ्क ४ जनवरी १९७३ को प्रातः ८ बजे रेडियो द्वारा परम श्रद्धेय शास्त्रज्ञ पूज्य मुनि श्री १००८ श्री घासीलालजी म० सा० के अहमदाबाद में आकस्मिक निधन के दुःखद समाचार सुनकर स्थानीय संघ दिवंगत आत्मा को अपने हृदय की श्रद्धा अर्पित करने के लिए अत्रस्थ आगम अनुयोग प्रवर्तक पं० रत्न मुनिश्री कन्हैयालालजी महाराज सा० 'कमल' एवं उप प्रवर्तक मुनिश्री मोहनलालजी म० आदि ठाना चार के सानिध्य में एकत्र हुआ। श्रद्धेय मुनिश्री कमलजी म० सा० ने स्वर्गीय मुनिश्री के जीवन पर प्रकाश डालते हुए कहा-"स्वर्गीय पं० मुनिश्री घासीलालजी महाराज एक उच्चकोटि के विद्वान एवं शास्त्रमर्मज्ञ थे। उनका ज्ञान दर्शन एवं चारित्र उच्चकोटि का था। उन्होंने विविध ग्रन्थों का निर्माण करके समाज पर एक महान उपकार किया। आपके स्वर्गवास से समाज को महान क्षति हुई।" अन्त में पं० मुनिश्री ने श्रोताओं से जैनाचार्य पं मुनिश्री घासीलालजी महाराज की याद में भोजन के समय अपने-अपने इष्ट देव का स्मरण करने की प्रतिज्ञा करने को कहा। उपस्थित श्रोताओं ने प्रतिज्ञा सहर्ष स्वीकार की। संघ ने दो मिनीट मौन रहकर श्रद्धाञ्जली अर्पित की।

विशेष मुनिश्री ने फरमाया कि 'शोक' का अपने यहा कोई स्थान नहीं है इसलिए इस शभा को शोक सभा न कह कर यदि निर्वाण सभा कहें तो अति उपयुक्त होगा।

मंत्री नाथूलाल कोठारी स्था० जैन संघ शाहपुरा (राज०)

वर्धमान स्था० जैन संघ भूपालगंज भीलवाडा (राज०)

वयोवृद्ध पं० रत्न पूज्यश्री घासीलालजी महाराज साहब के स्वर्गवास के समाचार सुनकर सारा जैन समाज स्तब्ध रह गया। व सर्वत्र शोक छा गया। इस हेतु शान्ति भवन में दिनाङ्क ६-१-७३ को प्रातः ७ बजे संघ की बैठक रखी गई। जिसमें ४ लोगस्स का ध्यान कर श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए कहा-पूज्यश्री के स्वर्गवास से समाज को महान क्षति हुई है। ये उच्चकोटि के प्रभावशाली सन्त थे! आपका त्याग महान् था। आपने जैन शास्त्रों पर टीका लिखकर स्था. जैन समाज पर महान उपकार किया। वीर भगवान स्वर्गस्थ आत्मा को चिर शान्ति प्रदान करें।

आपका

जसवंतसिंह डागलिया व्यवस्थापक-स्थानकवासी जैन संघ भूपालगंज (भीलवाडा)

रायपुर (मेवाड) १०-१-७३ पोष शुक्ला ८ अष्टमी बुधवार

पवित्रात्मा अप्रमत प्रबल आगम ज्ञान के महान-रक्षक पूज्यप्रवर आचार्य श्री घासीलालजी महाराज

भंवरें फूलों में से रस पान कर जानता है, परन्तु वह अपने मुख से उस पंकज का गुण वर्णन नहीं कर सकता है। लेकिन भंवरा आनन्द से तन पोषण करता रहता है। और रस आश्रय को वह कभी नहीं

भूलता है। इस भांति–हे पूज्यवर आपके द्वारा निर्मित आगम टीका मार्ग सर्वजनहिताय, आत्मोत्थान संयमी जीवन के जीवों को आलम्बन रहेगा। आप श्री का अथाग परिश्रम प्रकाश से भव भ्रमण गतियों से भव्य प्राणी पृथक बने, एवं सर्वोत्तमविवेक, बुद्धिप्राक्रम प्रकट करने का सरल साधन वीतराग वाणी का विशाल विस्तार करके सिद्धान्तप्रेमियों को सन्तुष्ट किये हैं।

धन्य है आपकी क्षमता को–शास्त्र लेखन कार्य में भी द्वेपीजनों ने अनेकबार अगणित विघ्नघटनाए उपस्थित की, इन सर्वको समभाव से सहते हुए आप अपने ध्यय से विचलित न होकर लोंकाशाह से प्रामाणिक आगकों की शुद्ध श्रद्धा रूप संस्कृत में सुन्दर टीका चूर्णि की रचना पूर्ण करी। विशेप अज्ञान अन्धकार भरे वांचन से वाचकों को श्रेष्ठ मार्ग बताने का आशय से आचार्य श्री ने विविध साहित्य प्राकृति एवं संस्कृत भाषा में कल्पसूत्र तत्त्वार्थसूत्र न्याय सिद्धान्त व्याकर्ण कोप काव्य गद्य पद्य मय ग्रन्थ के उपरान्त अनुपम अनेक स्तोत्रों जैसे वर्धमान भक्तामर, कल्याण मन्दिर नवस्मरण तीर्थंकर चरित्र के सिवाय त्यागी वैरागी संत संयमीओं के थोकरूप अष्टक गुणानुवाद की रचनाकर आपने जयमाला का धवल यश प्राप्त किया था। यशस्वीआचार्य श्री मुझे भी सेवा में रखकर गुरुगम्य और तत्त्वज्ञान का सींचन कर दृढ वर्तिका स्थंभ बनाया, एक वर्ष तक आपकी सेवा का लाभ लेकर पुनः अहमदाबाद सरसपुर उपाश्रय में आचार्य श्री के मुखार्विन्द से मांगलिक श्रवण कर क्रमसर विचरते हुए राजस्थान मध्य रायपुर (मेवाड) में ठहराह हुवा था। प्रात काल प्रार्थना के पश्चात कम्पोडर श्री चांदमलजी सा. रेडिया के समाचार सुना कि अहदाबाद विराजित पूज्य आचार्य श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज का स्वर्गवास हो गया। स्वर्गवास होने का सुनकर मुनिश्री अत्यन्त दुखानुभव से शोक सभा में पूज्य श्री का जीवन वृन्तात के अन्तिम भावाञ्जली दी गई। एसे ज्ञान गुण आचार वान आचार्य दयालु देव की समाज ओर चतुर्विधसंघ में तेजस्वी संत रत्न की क्षति की पूर्ति होना दुर्लभ है। तथा आश्रयरत शिष्य एवं भक्तगण निराधार हो गये हैं। हे पूज्यवर ! आप की निर्मित कृतियों के सहारे आनन्द मंगल और कल्याण करने की भावना रखेंगे।

पूज्य श्री का चरण रज शुभेच्छुक। मुनि हस्तीमल (मेवाडी)

श्री जैन श्वेताम्बर श्री संघ बासवाडा (राज.) श्रीमान पूज्य गुरुवर श्री १०८ श्री कन्हैयालालजी महाराज की सेवामें शोक सन्देश––

श्रीमान पूज्यपाद गुरुवर महाराज सा० श्री पूज्य श्री घासीलालजी महाराज के स्वर्गवास के समाचार-सुनकर बांसवाडा समाज के जैन बन्धुओं को अत्यन्त ही वेदना का अनुभव हो रहा है। महाराज श्री का जैनधर्म के प्रसार एवं प्रचार में जो सहयोग रहा है वह चिरस्मरणीय रहेगा। हम सभी ऐसा समझते हैं कि हमारे बीच से एक बहुत बडा विद्वान एवं प्रवक्ता उठ गया है। जिसकी क्षतिपूर्ति इस समाज में होना असम्भव है।

आपकी विद्वत्ता एवं ओजस्वी प्रवचन सभी श्रावकों को गद्गद् कर देता था एवं प्रेरणामय होता था। इस वेदनामय स्थिति में हम सभी जैन बन्धु ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि स्वर्गस्थ आत्मा को परम शान्ति प्रदान करे एवं इस क्षति से जो समाज में वेदना छायी हुई है, इस वेदना को सहन करने की शक्ति उन्हें प्रदान करें।

सेक्रेटरी

श्री जैन श्वेताम्बर संघ .ओसवालवाडा बासवाडा। (राजस्थान)

राजस्थान स्था० जैन संघ शाहीबाग अहमदाबाद १४।२।७३

आज रविवार ता० १४।१।७३ को श्री राजस्थान स्थानकवासी जैन संघ की श्रद्धाञ्जलि सभा संघ

के भवन में श्री कजोडीमलजी सा. की अध्यक्षता में हुई । उसमें निम्न प्रस्ताव पारित हुआ–आज रविवार ता० १४।१ ७३ श्री राजस्थान स्थानकवासी जैन संघ की यह सभा परम पूज्य जैनचार्य प्रात स्मरणीय प्रखर शास्त्रज्ञ, परमत्यागी व शास्त्रोद्धारक पं० पू. मुनिश्री घासीलालजी महाराज सा. के देवलोक पर पूर्ण आघात महसूस करती हैं । आज के इस विलासी युग में इस प्रकार की महान विभूति की क्षतिपूर्ति होना अत्यन्त दुष्कर है। समाज को शास्त्रोद्धार के रूप में दी हुई उनकी सेवा के लिए समाज उनका चिरऋणी है और रहेगा । शासनदेव से प्रार्थना हैं कि सद्गत की आत्मा को शान्ति प्रदान हो तथा संत एवं श्रावक समाज को धैर्य प्रदान हो ।

सभापति

राजस्थान स्थानकवासी जैन संघ । शाहीबाग (अहमदाबाद)

श्री वर्धमान स्था० जन श्रावक सघ । मदनगन्ज-किशनगढ (राज) ९।१।७३

मन्त्री श्री वर्द्धमान स्थानकवासी जैन संघ अहमदाबाद

आपके वहां पर आगम रत्नाकर पूज्य आचार्य महाराज श्री १००८ श्री घासीलालजी म० सा. के आकस्मिक कालधर्म को प्राप्त होने के समाचार जानकर स्थानीय श्रावक संघ को गहरा शोक हुआ । आपके द्वारा की गई आगम सेवा युगोयुगों तक जीवन को प्रकाश देती रहेगी । वयोवृद्ध होते हुए भी आपकी आगम अनुवाद के कार्य में तन मन से की गई निरन्तर सेवा के लिए जैन जगत सदा ऋणी रहेगा। आप प्रकाण्ड विद्वान गम्भीर चिन्तक एव शास्त्रीय ज्ञान के अनूठे उपासक थे । आपकी कृपा से ही बत्तीस आगमों का तीन भाषाओं में अनुवाद प्रकाशित हो सका है आपके कालधर्म के प्राप्त होनें से स्थानकवासी जैन समाज की जो अपूरणीय क्षति हुई है उनकी पूर्ति होना असम्भव है । स्थानीय श्रावक संघ ने एक जनरल सभा बुलाकर पूज्यश्री के प्रति अपनी हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित की । एवं चार लोगस्स के ध्यान द्वारा शासनदेव से पूज्यश्री की आत्मा को परम शान्ति के लिए प्रार्थना की गई। उनके चमत्कारिक जीवन की भूरि भूरि प्रशन्सा की गई ।

आपका चम्पालाल चोरडिया स्था. जैन संघ मदनगंज (कीशनगढ)

एस. एस. जैन सभा । फतेहाबाद (हिसार) हरियाणा

यहां पर पं. श्री शान्तिऋषि जी म. सा. तथा विजयऋषिजी महाराज श्री सुख साता में बिराजमामान है ।

तरुण जैन के दिनाङ्क १६।१।७३ के अंक में पूज्यश्री १००८ श्री पं. रत्न शास्त्रों के प्रकाण्ड विद्वान, अनेक भाषाओं के ज्ञाता श्री घासीलालजी महाराज के स्वर्गवास के समाचार पढने को मिले । महाराजश्री को एवं संघ को समाचार पढ़कर अत्यन्त दुःख हुआ । पूज्यश्री समस्त जैन संघ के उपकारी थे । उन्होंने सुत्रों पर विद्वतापूर्ण टीका रचकर महद् उपकार किया है और जैन समाज के नाम को रोशन किया है । उनका पार्थिव देह अब हमारे सामने नहीं रहा किन्तु यशः शरीर सदा अमर रहेगा ।

पूज्यश्री ने जो हमें मार्ग बताया है उन्हीं मार्ग पर चलने से ही समाज का एवं हमारा श्रेय होगा । पूज्यश्री की स्वर्गस्थ आत्मा सदा चिर शान्ति का अनुभव करे यही शासन देव से प्रार्थना करते हैं ।

व्यवस्थापक

स्था० जैन संघ हिसार हरियोणा

स्थानकवासी श्रावकसंघ होलनान्था (धूलिया) महाराष्ट्र

सेवामें निवेदन है कि............

हमारे यहां पर पं० मुनिश्री १००८ श्रमण श्रेष्ठ श्री समरथमलजी महाराज के सुशिष्य तपस्वी श्री

मुनिश्री १००८ श्री चंपालालजी महाराज सा० ठाना ४ चार से मुखसाता में विराजमान है।

आज प्रातः ता० ४-१-७३ को रेडियो पर जैनाचार्य जैनधर्म दिवाकर पं० रत्न श्री पूज्य गुरुदेव श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज सा० का स्वर्गवास होने का समाचार सुनते ही समाज में दुःख की छाया फैल गई। समाज को इस महिने में पूज्य गुरुदेव श्रमणश्रेष्ठ समरथमलजी महाराज सा० के स्वर्गवास का भार अभी कम हुआ ही नहीं था कि पूज्य गुरुदेव श्रीघासीलालजी म० सा० के स्वर्गवास का दुःख दुगुवा हो गया। आज सारे जैन समाज में दुःख की छाया छा गई। इस महिने में इन दो महान सन्तों के वियोग से समाज में बहुत भारी क्षति हो गई। आज हमारे यहां दुकाने बन्द रखी गई। शालाएं, पाठशालाएं, हायस्कूल बन्द रखे गये। आज का दिन सभी भाई बहनों ने महाराजश्री के सानीध्य में रहकर जैन स्थानक में जाकर दयाएँ, उपवास, पोषध, सामायिकें आदि धर्मध्यान किया।

आज दुपहर में दो बजे पू० गुरुदेव श्री चम्पालालजी म० की उपस्थिति मे शोक सभा का आयोजन किया गया। और चार लोगस्स का कायोत्सर्ग करके पूज्यश्री घासीलालजी महाराज को श्रद्धांजली अर्पित करते हुए पू० गुरुदेव श्री चंपालालजी महाराज ने फरमाया कि इस माह में समाज के दो महान पुरुषों के स्वर्गवास होने से जैन समाज के दो महान रत्न हीरा मोती हमसे बिछड़ गये। जिसकी पूर्ति होना असंभव हैं और पूज्य गुरुदेव श्री घासीलालजी महाराज चारित्रशील आदर्श और उज्ज्वल जीवन बिताने वाले एक महान सन्त थे। आज हमारा सारा समाज उनके वियोग में दुखी है। इस पुण्यात्मा को शासनदेव चिर शान्ति प्रदान करे यही प्रभु से प्रार्थना है।

वीनीत

स्थानकवासी जैन श्रीसंघ होलनांथा (जि० धूलिया) महाराष्ट्र

शास्त्रोद्धारक के प्रति श्रद्धांजली। (वैद्य अमरचन्द जैन वरनाला पंजाब)

यह संसार प्रवाह रूप से अनादि है। इसमें समय समय अनेक भव्य आत्माओं ने जन्म लेकर स्व-पर का कल्याण किया। भगवान श्री महावीर की वाणी में "तिन्नाणं तारयाणं"। को चरितार्थ किया। धर्म पथ से भ्रष्ट भूले भटके जनमानस को सन्मार्ग प्रदान किया। देश समाज और राष्ट्र के उत्थान में सहयोग दिया। विश्वबन्धु भगवान श्री महावीर प्रभु के सत्य संयम तप आदि गुणों तथा अहिंसा अनेकान्त अपरिग्रहवाद आदि सिद्धान्तों की अमृतधारा का अजस्त्र स्त्रोत जन जन के मानस में बहाकर सत्पथ मोक्ष पथ का अधिकारी बनाया।

ऐसे ही एक महान पुण्य आत्मा नर पुंगव आध्यात्मिक जगत के नेता, आत्मबल के प्रखर अधीश्वर जैनागमो के टीकाकार आध्यात्मिक धन से धनी, तपसंयम उत्कृष्ट मंगलमूर्ति आचार्य प्रवर श्री घासीलालजी महाराज थे। जिन्होंने १६ वर्ष की लघु अवस्था में उस दिव्य आध्यात्मिक दिव्य संयम पथ को ग्रहण कर भौतिकवाद के चकाचौंध में फसे मानव को आश्चर्यान्वित कर दिया। पूज्यश्री ने हजारों मानवों को सत्पथ बताकर उनका महान् श्रय किया। ऐसी महान् आत्मा के चले जाने से समाज सचमुच हत भागी बन गया। उन महान आत्मा को चिर शान्ति मिले यही भगवान से प्रार्थना करता हूँ।

स्थानक वासी जैन संघ मालेगांव

स्थानकवासी समाज के वयोवृद्ध शास्त्रोद्धारक पूज्य श्री के स्वर्गवास के समाचार पढकर समस्त मालेगांव संघ को गहरा आघात लगा है। पूज्य श्री उच्चकोटि के सन्त थे। आप जैनधर्म दिवाकर के विश्रुत विरुद्ध से विभूषित थे। आपने ५० वर्ष तक विपुल साहित्य का निर्माण किया। आपकी कवित्व प्रतिभा भी अनूठी थी। पूज्य श्री एक असाधारण मनीषी, वाग्मी, निस्पृह महापुरुष थे। आपके जीवन का ज्यों ज्यों परिचय प्राप्त होता है, त्यों त्यों उनके उच्च महान व्यक्तित्व के प्रति श्रद्धा और आदर का

भाव ही उत्पन्न होता है।

जैन दिवाकर का भौतीक देह आज विद्यमान नहीं है तथापि उनका अक्षर देह युग–युग तक विद्यमान रहेगा, और धर्म प्रेमी जनता को पवित्र प्रेरणा प्रदान करता रहेगा। आपने आगम सुत्रों पर चार भाषाओं में टीका लिखकर आगम साहित्य को सर्व सुलभ बनाया है। आपके इस महान कार्य से समस्त जैन समाज उपकृत हुआ है। आपकी आत्मा को चिर शान्ति मिले यही समस्त संघ की शुभ कामना है।

स्थानकवासी जैन संघ मालेगाव

वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ जयपुर

जयपुर संघ ने शोक सभा की और निम्न प्रस्ताव पास किया—

आज की यह शोक सभा ज्ञान, दर्शन चारित्र के महान उपासक संस्कृत प्राकृत आदि अनेक भाषाओं के विद्वान आचार्य श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज के दुःखद अवसान पर गहरा शोक प्रगट करती है। उस विद्वान महापुरूष ने क्रोध, मान, माया, लोभ आदि अठारह पापों से दूर रहकर मानव जीवन को अपने गहरे शास्त्रीय ज्ञान के चिन्तन मनन से जीवनपर्यन्त आलोकित किया हैं। इस वयोवृद्ध अवस्था में लगातार शास्त्र लेखन कार्य को सुव्यवस्थित रूप संचालन करते थे। उन महान आत्मा को चिर शान्ति मिले यही हमारी हार्दिक कामना है। हम भी उनके आदर्श जीवन से प्रेरणा लेकर जीवन को उन्नत बनावे।

स्थानकवासी जैन संघ जयपुर

परम पूज्य प्रखर शास्त्रवेत्ता जैन धर्म दिवाकर पं० रत्न श्री घासीलालजी महाराज के स्वर्गवास के दुःखद समाचार पढकर अत्यन्त दुःख हुआ। पूज्य श्री ने जैन समाज को अपने आजीवन प्रयत्नों व कई प्रकार के विघ्नों का सामना करके भी जो धार्मिक साहित्य दिया है उसके लिए सारा समाज अनन्त समय तक उनका आभारी रहेगा। उन्होंने अपना सारा जीवन इस यार्थ में लगा हि दिया।

पूज्यश्री एक महान चरित्रवान सन्त थे। त्याग, तप और ज्ञान के अवतार थे। करीब ५० वर्ष तक मैं पूज्यश्री की सेवा में रहकर उनके साहित्य निर्माण में सहयोग देता रहा हूँ उनके स्वर्गवास से जो समाज में महान क्षति हुई है उसकी पूर्ति निकट भविष्य में असंभव हैं।

पूज्यश्री के सदुपदेश से केवल जैन धर्मावलंबी ही अपने धर्म पर दृढ नहीं हुए वरन् अन्य मतवाले अनेक लोगों ने भी जैन धर्म स्वीकार किया। हिंसा में रत रहने वाले कुछ राजा महाराजाओं ने भी आपके उपदेश से हिंसा का त्याग किया। मेवाड प्रान्त के हजारों गांवों में आपने जीव हिंसा बन्द करवाई। उनकी इस महिमा को देखने का मुझे सौभाग्य मिला है। पूज्यश्री के त्याग तप एवं आदर्श जीवन का स्मरण करता हुआ इस महापुरुष के चरणों में श्रद्धांजलि अर्पण करता हूँ।

पं० मूलचन्द व्यास नागोर (राजस्थान)

[पं० मुनि श्री कन्हैयालालजी म० 'कमल'] महा श्रमण का महा प्रयाण

विश्ववंधु भ० श्री महावीर प्रभु के अनन्त ज्ञान गगन से अवतरित सदा शिव श्री सुधर्मा के सहस्र कमलदल में समाहित और श्रुत सेवियों की अविछिन्न परम्परा में प्रवहित श्रुत पूज्य प्रवर श्री घासीलालजी महाराज के भागीरथ प्रयत्नों से त्रिपथगा (संस्कृत, हिन्दी, और गुजराती में) बनकर भव्य भावुक जनों के हृदयों को चिरकाल से अप्लावित कर रही थी। वह युगसृष्टा श्रुतधर इस मृत्युलोक से महाप्रयाण कर अमरत्व की ओर अग्रसर हो रहा है। उनकी अमर कृतियां पाकर जिज्ञासु जगत कृतकृत्य है एवं श्रद्धावनत है।

श्रद्धेय महाश्रमण के सान्निध्य में रहकर उनकी ज्ञानगरिमा महती महिमा और सम्परायलघिमा को समझने का सुअवसर मुझे प्राप्त हुआ है। अतः मेरा यह दृढ विश्वास हैं कि उस युग प्रधान पुरुष का

पावन जीवन युग युगान्तर तक मुमुक्षु जीवों का मार्गदर्शक बना रहेगा।

मुनि कन्हैयालाल कमल टोंक (राजस्थान)

श्री वर्द्धमान स्था० जैनसंघजोधपुर (राज.)

श्रीमान् प्रमुख सा. । सरसपुर उपाश्रय,

हमारे यहाँ पर प्रातः स्मरणीय बालब्रह्मचारी महामहीम आचार्य प्रवर श्री श्री १००८ पूज्य श्री हस्तीमलजी म० सा. आदि ठाना ६ सुख शान्ति पूर्वक विराजमान है। जैनागम विशारद परम पूज्य श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज सा. का अल्पकाल की अस्वस्थता के बाद संथारे पूर्वक स्वर्गवास के समाचार जानकर चतुर्विध संघ को महान् खेद हुआ। दिनाङ्क ४।१।७३ को व्याख्यान बन्द रहा। एवं जैन स्थानक घोडों के चौक जोधपुर में शोक सभा मनाई गई। शोक सभा में सर्व प्रथम श्रध्देय आचार्य श्री ने उपस्थित श्रावक संघ के समक्ष पूज्यश्री घासीलालजी म० सा० के शान्त-दान्त तपस्वी जीवन पर प्रकाश डालते हुए श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। और उपस्थित सभी ने चार लोगस्स का निर्वाण कायोत्सर्गकर स्वर्गीय आत्मा के चिर शान्ति की कामना की।

पूज्य आचार्य श्री घासीलालजी महाराज सा० जैसे महान स्थविर के स्वर्गवास से श्रमणसंघ की एक महान विभूति उठ गई है जिसकी निकट भविष्य में पूर्ति सम्भव प्रतीत नहीं होता। स्वर्गस्थ पूज्यश्री का अहिंसा प्रेम, साधनाशील जीवन और श्रुतसेवा की प्रबल लगन आदि सद्गुणों को श्रध्देय पूज्य आचार्य श्री आदि मुनि मण्डल भूल नहीं सकतें। स्वर्गस्थ पूज्य श्री अमर शान्ति के अधिकारी हो यही हार्दिक कामना है।

मन्त्री स्था. श्रा. संघ जोधपुर

आगमोद्धारक महापुरुष का स्वर्गवास

हमारे यहाँ पूज्य बहुश्रुत श्री १००८ श्री समर्थमलजी महाराज सा० के सुशिष्य श्री वीरपुत्रजी म० (श्री घेवरचन्द्रजी महाराज सा.) पं. मुनि श्री रतनचन्द्रजी महाराज सा. आदि ठाना ४ विराजमान हैं। ता० ५।१।७३ को प्रातः काल श्री बादरमलजी सा० अन्याव से यह मालूम हुआ कि अहमदाबाद में पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज सा० का संथारा पूर्वक स्वर्गवास हो गया। यह सुनकर हृदय को बडा आघात लगा। व्याख्यान तो बन्द रखा गया किन्तु श्री वीरपुत्रजी म० सा० ने पूज्य श्री के जीवन के सम्बन्ध में फरमाया कि पूज्जश्री घासीलालजी म० सा० अपने समय के अद्वितीय व्याख्याता, महाप्रतिभाशाली महान ज्योतिर्धर पूज्य श्री जवाहराचार्य के पाटवी ज्येष्ठ शिष्य थे। आपने छोटी उम्र में दीक्षा ली और ज्ञानाभ्यास में तल्लीन रहने लगे। मनोयोग पूर्वक एकाग्रता के साथ पूर्ण परिश्रम करके आप संस्कृत प्राकृत आदि सोलह १६ भाषा के धुरन्धर विद्वान बने। स्थानकवासी जैन समाज की मान्य आगम बत्तीसी पर अब तक स्थानकवासी मान्यता के अनुरूप संस्कृत टीका नहीं थी। इसलिए आपने बत्तीस ही आगमों पर संस्कृत में टीका लीखी। यह स्थानकवासी समाज के लिए महान् गौरव का विषय हैं। इस भगीरथ प्रयत्न को सम्पूर्ण पार पहुँचाने के कारण आपको आमोद्धारक कहना सर्वथा उपयुक्त है। इतने बडे ज्ञानी होते हुए भी आपको किञ्चित मात्र भी अभिमान नहीं था। इसी कारण जब कहीं शास्त्रों का गूड रहस्य समझमें नहीं आता तो आप पूज्य बहुश्रुतजी म० सा० से समाधान प्राप्त करते थे, श्री बहुश्रुतजी म० सा० के समाधान से आपको पूर्ण सन्तोष हो जाता था। इसलिए श्री बहुश्रुतजी म० सा० के प्रति आपकी 'गाढ़ श्रद्धा थी अतएव आप बहुश्रुत श्री समर्थमलजी म० सा० को श्रुतकेवली' कहकर पुकारते थे। आप श्री बहुश्रुतजी महाराज सा० से उम्र में और दीक्षा में काफी बडे थे। फिर भी आप उनके प्रति बहुमान पूर्वक भक्तिभाव और श्रद्धा रखते थे।

भाव ही उत्पन्न होता है।

जैन दिवाकर का भोतीक देह आज विद्यमान नहीं है तथापि उनका अक्षर देह युग–युग तक विद्यमान रहेगा, और धर्म प्रेमी जनता को पवित्र प्रेरणा प्रदान करता रहेगा। आपने आगम सुत्रों पर चार भाषाओं में टीका लिखकर आगम साहित्य को सर्व सुलभ बनाया है। आपके इस महान कार्य से समस्त जैन समाज उपकृत हुआ है। आपकी आत्मा को चिर शान्ति मिले यही समस्त संघ की शुभ कामना है।

स्थानकवासी जैन संघ मांलेगाव

वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ जयपुर

जयपुर संघ ने शोक सभा की और निम्न प्रस्ताव पास किया—

आज की यह शोक सभा ज्ञान, दर्शन चारित्र के महान उपासक संस्कृत प्राकृत आदि अनेक भाषाओं के विद्वान आचार्य श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज के दुःखद अवसान पर गहरा शोक प्रगट करती है। उस विद्वान महापुरूष ने क्रोध, मान, माया, लोभ आदि अठारह पापों से दूर रहकर मानव जीवन को अपने गहरे शास्त्रीय ज्ञान के चिन्तन मनन से जीवनपर्यन्त आलोकित किया हैं। इस वयोवृद्ध अवस्था में लगातार शास्त्र लेखन कार्य को सुव्यवस्थित रूप संचालन करते थे। उन महान आत्मा को चिर शान्ति मिले यही हमारी हार्दिक कामना है। हम भी उनके आदर्श जीवन से प्रेरणा लेकर जीवन को उन्नत बनावे।

स्थानकवासी जैन संघ जयपुर

परम पूज्य प्रखर शास्त्रवेत्ता जैन धर्म दिवाकर पं० रत्न श्री घासीलालजी महाराज के स्वर्गवास के दुःखद समाचार पढकर अत्यन्त दुःख हुआ। पूज्य श्री ने जैन समाज को अपने आजीवन प्रयत्नों व कई प्रकार के विघ्नों का सामना करके भी जो धार्मिक साहित्य दिया है उसके लिए सारा समाज अनन्त समय तक उनका आभारी रहेगा। उन्होंने अपना सारा जीवन इस यार्थ में लगा हि दिया।

पूज्यश्री एक महान चरित्रवान सन्त थे। त्याग, तप और ज्ञान के अवतार थे। करीब ५० वर्ष तक मैं पूज्यश्री की सेवा में रहकर उनके साहित्य निर्माण में सहयोग देता रहा हूँ उनके स्वर्गवास से जो समाज में महान क्षति हुई है उसकी पूर्ति निकट भविष्य में असंभव हैं।

पूज्यश्री के सदुपदेश से केवल जैन धर्मावलंबी ही अपने धर्म पर दृढ नहीं हुए वरन् अन्य मतवाले अनेक लोगों ने भी जैन धर्म स्वीकार किया। हिंसा में रत रहने वाले कुछ राजा महाराजाओं ने भी आपके उपदेश से हिंसा का त्याग किया। मेवाड प्रान्त के हजारों गांवों में आपने जीव हिंसा बन्द करवाई। उनकी इस महिमा को देखने का मुझे सौभाग्य मिला है। पूज्यश्री के त्याग तप एवं आदर्श जीवन का स्मरण करता हुआ इस महापुरुष के चरणों में श्रद्धांजलि अर्पण करता हूँ।

पं० मूलचन्द व्यास नागोर (राजस्थान)

[पं० मुनि श्री कन्हैयालालजी म० 'कमल'] महा श्रमण का महा प्रयाण

विश्ववंधु भ० श्री महावीर प्रभु के अनन्त ज्ञान गगन से अवतरित सदा शिव श्री सुधर्मा के सहस्र कमलदल में समाहित और श्रुत सेवियों की अविछिन्न परम्परा में प्रवहित श्रुत पूज्य प्रवर श्री घासीलालजी महाराज के भागीरथ प्रयत्नों से त्रिपथगा (संस्कृत, हिन्दी, और गुजराती में) बनकर भव्य भावुक जनों के हृदयों को चिरकाल से अप्लावित कर रही थी। वह युगस्रष्टा श्रुतधर इस मृत्युलोक से महाप्रयाण कर अमरत्व की ओर अग्रसर हो रहा है। उनकी अमर कृतियां पाकर जिज्ञासु जगत कृतकृत्य है एवं श्रद्धावनत है।

श्रद्धेय महाश्रमण के सान्निध्य में रहकर उनकी ज्ञानगरिमा महती महिमा और सम्परायलघिमा को समझने का सुअवसर मुझे प्राप्त हुआ है। अतः मेरा यह दृढ विश्वास हैं कि उस युग प्रधान पुरुष का

पावन जीवन युग युगान्तर तक मुमुक्षु जीवों का मार्गदर्शक बना रहेगा।

मुनि कन्हैयालाल कमल टोंक (राजस्थान)

श्री बर्द्धमान स्था० जैनसंघजोधपुर (राज.)

श्रीमान् प्रमुख सा. । सरसपुर उपाश्रय,

हमारे यहाँ पर प्रातः स्मरणीय बालब्रह्मचारी महामहीम आचार्य प्रवर श्री श्री १००८ पूज्य श्री हस्तीमलजी म० सा. आदि ठाना ६ सुख शान्ति पूर्वक विराजमान है। जैनागम विशारद परम पूज्य श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज सा. का अल्पकाल की अस्वस्थता के बाद संथारे पूर्वक स्वर्गवास के समाचार जानकर चतुर्विध संघ को महान् खेद हुआ। दिनाङ्क ४।१।७३ को व्याख्यान बन्द रहा। एवं जैन स्थानक घोडों के चौक जोधपुर में शोक सभा मनाई गई। शोक सभा में सर्व प्रथम श्रध्देय आचार्य श्री ने उपस्थित श्रावक संघ के समक्ष पूज्यश्री घासीलालजी म० सा० के शान्त--दान्त तपस्वी जीवन पर प्रकाश डालते हुए श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। और उपस्थित सभी ने चार लोगस्स का निर्वाण कायोत्सर्गकर स्वर्गीय आत्मा के चिर शान्ति की कामना की।

पूज्य आचार्य श्री घासीलालजी महाराज सा० जैसे महान स्थविर के स्वर्गवास से श्रमणसंघ की एक महान विभूति उठ गई है जिसकी निकट भविष्य में पूर्ति सम्भव प्रतीत नहीं होता। स्वर्गस्थ पूज्यश्री का अहिंसा प्रेम, साधनाशील जीवन और श्रुतसेवा की प्रबल लगन आदि सद्गुणों को श्रध्देय पूज्य आचार्य श्री आदि मुनि मण्डल भूल नहीं सकते। स्वर्गस्थ पूज्य श्री अमर शान्ति के अधिकारी हो यही हार्दिक कामना है।

मन्त्री स्था. श्रा. संघ जोधपुर

आगमोद्धारक महापुरुष का स्वर्गवास

हमारे यहाँ पूज्य बहुश्रुत श्री १००८ श्री समर्थमलजी महाराज सा० के सुशिष्य श्री वीरपुत्रजी म० (श्री घेवरचन्द्रजी महाराज सा.) पं. मुनि श्री रतनचन्द्रजी महाराज सा. आदि ठाना ४ विराजमान हैं। ता० ५।१।७३ को प्रातः काल श्री बादरमलजी सा० अन्याव से यह मालूम हुआ कि अहमदाबाद में पूज्य आचार्य श्री श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज सा० का संथारा पूर्वक स्वर्गवास हो गया। यह सुनकर हृदय को बडा आघात लगा। व्याख्यान तो बन्द रखा गया किन्तु श्री वीरपुत्रजी म० सा० ने पूज्य श्री के जीवन के सम्बन्ध में फरमाया कि पूज्जश्री घासीलालजी म० सा० अपने समय के अद्वितीय व्याख्याता, महाप्रतिभाशाली महान ज्योतिर्धर पूज्य श्री जवाहराचार्य के पाटवी ज्येष्ठ शिष्य थे। आपने छोटी उम्र में दीक्षा ली और ज्ञानाभ्यास में तल्लीन रहने लगे। मनोयोग पूर्वक एकाग्रता के साथ पूर्ण परिश्रम करके आप संस्कृत प्राकृत आदि सोलह १६ भाषा के धुरन्धर विद्वान बने। स्थानकवासी जैन समाज की मान्य आगम बत्तीसी पर अब तक स्थानकवासी मान्यता के अनुरूप संस्कृत टीका नहीं थी। इसलिए आपने बत्तीस ही आगमों पर संस्कृत में टीका लीखी। यह स्थानकवासी समाज के लिए महान् गौरव का विषय हैं। इस भगीरथ प्रयत्न को सम्पूर्ण पार पहुँचाने के कारण आपको आमोद्धारक कहना सर्वथा उपयुक्त है। इतने बडे ज्ञानी होते हुए भी आपको किञ्चित मात्र भी अभिमान नहीं था। इसी कारण जब कहीं शास्त्रों का गूड रहस्य समझमें नहीं आता तो आप पूज्य बहुश्रुतजी म० सा० से समाधान प्राप्त करते थे, श्री बहुश्रुतजी म० सा० के समाधान से आपको पूर्ण सन्तोष हो जाता था। इसलिए श्री बहुश्रुतजी म० सा० के प्रति आपकी 'गाढ़ श्रद्धा थी अतएल आप बहुश्रुत श्री समर्थमलजी म० सा० को श्रुतकेवली' कहकर पुकारते थे। आप श्री बहुश्रुतजी महाराज सा० से उम्र में और दीक्षा में काफी बडे थे। फिर भी आप उनके प्रति बहुभान पूर्वक भक्तिभाव और श्रद्धा रखते थे।

संवत २०२२ का चातुर्मास सौराष्ट्र के पाटनगर राजकोट में करने के लिए पूज्यश्री बहुश्रुतजी महाराज जब सौराष्ट्र पधारते हुए अहमदाबाद पधारे तब पूज्यश्री घासीलालजी म० सा० तेले का पारणा करके श्री बहुश्रुतजी म० सा० के सामने बहुत दूर तक पधारे । दोनों महापुरुषों का जीवन में यह प्रथम मिलन था । जो अत्यन्त भव्य और दर्शनीय था । दोनों महापुरुष विनय की साकार मूर्ति बने हुए थे । विनयावनत दोनो महापुरुषों का यह प्रथम मिलन अपूर्व था और श्रद्धालु भक्तजनों के हृदय में श्रद्धा और विनय का अपूर्व संचार कर रहा था । दोनों महापुरुषों के हृदय में वीतराग वाणी के प्रति दृढ श्रद्धा और अपूर्वनिष्ठा थी ।

"तहमेव सच्चं निसंकं जं जिणेहिं पवेइयम्' । तथा, इणमेव णिग्गंथं पावयणं सच्चं अणुत्तरं"

इत्यादि दृढ श्रद्धा का महामन्त्र दौनों महापुरुषों की रग रग में रम गया था । सौराष्ट्र से वापिस लौटते समय भी श्री बहुश्रुतजी म० सा० ने अहमदाबाद में फिर पूज्य आचार्य श्री के दुवारा दर्शन किये थे । इस प्रकार जीवन में इन दोनों महापुरुषों के मिलने का दो वार प्रसंग आया था । पूज्य आचार्य श्री का जन्म उदयपुर के निकट वणोल नामक छोटे से ग्राम में संवत १९४२ में हुआ था । और तरावली गड (जसवंतगढ) में सम्वत १९५८ में श्रीमज्जवाहराचार्य के पास दीक्षा अंगीकार की थी । स्वर्गवास के समय आपकी उम्र करीब ८८ की थी इस प्रकार पूज्य आचार्य श्री वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध और संयमवृद्ध होने से महास्थविर थे । फिर भी अभिमान आप में नाममात्र भी नहीं था । आप बडे पुरुषार्थी और परिश्रमी थे । जब देखो तब आप पठन पाठन और लेखन में तल्लीन रहते थे । आप प्रत्येक पक्खी को तेले की तपस्या करते थे । आप श्रीका जीवन बडा सीधा सादा और बड़ा सरल था । मिलनसार प्रकृति थी । आपमें गुणग्राहक्ता का विशिष्ट गुण था । निन्दा विकथा से आप सदा दूर रहते थे । ज्ञानाभ्यास और आत्मसाधना ही मुख्य लक्ष्य था ।

श्री बहुश्रुतजी म० सा० के वियोग का आघात अभी ताजा ही था कि तुरन्त ही आपके वियोग का यह दूसरा आघात फिर लग गया । श्री बहुश्रुतजी म० सा० के स्वर्गवास के ठीक १७ दिन बाद आप स्वर्गवासी हो गये । समाज के आगमरसिक शुद्ध श्रद्धा सम्पन्न दो विद्वान सन्त महापुरुषों का वियोग अल्प काल में हो गया । यह समग्र जैन समाज में महान कमी पड़ी है । जिसकी पूर्ति होना निकट भविष्य में असम्भव है । दोनों महापुरुषों को आत्मा शीघ्र ही शाश्वत शान्ति और अव्याबाध सुखों की प्राप्ति के साथ अजर अमर पद को प्राप्त करें ऐसी शुभकामना है ।

इन दोनों महापुरुषों द्वारा फैलाई हुई ज्ञान की किरणों को अपने हृदय में उतारकर तथा उनके बताये हुए मार्ग पर चलकर प्रत्येक व्यक्ति अपना आत्मकल्याण करें । यही महापुरुषों के प्रति सच्ची श्रद्धांजली होगी । वे दोनों महापुरुष आज भौतिक शरीर से हमारे बीच में नहीं रहे हैं किन्तु उनका यशः शरीर कल्पान्त काल तक स्थायी रहेगा । प्रेषकः– भैरूलाल बी० हुण्डिया बालोतरा

વયોવૃદ્ધક શાસ્ત્રજ્ઞ સતી રત્ન વિદુષી મહાસતીજી શ્રી તારાબાઈ મહાસતી ની પુજ્ય ગુરૂદેવને શ્રદ્ધાંજલી.

ધર્મપ્રેમી ભોગીભાઇ તથા સમસ્ત શ્રી સંઘ સરસપુર. અમાને પુજ્ય મહારાજ સાહેબનાની દર્શનની તીવ્ર ઇચ્છા હોવા છતાં અમે પહોંચી ન શકયા દર્શન ન થયા ને અમારાં કમનશીબ. શાશન સમ્રાટ આગમ શિરોમણી, જ્ઞાનધ્યાનમાં અગ્રસર, શાશનના મહારથી અમુલ્ય રત્ન સમાન પુજ્ય મહારાજ સાહેબના કાળ-ધર્મના સમાચાર સાંભળતાં દિલને ઘણું જ દુઃખ થયું, જૈન શાશન નો એક તેજસ્વી સીતારો ખરી પડયો, સારાય સમાજને આ મહાન રત્ન જવાથી લાગ્યો છે, જૈન શાશનનો સ્તંભ તુટી પડયો.

"હિરો ગયો હિરો ગયો દિગ ગયો છે હાથથી; ચાલ્યો ગયો ચાલ્યો ગયો શાશનનો એ મહારથી ॥
અમૂલ્ય હીરો ગયો પણ કાર્ય સિદ્ધ કરીને, જ્ઞાનની સરિતા ગઈ સમકિતના નીર વહાવીને ।
ધર્મ બાગનું ફૂલ ગયું ચારિત્રની સુવાસ ફેલાવીને,
શાશનના મહારથી ગયા સૌને ચારિત્રનાં અમર આદર્શો આપીને ॥
ચાલ્યા ગયા એ ધર્મ સારથી ચોતરફ ધર્મની સુવાસ ફેલાવીને,
જૈન શાશનનું અણમોલ રત્ન ગયું પણ પ્રકાશ પાથરીને ॥
ચાંદની ગઈ પણ શિતલતા ફેલાવીને, વિનશ્વર દેહ ગયો પણ અવિનાશી માર્ગ બતાવીને,,
ચંદનની જેમ કાયા ઘસી સૌને સુગંધી આપી ને,

તેમના ધ્યેયની સફળતા કરીને શાસ્ત્રોનું લખાણ પુરૂં કર્યું. આચારાંગ સૂત્ર દ્વિતીય શ્રુતસ્કંધ પણ લખાવાનું શુરૂકરેલા પુજ્ય આચાર્ય દેવ ભ્રાતૃગુરૂની સેવામાં શાસ્ત્રો અર્પણ કર્યા, સરસપુર સંઘે અનુપમ લાભ લીધો, ખડે પગે એક ધારી સેવા કરી જેનું વર્ણન ન થાય, સ્થાનકવાસી સંઘોએ પણ એ રત્નને ઓળખ્યું, આ મહાન યોગી પાસે ઘણું જ્ઞાન છે. લેવાય તેટલું સૌએ લીધું અમદાવાદમાં પગ મૂકતા પહેલાં જ સરસપુરનું સ્મરણ થાય શા માટે ? અદ્‌ભૂત યોગીના ચારિત્રના આદર્શો નિહાળવા, કડકડતી ઠંડીમાં પણ ફક્ત એક પછેડી પહેરી બેઠેલા એ મહાન યોગીરાજના દર્શન કરવા, નિસ્પૃહી નિષ્પરિગ્રહી એ સંતના દર્શનથી અમને ખૂબજ આનંદનો અનુભવ થતો, એમની પાસે અભ્યાસ કરવાનો પણ અમને ઘણીવાર લાભ મળતો, તેમની અભ્યાસ કરાવવાની ખુબજ ભાવના તેઓનું જીવન ખૂબજ સરલ હતું. જેમણે પોતાના જીવનમાં એકજ તમન્ના જ્ઞાન લેવું ને દેવું, જ્ઞાનના મહારથી જીવનના છેલ્લા શ્વાસ સુધી જરાપણ પ્રમાદ વિના અભ્યાસ કરતાં જોઈએ ત્યારે અમારૂં મસ્તક નમી પડતું, કેવો અદ્‌ભૂત પુરુષાર્થ, વિદ્યા પાછળ અલક જગાવી જ્ઞાનનો પ્રકાશ જીવનમાં પાથરી શ્રદ્ધાના સહારે જીવનનૈયા સમ્યક્ માર્ગે ચલાવી તે સહેલું કામ ન હતું, મહિનામાં બબ્બે અઠમ કરી તપની ધુણી ધગાવી એવા યોગીના વિયોગ થી આપણે એક મહાન રત્ન ખોયું છે. આપણે નજીકના સમયમાં ત્રણ રત્નો ખોયા, શ્રમણ શ્રેષ્ઠ ચારિત્ર નિધાન શ્રી સમર્થમલજી મહારાજ સાહેબ, પ્રિયવક્તા પંડિત વિનયમુનીજી મહારાજ અને આગમોની અમુલ્ય શ્રુતધારા વહાવતાં પુજ્ય ગુરૂદેવશ્રી, એ ત્રણે ચારિત્રનાં નમુના આપણને મહાન માર્ગ બતાવી પોતાનું કાર્ય સિદ્ધ કરીને ચાલ્યા ગયાં પણ આપણાં સમાજને મોટી ખોટ પડી કે જે નજીકના સમયમાં પુરાવી મુશ્કેલ છે. અમે ગુરૂદેવની શ્રદ્ધાંજલી સમયે હાજર નથી છતાં અમારા હૃદયથી સાચી શ્રદ્ધાંજલી ત્યારે જ આપી ગણાશે તેમના ચારિત્રના નિર્મળ આદર્શો અમારાં જીવનમાં ઉતરે અને તેમના અધુરા રહેલ કાર્યને આપણે પુરૂ કરવા પ્રયત્નશીલ બનીએ એજ ભાવના, તેઓ તો ગયા પણ તેમના આદર્શો નજર સમક્ષ તરવરે છે, તેઓ તો ઘણું ઘણું આપી ગયાં તેમાંથી આપણે ગ્રહણ કરી આપણા જીવનને સાર્થક બનાવીએ અને જીવનમાં ગુરુદેવની જેમ જ્ઞાન સાથે ચારિત્રનો સુમેળકરી એ એજ.

શુભેચ્છા

રાગ—અમે નિશાળીમા રે ત્રિસલાનંદના

ગાયન—શાશનનો દિવડોરે શાને બુઝાયો,

શ્રી સંઘને રડતાં મૂકી ગુરૂજી રે ક્યાં રે સિધાવ્યા. ભક્તોને રડતાં મૂકી ગુરૂજી રે ક્યાં રે સિધાવ્યા ॥ટેક॥
બાલ પણે ગુરૂજી સંયમ લીધો, જવાહરલાલજી ગુરૂને પાસ ગુરૂજી રે ક્યાં રે સિધાવ્યા (૧)
સંયમ લઈને પ્રમાદ છોડી જ્ઞાનમાં પુરૂષાર્થ કીધો ગુરૂજી રે ક્યાં રે સિધાવ્યા (૨)

શ્રદ્ધામાં ધીર બની મૈનાનો ભેખ લઈ ઉગ્ર તપસ્યાઓ કીધી=ગુરૂજી રે ક્યાં રે સિધાવ્યા (૩)
અતી વિશુદ્ધ ભાવે ચારિત્ર પાળી, અખંડ સાધના સાધી=ગુરૂજી રે ક્યાં રે સિધાવ્યો (૪)
આગમ ની પાછલ જીવન વીતાવ્યું સુખે ન આરામ કીધો=ગુરૂજી રે ક્યાં રે સિધાવ્યા (૫)
શાશન સમ્રાટ ને આગમ ઉદ્ધારક. ટીકા અનુવાદ કીધા=ગુરૂજીરે ક્યાં રે સિધાવ્યા (૬)
અગણીત ગુણોના ભંડાર ગુરૂજી. શાશન શિરોમણી હિરા=ગુરૂજી રે ક્યાં રે સિધાવ્યા (૭)
ષડદશ ભાષાના જાણ ગુરૂજી સાહિત્ય ન્યાયમાં નિપુણ=ગુરૂજી રે ક્યાં રે સિધાવ્યા (૮)
વિદ્યાની સાધના મારવાડ દેશમાં પ્રબળ પુરુષાર્થે કીધી=ગુરૂજી રે ક્યાં રે સિધાવ્યા (૯)
કાઠીયાવાડ ઝાલાવાડ ગુજરાત પધારી જ્ઞાનની જ્યોત ઝળકાવી=ગુરૂજી રે ક્યાં રે સિધાવ્યા (૧૦)
રાજનગરના સરસપુર શહેરમાં સરસ કાર્યો કીધા=ગુરૂજી રે ક્યાં રે વિધાવ્યા (૧૧)
કાયા ઘસી છે શાશન ના માટે ઘાસીલાલ નામ સાર્થક કીધું=ગુરૂજી રે સ્વર્ગે સિધાવ્યા (૧૨)
દિવસ બે નો સંથારો આદરી સાધના અનુપમ સાધી=ગુરૂજી રે સ્વર્ગે સિધાવ્યા (૧૩)
જવાહર ગુરૂનું નામ દિપાવી સાચા ઝવેરી બનીયા=ગુરૂજી રે સ્વર્ગે સિધાવ્યા (૪)
ખોટ પડી છે જૈન શાશન માં અમુલ્ય રત્ન ગુમાવ્યું=ગુરૂજી રે સ્વર્ગે સિધાવ્યા (૧૫)
હોંસે હોંસે ગુરૂજી દર્શને આવતાં આપ જતાં દિલડાં ઘવાયાં—ગુરૂજી રે સ્વર્ગે સીધાવ્યા (૧૬)
શાશનનો હિરલો ચાલ્યો રે ગયો છે રડતાં હૃદયે શ્રદ્ધાંજલી આપીયે ગુરુજી રે સ્વવર્ગે સીધાવ્યા (૧૭)
સતી તારામતીના શિષ્યાઓ પ્રેમથી ગુણલાં આપના ગાવે ગુરૂજી રે સ્વર્ગે સિધાવ્યા (૧૮)

પૂજ્ય સતાવધાની પં. રત્ન પુનમચંદજી મ૦ શ્રીની શ્રદ્ધાંજલિ

સુરેન્દ્ર નગર તા. ૫–૧–૧૯૭૩

ધર્મ પ્રેમી શેઠ શ્રી ભોગીલાલ છગનલાલભાઈ ભાવસાર આદિ સંઘ સમસ્થ મુ. સરસપુર અમદાવાદ અત્રે થી લી. રજનીકાન્ત બી૦ શાહના જયવીર

અત્રે પુજ્ય મ૦ શ્રી પુનમચંદજી મ૦ તથા નવીનચંદજી મ. ઠા–૨ સુખશાંતિમાં વિરાજે છે તેઓ શ્રી એ તમોને તથા સંઘ સમસ્ત તે ધર્મ ધ્યાન કરવા ફરમાવ્યું છે. બીજુ તમારે ત્યાં બિરાજતાં પં રત્ન મુનિશ્રી કન્હૈયાલાલજી મ્હા. ને સુખશાતા પૂછશો.

વિશેષ જણાવવાનું કે આજ રોજ તા–૫–૧–૭૩ ના ગુજરાત સમાચાર છાપામાં વાચ્યું કે શાસ્ત્રો દ્ધારક પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મ. સંથારો કર્યો અને કાળ ધર્મ પામ્યા. આ સમાચાર વાંચીને ખૂબ દુઃખ થયું તેઓ શ્રી એ શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ ૩૦ વરસથી ઉપાડયું અને ૧૮–૧૮ કલાક સુધી સતત મહેનત કરી અવિરત કામ કર્યું એ માટે સ્થાનકવાસી જૈન સમાજ કાયમને માટે તેમનો ઋણી છે. તેઓ શ્રી એ શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા કરીને સ્થા. જૈન સમાજનું મહાન ગૌરવ વધાર્યું છે. આવા એક મહાન સાધુ રત્નની સ્થા–જૈન સમાજ ને જબ્બર ખોટ પડી છે તે નજીકના ભવિષ્યમાં પૂરાય તેમ નથી.

હવે તેમના પટ્ટ શિષ્ય પં. રત્ન મુનિ શ્રી કન્હૈયાલાલજી મ. શ્રી એ ભગીરથ કામ પુરૂં કર્યું અને કરી રહેલ છે તે બદલ તેમને ધન્યવાદ ઘટે છે પૂજ્ય શ્રી એ તો તમામ શાસ્ત્રો ઉપર ટીકાનું કામ પુરૂં કર્યું છે એ ખરેખર આનંદનો વિષય છે. હવે બાકી રહેલું કાર્ય પુરૂં કરવું એ સ્થા–જૈન-સમાજ નું કામ છે. એ કાર્ય પુરૂં કરીએ તો જ પુજ્ય શ્રીનું સાચું સ્મારક કર્યું ગણાશે; શ્રીસંઘે અને ભોગી લાલ શેઠે પુજ્ય શ્રી ની જે સેવા કરી છે તે પણ ચિરસ્મરણીય રહેશે..

આવા મહાન સાધુ રત્નની ખોટ પડી છે તેમના પવિત્ર આત્મા ને પરમ શાન્તિ પ્રાપ્ત થાઓ એ જ શાસન દેવ પ્રત્યે પ્રાર્થના.

आचार्य श्रीघासीलालजी महाराज का व्यक्तित्व

मदन मोहन जैन "पवि" कानोड

आचार्य श्री का व्यक्तित्व पर्वतों में सुमेरू पर्वतवत् फूलों में गुलाबवत् फलों में आम्रवत् था । प्रतिमा की अपूर्व ज्योति, सागरवर गम्भीर, अग्निवत् तेजस्वी जल के समान शीतल, सहज स्नेही प्रकृति के धर्मा-चार्य थे । शान्ति क्रान्ति कारी समाजोद्धारक, शुक्लध्यानी, क्षमाशील सहृदयी, मनन, और मन्थनशील, तेजस्वी, दिव्य ललाट वाले महापुरूष,उन्मार्ग से सन्मार्ग की ओर ले जाने वाले थे । परम्परागत मयार्दाओं के पालक, संसार समुद्र को तिरने व तारने वाले थे । लाखों मानवो का सदुपदेशों द्वारा उद्धार किया ।

प्रज्ञाचक्षु, युग दृष्टा युगश्रष्टा दृढ़ निश्चयी, संतोष एवं परम निधान की भावना युक्त थे । सतत उद्यमी साहित्यकार, उदार, सिंहवत् शूर किन्तु अक्रूर थे । सदयी विनयी, विवेकी थे । तत्वज्ञ सारग्राही चिन्तन शील थे । जितेन्द्रीय थे । "जितेन्द्रीयस्य तृणं भोग" की भावना जागृत होने पर साधु बने । मधुर भाषी थे । "माधुमती वाचम् दयम् (अथर्ववेद) मैं मधुरं वचन बोलू । इसके पालक थे । श्रीमहावीर के अमर संदेश को जनजीवन में भरने का पूर्ण प्रयास किया । साधुओ का नेतृत्त्व, धर्म प्रसारण का अन-मोल काम किया । कभी भी आत्मप्रसंसा के पुल नहीं बांधे । "बड़ो बड़ाई नहीं करे, बड़ो न बोले बोल । रहीमन हीरा कब कहे:लाख हमारा मोल" सिद्धान्त का पालन किया । जीव वध रोकने का पूरा प्रयत्न किया । साम्प्रदायिक तत्वों में समन्वय चेष्टाऐ आजीवन चलती रहीं । ये प्रसन्न मुद्रा वाले आनन्द जीवनथे ।

તા–૫–૧–૭૩
રાજકોટ

રા, રા, શ્રીમાન શેઠ સાહેબ

ભોગીલાલભાઈ છગનલાલભાઈ અમદાવાદ

રાજકોટ થી લિ: શ્રી એન એચ ઉદાણીના ઘણો માન પૂર્વક જયજીનેન્દ્ર વાંચશો. વિશેષ પુજ્ય ગુરૂદેવ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબ સ્વર્ગ સિધાવ્યાના સમાચાર જાણી અમો સહકુટુંબ ને તથા મહાસતીજી ગુલાબબાઇ સ્વામીને અત્યંત દિલગીરી થઈ છે અમારા ગુરૂની ખોટ પુરાય તેમ નથી. પણ કાળના અવસરે આપણો કોઇ ઉપાય નથી પુજ્ય ગુરૂદેવની ધર્મ પ્રત્યે અડગ શ્રધ્ધા; તેમનુ જ્ઞાન, માયાળુ સ્વભાવ યાદ આવે છે હવે એ દેવલોકવાસી પવિત્ર આત્માનુ મોઢું તો જોવાના નથી પણ તેમના સદગુણો હૃદયમાં ઉતારી શ્રી જૈન ધર્મ પ્રત્યેની અમારી શ્રધ્ધા કાયમ રહે એ જ પ્રાર્થના છે,

અમારાવતી પુજ્ય મહારાજ સાહેબ શ્રી કનૈયાલાલજી મ. તથા અન્ય મહારાજ સાહેબો પાસે શોક પ્રદર્શીત કરશો. અને દિલગીરીનો વેગ ઓછો કરવા કહેશો. પુજ્ય ગુરૂદેવના ઉપદેશને સ્મરણમાં રાખી આપણે હવે આશ્વાસન લેવાનું છે. પુજ્ય મહારાજ સાહેબ શ્રી કનૈયાલાલજી મ. તથા અન્ય મુનીઓને અમારા વંદન પાઠવીએ છીએ. શ્રી જૈન સમાજમાં તેમજ ભારતમાં ગુરૂદેવની ખોટ પુરાય તેમ નથી. જે કોઈ સાંભળે છે તેને આશ્ચર્ય થાય છે કે ટુંક સમયમાં આ બનાવ કેમ બની ગયો. પુજ્ય ગુરૂદેવ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબના અમર આત્માને શ્રીવીતરાગ પરમાત્મા અચળ શાંતિ અર્પે એ જ પ્રાર્થના છે.

મહાસતીજી શ્રી ગુલાબબાઇ સ્વામી, કનુભાઈ ઉદાણી વિગેરે કુટુંબીજનો શ્રાવીકા જયા કુવરબ્હેન

લિ. સ્નેહી

એન. એચ ઉદાણી

શ્રી સંઘ ધોલેરા બંદર   તા–૫–૧–૭૩
ધોલેરા

શ્રીમાન શ્રેષ્ઠીવર્ય સુશ્રાવક નવકાર મંત્ર આરાધક દેવ ગુરૂ ધર્મના આસ્થીક પરમ શ્રદ્ધાવંત શેઠ શ્રી ભોગીલાલભાઇ સરસપુર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ સમસ્ત સરસપુર (અહમદાવાદ)

ધોલેરા થી લિ. શેઠ ચત્રભુજ ધારશી તથા મણીલાલ ડુંગરશીના બહુમાન પૂર્વક જયજીનેંદ્ર સ્વીકારશોજી.

વિ. આજે રેડિયો તથા પેપર દ્વારા જાણુવા મળ્યું કે આપણા સમાજના મહાન વિદ્વાન પ્રખર તેજસ્વી, બાળબ્રહ્મચારી અનેક સિદ્ધાંતોનાં જાણુ પરમ પુજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કાળ ધર્મ પામ્યા છે.

સમાજમાં આજે સાધુ મુનીરાજોની ખુબજ જરૂર છે. સાધુ સમાજ અંશતઃ ઘણો ઓછો છે તે માંય આવા પ્રખર તેજસ્વી મુનીરાજો જવલે જ છે તે ખોટ સમાજને ખૂબ જ શાલશે.

અંત્રે સંઘ તરત જ એકઠૌ થઇ સૌ ભાઇઓ એ પોત પોનાના કામ ધંધા ચોવીસે કલાક બંધ કરી, સદ્દગત પુન્યાત્માની ચીર શાંતિ ઇચ્છી ધર્મ આરાધના કરેલ છે અને સાથેના પત્ર મુજબ ઠરાવ કરેલ છે. ત્યાં બીરાજતા પુજ્ય પં. મુનિ શ્રીકન્હૈયાલાલજી મહારાજ આદિ ઠાણાને અમારા સંઘવતી યથાવિધ વંદણા કરી સુખશાતા પુછશો.   અવિનય બદલ ક્ષમા ધીરૂભાઇ સંઘવીના જયજીનેન્દ્ર

આજ રોજ ઉપરોક્ત સંઘની જનરલ મીટીંગ મળી હતી જેમાં પુજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાસેબના કાળધર્મ સમાચાર અંગે નીચે મુજબનો ઠરાવ થયેલ છે. અને સૌ સમાજના ભાઇઓએ પોત પોતાના કામ ધંધા બંધ કરેલ છે.

ઠરાવ ૧

પરમ પુજ્ય પુજનીય વંદનીય, શાસ્ત્રવિશારદ બાળ બ્રહ્મચારી, તપસ્વી. તેજસ્વી શાસન સમ્રાટ પૂજ્ય ઘાસીલાલજી મહારાજના કાળધર્મનાં સમાચાર જાણી આ સંઘ ઉંડી આંઘાતની લાગણી અનુભવે છે. સદ્દગત પૂન્યાત્માએ અનેક શાસ્ત્રોનો અભ્યાસ કરી સમાજ ઉપર મહાન દયા કરી ભાષાકીય પરીવર્તન સુ-યોગ્ય અને સુ-વાચ્ય બને તેમ શાસ્ત્રોદ્ધારનો કાર્ય ચર્યો છે. અને લાગ લગાટ અનેક વર્ષો તે કામ ફકત સમાજના હિત ખાતર કરી સમાજ ઉપર ઉપકાર કર્યો છે. તે અવિસ્મરણીય રહેશે. આવી વીરલ વિભૂતીના કાળધર્મના સમાચાર એ સમાજ માટે આજના યુગમાં મહાન ખોટ સમા છે.

સદ્દગત પૂન્યાત્માને કોટી કોટી વંદન સાથ શાસનદેવને પ્રાર્થના કેઃ..પ્રભૂ તેમના આત્માને ચીર શાંતિ વક્ષે. ઉપરોક્ત ઠરાવ કરી અનેક સમાઇક કરી સૌ વિખરાયા હતા

જયંતિલાલ હી. શેઠ ધીરૂભાઇ સંઘવી

રાણુપુર તા. ૫–૧–૭૩.

પ્રમુખ તથા માનદ મંત્રી શ્રી આદી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ સમસ્ત સરસપુર, અમદાવાદ.

વિ આપણા સંપ્રદાયના પૂ. આચાર્ય ગુરૂદેવ શ્રીઘાસીલાલજી મ. સાહેબના કાળધર્મ પામ્યાના સમાચાર પેપર દ્વારા વાંચી અમારા શ્રી સંઘને દારૂણ (દુઃખદ) આંચકો લાગ્યો છે. અમારે ત્યાં બે ચાતુર્માસ થયા તેથી અમો તેમના ઋણી છીએ.

પૂજ્ય શ્રી ના કાળધર્મ પામવાથી સ્થા. જૈન સમાજનો કાહેનુર હીરો ચાલ્યો ગયો છે. આ ખોટ પૂરી શકાય તેમ નથી પુજ્ય પં. રત્ન મ. શ્રીકન્હૈયાલાલજી મ. સા. ને પણ ગુરૂદેવની મોટી ખોટ પડી ગઇ છે.

સ્વ.ના માનમાં અમારા શ્રી સંઘે આજે બપોરે વેપાર રોજગાર બંધ રાખી પાખી પાળી હતી,

અમને સમાચાર મોડા મળ્યા નહિંતર જરૂર પાલખીમાં આવત. દરેક મ. સા. ને અમારા શ્રી સંઘ વતી વંદણા કરી સુખશાતા પૂછશે.

લિ. રસીકલાલ ખાટડિયા
માનદમંત્રી શ્રી સ્થા. જૈન. સંઘ રાણપુર

સાબરમતી તા, ૭-૧-૭૩

પ્રતિ શ્રી સંઘપતિ સરસપુર. સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય

પરમ પુજ્ય પંડિતરત્ન શ્રી આગમોદ્ધારક પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબનાં દેહવિલયથી જૈન સમાજને ન પૂરાય તેવી મહાન ખોટ પડી છે પુજ્ય શ્રીનાં કાળધર્મથી અમો સૌએ અત્યંત આઘાતની લાગણી અનુભવી છે. સ્વર્ગસ્થઆત્માને પરમશાંતિ પ્રાપ્ત થાય તેવી યુવક મંડળના સભ્યો પ્રાર્થના કરે છે.

લિ : દીલીપ જે શાહ મંત્રી શ્રી. સ્થા. જૈન. યુવક મંડળ સાબરમતી,

વડાલા-મુંબઇ તા. ૧૩-૧-૭૩

સ્નેહી મુરબ્બી શ્રી ભોગીલાલભાઇ છગનલાલભાઇની સેવામાં
મુબઈથી લિ : બગડીયા જગજીવનદાસ રતનસીના જયજીનેંદ્ર

વિ. પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી પરમ ઉપકારી શાસનના શણગાર સમા તેઓશ્રીની ખોટ કદી પુરી થશે નહી. મારે અંતરાયકર્મના ઉદય તે વખતે હું મુંબઇ હતો ને અહીથી જયંતીલાલભાઈ મશ્કરીયાજીની દિક્ષાના ટાઇમ વીગેરે નકકી કરવાનો તેથી રોકાયેલ હતો, હવે પૂ શ્રી ના સંથારાના ખબર અમારા પુત્ર ભોગીલાલ તથા કાન્તિભાઈ એ આપ્યાને મને તેડાવેલ, પરંતુ સાંજે પ્લેનની ટીકીટ જ ન મલી રાત્રીના સમાચાર મલી ગયા કે પુ. ગુરૂદેવે ચિર વિશ્રામ લીધો સમાચાર મળવાથી ઘણું જ હૃદયને (દુઃખ) આઘાત થયો, આજે ૨૮ વર્ષથી પૂ. ગુરૂદેવની અવાર નવાર સેવા કરવાનો અને દરેક મીટીંગમાં હાજરી આપી દર્શનનો લાભ મળ્યા કરતો હતો, પ્રથમજ પૂ ગુરૂદેવ આદી તપસ્વી સંતો પં. પૂંજ્યમુનિ શ્રી કનૈયાલાલજી મહારાજનું દામનગર ચાતુર્માસ કરાવડાવ્યું, પાલનપુર બે દિવસ રોકાઈ ને દામનગર વિહારની વીનંતી કરી નકકી કરાવેલ તે બધી તાજી યાદ આવે છે.

હવે પરમ પૂજ્યમુનિશ્રી કનૈયાલાલજી મહારાજ સાહેબે પણ આપણા શાસ્ત્રોદ્ધાર સમીતી ઉપરઅને શ્રીસંઘ ઉપર ઘણો જ ઉપકાર કરેલ છે તેમનો પ્રબલ પુરૂષાર્થ આપણા શાસ્ત્રના કાર્ય પુરૂં કરવામાં જબ્બર હીસ્સો છે. શાસન દેવ તેમનું આયુષ્ય લાંબુ અને સ્વાથ્ય સારૂં રાખે તેવી પ્રાર્થના છે, પૂજય શ્રી કનૈયાલાલજી મ૦ ને વંદના કરી સુખશાતા પુછશો, અને તેઓ શ્રી પણ મહાન જ્ઞાની છે ને હીંમત રાખી રહે, તીર્થંકર ભગવાનનો પણ આયુષ્ય કર્મ પુરૂં થયે વિરહ થાય જ છે મને પણ રડવું આવી ગયેલ, પછી તેમનાં શ્રદ્ધાંજલી પત્રીકા દામનગર થઇને આજે અહીં વાંચતા વધારે રડવું આવ્યું. તેમજ તેમનું જીવન ચરિત્ર પણ વાંચ્યુ, તેઓ શ્રી. તો અમર થઈ ગયા વૈમાનીક ગતીમા પહોંચ્યા હોય જ ને કર્મો બાકી રહે તે પાછા મહાવદેહ ક્ષેત્રનો મનુષ્યગતિનો ભવ લઈ ફરી ચારિત્ર અંગીકાર કરીને નજીક ભવોમાં મોક્ષ સાધી લેશે તેમા શંકાને સ્થાન જ નથી.

લી : જગજીવનદાસ બગડીયા

ભાવનગર તા. ૧૦-૧-૧૯૭૩

ભાવનગર શ્રી સંઘની શ્રદ્ધાંજલી

મહેરબાન પ્રમુખ શ્રી

પુંજ્ય ગુંરૂદેવ આચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તા. ૩-૧-૭૩ ના રોજ સંથારો કરીને મોક્ષ ગતીએ પ્રમાણ કરેલછે.

પુજ્ય મહારાજ શ્રીં આપણા સમાજમાં સર્વોપકારી શ્રેષ્ઠ સાધુઓમાંના એક પ્રખર વિદ્વાન જ્ઞાની ધર્મનિષ્ઠ વંક્તા હતાં, તેમજ તેમનાં ઉમદા સ્વભાવથી સમાજમાં અનેકને આશીર્વાદરૂપ હતા તેઓ શ્રી મૃત્યુ ઉપર વિજય મેળવી મોક્ષપદને પામ્યા છે. આવા જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર અને તપના આરાધક ગુરૂદેવની આપણા સમાજને ઘણી મોટી ખોટ આવી પડીછે.

આ દુઃખદ સમાચાર જાણીને અમો મંડળના દરેક સભ્યો એ (ભાઈ તથા બહેનોએ) એક એક સામાયિક કરીને શોક ઠરાવ કરેલ છે તેની નોંધ આપને મોકલીયે છીએ.

એજ પ્રમુખ રમણીકલાલ ઠાકરશી

વેરાવલ

પૂજ્ય ગુણાનુરાગી વંદનીય મહારાજ સાહબ શ્રી પં. રત્ન મુનિશ્રી કન્હૈયાલાલજી મહારાજ સ્વ. અમારા સહુના આપના ચરણોમાં વંદન સ્વીકારશો. પરમ પૂજ્ય, પરમ ઉપકારી, શાસનોધ્ધારક ગુરૂવર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબનું નિર્વાણ સાંભવી અમારા સહુના દિલને સખત આઘાત લાગ્યો છે. પૂજ્ય પદ્માબાઈ સ્વામીએ રાજકોટથી તત્કાલિક ખબર સંથારાના આપ્યા ત્યાં તો સવારે જ સંથારો સીઝવાના ખબર પડયા.

તે ઓના ગુણગ્રામ તો મારા જેવી નાની છોકરી તો કયાંથી જ કરી શકે ? જીવ દયા ના પ્રખર હિમાયતી શાસ્ત્રોદ્ધારક અને શાસન દિવાકરની શાસનને મહાન ખોટ પડી છે. પૂજ્ય મહારાજશ્રી ના કાળધર્મે તો પંચમકાળે મહાન સંત ઓલિયા ગુમાવ્યા છે. વીરના શાસનની જ્યોત જલાવી રાખનાર આજીવન પુરૂષાર્થી. વીર મહાવીરના પંથે ચાલી અને મહાવીર જ બની જશે. અથવા બની ગયા હશે તેમાં કોઈ શંકા નથી. વીરના શાસનનો પ્રકાસિત દીવો બુઝાઇ ગયો છે. છાસઠ વર્ષના સંયમના ગાળામાં જરા પણ આળસ વિના પરમાત્માની વાણીને વિવિધ ભાષામાં ગુંથી અને અનેક લોકોને સુલભ બનાવી છે. અનેક જીવોના માર્ગ દર્શક બન્યા છે. આજે જૈન શાસનનું છત્ર ઉડી ગયું છે. તેમ આપના માથેનું શિરછત્ર પણ ઉડી ગયું છે. પરંતુ આપ તો જ્ઞાની છો આંપને મારા જેવી શું લખે, પરમ પૂજ્ય કાકાના ઉપર પણ તેઓની પુષ્કળ લાગણી હતી જ્યારે આપણે આવ્યા હોય ત્યારે કે કાકા માટે તો એક જ શબ્દ વાપરે, જીવં દયાનો રાજા પરંતુ આજે તો જીવદયાના રાજા ને પણ સ્વધામ પહોંચ્યા ને નવ. નવ મહિનાનો ગાળો વીતી ગયો તેઓ પણ જો આસમયે હયાત હોત તો આ સમાચારે તેમ ને પણ ખૂબ આઘાત પહોંચાડયો હોત, પણ આ તો રાજા ના પણ રાજા (ચક્રવર્તી) રાજા, સંસારની સમગ્ર પીડાથી પર બની ને મહામાનવમાંથી પરમાત્મા બની ગયા.

પ્રભૂ પાસે એટલી જ પ્રાર્થના કરવાની હિંમત કેળવું છું કે હે પ્રભૂ ! તેઓ જ્યાં હોય ત્યાંથી અમને જૈન ધર્મના સંસ્કારો પીરસતા રહે પ્રભુશ્રી મહાવીરના માર્ગમાં ચાલવા માટે અમારા માર્ગ દર્શક ઉપકારી બની રહે, માર્ગ ભૂલેલા અનેક મનુષ્યોના દિપક બની રહો એજ

આંપની શિષ્યા રમીલાબેન । અશ્વિનભાઇ તથા મંછાં બેનના વંદન સ્વિકારશો.

ભાણવડ તા. ૧૧-૧-૭૩

ધર્મ સ્નેહીં ગુણાંનુરાગી ભાઈ શ્રી ભોગીલાલ ભાઈ. સરસપુર

વિ અત્રે મધુર બ્યા. શ્રીં ગિરીશચંદ્રજી મ. સા. ઠા ૨ જામનગર ચાતુર્માસ બાદ પધાર્યા અને અમો શ્રી સંઘને ધર્મલાલ આપેલો છે. તેઓ શ્રી એ ત્યાં પં. રત્ન મુનિશ્રી કનૈયાલાલજી મ. સા. ને યથા યોગ્ય વંદન કરી સુખશાતા પુછાવેલ છે.

પૂ ગિરીશ મુનિજી મ. ફરમાવે છે કે અગો શિયારમા દના અને આચાર્ય ભગવંતના સંથારાતા ખબર મળેલા ત્યાર બાદ પૂ, શ્રી ના કાળધર્મના સમાચાર સાંભળી ખૂબજ દુઃખ થયું છે અને લાગી આવ્યુ કે કર્મની કેટલી ક્રુરતા, આવી ભવ્ય તેજોમૂર્તિ, જ્ઞાન સાધનાના પરમ નવનીતને નીતારી જૈન શાસનની ભાવી પેઢીના સંસ્કાર દઢ કરવા જેને સમય. શક્તિ નો પૂર્ણ પ્રયોગ કર્યો જૈન શાસનના પરમોપકારી સ્થા. જૈન સમાજના આગમ ટીકાના રચયિતા જ્ઞાનાલયસમઉજ્વલ, અનેક વિધ ભાષા જ્ઞાની, સરલ સ્વભાવી; ભદ્રપરિણાથી સાધનાનું ધામ પૂજય ગુરૂદેવને પોતાના પંજામા લઇ જતાં અંશ માત્ર પણ કાળને શરમ ન આવી ?

ભોગીલાઈ ! પૂજય મહારાજ શ્રી એ શાસ્ત્ર સંપાદનનું કાર્ય ગુજરાતને આંગણે સાધના કરીને પૂર્ણ કર્યું છે તે ગુજરાતીઓ માટે તો પરમ ગૌરવનો વિષય છે જ પરંતુ ગુર્જર જૈન સમાજનું પરંપરાગત વારસાનું કાર્ય જે વર્ષોથી નથી બની શક્યું તે આચાર્ય ભગવંતે ઘણીજ પ્રતિકૂળતા વચ્ચે પણ મનને અનુકૂળ કરી પુરુ. કર્યું તે ઋણ આપણે ભવોભવ સુધી વાળી શકીએ તેમ નથી.

જૈન આગમોની સરસ ટીકા પ્રસંગોપાતની કથાદષ્ટાંતો અનેક પિથ સામગ્રીથી ભરેલો જ્ઞાન સાગર ચાર ભાષામાં એક સાથે પીરસનાર આચાર્ય દુર્લભ છે.

અમદાવાદ જેવા પ્રતિસ્પર્થીય વાતાવરણમા જ્ઞાન—દર્શન ચારિત્ર—તપ દ્વારમા પ્રવેશી સરસપુરને જ્ઞાનનું સૌન્દર્યધામ બનાવી આચાર્ય શ્રી સ્વ જાગૃતિ અને પરનો પરોપકાર કરી પોતાનું અવશ્ય સાધી ગયા છે. આવા નર શાર્દુલ કલિકાલના પ્રકાંડ જ્ઞાન સૂર્યના અસ્ત પછી ચતુર્વિધ સંઘ ને આંચકો અવશ્ય આવ્યો પરંતુ આપણે તેમની જ્ઞાન ધારા થી જ આશ્વાશન મેળવી ચિંધેલા રાહે ફરમાવેલા ફરમાનો બતાવેલી વાતો. ઉપદેશેલા આદેશો ને અંતરમાં ઉતારીને જીવન જાગૃતિ મેળવીએ. એજ આપણો સૌનો ઉજ્વલ માર્ગ છે, અધૂરા પ્રકાશનો પૂર્ણ કરજો, ગુરૂદેવદ્વારા લખાવેલું સાહિત્ય સુંદર રીતે સાચવી પ્રકાશમાં લાવી તમો પણ ધન્ય ધન્ય બની રહેજો આયુષ્ય સમાપ્તિ માટે અજ્ઞાનિ જીવો પ્રતિપલ સાવધ કરી જ્ઞાન શીલમાં લીન બની રહેશે તો મનુષ્ય જીવન સફળ થશે, પૂ શ્રી કનૈયાલાલજી મ. વગેરેને ખૂબ જ આશ્વાશન સાથે ધૈર્યનો સંદેશો આપશો. પૂ. આચાર્ય શ્રી ના શિષ્ય તરીકે આજે તો એકજ સંત છે. હવે જવાબદારી છે ગુરૂદેવની અખંડીત જ્ઞાનનો પ્રકાશ વધારે. તેજસ્વી બની તેને સંભાળી સતત કાર્ય શીલતાની અમોને પ્રેરણા આપો.

લીઃ શૈલેશ મુનિ

પોરબંદર ૭—૧—૭૩

શ. રા પ્રમુખ શ્રી ભોગીલાલ છગનલાલભાઈ ભાવસાર

જય જીનેન્દ્ર સાથે લખવાનું જે પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કાળધર્મ પામ્યા તા ૨ જીનો સંથારો તા—૩ એ સંથારો સીઝયો અને કાળ ધર્મ પામ્યા, આ સમાચાર જાણી અમોને શ્રી સકલ સંઘને ઘણોજ ખેદનો અનુભવ થયો છે.

અત્રે બીરાજતા પૂ મહાસતીજી નવલબાઈ, કુન્દનબાઈ, પુષ્પાબાઈ સુશીલાબાઇ આદી ઠાણા ૪ ના સાન્નિધ્યમાં વ્યાખ્યાન સમયે તાત્કાલીક જાહેરાત થતાં ૪ લોગાસનો કાયોત્સર્ગ કરવામાં આવેલો અને પુ. મ. શ્રી ઘાસીલાલજી મ. ના જીવન વિષે પૂ મહાસતીજી પુષ્પાબાઇએ ઘણું જ પ્રેરણાત્મક વિવેચન કર્યું કે પહેલા શાસ્ત્રોદ્ધારક શ્રી અમુલખ ઋષિજી બીજા શાસ્ત્રોદ્ધારક શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ. જેમની અમર કીર્તિ ઉજ્જવળ રહી ગઇ. અમોને હમણાં થોડા દિવસો પહેલાં પૂ. મ. શ્રી ના દર્શન પણ થયેલ મ. શ્રી ની ઉંમર ૮૮ વર્ષની હતી અમે તેઓ શ્રી ના સુખેથી પૂછતા જાણવા મળેલું એ સમયે

વિદ્વાન અને શાસ્ત્રજ્ઞ મુનિરાજ શ્રી કનૈયાલાલજી મહારાજ હાજર હતા.

પં. રત્ન પૂજ્યશ્રી કનૈયાલાલજી મ. શ્રી ને અમારા સકલ સંઘના વંદના નમસ્કાર

લી: ભગવનદાસ માધવજી વોરા શ્રીસ્થા. જૈન સંઘ પોરબંદર

ગોધરા ૬-૧-૧૯૭૨

માનનીય શ્રી ભોગીલાલભાઈ ભાવસાર અમદાવાદ

અમો ગોધરા સ્થાનકવાસી જૈન સંઘના તમામ ભાઈ બહેનો. પુજ્ય શ્રી ધાસીલાલજી મહારાજ સાહેબના કાળ ધર્મના સમાચાર જાણી અત્યંત દુખ અનુભવી રહયા છીએ. આ અંગે અત્રેથી તાર દ્વારા આપને જાણ આજરોજ કરી તેમજ તેમની અંતીમ યાત્રમાં હાજરી આપવા સમય અને અંતરના કારણે ત્યાં અમદાવાદ પહોંચી શકાયું નથી. તેનો ક્ષોભ અનુંભવીએ છીએ.

મહારાજ સાહેબે સંઘની ઉમદા સેવાઓ આપી સંઘના જ્ઞાન આદી ઉચ્ચ કક્ષાએ લખવા જે પરિશ્રમ ઉઠાવ્યો તેની આપ સૌને જાણ છે. અને અમે પણ આપ સૌની સાથે સુર પુરાવીએ છીએ પોતે શાસ્ત્રોદ્ધારક પંડીત હોઇ ધાર્મિક ગ્રન્થોને યોગ્ય વાચા આપવાંમાં કુશળ હતા.

ભગવાન તેમના આત્માને શાંતિ અર્પે એવી અભ્યર્થના સાથે આભાર સહિત

આપનો વિશ્વાસુ કાન્તિલાલ નાનચંદ કાપડિયા

વીરમગામ. ૯-૧-૭૩

પ્રમુખ શ્રી શેઠ સાહેબ શાન્તિલાલ મંગલદાસ ભાઈ

પુજ્ય આચાર્ય શ્રી ૧૦૦૮ બા, બ્ર, શાસ્ત્રોધારક શ્રી ધાસીલાલજી મહારાજ સાહેબનું સરસપુર મુકામે તા ૩-૧-૭૩ ના રોજ રાતના સ્વર્ગવાસના સમાચાર અત્રે આવતા શ્રી સંઘમાં બહુત આધાત લાગી શોકની લાગણી ફેલાયેલ, પૂ. શ્રી સમત્ત સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયનાજ નહી પરંતુ જૈન સંપ્રદાયના મહાન ઉદ્ધારક હતા. તેઓ શ્રી એ છેલ્લી ઘડી સુધી જૈન સમાજમા તમામ આગમોનું સંશોધન કરી પોતાની જાતે દિવસ ને રાત અથાગ પરિશ્રમ વેઠી જે મહાન ઉપકારી કામ કર્યું છે તે જૈન સમાજ કદી ભૂલી શકે તેમ નથી. પૂ. શ્રી સન ૧૯૯૯માં રાજસ્થાન તરફથી આવી ગુજરાત તેમજ સૌરાષ્ટ્રમાં પધારેલા ને છેલ્લા ત્રીસ વર્ષથી સખ્ત પરિશ્રમ લઈ તેઓ શ્રી એ સમાજને મહાન ઉપકારીક કામ કરી આપેલ છે. તેઓ શ્રી ના અવસાનથી શ્રી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ તેમજ સમસ્ત જૈન સમાજને એક ભારે ખોટ પડી છે તેઓ શ્રી ના પટ્ટશિષ્ય બા, બ્ર. પંડિત રત્ન પૂ. કન્હૈયાલાલજી મહારાજ જેઓ એ પૂ. શ્રી ની અંતીમ સુધી મહાન સેવા કરી છે. શ્રી શાસન દેવ તેમના હૃદય ઉપર જે આઘાત લાગ્યો છે તે સહન કરવાની શક્તિ આપે. તેમજ પૂ. શ્રી ના આત્માને શ્રી શાસનદેવ પરમ શાન્તિ આપે એવી અમારી પ્રભૂ પાસે પ્રાર્થના.

ઉપર મુજબ અમારા સંઘે ચાર લોગ્ગસનો કાઉસગ્ગ કરેલ ને શુક્રવારે તા ૪-૧-૭૩ ના રોજ સવારમાં સમાચાર સાંભળતા શ્રી સંઘમાં પાખી પાળવામાં આવી હતી

મંત્રી

શીવલાલ જે શાહ

જામનગર તા૦ ૮-૧-૭૩

પરમ પૂજ્ય પ્રખર પંડિત રત્ન પૂજ્ય ગુરૂદેવ કન્હૈયાલાલજી મહારાજ સાહેબ

આજ રોજ જયહિન્દ પેપરમાં પૂ. ગુરૂદેવ જૈન સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના પ્રખર પંડિતરત્ન, આગમોદ્ધારક આચાર્ય સમ્રાટ, પરમપૂજ્ય શ્રી ધાસીલાલજી મહારાજ સાહેબે સથારો કરી જ્ઞાનપૂર્વક દેહત્યાગ

કર્યો. જૈન ધર્મના આ જ્ઞાની સંતની વિદાય ન પૂરી શકાય તેવી ખોટ સ્થાનકવાસી જૈન સમાજ ને પડી છે.

જેણે જીવન ઝંકારની સોનેરી સાધનાથી અને અદ્‌ભૂત અરાધનાથી વિશ્વના સારાયે સમાજમાં ખૂબ જ પ્રસિદ્ધિનું સ્થાન પ્રાપ્ત કર્યું હતું, મોહરૂપી નિંદ્રામાં પોઢેલા કંઈક જીવોને ઢંઢોળ્યા. ત્યાગ માર્ગમાં જ્ઞાન. દર્શન. ચારિત્ર, તપની અનુંપમ આરાધના કરી હતી.

પરમ પુરુષાર્થી પૂ૦ સિદ્ધાંત નિષ્ણાત પૂ૦ આચાર્ય ગુરૂદેવ ગેબીનાદ જગાવનાર. પ્રભૂની પદ્મપરાગ ને પ્રસરાવવા સાંપ્રદાયિક ભેદ રાખ્યા વિના સારાએ સમાજને અને વિરતી વૃંદને પોતાની ક્ષયોપશમની સિતારથી સંતોષનું સુરીલું સંગીત સુણાવતા. અને અણઉકેલના અરણ્યમાં અટવાયેલા આત્માઓનાં પ્રશ્નો નો ઉકેલ આણી તેઓ શ્રી બધાને આનંદના ઉપવનમાં લાવતાં ને સર્વજ્ઞના સુવર્ણ સંદેશને ગામે ગામ ફેલાવતા અને ભેદ જ્ઞાનની ભેરી વગાડી સૂતેલા સાધકોને જગાડતા હતાં. અને આચાર્યના ઉપવનમાં ખીલતા સંત સતીરુપ પુષ્પોના માળીરૂપ બની વીરવાણીનું વારિ સીંચી સર્વજ્ઞના સાત્વિક રસનું સીચન કરતા હતાં. અહો ? આજે જીવન ઉપવનના માળી જતાં જ્ઞાન બગીઓ કરમાઓ, જાગૃતિનું ઝરણુ ઝુંટવાયું. અને શિષ્ય સમાજ છત્ર વિહોણો બન્યો. સાધનાની સિતારમાંથી તાર તુટયો પૂ૦ ગુરૂદેવના આત્માને શાન્તિ મળે એજ પ્રભૂ પાસે પ્રાર્થના આપ સાતામાં બીરાજતા હશો.

લી વિજયા લક્ષ્મી હીરાભાઈ શાહના જયજિનેન્દ્ર વાંચશો
ઘાટકોપર મુંબઈ ૧૩-૧-૭૩

સ્વધર્મ પ્રેમી સુશ્રાવક શ્રી ભોગીલાલ છગનલાલભાઈ.

વિશેષ તમારે ત્યાં બીરાજતા પૂ. પંડિત મુનિ શ્રી કન્હૈયાલાલજી મહારાજ આદીઠાણાઓ તથા પૂ. મહાસતીજી આદી જે બીરાજતા હોય તેમને અમારાવતી સુખસાતા પુછી બહુમાન પુર્વક વંદણા કરશોજી.

પરમ પુજ્ય આચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રી ના કાળધર્મ પામ્યાનાં સમાચાર સાંભળી ઘણું જ દુઃખ થયેલ છે તેઓ શ્રી ઘણું લાંબુ આયુષ્ય ભોગવ્યું નાની ઉમરમાં દીક્ષા લીધી. આચાર્ય શ્રી ઘણા વરસ દીક્ષા પર્યાયપાળી અને તે દરમ્યાનમાં શાસ્ત્રોનું ઘણું ઉંડું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું હતું તે સૌ કોઈના જાણુવામાં છે.

પૂ.આચાર્ય શ્રી કરાંચીમાં હતાં, ત્યારે ઉપાશકદશાંગસૂત્રનું ભાષાન્તર બહાર પાડયું હતું. તે પુસ્તક દામનગર વાળા શેઠ દામોદરદાસ ભાઈના જાણુવામાં આવ્યું તેથી તેઓ પ્રભાવિત થયો. બીજા સૂત્રનો ભાષાંતર કરવાનો વિચાર થતા તેઓ શ્રી એ પૂ. મહારાજ શ્રી ને વિનંતી કરી તેને માન આપી પૂજ્ય મહારાજ શ્રી આજ થી ત્રીસવર્ષ પહેલાં સૌરાષ્ટ્રમાં પધાર્યા હતા. રાજકોટ, વેરાવળ, ધોરાજી જેતપુર પોરબંદર આદિ દરેક ઠેકાણેવિચરી ધર્મોપકાર કર્યા. ત્યાર બાદ અમદાવાદ સંઘની આગ્રહભરી વિનંતીથી નરસપુર ઉપાશ્રયમાં રહી શાસ્ત્ર લખવાનું કામ આગળ વધાર્યું દિન પ્રતિદિન તેમાં સારો સહકાર મળ્યો અને બત્રીસેયસૂત્રનું ભાષાન્તર પુરૂં થયું કલ્પસૂત્ર વગેરે છપાઇને બહાર પડી ગયા છે. ફક્ત ત્રણ કે ચાર સૂત્ર જ છપાવવાનો બાકી છે. આ બધો સહકાર તમારા હૃદયમાં પૂજ્ય શ્રી પ્રત્યેના અનન્ય ભક્તિ ભાવનું પરિણામ છે.

પૂ૦ મહારાજશ્રીની ગેર હાજરીમાં તેમનું અધૂરૂં રહેલુ.કામ પુરૂં કરવાની આપણી સૌની ફરજ છે.

પૂ૦ મહારાજ શ્રી બે દિવસનો સંથારો કરી દેવગત થયા છે તે જાણી ઘણો જ સંતોષ થયો છે.

પૂ૦ કનૈયાલાલજી મહારાજ આદિ ઠાણાઓને પૂ મહારાજ શ્રી ની ગેરહાજરીને લીધે ઘણું દુઃખ થાય તે સ્વભાવીક છે. પરંતુ સમભાવે સહન કરવાનું અમારા વતી આશ્વાસન આપશો.

શ્રીયુત નરભેરામભાઇ ઝાટકીયાએ પૂ મહારાજ શ્રી ના કાળધર્મ પામવાથી દીલગીરી વ્યક્ત કરેલ છે.

પૂ૦ પ્રિય વકતા વિનયમુનીજી મહારાજ, બહુસૂત્રી પૂ. સમરથમલજી મહારાજ તથા પૂ૦ આચાર્ય

શ્રીઘાસીલાલજી મહારાજ આમ ત્રણ જૈન ધર્મના સ્તંભો એક મહિનામાં કાળધર્મ પામ્યા તેથી જૈન સમાજને મોટી ખોટ પડી છે. જે ખોટ પુરાય એમ નથી. ઇશ્વર તેમના આત્માને શાંતિ અર્પો એજ અભ્યર્થના

લી નાથાલાલ ઝવેરચંદ કામદારના જયજીનેન્દ્ર

મણીનગર તા–૧૧–૧–૭૩

શ્રી સરસપુર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ

લિઃ શ્રી મણીનગર સ્થાનકવાસી જૈન સાધનાસિદ્ધિ મહિલા મંડળના જયજીનેન્દ્ર વાંચશોજી.

વિ. આપણા પરમ પૂજ્ય શાસ્ત્રવિશારદ આગમોદ્ધારક જૈન શાસનના તેજસ્વી સિતારા, જૈન દિવાકર; વયસ્થવીર, જ્ઞાનસ્થવીર. પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ શ્રી નો સંથારો સિઝયાના શોક જનક સમાચાર જાણતાં સમસ્ત શ્રી મણીનગર જૈન સમાજમાં શોકની ઘેરી લાગણી પ્રસરી ગઇ હતી. એક મહાન સંત પુરુષની ચિરવિદાયથી આ બાલ– વૃદ્ધ સૌ ગમગીન બની ગયા હતાં

સ્વર્ગસ્થ મહાપુરૂષના ગુણાનુવાદ ગુણગ્રામ કરી તેઓશ્રી ને સદ્ધાંજલી અર્પવા શ્રી મણીનગર સ્થા૦ સમાજની સમસ્ત બહેનોની ખાસ સભા આજે રાખવામાં આવી હતી જેમાં તેઓ શ્રી ના ગુણગ્રામ કરી ચાર લોગ્ગસનો કાઉસગ્ગ કરીને શ્રદ્ધાંજલી અર્પવામાં આવી હતી. પ્રમુખ શ્રી ચંચળબેન સખીદાસે સ્વ. ના જીવન વિષે બયાન આપીને જણાવ્યું હતું કે સ્વ૦ પૂ. શ્રી ઘાંસીલાલજી મહારાજ શ્રીએ શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરીને ચિરસ્મરણીય ઇતિહાસ સર્જ્યો છે. જૈન સમાજ તે માટે તેઓનો ખૂબ ઋણી છે. પ્રમુખ શ્રી એ શ્રદ્ધાંજલી ઠરાવ રજુ કરેલ જે સર્વાનુમતે ઉંડી ખેદની લાગણી સાથે પસાર કરવામાં આવ્યો હતો

પ્રમુખ
ચંચળબેન સખીદાસ

મણીનગર ૭–૧–૭૩

શ્રી સરસપુર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ

લિઃ શ્રી મણીનગર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘના જય જિનેન્દ્ર વાંચશોજી. વિ. આપણા પરમ પૂજ્ય શાસ્ત્ર વિશારદ આગમોદ્ધારક જૈન શાસનના તેજસ્વી સિતારા જૈન દિવાકર. વયસ્થવીર. જ્ઞાનસ્થવીર પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ શ્રી નો સંથારો સિઝયાના શોકજનક સમાચાર જાણતાં સમસ્ત શ્રી મણી નગર સંઘમાં શોકની ઘેરી લાગણી પ્રસરી ગઈ હતી. એક મહાન સંત પુરુષના ચિર વિદાયથી અબાલ વૃદ્ધ સહુ ગમગીન બની ગયા હતાં.

સ્વર્ગસ્થ મહાપુરૂષના ગુણાનુવાદ ગુણગ્રામ કરી તેઓશ્રીને શ્રધ્દાંજલી અર્પવા મણીનગર સંઘની ખાસ સભા આજે યોજવામાં આવી હતી, જેમાં તેઓશ્રીના ગુણગ્રામ કરી ચાર લોગસનો કાઉસગ્ગ કરીને શ્રદ્ધાંજલી અર્પવામાં આવી હતી. પ્રમુખ શ્રી ચંદ્રકાન્તભાઇ સી. બેંકરે સ્વ૦ ના જીવન વિષે બયાન આપીને જણાવ્યું હતું કે સ્વ૦ પુજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મ૦ શ્રી એ શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરીને ચિરસ્મરણીય ઈતિહાસ સર્જ્યો છે. જૈન સમાજ તે માટે ખૂબ જ તેઓશ્રીનો ઋણી છે. પ્રમુખ શ્રી એ શ્રદ્ધાંજલી ઠરાવ રજુ કરેલ. જે સર્વાનુમતે ઉંડી ખેદની લાગણી સાથે પસાર કરવામાં આવ્યો હતો.

શ્રદ્ધાંજલી ઠરાવ

આપણા પરમ પૂજ્ય જૈન શાસન પ્રભાવક. શાસ્ત્ર વિશારદ. આગમોદ્ધારક વયસ્થવીર. વિરલ વિભુતિ મહાપુરૂષ પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ શ્રી તા ૩–૧–૭૩ ના રોજ સ્વર્ગવાસ પામતા મણીનગર સકલ સંઘ ઉંડી ખેદની લાગણી અનુભવે છે.

શાસ્ત્રોદ્ધાર બાબતનો તેઓ શ્રી એ કરેલ મહાન ઉપકાર જૈન સમાજમાં ચીરસ્મરણીય રહેશે. જૈન સમાજ તે વિસરી શકશે નહીં, તેઓ શ્રી ની ખોટ નજીકના ભવિષ્યમાં પૂરી શકાય તેમ નથી. સમસ્ત મણીનગર સંઘ તેઓ શ્રીના સ્વર્ગવાસ બદલ શોક (દીલગીરી) જાહેર કરે છે. તેઓ શ્રીના જીવનમાંથી

સર્વ પ્રેરણા મેળવી શાસનના ઉત્કર્ષ માટે પ્રયત્નશીલ રહે. સ્વર્ગસ્થના પૂનિત મહાન આત્માને અક્ષય સુખો પ્રાપ્ત થાઓ. એજ અભ્યર્થના

શ્રી મણીનગર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ
સેવાભિલાષી ચંદ્રકાન્ત સી૦ બેંકર
ઉપલેટા ૪-૧-૭૩

સૃષ્ટિના ક્રમ મુજબ દિવસે સૂર્ય અને રાત્રે ચંદ્ર પ્રકાશે છે. એવું ક્યારેય નથી બનતું કે બન્ને સાથે વિલીન થઇ જાય. પરંતુ જૈન શાસનમાં આજ લાગે છે. જાણે સૂર્ય અને ચંદ્ર બન્ને વિલુપ્ત થઈ ગયા તા. ૧૭-૧૨-૭૨ ની ગોઝારી સવાર જેણે મરૂધર સંત શ્રમણ શ્રેષ્ઠ પંડિત પૂ. મુનિશ્રી સમર્થમલજી મહારાજ સા૦ ને ઝૂંટવી લીધા ! જૈન સમાજે આંચકો અનુભવ્યો. હજી એ આચકો સમ્યો ન શમ્યો ત્યાંજ તા-૩-૧-૭૩ નો ગોઝારો દિન આવ્યો, જૈન શાસન દિવાકર શાસ્ત્રોધ્ધારક પંડિત પ્રખર પૂ. શ્રીઘાસીલાલજી મહારાજ શ્રી કાયમને માટે ચાલ્યા ગયા અને જૈન સમાજમાં કાજળ ઘેર્યા તિમિરના ઓળા ઉતરી રહ્યા.

મરૂધર સંત, અજબ પુરુષાર્થી શાન્ત, દાન્ત, મહન્ત એ નર પુંગવ પણ મરૂભૂમિને પાવન કરતાં કરતાં સૌરાષ્ટ્રની ભૂમિમાં પધાર્યા હતાં. ઉગ્ર તપશ્ચર્યા ઉત્તમ ચારિત્ર અને અદ્દ્ભૂત જ્ઞાન આરાધના જેણે નજરે નિહાળી જૈન સમાજ અભિભૂત થયો હતો, કંતાનના એક ટુકડાં પર બેઠાં બેઠા મહાન પુરૂષાર્થી કર્મઠ નિષ્ઠાવાન એ સંતની જ્ઞાન આરાધના જેણે નજરે નિહાળી છે. તે કદી તેને નહીં ભૂલી શકે. દુનિયાથી જ નહીં દુનિયાદારીથી પર-દૂર જગજનના છળ અને પ્રપંચથી દૂર, જગતના વ્યવહારો અને વિટંબણાથી દૂર વિશ્વની વિષમતાથી દૂર, જ્ઞાન આરાધનાની અખંડ સાધનમાં બેઠેલા પ્રાપ્ત પુરૂષ પુર્વના કોઈ મહર્ષિની યાદ અપાવતા જૈન સમાજ માટે તેમણે જે કાર્ય કર્યું છે તે કદાચ અજોડ જ નહીં પણ અનુપમ છે. સ્થાનકવાસી જૈન સમાજમાં એક અને અદ્વિતીય કાર્ય તેમનું છે તેમ કહેવામાં અમને જરાયે સંકોચ નથી.

વિશ્વમાં જ્યારે મૂલ્યનોહ્રાસ અને ભૌતિકવાદની ભ્રમ જાલ ફેલાઈ ગઈ છે. ત્યારે જીનેશ્વર ભગવંતની વાણીનું યથાર્થ ઘટન કરી, સમાજ ને સુબોધ અને સુરૂચિ પૂર્ણ સર્વ આગમોના રહસ્ય ને સંસ્કૃત હિંદી અને ગુજરાતી ભાષામાં ઉતારનાર આ મુનિ શ્રેષ્ઠનું મૂલ્ય સાહિત્યના ઇતિહાસમાં પણ બહુમૂલ્ય છે, આ ભગીરથ કાર્યમાં અનેક વિટંબનાઓ આવી પણું સ્થિતપ્રજ્ઞ બની એ અડીખમ ઉભા જ રહ્યા ન ડગ્યા, ન હઠયા, ન થાક્યા, ન કંપ્યા, અને કંટાળ્યા પણ નહીં, બસ કાર્ય કરતાં જ રહ્યાં, ન ટાઢ જોઈ. ન તાપ, ન ક્ષુધા, ન તૃષા, જાણે પોતાનો જન્મ જ એ કાર્ય માટે થયો હોય તેમ આજીવન અખંડ આરાધક રહ્યા.

અંતે કાર્ય પુરૂં થયું, કાળ જાણે વાટ જોઇને જ બેઠો હતો. ભગીરથ કાર્ય અથાગ પરિશ્રમના અંતે પૂર્ણ થયું ન થયું કાળે ઝપાટમારી, દીપ બુઝાઇ ગયો અંધારૂં છવાઇ ગયું.

કમોસમના વાદળ પણ નભ ને આવરી રહ્યા હતા. સૂર્ય જાણે મુખ છુપાવી ગયો હતો. સાના મન આશંકા અનુભવતા હતા, ઝાંખી દિશા અને ધુંધલુ વાતાવરણ અનિષ્ટના ઓળા દેખાતા જ હતાં, રેડીયો પરથી રીલે થયું જૈન જ્યોતિ ધર જાહેર......લાગે છે. જૈન સમાજનું પુન્ય ખુટયું છે. પાપ પ્રગટયું છે. નહીંતર માત્ર ૧૫-૧૭ દિવસમાં બે બે મહારથી એકી સાથે ખુંચવાઇ જતાં જોવાનું તેને નસીબે ન આવે !

પૂ. ઘાસીલાલજી મહારાજે કરેલા સમાજ પર ઉપકારનું ઋણ સમાજ કદીએ વાળી શકે તેમ નથી, આજ એક એક ઘર આગમ વાણીથી પરિચિત બની શકયું, એક એક જૈન ગુજરાતી હિન્દી

શ્રીઘાસીલાલજી મહારાજ આમ ત્રણ જૈન ધર્મના સ્તંભો એક મહિનામાં કાળધર્મ પામ્યા તેથી જૈન સમાજને મોટી ખોટ પડી છે. જે ખોટ પુરાય એમ નથી. ઇશ્વર તેમના આત્માને શાંતિ અર્પો એજ અભ્યર્થના

લી નાથાલાલ ઝવેરચંદ કામદારના જયજીનેન્દ્ર

મણીનગર તા–૧૧–૧–૭૩

શ્રી સરસપુર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ

લિઃ શ્રી મણીનગર સ્થાનકવાસી જૈન સાધનાસિદ્ધિ મહિલા મંડળના જયજીનેન્દ્ર વાંચશોજી.

વિ. આપણા પરમ પૂજ્ય શાસ્ત્રવિશારદ આગમોદ્ધારક જૈન શાસનના તેજસ્વી સિતારા, જૈન દિવાકર; વયસ્થવીર, જ્ઞાનસ્થવીર. પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ શ્રી નો સંથારો સિઝયાના શોક જનક સમાચાર જાણતાં સમસ્ત શ્રી મણીનગર જૈન સમાજમાં શોકની ઘેરી લાગણી પ્રસરી ગઇ હતી. એક મહાન સંત પુરુષની ચિરવિદાયથી આ બાલ– વૃદ્ધ સૌ ગમગીન બની ગયા હતાં

સ્વર્ગસ્થ મહાપુરૂષના ગુણાનુવાદ ગુણગ્રામ કરી તેઓશ્રી ને સદ્ધાંજલી અર્પવા શ્રી મણીનગર સ્થા૦ સમાજની સમસ્ત બહેનોની ખાસ સભા આજે રાખવામાં આવી હતી જેમાં તેઓ શ્રી ના ગુણગ્રામ કરી ચાર લોગ્ગસનો કાઉસગ્ગ કરીને શ્રદ્ધાંજલી અર્પવામાં આવી હતી. પ્રમુખ શ્રી ચંચળબેન સખીદાસે સ્વ. ના જીવન વિષે બ્યાન આપીને જણાવ્યું હતું કે સ્વ૦ પૂ. શ્રી ઘાંસીલાલજી મહારાજ શ્રીએ શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરીને ચિરસ્મરણીય ઇતિહાસ સર્જ્યો છે. જૈન સમાજ તે માટે તેઓનો ખૂબ ઋણી છે. પ્રમુખ શ્રી એ શ્રદ્ધાંજલી ઠેરાવ રજુ કરેલ જે સર્વાનુમતે ઉંડી ખેદની લાગણી સાથે પસાર કરવામાં આવ્યો હતો

પ્રમુખ

ચંચળબેન સખીદાસ

મણીનગર ૭–૧–૭૩

શ્રી સરસપુર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ

લિ : શ્રી મણીનગર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘના જય જિનેન્દ્ર વાંચશોજી. વિ. આપણા પરમ પૂજ્ય શાસ્ત્ર વિશારદ આગમોદ્ધારક જૈન શાસનના તેજસ્વી સિતારા જૈન દિવાકર. વયસ્થવીર. જ્ઞાનસ્થવીર પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ શ્રી નો સંથારો સિઝયાના શોકજનક સમાચાર જાણતાં સમસ્ત શ્રી મણી નગર સંઘમાં શોકની ઘેરી લાગણી પ્રસરી ગઈ હતી. એક મહાન સંત પુરુષની ચિર વિદાયથી અબાલ વૃદ્ધ સહુ ગમગીન બની ગયા હતાં.

સ્વર્ગસ્થ મહાપુરૂષના ગુણાનુવાદ ગુણગ્રામ કરી તેઓશ્રીને શ્રધ્દાંજલી અર્પવા મણીનગર સંઘની ખાસ સભા આજે યોજવામાં આવી હતી, જેમાં તેઓશ્રીના ગુણગ્રામ કરી ચાર લોગસનો કાઉસગ્ગ કરીને શ્રદ્ધાંજલી અર્પવામાં આવી હતી. પ્રમુખ શ્રી ચંદ્રકાન્તભાઇ સી. બેંકરે સ્વ૦ ના જીવન વિષે બયાન આપીને જણાવ્યું હતું કે સ્વ૦ પુજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મ૦ શ્રી એ શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરીને ચિરસ્મરણીય ઈતિહાસ સર્જ્યો છે. જૈન સમાજ તે માટે ખૂબ જ તેઓશ્રીનો ઋણી છે. પ્રમુખ શ્રી એ શ્રદ્ધાંજલી ઠરાવ રજુ કરેલ. જે સર્વાનુમતે ઉંડી ખેદની લાગણી સાથે પસાર કરવામાં આવ્યો હતો.

શ્રદ્ધાંજલી ઠરાવ

આપણા પરમ પૂજ્ય જૈન શાસન પ્રભાવક; શાસ્ત્ર વિશારદ. આગમોદ્ધારક વયસ્થવીર. વિરલ વિભુતિ મહાપુરૂષ પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ શ્રી તા ૩–૧–૭૩ ના રોજ સ્વર્ગવાસ પામતા મણીનગર સકલ સંઘ ઉંડી ખેદની લાગણી અનુભવે છે.

શાસ્ત્રોદ્ધાર બાબતનો તેઓ શ્રી એ કરેલ મહાન ઉપકાર જૈન સમાજમાં ચીરસ્મરણીય રહેશે. જૈન સમાજ તે વિસરી શકશે નહીં, તેઓ શ્રી ની ખોટ નજીકના ભવિષ્યમાં પૂરી શકાય તેમ નથી. સમસ્ત મણીનગર સંઘ તેઓ શ્રીના સ્વર્ગવાસ બદલ શોક (દીલગીરી) જાહેર કરે છે. તેઓ શ્રીના જીવનમાંથી

સર્વ પ્રેરણા મેળવી શાસનના ઉત્કર્ષ માટે પ્રયત્નશીલ રહે. સ્વર્ગસ્થના પૂનિત મહાન આત્માને અક્ષય સુખો પ્રાપ્ત થાઓ. એજ અભ્યર્થના

શ્રી મણીનગર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ
સેવાભિલાપી ચંદ્રકાન્ત સી૦ બેંકર
ઉપલેટા ૪-૧-૭૩

સૃષ્ટિના ક્રમ મુજબ દિવસે સૂર્ય અને રાત્રે ચંદ્ર પ્રકાશે છે. એવું ક્યારેય નથી બનતું કે બન્ને સાથે વિલીન થઇ જાય. પરંતુ જૈન શાસનમાં આજ લાગે છે. જાણે સૂર્ય અને ચદ્ર બન્ને વિલુપ્ત થઈ ગયાં તા. ૧૭-૧૨-૭૨ ની ગોઝારી સવાર જેણે મરૂધર સંત શ્રમણ શ્રેષ્ઠ પંડિત પૂ. મુનિશ્રી સમર્થમલજી મહારાજ સા૦ ને ઝૂંટવી લીધા ! જૈન સમાજે આંચકો અનુભવ્યો. હુજી એ આચકો સમ્યો ન શમ્યો ત્યાંજ તા-૩-૧-૭૩ નો ગોઝારો દિન આવ્યો, જૈન શાસન દિવાકર શાસ્ત્રોધ્ધારક પંડિત પ્રખર પૂ. શ્રીઘાસીલાલજી મહારાજ શ્રી કાયમને માટે ચાલ્યા ગયા અને જૈન સમાજમાં કાજળ ઘેર્યા તિમિરના ઓળા ઉતરી રહ્યા.

મરૂધર સંત, અજબ પુરુષાર્થી શાન્ત, દાન્ત, મહન્ત એ નર પુંગવ પણ મરૂભૂમિને પાવન કરતાં કરતાં સૌરાષ્ટ્રની ભૂમિમાં પધાર્યા હતાં. ઉગ્ર તપશ્ચર્યા ઉત્તમ ચારિત્ર અને અદ્દભૂત જ્ઞાન આરાધના જેણે નજરે નિહાળી જૈન સમાજ અભિભૂત થયો હતો, કંતાનના એક ટુકડાં પર બેઠાં બેઠા મહાન પુરૂષાર્થી કર્મઠ નિષ્ઠાવાન એ સંતની જ્ઞાન આરાધના જેણે નજરે નિહાળી છે. તે કદી તેને નહીં ભૂલી શકે. દુનિયાથી જ નહીં દુનિયાદારીથી પર-દૂર જગજનના છળ અને પ્રપંચથી દૂર, જગતના વ્યવહારો અને વિટંબણાથી દૂર વિશ્વની વિષમતાથી દૂર, જ્ઞાન આરાધનાની અખંડ સાધનમાં બેઠેલા પ્રાજ્ઞ પુરૂષ પુર્વના કોઈ મહર્ષિની યાદ અપાવતા જૈન સમાજ માટે તેમણે જે કાર્ય કર્યું છે તે કદાચ અજોડ જ નહીં પણ અનુપમ છે. સ્થાનકવાસી જૈન સમાજમાં એક અને અદ્વિતીય કાર્યતેમનું છે તેમ કહેવામાં અમને જરાયે સંકોચ નથી.

વિશ્વમાં જ્યારે મૂલ્યનોહ્રાસ અને ભૌતિકવાદની ભય જાલ ફેલાઈ ગઈ છે. ત્યારે જીનેશ્વર ભગવંતની વાણીનું યથાર્થ ઘટન કરી, સમાજ ને સુબોધ અને સુરૂચિ પૂર્ણ સર્વ આગમોના રહસ્ય ને સંસ્કૃત હિંદી અને ગુજરાતી ભાષામાં ઉતારનાર આ મુનિ શ્રેષ્ઠનું મૂલ્ય સાહિત્યના ઇતિહાસમાં પણ બહુમૂલ્ય છે, આ ભગીરથ કાર્યમાં અનેક વિટંબનાઓ આવી પણ સ્થિતપ્રજ્ઞ બની એ અડીખમ ઉભા જ રહ્યા ન ડગ્યા, ન હઠયા, ન થાક્યા, ન કંપ્યા, અને કાંટાળ્યા પણ નહીં, બસ કાર્મ કરતાં જ રહ્યાં, ન ટાઢ જોઈ. ન તાપ, ન ક્ષુધાં, ન તૃષા, જાણે પોતાનો જન્મ જ એ કાર્ય માટે થયો હોય તેમ આજીવન અખંડ આરાધક રહ્યા.

અંતે કાર્ય પુરૂં થયું, કાળ જાણે વાટ જોઇને જ બેઠો હતો. ભગીરથ કાર્ય અથાગ પરિશ્રમના અંતે પૂર્ણ થયું ન થયું કાળે ઝપાટમારી, દીપ બુઝાઇ ગયો અંધારૂં છવાઇ ગયું.

કમોસમના વાદળ પણ નભ ને આવરી રહયા હતા. સૂર્ય જાણે મુખ છુપાવી ગયો હતો. સાના મન આશંકા અનુભવતા હતા, ઝાંખી દિશા અને ધુંધલુ વાતાવરણ અનિષ્ટના ઓળા દેખાતા જ હતાં, રેડીયો પરથી રીલે થયું જૈન જ્યોનિ ધર જાહેર......લાગે છે. જૈન સમાજનું પુન્ય ખુટ્યું છે. પાપ પ્રગટ્યું છે. નહીંતર માત્ર ૧૫-૧૭ દિવસમાં બે બે મહારથી એકી સાથે ખુંચવાઇ જતાં જોવાનું તેને નસીબે ન આવે !

પૂ. ઘાસીલાલજી મહારાજે કરેલા સમાજ પર ઉપકારનું ઋણ સમાજ કદીએ વાળી શકે તેમ નથી, આજ એક એક ઘર આગમ વાણીથી પરિચિત બની શકયું, એક એક જૈન ગુજરાતી હિન્દી

દ્વારા જૈનાગમોને વાંચી શકે છે. આજ લાયબ્રેરી કે ઉપાશ્રયો સિદ્ધાંતના પુસ્તકોથી છલકાઇ છે તેનો યશ કોને છે ?

કહેવાની જરૂર નથી કે યૂં તો ગુરૂદેવજ તેના યશભાગી છે છદ્મસ્ત અવસ્થાને કારણે કદાચ કંઇ અર્થ ઘટનામાં ક્ષતિ રહી જવા પામી હશે ? બાકી ખૂબ જાગૃતિ પૂર્વક જરૂર લાગે ત્યાં પૂ. સમર્થમલજી મહારાજ જેવા જ્ઞાની સંતોના અભિપ્રાય મેળવીને શકય એટલી શુધ્ધિ જાળવી છે. અને તેથીજ આજ અલ્પ અભ્યાસી પણ તેઓના વિવેચન યુક્ત સિધ્યાંત વાંચી શકે છે. અને સંતોષ મેળવે છે.

આ તો ગુરૂદેવના જીવનનું એક અંગ જ વ્યક્ત થયું; આ સિવાય અનેક અનેક ગુણોથી યુક્ત તેમનું જીવન ખરે જ રત્નની ખાણ જેવું હતું, તદન બાલ્યવયમાં ત્યાગનો પંથ સ્વીકારી આજ સુધી નિષ્કલંક ચારિત્ર પાળનાર આ મુનિ પુંગવના જીવનની પ્રત્યેક પણ પ્રેરણાની પરબ છે. કિશોર જેવી મુગ્ધ નિર્દોષતા, પ્રફુલ્લિત અને મુક્ત હાસ્ય તેજસ્વી અને મોટી મોટી આંખોમાં ઝલહળતી નિર્વિકાર જ્યોતિ, તપનો જ્યોતિર્મય ઉજાશ સતત ચહેરાને લાવણ્ય બક્ષતો શ્વેતવાળ વચ્ચે તામ્રવર્ણની આભાથી દીપતું લલાટ, અભિમાનીના ગર્વને ચૂર ચૂર કરવા પૂરતું હતું, આ તો થઇ બાહ્ય દેહની વાત, આંતરિક ગુણ સમૃધ્ધિમાં ત્યાગ, તિતિક્ષા, પરિતોષ, ક્ષમા, સહાનુભૂતિ અને કરુણાની સતત સરવાણી વહેતી,

આજ આપણે તેમને અંજલિ આપતાં એ બધું યાદ કરી છુટા ન થઈ શકીએ, તેમને સાચી શ્રધ્ધાંજલી તો એ જ છે કે તેમના આદર્શો ને અપનાવીએ, અને તેમના અધૂરાં રહેલા કાર્યો પૂરાં કરીએં અને ત્યાગને શોભે એવું તેમનું અમૂલ્ય ત્યાગરૂપ સ્મારક હૃદયે હૃદયે કોતરીએ,

આજ સમાજ નોધારો બન્યો છે, છત્ર ગુમાવ્યું છે તેની ખોટ પૂરી શકાય તેમ નથી જ ત્યારે જ્ઞાનના ક્ષેત્રે તેમની સ્મૃતિમાં કઇક એવું કાર્ય આરંભીએ જેથી સો વર્ષ પણ કોઈ સમર્થમલજી મ. કે કોઈ ઘાસીલાલજી મ૦ જૈવા તૈયાર થાય. અનંત જ્ઞાનીની પ્રસાદીનો વારસો જાળવનારને ઉકેલનાર કોઇક તેમાંથી જાગે અને ભાવિ પેઢીને માર્ગદર્શક બની શકે,

પૂ. ગુરૂદેવ તો દિવ્યલોકમાં વિશિષ્ટ શક્તિના પરિબળથી કદાચ સીમંધર સ્વામીના ચરણોં સેવતા હશે, ? આપણે યાચનાં કરીયે છીએ કે જૈન સમાજ ને આપણ બધાને સમ્યક દિશા સૂચન કરતા રહે અને જૈન શાસનની પ્રભાવના કાજે હૈયે સાધર્મી ભક્તિ પ્રગટાવતા રહે. અંતમાં પૂ. ગુરૂદેવના આત્માની ચિર શાંતિ સિવાય બીજું માગવું પણ શું ?

અક્ષર દેહ અમર ગુરૂદેવ તેમની અમીટ કીર્તિ અને કાર્યથી ચિરકાલ અખંટ અમરતાને વર્યા છે. મૃત્યુ તો તેને માટે મહોત્સવ હતું એ સૂત્ર પણ શીખવી ગયા છે. પૂ. ગુરૂદેવ ઘાસીલાલજી મહારાજનો જય જયકાર છે.

શ્રી ઉપલેટા સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ

શ્રદ્ધાંજલી કાવ્ય

અંધારા હો ગયે અંધારા હો ગયે અબ હસનેકા દિન, રોનેકા બન ગયે...અંધારા.

તુજ મુરત ખડી હૈ, નઝરોમેં તુજ મુરત હૈ ખડી, તારા ચમકના હો રહા. એક ભાનૂ ચલ ગયે...અંધારા....

અબ રોનક દિખાઈ દેતી હૈ. રોનકકે રાજા ચલે ગયે, ખિલેહિ ફૂલ બાગો મેં, એક માળી ચલ ગયે....અધારા

બંસી હમારે ગુંજ ઉઠીથી, એક બજાવનાર ચલે ગયે ચિરાગ રહી કનૈયાકી (કનૈયાલાલજી મ.) સાગ રમેં નવદીપ જલે....અંધારા

હસનેકા દિન હમારે આયે થે અબ તો વોં દિન ગુજર ગયે. ખુશબો હમારી ચલ બસી. શિરતાજ હમારે ચલ ગયે ...અંધારા

ઝરણાં રહા હૈ જ્ઞાનોંકા એક સિંધુ ચલે ગયે બુઝાતાદીપ મંદિરકા, એક મંદર ચલે ગયે...અંધારા.
મઝધાર ખડી હૈ નાવોંકા, એક નાવિક ચલ ગયે. દિલકા ખજાના ચલ ગયે, એક ઝંડા ચલ ગયે...અંધારા...

દેસાઇ જગજીવનદાસ જૈન બગસરા

વડોદરા પ્રતાપગંજ ૨૩ તા—૬-૧-૭૨

પરમ પૂજ્ય પંડિત શ્રી ધાસીલાલજી મહારાજના અહમદાવાદ મુકામે કાલધર્મ પામ્યાના સમાચાર જાણતાં ઘણો અફસોસ થયો.

સ્વર્ગીય મહારાજ શ્રી પ્રાકૃત, સંસ્કૃત, ફારસી વિ. ૧૬ ભાષાઓ જાણતા. હતા જૈન આગમ સાહિત્યનું એમનું ઉત્તમ જ્ઞાન હતું. એમનો આચાર જૈન આમનાએ શુદ્ધરીતે અનુંસરતો હતો, શાસ્ત્રોધ્ધાર સમિતિમાં અધિવેશનાં સમયે રાત દિવસ એમના સાનિધ્યમાં રહેતે ત્યારે હું જીતે જોઈ શકતો હતો કે પોતે સવારે વહેલા ઉઠી પ્રતિક્રમણ કરી સ્વ રચિત ભકતામારનો પાઠ વિદ્યમાન શ્રાવક શ્રવિકાઓ ને કરાવતા, તુરત જ શાસ્ત્રવાંચનાં—અનુવાદ—ટીકાના સંશોધનના વ્યવસાયમાં આવૃત થઇ જતાં, અને પંડિતોની કાર્યવાહીની સમીક્ષા કરતા હતા, દિવસભર વંદનાર્થે શ્રાવક શ્રાવિકાઓ, બાળકો, પ્રવાસીઓ એમના દર્શન કરવા આવે એમનું તેવો સ્વાગત કરે, અને માંગલિક સંભળાવે, સૌને આત્માર્થી બનાવે.

એમતા આગમના અનુંવાદો ત્રિવિધ હતા, એવો પ્રયાસ જૈન સાહિત્યના ઇતિહાસમાં પ્રથમ જ હતો, સૂત્રનો મૂલ પાઠ ગદ્ય પદ્ય રૂપે પ્રથમ આવે, પછી તેની છાયા સંસ્કૃતમાં આવે, ને તેની જ ટીકા સંસ્કૃતમાં આવે, પછી હિન્દી ગુજરાતી ભાષાન્તરો આવે, એ એમની શૈલી હતી. હું એ બધું વાંચી જતો, માગધી, સંસ્કૃત, ગુજરાતી, હિન્દી તમામ વાંચી જતો, તેમાં સંસ્કૃત તો પરિશુધ્ધ જ હોય, માગધી પણ શુધ્ધજ હોય, ગુજરાતી અનુવાદ કરવામાં સહાયકો હિન્દીનાં હતા, તેથી સ્ખળનો હોય ખરાં, અનુવાદોમાં સંસ્કૃત માગધી અવતરણો હોય, એ એમના પ્રયાસનું વૈવિધ્ય હતું આગમ સાહિત્યનો ગુજરાતી હિન્દી અનુવાદ કરવાની શરૂયાત સ્થાનકવાસી જૈન સમાજ તરફથી થયેલી, એ અનુવાદોમાં ટબ્બાઓની મદદ લેવામાં આવતી, સાથે શ્રીઅભયદેવ શ્રીસૂરિ. શ્રીમલયગિરિસૂરિ શ્રીહરિભદ્રસૂરિ વગેરની સંસ્કૃત ટીકાઓની મદદ લેવાતી; પૂજ્ય શ્રી ધાસીલાલજી મહારાજે એ તમામ પ્રયાસોની મદદ લઇ, પોતાના જ્ઞાનથી અદ્યતન અનુવાદો જૈન સમાજ ને આપ્યા, આ ગ્રન્થો સારી સંખ્યામાં પ્રસિદ્ધ થયા છે. ખાસ ભગવતી સૂત્રના સટીક અનુવાદો—ભાષાંતરોના તો સત્તર જેટલા ગ્રન્થો થયા છે.

આ કામ માટે ટ્રસ્ટ થયેલું એટલે સૂત્રોના અનુવાદો પડતર કિંમતે સભ્યોને અને સંસ્થાઓને આપવામાં આવતા હતાં.

પૂ. મહારાજ શ્રી માત્ર આ પ્રયાસથી જ સંતુષ્ટ રહયા નહતા, ઉમાસ્વાતિ આચાર્ય કૃત તત્વાર્થ અભિગમનું એવું જ સંસ્કરણ એમણે એમણે તૈયાર કર્યું સ્યાદ્વાદ જૈન તર્ક ન્યાય, સપ્તભંગી ન્યાય ઉપર લખેલું છે, એ લખાણો ત્વરિત પ્રસિધ્ધ થવાં જ જોઇએ, પૂજ્ય મહારાજ શ્રી એ કરેલા સૂત્રોનાં અનુવાદો—ભાષાંતરોનો ભારતનાં વિદ્યાપીઠમાં સંગ્રહ થયા છે, ઉપાશ્રયોમાં તેમની વાંચના કરવામાં આવે છે.

મુદ્રિત સ્થિતિમાં તે સાહિત્ય છે. એટલે તેની વાચના સુગમ થઈ શકે છે. મુદ્રાણાલય જ્યારે ન્હોતી ત્યારે સૂત્રો પોથી રૂપે પણ થઈ શકતાં હતાં હવે પરિસ્થિતિ બદલાઈ ગઈ છે.

ટ્રસ્ટ તરફથી આ પ્રયાસ માટે સંસ્કૃતજ્ઞ પંડિતો ને રાખવામાં આવતા હતા. મહારાજ શ્રી જ્યા ચાતુર્માસો કરતા ત્યાં તેઓ સાથે જ રહેતા હતા,

સ્થાનકવાસી સાધુ શ્રમણ વર્ગ સંસ્કૃત—પ્રાકૃતના જ્ઞાનથી બહુધા, વિશેષતઃ સૌરાષ્ટ્રનો સમાજ વર્જિત છે. જો કે હવે પરિવર્તન આવતું જાય છે હું આ ન્યુનતા માટે સંઘોને જવાબદાર ગણું છું

१९७९	अहमदनगर	२०११	जामजोधपुर
१९८०	तासगांव	२०१२	राणपुर
१९८१	जलगांव	२०१३	विरमगांम
१९८२	वेलापुर	२०१४	अहमदनगर
१९७३	ब्यावर	थी १७ वर्ष सुधी	अहमदाबाद विराजे
१९८४	बीकानेर	२०३० स्वर्गवास	
१९८५	,, ,,		पोषकृष्णा अमवस्या
१९८६	,, ,,		
१९८७	उदयपुर		गुरुवार ता. ३-१-७३
१९८८			रात्रे ९-२७—
१९८९	गोगुंदा		

ॐ नमो सर्व सिद्धम्

कवि रत्न पं. श्री मेवाडी मुनि के उद्‌गार–युनप्रधान आचार्याऽष्टकः

मेवाड तेरी क्या कथूं में ? सरस सुन्दर सूक्तियां, तेरे गर्भ से अवतरी अनवरविशुद्ध विभूतियां ॥
त्यागी तपस्वी धर्म मूर्ति सुमर प्रात काल है, आनन्द कन्द दिनिन्द सुरतरु पूज्य घासीलाल है ॥१॥
वीरवर नर केशरी राणाप्रताप हुए जहां मंत्रीशभामा धर्म रक्षक देश सेवक थे जहां ।
उसदेश की सद्‌गोद में अवतरण किरण प्रवाल है, आनन्दकन्द दिनिन्द सुरतरु पूज्य घासीलाल है ॥२॥
धन्य जननी क्या किया थे उग्र तप किस लोक में, ? धर्म दीपक आगया न रत्न तेरी कोंख में ॥
धन्य दुर्ग तरावली तेरा भी भाग्य विशाल है, आनन्दकन्द दिनिन्द सुरतरु पूज्य घासीलाल है ॥३॥
बाल वय दिक्षित हुए आ बाल ब्रह्मचारी नतम्, न्यायतर्कसिद्धांत कौमुद कोष कव्यालंकृतम् ॥
षड दश भाषा विशारद दिव्य दमकत भाल है, आनंद कंद दिनिन्द सुरतरु पूज्य घासीलाल है ॥४॥
उदयपुरभूपाल कोल्हापुर विरत हुए पाप से, सिंध की लाखों प्रजा सद् बोधा पाई आपसे ॥
सैंकडो क्षत्रि कुलों उज्वल किये कृपाल है, आनंद कन्द दिनिन्द सुरतरु पूज्य घासीलाल है ॥५॥
आगमो परभाष्य टीका सरस शैली में रची ढंडियोंकी दम्भलीला हिल गई हल चल मची ॥
श्रीमान् के हिं कंठ शोभित जैनमत जय माल है, आनं कंद दिनिंद सुरतरु पूज्य घासीलाल है ॥६॥
गगन मंडल एक रवि है एक है रजनी पति, करण दानी एक हो गए एक है जंबू जती ॥
संप्रति समय के श्रमण गण में एक आप दयाल है, आनंद कंद दिनिद सुरतरु पूज्य घासीलाल है ॥७॥
चीर कौल तक कायम रहै जिनदेव से यह प्रार्थना कुशल गढ़ में एक मेवाडी मुनि कि विर रचना ॥
करत अनुचर विनय नत हो आपहि प्रतिपाल है. आनन्द कन्द दिनितद सुरतरु पूज्य घासीलाल है ॥८॥